कबीर बड़ा या कृष्ण?

कबीर, नौ मन सूत उलझिया, ऋषि रहे झख मार।

सतगुरू ऐसा सुलझा दे, उलझे ना दूजी बार।।

लेखक :-

संत रामपाल जी महाराज

कबीर, और ज्ञान सब ज्ञानड़ी, कबीर ज्ञान सो ज्ञान। जैसे गोला तोब का, करता चले मैदान।।

जीव हमारी जाति है, मानव धर्म हमारा। हिन्दु मुस्लिम सिक्ख ईसाई, धर्म नहीं कोई न्यारा।।

प्रथम संस्करण (मार्च 2014) = 2,000 प्रतियां
द्वितीय संस्करण (जून 2014) = 4,000 प्रतियां
तृतीय संस्करण (अक्तूबर 2014) = 5,000 प्रतियां
चतुर्थ संस्करण (जुलाई 2017) = 6,000 प्रतियां
पंचम संस्करण (अगस्त 2019) = 6,000 प्रतियां
छठा संस्करण (......... 2021) = 10,000 प्रतियां

धर्मार्थ मूल्य = Rs. 20 (बीस रूपये)

मुद्रक :- कबीर प्रिंटर्स
C-117, सैक्टर-3, बवाना इन्डस्ट्रियल एरिया, नई दिल्ली।

प्रकाशक :-
प्रचार प्रसार समिति तथा सर्व संगत
सतलोक आश्रम, बरवाला, जिला-हिसार (हरियाणा)

सम्पर्क सूत्र :- 8222880541, 8222880542, 8222880543, 8222880544, 8222880545

E-mail : jagatgururampalji@yahoo.com
Visit us at : www.jagatgururampalji.org
Follow us onTwitter : twitter.com/satlokashram

विषय सूची

1. दो शब्द 1
- शास्त्रों की स्थिति 1
- कौन कितना प्रभु 9

(अध्याय 1)

2. कबीर बनाम कृष्ण वगैरा 35
- तैमूरलंग को सात पीढ़ी का राज्य प्रदान करना 36
- काशी में भोजन-भण्डारा करना 39
- गीता अनुवादकों की अज्ञानता का प्रमाण 50
- स्वामी प्रभुपाद जी की गलती 51
- श्री रामसुख दास की गलती 53
- श्री ज्ञानानंद जी महाराज की गलती 53
- श्री सुधांशु जी महाराज की गलती 54
- श्री आशाराम जी महाराज की गलती 54
- श्री अड़गड़ानंद जी महाराज की गलती 55
- हंसादेश पंथ वालों की गलती 55
- गीता ज्ञान दाता से अन्य परमेश्वर 59
- परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष होता है 66
- कथा :- मार्कण्डेय ऋषि तथा अप्सरा का संवाद 71

3. गीता का ज्ञान श्री कृष्ण में प्रवेश करके काल ब्रह्म ने कहा 77
- अदालत के प्रश्न तथा कबीर जी के वकील के उत्तर 81
- आँखों वाले अंधे 90
- श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी का पिता कौन है? 92
- पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना 103
- आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण 105
- गीता व पुराणों में भी पित्तर व भूत पूजा मोक्षदायक नहीं बताई है 138

- श्राद्ध-पिण्डदान गीता अनुसार कैसा है? 139
- श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रूची ऋषि का वेदमत 139
- आन-उपासना करना व्यर्थ है 141
- शिव लिंग की पूजा कैसे प्रारम्भ हुई? 143
- शास्त्र विरूद्ध साधना की प्रेरणा भी काल ब्रह्म करता है 146

4. अन्य शास्त्र विरूद्ध भक्ति पर प्रकाश 148
   - श्राद्ध-पिण्डदान करें या न करें 150
   - श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रूची ऋषि का वेदमत.................... 154
   - मार्कण्डेय पुराण में पितरों की दुर्गति का प्रमाण 155
   - प्रभु कबीर जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन 159
   - श्री नानक जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन 161
   - संत गरीबदास जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन 162
   - लेखक (रामपाल दास) द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन 163
   - श्राद्ध करने की श्रेष्ठ विधि 166
   - पीपल, जांडी तथा तुलसी की पूजा 168
   - परमात्मा के साथ धोखा 170
   - सोलह शुक्रवार के व्रत करना 171
   - गीता में व्रत के विषय में 172
5. तीर्थ तथा धाम क्या हैं? 172
   - वैष्णव देवी, नैना देवी, ज्वाला देवी तथा अन्नपूर्णा देवी के मंदिरों की स्थापना 174
   - केदारनाथ मंदिर भारत में तथा पशुपति मंदिर नेपाल में कैसे बना? 175
   - तीर्थ तथा धाम की अन्य जानकारी 176
   - तीर्थ स्थापना के प्रमाण 176
   - जगन्नाथ पुरी धाम की स्थापना 179
   - सर्वश्रेष्ठ तीर्थ 184
6. रावण तथा भस्मासुर की कथा 189
7. हरिद्वार में साधुओं का कत्लेआम 190
8. गीता में ब्रह्म काल की भक्ति भी अनुत्तम (घटिया) कही है 192

9. ब्रह्म साधक का चरित्र 193
10. नेकी, सेऊ, सम्मन के बलिदान की कथा 205
11. समर्थ परमेश्वर कबीर जी हैं, के अन्य प्रमाण 209
- सिकंदर लौधी बादशाह का असाध्य रोग ठीक करना 210
- स्वामी रामानन्द जी को जीवित करना 212
- सर्व मनुष्य एक प्रभु के बच्चे हैं, जो दो मानता है वह अज्ञानी है 212
- बादशाह सिकंदर की शंकाओं का समाधान 213
- मृत लड़के कमाल को जीवित करना 215
- शेख तकी द्वारा कबीर जी की अन्य परीक्षाएँ कमाली के पहले के जन्म 216
- शेखतकी की मृत लड़की कमाली को जीवित करना 219
- कबीर साहेब को सरसों के गर्म तेल के कड़ाहे में डालना 220
- शेखतकी द्वारा कबीर साहेब को गहरे कुएँ (झेरे) में डालना 221
- शेखतकी द्वारा कबीर साहेब को गुंडों से मरवाने की निष्फल कुचेष्टा 222
- श्री कृष्ण जी का अंत महा दुःखमय रहा 223
- कथा :- दुर्वासा ऋषि ने कृष्ण समेत छप्पन करोड़ यादवों को श्राप देकर मार डाला 223
- प्रभु कबीर जी का मगहर से सशरीर सत्यलोक गमन तथा सूखी नदी में नीर बहाना 227

(अध्याय 2)

1. किसने देखा परमेश्वर 233
2. परम अक्षर ब्रह्म कौन है तथा किस-किसको मिला परमात्मा 233
3. सन्त धर्मदास जी से परमेश्वर कबीर जी का साक्षात्कार 233
4. व्रत करना गीता अनुसार कैसा है 236
5. श्राद्ध-पिण्डदान गीता अनुसार कैसा है? 237
6. श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रूची ऋषि का वेदमत 237
7. जिन्दा बाबा का दूसरी बार अन्तर्ध्यान होना 247
8. धर्मदास जी की अन्य संतों से ज्ञान चर्चा 249

9. चौरासी लाख प्रकार के जीवों से मानव देह उत्तम है 275
10. कथनी और करनी में अंतर 286
11. धर्मदास जी को सतलोक में ले जाना 293
12. क्या गुरू बदल सकते हैं? 297
13. कबीर सृजनकर्ता है, पेश हैं छः गवाह 298
- नानक जी का संक्षिप्त यथार्थ परिचय 302
- नानक जी तथा परमेश्वर कबीर जी की ज्ञान चर्चा 303
- बेई नदी में प्रवेश 308
- भाई बाले वाली जन्म साखी में अद्भुत प्रमाण 309
- श्री नानक जी का गुरू था, अन्य प्रमाण 310
- पवित्र कबीर सागर में प्रमाण 310

14. वेदों से जानते हैं परम अक्षर ब्रह्म कौन है? 313
15. देखें फोटोकापी वेदमन्त्रों की 314
16. यथार्थ कबीर प्राकाट्य प्रकरण (कबीर साहेब चारों युगों में आते हैं) 327
- सतयुग में कविर्देव (कबीर साहेब) का सत्सुकृत नाम से प्राकाट्य 327
- वेदों में कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर का प्रमाण 330
- त्रेतायुग में कबीर परमेश्वर जी का प्रकट होना 337
- त्रेतायुग में कविर्देव (कबीर परमेश्वर) का मुनिन्द्र नाम से प्राकाट्य 337
- नल तथा नील को शरण में लेना 337
- समुन्द्र पर रामचन्द्र के पुल के लिए पत्थर तैराना 338
- कबीर परमेश्वर द्वारा विभीषण तथा मंदोदरी को शरण में लेना 340
- पूर्ण परमात्मा कबीर जी का द्वापर युग में प्रकट होना 343
- द्वापर युग में इन्द्रमति को शरण में लेना 345
- पाण्डवों की यज्ञ में सुपच सुदर्शन द्वारा शंख बजाना 349
- प्रमाण के लिए गीता जी के कुछ श्लोक 351
- अर्जुन सहित पाण्डवों को युद्ध में की गई हिंसा के पाप लगे 358
- क्या पाण्डव सदा स्वर्ग में ही रहेंगे? 362
- क्या द्रोपदी भी नरक जाएगी तथा अन्य प्राणियों के शरीर धारण करेगी? 363
- कबीर परमेश्वर जी का कलयुग में अवतरण 363

- भक्त सुदर्शन के माता-पिता वाले जीवों के कलयुग के अन्य मानव जन्मों की जानकारी 364
- नीरू-नीमा को कबीर परमात्मा की लहरतारा सरोवर में प्राप्ति 365
- कबीर जी के सशरीर सत्यलोक से आने का साक्षी 367
- शिशु कबीर परमेश्वर का नामांकन 368
- शिशु कबीर देव द्वारा कंवारी गाय का दूध पीना 368
- नीरू को धन की प्राप्ति 373
- ऋषि रामानन्द, सेऊ, सम्मन तथा नेकी व कमाली के पूर्व जन्मों का ज्ञान ... 373
- शिशु कबीर की सुन्नत करने का असफल प्रयत्न 374
- ऋषि रामानन्द का उद्धार करना 375
- ऋषि रामानन्द स्वामी को गुरु बना कर शरण में लेना 375
- ऋषि विवेकानन्द जी से ज्ञान चर्चा 376
- कबीर जी द्वारा स्वामी रामानन्द के मन की बात बताना 378
- स्वामी रामानन्द जी क्या क्रिया करते थे? 383
- कबीर देव द्वारा ऋषि रामानन्द के आश्रम में दो रूप धारण करना 384

(अध्याय 3)

1. संक्षिप्त सृष्टि रचना 389
   - हम काल के लोक में कैसे आए ? 390
   - श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति 394
2. सम्पूर्ण सृष्टि रचना 398
   - आत्माऐं काल के जाल में कैसे फँसी? 401
   - श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति 404
   - तीनों गुण क्या हैं? प्रमाण सहित 405
   - ब्रह्म (काल) की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा 406
   - ब्रह्मा का अपने पिता (काल/ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए प्रयत्न 408
   - माता (दुर्गा) द्वारा ब्रह्मा को शाप देना 409
   - विष्णु का अपने पिता (काल/ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आशीर्वाद पाना 410

- परब्रह्म के सात शंख ब्रह्माण्डों की स्थापना 416
- पवित्र अथर्ववेद में सृष्टि रचना का प्रमाण 417
- पवित्र ऋग्वेद में सृष्टि रचना का प्रमाण 423
- पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण 427
- पवित्र शिव महापुराण में सृष्टि रचना का प्रमाण 428
- पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी में सृष्टि रचना का प्रमाण 429
- पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुरान शरीफ में सृष्टि रचना का प्रमाण 431
- पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना 432
- आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण 435
- आदरणीय नानक साहेब जी की वाणी में सृष्टि रचना का संकेत 440
- अन्य संतों द्वारा सृष्टि रचना की दन्त कथा 443

3. परमात्मा कबीर जी की भक्ति से हुए भक्तों को लाभ 445

- परमात्मा ने की जीवन रक्षा 445
- गुर्दे ठीक करना व शैतान को इंसान बनाना 446
- अनहोनी की परमात्मा ने 448
- शास्त्रविरूद्ध साधना से छुटकारा 450
- भक्तमति सविता की आत्मकथा 451
- लुटे-पिटों को सहारा 453

❑❑❑

भूमिका

''कबीर बड़ा या कृष्ण'' नामक पुस्तक में अध्यात्म ज्ञान का विशेष विश्लेषण है जो आप जी ने कभी सुना तक नहीं होगा, न किसी पुस्तक में पढ़ा होगा। प्रमाण पर प्रमाण देकर सत्य को स्पष्ट किया है। अपने ग्रन्थों के गूढ़ रहस्यों को सरल किया है जो आज तक किसी धर्मगुरू, ऋषि, महर्षि तथा श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा शिव जी को ज्ञान नहीं है। यह कथन एकदम सत्य है, परंतु पूर्ण असत्य लगता है। जब आप जी इस पुस्तक को पढ़ेंगे तो दाँतों तले ऊंगली दबाओगे। सत्य को प्रमाण सहित देखकर भी स्वीकार नहीं करना चाहोगे क्योंकि आप असत्य ज्ञान जन्म से ही सत्य मानकर सुनते आए हैं। हिन्दू समाज निःसंदेह ग्रन्थों को सत्य मानता है। जैसे गीता, चारों वेद (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद), श्रीमद्भागवत (सुधासागर), महाभारत ग्रन्थ तथा अठारह पुराण आदि हिन्दू धर्म के प्रमाणित पवित्र ग्रन्थ माने गए हैं। जो प्रकरण इन पवित्र शास्त्रों में लिखा है, उसे स्वीकार करने में हिन्दू धर्म के व्यक्ति को देर नहीं लगती।

कबीर बड़ा यानि समर्थ है या कृष्ण, इसका आप जी को इस पुस्तक में नपे-तुले शब्दों में शास्त्रों के प्रमाणों समेत पढ़ने को मिलेगा। यदि कोई अपने ग्रन्थों को नहीं मानता तो वह भक्त नहीं है। आँखों देखकर भी सत्य को स्वीकार न करके मनमाना आचरण करता है तो वह पाप आत्मा है जिसे आत्म कल्याण से कोई लेना-देना नहीं है। उसके विषय में परमेश्वर कबीर जी ने कहा है कि :-

कबीर, जान बूझ साची तजै, करै झूठ से नेह।
ताकि संगत हे प्रभु! स्वपन में भी ना देह।।

शब्दार्थ :- जो आँखों देखकर भी सत्य को स्वीकार नहीं करता, वह शुभकर्म हीन प्राणी है। ऐसे व्यक्ति से मिलना भी उचित नहीं है। जाग्रत की तो बात छोड़ो, ऐसे कर्महीन व्यक्ति (स्त्री-पुरूष) से तो स्वपन में भी सामना ना हो। फिर कबीर जी ने कहा है कि :-

ऐसा पापी प्रभात ना भैंटो, मुख देखें पाप लगै जाका।
नौ–दश मास गर्भ त्रास दई, धिक्कार जन्म तिस की माँ का।।

शब्दार्थ :- ऐसा निर्भाग व्यक्ति सुबह-सुबह ना मिले। ऐसे का मुख देखने से भी पाप लगता है। उसने तो अपनी माता जी को भी व्यर्थ में नौ-दस महीने गर्भ का कष्ट दिया। उसने अपनी माता का जन्म भी व्यर्थ कर दिया। कबीर जी ने फिर कहा है कि :-

कबीर, या तो माता भक्त जनै, या दाता या शूर।
या फिर रहै बांझड़ी, क्यों व्यर्थ गंवावै नूर।।

शब्दार्थ :- कबीर जी ने कहा है कि या तो जननी भक्त को जन्म दे जो शास्त्र में प्रमाण देखकर सत्य को स्वीकार करके असत्य साधना त्यागकर अपना जीवन धन्य करे। या किसी दानवीर पुत्र को जन्म दे जो दान-धर्म करके अपने शुभ कर्म बनाए। या फिर शूरवीर बालक को

भूमिका

जन्म दे जो परमार्थ के लिए कुर्बान होने से कभी न डरता हो। सत्य का साथ देता है, असत्य तथा अत्याचार का डटकर विरोध करता है। उसके चलते या तो स्वयं मर जाता है या अत्याचारी की सेना को मार डालता है। अपने उद्देश्य से डगमग नहीं होता। यदि ऐसी अच्छी संतान उत्पन्न न हो तो निःसंतान रहना ही माता के लिए शुभ है। पशुओं जैसी संतान को गर्भ में पालकर अपनी जवानी को क्यों नष्ट करे यानि निकम्मी संतान गलती करके माता-पिता पर 304-B का मुकदमा बनवाकर जेल में डलवा देती है। इससे तो बांझ रहना ही उत्तम है।

सर्व मानव समाज से करबद्ध नम्र निवेदन है कि आप सब शास्त्रों के विरूद्ध साधना कर रहे हो। इस पवित्र पुस्तक को पढ़कर सत्य से परिचित होकर असत्य को त्यागकर सत्य साधना जो शास्त्र प्रमाणित है, करके अपना अनमोल मानव (स्त्री-पुरूष का) जीवन धन्य बनाओ। अपना कल्याण करवाओ।

सब संतों व धर्म प्रचारकों तथा गुरूजनों को दास ने (रामपाल दास) बहुत बार प्रार्थना की है कि आप मेरे से मिलो या मुझे बुलाओ ताकि मिलकर निर्णय करें कि यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान कौन-सा है? शास्त्रों में वर्णित भक्ति कौन-सी है? भक्त समाज इधर-उधर भटक रहा है। इनको शास्त्रविधि अनुसार भक्ति का मार्ग बताया जाए जिससे इनका आत्म कल्याण हो सके।

सन् 2012 में टी.वी. चैनलों पर एड चलवाकर भी सबसे आग्रह किया था। टी.वी. चैनल भी बुक करवाया था कि भक्त समाज के सामने डिबेट हो ताकि समाज को पता चले कि सत्य क्या है? असत्य क्या है? परंतु कोई संत या गुरू नहीं आया। या तो उनको पता है कि हम शास्त्र विरूद्ध ज्ञान व साधना बता रहे हैं। हमारी पोल खुल जाएगी। या इनका अहंकार आड़े अड़ा है जो पतन का कारण है। इस पुस्तक में सत्य तथा निर्णायक ज्ञान बताया है। आशा करता हूँ शिक्षित मानव समझकर अपना जीवन सत्य साधना करके धन्य बनाएगा।

।। सत साहेब।।

दिनांक :- 17-02-2014

सर्व का शुभचिंतक
लेखक
दासन दास रामपाल दास
पुत्र/शिष्य स्वामी रामदेवानंद जी
सतलोक आश्रम बरवाला
जिला-हिसार, हरियाणा (भारत)

दो शब्द

संत तथा भक्त समाज से लेखक का करबद्ध निवेदन है कि कपया आप शास्त्रविहीत साधना करो यानि जो वेदों व श्रीमद्भगवत गीता में साधना करने को कहा है, वही करें। जो मना किया है, वह न करो। वेद पाँच हैं :- 1.सूक्ष्मवेद 2.ऋग्वेद 3.यजुर्वेद 4.सामवेद 5.अथर्ववेद। श्रीमद्भगवत गीता, यह सर्व वेदों का सार है। इसमें कुछ वर्णन संजय का व धतराष्ट्र का है, कुछ काल ब्रह्म का है। शेष वेदों वाला ज्ञान है।

''शास्त्रों की स्थिति''

पाँचों वेदों का ज्ञान उस परमेश्वर जी ने दिया है जिसको श्रीमद्भगवत गीता के अध्याय 8 श्लोक 3 में ''परम अक्षर ब्रह्म'' कहा है तथा गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में कहा है कि ''अविनाशी तो उसको जान जिससे यह सम्पूर्ण जगत व्याप्त है। इस अविनाशी का विनाश करने में कोई भी समर्थ नहीं है।

गीता अध्याय 18 श्लोक 46 में जिस के विषय में कहा है कि ''जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है तथा जिससे यह समस्त जगत व्याप्त है, उस परमेश्वर की अपने स्वाभाविक कर्म करते-करते भक्ति करके मनुष्य सिद्धि को प्राप्त हो जाता है।''

❖ जिसके विषय में गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में यह कहा है कि :-

''उत्तमः पुरूषः तु अन्यः, परमात्मा इति उदाहृतः।
यः लोकत्रयम् आविश्य बिभर्ति, अव्ययः ईश्वरः।।''

अर्थात् इस श्लोक में कहा है कि जो इसी अध्याय 15 के श्लोक 16 में क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष कहे हैं जो नाशवान हैं, उत्तम पुरूष यानि पुरूषोत्तम (श्रेष्ठ प्रभु) तो उपरोक्त श्लोक 16 में कहे क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष से अन्य ही है। वही परमात्मा कहा गया है जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। वह ही अविनाशी परमेश्वर है।(गीता अध्याय 15 श्लोक 17)

जिसके विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 61, 62 तथा 66 में इस प्रकार कहा है :-

गीता अध्याय 18 श्लोक 61 :- हे अर्जुन! शरीर रूप यंत्र में आरूढ़ हुए सब प्राणियों को परमेश्वर अपनी माया (शक्ति) से उनके कर्मों के अनुसार भ्रमण करवाता हुआ सब प्राणियों के हृदय में स्थित है।

गीता अध्याय 18 श्लोक 62 :- हे भारत! तू सर्वभाव से उस (उपरोक्त) परमेश्वर की शरण में जा। उस परमात्मा की कपा से ही तू परम शान्ति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।

उपरोक्त प्रकरण में स्पष्ट है कि सर्व सष्टि का उत्पत्तिकर्ता, सबका धारण-पोषणकर्ता परमात्मा कहा जाने वाला वास्तव में अविनाशी व पुरूषोत्तम तो गीता ज्ञान देने वाले से अन्य है।

गीता अध्याय 18 श्लोक 66 :- इस श्लोक में भी गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है कि मेरे स्तर की सब धार्मिक कर्मों की कमाई (भक्ति धन) मुझमें छोड़कर उस उपरोक्त एक सर्व समर्थ परमेश्वर की शरण में जा। मैं तुझे सब पापों से मुक्त कर दूँगा। तू शोक मत कर।

पाठकजन इसी पुस्तक 'कबीर बड़ा या कष्ण' में अध्याय नं. 3 सष्टि रचना में पढ़ेंगे तो पता

चलेगा कि सृष्टि का उत्पत्तिकर्ता गीता ज्ञान देने वाले से अन्य है। उस परम अक्षर ब्रह्म (सतपुरूष) ने पाँचों वेदों वाला ज्ञान (जो एक ही ज्ञान था।) गीता ज्ञान दाता यानि काल ब्रह्म की आत्मा में डाला था। कुछ समय पश्चात् वह सम्पूर्ण वेद ज्ञान काल ब्रह्म के श्वांसों के साथ बाहर निकला। काल ब्रह्म ने पढ़ा तो इसको भय हो गया कि यदि मेरे इक्कीस ब्रह्मंडों में रहने वाले मानव को यह पता लग गया कि मैं काल हूँ तथा मेरे से अन्य परमेश्वर है। वह जहाँ रहता है, वहाँ कोई कष्ट किसी प्रकार का किसी को नहीं है, तो सब प्राणी मेरे लोक से चले जाएँगे। इसलिए इसने उस वेद से यथार्थ भक्ति मंत्र छोड़ दिए। कुछ ज्ञान भी छोड़ दिया। शेष अधूरा ज्ञान अपने पुत्र रजगुण ब्रह्मा को दे दिया। ब्रह्मा जी ने उसी अधूरे वेद ज्ञान को अपनी संतान ऋषियों को दिया। ऋषि कृष्ण द्वैपायन जी ने उस वेद ज्ञान को चार भागों में बाँटा जो ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद कहे गए। वेदों को चार भागों में बाँटने के कारण वह ऋषि वेद व्यास कहलाए। इन्हीं चारों वेदों के ज्ञान से संक्षिप्त में श्रीमद्भगवत गीता में बताया है।

सूक्ष्मवेद :- यह सम्पूर्ण अध्यात्म वेद यानि सम्पूर्ण ज्ञान है। प्राणियों को यथार्थ ज्ञान स्वयं परम अक्षर ब्रह्म पृथ्वी पर प्रकट होकर बताता है। भक्ति के यथार्थ नामों का आविष्कार करता है। अपने मुख से वाणी बोलता है जो सूक्ष्मवेद कहा जाता है। सूक्ष्मवेद के आधार से भक्ति करके साधक परमशान्ति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त हो सकता है। सूक्ष्मवेद का ज्ञान किसी भी धर्मगुरू को, ऋषियों-महर्षियों को, संतों को नहीं है। सूक्ष्मवेद का ज्ञान नहीं मिला तो उनका किसी का भी कल्याण नहीं हुआ। यह स्वसिद्ध है। सूक्ष्मवेद का ज्ञान मेरे को (लेखक को) है। वर्तमान में भी मेरे अतिरिक्त विश्व में किसी के पास नहीं है। इसलिए मेरे से यह ज्ञान प्राप्त करके भक्ति नहीं करोगे तो जरा, जन्म-मरण से छुटकारा नहीं हो सकता।

अब पुराणों की जानकारी देता हूँ :- सब पुराण व उपनिषद उन ऋषियों द्वारा रचित हैं जिनको सूक्ष्मवेद का ज्ञान नहीं था। इसी कारण से पुराणों व उपनिषदों का ज्ञान वेद के तुल्य नहीं है।

प्रमाण :- पुराणों में प्रमाण है कि सब देवता व ऋषि घोर तप किया करते थे। ऋषिजन श्री विष्णु (सतगुण) तथा शिव जी (तमगुण) तथा श्री ब्रह्मा (रजगुण) व देवी की पूजा किया करते। वे मृत्युभोज, श्राद्ध किया करते जो भूत पूजा, पित्तर पूजा है। मंदिरों की स्थापना करवाया करते थे तथा मूर्ति, पत्थर या पीतल की बनवाकर उसकी पूजा किया करते, जिन क्रियाओं व तप को करने से गीता में मना किया है। (विस्तारपूर्वक जानकारी इसी पुस्तक में लिखी है।) वेद व गीता का ज्ञान परमेश्वर जी का बताया हुआ है तथा पुराणों व उपनिषदों का ज्ञान ऋषियों तथा ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव का बताया ज्ञान है। जो ज्ञान वेदों व गीता से मेल नहीं करता, वह साधना त्याग देनी चाहिए। भक्ति केवल वेदों तथा गीता में बताए अनुसार करनी होगी। तब मानव जीवन सफल होगा। वह मोक्ष मिलेगा जिसके विषय में गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि ''सूक्ष्म वेद का ज्ञान होने के पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए, जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में कभी नहीं आता।'' गीता ज्ञान देने वाले ने यह भी कहा है कि उसकी भक्ति करो, जिससे गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में बताई परमशांति प्राप्त होगी यानि जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाएगा तथा सनातन परम धाम (सतलोक) प्राप्त होगा। यह शास्त्रों की स्थिति बताई है।

गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि :-

गीता अध्याय 16 श्लोक 23 :- जो साधक शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना

आचरण करता है तो उसको न सिद्धि प्राप्त होती है यानि उसका कोई कार्य सिद्ध नहीं होता, न सुख प्राप्त होता है तथा न गति (मोक्ष) प्राप्त होती है अर्थात् सब व्यर्थ साधना है।

गीता अध्याय 16 श्लोक 24 :- इससे तेरे लिए हे अर्जुन! कर्तव्य यानि कौन-से भक्ति कर्म करने चाहिएँ तथा अकर्तव्य यानि कौन-से भक्ति कर्म नहीं करने चाहिएँ, के लिए शास्त्र ही प्रमाण है। तू शास्त्रों में वर्णित साधना करने योग्य है यानि शास्त्र विहित साधना कर।

ऋषिजन चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) वाले अधूरे ज्ञान को यथार्थ सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान मानकर भक्ति करने लगे थे। ओम् (ॐ) नाम का जाप करते थे जो काल ब्रह्म का जाप है जिसने गीता व चारों वेदों का ज्ञान दिया है। गीता अध्याय 8 श्लोक 13 तथा यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 15 में इस काल ब्रह्म ने अपनी पूजा का एक अक्षर ''ओं'' (ओम्-ॐ) बताया है। इसी काल ब्रह्म ने गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में बताया है कि मेरा अविनाशी अटल विद्यान है कि मैं अपने वास्तविक रूप में किसी के समक्ष प्रकट नहीं होता। अपनी योग माया (भक्ति की सिद्धि-शक्ति) से छुपा रहता हूँ। गीता अध्याय 11 श्लोक 48 में स्पष्ट किया है कि मेरी प्राप्ति वेदों में वर्णित साधना से यानि ॐ (ओम्) नाम के जाप से, यज्ञों से, किसी जप से तथा किसी प्रकार के तप से संभव नहीं है। मेरे इस विराट रूप के दर्शन भी तेरे को मैंने अनुग्रह करके कराए हैं। इससे सिद्ध हुआ कि वेदों में वर्णित विधि से साधना करने से उपाश्य ईष्ट देव की प्राप्ति नहीं है। अन्य लाभ है। ओम् (ॐ) के जाप से ब्रह्मलोक प्राप्ति है। यह काल ब्रह्म का जाप मंत्र है। यज्ञों से स्वर्ग प्राप्ति है तथा तप से राज्य प्राप्ति होती है। परमात्मा प्राप्ति नहीं है। यह ज्योति निरंजन यानि वेदों और गीता के ज्ञान दाता काल ब्रह्म का अटल विद्यान है। इसने यह प्रतिज्ञा क्यों कर रखी है? इसे विस्तारपूर्वक इसी पुस्तक के तीसरे अध्याय ''सृष्टि रचना'' में पढ़ें।

ऋषियों ने ओं (ॐ) नाम का जाप किया, साथ में हठ योग किया, हजारों वर्ष साधनारत रहे, परंतु परमात्मा नहीं मिला। कुछ प्रकाश देखा जिससे परमात्मा निराकार मान लिया। काल ब्रह्म ने किसी ऋषि को समाधि काल में अपने पुत्र ब्रह्मा के रूप में दर्शन दिए। उस ऋषि ने सबको बताया कि यह ब्रह्मा जी ही परमात्मा है। मेरे को समाधि दशा में दर्शन हुए हैं। ये अपने को छुपाए हुए है। इस प्रकार कई ऋषियों को श्री ब्रह्मा (रजगुण) रूप में काल ब्रह्म ने दर्शन दिए तो सब ऋषियों ने एक स्वर में ब्रह्मा जी (रजगुण) के पास जाकर कहा कि आप अपने को छुपाए हुए हैं। आप ही विश्व के उत्पत्ति व पालनकर्ता हैं। जिस कारण से ब्रह्मा जी (रजगुण) को भ्रम हो गया कि जब इतने सारे ऋषि साधक कह रहे हैं तो फिर मैं ही पूर्ण परमात्मा जगत का कर्ता हूँ। कुछ ऋषियों को साधना काल में समाधि दशा में अपने दूसरे पुत्र श्री विष्णु जी (सतगुण) के रूप में काल ब्रह्म ने दर्शन दिए। जिस कारण से श्री विष्णु जी (सतगुण) को भ्रम हो गया कि फिर तो मैं ही जगत का उत्पत्तिकर्ता परमेश्वर हूँ। ब्रह्मा भी मेरे नाभि कमल से उत्पन्न हुआ है।

इसी भ्रम के कारण अहंकारवश एक दिन श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी के पास गए। विष्णु जी अपने पारखदों के साथ शेष शय्या पर लेटे थे। ब्रह्मा जी के आने पर उनका आव-भगत नहीं किया। जिस कारण से ब्रह्मा जी को क्रोध आया और विष्णु जी से बोला कि मैं सबका उत्पत्तिकर्ता हूँ। यह विष्णु अहंकारवश मेरा सम्मान नहीं कर रहा। इसे सबक सिखाना चाहिए। यह विचार करके ब्रह्मा जी ने कहा कि हे पुत्र विष्णु! देख तेरा बाप आया है। तू अहंकार में है। अपने पिता का आदर नहीं कर रहा है। मैं सर्व सृष्टि का उत्पत्तिकर्ता हूँ। तू मेरे द्वारा उत्पन्न है। तेरा अहंकार ठीक करना

पड़ेगा। ब्रह्मा जी के वचन सुनकर श्री विष्णु जी ने क्रोध को प्रकट न करके कहा कि आ पुत्र ब्रह्मा! तू मेरी नाभि से उत्पन्न हुआ है। इसलिए मेरा पुत्र हुआ। मैं सारी सष्टि का उत्पत्तिकर्ता व पालनकर्ता परमेश्वर हूँ। तूने अभिमानवश मुझे अपना पुत्र कहा है, यह बहुत ही गलत है, मैं तेरा पिता हूँ। अब तेरे अभिमान को तोड़ना पड़ेगा। दोनों ने युद्ध करना प्रारंभ कर दिया। उसी समय काल ब्रह्म ने उन दोनों (ब्रह्मा व विष्णु) के मध्य में तेजोमय स्तंभ खड़ा कर दिया। उन्होंने युद्ध बंद कर दिया। फिर काल ब्रह्म अपने तीसरे पुत्र शिव (तमगुण) के रूप में प्रकट हुआ। अपने साथ अपनी पत्नी अष्टांगी देवी (दुर्गा देवी) को पार्वती रूप में लाया। तब उनसे कहा कि पुत्रो! तुमने अपने को जगत कर्ता माना, यह बहुत ही अद्‌भुत हुआ। तुम ईश नहीं हो, तुम दोनों को तथा शिव को मैंने तुम्हारे तप के प्रतिफल में एक-एक कत दिया है।

विचार करें :- ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ईश यानि परमात्मा नहीं हैं। इनका पिता काल ब्रह्म है। माता देवी दुर्गा है। सबको धोखे में रखे हुए हैं। काल ब्रह्म इस प्रकार सबको भ्रमित करके रखता है। अपने जाल में फँसाए हुए है। यह प्रकरण श्री शिव पुराण के विद्येश्वर संहिता में लिखा है।

आज तक श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव को भी नहीं पता कि हमारा पिता कौन है? माता का पता है। देवी दुर्गा जी हैं। जो ब्रह्मा, विष्णु को युद्ध में मिला, उस समय शिव-पार्वती के रूप में मिला। जिस कारण से उन दोनों ने समझा कि शिव (तमगुण) हैं। इसने हमारा युद्ध समाप्त करवाने के लिए लीला की है। वास्तव में वह काल ब्रह्म था।

(पाठकजन विस्तत वर्णन इसी पुस्तक में पढ़ेंगे।)

जैसा कि पूर्व में बताया है कि ऋषिजन ॐ (ओं) नाम का जाप करते थे तथा समाधि लगाते थे। जैसे कुछेक ऋषियों को ब्रह्मा जी (रजगुण) के रूप में दर्शन दिए, कुछेक को विष्णु जी (सतगुण) के रूप में दर्शन दिए। इसी प्रकार कुछ साधक ऋषियों को शिव जी (तमगुण) के रूप में दर्शन दिए। उन्होंने शिव जी से कहा कि आप सष्टि के कर्ता हो। आप सबके मालिक हो। आप अपने को छुपाए हुए हो। इस प्रकार ये तीनों भी ऋषियों से अपने को कर्ता हो सुनकर मान बैठे कि हम तीनों ही कर्ता हैं। ऋषि क्या झूठ बोलते हैं।

ऋषियों को वेदों में वर्णित साधना से, यज्ञों से, जप तथा तप करने से परमेश्वर प्राप्ति नहीं हुई। तप करने से, जप करने से सिद्धियाँ मिल गई। उन सिद्धियों के बल से प्रसिद्धि प्राप्त करते रहे। जीवन नष्ट कर गए।

उदाहरण :- श्री देवीपुराण के दूसरे स्कंध के अध्याय 9-10 में लिखा है कि कश्यप ऋषि ने कठिन साधना करके सर्प काटे के इलाज करने की सिद्धि-शक्ति प्राप्त की। जब राजा परीक्षित को तक्षक सर्प ने डसना था तो ऋषि कश्यप राजा को जीवित करने के उद्देश्य से उनके पास जा रहा था। विचार था कि राजा को जीवित कर दूँगा, प्रसिद्धि होगी तथा राजा बहुत सारा धन देगा। तक्षक को पता चला तो वह एक ब्राह्मण वेश में मार्ग में प्रकट हो गया। ऋषि से कहा कि जो धन आप राजा से लोगे, मैं आपको दे दूँगा। आप वापिस लौट जाओ। ऋषि ने ध्यानपूर्वक देखा तो जान लिया कि राजा परीक्षित का अंत समय आ चुका है। अब उसे मैं जीवित नहीं कर सकता। इसलिए सर्पराज तक्षक से धन ले लूँ तो अच्छा है। सर्प से धन लेकर कश्यप घर लौट आया। ऋषियों ने अपना जीवन ऐसे ही नष्ट किया। काल ब्रह्म ऐसे शास्त्रविधि के विपरीत साधना की प्रेरणा करता है। श्री विष्णु पुराण में ततीय अंश के अध्याय 17 श्लोक 1-44 तक में कहा है कि एक समय देवताओं और राक्षसों

का युद्ध हुआ। देवता हार गए। जान बचाकर समुद्र के किनारे जाकर तप करने लगे। काल ब्रह्म ने श्री विष्णु (सतगुण) के रूप में दर्शन देकर तपस्या का कारण जाना और बोला कि राक्षस शास्त्रविधि अनुसार भक्ति करते हैं। इसलिए तुमसे पराजित नहीं हुए। मैं उनको शास्त्रों के विपरीत साधना के लिए प्रेरित करके उनकी भक्ति नष्ट करवा दूँगा। ऐसा ही किया। एक माया-मोह नामक व्यक्ति काल ब्रह्म ने उत्पन्न किया। उसको राक्षसों के पास भेजकर उनको शास्त्रविधि त्यागकर शास्त्र विरूद्ध साधना पर लगा दिया। देवता भी तप करते रहे। फिर देवताओं ने राक्षसों को युद्ध के लिए ललकारा। देवता जीत गए।

विचार करें :- देवता तथा ऋषिजन सबको काल ब्रह्म भ्रमित रखता है। वे तप करके आध्यात्मिक शक्ति संग्रह करते हैं। फिर उस भक्ति की शक्ति से एक-दूसरे को हानि-लाभ पहुँचाकर अपनी तपस्या की शक्ति को नष्ट कर लेते हैं। इस प्रकार सब साधक काल के जाल से निकल नहीं पाते। कबीर परमेश्वर जी ने काल के जाल को समझाया है तथा इसके बंधन से मुक्त होने का भक्ति मार्ग बताया है। वह यथार्थ भक्ति मार्ग वर्तमान में मेरे (लेखक के) पास है। विश्व में किसी को इसका ज्ञान नहीं है। आप सब संत, गुरू व भक्तजन आकर मुझ दास से दीक्षा लेकर अपना मानव जीवन सफल करो। मान-बड़ाई का विषय ना बनाओ। जैसे राजा रोगी हो जाता है तो अपने नौकर डॉक्टर से इलाज करवाता है तो क्या राजा डॉक्टर से छोटा हो गया यानि राजा की छवि कम नहीं होती। इसी प्रकार दास (रामपाल दास) आत्मा का जन्म-मरण का रोग नाश करने वाला डॉक्टर है। आप अपना नौकर जानकर अपनी जीवात्मा के जन्म-मरण के रोग का उपचार करवाओ।

जब तक साधक को अपने पूज्य देव (इष्ट देव) की समर्थता का ज्ञान नहीं है, तब तक वह दृढ़ भक्त नहीं होता। जैसे कोई श्री हनुमान जी का पुजारी है, वह शिव जी की पूजा भी करता है। श्री विष्णु जी की भी भक्ति करता है। अन्य देवी-देवताओं, भूतों, पित्तरों की भी भक्ति करता है। इससे सिद्ध है कि उसे अपने इष्ट देव की समर्थता पर विश्वास नहीं है। यदि विश्वास हो कि मेरा इष्ट देव समर्थ है तो उसको छोड़कर अन्य की ओर देखे भी नहीं।

☛ इष्ट देव ऐसा हो जैसा कबीर जी ने बताया है :-

कबीर एकै साधैं सब सधै सब साधैं सब जाय।
माली सीचें मूल कूँ फलै फूलै अघाय।।

अर्थात् जैसे पौधे की मूल की सिंचाई करने से पौधे के सब अंग (तना, डार, शाखा, पत्ते आदि) विकसित होते हैं। यदि मूल के स्थान पर शाखाओं को जमीन में रोपकर सिंचाई करेंगे तो पौधे के सब अंग नष्ट हो जाएँगे यानि पौधा नष्ट हो जाएगा।

कुछ भी हाथ नहीं लगेगा। आप सब के सब मूल को छोड़कर शाखाओं की सिंचाई कर रहे हो यानि परम अक्षर ब्रह्म की पूजा न करके देवी-देवताओं की पूजा करके जन्म नष्ट कर रहे हो।

उदाहरण के लिए पेश है चित्र सीधे व उलटे रोपे पौधे का :-

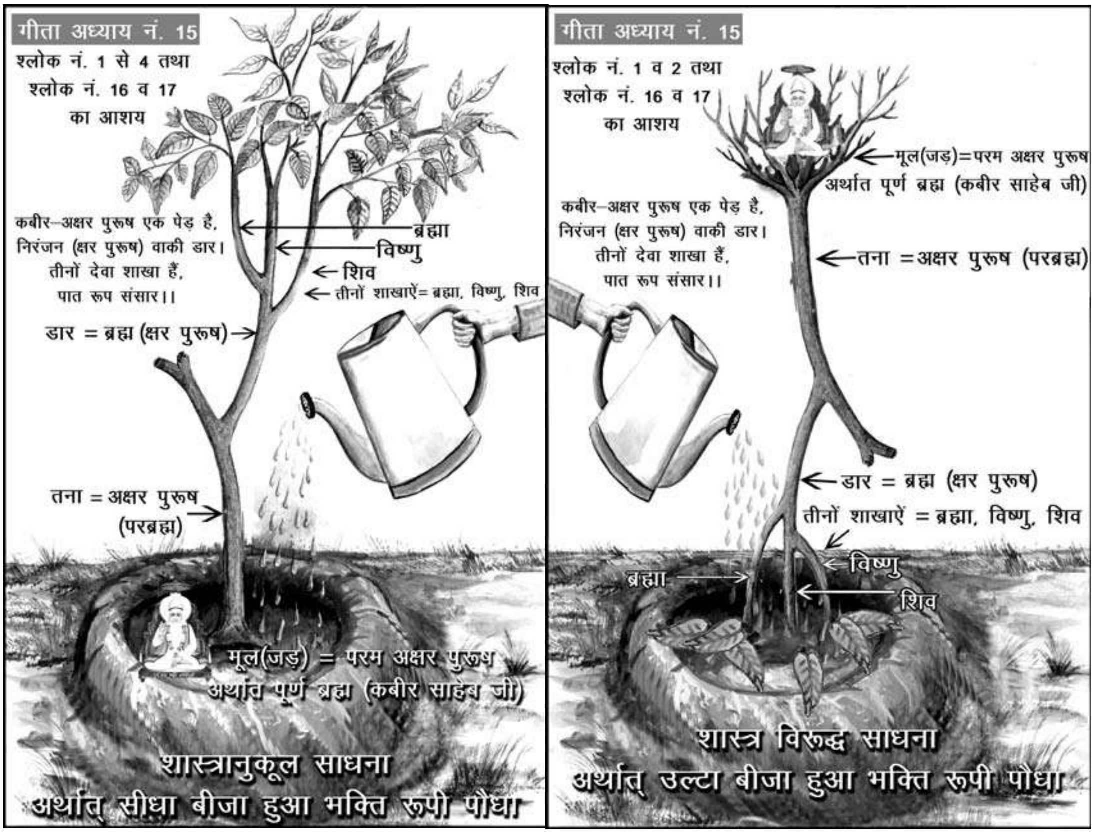

गीता अध्याय 15 श्लोक 1-3 में कहा है कि यह संसार एक ऐसे वक्ष के समान है जिसकी जड़ें (मूल) ऊपर तथा तीनों गुण रूप शाखाएँ तना-डार आदि नीचे को हैं। ऊपर को जो जड़ (Root) है, उसको सबका धारण-पोषण करने वाला परमेश्वर जानो। तना को अक्षर पुरूष मानो। डार को क्षर पुरूष (ज्योति निरंजन) समझो। तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) रूपी तीनों देवता मानो। पत्तों को संसार जानो।

कबीर जी ने कहा है कि :-

कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, क्षर पुरूष वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।

अर्थात् गीता अध्याय 15 के श्लोक 1-3 में जो संकेत दिया है, उसको परमेश्वर कबीर जी ने स्पष्ट किया है कि संसार रूप वक्ष का तना तो अक्षर पुरूष है जो सात संख ब्रह्मंडों का प्रभु (स्वामी) है। मोटी डार क्षर पुरूष है जो काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) भी कहा है जो इक्कीस ब्रह्मंडों का प्रभु है। तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) उस वक्ष की शाखा जानो। पत्तों को संसार समझो। उस संसार रूप वक्ष की मूल स्वयं कबीर परमेश्वर है जिसे गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में परम अक्षर ब्रह्म कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में तीनों लोकों में प्रवेश करके

सबका धारण-पोषण करने वाला परमात्मा बताया है तथा उसी को वास्तव में अविनाशी परमेश्वर कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष को नाशवान प्रभु कहा है। श्लोक 17 में उनसे अन्य पुरूषोत्तम (उत्तम पुरूष) यानि श्रेष्ठ परमेश्वर बताया है। वह स्वयं कबीर परमेश्वर है जिसके विषय में संत गरीबदास जी ने कहा है कि :-

गरीब, अनंत कोटि ब्रह्मंड का, एक रती नहीं भार।
सतगुरू पुरूष कबीर हैं, कुल के सिरजन हार।।1।।
गरीब, सब पदवी के मूल हैं, सकल सिद्धि हैं तीर।
दास गरीब सतपुरूष भजो, अविगत कला कबीर।।2।।
हम ही अलख अल्लाह हैं, कुतब गोस और पीर।
गरीबदास खालिक धनी, हमरा नाम कबीर।।3।।
गरीब, हम सुल्तानी नानक तारे, दादू को उपदेश दिया।
जाति जुलाहा भेद ना पाया, काशी माहें कबीर हुआ।।4।।

अर्थात् संत गरीबदास जी ने परमेश्वर के साथ जाकर ऊपर के लोकों को आँखों देखा। तब बताया था कि जो काशी शहर (भारत) में कबीर नामक जुलाहा रहता था। वह सबका सजनहार यानि उत्पत्तिकर्ता (करतार) है। उसके पास सब सिद्धियाँ हैं। इस काल ब्रह्म के लोक में तो आठ (अष्ट) सिद्धियाँ ही हैं। जो काल ब्रह्म व तीनों देवताओं (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी) की भक्ति से साधक को एक या दो ही प्राप्त होती हैं क्योंकि इन देवताओं व ब्रह्म के पास ये आठ ही सिद्धियाँ हैं। यदि सब दे दी तो इनके पुजारी इनके बराबर के शक्तिमान होकर अपनी डफली पीटेंगे। इसलिए साधकों को एक या दो ही देते हैं। कबीर परमेश्वर जी के पास अँसख्यों सिद्धियाँ हैं। इसलिए संत गरीबदास जी ने कहा है कि उस सतपुरूष (अविनाशी परमेश्वर) कबीर को भजो जो स्वयं ही मेरे पास आए थे। परमेश्वर कबीर जी जब काशी नगर में जुलाहे की भूमिका करने आए थे, तब पंडित रामानन्द जी आचार्य से कहा था कि मैं ही वह (अलख अल्लाह) गुप्त परमेश्वर हूँ। मैं ही (कुतुब, गोस और पीर) सतगुरू, संत तथा जिंदा बाबा बनता हूँ। मैं (कबीर) ही (खालिक धनी) सारे संसार का मालिक हूँ, मेरा नाम कबीर है।

सूक्ष्मवेद तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 तथा 16-17 को समझने के लिए संसार रूप वक्ष का चित्र प्रस्तुत किया है जिसमें मूल यानि सब का धारण-पोषण करने वाला परमेश्वर कबीर दिखाया है। तना अक्षर पुरूष तथा डार क्षर पुरूष काल ब्रह्म यानि गीता व चारों वेदों का ज्ञान देने वाला दिखाया तथा तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) रूप शाखाएँ बताई हैं। पत्ते जीव-जंतु दर्शाए हैं।

➢ संसार की संरचना समझने के लिए पेश है संसार रूप वक्ष का चित्र :-

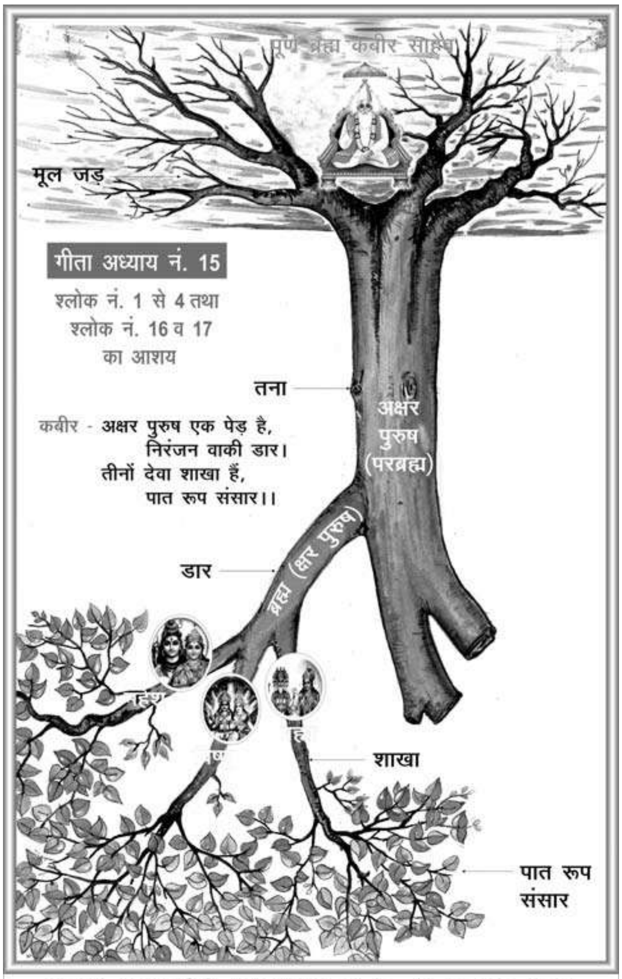

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष का चित्र

इस पुस्तक ''कबीर बड़ा या कष्ण'' में श्रीमद्भगवत गीता का विश्लेषण है जो अन्य ग्रन्थों से प्रमाण देकर मजबूत किया है। इस पुस्तक में यही बताया है कि किस प्रभु व देव की कितनी शक्ति है। वह समर्थ है या नहीं। जैसे हिन्दू धर्म में श्री रामचन्द्र जी तथा श्री कष्ण जी को परमेश्वर मानकर पूजा जाता है। ये दोनों राजा थे। राजा के पास हथियार होते हैं, सेना-सिपाही होते हैं। राजा तो अपने आप ही राम (प्रभु) होता है। जैसे श्री रामचन्द्र जी ने समुद्र पर पुल बनाकर सेना को परले पार किया था। इसी काम से उनको समर्थ प्रभु मान लिया।

श्री कष्ण जी ने गोवर्धन पर्वत को उठा लिया। इसी से उनकी पहचान प्रभु के रूप में हो गई। इसके विषय में कबीर जी ने स्पष्ट किया है कि :-

कबीर, समन्दर पाट लंका लगा सीता का भरतार।
अगस्त ऋषि ने सातों पीये थे, इनमें कौन करतार।।

अर्थात् यदि कोई श्री रामचन्द्र पुत्र राजा दशरथ को इसी कारण से करतार मानता है कि उन्होंने समुद्र के ऊपर पुल का निर्माण करवाया था तो अगस्त ऋषि ने सातों समुद्रों को पी लिया था। इन दोनों में से किस को करतार (सृष्टि का कर्ता) मानोगे?

कबीर, गोवर्धन कृष्ण ने धारयो, द्रौणागिरी हनुमंत।
शेष नाग सब सृष्टि उठा रहा, इनमें कौन–कौन भगवंत।।

अर्थात् गोवर्धन पर्वत को श्री कृष्ण जी ने उठाकर ब्रजवासियों की इन्द्र से रक्षा की थी। हनुमान जी ने द्रौणागिरी पर्वत को उठाया। पौराणिक व्यक्ति मानते हैं कि शेषनाग सब सृष्टि को अपने सिर रखे हुए है जिसमें पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक, पाताल आदि लोक हैं। इन सबको शेषनाग ने उठा रखा है। अब बताओ इनमें से किसको भगवान मानोगे?

कबीर, काटे बंधन विपति में, कठिन कियो संग्राम।
चिन्हो रे नर प्राणियाँ, गरूड़ बड़ा या राम।।

अर्थात् श्री लंका के राजा रावण के साथ युद्ध के समय रामचन्द्र समेत सारी सेना को नागों (सर्पो) ने बाँध दिया था। गरूड़ पक्षी ने उन सब सर्पों को काटा। तब श्री राम जी का तथा सेना का बंधन कटा। उनकी जान बची। कबीर जी ने प्रश्न किया है कि अब बताओ कि श्री राम बड़ा है या पक्षी राज गरूड़? कहने का भाव यह है कि किसी देव की एक-दो लीला देखकर उससे उसको समर्थ मान लेना उचित नहीं है। जब तक उसकी जीवनी का सद्ग्रन्थों से ज्ञान नहीं है, तब तक उसे समर्थ मान लेना भ्रम भक्ति है।

गीता अध्याय 16 श्लोक 23 में कहा है कि जो साधक अपनी मर्जी से शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करता है, उसको न तो सिद्धि प्राप्त हो सकती है, न उसका कार्य सिद्ध होता है, न उसकी गति होती है अर्थात् शास्त्र प्रमाणित साधना से जीव का कल्याण संभव है।

गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहा है कि हे अर्जुन! इससे तेरे लिए कर्तव्य यानि जो भक्ति के कर्म करने योग्य हैं, अकर्तव्य यानि कौन से कर्म करने योग्य नहीं हैं। उनको समझने के लिए शास्त्र ही प्रमाण हैं। शास्त्रों में वर्णित साधना कर।

इस पुस्तक ''कबीर बड़ा या कृष्ण'' में सब प्रमाण शास्त्रों से लिखे हैं। भक्ति करके कल्याण करवाना चाहिए। दास के परमार्थी प्रयत्न को भावनाओं को ठेस पहुँचाना न मानना।

❖ यहाँ पर यह भी बताना अनिवार्य समझता हूँ कि कुछ व्यक्तियों ने मेरे विषय में भ्रम फैला रखा है कि ये देवी-देवताओं की भक्ति छुड़वाता है। यह बिल्कुल गलत है। मैं सर्व देवताओं की शास्त्रोक्त साधना करने की राय देता हूँ जिससे साधक को यथार्थ लाभ मिलता है तथा पूर्ण परमात्मा को ईष्ट रूप में पूजा करने की राय देता हूँ जिससे मोक्ष की प्राप्ति होती है। वर्तमान जीवन में भी अनेकों लाभ होते हैं जो परमात्मा से अपेक्षा की जाती है।

''कौन कितना प्रभु''

इस पुस्तक में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी, श्री देवी दुर्गा जी, श्री काल ब्रह्म जी (क्षर ब्रह्म यानि क्षर पुरूष), श्री परब्रह्म जी (अक्षर ब्रह्म यानि अक्षर पुरूष) तथा परम अक्षर ब्रह्म जी (परम अक्षर पुरूष यानि संत भाषा में जिसे सत्यपुरूष कहते हैं) की यथा स्थिति बताई है जो संक्षिप्त में इस प्रकार है :-

परम अक्षर ब्रह्म {जिसका वर्णन गीता अध्याय 8 श्लोक 3, 8-10 तथा 20-22 में तथा गीता अध्याय 2 श्लोक 17, गीता अध्याय 15 श्लोक 17, गीता अध्याय 18 श्लोक 46, 61, 62, 66 में है जिसकी शरण में जाने के लिए गीता ज्ञान बोलने वाले ने अर्जुन को कहा है तथा कहा है कि उसकी शरण में जाने से परम शान्ति यानि जन्म-मरण से छुटकारा मिलेगा तथा (शाश्वतम् स्थानम्) सनातन परम धाम यानि अविनाशी लोक (सतलोक) प्राप्त होगा।} :- यह कुल का मालिक है।

गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में इसी की शरण में जाने के लिए गीता ज्ञान दाता ने कहा है। श्लोक 66 में कहा है कि (सर्वधर्मान्) मेरे स्तर की सर्व धार्मिक क्रियाओं को (परित्यज्य माम्) मुझमें त्यागकर तू (एकम्) उस कुल के मालिक एक परमेश्वर की (शरणम्) शरण में (व्रज) जा। (अहम्) मैं (त्वा) तुझे (सर्व) सब (पापेभ्यः) पापों से (मोक्षयिष्यामि) मुक्त कर दूँगा, (मा शुच) शोक न कर।

यह एक परमेश्वर सबका मालिक सबसे बड़ा (समर्थ) कबीर जी है जो काशी (बनारस) शहर (भारत देश) में जुलाहे की लीला किया करता तथा यथार्थ व सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान (सूक्ष्मवेद) को बताया करता था। इसी ने सर्व ब्रह्मंडों की रचना की है। इसी ने क्षर पुरूष, अक्षर पुरूष, ब्रह्मा, विष्णु, महेश तथा देवी दुर्गा (अष्टांगी देवी) समेत सर्व जीवात्माओं की उत्पत्ति की है।

यह तथ्य इतना सत्य जानो जैसे आज से लगभग चार सौ वर्ष पूर्व एक वैज्ञानिक ने बताया था कि पथ्वी अपने अक्ष (धुरी) पर घूमती है जिसके घूमने से दिन तथा रात बनते हैं। उस समय सब मानते थे कि सूर्य, पथ्वी के चारों ओर घूमता है। जिस कारण से दिन तथा रात बनते हैं। संसार के सब मानव का यही मत था। इस झूठ को इतना सत्य मान रखा था कि उस वैज्ञानिक का विरोध करके फाँसी पर चढ़वा दिया। आज वह चार सौ वर्ष पूर्व वाली बात सत्य साबित हुई। सूर्य घूमता है, यह झूठ सिद्ध हुई।

वर्तमान में काशी के जुलाहे कबीर को कुल का मालिक बताना इतना सत्य है जितना चार सौ वर्ष पूर्व पथ्वी को अपनी धुरी पर घूमना बताना था। आप पाठकजन इस पुस्तक को पढ़कर मान लोगे कि वास्तव में कबीर जुलाहा पूर्ण परमात्मा है। (**Kabir is Complete God.**) सतलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अकह लोक/अनामी लोक, इन चार लोकों का समूह अमर लोक यानि सनातन परम धाम कहलाता है। इन चारों अमर लोकों में कबीर जी की राजधानी है। उनमें तख्त (सिहांसन) बने हैं। उस सिहांसन के ऊपर बैठकर परमेश्वर कबीर जी राजा की तरह सिर के ऊपर मुकुट तथा छत्र आदि से शोभा पाता है। सतलोक में 'सतपुरूष' कहलाता है। अलख लोक में 'अलख पुरूष', अगम लोक में 'अगम पुरूष' तथा अनामी लोक में 'अनामी पुरूष' की पदवी प्राप्त है। जैसे भारत देश का प्रधानमंत्री जी देश का एकमात्र शासक है। प्रधानमंत्री जी अपने पास कई विभाग भी रख लेता है। उनके दस्तावेज पर हस्ताक्षर करता है तो मंत्री लिखा जाता है। प्रधानमंत्री कार्यालय के दस्तावेज पर हस्ताक्षर करता है तो प्रधानमंत्री लिखा जाता है। व्यक्ति वही होता है। कबीर परमेश्वर विशेषकर सतलोक (सत्यलोक) में बैठकर सब नीचे व ऊपर के लोकों को संभालते हैं। इसलिए सतलोक का विशेष महत्व हमारे लिए है। उसमें सतपुरूष पद से जाना जाता है। इसलिए ''सतपुरूष'' शब्द हमारे लिए अधिक मायने रखता है। जैसे प्रधानमंत्री जी का शरीर का नाम अन्य होता है। ऐसे सतपुरूष यानि परम अक्षर ब्रह्म का नाम ''कबीर है।

सतपुरूष कबीर जी की सत्ता अक्षर पुरूष के सात संख ब्रह्मंडों पर तथा अक्षर पुरूष के ऊपर भी है तथा क्षर पुरूष तथा इसके इक्कीस ब्रह्मंडों के ऊपर भी है। इसलिए परम अक्षर ब्रह्म को

वासुदेव (सब जगह पर अपना अधिकार रखने वाला) कहा गया है। गीता अध्याय 7 श्लोक 19 में इसी वासुदेव के विषय में कहा है। अब श्री ब्रह्मा (रजगुण), श्री विष्णु (सतगुण) तथा शिव (तमगुण) की स्थिति बताता हूँ।

क्षर पुरूष (काल रूपी ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्मंड हैं। एक ब्रह्मंड में तीन लोकों (पथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा शिव जी एक-एक कत के स्वामी/प्रभु हैं। जैसे एक प्रांत में एक मुख्यमंत्री होता है जो प्रांत का मुखिया होता है। अन्य मंत्रीगण उसके आधीन होते हैं तथा मुख्यमंत्री जी देश के प्रधानमंत्री जी के आधीन होता है। ऐसे ही क्षर पुरूष (काल ज्योति निरंजन) अपने प्रत्येक ब्रह्मंड में मुख्यमंत्री रूप में है तथा श्री ब्रह्मा जी रजगुण विभाग के, श्री विष्णु जी सतगुण विभाग के तथा श्री शिव जी तमगुण विभाग के मंत्री हैं। केवल तीन लोकों (पथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) के प्रभु (मालिक) हैं।

परम अक्षर ब्रह्म यानि सतपुरूष कबीर जी को प्रधानमंत्री जी तथा देश के राष्ट्रपति जी मानो।

अब आप जी समझ लें कि कबीर बड़ा है या कष्ण। श्री कष्ण जी व श्री रामचन्द्र जी स्वयं विष्णु हैं जो भिन्न-भिन्न रूपों में जन्में थे। श्री विष्णु जी की स्थिति ऊपर बता दी है।

संत गरीबदास जी को परमेश्वर कबीर जी स्वयं मिले थे। उनको ऊपर के ब्रह्मंडों में लेकर गए थे। सब देवों की स्थिति से अवगत करवाया था। अपने सतलोक में भी लेकर गए थे। अपनी स्थिति से भी अवगत करवाया था। फिर वापिस पथ्वी के ऊपर छोड़ा था। तब संत गरीबदास जी ने बताया है कि :-

गरीब, तीन लोक का राज है, ब्रह्मा विष्णु महेश।
ऊँचा धाम कबीर का, सतलोक प्रदेश।।
गरीब, अनंत कोटि ब्रह्मंड का, एक रति नहीं भार।
सतगुरू पुरूष कबीर है, कुल के सिरजन हार।।

अधिक जानकारी आगे इसी पुस्तक में पढ़ेंगे।

धार्मिक भावनाओं को ठेस :- यदि कोई सज्जन पुरूष (स्त्री-पुरूष) उस अंध श्रद्धालु को कहे कि आप जिस देवी-देवता को ईष्ट मानकर जो साधना कर रहे हो, यह गलत है। इससे आपको कोई लाभ नहीं मिलेगा। आपका मानव जीवन नष्ट हो जाएगा। आप देवी-देवताओं की पूजा ईष्ट मानकर ना करो। आप मूर्ति की पूजा ना करो। आप धामों तथा तीर्थों पर मोक्ष उद्देश्य से ना जाओ। आप श्राद्ध न करो, पिण्डदान ना करो। तेरहवीं, सतरहवीं क्रिया या अस्थियाँ उठाकर गति करवाने के लिए मत ले जाओ। आप व्रत न रखो। इसके स्थान पर अन्न-जल करने में संयम करो, न अधिक खाओ, न बिल्कुल भूखे रहो। आप अपने धर्म के शास्त्रों में बताए भक्ति मार्ग के अनुसार साधना करो।

वह अंध श्रद्धावान यदि उस सज्जन पुरूष से कहे कि आप अच्छे व्यक्ति नहीं हो। आप ने हमारी धार्मिक भावनाऐं आहत की हैं। चला जा यहाँ से, वरना तेरी हड्डी-पसली एक कर दूँगा। जोर-जोर-से शोर मचाने लगता है। उसके शोर को सुनकर उसी क्षेत्र के उसी तरह उन्हीं देवी-देवताओं व तीर्थों-धामों के उपासकों का हुजूम इकठ्ठा हो जाता है। बात धर्मगुरूओं तक पहुँच जाती है। धर्मगुरू भी वही शास्त्रविरूद्ध मनमाना आचरण करने-कराने वाले होते हैं। उन धर्मगुरूओं की पहुँच उच्च पद पर विराजमान राजनेताओं तक होती है। उन धर्मगुरूओं के फोन मंत्रियों-मुख्यमंत्रियों या स्थानीय नेताओं को जाते हैं। उच्च पद पर बैठे राजनेता स्थानीय प्रशासन को फोन करके

धार्मिक भावनाऐं भड़काने का मुकदमा दर्ज करने को कहते हैं। उनके दबाव में प्रशासनिक अधिकारी तुरंत उस सज्जन पुरूष को गिरफ्तार करके मुकदमा बनाकर जेल भेज देते हैं।

जीवित उदाहरण :- सन् 2011 में मेरे (रामपाल दास-लेखक के) अनुयाई (जिनमें बेटियाँ भी शामिल थी) मध्यप्रदेश प्रान्त के शहर जबलपुर में पुस्तक "ज्ञान गंगा" (जो मेरे सत्संग प्रवचनों का संग्रह करके तैयार कर रखी है) का प्रचार कर रहे थे। लागत 30 रूपये, परंतु 10 रूपये में बेच रहे थे। जिस कारण से हिन्दू श्रद्धालु उत्साह से लेकर जा रहे थे। जब उन्होंने घर जाकर पढ़ा तो लगा कि अनर्थ हो गया। देवी-देवताओं की पूजा गलत लिखी है। धामों-तीर्थों पर जाना व्यर्थ लिखा है। माता दुर्गा का पति बताया है। श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव का जन्म-मरण बताया है। इनके माता-पिता भी बताऐ हैं। हमारे देवताओं का अपमान किया है। मारो-मारो! उन अंध श्रद्धा वालों ने पहले तो प्रचार करने वाले स्त्री-पुरूषों को स्वयं पीटा, फिर थाने ले गए। हजारों अंध श्रद्धावान इकठ्ठे हो गए। जिला प्रशासन में बेचैनी हो गई क्योंकि राजनेताओं के फोन स्थानीय D.C., S.P., I.G. तथा कमिश्नर के पास आने लगे। हमारे एक अनुयाई ने बताया कि उपायुक्त महोदय (Deputy Commissioner) तथा पुलिस अधीक्षक महोदय थाने में आए। पुस्तक "ज्ञान गंगा" ली, उसको वहीं बैठकर पढ़ने लगे।

अधिकारी सुशिक्षित तथा दिमागदार होते हैं I.P.S. तथा I.A.S., उनको समझते देर नहीं लगी कि इस पुस्तक में कुछ भी ऐसा नहीं लिखा है जिससे किसी की धार्मिक भावनाऐं आहत होती हों। सब विवरण शास्त्रों से प्रमाणित करके लिखा है। सुबह दस बजे से शाम के पाँच बजे तक अधिकारी-गण मुकदमा दर्ज करने से बचते रहे, परंतु उन अंध श्रद्धावानों ने मध्य प्रदेश के विधानसभा के अध्यक्ष ने पुनः फोन पर कहा कि अधिकारी केस दर्ज नहीं करना चाहते। तब विधानसभा अध्यक्ष ने अधिकारियों को धमकाया तो प्रशासन ने मजबूरन धार्मिक भावनाओं को भड़काने का मुकदमा IPC की धारा 295-A के तहत दर्ज करके लगभग 35 स्त्री-पुरूषों को जेल भेज दिया। मुकदमा नं. 201 दिनाँक-08-05-2011, थाना-मदन महल (जबलपुर)।

विधान सभा अध्यक्ष ने अपने पद का दुरूपयोग करके पाप किया। {उसका फल भी परमात्मा ने उसे तुरंत दिया। वह विधान सभा अध्यक्ष दो महीने बाद ही मत्यु को प्राप्त हुआ। उसका नाम था ईश्वर दास रोहाणी।} इस मुकदमें को माननीय हाई कोर्ट जबलपुर में समाप्त (Quash) करने की अर्जी (M.Cr.C. No. 13577-2013) लगाई जो माननीय उच्च न्यायालय जबलपुर (मध्य प्रदेश) ने वह मुकदमा दिनाँक 20-07-2017 को खत्म कर दिया क्योंकि पुस्तक में सर्व ज्ञान शास्त्र प्रमाणित मिला। लेकिन सन् 2011 से सन् 2017 तक निचली अदालतों में तारीख पर तारीखें पड़ी। उन पर सर्व 35 अनुयाई अपना कार्य छोड़कर गए। किराया लगा, ध्याड़ी छोड़ी, वित्तीय नुक्सान तथा परेशानी उन अंध श्रद्धावानों के हित के लिए झेली कि वे इस पुस्तक में लिखे शास्त्रों के प्रमाणों को आँखों देखकर शास्त्रविधि रहित साधना त्यागकर शास्त्रोक्त साधना करके अपने जीवन को धन्य बनाऐं क्योंकि श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में प्रमाण है। इन दोनों श्लोकों का वर्णन पुस्तक में आगे किया है, वहाँ पढ़ें।

❖ धार्मिक भावना :-

अपने धर्म की धार्मिक क्रियाओं तथा परमात्मा से संबन्धित पूजा पद्यति के प्रति गहरी आस्था को धार्मिक भावना कहते हैं।

❖ धार्मिक भावनाओं को आहत करना :-

किसी के धर्म में चल रही पूजाओं तथा उनके परमात्मा के ऊपर बिना आधार के कटाक्ष या आलोचना करना धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाना है।

❖ तर्क-वितर्क :- किसी विषय पर अपनी-अपनी राय देना, अन्य की राय का खंडन करना व अपनी का मंडन करना, अन्य द्वारा अपने सिद्धांत का समर्थन करना, उसके विचारों को गलत बताना, यह तर्क-वितर्क है। इसमें किसी ग्रन्थ को आधार माना जाए तो समाधान है, अन्यथा झूठा झगड़ा है।

लेखक का उद्देश्य किसी की धार्मिक भावनाओं को ठेस पहुँचाना नहीं है, परंतु शास्त्रों को आधार मानकर तर्क-वितर्क किया है। सर्व शास्त्रों के प्रमाण को आधार रूप में देकर यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान तथा मोक्ष मार्ग को उद्धृत (उजागर) किया है। यदि इसे धार्मिक भावनाओं का आहत होना माना तो दुर्भाग्य की बात है। मेरा (लेखक का) उद्देश्य है कि विश्व के मानव को परमात्मा की खोज में इधर-उधर भटकने से बचाकर प्रमाणित तथा लाभदायक शास्त्रोक्त अध्यात्म ज्ञान व साधना बताऊँ। उनके मानव जीवन की रक्षा करूँ। यदि यह धार्मिक भावनाओं को आहत महसूस होगा तो कोई बात नहीं, फिर तो यह करना आवश्यक है।

उदाहरण :- एक समय एक लड़के ने कुछ बच्चों को पार्क में एक लकड़ी के खंभे पर चढ़ते-उतरते खेलते देखा। उसने गली में खड़े बिजली के खंभे पर चढ़ना प्रारम्भ किया। एक सज्जन पुरूष ने उसे देखा और दौड़कर उसे ऐसा करने से रोका। बच्चा रोने लगा। माता-पिता को बताया कि एक व्यक्ति ने मुझे खेलने से रोका। वह व्यक्ति उसी गली में रहता था। माता-पिता उस बच्चे को लेकर उस व्यक्ति के पास गए और कारण जाना तो पता चला कि उस व्यक्ति ने तो बच्चे के जीवन की रक्षा की है। बच्चे के माता-पिता गए तो थे झगड़ा करने के उद्देश्य से, परंतु उस व्यक्ति के उपकार का धन्यवाद करके आए।

❖ मेरा (लेखक का) यही उद्देश्य है कि हिन्दू धर्म के सब व्यक्ति लकड़ी के खम्बों पर न खेलकर (शास्त्रोक्त साधना न करके) बिजली के खंभों पर चढ़कर मर रहे हैं यानि शास्त्रविरूद्ध मनमाना आचरण करके अनमोल मानव जीवन व्यर्थ कर रहे हैं, उनको शास्त्रोक्त साधना करने के लिए बाध्य करूँ क्योंकि आप मेरे बन्धु हैं। मेरे देश के वासी हैं। परमात्मा के अबोध (अध्यात्म ज्ञान में अनजान) बच्चे हैं। मुझे परमात्मा जी ने सर्व शास्त्रों का यथार्थ ज्ञान दिया है। वर्तमान में सब शिक्षित हैं। शास्त्रों के अध्याय, श्लोक व पष्ठ तक पुस्तक में लिखे हैं, फोटोकॉपी भी लगाई हैं। जाँच करें, फिर मानें।

❖ इस पुस्तक ''कबीर बड़ा या कष्ण'' के लिखने का उद्देश्य है कि आप और मैं हिन्दू धर्म में जन्में हैं। पहले यह दास (रामपाल दास) भी आप वाली साधना लोकवेद वाली ही किया करता था। परमात्मा की कपा से एक तत्वदर्शी संत मिल गए। उन्होंने शास्त्रों से प्रमाण बताकर मेरी शास्त्र विरूद्ध साधना (जो वर्तमान में हिन्दू धर्म में प्रचलित है) को छुड़वाकर शास्त्रों में लिखी सत्य साधना का उपदेश देकर मेरे मानव जीवन को नष्ट होने से बचाया। उस महापुरूष यानि मेरे पूज्य गुरूदेव स्वामी रामदेवानंद जी महाराज की मेरी एक सौ एक पीढ़ी अहसानमंद रहेंगी।

कबीर परमेश्वर जी ने सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

कबीर, पीछे लागा जाऊँ था, लोक वेद के साथ। मार्ग में सतगुरू मिले, दीपक दीन्हा हाथ।।

अर्थात् बताया है कि एक साधक अपने धर्म में लोक वेद (दंत कथा) यानि सुनी-सुनाई बातों

के आधार से (जो शास्त्र प्रमाणित साधना नहीं थी) साधना करता हुआ भक्ति मार्ग पर चला जाऊँ था यानि तीर्थ, धामों पर भटक रहा था। उस मार्ग में सतगुरू (तत्त्वदर्शी संत) मिल गया जिसने शास्त्रों का ज्ञान करवाया यानि जैसे अंधेरे में भटक रहे व्यक्ति को दीपक मिल जाए तो वह मार्ग पर चलता है, कुमार्ग को त्याग देता है। उसी प्रकार मैं (साधक) उस तत्त्वज्ञान रूपी (शास्त्रों के ज्ञान रूपी) दीपक की रोशनी में चलने लगा, मंजिल को प्राप्त किया।

सूक्ष्मवेद में कहा है कि :- ''सत्य भक्ति करे जो हंसा, तारूं तास के इकोतर बंशा।''

शब्दार्थ :- परमात्मा जी ने कहा है कि जो साधक शास्त्रोक्त सत्य साधना भक्ति करता है तो मैं उसकी एक सौ एक (101) पीढ़ी को संसार सागर से पार कर दूँगा यानि पूरे वंश का मोक्ष प्रदान कर दूँगा।

प्रिय पाठको! मेरी (लेखक की) तो एकोतर पीढ़ी निःसंदेह पार होंगी। मेरे को दीक्षा देने का अधिकार मेरे पूज्य गुरूदेव स्वामी रामदेवानंद जी ने दिया है। जो भक्त/भक्तमति मेरे से दीक्षा लेकर शास्त्र विरूद्ध पुरानी साधना त्यागकर शास्त्रोक्त साधना अपनी आँखों से शास्त्रों में देखकर विश्वास के साथ आजीवन करेगा, वह तथा उसकी इकोतर (101) पीढ़ियाँ भवसागर से पार हो जाऐंगी।

❑ कृप्या विश्वास के लिए पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 445 पर ''परमात्मा कबीर जी की भक्ति से हुए भक्तों को लाभ'' अध्याय में।

❖ शास्त्रोक्त साधना तथा शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण (साधना) में क्या अंतर है?

उत्तर :- यह ऊपर बता दिया है कि जो शास्त्र विरूद्ध भक्ति साधना करता है, उसको कुछ भी आध्यात्मिक लाभ नहीं होता। शास्त्र अनुकूल साधना करने से सर्व लाभ मिलते हैं।

शंका :- कुछ व्यक्ति कहते हैं कि रामपाल श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी की पूजा छुड़वाता है।

समाधान :- यह सरासर गलत है। मैं (लेखक) इन देवताओं को शास्त्रोक्त साधना करने के मूल मंत्र देता हूँ। जैसे श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 तथा 16-17 में कहा है कि यह संसार ऐसा जानों जैसे पीपल का वृक्ष उल्टा लटका है। ऊपर को मूल (जड़) तो परम अक्षर पुरूष है। तना अक्षर पुरूष है। उससे मोटी डार निकली है, वह क्षर पुरूष यानि काल ब्रह्म है जिसे ज्योति निरंजन भी कहते हैं। उस डार से तीनों गुण रूपी (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव रूपी) शाखाऐं निकली हैं तथा उन शाखाओं पर लगे पत्ते संसार का अंश जानो।

विचार करो पाठकजनो! हम आम का पौधा वन विभाग की नर्सरी से लाकर जमीन में गढ्ढ़ा बनाकर रोपेंगे। उसकी जड़ की सिंचाई करेंगे। उद्देश्य रहेगा कि यह पौधा पेड़ बने और शाखाओं को फल लगें और हम खाऐं और अन्य को खिलाऐं या बेचकर अपना निर्वाह चलाऐं। क्या हम पौधे की शाखाओं को तोड़ फैंकेंगे? उत्तर है कभी नहीं। इसी प्रकार तीनों देवता (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) प्राणी को कर्मों का फल देते हैं। ये हमारी साधना के अभिन्न अंग हैं। इनको छोड़ नहीं सकते। इन तीनों देवताओं से लाभ लेने के विशेष मंत्र हैं जो सूक्ष्म वेद में बताए हैं जो मेरे पास हैं। विश्व में किसी के पास नहीं हैं।

जैसे भैंसा (झोटा) होता है। उस भैंसे का एक मूल मंत्र है। उससे उसको पुकारने से वह तुरंत सक्रिय हो जाता है। वह उस मंत्र के वश है। उसके बस की बात नहीं रहती। वह मंत्र हुर्र-हुर्र है जिसको सुनते ही भैंसे के कान खड़े हो जाते हैं। इस मंत्र का प्रयोग वह व्यक्ति करता है जिसने

अपनी भैंस को भैंसे से गर्भ धारण करवाना होता है। यदि उस पशु को उसके प्रचलित नाम भैंसा-भैंसा करके पुकारें तो वह टस-से-मस नहीं होता। ठीक इसी प्रकार इन तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) के यथार्थ मंत्र साधना करने के हैं जिनके जाप से ये शीघ्र प्रभावित होते हैं तथा तुरंत कर्म फल देते हैं।

हमने पूजा मूल रूप परम अक्षर ब्रह्म यानि परमेश्वर को ईष्ट रूप मानकर करनी है। जैसे आम के पौधे की जड़ की सिंचाई (पूजा) करने से पौधे के सर्व अंग विकसित होते हैं यानि सर्व देवता प्रसन्न होते हैं। शास्त्रविधि विरूद्ध साधना वह है जिसमें संसार रूपी पौधे को शाखाओं की ओर से जमीन में गढ़ा खोदकर मिट्टी में गाड़कर इन शाखाओं की सिंचाई (पूजा) करते हैं, जड़ को ऊपर कर देते हैं जो व्यर्थ है। मूर्ख ही ऐसा कर सकते हैं, बुद्धिमान नहीं।

कपया देखें पष्ठ नं. 6 पर भी दो चित्र आम के पौधे के जिनमें शास्त्रविरूद्ध और शास्त्र अनुकूल साधना चित्रों द्वारा समझाई है।

यह तत्वज्ञान परमेश्वर कबीर जी ने बताया है तथा मेरे पूज्य गुरूदेव स्वामी रामदेवानंद जी की कपा व आशीर्वाद से मुझे समझ आया है। यह अटल सत्य ज्ञान है, परंतु जन-साधारण यानि वर्तमान सर्व मानव के लिए इतना जटिल है जितना चार सौ (400) वर्ष पूर्व वैज्ञानिक निकोडीन कोपरनिकस ने कहा था कि सूर्य के पथ्वी के चारों ओर घूमने से दिन-रात नहीं बनते। पथ्वी अपने अक्ष पर घूमती है, जिस कारण से दिन-रात बनते हैं। उस समय सबकी धारणा थी कि सूर्य पथ्वी के चारों ओर घूमता है। इस कारण दिन-रात बनते हैं। उस समय उस सच्चे वैज्ञानिक का धर्मांध व्यक्तियों ने जनता को भड़काकर इतना प्रबल विरोध किया था कि यह झूठ बोलता है। यह धर्म के विरूद्ध है। इसको फाँसी पर लटकाकर मार डालो। उस देश में गवर्नर को दण्ड देने व क्षमा करने का अधिकार था। कहते हैं कि गवर्नर ने वैज्ञानिक से कहा था कि आप एक बार जनता के सामने कह दें कि पथ्वी नहीं घूमती। सूर्य घूमने से दिन-रात बनते हैं। मैं आपको क्षमा कर दूँगा। परंतु सत्य के पुजारी वैज्ञानिक ने कहा कि यह असत्य है, मैं कभी नहीं कहूँगा, जो करना है करो। उस सच्चे व्यक्ति को उस समय फाँसी पर लटका दिया गया था। बाद में चार सौ वर्ष पश्चात् उस दिवांगत वैज्ञानिक की आत्मा से विश्व ने क्षमा याचना की कि आपका बताया विधान सत्य था। हमको क्षमा करना। यही दशा मेरी है। मैं कहता हूँ कि ब्रह्मा-विष्णु-शिव नाशवान हैं। इनकी जन्म-मत्यु होती है। इनके माता-पिता हैं। जिन पुराणों को आप सत्य मानते हो, उन्हीं में प्रमाण दिखा दिए हैं। धर्मांध संत-मण्डलेश्वर, अखाड़ों के महंत-जन मेरे सत्य ज्ञान का घोर विरोध कर तथा करवा रहे हैं। जिस कारण से मेरे ऊपर झूठे मुकदमें बनवाकर जेल में डाला जाता है। (सन् 2006 में झूठा मुकदमा बनाया। इक्कीस महीने जेल में रहा।) प्रचार बंद करवाया जाता है। परंतु वर्तमान में शिक्षित मानव है। सब प्रमाण ग्रन्थों में हैं। इसलिए मैं जीवित हूँ। यदि सौ वर्ष पूर्व यह ज्ञान बताता तो कब का परलोक चला गया होता।

विशेष :- यहाँ पर यह बताना अनिवार्य समझता हूँ कि दास (लेखक) तथा दास के अनुयाई पाँचों वेदों (सूक्ष्म वेद, ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) तथा गीता जी में बताए अनुसार भक्ति व साधना करते हैं। यजुर्वेद अध्याय 19 मंत्र 25 तथा 26 में कहा है :-

यजुर्वेद अध्याय 19 मन्त्र 25

सन्धिछेदः— अर्द्ध ऋचैः उक्थानाम् रूपम् पदैः आप्नोति निविदः।

प्रणवैः शस्त्राणाम् रूपम् पयसा सोमः आप्यते।।(25)

अनुवादः– जो सन्त (अर्द्ध ऋचैः) वेदों के अर्द्ध वाक्यों अर्थात् सांकेतिक शब्दों को पूर्ण करके (निविदः) आपूर्त्ति करता है (पदैः) श्लोक के चौथे भागों को अर्थात् आंशिक वाक्यों को (उक्थानम्) स्तोत्रों के (रूपम्) रूप में (आप्नोति) प्राप्त करता है अर्थात् आंशिक विवरण को पूर्ण रूप से समझता और समझाता है (शस्त्राणाम्) जैसे शस्त्रों को चलाना जानने वाला उन्हें (रूपम्) पूर्ण रूप से प्रयोग करता है ऐसे पूर्ण सन्त (प्रणवैः) औंकारों अर्थात् ओम्–तत्–सत् मन्त्रों को पूर्ण रूप से समझ व समझा कर (पयसा) दूध–पानी छानता है अर्थात् पानी रहित दूध जैसा तत्व ज्ञान प्रदान करता है जिससे (सोमः) अमर पुरूष अर्थात् अविनाशी परमात्मा को (आप्यते) प्राप्त करता है। (वह पूर्ण सन्त वेद को जानने वाला कहा जाता है।)

भावार्थः- तत्वदर्शी सन्त वह होता है जो वेदों के सांकेतिक शब्दों को पूर्ण विस्तार से वर्णन करता है जिससे पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति होती है वह वेद के जानने वाला कहा जाता है।

यजुर्वेद अध्याय 19 मन्त्र 26

सन्धिछेद :– अश्विभ्याम् प्रातः सवनम् इन्द्रेण ऐन्द्रम् माध्यन्दिनम्।

वैश्वदैवम् सरस्वत्या तृतीयम् आप्तम् सवनम्।।(26)

अनुवाद :– वह पूर्ण सन्त तीन समय की साधना बताता है। (अश्विभ्याम्) सूर्य के उदय–अस्त से बने एक दिन के आधार से (इन्द्रेण) प्रथम श्रेष्ठता से सर्व देवों के मालिक पूर्ण परमात्मा की (प्रातः सवनम्) पूजा तो प्रातः काल करने को कहता है जो (ऐन्द्रम्) पूर्ण परमात्मा के लिए होती है। दूसरी (माध्यन्दिनम्) दिन के मध्य में करने को कहता है जो (वैश्वदैवम्) सर्व देवताओं के सत्कार के सम्बधित (सरस्वत्या) अमृतवाणी द्वारा साधना करने को कहता है तथा (तृतीयम्) तीसरी (सवनम्) पूजा शाम को (आप्तम्) प्राप्त करता है अर्थात् जो तीनों समय की साधना भिन्न–२ करने को कहता है वह जगत् का उपकारक सन्त है।

भावार्थः- जिस पूर्ण सन्त के विषय में मन्त्र 25 में कहा है वह दिन में 3 तीन बार (प्रातः दिन के मध्य-तथा शाम को) साधना करने को कहता है। सुबह तो पूर्ण परमात्मा की पूजा मध्याह्न को सर्व देवताओं को सत्कार के लिए तथा शाम को संध्या आरती आदि को अमृत वाणी के द्वारा करने को कहता है वह सर्व संसार का उपकार करने वाला होता है।

जैसा कि इन वेद मंत्रों में स्पष्ट किया है कि तत्वदर्शी संत शास्त्रों के सांकेतिक शब्दों को ठीक से समझता व समझाता है। गूढ़ रहस्यों को उजागर करता है। तीन समय की स्तुति प्रतिदिन करने को कहता है। स्वयं भी करता है तथा अनुयाईयों से भी करवाता है। हम (लेखक तथा मेरे अनुयाई) तीन समय सुबह, दोपहर तथा शाम को स्तुति (आरती) करते हैं। दोपहर को बारह बजे के बाद विश्व के सर्व देवी-देवताओं की स्तुति (सम्मान आरती) करते हैं। पूजा परम अक्षर ब्रह्म की करते हैं। जैसे देश के राजा (प्रधानमंत्री जी) को मुखिया रूप में विशेष सम्मान देते हैं तथा अन्य मंत्रियों व अधिकारियों को भी नमस्कार करते हैं। वे अच्छे नागरिक होते हैं। इसी प्रकार हम पूजा तो परम अक्षर ब्रह्म की करते हैं तथा सम्मान सब का करते हैं।

प्रमाण के लिए दोपहर की स्तुति के कुछ अंश :-

सतपुरुष समरथ ओंकारा, अदली पुरुष कबीर हमारा।1।

आदि जुगादि दया के सागर, काल कर्म के मौचन आगर।2।

दुःख भंजन दरवेश दयाला,असुर निकन्दन कर पैमाला ।3।
आब खाक पावक और पौना, गगन सुन्न दरयाई दौना ।4।
धर्मराय दरबानी चेरा, सुर असुरों का करै निबेरा ।5।
सत का राज धर्मराय करहीं, अपना किया सभैडण्ड भरहीं ।6।
शंकर शेष रु ब्रह्मा विष्णु, नारद शारद जा उर रसनं ।7।
गौरिज और गणेश गोसांई, कारज सकल सिद्ध हो जाई ।8।
ब्रह्मा विष्णु अरु शम्भू शेषा, तीनों देव दयालु हमेशा ।9।
सावित्री और लक्ष्मी गौरा, तिहुं देवा सिर कर हैं चौरा ।10।
लील नाभ सैं ब्रह्मा आये, आदि ओम् के पुत्र कहाये ।16।
शम्भू मनु ब्रह्मा की साखा, ऋग यजु साम अथर्वन भाषा ।17।
पीवरत भया उत्तानं पाता, जा कै ध्रूव हैं आत्म ग्याता ।18।
सनक सनन्दनं संत कुमारा, चार पुत्र अनुरागी धारा ।19।
तेतीस कोटि कला विस्तारी, सहंस अठासी मुनिजन धारी ।20।
कश्यप पुत्र सूरज सुर ज्ञानी, तीन लोक में किरण समानी ।21।
साठ हजार संगी बाल्यखेलं, बीना रागी अजब बलेलं ।22।
तीन कोटि योधा संग जाके, सिकबंधी हैं पूर्ण साके ।23।
हाथ खड़ग गल पुष्प की माला, कश्यप सुत है रूप बिसाला ।24।
कौसतभ मणि जड़या विमान तुम्हारा, सुरनर मुनिजन करत जुहारा ।25।
चन्द सूर चकवै पृथ्वी माहीं,निस वासर चरणौं चित लाहीं ।26।
पीठै सूरज सनमुख चन्दा, काटैं त्रिलोकी के फंदा ।27।
तारायण सब स्वर्ग समूलं, पखे रहैं सतगुरु के फूलं ।28।
जय जय ब्रह्मा समर्थ स्वामी, येती कला परम पद धामी ।29।
जय जय शम्भू शंकर नाथा, कला गणेशं रु गौरिज माता ।30।
कोटि कटक पैमाल करंता, ऐसा शम्भू समरथ कन्ता ।31।
चन्द लिलाट सूर संगीता, योगी शंकर ध्यान उदीता ।32।
नील कण्ठ सोहै गरुडासन, शम्भू योगी अचल सिंघासन ।33।
गंग तरंग छुटैं बहुधारा, अजपा तारी जय जय कारा ।34।
ऋद्धि सिद्धि दाता शम्भू गोसांई, दालीदर मोच सभै हो जाई ।35।
आसन पद्म लगाये योगी, निहइच्छया निर्बानी भोगी ।36।
सर्प भुवंग गलै रूंड माला, बृषभ चढिये दीन दयाला ।37।
वामैं कर त्रिशूल विराजै, दहनै कर सुदर्शन साजै ।38।
सुन अरदास देवन के देवा, शम्भु जोगी अलख अभेवा ।39।
तू पैमाल करे पल मांही, ऐसे समर्थ शम्भू सांई ।40।
एक लख योजन ध्वजा फरकैं, पचरंग झण्डे मौहरै रखै ।41।
काल भद्र कृत देव बुलाऊँ, शकंर के दल सब ही ध्याऊँ ।42।
भैरों खित्रपाल पलीतं, भूत अर दैंत चढ़े संगीतं ।43।

राक्षस भञजन बिरद तुम्हारा, ज्यूं लंका पर पदम अठारा।44।
कोट्यौं गंधर्व कमंद चढ़ावैं, शंकर दल गिनती नहीं आवैं।45।
मारैं हाक दहाक चिंघारें, अग्नि चक्र बाणों तन जारैं।46।
कंप्या शेष धरनि थरर्‌ानी, जा दिन लंका घाली घानी।47।
तुम शम्भू ईशन के ईशा, वृषभ चढिये बिसवे बीसा।48।
इन्द्र कुबेर और वरूण बुलाऊँ, रापति सेत सिंघासन ल्याऊँ।49।
इन्द्र दल बादल दरियाई, छयानवैं कोटि की हुई चढाई।50।
सुरपति चढ़े इन्द्र अनुरागी, अनन्त पद्म गंधर्व बड़भागी।51।
किसन भण्डारी चढ़े कुबेरा, अब दिल्ली मंडल बौहर्‌यों फेरा।52।
वरुण विनोद चढ़े ब्रह्म ज्ञानी, कला सम्पूर्ण बारह बानी।53।
धर्मराय आदि जुगादि चेरा, चौदह कोटि कटक दल तेरा।54।
चित्रगुप्त के कागज मांही, जेता उपज्या सतगुरु सांई।55।
सातों लोक पाल का रासा, उर में धरिये साधू दासा।56।
विष्णुनाथ हैं असुर निकन्दन, संतों के सब काटैं फन्दन।57।
नरसिंघ रूप धरे घुर्राया, हिरणाकुस कुं मारन धाया।58।
संख चक्र गदा पद्म विराजैं, भाल तिलक जाकैं उर साजैं।59।
वाहन गरुड़ कृष्ण असवारा, लक्ष्मी ढौरे चोर अपारा।60।
रावण महिरावण से मारे, सेतु बांध सेना दल त्यारे।61।
जरासिंध और बालि खपाए, कंस केसि चानौर हराये।62।
कालीदह में नागी नाथा, सिसुपाल चक्र सैं काट्या माथा।63।
कालयवन मथुरा पर धाये, ठारा कोटि कटक चढ़ आए।64।
मुचकंद पर पीताम्बर डार्‌या, कालयवन जहां बेगि सिंघार्‌या।65।
परसुराम बावन अवतारा, कोई न जानै भेद तुम्हारा।66।
संखासुर मारे निर्बानी, बराह रुप धरे परवानी।67।
राम औतार रावण की बेरा, हनुमंत हाका सुनी सुमेरा।68।

''असुर निकंदन रमैणी की वाणी नं. 1-68 का सरलार्थ''

सरलार्थ :- ऊपर लिखी वाणियाँ संत गरीबदास जी द्वारा रचित अमर ग्रंथ से अध्याय ''असुर निकंदन रमैणी'' से हैं जिनका सरलार्थ इस प्रकार है :-

सरलार्थ :- असुर का अर्थ है राक्षस, निकन्दन अर्थात् नाश करने वाली, रमैणी का अर्थ है स्तुति, विनती।

असुर निकंदन रमैणी में विश्व की सर्व शक्तियों, देवताओं तथा पूर्ण परमात्मा की स्तुति की गई है जिसको पढ़ने से वैश्विक शक्तियाँ प्रसन्न होकर अपने स्तर का लाभ साधक को देने लगती हैं।

विशेषता :- इस रमैणी में सर्व सद्ग्रन्थों का सार है। जैसे जंगल में जड़ी-बूटियों के पौधे-पेड़ उगे होते हैं। सद्ग्रन्थ तो वन के समान हैं, इसमें आध्यात्मिक रोगों की जड़ी-बूटियाँ हैं। वैद्य (डॉक्टर) को ज्ञान होता है, परंतु वह जड़ी-बूटियाँ इकट्ठी कूट-काटकर, उबालकर औषधि बनाकर बोतल में भरकर रख लेता है। रोग के अनुसार एक या दो चम्मच पिला देता है, रोग समाप्त हो जाता है। इस रमैणी में

आध्यात्मिक वैद्य संत गरीबदास जी ने सद्ग्रन्थों से सार निकाल रखा है। जैसे शिवपुराण पूरी पढ़ने से जो फल मिलता है, वह इस असुर निकंदन रमैणी में लिखी 19 वाणी श्रद्धा से पढ़ने से प्राप्त हो जाता है जो श्री शिव जी की महिमा लिखी है। इसी प्रकार श्री विष्णुपुराण को पूरा पढ़ने से जो फल मिलता है, वह श्री विष्णु जी की लिखी 12 (बारह) वाणियों से मिल जाता है। इसी प्रकार श्री ब्रह्मा जी की महिमा की 14 वाणी पढ़ने से श्री ब्रह्मापुराण जितना फल मिलता है। इसी प्रकार अन्य जानें।

यह अमरवाणी परमात्मा से साक्षात्कार किए हुए संत गरीबदास जी के मुख कमल से बोली गई हैं। जिस कारण से उनकी वाणी मंत्र की तरह कार्य करती है, शीघ्र लाभ भी देती है।

वाणी :- सतपुरूष समर्थ ओंकारा। अदली पुरूष कबीर हमारा।।1।।
आदि युगादि दया के सागर। काल कर्म के मोचन आगर।।2।।
दुःख भंजन दर्वेश दयाला। असुर निकन्दन कर पैमाला।।3।।

❖ सरलार्थ :- इन तीन वाणियों में पूर्ण परमात्मा की स्तूति की है तथा कहा है कि ओंकार का वास्तविक अर्थ है काल ब्रह्म क्योंकि यह ॐ नाम का पर्याय है। ॐ मंत्र ब्रह्म का है। ब्रह्मज्ञानी कहलाने वाले ऋषियों का दावा है कि ब्रह्म अर्थात् ओंकार नाम वाला प्रभु हमारा पूज्य है। ओंकार (ॐ) नाम के जाप से ब्रह्म प्राप्ति होती है। ब्रह्म को वे निराकार बताते हैं, समर्थ सिरजनहार बताते हैं। संत गरीबदास जी ने कहा है कि सतपुरूष समर्थ ओंकार है। समर्थ ब्रह्म है। {ब्रह्म का अर्थ परमात्मा होता है, परंतु काल अधूरा परमात्मा यानि ब्रह्म है, इसे भी ब्रह्म कहने लगे। समर्थ परमात्मा को पूर्ण ब्रह्म कहते हैं। इस भाव से कहा है कि समर्थ ओंकारा अर्थात् ब्रह्म तो कबीर परमेश्वर हैं।} वह अदली (न्यायकारी) पुरूष (परमात्मा) हमारे कबीर जी हैं।(1)

❖ आदि-युगादि अर्थात् सष्टि की रचना के आदि से जुग (युग) से यानि युगों-युगों से ये दया के समुद्र हैं और काल (मत्यु) तथा पाप कर्म का मोचन (नाश) करने वाले हैं।(2)

❖ कबीर परमात्मा दुःखों का भंजन (नाश) करने वाले दर्वेश (महात्मा रूप में प्रकट होने वाले) दयालु हैं। ये परमात्मा असुर (राक्षसों) का निकन्दन (नाश) करके उनको पैमाल (पूर्ण रूप से मिटा देते हैं) कर देते हैं।(3)

वाणी :- आब खाक पावक और पवना। गगन सुन्न दरियाई दौना।।4।।

❖ सरलार्थ :- पाँचों तत्त्व यहाँ पर सर्व रचना के जिम्मेवार हैं।

आब(पानी), खाक (पथ्वी), पावक (अग्नि), पवन (वायु), गगन (आकाश) दरियाई दौना का अर्थ है सतलोक (सनातन परम धाम) को तो दरिया जानो तथा काल ब्रह्म के लोक को दौना (Tub-टब) जानो। जो पाँच तत्त्वों तथा तीन गुणों से काल ब्रह्म के लोक तथा जीवों के शरीरों की रचना हुई है। ये तो कच्चे (नाशवान) हैं। सतलोक के तत्त्व पक्के हैं। एक नूरी तत्त्व से सब रचना है। अमर है, अजर है। वहाँ किसी की म त्यु नहीं होती। वहाँ पर तीन गुणों का प्रभाव नहीं है।(4)

वाणी :- धर्मराय दरबानी चेरा। सुर–असुरों का करे (निबेड़ा) निबेरा।।5।।
सत का राज धर्मराय करहीं। अपना किया सबहे डण्ड भरहीं।।6।।

❖ सरलार्थ :- काल लोक का धर्मराय (न्यायधीश जो सबको पाप-पुण्यों के अनुसार कर्म फल देता है) परमेश्वर कबीर जी का दरबानी अर्थात् ड्योडी में कार्यरत कर्मचारी जैसा है। यह तो कर्मानुसार यह निबेड़ा (निर्णय) करता है कि इसके कर्म ऐसे हैं, यह राक्षस है और यह ऐसे कर्मों वाला देव स्वरूप आत्मा है। इसको नरक भेजो। यह स्वर्ग जाएगा, आदि-आदि।(5)

❖ सत का राज अर्थात् जैसा जिसका कर्म है, उसको वैसा ही फल देकर धर्मराय तो सत का राज करता है अर्थात् जैसे पहले भारत देश गुलाम था और यहाँ का शासन एक वायसराय करता था जो इंग्लैंड के राजा का नौकर होता था। इसी प्रकार धर्मराय को कहा है कि यह हमारा नौकर है। यहाँ का राजा है। इस प्रकार राज करता है। जो जैसा कर्म करता है, उसका दण्ड प्राणी भोगता है, आदेश धर्मराय का होता है।(6)

वाणी :- शंकर शेष और ब्रह्मा विष्णुं। नारद–शारद जा उर रसनं।।7।।

❖ सरलार्थ :- काल ब्रह्म की प्रधान शक्तियों की जानकारी दी है, उनके नाम बताए हैं। श्री शंकर जी के साथ शेषनाग का नाम जोड़ा है। शेषनाग भी महान शक्ति मानी है। शेषनाग के वंशज साँप श्री शंकर जी के गले की शोभा बढ़ाते हैं। शारद कहा शारदा जी को जो ब्रह्मा जी पुत्री है, वह अच्छी गायक मानी गई है। इसी को सरस्वती भी पुराणों में कहा है। उर रसनं का अर्थ सरस्वती जी की मीठी वाणी उर (हृदय) को छू जाती है। नारद जो ब्रह्मा जी के पुत्र ऋषि हैं। उसका नाम भी महापुरूषों में शामिल है। उनको भी सम्मान से याद किया जाता है।(7)

वाणी :- गौरज और गणेश गोसांई। कारज सकल सिद्ध हो जाईं।।8।।

❖ सरलार्थ :- गौरज (गिरजा अर्थात् पार्वती जी) तथा गणेश जी अपने स्तर के सर्व कार्य सिद्ध कर देते हैं जो इनकी सच्चे नामों से साधना करते हैं।(8)

वाणी :- ब्रह्मा, विष्णु और शंभू शेषा। तीनों देव दयालु हमेशा।।9।।
सावित्री और लक्ष्मी गौरा। तीनों देवा सिर कर हैं चौरा।।10।।

❖ सरलार्थ :- श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी ये तीनों देवता दयावान हैं।(9)

इनके सिर पर इनकी पत्नियाँ चंवर करती हैं। श्री ब्रह्मा जी के सिर पर सावित्री जी, श्री विष्णु जी के सिर पर लक्ष्मी जी तथा शिव जी के सिर पर पार्वती जी सत्कार करते हुए चंवर ढुराती हैं।(10)

वाणी :- नील नाभ से ब्रह्मा आए, आदि ओम् के पुत्र कहाए।।16।।

❖ सरलार्थ :- श्री ब्रह्मा (रजगुण) का जन्म पुराणों के आधार से माना जाता है कि नील (नीले रंग के भगवान विष्णु) की नाभि से उत्पन्न कमल में उत्पन्न हुआ। वास्तव में वह जो श्री विष्णु जी के रूप में थे, वे स्वयं काल प्रभु थे और उसकी नाभि से कमल उत्पन्न हुआ था। उसमें ब्रह्मा जी को युवा अवस्था में अचेत अवस्था में रखा गया था। वाणी का भावार्थ है कि ओम् मन्त्र श्री ब्रह्मा जी की भक्ति का भी है, परंतु इससे आदि यानि पहले जो ओम् मंत्र वाला काल ब्रह्म है, उसके पुत्र हैं श्री ब्रह्मा जी। (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की उत्पत्ति का यथार्थ ज्ञान इसी पुस्तक के तीसरे अध्याय में ''स ष्टि रचना'' में बताया है।)(16)

वाणी :- स्वयंभू मनु ब्रह्मा की शाखा। ऋग यजु साम अथर्वन भाषा।।17।।
पीवरत भया उत्तानं पाता। जा कै ध्रूव हैं आत्म ज्ञाता।।18।।
सनक सनन्दन संत कुमारा। चार पुत्र अनुरागी धारा।।19।।
तेतीस कोटि कला विस्तारी। सहंस अठासी मुनिजन धारी।।20।।

❖ सरलार्थ :- महर्षि स्वयंभू मनु जी श्री ब्रह्मा जी के पुत्र हुए हैं जिनके विषय में प्रसिद्ध है कि उन्होनें श्री ब्रह्मा जी से चारों वेदों को सुना और कण्ठस्थ कर लिया। उनको समझा तथा अनुभव किया। फिर अपने अनुभव को मनुस्मति नामक पुस्तक में लिखा।(17)

❖ प्रियव्रत (पीवरत) श्री ब्रह्मा जी का वंशज है और उसका पुत्र उतानपात हुए हैं। उतानपात के पुत्र

ध्रुव हुए जो पाँच वर्ष की आयु में ही भक्त हुए हैं तथा छः महीने में ही प्रभु का दर्शन किया।(18)

❖ श्री ब्रह्मा जी के ही चार पुत्र और हुए हैं। 1. सनक 2. सनन्दन 3. सनातन 4. संत कुमार जिन्होनें वरदान माँगा था कि हम कभी युवा न हों क्योंकि युवा होने के पश्चात् वासनाएँ प्रबल हो जाती हैं। जिस कारण से जीव भक्ति नहीं कर पाता, परिवार बन जाता है। सारी आयु सांसारिक कार्यों में व्यतीत हो जाती है। मानव का मूल कार्य पूर्ण नहीं हो पाता जो भक्ति करके मोक्ष प्राप्त करना है। इन्होंने वरदान माँगा कि हमारी मत्यु तक आयु केवल पाँच वर्ष की ही रहे। वे पाँच वर्ष के बच्चे के रूप में हैं, परंतु बहुत बुद्धिमान हैं। इन्होंने विवेक से पाँच वर्ष की अवस्था में रहने का वरदान माँगा है। जिस कारण से इन महापुरूषों को अनुरागी धारा कहा है कि इनको संसार से वैराग्य हो गया, भगवान भक्ति की प्रबल प्रेरणा बनी है।(19)

❖ श्री ब्रह्मा जी की महिमा का गुणगान करते हुए संत गरीबदास जी ने बताया है कि श्री ब्रह्मा जी की संतान कितनी महान हुई है। जैसे 33 करोड़ देवता भी श्री ब्रह्मा जी (रजगुण) के कुल में जन्मे हैं और 88 हजार ऋषि जी भी श्री ब्रह्मा जी का कुल है। यह सब विस्तार श्री ब्रह्मा जी के वंशजों का है।(20)

वाणी :- कश्यप पुत्र सूरज सुर ज्ञानी। तीन लोक में किरण समानी।।21।।

❖ सरलार्थ :- श्री ब्रह्मा जी के पुत्र श्री कश्यप ऋषि हुए हैं। श्री कश्यप ऋषि के पुत्र श्री सूरज (सुर) देवता हुए हैं जो एक ब्रह्माण्ड में सर्व प्रकाश स्रोतों के मुखिया हैं जिसके आधीन सूर्य (Sun) आदि प्रकाश के स्रोत हैं। श्री सूरज देवता को कहा है कि वे बहुत बुद्धिमान हैं।(21)

वाणी :- साठ हजार संगी बाल खेलं। बीना रागी अजब बलेलं।।22।।
तीन कोटि योधा संग जाके। सिकबंदी है पूर्ण साके।।23।।

❖ सरलार्थ :- जिस समय शिव-पार्वती का विवाह हो रहा था, ब्रह्मा, विष्णु तथा अन्य देवता उपस्थित थे। रजोगुण की अधिकता के कारण पार्वती के सुंदर रूप को देखकर ब्रह्मा जी का वीर्यपात हो गया। जमीन पर गिर गया। ब्रह्मा जी ने शर्म के कारण पैर से मसलकर छुपाना चाहा। उस वीर्य के टुकड़े हो गए जो 60 हजार बाल्यखेल तथा 3 करोड़ योद्धा हुए। यह पौराणिक कथा है। सूरज देवता जब रथ में बैठकर चलते हैं तो सूर्य के रथ के आगे 60 हजार बाल्यखेल चलते हैं जो बीना आदि-आदि वाद्ययंत्र बजाने में कुशल हैं तथा राग भी अच्छा गाते हैं। सूरज देवता के रथ के पीछे तीन करोड़ योद्धा चलते हैं जो सिकबंदी अर्थात् पूर्ण रूप से पराक्रमी हैं। पूर्ण साकै अर्थात् उनकी शूरवीरता की साक (साख) यानि सनन्द है।(22-23)

वाणी :- हाथ खड़ग गल पुष्प की माला। कश्यप सुत है रूप विशाला।।24।।
कौसतभ मणि जड़या विमान तुम्हारा। सुरनर मुनिजन करत जुहारा।।25।।

❖ सरलार्थ :- कश्यप ऋषि के पुत्र सूरज देवता अपने हाथ में खड़ग (तलवार) लिए रथ में बैठता है। उनके रथ के चारों ओर कौस्तभ मणि लगी है और सूर्य देव के गले में फूल माला है। हे कश्यप सुत अर्थात् श्री कश्यप ऋषि के पुत्र! आपका रूप (शरीर) बहुत विशाल है। आपकी (जुहारा) जुहारी अर्थात् सत्कार आरती अन्य सुर (देवता) तथा नर (भक्तजन) तथा ऋषि जी करते हैं। आपका सम्मान सब करते हैं।(24-25)

वाणी :- चंद सूर चकवै पथ्वी मांही। निस—वासर चरणों चित लाहीं।।26।।

❖ सरलार्थ :- पथ्वी आदि लोकों में सूर्य तथा उपग्रह चाँद का प्रकाश चकवै है अर्थात् चक्रवर्ती हैं।(सब जगह हैं।) भक्तों को संदेश दिया है कि ऐसे महापुरूष सूर्य देव का निस (निशा=रात्रि) और

वासर (वासुर=दिन) शुक्रिया करना चाहिए। इसकी महिमा को चित्त (ध्यान) में रखना चाहिए।(26)

वाणी :- पीठै सूरज सनमुख चंदा। काटैं त्रिलोकी के फंदा।।27।।

❖ सरलार्थ :- पीठै सूरज सनमुख चंदा अर्थात् आगे-पीछे सब स्थानों पर सूर्य तथा चाँद मिलकर तीनों लोकों के अँधकार का फंदा काटते हैं अर्थात् अधेरे का नाश करके प्रकाश फैलाते हैं जो सूर्य देवता के आधीन है।(27)

वाणी :- तारायण सब स्वर्ग समूलं। पखे रहैं सतगुरू के फूलं।।28।।

❖ सरलार्थ :- उपरोक्त प्रकाश स्रोत जो सूरज देवता के आधीन हैं, उन सहित जितने भी तारे तथा स्वर्ग आदि-आदि हैं, वे समूल अर्थात् सष्टि के मूल (सतलोक आदि-आदि ऊपर के लोकों समेत) सहित सतगुरू अर्थात् कबीर परमेश्वर जो संत गरीबदास जी को सतगुरू रूप में मिले थे। उसके फूल पखे हैं (खिले हैं) यानि सर्व सष्टि कबीर परमेश्वर जी की फुलवाड़ी में फूल है।(28)

वाणी :- जय जय ब्रह्मा समर्थ स्वामी। येती कला परम पद धामी।।29।।

❖ सरलार्थ :- हे ब्रह्मा जी! आप अपने रजगुण विभाग में समर्थ हैं, आपकी जय हो, जय हो। आपकी इतनी महिमा है जो वाणी सँख्या 16 से 28 में बताई है, आप इतने समर्थ हैं। जन-साधारण की ताकत तो कुछ भी नहीं है। श्री ब्रह्मा जी की तो शूरवीर संतानें हैं। आप काल लोक में रजगुण विभाग का परम पद अर्थात् श्रेष्ठ पदवी प्राप्त हो तथा आप ब्रह्मालोक (ब्रह्मा की नगरी) रूपी धाम (लोक) के स्वामी हैं।(29)

❑ उपरोक्त महिमा श्री ब्रह्मा जी (रजगुण) की बताई है। अब श्री शिव जी (तमगुण) की महिमा बताई है :-

वाणी :- जय जय शम्भू शंकर नाथा। कला गणेश रू गौरज माता।।30।।

❖ सरलार्थ :- हे शिव जी! आपकी जय हो। हे नाथ! आपकी जय हो। श्री गणेश जी की माता जी गौरज (गिरिजा=पार्वती) है जिसने अपनी कला अर्थात् शक्ति से गणेश को उत्पन्न किया।(30)

वाणी :- कोटि कटक पैमाल करंता। ऐसा शम्भू समर्थ कंता।।31।।

❖ सरलार्थ :- हे शंकर जी! आप कोटि कटक अर्थात् करोड़ों सेना को पैमाल यानि नष्ट कर देते हो। हे शंकर जी! आप ऐसे समर्थ कंत (स्वामी) हो।(31)

वाणी :- चंद लिलाट सुर संगीता। जोगी शंकर ध्यान उदीता।।32।।

❖ सरलार्थ :- आपके लिलाट (मस्तिक) के ऊपर चाँद सुशोभित है और आपके साथ आपके सुर अर्थात् गणदेव रहते हैं। आपका ध्यान ऊपर त्रिकुटी की ओर रहता है। {उदीता=जो ऊपर की ओर जाने वाला है।}(32)

वाणी :- नील कण्ठ सोहे गरूड़ासन। शम्भू जोगी अचल सिंहासन।।33।।

❖ सरलार्थ :- भगवान शिव जी ने सागरमंथन में निकला विष पी लिया और उसको अपने गले में ठहरा लिया था। जिस कारण से उनका कण्ठ नीला हो गया था। उसी परोपकार के कारण से शिव जी को नीलकण्ठ के नाम से पुकारा जाता है। हे नीलकण्ठ! आप गरूड़ पक्षी की तरह आसन पर शोभामान भी होते हो। जैसे योग के आसनों में मयूर आसन है। जैसे मोर पक्षी अपने दो पैरों के ऊपर इतने लंबे पंखों को संतुलित करके चलता रहता है। इसी की नकल योगी करते हैं। दोनों हाथों की कोहनियों को पेट में लगाकर हाथों को जमीन पर रखकर शरीर को मोर की तरह कर लेते हैं, उसको मोर आसन कहते हैं, परंतु भगवान शंकर देवता हैं। उनको सम्मान देते हुए गरूड़ पक्षी जो श्री विष्णु भगवान का वाहन है, उसकी तरह योग क्रिया (गरूड़ासन) करने वाला भगवान शिव को बताया है कि आप महान

योगी हैं, आप गरूड़ आसन पर शोभा पाते हैं। हे शंकर! आपका सिहांसन अचल है अर्थात् अन्य देवताओं से लंबी आयु होने के कारण अचल (दृढ़) सिहांसन कहा है।(33)

वाणी :- गंग तरंग छूटैं बहु धारा। अजपा तारी जय जय कारा।।34।।

❖ सरलार्थ :- आपके शिवलोक में गंगाजल की बहुत-सी धाराएँ बह रही हैं। आप सोहं नाम के अजपा अर्थात् मानसी जाप में तारी अर्थात् लौ लगाए हैं। आपको ऐसा कारगर मंत्र परमात्मा से प्राप्त है, आप धन्य हैं। आपकी जय हो, जय हो।(34)

वाणी :- रिद्धि–सिद्धी दाता शंभू गोसांई। दालीदर मोच सभै हो जाई।।35।।

❖ सरलार्थ :- भगवान शिव जी के पास आठ सिद्धि तथा रिद्धि शक्तियाँ हैं जो लंका के राजा रावण ने भगवान तमोगुण शिव की भक्ति करके दो प्राप्त की थी। 1. आकाश में उड़ जाने की सिद्धी तथा 2. धनी बनने के लिए रिद्धि। इस वाणी में कहा है कि भगवान शंकर जी रिद्धि-सिद्धी के दाता हैं और इनकी पूजा करने से दालीदर (दरिद्र) निर्धनता से मोच अर्थात् मुक्ति मिल जाती है।(35)

वाणी :- आसन पदम लगाए जोगी। निःइच्छा निर्बानी भोगी।।36।।

❖ सरलार्थ :- आप महान योगी भी हैं। आप योगासन करते हैं तथा पदम आसन लगाकर समाधिस्थ होते हैं। आप निःस्वार्थ निर्बानी भोगी अर्थात् मोक्ष के लिए प्रयत्नशील होकर ऊपर के मण्डलों में ध्यान लगाकर आनन्द लेते हो।(36)

वाणी :- सर्प भुवंग गले रूंड माला। वृषभ चढ़िए दीन दयाला।।37।।

❖ सरलार्थ :- आपके गले में सर्प भुवंग अर्थात् फन उठाए हुए साँप लिपटे हैं और आप जी कभी-कभी अपने गले में पार्वती जी के पूर्व जन्मों के रूंडों (गर्दन से ऊपर के हिस्से की हड्डी को रूंड कहा है) की माला बनाकर पहनते हैं। आप (वृषभ) नादिया बैल की सवारी करते हैं।

❑ पुराणों में कथा है कि भगवान शिव ने पार्वती जी को अमर मंत्र नहीं बताया क्योंकि उसकी रूचि भक्ति करने की नहीं थी। वह कहा करती थी कि मुझे भगवान मिल ही गए हैं तो भक्ति करने का क्या औचित्य रह गया है। भगवान पाने के लिए ही तो भक्ति करते हैं। इस कारण से शिव जी ने अमर मंत्र नहीं बताया था। जिस कारण से पार्वती जी मरती और जन्मती थी। उसका शरीर दफना दिया जाता है। भगवान शिव कुछ दिन बाद उसके रूंड (सिर) को निकाल लेता था। बहुत प्यार करता, फिर धागे में डाल लेता जिसमें पहले के रूंड डाले होते थे। पार्वती बार-बार जन्म लेकर भगवान शिव को ही पति रूप में वरती थी। भगवान शिव को अमर मंत्र पूर्ण परमात्मा से प्राप्त हुआ था, जब परमात्मा प्रथम सत्ययुग में संत वेश में प्रकट हुए थे जिसका जाप करके शिव जी लम्बी आयु प्राप्त किए हैं। जब माता पार्वती जी का 108वां जन्म हुआ और भगवान शिव से ही विवाह किया। कुछ समय उपरांत ऋषि नारद जी के समझाने तथा 107 रूंडों की माला का ज्ञान कराने के पश्चात् भगवान शिव से अमर मंत्र की याचना की जो भगवान शिव ने उस स्थान पर प्रदान किया जिसको अमरनाथ धाम के नाम से पूजा जाता है। जब तक पार्वती की प्रबल इच्छा मंत्र लेने की नहीं हुई, तब तक भगवान शिव जी ने वह मंत्र दान नहीं किया। श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 18 श्लोक 70 में कहा है कि अर्जुन! इस अनमोल गीता शास्त्र को उसको न सुनाना जिसकी रूचि सुनने की न हो। इसलिए प्रत्येक आध्यात्मिक क्रिया प्रबल जिज्ञासा करने वाले को समझाई-बताई जाती है।

इसलिए कहा है कि आपके गले की शोभा सर्प तथा रूंडों की माला बढ़ाते हैं। हे दीन दयाल! आप वृषभ (नंदी बैल) पर बैठकर यात्रा करते हो। आपका वाहन वृषभ अर्थात् नादिया बैल है।(37)

वाणी :- बामै कर त्रिशूल विराजै। दहनै कर सुदर्शन साजै।।38।।

❖ **सरलार्थ :- आप कभी-कभी बाएँ हाथ में त्रिशूल धारण करते हो तथा दाएँ हाथ में सुदर्शन चक्र धारण करते हो जो आपकी शक्ति को दर्शाता है।(38)**

वाणी :- सुन अरदास देवन के देवा। शम्भू जोगी अलख अभेवा।।39।।

❖ **सरलार्थ :- हे देवताओं में प्रमुख देवता! हमारी अर्ज सुनो। हे शंकर योगी! आपकी महिमा अलख है, जिसे कोई नहीं लख (देख-जान) सकता। आपकी महिमा अभेवा (जिसका जन-साधारण को भेद न हो, वह अभेव है) है।(39)**

वाणी :- तू पैमाल करै पल मांही। ऐसे समर्थ शम्भू सांई।।40।।

❖ **सरलार्थ :- हे शिव जी! सष्टि को पल में पैमाल (नष्ट) कर देते हो। आप इतने समर्थ हैं।(40)**

वाणी :- एक लख योजन ध्वजा फरकै। पंचरंग झण्डे मोहरे रखै।।41।।

❖ **सरलार्थ :- आप अपने निवास के सामने पाँच रंग का ध्वज रखते हो जिसकी ऊँचाई एक लाख योजन अर्थात् 12 लाख कि.मी. है।(एक योजन=4 कोस, एक कोस=3 कि.मी.) आपके निवास पर ध्वज फरके रहे हैं।(41)**

वाणी :- काल भद्र कत देव बुलाऊँ। शंकर के दल सब ही ध्याऊँ।।42।।

❖ **सरलार्थ :- काल भद्र की उत्पत्ति :- जिस समय माता पार्वती जी अपने पिता दक्ष के हवन कुण्ड में जलकर मत्यु को प्राप्त हो गई थी। जब शिव जी को पता चला कि दक्ष ने सती जी का अपमान किया, जिस कारण से उसने आत्मदाह किया है। शिव ने अपनी जटा (सिर के बालों का समूह) से बाल उखाड़कर काल भद्र को प्रकट किया। उसको सब भूत-गण आदि सेना देकर दक्ष को मारने के लिए भेजा था। इसलिए वाणी में काल भद्र को कत (बनावटी) देव कहा है। संत गरीबदास जी हम साधकों को संकेत कर रहे हैं कि भगवान शिव को प्रसन्न करने के लिए ऐसे स्तुति करो कि आप प्रत्येक साधक की रक्षा करते हो तथा भक्त के शत्रु का नाश करते हो। हमारा कोई भी प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष शत्रु है, उससे रक्षा के लिए आपको तथा आप सर्व शूरवीर योद्धाओं के दल (सेना) को आमन्त्रित करता हूँ। आपके द्वारा रचे (कत) काल भद्र को भी बुलाता हूँ।(42)**

वाणी :- भैरों खेत्रपाल पलीतम्। भूत और दैत्य चढ़े संगीतम्।।43।।

❖ **सरलार्थ :- आपके सेनापति भैरव तथा क्षेत्रपाल पलीतं (बड़े खुंखार हैं।), उनके साथ भूत और दैत्य (राक्षस) भी लड़ाई में चढ़ाई करते हैं।(43)**

वाणी :- राक्षस भंजन बिरद तुम्हारा। ज्यों लंका पर पदम अठारा।।44।।

❖ **सरलार्थ :- हे शिव जी! आप बिरद (स्वभाव=विशेषता) राक्षसों का नाश करना है। उदाहरण के लिए जैसे आपने श्री रामचंद्र की स्तुति से खुश होकर रावण के साथ युद्ध करने के लिए अपनी 18 पदम सेना भेजी थी।(44)**

वाणी :- कोट्यों गंधर्व कमंद चढ़ावैं। शंकर दल गिनती नहीं आवै।।45।।

❖ **सरलार्थ :- रावण के साथ लंका में युद्ध के समय श्री रामचंद्र जी के सहयोग के लिए करोड़ों तो गंधर्व कमंद चढ़ा रहे थे अर्थात् तीरों से लड़ रहे थे और शंकर जी की सेना की तो गिनती ही नहीं हो रही थी जो रावण की सेना के साथ युद्ध कर रहे थे।(45)**

वाणी :- मारैं हाक दहाक चिंघारैं। अग्नि चक्र बानों तन जारैं।।46।।

❖ **सरलार्थ :- आपकी सेना रावण की सेना से लड़ते समय हल्ला बोलकर लड़ रहे थे, हाक (हुंकार)**

भर रहे थे। दहाक चिंघारैं अर्थात् चिंघाड़ मारकर सबके दिल दहला रहे थे। अग्नेय शस्त्रों से वार कर रहे थे। अग्नि चक्र तथा अग्नि बानों से शत्रु की सेना के शरीर जला रहे थे।(46)

वाणी :- कंप्या शेष धरनी थर्रानी। जा दिन लंका घाली घानी।।47।।

❖ **सरलार्थ :- जिस दिन आपकी 18 पदम सेना ने श्री रामचन्द्र जी के पक्ष में होकर लंका में घानी घाली अर्थात् लंका नाश करने का चक्र चलाया। (घानी घालना=सरसों का तेल निकालते समय सरसों को पीड़ने के लिए कोल्हू में कुछ मात्रा में डालते थे, उसके पिड़ जाने के पश्चात् दूसरी मात्रा डालते थे, उसको घानी घालना कहते थे। उसमें सरसों या तिल पीड़े जाते थे।) तिल तथा सरसों की तरह रावण की सेना को पीड़ रहे थे, कचूमर निकाल रहे थे। उस समय आपकी सेना के घमासान युद्ध से धरती भी काँप गई थी।(47)**

वाणी :- तुम शम्भू ईशन के ईशा। वंषभ चढ़िए विशवे बीसा।।48।।

❖ **सरलार्थ :- हे शिव शम्भू जी! आप तो गणों के स्वामी गणपति के भी ईश अर्थात् स्वामी हैं। आप वंषभ के ऊपर चढ़कर यात्रा करते हैं। यह विशवे बीसा है अर्थात् शत प्रतिशत सच है। {विशवे बीसा का भावार्थ है कि पहले समय में जमीन की पैमाइस एकड़ों में नहीं थी, बीघों में थी। एक बीघे में 20 बीसे होते थे, उसको पूर्ण बीघा मानते थे। जो कोई खेत 20 बीसे का नहीं होता, उसको अधूरा मानते थे, कच्चा मानते थे। फिर यह कहावत बन गई कि जो कोई व्यक्ति किसी अन्य के विषय में बता रहा हो कि उसने ऐसा कहा है, उस व्यक्ति की बात को सत्य मानते हुए कहते थे कि बीस बीसे है अर्थात् शत प्रतिशत सत्य है।}**

इस वाणी में भी संत गरीबदास जी ने यही कहावत कही है कि आप वंषभ अर्थात् अपने नंदी बैल पर चढ़कर चलते हैं। यह अति सत्य है। कंपा हमारे को भी वंषभ पर चढ़कर चलकर दर्शन दें।(48)

वाणी :- इन्द्र कुबेर वरूण बुलाऊँ। रापति सेत सिंहासन ल्याऊँ।।49।।

❖ **सरलार्थ :-** {रापति का अर्थ है हाथी, सेत=सफेद, इन्द्र=देवताओं का स्वामी स्वर्ग का राजा, कुबेर=धन का देवता, वरूण=जल का देवता।}

असुर निकंदन रमैणी में विश्व के सर्व देवताओं तथा साधु-संतों की स्तूति है। उसी आधार से यहाँ कुछ विशेष विभाग के प्रधान देवताओं की महिमा बताई है, स्तूति की है। जैसे गाँव में विवाह में फेरों के समय औरतें इकट्ठी होकर गीत (गाने) गाती थी। दुल्हन का हौंसला बढ़ाने के लिए, उसको खुश करने के लिए कहती थी :-

अपनी सखी को हाथी देदूं, और घोड़ों की लादूं लार। आगलियां की तील चार सौ, तेरी ल्याऊँ हजार।।

जो औरतें या लड़कियाँ उस विवाह के समय में गीत गाने आती थी। वे लगभग घर से बाहर की गाँव की होती थी जो केवल गीत गाने के लिए बुलाई जाती थी। लेना-देना कुछ नहीं होता था, परंतु कहने में कसर नहीं छोड़ती थी। उससे कुछ लाभ नहीं था तो हानि भी नहीं थी। जो गीत गाती थी, उनका सामर्थ्य एक काटड़ा दान करने का भी नहीं था, परंतु नीयत तथा भावना ऊँची तथा अच्छी थी। यही भावार्थ इस वाणी की स्तूति का है। कहा है कि इन्द्रदेव का वाहन सफेद हाथी (White Elephant) है। इनके लिए कहा है कि मैं (भक्त) आप इन्द्र जी को पुकारता हूँ। आइए! आपके लिए श्वेत हाथी लाऊँगा, अच्छे सिहांसन लाकर आपको तथा कुबेर जी तथा वरूण जी को उन पर बैठाकर सम्मान करूँगा। {इन देवताओं की स्तूति करने से ये प्रसन्न होकर स्तूतिकर्ता को अपने कोटे से सहायता कर देते हैं।}(49)

वाणी :- इन्द्र दल बादल दरियाई। छ्यानवैं कोटि की हुई चढ़ाई।।50।।
सुरपति चढ़े इन्द्र अनुरागी। अनन्त पदम गंधर्व बड़भागी।।51।।

❖ सरलार्थ :- स्वर्ग के राजा के पास जल विभाग है जिसमें 96 करोड़ मेघमाला हैं। एक मेघमाला में एक करोड़ बादल हैं। एक बादल दरिया के समान है। भक्त की पुकार सुनकर इन्द्र जी अपने बादल दल के साथ पहुँचते हैं। सुरपति इन्द्र जी स्तूतिकर्ता के अनुराग में अर्थात् उनके मोह में चढ़ते हैं। संत गरीबदास जी हम भक्तों को विश्वास दिला रहे हैं कि तुम्हारी सहायता के लिए इन्द्र जी, अनन्त गंधर्व बड़े भाग वाले हैं। वे भी भक्त की सहायता करने चढ़ते हैं अर्थात् पहुँचते हैं। मेरे लिए भी आए थे।

उदाहरण :- 1. एक समय गाँव छुड़ानी (जिला-झज्जर) के आसपास सूखा (अकाल) गिर गया था। आसपास के गाँव के व्यक्ति संत गरीबदास जी के पास आए तथा वर्षा के बिना हुई आपदा से बचाने की प्रार्थना की। संत गरीबदास जी ने इन्द्र जी से विनय की और वर्षा हो गई।

2. संत गरीबदास जी के समय में (वर्तमान हरियाणा प्रांत में) एक गलत परम्परा थी कि एक गोत्र के जाट दूसरे गोत्र के अल्प सँख्यक गोत्र वाले जाटों के गाँव पर धावा बोलकर उनके बैल, भैंस, गाय, धन लूट ले जाते थे। जो समूह लूटने जाता था, उसको ''धाड़य'' कहा करते थे। वर्तमान जिला झज्जर में गाँव छारा है, उसमें दलाल गोत्र के जाट रहते हैं। अन्य कई आसपास के गाँव में राठी गोत्र के जाट रहते हैं। राठी गोत्र वाले जाट ज्यादा थे, वे छारा गाँव के दलाल गोत्र वालों को धाड़य बनाकर लूट लेते थे। राजा तथा नवाब से भी अर्ज की गई, परंतु कोई समाधान नहीं हुआ। कुछ समझदार तथा भगवान को मानने वाले छारा गाँव के व्यक्ति अपने पड़ोसी गाँव छुड़ानी में संत गरीबदास जी के पास गए तथा राठियों से पीछा छुड़वाने की अर्ज की। संत गरीबदास जी को अहसास हुआ कि दलालों के साथ गलत हो रहा है और राठियों के कर्म बिगड़ रहे हैं। आज दलालों का धन लूटकर खुश हो रहे हैं। अगले जन्म में इनके बैल-भैंस बनकर पूरे करने पड़ेंगे। संत गरीबदास जी ने कहा कि अबकी बार जब राठियों की ''धाड़य'' आए, तुम भी लाठी-जेली लेकर मुकाबला करना। छारा गाँव वाले बोले, महाराज! वे सँख्या में अधिक हैं, हम उनके साथ मुकाबला नहीं कर सकते। जब ''धाड़य'' किसी अन्य गोत्र चढ़ाई करती थी तो पहले तिथि बताई जाती थी। संत गरीबदास जी ने कहा कि जैसा मैं कहूँ, वैसा आप अवश्य करना। आप लड़ना मत, खड़े रहना। वे आगे बढ़ जाएँगे, शेष मुझ पर छोड़ो। ऐसा ही किया गया। जिस दिन ''धाड़य'' आनी थी, गाँव के व्यक्ति लाठी-जैली लेकर सीमा पर खड़े हो गए जिस रास्ते से राठियों ने आना था। जब दोनों आमने-सामने हुए तो राठियों ने दलालों के पक्ष में अनगिनत सेना सशस्त्र खड़ी दिखाई दी और लगा कि सेना ने धावा बोल दिया है और उनकी ओर चल पड़ी है। सर्व राठी भाग खड़े हुए। अपने जूते, लाठी, चद्दर भी छोड़कर भाग गए। दलाल देखते ही रह गए कि हमने कुछ कहा ही नहीं, ये कैसे भाग खड़े हुए? छारा गाँव वाले दलालों ने उनके जूते, जेली, लाठी, चद्दर उठा ली और अपने गाँव में ले आए। कई वर्षों तक जूते और चद्दर प्रयोग की। लाठी-जैली भी काम में ली। गाँव के वे व्यक्ति जो संत गरीबदास जी के पास गए थे, उन्होंने सारे गाँव वालों को यह बात बताई थी। वे डरते-डरते तैयार हुए थे और सीमा पर भी भागने की तैयारी में थे। सर्व दलालों को विश्वास हुआ कि यह करिश्मा संत गरीबदास जी का किया हुआ। उसके पश्चात् राठी गोत्र वालों ने कभी दलालों को नहीं सताया। गाँव छारा के सैंकड़ों बड़े-छोटे व्यक्ति गाँव छुड़ानी में संत गरीबदास जी का धन्यवाद करने गए। संत गरीबदास जी ने कहा कि अब के बाद वे कभी आपको तंग नहीं करेंगे, आपका आपस में प्रेम बनेगा। ऐसा ही हुआ। आज तक दलालों और राठियों में आपसी भाईचारा कायम

है। यह संत गरीबदास जी के आशीर्वाद का परिणाम है। कुछ दिनों के पश्चात् दलाल गोत्र वाले कुछ व्यक्तियों को राठी गोत्र वाले वे व्यक्ति मिले जो उस दिन ''धाड़य'' में गए थे। उन्होंने कहा कि अबकी बार तो दलालों ने सेना बुला रखी थी, सशस्त्र सेना का कोई अंत दिखाई नहीं दे रहा था। हम तो जान बचाकर भागे। आगे से कभी दलालों को लूटने नहीं जाएँगे। भगवान ने जीवन दान दिया है, नहीं तो एक भी जीवित नहीं बचना था।

इस घटना के बाद पूरे छारा गाँव के व्यक्ति संत गरीबदास जी की शरण में चले गए। आज तक भी गाँव छारा में संत गरीबदास जी की मान्यता (पूजा) चल रही है। वे छुड़ानी के मंदिर में पूर्णमासी की धोक खाने जाते हैं।

संत गरीबदास जी ने इस वाणी में यही महिमा गंधर्वों की बताई है कि मेरी अर्जी सुनकर अनन्त पदम गंधर्व छारा गाँव वालों की सहायता के लिए चढ़े जो बड़े भाग वाले हैं क्योंकि वे असहायों की सहायता करते हैं और पुण्य के भागी बनते हैं।(50-51)

वाणी :- किसन भण्डारी चढ़े कुबेरा। अब दिल्ली मण्डल बहुर्यों फेरा।।52।।

❖ सरलार्थ :- एक समय गाँव छुड़ानी में नौ योगेश्वर आकाश मार्ग से आकर संत गरीबदास जी के खेत में उतरे। उनको किसी ने बताया था कि गाँव छुड़ानी में सिद्धी वाले महात्मा गरीबदास जी रहते हैं,वे गृहस्थ हैं, बाल-बच्चेदार जाट किसान हैं। योगेश्वरों ने परीक्षा लेने की योजना बनाई और चले आए। गाँव से दूर जंगल में बैठ गए। शाम का समय था। वैशाख मास की शुकल पक्ष की चतुर्दशी (चौदस) की शाम को संत गरीबदास जी के पास संदेश भिजवाया कि आपसे मिलने के लिए योगेश्वर आए हैं।

संदेश मिलते ही संत गरीबदास जी अपने 4-5 सेवकों के साथ योगेश्वरों के पास खेत में पहुँचे तथा प्रणाम करके दर्शन देने का धन्यवाद किया और प्रार्थना की कि दास के लिए क्या आदेश है? नौ योगेश्वरों ने कहा कि हम आप से आध्यात्मिक ज्ञान चर्चा के लिए आए हैं। कल सुबह चर्चा करेंगे। संत गरीबदास जी ने कहा कि आप तो ज्ञान से परिपूर्ण हैं, आपके साथ ज्ञान चर्चा करना तो सूर्य के सामने दीपक जलाना मात्र है। फिर भी जो आपका आदेश है, वैसा ही होगा। आप बताएँ कि आप खाना स्वयं बनाकर खाओगे या घर से बनवाकर लाऊँ। योगेश्वरों ने कहा कि हम शाम का खाना नहीं खाते। केवल दिन में एक बार सुबह खाते हैं और स्वयं बनाते हैं। आप सुबह सूखा आटा, चावल, घी, दूध आदि भिजवा देना। संत गरीबदास जी ने उनके आसन लगवाए, कोरा घड़ा पानी का भरकर रखवा दिया और गाँव लौट आए। सुबह वक्त से संत गरीबदास जी अपने कई सेवकों के साथ खाने का सारा सामान लेकर उपस्थित हुए। योगेश्वरों ने खाना तैयार किया और पंक्ति में बैठकर थाली अपने-अपने आगे रख ली और खड़े होकर शंख बजाया। देखते ही देखते आकाश मार्ग से 33 करोड़ देवता आ गए और पंक्ति बनाकर खाना खाने की स्थिति में बैठ गए। यह पहले से बनाई सुनियोजित योजना थी। कारण था कि संत गरीबदास जी श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी की महिमा का ज्ञान तो यथार्थ रूप में बताते ही थे, परंतु समर्थ शक्ति इनसे ऊपर अन्य है। वह कबीर परमेश्वर हैं जो काशी में जुलाहे के रूप में 120 वर्ष (सन् 1398 से सन् 1518 तक) प्रकट रहे।

गरीब, अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड का, एक रति नहीं भार। सतगुरू पुरूष कबीर हैं, कुल के सिरजनहार।।
गरीब, हम सुल्तानी नानक तारे, दादू कूं उपदेश दिया। जाति जुलाहा भेद नहीं पाया, काशी मांही कबीर हुआ।।

जब सर्व देवताओं ने आसन लगा लिया तो 9 योगेश्वर खड़े होकर कहने लगे कि हे गरीब दास!

पहले इन्हें भोजन कराओ, हम बाद में खाएँगे अन्यथा तेरे को तथा तेरे छुड़ानी गाँव को नष्ट कर देंगे।

संत गरीबदास जी ने कहा कि हे महापुरूषो! आपके श्रीमुख से गाँव नष्ट करने की बात शोभा नहीं देती। महात्मा तो गाँव बसाते हैं, उजाड़ते नहीं। फिर भी यदि आप गाँव छुड़ानी को भस्म करने की बात कहते हैं तो सुनो! आप तो गाँव छुड़ानी का घास भी भस्म नहीं कर सकोगे। पहले अतिथियों को भोजन करवाता हूँ। यह कहकर संत गरीबदास जी ने अपने परमेश्वर तथा सतगुरू कबीर जी को प्रणाम किया, याद किया। फिर अपने सेवक धारीदास के कमर पर हाथ मारा और कहा एक थाली में बचा हुआ भोजन डाल दे जो योगेश्वरों ने बनाया था। भोजन योगेश्वरों ने अपनी थाली में डाल लिया था तथा शेष को कहा था कि हे गरीबदास! आप अपनी थाली में डालकर हमारे साथ अलग बैठकर खाओ। संत गरीबदास जी ने कहा था कि पहले आप खाओ, आप हमारे अतिथि हैं। मैं बाद में डालकर खा लूँगा। उस अपने भाग की थाली के ऊपर अपनी स्वच्छ चद्दर डाल दी और धारीदास शिष्य से कहा कि भण्डारा (लंगर) शुरू करो। धारीदास चद्दर के नीचे से हाथ से थाली निकाले, वह थाली अपने आप उड़कर पंक्ति में बैठे देवताओं के आगे रखी जाए। एकदम हजारों थालियाँ निकलें और देवताओं के आगे भोजन से भरी रखी जाएँ। धारीदास जी को संत गरीबदास जी ने आशीर्वाद दे ही दिया था। वह तो चद्दर के नीचे हाथ डाले बैठा था, सारा कार्य संत गरीबदास जी की अर्ज से कबीर परमेश्वर जी की दया से हो रहा था।

सब उपस्थित महान आत्माओं ने भोजन कर लिया। नौ योगेश्वर तो कभी संत गरीबदास जी को देख रहे थे, कभी थालियों की उड़ान देख रहे थे। संत गरीबदास जी ने कहा महात्मा जी! और क्या चाहिए? तब उनका स्वपन-सा टूटा, भोजन खाने लगे। सबको भोजन कराकर भी चद्दर के नीचे थाली वैसे ही भरी थी। सर्व देवता संत गरीबदास जी को धन्यवाद-आशीर्वाद देकर चले गए। नौ योगेश्वर भी कुछ देर चर्चा करके आकाश मार्ग से चले गए तथा कहा कि जैसा आपके विषय में सुना था, आप उससे कहीं अधिक सिद्धी वाले हो।

इस विषय में कहा है कि श्री कष्ण अर्थात् श्री विष्णु के जो भण्डारी कुबेर जी भी मेरी सहायता के लिए छुड़ानी में दिल्ली मण्डल में दोबारा आए हैं। पहले भी कई बार हमारी सहायता की थी। यह बालक वाला मूसल है। भावार्थ है कि :-

उदाहरण :- एक 1½ वर्ष का लड़का दीवार के साथ कोने में खड़े मूसल (काष्ठ का डण्डा जो गोलाकार में 1½ फुट परीधि वाला छः फुट लम्बा जो बाजरा कूटने के काम लिया जाता है।) को उठाने की कोशिश करने लगा। दादा जी ने देखा और शीघ्रता से जाकर लड़के को गोद में उठाया कि कहीं मूसल इसके ऊपर न गिर जाए, परंतु लड़का रोने लगा और मूसल उठाने की जिद करने लगा। दादा जी ने लड़के को मूसल के पास छोड़ दिया और लड़के ने दोनों हाथों से मूसल पकड़ा और उठाना चाहा। दादा जी ने मूसल को ऊपर से पकड़कर उठा लिया। लड़का सोच रहा था कि मैंने ही मूसल उठा रखा है। दादा जी यह भी कह रहा था कि देखो! मेरे पोते ने मूसल उठा लिया। जिस कारण से वह लड़का भी अपनी महिमा सुनकर फूला नहीं समा रहा था। वह अपनी बुद्धि से तो पक्का मान रहा था कि मैंने ही मूसल उठा रखा है, परंतु वास्तविकता तो इससे हटकर थी। तो यही उदाहरण यहाँ समझना चाहिए कि कर तो स्वयं परमेश्वर कबीर जी रहे थे, संत गरीबदास जी भी समझते थे। परंतु वहाँ पर तो सारा देव समूह श्री विष्णु, श्री शिव जी की महिमा जानने वाला था। इसलिए कहा है कि यह कार्य श्री विष्णु जी की कपा से उसके भण्डारी कुबेर ने किया है। ये भी उस लड़के की तरह मानते हैं कि हम ही

सब कुछ कर रहे हैं, परंतु करने वाले का प्रमाण तो गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में है। कहा है कि :-

उत्तम पुरूष यानि पुरूषोत्तम तो गीता अध्याय 15 के ही श्लोक 16 में कहे क्षर पुरूष और अक्षर पुरूष से अन्य ही है जिसको परमात्मा कहा जाता है, जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। वह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है जो गीता ज्ञान दाता से भी अन्य है।(गीता अध्याय 15 श्लोक 17) वास्तव में कुबेर को भी पूर्ण परमात्मा धन देता है।(52)

वाणी :- वरूण विनोद चढ़े ब्रह्म ज्ञानी। कला सम्पूर्ण बारह बानी।।53।।

❖ सरलार्थ :- जिस समय संत गरीबदास जी ने 33 करोड़ देवताओं तथा नौ योगेश्वरों को भोजन खिलाया। उसमें जल भी थाली में रखे गिलासों में भरा था। उसका श्रेय संत गरीबदास जी वरूण (जल के देवता) को दे रहे हैं कि वरूण देव ने चढ़कर अर्थात् प्रेरित होकर जल की पूर्ति की। वे ब्रह्म ज्ञानी तथा नम्र बोलचाल वाले हैं। जल के मामले में पूर्ण कला (शक्ति) वाले हैं। बारह बानी का अर्थ है जल स्रोतों के पूर्ण मालिक। यहाँ पर भी उस 1½ वर्ष के लड़के वाला उदाहरण समझें। संत गरीबदास जी को सब पता होते हुए भी कह रहे हैं कि मूसल लड़का उठाकर चल रहा है। यदि उस बच्चे को कोई कह देता है कि मूसल तो तेरा दादा जी उठा रहा है। जब वह ऊपर देखता है तो कहता है छोड़ दे दादा जी। दादा जी कैसे छोड़े? उसको पता है कि छोड़ते ही मूसल गिर जाएगा और चोट मार देगा। बच्चा भी घायल हो जाएगा। एक-दो का और सिर फोड़ेगा। यदि दादा जी मूसल नहीं छोड़ता है तो लड़का अपनी बेइज्जती समझकर रोने लगता है। इसलिए उस बच्चे को बताया नहीं जाना चाहिए कि मूसल तेरे दादा जी ने सम्भाल रखा है। पता होते हुए भी यही कहना पड़ता है कि मूसल को लड़के ने ही उठा रखा है। ठीक यही सटीक अर्थ समझना चाहिए इन देवताओं के सामर्थ्य और पूर्ण परमात्मा कबीर जी की शक्ति में।(53)

वाणी :- धर्मराय आदि युगादि चेरा। चौदह कोटि कटक दल तेरा।।54।।

❖ सरलार्थ :- धर्मराय अर्थात् काल ब्रह्म का न्यायधीश भी परमात्मा (सतपुरूष) का चेरा (नौकर) है। धर्मराय की सेना में 14 करोड़ धर्मदूत हैं जो मत्यु के समय मनुष्य के जीव को निकालकर पकड़कर धर्मराज के दरबार में पेश करते हैं। धर्मराज की महिमा बताई है कि आपके 14 करोड़ तो सैनिक हैं।(54)

वाणी :- चित्रगुप्त के कागज मांही। जेता उपज्या सतगुरू सांई।।55।।

❖ सरलार्थ :- चित्र तथा गुप्त दो धर्मराय के दूत लेखाकार (Reader) हैं। सर्व मनुष्यों का गुप्त लेखा रखते हैं। प्रत्येक मानव के साथ रहते हैं। वे सर्व जीवों का हिसाब रखते हैं। पूरी सष्टि (काल लोक) का हिसाब चित्र-गुप्त के पास है। ये गुप्त फिल्म बनाते रहते हैं। उसकी एक कॉपी धर्मराज के दरबार में फैक्स कर देते हैं, E-mail कर देते हैं। जो चित्र-गुप्त के कागज अर्थात् कॉपी में लिखा है। यह सब सतगुरू अर्थात् कबीर परमेश्वर ने उत्पन्न किया है अर्थात् उन्हीं के विधान अनुसार हो रहा है।(55)

वाणी :- सातों लोक पाल का रासा। उर में धरिए साधु दासा।।56।।

❖ सरलार्थ :- काल ब्रह्म के एक ब्रह्माण्ड में 7 लोक पाल माने गए हैं जो 7 द्वीपों के स्वामी हैं। संत गरीबदास जी कहते हैं कि और सब रासा अर्थात् झंझट है। अधिक ज्ञान ग्रहण करने की बजाय नम्र भाव से संत का दास (चेला) बनकर भक्ति करके मोक्ष कराकर धन्य हों।(56)

वाणी :- विष्णु नाथ हैं असुर निकन्दन। संतों के सब काटैं फन्दन।।57।।

❖ सरलार्थ :- श्री विष्णु नाथ जी राक्षसों का नाश करने वाले हैं तथा अपने संतों-साधकों के उनके

कर्मानुसार सर्व फन्द (बन्धन) काट देते हैं।(57)

वाणी :- नरसिंघ रूप धरे घुर्राया। हिरणाकुश कूं मारण धाया।।58।।

❖ **सरलार्थ :- आप जी प्रहलाद भक्त की रक्षा करने के लिए नरसिंह रूप धारण करके शेर की तरह घुर्राये और हिरण्यकशिपु राक्षस राजा को मारने के लिए दौड़े, उसका नाश किया। जनता सुखी हुई।(58)**

वाणी :- शंख चक्र गदा पदम विराजै। भाल तिलक जाकै उर साजै।।59।।

❖ **सरलार्थ :- आप जी हाथों में शंख, चक्र, गदा तथा पदम लिए हो। आप जी के मस्तक के उर अर्थात् हृदय (मध्य) में तिलक सजा (शोभामान हो रहा) है।(59)**

वाणी :- वाहन गरूड़ कृष्ण असवारा। लक्ष्मी ढ़ौरै चंवर अपारा।।60।।

❖ **सरलार्थ :- आप जी का वाहन गरूड़ है। आप श्री विष्णु जी ही कृष्ण रूप में जन्मे थे। विष्णु कहो, चाहे कृष्ण, आप जी का ही बोध है। आप जी का सत्कार आपकी धर्मपत्नी लक्ष्मी जी विशाल चंवर आपके सिर पर ढूरा (घुमा) कर करती हैं। भावार्थ है कि जिस व्यक्ति की पत्नी ऐसी सेवा करती हो तो वह पति कर्मों वाला बड़ भागी होता है।(60)**

वाणी :- रावण महारावण से मारे। सेतु बाँध सेना दल तारे।।61।।
जरासिंघ और बाली खपाए। कंश केशी चाणुर हराए।।62।।

❖ **सरलार्थ :- हे विष्णु जी! आप जी ने रावण तथा उसके भाई महारावण (अहिरावण) को मारा तथा समंदर पर सेतु (पुल) बनाकर रावण से लड़ने के लिए सेना दल यानि सेना की टुकड़ियाँ परले पार उतारी।(61)**

❖ **आप जी ने बाली का (सुग्रीव के भाई का त्रेतायुग में) नाश किया। केशी नामक राक्षस जो घोड़े का रूप धारकर बालक रूप श्री कृष्ण जी को मारने गया था, उसको मारा तथा कंश को मारा तथा हे श्री कृष्ण जी! कंश केसरी चाणुर पहलवान को आपने मारा। जरासिंघ को भीम से मरवाया। उसमें भी आप की ही अहम भूमिका थी।(62)**

वाणी :- कालीदह में नागी नाथा। शिशुपाल चक्र से काटा माथा।।63।।

❖ **सरलार्थ :- हे विष्णु जी! आप जब श्री कृष्ण रूप में जन्मे थे। उस समय कालीदह नामक दरिया में कालिया नाग के फनों पर चढ़कर नृत्य किया। फिर उस नाग की नाक में डोरी डाली जैसे बैल की नाक में रस्सा डालते हैं और शिशुपाल अनाड़ी का मस्तक सुदर्शन चक्र से काटकर मौत के घाट उतारा।(63)**

वाणी :- कालयवन मथुरा पर धाये। अठारा कोटि कटक दल चढ़ि आए।।64।।
मुचकन्द पर पीताम्बर डार्‌या। कालयवन जहाँ बेग सिंघार्‌या।।65।।

❖ **सरलार्थ :- कहते हैं कि कंश की मृत्यु जब श्री कृष्ण ने कर दी तो उसका ससुर जरासिंघ का मित्र कालयवन बदला लेने की भावना से श्री कृष्ण को मारने के लिए 18 करोड़ सेना लेकर मथुरा की ओर शीघ्रता से दौड़ा तथा चढ़ाई कर दी।(चढ़ाई करना=हमला करना) उस समय राजा अग्रसैन (कंश का पिता) ने अपने दोहते (देवकी के पुत्र) श्री कृष्ण को मथुरा का राजा नियुक्त कर दिया था। मथुरा में सेना कम थी। जिस कारण से श्री कृष्ण जी ने सेना को युद्ध करने के लिए तैयार किया, मैदान में खड़ा कर दिया। दूसरी ओर कालयवन की सेना खड़ी हो गई। {कुछ दिन पहले नारद मुनि जी ने श्री कृष्ण जी को बताया था कि थोड़ी दूर पर एक गुफा है। एक मुचकन्द नाम का राजा सो रहा है। वह छः महीने सोता और छः महीने जागता है। यदि कोई उसको सोते हुए को छः महीने पूरे होने से पहले जगा देता है**

तो मुचकन्द की आँखों से अग्नि बाण छूटते हैं, जगाने वाला मारा जाता है। कालयवन को वरदान प्राप्त था कि वह न किसी शस्त्र से मरेगा, न सुदर्शन चक्र से।} उसको मारने की विधि अपनाते हुए श्री कष्ण जी भी रथ पर सवार होकर लड़ाई के लिए तैयार होकर कालयवन के सामने गए। श्री कष्ण जी ने देखा कि कालयवन की सेना हमारी सेना से कई गुणा अधिक है तो लड़ाई से विजय सम्भव न जानकर नारद जी की बात याद आई और कालयवन को मुचकन्द से मरवाने की योजना बनाई। कालयवन को युद्ध के लिए ललकारा। सेना लड़ने लगी। कालयवन भी श्री कष्ण के साथ युद्ध करने के लिए आगे बढ़ा तो श्री कष्ण जी रण छोड़कर रथ सहित भाग लिए। जिस कारण से श्री कष्ण को रणछोड़ भगवान कहा जाने लगा। श्री कष्ण जी ने रथ को गुफा के सामने छोड़ा, स्वयं गुफा में प्रवेश कर गए। कालयवन सब देख रहा था। वह भी पीछे-पीछे गुफा में गया। श्री कष्ण जी ने अपना पीताम्बर (पीला वस्त्र = चद्दर जो पीले रंग की थी) गुफा में सोते हुए मुचकन्द के ऊपर डाल दी और स्वयं गुफा में थोड़ा आगे जाकर अन्धेरे में छिप गया। कालयवन ने मुचकन्द को श्री कष्ण जानकर पैर पकड़कर मरोड़ा और कहा, कायर! उठ यहाँ क्यों छिप गया? आज तेरा काम-तमाम कर दूँगा। मुचकन्द की नींद खुल गई। आँखों से अग्नि बाण छूटे जो न शस्त्र, न धातु के शस्त्र थे, न धातु से निर्मित सुदर्शन चक्र था जिनसे कालयवन मारा गया। श्री कष्ण जी ने कालयवन के शव को घसीटकर दोनों सेनाओं के बीच में डाल दिया। जब कालयवन की सेना को पता लगा कि उनका राजा मारा गया तो अपनी हार मान ली, हथियार डाल दिए। राजा का शव लेकर चले गए, परंतु चेतावनी दे गए कि दूसरा राजा नियुक्त होने के पश्चात् फिर लड़ाई करने आएँगे। श्री कष्ण जी ने सोचा कि यहाँ रहना उचित नहीं है। इसलिए मथुरा-वन्दावन को त्यागकर वहाँ से 1600 (सोलह सौ) कि.मी. दूर गुजरात प्रान्त में समुद्र के अंदर एक लंबा-चौड़ा टापू था जिसके तीन ओर समुद्र था, केवल एक ओर खाली था। उसका एक द्वार होने के कारण उस टापू का नाम द्वारिका (द्वार इका=एक द्वार वाली नगरी) पड़ा। श्री कष्ण जी ने सब सेना को उस द्वार पर रख लिया और मथुरा की सब जनता को (अपने यादव वंश वालों को) लाकर उस एक रास्ते वाले टापू (द्वारिका) में बस गए। यह टापू लगभग 100 (सौ) मील लम्बा तथा 52 मील चौड़ा था, परंतु आगे वाला हिस्सा केवल 4 मील चौड़ा तथा तथा छः मील लंबा था। इसके साथ-साथ बाहर का क्षेत्र भी श्री कष्ण के आधीन था। द्वारिका में नगर बनाकर रहने लगे। अंत में द्वारिका में लगभग एक अरब से अधिक जनसँख्या श्री कष्ण के वंशज यादवों की हो गई थी। पुरूष 56 करोड़ थे, स्त्रियाँ भी लगभग बराबर थी। कुछ छोटी-बड़ी बालिकाएँ थीं।(64-65)

वाणी :- परसुराम बावन अवतारा। कोई ना जाने भेद तुम्हारा।।66।।

❖ सरलार्थ :- परसुराम जी ने पथ्वी के सब अभिमानी क्षत्रियों को फरसे से (लाठी के एक सिरे पर लोहे का गंडासा जड़ा होता है, जिसका आकार उस समय 3 फुट लम्बा, एक फुट चौड़ा और 2 इंच मोटा था, सामने का तीन फुट लम्बाई वाला पैनी धार वाला चाकू की तरह था, उससे) काटकर मारा था। श्री परसुराम जी को श्री विष्णु जी का अवतार माना गया है। इसलिए कहा है कि आपने परसुराम तथा बामन रूप में अवतार लिया। आपके भेव (भेद) अर्थात् रहस्य को कोई नहीं जान सका।

❑ बामन अवतार :- भक्त प्रहलाद का पुत्र बैलोचन (विरेचन) हुआ तथा बैलोचन (विरेचन) का पुत्र राजा बली हुआ। राजा बली ने अश्वमेघ यज्ञ का आयोजन किया। इन्द्र की गद्दी प्राप्त करने के लिए सौ मन घी एक यज्ञ में खर्च करना होता है जिसमें हवन तथा भण्डारा (भोजन) करना होता है। ऐसी-ऐसी सौ निर्बाध यज्ञ करने के पश्चात् वर्तमान इन्द्र को तख्त (गद्दी) से हटा दिया जाता है और

जिसने नई साधना पूरी कर ली, उसको इन्द्र की गद्दी दी जाती है। इन्द्र स्वर्ग लोक का राजा होता है। गद्दी पर विराजमान इन्द्र के लिए शर्त होती है कि यदि उसके शासनकाल में किसी ने निर्बाध सौ अश्वमेघ यज्ञ प थ्वी के ऊपर पूरी कर दी तो गद्दी पर विराजमान इन्द्र को पद से उतारकर नया इन्द्र (स्वर्ग का राजा) नियुक्त किया जाता है। इसलिए पद पर विराजमान इन्द्र (स्वर्ग लोक के राजा) को चिंता लगी रहती है कि कोई उसके पद को प्राप्त न कर ले। इसलिए इन्द्र अपने नौकर-नौकरानी या देवी आदि को भेजकर इन्द्र पद की प्राप्ति के लिए की जा रही यज्ञ को खण्डित करा देता है, परंतु राजा बली की 99 यज्ञ निर्बाध पूर्ण हो गई थी। इन्द्र उसमें बाधा उत्पन्न नहीं कर पाया। जब सौवीं यज्ञ प्रारम्भ की तो इन्द्र का सिहांसन (तख्त) डोल गया। इन्द्र स्वयं चलकर भगवान विष्णु जी के पास गया और विनय की कि हे प्रभु! आपने मुझे इन्द्र की गद्दी पर बैठाया था। अब मेरा राज जाने वाला है। मेरे राज की रक्षा आपके हाथ में है। पथ्वी के ऊपर राजा बली 100वीं (सौवीं) यज्ञ सम्पूर्ण करने जा रहा है। कपया उसकी यज्ञ खण्ड कराओ। श्री विष्णु जी ने कहा कि आप निश्चिंत होकर राज्य करो, मैं कोई उपाय करता हूँ। श्री विष्णु जी ने इन्द्र को वचन तो दे दिया, परंतु कोई उपाय नहीं निकल रहा था। श्री विष्णु जी भी परमात्मा से अर्ज करते हैं। तब पूर्ण परमात्मा एक बामन (बौना व्यक्ति) का रूप बनाकर ब्राह्मण वेश बनाकर यज्ञ स्थल पर पहुँचे। राजा बली ने सत्कारपूर्वक आसन दिया और भोजन कराया तथा दक्षिणा देने लगा तो बौने ब्राह्मण ने कहा कि पहले प्रतिज्ञा करो, जो मैं मांगूं, आप दोगे। राजा बली ने प्रतिज्ञा कर ली। तब बौने ब्राह्मण ने कहा कि मुझे तीन कदम (तीन डंग) पथ्वी दान दे दो। बली ने कहा, बस हे ब्राह्मण! आपने माँगा भी तो क्या माँगा? मैं तो आपको बहुत कुछ देता। बामन ब्राह्मण ने कहा कि मेरे भाग्य में यही लिखा होगा, तभी तो इतनी जुबान खुली। आप पथ्वी दान करो। बली राजा लगा अपने पैरों से तीन कदम नापने। तब बामन वेश में प्रभु ने कहा कि आपके तीन कदम नहीं, मेरे तीन कदम पथ्वी दे, मैं मापूँगा। यह वार्ता सुनकर राजा बली के धार्मिक गुरू शुक्राचार्य (शुक्राचार्य राक्षसों का गुरू माना जाता है) ने राजा बली को एक ओर ले जाकर कहा कि आप अपनी प्रतिज्ञा भंग कर दो। लगता है यह बामन रूप में विष्णु खड़े हैं, ये इन्द्र के कहने से छल कर रहे हैं, परंतु बली राजा बोला, गुरूवर! जब भगवान भिखारी बनकर आया है और मैं दान ना करूँ तो मेरे जैसा अपराधी पथ्वी पर नहीं होगा। इन्हीं की पथ्वी इन्हीं को देने से मना करना महादुष्ट व्यक्ति का कार्य है। वह आपका शिष्य नहीं कर सकता क्योंकि शास्त्रों में कहा है कि यदि कोई किसी से वस्तु माँगकर प्रयोग कर रहा हो और स्वामी माँगे तो तुरंत दे देना चाहिए अन्यथा समाज में निंदा का पात्र बनता है। राजा बली ने कहा, माप लो स्थान विप्रजी! बामन भगवान इतने बढ़ गए कि आकाश को छूने लगे। तब बली राजा को अहसास हुआ कि यह तो सारा राज्य ही ले लेगा। तब बली भी गलती कर गया। उसने अपने पाँच करोड़ सैनिकों को आदेश दिया कि इस ब्राह्मण को बढ़ने से रोको। सैनिक भगवान के चारों ओर लिपटकर रोकने लगे। सब के सब ऊपर से दूर जा-जाकर गिरे। बामन रूप धारी परमेश्वर जी ने एक डंग (कदम) से पूरी पथ्वी माप दी और दूसरी डंग से अन्य दोनों लोकों (स्वर्ग तथा पाताल) को माप दिया और कहा कि एक डंग (कदम) शेष है, इसको कहाँ रखू? राजा बली बोला, भगवन! मेरी पीठ पर रख लो। संतों ने शरीर को पिण्ड तथा ब्रह्माण्ड भी कहा है। यह कहकर बली भक्त पेट के बल पथ्वी पर लेट गया। बली राजा की प्रतिज्ञा भंग हो गई। राज मोह में गलती कर बैठा। जिस कारण से इन्द्र का राज्य नहीं मिल सका। उसी समय पूर्ण परमात्मा ने सामान्य नर रूप धारण किया और एक घण्टे तक सत्संग किया तथा समझाया कि इन्द्र का राज्य 72 चतुर्युग तक रहता है। श्री ब्रह्मा जी का एक दिन 1008 (एक हजार

आठ) चतुर्युग का होता है जिसमें 14 साधक इन्द्र का शासन करके मत्यु के उपरांत गधे का जीवन भोगते हैं। जिनको गुरू पूर्ण नहीं मिलते, वे भक्त ही ऐसी घटिया साधना करके अपना मानव जीवन व्यर्थ करके पाश्चाताप् करते हैं जब धर्मराज के दरबार में उनको गधा बनकर पथ्वी पर जाने का आदेश मिलता है। पूर्ण मोक्ष के लिए साधना करनी चाहिए जिससे जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाता है। वेदों में प्रमाण है कि तत्त्वज्ञानी संत की खोज करके वह साधना करनी चाहिए जिससे परमात्मा का वह परम पद प्राप्त होता है जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। उस स्थान पर इन्द्र के स्वर्ग से संखों गुणा सुख (ऐश्वर्य) है। वहाँ पर वद्धावस्था नहीं है। वहाँ मत्यु नहीं होती। सदा युवा शरीर रहता है। इस प्रकार सत्संग सुनाने के पश्चात् परमात्मा ने कहा कि हे बली भक्त! मैं आपकी भक्ति तथा समर्पण भाव से प्रसन्न हूँ। चल तुझे पाताल लोक का राज्य देता हूँ। वर्तमान इन्द्र को अपना शासन पूरा करने दे। फिर तेरे को इन्द्र की पदवी दी जाएगी। आपने मेरे को बढ़ने से रोकने का प्रयत्न किया। इसलिए अभी आप इन्द्रासन प्राप्त नहीं कर सकते। बली ने कहा हे प्रभु! आपने ऐसा ज्ञान सुना दिया, अब तो तीनों लोकों के राज्य की भी चाह नहीं रही। मुझे तो वह परम स्थान प्राप्त करा दो जहाँ जाने के पश्चात् फिर कभी संसार में लौटकर नहीं आते। भगवान बोले, वह भक्ति मार्ग बताने वाला कोई संत मिले, उससे दीक्षा लेकर भक्ति करना। अब तो आपको पाताल का राजा बनाता हूँ क्योंकि जो भक्ति आपने की है, इस लोक का विधान है कि जैसा कर्म किया, वैसा अवश्य भोगना पड़ेगा। इतना कहकर परमात्मा अंतर्ध्यान हो गए। इन्द्र की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। इन्द्र भगवान विष्णु का धन्यवाद करने विष्णु जी के लोक में गया तो भगवान विष्णु अभी समस्या का हल खोज रहे थे। इन्द्र को आते देखकर श्री विष्णु ने सोचा कि इन्द्र फिर से आ गया सहायता के लिए, बात समझ से बाहर है। कैसे यज्ञ खण्ड की जाए? इन्द्र ने दण्डवत् प्रणाम किया और अपनी गद्दी की रक्षा करने के लिए धन्यवाद किया। इन्द्र ने बताया भगवान आपका बामन रूप बहुत सुन्दर था। जब आपने अपना शरीर दीर्घ किया तो आसमान को छू रहा था। आपने दो कदमों से तीनों लोक नाप दिए, आपकी महिमा अपरमपार है। बली को पाताल का राजा बनाकर आपने मेरी गद्दी की रक्षा कर दी। आपका धन्यवाद।

पाठकों से निवेदन है कि जैसा पूर्व में उदाहरण दिया है, लड़के का मूसल उठाने की जिद तथा मानना कि मैं ही मूसल उठा रहा हूँ। अन्य भी जो देखते हैं, वे भी उस 1½ वर्ष के लड़के की प्रशंसा करते हैं कि वाह-भाई-वाह! लड़के ने इतना भारी (वजनदार) मूसल उठा रखा है। यदि सच्चाई बताएँ कि उठा तो दादा जी रहा है तो वह बच्चा रोने लगे या दादा जी से मूसल छोड़ने की जिद करके चोट खाएगा। यही दशा इन भगवानों की जानों। इसलिए यही कहने में सब ठीक है कि हे विष्णु जी! आपने परशुराम तथा बामन रूप धारण करके लीला की आपका रहस्य कोई नहीं जानता।(66)

वाणी :- संखासुर मारे निर्बाणी। बराह रूप धरे परवानी।।67।।

❖ सरलार्थ :- पौराणिक कथा है :- एक शंखासुर नामक राक्षस था। उसने देवताओं को भक्तिहीन करने के लिए वेदों को चुरा लिया और वेदों को समुद्र में ले गया। सर्व देवताओं ने परमात्मा से विनय की और उनकी विनय सुनकर पूर्ण परमात्मा सूअर (बराह) रूप बनाकर प्रकट हुए और संखासुर को मारकर वेद वापिस पथ्वी पर लाकर रख दिए। महिमा श्री विष्णु जी की बनाकर अन्तर्ध्यान हो गए। (निर्बाणी=मुक्त, परवानी=कार्य को सिरे चढ़ाने वाले, अधूरा नहीं छोड़ते।) आप पूर्ण रूप से मुक्त हैं तथा सर्व कार्यों को पूर्ण करने वाले हो।(67)

वाणी :- राम अवतार रावण की बेरा। हनुमंत हाका सुनी सुमेरा।।68।।

❖ **सरलार्थ :- हे विष्णु जी! आप राक्षस बुद्धि वाले रावण का नाश करने के लिए श्री रामचन्द्र रूप में राजा दशरथ के घर जन्में थे। आपका परम भक्त हनुमान भी रावण के वध में सहयोगी रहा। श्री हनुमान जी जब रावण की सेना को हल्ला बोलकर दौड़े तो उनकी हुँकार सुमेरू पर्वत पर रहने वाले देवगणों ने भी सुनी थी।(68)**

पाठकजनों को यह भी विश्वास बनेगा कि दास (रामपाल दास) देवी-देवताओं की साधना करने से मना नहीं करता है। यथार्थ यानि शास्त्रविधि अनुसार सम्पूर्ण साधना बताता है।

➢ आप जी से पुनः निवेदन है कि इस पुस्तक को दिल थामकर श्रद्धा के साथ पढ़कर समझकर मुझ दास (लेखक) के पास आऐं और शास्त्रोक्त साधना लेकर अपना तथा परिवार का निःशुल्क कल्याण करवाएँ।

।।सत साहेब।।

लेखक

(संत) रामपाल दास

(अध्याय नं. 1)
कबीर बनाम कष्ण वगैरा
(Kabir V/s Krishan etc.)
जनता की अदालत में मुकदमा पेश
जज :- भक्त समाज

❖ कबीर परमेश्वर जी का वकील :- रामपाल दास।

अस्थाई पता :- रामपाल पुत्र चौधरी नंदराम जाट, पुत्र श्री अभेराम जाट, पुत्र श्री मेदाराम जाट।

जाति :- जाट, गोत्र जाटयाण (Jatain), धर्म :- हिन्दू।

गाँव :- धनाना, अलादाद पुर, तहसील-गोहाना, जिला-सोनीपत, प्रांत-हरियाणा, देश-भारत, लोक-पथ्वी।

अस्थाई दूसरा पता :- भक्त रामपाल दास पुत्र स्वामी रामदेवानंद गुरू महाराज, पुत्र पंडित चिदानंद, पुत्र बंदी छोड़ गरीबदास, पुत्र परमेश्वर कबीर जुलाहा बंदी छोड़।

जाति :- जीव, गोत्र-बंदी छोड़, धर्म-मानव।

गाँव :- सतलोक आश्रम बरवाला, तहसील-बरवाला, जिला-हिसार, प्रांत-हरियाणा, देश-भारत, लोक-पथ्वी।

स्थाई पता :- रामपाल हंस, पुत्र सतपुरूष कबीर परम हंस।

जाति :- आत्मा, गोत्र-हंस।

गाँव :- तहसील, जिला, प्रांत व देश - सत्यलोक, (सनातन परम धाम)।

❖ श्री कष्ण (सतगुण) देवता जी के वकील :-

1. चारों शंकराचार्य जी, 2. श्री आशाराम जी, 3. श्री सुधांशु जी, 4. श्री ज्ञानानंद जी।

5. श्री प्रभुपाद जी एस्कोन वाले, 6. सर्व ब्राह्मण जो पंडिताई कर्मकांड करते हैं।

7. हंसा देश पंथ के दोनों प्रमुख :- (i) श्री सतपाल जी महाराज, (ii) प्रेम रावत उर्फ बाल योगेश्वर जी महाराज।

8. श्री देवकीनंदन जी महाराज, {पता :- C-5/90,1st Floor, Sector 6 Rd, Rohini, (Delhi)}

9. सब महामण्डलेश्वर, 10. गिरी पंथी, 11. नाथ पंथी, 12. नागा साधु, 13. पुरी पंथी।

14. दश नामी, 15. वैष्णव पंथी, वगैरा-वगैरा।

➢ दावा धारा :- श्री कष्ण उर्फ श्री विष्णु को अविनाशी, सष्टि का उत्पत्तिकर्ता बताना। यह कहना है कि श्री ब्रह्मा (रजगुण), श्री विष्णु (सतगुण) तथा श्री शिव (तमगुण) को अजर-अमर बताना, इन्हीं तीनों गुणों यानि तीनों देवताओं की पूजा करने को कहना तथा यह कहना है कि इनके कोई माता-पिता नहीं हैं, आदि-आदि गलत प्रचार करके श्री कष्ण जी के वकील जनता के साथ धोखा कर रहे हैं। भक्त समाज का अनमोल मानव जीवन गलत ज्ञान देकर गलत भक्ति साधना बताकर नष्ट कर रहे हैं।

☛ जनता अदालत में सुनवाई शुरू :-

कबीर जी का वकील :- उपरोक्त वकील साहेबान भक्त समाज को शास्त्रों के विपरित ज्ञान तथा साधना बता रहे हैं। जिस कारण से भक्तों/भक्तमतियों का अनमोल मानव जीवन नष्ट कर रहे हैं जो महा अपराध है।

कष्ण जी के वकील :- हम शास्त्रों में वर्णित ज्ञान जनता को बताते हैं। शास्त्रों में वर्णित साधना बताते हैं। कबीर वकील का दावा गलत है। श्री कष्ण उर्फ श्री विष्णु जी सर्व समर्थ प्रभु हैं।

श्री कष्ण जी ने सुदामा के चावल (तंदूल) खाकर उसका मकान बना दिया था। बहुत सारा धन दिया था। क्या ये समर्थ नहीं हैं?

कबीर जी का वकील :- श्री कष्ण जी तीन लोक (पथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) के प्रभु हैं। ये भी राहत दे सकते हैं, परंतु परमेश्वर कबीर जी असँख्यों लोकों के प्रभु हैं। ये श्री कष्ण से अधिक राहत यहाँ पथ्वी लोक भी देते हैं तथा अपने भक्त/भक्तमति को पूर्ण मोक्ष प्रदान करके (शाश्वत स्थान) अमर लोक में भेज देते हैं। परम शांति प्रदान करते हैं जो श्री कष्ण उर्फ विष्णु जी नहीं कर सकते। श्री कष्ण जी द्वारका नगरी के राजा थे। सुदामा उनका मित्र था। राजा के लिए यह कोई बड़ा काम नहीं। परमेश्वर कबीर जी ने तैमूरलंग की एक रोटी खाकर उसे सात पीढ़ी का राज दे दिया था। पेश है कथा तैमूरलंग की :-

''तैमूरलंग को सात पीढ़ी का राज्य प्रदान करना''

''कबीर परमात्मा ने एक रोटी के बदले सात पीढ़ी का राज तैमूरलंग को दिया''

परमेश्वर कबीर जी एक जिंदा बाबा का वेश बनाकर पथ्वी के ऊपर धार्मिकता देखना चाहते थे। वैसे तो परमात्मा कबीर जी अंतर्यामी हैं, फिर भी संसार भाव बरतते हैं। जिंदा बाबा के वेश में कई शहरों-गाँवों में गए, एक रोटी माँगते रहे। अन्न का अभाव रहता था। बारिश पर खेती निर्भर थी। जिस कारण से अधिकतर व्यक्तियों का निर्वाह कठिनता से चलता था। जब परमात्मा चलते-चलते उस नगर में आए जिसमें तैमूरलंग मुसलमान लुहार अपनी माता के साथ रहता था। तैमूर के पिता की मत्यु हो चुकी थी। तैमूर अठारह वर्ष की आयु का था। निर्धनता कमाल की थी। कभी भोजन खाने को मिलता, कई बार एक समय का भोजन ही नसीब होता था। तैमूरलंग की माता जी बहुत धार्मिक स्त्री थी। कोई भी यात्री साधु या सामान्य व्यक्ति द्वार पर आता था तो उसे खाने के लिए अवश्य आग्रह करती थी। स्वयं भूखी रह जाती थी, रास्ते चलते व्यक्ति को अवश्य भोजन करवाती थी। जिस दिन परमात्मा जिंदा रूप में परीक्षा के उद्देश्य से आए, उस दिन केवल एक रोटी का आटा बचा था। तैमूरलंग को भोजन खिला दिया था। स्वयं भी खा लिया था। शाम के लिए केवल एक रोटी का आटा शेष था।

तैमूरलंग अमीर व्यक्तियों की भेड़-बकरियों को चराने के लिए जंगल में प्रतिदिन ले जाया करता। वह किराये का पाली था। धनी लोग उसे अन्न देते थे। निर्धनता के कारण तैमूरलंग एक लौहार के अहरण पर शाम को घण की चोट लगाने की ध्याड़ी करता था। उससे भी अन्न मिलता था।

जिस दिन परमात्मा तैमूरलंग को जंगल में मिले। उस दिन भी तैमूरलंग प्रतिदिन की तरह भेड़-बकरियाँ चराने जंगल में गाँव के साथ ही गया हुआ था। जब परमात्मा तैमूरलंग को मिले तथा रोटी माँगी तो तैमूरलंग खाना खा चुका था। तैमूरलंग ने कहा कि महाराज! आप बैठो। मेरी

भेड़-बकरियों का ध्यान रखना कि कहीं कोई गुम न हो जाए। मैं निर्धन हूँ। भाड़े पर बकरियों तथा भेड़ों को चराता हूँ। मैं घर से रोटी लाता हूँ। यहाँ पास में ही हमारा घर है। परमात्मा ने कहा ठीक है, संभाल रखूँगा। तैमूरलंग घर गया। माता को बताया कि एक बाबा कई दिन से भूखा है। रोटी माँग रहा है। माता ने तुरंत आटा तैयार किया। एक रोटी बनाई क्योंकि आटा ही एक रोटी का बचा था। एक रोटी कपड़े में लपेटकर जल का लोटा साथ लेकर बाबा जी के पास दोनों माँ-बेटा आए। रोटी देकर जल का लोटा साथ रख लिया। माता तथा बेटे ने बाबा जी की स्तूति की तथा माता ने कहा, महाराज! हम बहुत निर्धन हैं। दया करो, कुछ रोटी का साधन बन जाए। बाबा ने रोटी खाई। तब तक माई ने आँखों में आँसू भरकर कई बार निवेदन किया कि मेहर करियो दाता। बाबा जिंदा ने रोटी खाकर जल पीया। बकरी बाँधने की सांकल (बेल) लेकर उसको तैमूरलंग की कमर में सात बार मारा। चीढ़ की सण की बेल थी। चीढ़ को कामण भी कहते हैं। कामण की छाल का रस्सा बहुत मजबूत होता है। फिर लात मारी तथा मुक्के मारे। माता को लगा कि मैंने बाबा को बार-बार बोल दिया जिससे चिढ़कर लड़का पीट दिया। माई ने पूछा कि बाबा जी! बच्चे ने क्या गलती कर दी। माफ करो, बच्चा है। परमात्मा बोले कि माई! इस एक रोटी का फल तेरे पुत्र को सात पीढ़ी का राज्य का वरदान दिया है जो सात बार बेल (सांकल) मारी है। जो लात तथा मुक्के मारे हैं, यह इसका राज्य टुकड़ों में बँट जाएगा। माई को लगा कि बाबा पागल है। रोटी शाम की नहीं, कह रहा है तेरा बेटा राज करेगा। माई विचार कर ही रही थी कि बाबा जिंदा अंतर्ध्यान हो गया।

कुछ दिन के पश्चात् गाँव की एक जवान लड़की को राजा के सिपाही उठाने की कोशिश कर रहे थे। वे राजा के लिए विलास करने के लिए ले जाना चाहते थे। तैमूरलंग दौड़ा-दौड़ा गया। सिपाहियों को लाठी से पीटने लगा। कहने लगा कि हमारी बहन हमारी इज्जत है। दुष्ट लोगो! चले जाओ। परंतु वे चार-पाँच थे। घोड़े साथ थे। उन्होंने तैमूरलंग को बहुत पीटा। मत समझकर छोड़ दिया और लड़की को उठा ले गए। तैमूरलंग होश में आया। गाँव में चर्चा चली की तैमूरलंग ने बहादुरी का काम गाँव की इज्जत के लिए किया। अपनी जान के साथ खेलकर गाँव की इज्जत बचानी चाही। गाँव के प्रत्येक व्यक्ति की हमदर्दी का पात्र बन गया।

एक रात्रि को स्वपन में बाबा जिंदा तैमूरलंग को दिखाई दिया और बोला कि जिस लुहार के अहरण पर शाम को नौकरी करता है, उसके नीचे खजाना है। तू उस स्थान को मोल ले ले। मैं उस लुहार के मन में बेचने की प्रेरणा कर दूँगा। दो महीने की उधार कह देना। तैमूरलंग ने अपना सपना अपनी माता जी को बताया। जो-जो बात परमात्मा से हुई थी, माता जी को बताई। माता जी ने कहा, बेटा! बाबा जी मुझे भी आज रात्रि में स्वपन में दिखाई दिए थे। कुछ कह रहे थे, मुझे स्पष्ट नहीं सुनाई दिया। माता ने कहा कि बाबा जी की बात सच्ची है तो बेटा धन्य हो जाएँगे। तू जा, अहरण वाले से बात कर।

अहरण वाले के मन में कई दिन से प्रबल प्रेरणा हो रही थी कि यह स्थान कम पड़ गया है। मेरी दूसरी जगह जमीन बड़ी है। इसे कोई उधार भी ले ले तो दे दूँगा। मैं अपने बड़े प्लाट में अहरण लगा लूँगा।

तैमूरलंग अहरण वाले मालिक के पास गया और वर्तमान अहरण वाली जगह को उधार लेने की प्रार्थना की। अहरण वाला बोला कि बात पक्की करना। जो समय रूपये देने का रखा जाएगा,

उस समय रूपये देने होंगे। तैमूरलंग ने कहा कि दो-तीन महीने में रूपये दे दूँगा। अहरण वाला तो एक वर्ष तक उधार पर देने को तैयार था। बात पक्की हो गई। तीसरे दिन अहरण वाली जगह खाली कर दी गई। तैमूरलंग ने अपनी माता जी के सहयोग से उस जगह की मिट्टी के डलों की चारदिवारी बनाई। वहाँ पर झोंपड़ी डाल ली। रात्रि में खुदाई की तो खजाना मिला। अहरण वाला पुराना अहरण भी उसे दे गया। उसके कुछ रूपये ले लिए। स्वयं नया अहरण ले आया। परमात्मा स्वपन में फिर तैमूरलंग को दिखाई दिए तथा कहा कि बेटा! खजाने से थोड़ा-थोड़ा धन निकालना। उससे एक-दो घोड़ा लेना। उन्हें मंहगे-सस्ते, लाभ-हानि में जैसे भी बिके, बेच देना। फिर कई घोड़े लाना, उन्हें बेच आना। जनता समझेगी कि तैमूरलंग का व्यापार अच्छा चल गया। तैमूरलंग ने वैसे ही किया। छः महीने में अलग से जमीन मोल ले ली। पहले भेड़-बकरियाँ खरीदी, बेची। फिर सैंकड़ों घोड़े वहाँ बाँध लिए। उन्हें बेचने ले जाता, और ले आता। गाँव के नौजवान लड़के नौकर रख लिए। बड़ा मकान बना लिया। तैमूरलंग को वह घटना रह-रहकर कचोट रही थी कि यदि मैं राजा बन गया तो सर्वप्रथम उस अपराधी बेशर्म राजा को मारूँगा जिसने मेरे गाँव की इज्जत लूटी थी। जवान लड़की को उसके सैनिक बलपूर्वक उठाकर ले गए थे। अब तैमूरलंग के साथ धन था। जंगल में वर्कशॉप बनाई। लुहार कारीगर था, स्वयं तलवार बनाने लगा। गाँव के नौजवान व्यक्तियों को अपना उद्देश्य बताया कि उस राजा को सबक सिखाना है जिसने अपने गाँव की बेटी की इज्जत लूटी है। मैं सेना तैयार करूँगा। जो सेना में भर्ती होना चाहे, उसे एक रूपया तनख्वाह दूँगा। उस समय एक रूपया चाँदी का बहुत होता था। जवान लड़के सैंकड़ों तैयार हो गए। वे अपने रिश्तेदारों को ले आए। इस प्रकार बड़ी सेना तैयार की। लुहार कारीगर तनख्वाह पर रखे। तलवार-ढ़ाल तैयार करके उस राजा पर धावा बोल दिया। उसे अपने आधीन कर लिया। उसका राज्य छीन लिया। उसको मारा नहीं, अलग गाँव में भेज दिया। उसके निर्वाह के लिए महीना देने लगा। धीरे-धीरे तैमूरलंग ने इराक, ईरान, तुर्किस्तान पर कब्जा कर लिया। फिर भारत पर भी अपना शासन जमा लिया। दिल्ली के राजा ने उसकी पराधीनता (गुलामी) स्वीकार नहीं की, उसे मार भगाया। उसके स्थान पर बरेली के नवाब को दिल्ली का वायसराय बना दिया जो तैमूरलंग का गुलाम रहा। उसे प्रति छः महीने फसल कटने पर कर देकर आता था। तैमूरलंग की मत्यु के पश्चात् दिल्ली के वायसराय ने कर देना बंद कर दिया। स्वयं स्वतंत्र शासक बन गया। उससे बलोल लोधी ने दिल्ली की गद्दी छीन ली। बाबर तैमूरलंग का तीसरा पोता था। उस समय दिल्ली का राजा इब्राहिम लोधी था जो सिंकदर लोधी का पुत्र तथा बलोल लोधी का पोता था। बाबर ने बार-बार युद्ध करके इब्राहिम लोधी को पानीपत की प्रथम लड़ाई हराकर 21 अप्रैल सन् 1526 में भारत का राज्य प्राप्त कर लिया। बाबर का पुत्र हमायूं था। हमायूं का अकबर, अकबर का जहांगीर, जहांगीर का शाहजहां, शाहजहां का पुत्र औरंगजेब हुआ। सात पीढ़ियों ने भारत पर राज्य किया। इतिहास गवाह है। फिर औरंगजेब के बाद राज्य टुकड़ों में बँट गया। अन्नदेव की आरती में भी संत गरीबदास जी ने कहा है कि :-

रोटी तैमूरलंग कूं दिन्ही, तातें सात बादशाही लिन्हीं।।

तैमूरलंग को परमात्मा उसी जिंदा वाले वेश में फिर मिले जब वह अस्सी (80) वर्ष का हो गया था। शिकार करने गया था, राजा था। तब उसको समझाया कि भक्ति कर राजा, नहीं तो (दोजख) नरक में गिरेगा। भूल गया वो दिन जब एक रोटी ही घर पर थी। उस समय तैमूरलंग बाबा के चरणों में गिर गया। दीक्षा ली। राज्य पुत्र को दे दिया। दस वर्ष और जीवित रहा। वह आत्मा

जन्म-मरण में है। परंतु भक्ति का बीज पड़ गया है। यदि उस निर्धनता में भक्ति करने को कहता तो नहीं मानना था। परमात्मा कबीर जी ही जानते हैं कि काल की जकड़ से कैसे जीव को निकाला जा सकता है।

कष्ण जी के वकील :- जब पांडव वनवास में थे तो दुर्योधन के दबाव में ऋषि दुर्वासा जी अठासी हजार ऋषियों को साथ लेकर पांडवों के पास वन में गए। भोजन खिलाने को कहा तथा कहा कि यदि हम सबको भोजन नहीं करवाया तो तुम्हें श्राप देकर नष्ट कर दूँगा। तब श्री कष्ण जी ने पांडवों की रक्षा की। सब्जी वाले बर्तन को धोकर पीया। उसमें एक सब्जी का पत्ता बचा था। उसे खाकर अठासी हजार ऋषियों का पेट भर दिया। क्या समझते हो तुम कबीर जी को?

कबीर जी का वकील :- श्री कष्ण उर्फ श्री विष्णु तीन लोक के मालिक (प्रभु) हैं। ये भी राहत दे सकते हैं, परंतु परमेश्वर कबीर जी असंख ब्रह्मण्डों के मालिक (प्रभु) हैं। वे जो राहत दे सकते हैं, वह श्री कष्ण (श्री विष्णु) जी नहीं दे सकते। श्री कष्ण जी ने तो केवल अठासी हजार ऋषियों का एक बार पेट भरा। कबीर परमेश्वर जी ने काशी शहर में अठारह लाख व्यक्तियों (साधु-संतों) का पेट तीन दिन तक दिन में दो-तीन बार भरा क्योंकि दक्षिणा के लालच में कोई प्रतिदिन तीन बार भोजन खाता था। दो बार तो प्रत्येक व्यक्ति खाता ही है। पढ़ें कथा कबीर जी द्वारा काशी शहर में तीन दिन भंडारा देने की :-

''काशी में भोजन-भण्डारा करना''

शेखतकी सब मुसलमानों का मुख्य पीर (गुरू) था जो परमात्मा कबीर जी से पहले से ही ईर्ष्या किया करता था। सर्व ब्राह्मणों तथा मुल्ला-काजियों व शेखतकी ने मजलिस (Meeting) करके षड़यंत्र के तहत योजना बनाई कि कबीर निर्धन व्यक्ति है। इसके नाम से पत्र भेज दो कि कबीर जी काशी में बहुत बड़े सेठ हैं। उनका पूरा पता है कबीर पुत्र नूरअली अंसारी, जुलाहों वाली कॉलोनी, काशी शहर। कबीर जी तीन दिन का धर्म भोजन-भण्डारा करेंगे। सर्व साधु संत आमंत्रित हैं। प्रतिदिन प्रत्येक भोजन करने वाले को एक दोहर (जो उस समय का सबसे कीमती कम्बल के स्थान पर माना जाता था), एक मोहर (10 ग्राम स्वर्ण से बनी गोलाकार की मोहर) दक्षिणा में देगें। प्रतिदिन जो जितनी बार भी भोजन करेगा, कबीर उसको उतनी बार ही दोहर तथा मोहर दान करेगा। भोजन में लड्डू, जलेबी, हलवा, खीर, दही बड़े, माल पूड़े, रसगुल्ले आदि-आदि सब मिष्ठान खाने को मिलेंगे। सुखा सीधा (आटा, चावल, दाल आदि सूखे जो बिना पकाए हुए, घी-बूरा) भी दिया जाएगा। एक पत्र शेखतकी ने अपने नाम तथा दिल्ली के बादशाह सिकंदर लोधी के नाम भी भिजवाया। निश्चित दिन से पहले वाली रात्रि को ही साधु-संत भक्त एकत्रित होने लगे। अगले दिन भण्डारा (लंगर) प्रारम्भ होना था। परमेश्वर कबीर जी को संत रविदास दास जी ने बताया कि आपके नाम के पत्र लेकर लगभग 18 लाख साधु-संत व भक्त काशी शहर में आए हैं। भण्डारा खाने के लिए आमंत्रित हैं। कबीर जी अब तो अपने को काशी त्यागकर कहीं और जाना पड़ेगा। कबीर जी तो जानीजान थे। फिर भी अभिनय कर रहे थे, बोले रविदास जी झोंपड़ी के अंदर बैठ जा, सांकल लगा ले। अपने आप झख मारकर चले जाएंगे। हम बाहर निकलेंगे ही नहीं। परमेश्वर कबीर जी अन्य वेश में अपनी राजधानी सत्यलोक में पहुँचे। वहाँ से नौ लाख बैलों के ऊपर गधों जैसा बौरा (थैला) रखकर उनमें पका-पकाया सर्व सामान भरकर तथा सूखा सामान (चावल, आटा,

खाण्ड, बूरा, दाल, घी आदि) भरकर पथ्वी पर उतरे। सत्यलोक से ही सेवादार आए। परमेश्वर कबीर जी ने स्वयं बनजारे का रूप बनाया और अपना नाम केशव बताया। दिल्ली के सम्राट सिकंदर तथा उसका धार्मिक पीर शेखतकी भी आया। काशी में भोजन-भण्डारा चल रहा था। सबको प्रत्येक भोजन के पश्चात् एक दोहर तथा एक मोहर {10 ग्राम सोना(Gold)} दक्षिणा दी जा रही थी। कई बेईमान साधक तो दिन में चार-चार बार भोजन करके चारों बार दोहर तथा मोहर ले रहे थे। कुछ सूखा सीधा (चावल, खाण्ड, घी, दाल, आटा) भी ले रहे थे।

यह सब देखकर शेखतकी ने तो रोने जैसी शक्ल बना ली और जाँच (Enquiry) करने लगा। सिकंदर लोधी राजा के साथ उस टैंट में गया जिसमें केशव नाम से स्वयं कबीर जी वेश बदलकर बनजारे (उस समय के व्यापारियों को बनजारे कहते थे) के रूप में बैठे थे। सिकंदर लोधी राजा ने पूछा आप कौन हैं? क्या नाम है? आप जी का कबीर जी से क्या संबंध है? केशव रूप में बैठे परमात्मा जी ने कहा कि मेरा नाम केशव है, मैं बनजारा हूँ। कबीर जी मेरे पगड़ी बदल मित्र हैं। मेरे पास उनका पत्र गया था कि एक छोटा-सा भण्डारा यानि लंगर करना है, कुछ सामान लेते आइएगा। उनके आदेश का पालन करते हुए सेवक हाजिर है। भण्डारा चल रहा है। शेखतकी तो कलेजा पकड़कर जमीन पर बैठ गया जब यह सुना कि एक छोटा-सा भण्डारा करना है जहाँ पर 18 लाख व्यक्ति भोजन करने आए हैं। प्रत्येक को दोहर तथा मोहर और आटा, दाल, चावल, घी, खाण्ड भी सूखा सीधा रूप में दिए जा रहे हैं। इसको छोटा-सा भण्डारा कह रहे हैं। परंतु ईर्ष्या की अग्नि में जलता हुआ विश्राम गह में चला गया जहाँ पर राजा ठहरा हुआ था। सिकंदर लोधी ने केशव से पूछा कबीर जी क्यों नहीं आए? केशव ने उत्तर दिया कि उनका गुलाम जो बैठा है, उनको तकलीफ उठाने की क्या आवश्यकता? जब इच्छा होगी, आ जाएंगे। यह भण्डारा तो तीन दिन चलना है।

सिकंदर लोधी हाथी पर बैठकर अंगरक्षकों के साथ कबीर जी की झोंपड़ी पर गए। वहाँ से उनको तथा रविदास जी को साथ लेकर भण्डारा स्थल पर आए। सबसे कबीर सेठ का परिचय कराया तथा केशव रूप में स्वयं डबल रोल करके उपस्थित संतों-भक्तों को प्रश्न-उत्तर करके सत्संग सुनाया जो 24 घण्टे तक चला। कई लाख सन्तों ने अपनी गलत भक्ति त्यागकर कबीर जी से दीक्षा ली, अपना कल्याण कराया। भण्डारे के समापन के बाद जब बचा हुआ सब सामान तथा टैंट बैलों पर लादकर चलने लगे, उस समय सिकंदर लोधी राजा तथा शेखतकी, केशव तथा कबीर जी एक स्थान पर खड़े थे, सब बैल तथा साथ लाए सेवक जो बनजारों की वेशभूषा में थे, गंगा पार करके चले गए। कुछ ही देर के बाद सिकंदर लोधी राजा ने केशव से कहा आप जाइये आपके बैल तथा साथी जा रहे हैं। जिस ओर बैल तथा बनजारे गए थे, उधर राजा ने देखा तो कोई भी नहीं था। आश्चर्यचकित होकर राजा ने पूछा कबीर जी! वे बैल तथा बनजारे इतनी शीघ्र कहाँ चले गए? उसी समय देखते-देखते केशव भी परमेश्वर कबीर जी के शरीर में समा गए। अकेले कबीर जी खड़े थे। सब माजरा (रहस्य) समझकर सिकंदर लोधी राजा ने कहा कि कबीर जी! यह सब लीला आपकी ही थी। आप स्वयं परमात्मा हो। शेखतकी के तो तन-मन में ईर्ष्या की आग लग गई, कहने लगा ऐसे-ऐसे भण्डारे हम सौ कर दें, यह क्या भण्डारा किया है? महौछा किया है।

महौछा उस अनुष्ठान को कहते हैं जो किसी गुरू के द्वारा किसी वद्ध की गति करने के लिए थोपा जाता है। उसके लिए सब घटिया सामान लगाया जाता है। जग जौनार करना उस अनुष्ठान

को कहते हैं जो विशेष खुशी के अवसर पर किया जाता है, जिसमें अनुष्ठान करने वाला दिल खोलकर धन खर्च करता है।

संत गरीबदास जी ने कहा है कि :-

गरीब, कोई कह जग जौनार करी है, कोई कहे महौछा।
बड़े बड़ाई किया करें, गाली काढ़े औछा।।

❑ सारांश :- कबीर जी ने भक्तों को उदाहरण दिया है कि यदि आप मेरी तरह सच्चे मन से भक्ति करोगे तथा ईमानदारी से निर्वाह करोगे तो परमात्मा आपकी ऐसे सहायता करता है। भक्त ही वास्तव में सेठ अर्थात् धनवंता हैं। भक्त के पास दोनों धन हैं, संसार में जो चाहिए वह भी धन भक्त के पास होता है तथा सत्य साधना रूपी धन भी भक्त के पास होता है।

☛ एक अन्य करिश्मा जो उस भण्डारे में हुआ :-

वह जीमनवार (लंगर) तीन दिन तक चला था। दिन में प्रत्येक व्यक्ति कम से कम दो बार भोजन खाता था। कुछ तो तीन-चार बार भी खाते थे क्योंकि प्रत्येक भोजन के पश्चात् दक्षिणा में एक मौहर (10 ग्राम सोना) और एक दौहर (कीमती सूती शॉल) दिया जा रहा था। इस लालच में बार-बार भोजन खाते थे। तीन दिन तक 18 लाख व्यक्ति शौच तथा पेशाब करके काशी के चारों ओर ढ़ेर लगा देते। काशी को सड़ा देते। काशी निवासियों तथा उन 18 लाख अतिथियों तथा एक लाख सेवादार जो सतलोक से आए थे। उस गंद का ढ़ेर लग जाता, श्वांस लेना दूभर हो जाता, परंतु ऐसा महसूस ही नहीं हुआ। सब दिन में दो-तीन बार भोजन खा रहे थे, परंतु शौच एक बार भी नहीं जा रहे थे, न पेशाब कर रहे थे। इतना स्वादिष्ट भोजन था कि पेट भर-भरकर खा रहे थे। पहले से दुगना भोजन खा रहे थे। हजम भी हो रहा था। किसी रोगी तथा वद्ध को कोई परेशानी नहीं हो रही थी। उन सबको मध्य के दिन चिंता हुई कि न तो पेट भारी है, भूख भी ठीक लग रही है, कहीं रोगी न हो जाएँ। सतलोक से आए सेवकों को समस्या बताई तो उन्होंने कहा कि यह भोजन ऐसी जड़ी-बूटियां डालकर बनाया है जिनसे यह शरीर में ही समा जाएगा। हम तो प्रतिदिन यही भोजन अपने लंगर में बनाते हैं, यही खाते हैं। हम कभी शौच नहीं जाते तथा न पेशाब करते, आप निश्चिंत रहो। फिर भी विचार कर रहे थे कि खाना खाया है, परंतु कुछ तो मल निकलना चाहिए। उनको लैट्रिन जाने का दबाव हुआ। सब शहर से बाहर चल पड़े। टट्टी के लिए एकान्त स्थान खोजकर बैठे तो गुदा से वायु निकली। पेट हल्का हो गया तथा वायु से सुगंध निकली जैसे केवड़े का पानी छिड़का हो। यह सब देखकर सबको सेवादारों की बात पर विश्वास हुआ। तब उनका भय समाप्त हुआ, परंतु फिर भी सबकी आँखों पर अज्ञान की पट्टी बँधी थी। परमेश्वर कबीर जी को परमेश्वर नहीं स्वीकारा।

{पुराणों में भी प्रकरण आता है कि अयोध्या के राजा ऋषभ देव जी राज त्यागकर जंगलों में साधना करते थे। उनका भोजन स्वर्ग से आता था। उनके मल (पाखाने) से सुगंध निकलती थी। आसपास के क्षेत्र के व्यक्ति इसको देखकर आश्चर्यचकित होते थे। इसी तरह सतलोक का आहार करने से केवल सुगंध निकलती है, मल नहीं। स्वर्ग तो सतलोक की नकल है जो नकली (Duplicate) है।}

श्री कष्ण जी के वकील :- हमने कभी कहीं न सुना तथा न पढ़ा कि तैमूरलंग को राज कबीर जी ने प्रदान किया तथा काशी में इतना बड़ा भोजन कार्यक्रम किया था। शास्त्रों से प्रमाण बताओ कि कबीर बड़ा है कष्ण से।

कबीर जी का वकील :- आप जी ने तो यह भी नहीं सुना था कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु, श्री

शिव के माता-पिता हैं। ये जन्मते-मरते हैं अविनाशी नहीं हैं। उपरोक्त प्रकरण तैमूरलंग को राज बख्शना कबीर सागर ग्रंथ में है तथा काशी में भोजन-भण्डारा देना संत गरीबदास जी द्वारा बताया है जो अमर ग्रंथ में लिखा है। आप गीता, वेद, पुराणों से प्रमाण चाहते हैं कि कबीर समर्थ है कष्ण से, तो देता हूँ शास्त्रों के प्रमाण। आप कहते हो कि श्री विष्णु जी, श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी का कभी जन्म-मरण नहीं हुआ, न इनकी मत्यु होती है, ये अविनाशी हैं। आप यह भी कहते हैं कि श्री कष्ण से ऊपर कोई भगवान ही नहीं। श्री कष्ण रूप में श्री विष्णु जी ने माता देवकी जी के गर्भ से जन्म लिया। पिता वासुदेव जी हैं। गीता का ज्ञान श्री कष्ण जी ने अर्जुन को सुनाया। आप चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) श्री मद्भगवत गीता, अठारह पुराणों, ग्यारह उपनिषदों को सत्य मानते हैं। अदालत में बताओ क्या आप ऐसा बताते हो?

कष्ण जी के वकील :- सबने एक स्वर में कहा, हाँ! हम ऐसा ही बताते हैं। इसमें कोई संदेह की बात नहीं। हम उपरोक्त शास्त्रों को सत्य मानते हैं।

कबीर जी का वकील :- आप पंचदेव पूजा करते हो तथा इन्हीं की पूजा करने को कहते हो। इन पाँच देवों में श्री कष्ण उर्फ विष्णु (सतगुण) की पूजा व श्री शिव (तमगुण) की पूजा, श्री ब्रह्मा जी (रजगुण) की पूजा करने को कहते हो। क्या गीता में, वेदों में इनकी पूजा करने का प्रमाण है?

कष्ण जी के वकील :- गीता में प्रमाण है तथा पुराणों में भी प्रमाण है। गीता श्री कष्ण जी ने बोली। गीता अध्याय 8 श्लोक 5 तथा 7 में श्री कष्ण जी (श्री विष्णु) ने अपनी पूजा करने को कहा है।

कबीर जी का वकील :- आप कहते हैं कि श्री कष्ण उर्फ श्री विष्णु से अन्य कोई परमेश्वर ही नहीं है। श्री कष्ण जी ही सर्वशक्तिमान हैं। गीता अध्याय 8 श्लोक 5 तथा 7 में तो गीता ज्ञान देने वाले ने अपनी पूजा करने को कहा है। फिर गीता अध्याय 8 के श्लोक 8,9 तथा 10 में किसी अन्य की भक्ति करने को कहा है। गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में किस परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है?

कष्ण जी के वकील :- श्री कष्ण से अन्य कोई भगवान ही नहीं है। अन्य की शरण जाने को नहीं कहा है। श्री कष्ण जी ने अपनी ही शरण में आने को कहा है। श्री कष्ण उर्फ श्री विष्णु जी अमर अविनाशी (जन्म-मरण रहित) पारब्रह्म परमेश्वर हैं।

कबीर जी का वकील :- जनता की अदालत में श्रीमद्भगवत गीता से ही प्रमाणित करता हूँ कि श्री कष्ण जी के वकील झूठ बोल रहे हैं कि गीता ज्ञान देने वाला (इनका कष्ण उर्फ विष्णु) कभी जन्मता-मरता नहीं और इससे अन्य कोई सष्टि का कर्ता ही नहीं है।

अदालत को बताना चाहता हूँ कि श्री कष्ण उर्फ श्री विष्णु जी के वकील साहेबानों ने झूठ कहा है कि श्री विष्णु जी समर्थ परमात्मा हैं। इनसे ऊपर कोई परमेश्वर नहीं है। श्री विष्णु जी की भक्ति करो।

पेश है प्रमाण के लिए संक्षिप्त श्रीमद् देवीभागवत (पुराण) के प्रथम स्कंध के अध्याय 4 पष्ठ 44-45 की फोटोकॉपी जिसमें श्री विष्णु जी ने कहा है कि मैं देवी दुर्गा (अष्टांगी) की भक्ति करता हूँ। इससे बड़ी शक्ति यानि भगवान कोई नहीं है :-

ब्रह्माजीने पूछा—प्रभो! आप देवताओंके अध्यक्ष, जगत्‌के स्वामी और भूत, भविष्य एवं वर्तमान—सभी जीवोंके एकमात्र शासक हैं। भगवन्! फिर आप क्यों तपस्या कर रहे हैं और किस देवताकी आराधनामें ध्यानमग्न हैं? मुझे असीम आश्चर्य तो यह हो रहा है कि आप देवेश्वर एवं सारे संसारके शासक होते हुए भी समाधि लगाये बैठे हैं।

ब्रह्माजीके ये विनीत वचन सुनकर भगवान् श्रीहरि उनसे कहने लगे—'ब्रह्मन्! सावधान होकर सुनो। मैं अपने मनका विचार व्यक्त करता हूँ। देवता, दानव और मानव—सब यही जानते हैं कि तुम सृष्टि करते हो, मैं पालन करता हूँ और शंकर संहार किया करते हैं, किंतु फिर भी वेदके पारगामी पुरुष अपनी युक्तिसे यह सिद्ध करते हैं कि रचने, पालने और संहार करनेकी यह योग्यता जो हमें मिली है, इसकी अधिष्ठात्री शक्तिदेवी हैं। वे कहते हैं कि संसारकी सृष्टि करनेके लिये तुममें राजसी शक्तिका संचार हुआ है, मुझे सात्त्विकी शक्ति मिली है और रुद्रमें तामसी शक्तिका आविर्भाव हुआ है। उस शक्तिके अभावमें तुम इस संसारकी सृष्टि नहीं कर सकते, मैं पालन करनेमें सफल नहीं हो सकता और रुद्रसे संहारकार्य होना भी सम्भव नहीं। ब्रह्माजी! हम सभी उस शक्तिके सहारे ही अपने कार्यमें सदा सफल होते आये हैं।

मैं सदा तप करनेमें लगा रहता हूँ। उस शक्तिके शासनसे कभी मुक्त नहीं रह सकता। कभी अवसर मिला तो लक्ष्मीके साथ सुखपूर्वक समय बितानेका सौभाग्य प्राप्त होता है। मैं कभी तो दानवोंके साथ युद्ध करता हूँ। अखिल जगत्‌को भय पहुँचानेवाले दैत्योंके विकराल शरीरोंको शान्त करना मेरा परम कर्तव्य हो जाता है।

उन्हीं भगवती शक्तिका मैं निरन्तर ध्यान किया करता हूँ। ब्रह्माजी! मेरी जानकारीमें इन भगवती शक्तिसे बढ़कर दूसरे कोई देवता नहीं हैं।

इस संक्षिप्त श्रीमद् देवीभागवत के उल्लेख से श्री कृष्ण जी के वकीलों का दावा गलत सिद्ध होता है क्योंकि श्रीमद् देवीभागवत (देवी पुराण) के प्रथम स्कंध के अध्याय 4 में प्रमाण है कि ''एक बार श्री ब्रह्मा जी ने श्री विष्णु जी को महान तप करते हुए देखकर प्रश्न किया कि हे प्रभो! आप देवताओं के अध्यक्ष, जगत के स्वामी तथा सर्व जीवों के शासक होते हुए भी किस देवता की अराधना में ध्यान मग्न हैं। मुझे असीम आश्चर्य तो यह हो रहा है कि आप देवेश्वर एवं सारे संसार के शासक होते हुए भी समाधि लगाए बैठे हैं। आप सर्व समर्थ पुरूष से बढ़कर कौन विशिष्ट हैं? उसे बताने की कृपा कीजिए। ब्रह्मा जी के विनीत वचन सुनकर भगवान श्री हरि उनसे कहने लगे, 'ब्रह्मन्'! सावधान होकर सुनो। मैं अपने मन का विचार व्यक्त करता हूँ। मैं भगवती अद्या शक्ति यानि अष्टांगी (देवी दुर्गा) का ध्यान तप करके किया करता हूँ। ब्रह्मा जी! मेरी जानकारी में इन भगवती शक्ति (प्रकृति देवी-अष्टांगी देवी) से बढ़कर दूसरे कोई देवता नहीं हैं।'' इस संक्षिप्त देवी भागवत पुराण के लेख से स्पष्ट हुआ कि श्री विष्णु जी (श्री कृष्ण जी) श्री देवी दुर्गा जी की भक्ति (पूजा) करते हैं। कहा है कि इस अद्याशक्ति से बड़ा कोई भगवान मेरी जानकारी में नहीं है।

कबीर जी का वकील :- श्री कष्ण जी के वकील साहेबानों की झूठ सामने है जो कहते हैं कि श्री कष्ण जी (श्री विष्णु जी) से बढ़कर कोई देवता यानि परमेश्वर नहीं है जबकि श्री विष्णु जी ने अपने से अन्य सर्व समर्थ शक्ति श्री देवी दुर्गा को बताया है। अब अदालत में पेश है प्रमाण के लिए फोटोकॉपी संक्षिप्त श्रीमद् देवीभागवत (पुराण) {गीताप्रेस, गोरखपुर से प्रकाशित व मुद्रित जिसके सम्पादक हैं हनुमान प्रसाद पोद्दार व चिमन लाल गोस्वामी} की जिसके सातवें स्कंध के अध्याय 36 में श्री देवी जी ने राजा हिमालय को कहा कि पर्वतराज! उस ब्रह्म का क्या स्वरूप है, यह बतलाया जाता है। (श्री देवी जी ने पहले तो कहा कि मेरी भक्ति करो तो ऐसे करो जैसे अध्याय 35 में बताया है। परंतु मेरी व अन्य सबकी भक्ति छोड़कर ''उस एकमात्र परमात्मा को ही जानो''। दूसरी सब बातों को छोड़ दे। यही अमत रूप परमात्मा के पास पहुँचाने वाला पुल है। संसार समुद्र से पार होकर अमत स्वरूप परमात्मा को प्राप्त करने का यही सुलभ साधन है।......... इस आत्मा का ''ॐ'' के जप के साथ ध्यान करो। इससे अज्ञानमय अंधकार से सर्वथा परे और संसार समुद्र से उस पार जो ब्रह्म है, उसको पा जाओगे। तुम्हारा कल्याण हो।........... वह यह सबका आत्मा ''ब्रह्म'' ब्रह्मलोक रूप दिव्य आकाश में स्थित है।)

गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि परमशान्ति प्राप्त करनी है अर्थात् जन्म-मरण से छुटकारा चाहता है तथा सनातन परम धाम को प्राप्त करना चाहता है तो उस परमेश्वर की शरण में जा जिसको गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में परम अक्षर ब्रह्म कहा है तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 में कहा है कि जो उस परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करता है, उसी को प्राप्त होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि (तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर) उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आते। जिसने संसार की रचना की है, उसकी भक्ति कर। गीता ज्ञान बोलने वाला क्षर ब्रह्म (काल निरंजन) है। वह परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करने को कह रहा है।

विचार करें :- श्री कष्ण जी (श्री विष्णु जी) श्री देवी दुर्गा को सबसे बड़ी बता रहे हैं। श्री देवी दुर्गा ब्रह्म (क्षर पुरूष) को समर्थ बता रही है। उसकी भक्ति के लिए कह रही है। ब्रह्म (गीता ज्ञान देने वाला काल) अपने से समर्थ सबकी उत्पत्तिकर्ता, सबके धारण-पोषणकर्ता पुरूषोत्तम अविनाशी परमेश्वर की भक्ति करने को कह रहा है। इससे सिद्ध हुआ कि श्री कष्ण जी के वकीलों को अपने सद्ग्रन्थों का ही ज्ञान नहीं। जिस अध्यापक को अपने पाठ्यक्रम की पुस्तकों का ही ज्ञान नहीं है तो वह विद्यार्थियों का भविष्य खराब कर रहा है। उससे बचना चाहिए।

पेश है संक्षिप्त श्रीमद् देवीभागवत के सातवें स्कंध के अध्याय 36 के पष्ठ 573-574 की फोटोकॉपी :-

देवीके द्वारा हिमालयको ज्ञानोपदेश—ब्रह्मस्वरूपका वर्णन

श्रीदेवीजी कहने लगीं—पर्वतराज! इस प्रकार योगयुक्त होकर मुझ ब्रह्मस्वरूपा देवीका ध्यान करे। यह ध्यान आसनपर भलीभाँति बैठकर अहैतुकी भक्तिके साथ करना चाहिये। उस ब्रह्मका क्या स्वरूप है—यह बतलाया जाता है। जो प्रकाशस्वरूप, सबके अत्यन्त समीपमें स्थित, हृदयरूप गुहामें स्थित होनेके कारण 'गुहाचर' नामसे प्रसिद्ध और महान् पद अर्थात् परम प्राप्य है—जितने भी चेष्टा करनेवाले, श्वास लेनेवाले, आँखोंको खोलने-मूँदनेवाले प्राणी हैं, सब उस ब्रह्ममें ही समर्पित हैं, उसीमें स्थित हैं। सत्, असत् सब कुछ वही है, वही सबके द्वारा वरण करनेयोग्य सर्वोत्कृष्ट है। वह समस्त प्रजाके ज्ञानसे परे है—अर्थात् किसीकी बुद्धिमें आनेवाला नहीं है। यह तुम जानो। जो परम प्रकाशरूप है, जो सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म है, जिसमें सम्पूर्ण लोक और उन लोकोंमें निवास करनेवाले प्राणी स्थित हैं,

वही यह 'अक्षर ब्रह्म' है, वही सबके प्राण है, वही सबकी वाणी है और वही सबके मन है। वह यह परम सत्य और अमृत—अविनाशी तत्त्व है। सौम्य! उस वेधनेयोग्य लक्ष्यका तुम वेधन करो—मन लगाकर उसमें तन्मय हो जाओ।

सौम्य! उपनिषद्में कथित महान् अस्त्ररूप धनुष लेकर उसपर उपासनाद्वारा तीक्ष्ण किया हुआ बाण संधान करो और फिर भावानुगत चित्तके द्वारा उस बाणको खींचकर उस अक्षररूप ब्रह्मको ही लक्ष्य बनाकर वेधन करो। प्रणव (ॐ) धनुष है, जीवात्मा बाण है और ब्रह्मको उसका लक्ष्य कहा जाता है। प्रमादरहित—अत्यन्त तत्परतासे साधन-संलग्न होकर उसका वेधन करना चाहिये और बाणके समान उसमें तन्मय हो जाना चाहिये। जिस ब्रह्ममें स्वर्ग, पृथ्वी, अन्तरिक्ष (स्वर्ग और पृथ्वीके बीचका आकाश), सम्पूर्ण प्राणोंके सहित इन्द्रिययुक्त मनबुद्धिरूप अन्तःकरण ओत-प्रोत है, उस एकमात्र परमात्माको ही जाने, दूसरी सब बातोंको छोड़ दे। यही अमृतरूप परमात्माके पास पहुँचानेवाला पुल है। संसार-समुद्रसे पार होकर अमृतस्वरूप परमात्माको प्राप्त करानेका यही सुलभ साधन है।

इस आत्माका 'ॐ' के जपके साथ ध्यान करो। इससे अज्ञानमय अन्धकारसे सर्वथा परे और संसार-समुद्रसे उस पार जो ब्रह्म है, उसको पा जाओगे। तुम्हारा कल्याण हो। जो सदा जाननेवाला, जो सब ओरसे सब कुछ जाननेवाला है, जिसकी जगत्में यह महिमा है, वह यह सबका आत्मा ब्रह्म ब्रह्मलोकरूप दिव्य आकाशमें स्थित है।

अदालत में पेश श्रीमद् देवीभागवत (श्री देवी पुराण) के सातवें स्कंध के अध्याय 36 पष्ठ 573-574 के इस उल्लेख से स्पष्ट है कि श्री देवी जी ने अपनी व अन्य सबकी साधना त्यागकर ''ब्रह्म'' की साधना करने को कहा है।

श्री कष्ण जी के वकील कहते हैं कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कष्ण जी (श्री विष्णु जी) ने अर्जुन को बताया। यह भी इनकी झूठ है। वास्तव में श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कष्ण में प्रवेश करके ''ब्रह्म'' यानि काल ने कहा है। ब्रह्म ने यानि गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 श्लोक 46, 61, 62 व 66 में, गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में, गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 3, 8, 9 तथा 10 में अपने से अन्य परमेश्वर यानि परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करने, उसकी

शरण में जाने को कहा है। उसी को परमात्मा, सबका धारण-पोषण करने वाला, अविनाशी परमेश्वर व पुरूषोत्तम कहा है।

प्रमाण के लिए पेश है श्रीमद्भगवत गीता के कुछ श्लोकों की फोटोकॉपी :-

(कबीर जी का वकील) प्रथम श्रीमद्भगवत गीता से ही प्रमाणित करता हूँ। गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 2 श्लोक 12 तथा गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी स्थिति बताई है। कहा है कि :-

गीता अध्याय 4 श्लोक 5 :- अर्जुन! तेरे तथा मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। मैं जानता हूँ, तू नहीं जानता।

{इस पुस्तक में सब फोटोकॉपियाँ गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित तथा श्री जयदयाल गोयन्दका द्वारा अनुवादित श्रीमद्भगवत गीता की लगाई हैं। केवल पष्ठ 51-55 पर भिन्न-भिन्न अनुवादकों तथा प्रेसों से छपी गीता की फोटोकॉपी लगाई हैं।}

पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 2 श्लोक 12 की :-

न, तु, एव, अहम्, जातु, न,आसम्, न, त्वम्, न, इमे, जनाधिपाः,
न, च, एव, न, भविष्यामः, सर्वे, वयम्, अतः, परम्॥ १२॥

न	= न	**न**	= नहीं
तु	= तो	**(आसन्)**	= थे
(एवम्)	= ऐसा	**च**	= और
एव	= ही (है कि)	**न**	= न
अहम्	= मैं	**(एवम्)**	= ऐसा
जातु	= किसी कालमें	**एव**	ही (है कि)
न	= नहीं	**अतः**	= इससे
आसम्	= था (अथवा)	**परम्**	= आगे
त्वम्	= तू	**वयम्**	= हम
न	= नहीं	**सर्वे**	= सब
(आसीः)	= था (अथवा)	**न**	= नहीं
इमे	= ये	**भविष्यामः**	= रहेंगे।
जनाधिपाः	= राजालोग		

गीता अध्याय 2 श्लोक 12 :- इसमें गीता ज्ञान बोलने वाले (आप श्री कष्ण जी के वकील कहते हो कि श्री कष्ण ने गीता ज्ञान बोला। तो श्री कष्ण) ने कहा है कि ''न तो ऐसा ही (है कि) मैं किसी काल में नहीं था। और तू नहीं था अथवा ये राजा लोग नहीं थे (जो युद्ध के समय उपस्थित थे।) और न ऐसा (है कि) इससे आगे हम (मैं, तू तथा ये राजा व सैनिक) सब (आगे) नहीं रहेंगे।

पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 10 श्लोक 2 की :-

न, मे, विदुः, सुरगणाः, प्रभवम्, न, महर्षयः,
अहम्, आदिः, हि, देवानाम्, महर्षीणाम्, च, सर्वशः॥ २॥

हे अर्जुन!—

मे	= मेरी	**विदुः**	= जानते हैं;
प्रभवम्	= { उत्पत्तिको अर्थात् लीलासे प्रकट होनेको	**हि**	= क्योंकि
		अहम्	= मैं
न	= न	**सर्वशः**	= सब प्रकारसे
सुरगणाः	= { देवतालोग (जानते हैं और)	**देवानाम्**	= देवताओंका
		च	= और
न	= न	**महर्षीणाम्**	= महर्षियोंका (भी)
महर्षयः	= महर्षिजन (ही)	**आदिः**	= आदि कारण हूँ।

गीता अध्याय 10 श्लोक 2 :- इस श्लोक में गीता ज्ञान दाता ने स्वयं माना है कि मेरी उत्पत्ति हुई है, परंतु इस रहस्य को देवता व ऋषिजन नहीं जानते क्योंकि ये सब मेरे से उत्पन्न हुए हैं।

पेश है गीता अध्याय 4 का श्लोक 5 की फोटोकॉपी :-

बहूनि, मे, व्यतीतानि, जन्मानि, तव, च, अर्जुन,
तानि, अहम्, वेद, सर्वाणि, न, त्वम्, वेत्थ, परन्तप॥ ५॥

इसपर श्रीभगवान् बोले—

परन्तप	= हे परन्तप	**व्यतीतानि**	= हो चुके हैं।
अर्जुन	= अर्जुन!	**तानि**	= उन
मे	= मेरे	**सर्वाणि**	= सबको
च	= और	**त्वम्**	= तू
तव	= तेरे	**न**	= नहीं
बहूनि	= बहुत-से	**वेत्थ**	= जानता, (किंतु)
जन्मानि	= जन्म	**अहम्**	= मैं
		वेद	= जानता हूँ।

गीता अध्याय 4 का श्लोक 5 में गीता बोलने वाला ने स्पष्ट कहा है कि हे परन्तप अर्जुन! मेरे और तेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। उन सबको तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ।

विवेचन :- उपरोक्त तीनों श्लोकों से स्पष्ट हो गया है कि गीता ज्ञान दाता (आपका श्री विष्णु उर्फ श्री कष्ण) नाशवान है। उसका जन्म-मत्यु होता है।

अविनाशी परमात्मा तो गीता ज्ञान दाता (आपके श्री कष्ण उर्फ श्री विष्णु) से अन्य है जो सर्व प्राणियों की उत्पत्ति करता है यानि जिससे यह जगत व्याप्त है। सबका

धारण-पोषण करने वाला है। गीता ज्ञान दाता ने अर्जुन को उसकी शरण में जाने के लिए कहा है। कहा है कि यदि अर्जुन तू जन्म-मरण तथा जरा (वृद्धावस्था) से पूर्ण रूप से छुटकारा चाहता है। शाश्वत् स्थान (अमर लोक यानि सतलोक) प्राप्त करना चाहता है तथा परम शांति चाहता है तो मेरे से अन्य उस परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) की शरण में जा।

☛ प्रमाण के लिए पेश हैं गीता अध्याय 2 श्लोक 17, अध्याय 18 श्लोक 46, 61 तथा 62 :-

गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य अविनाशी परमेश्वर के विषय में कहा है कि ''नाशरहित (अविनाशी) तो उसको जान जिससे यह सम्पूर्ण जगत व्याप्त है। इस अविनाशी का विनाश करने में (उसे मारने में) कोई भी समर्थ नहीं है।

पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 2 श्लोक 17 की :-

अविनाशि, तु, तत्, विद्धि, येन्, सर्वम्, इदम्, ततम्,
विनाशम्, अव्ययस्य, अस्य, न, कश्चित्, कर्तुम्, अर्हति ॥ १७ ॥

इस न्यायके अनुसार—

अविनाशि	= नाशरहित	**ततम्**	= व्याप्त है।
तु	= तो (तू)	**अस्य**	= इस
तत्	= उसको	**अव्ययस्य**	= अविनाशीका
विद्धि	= जान,	**विनाशम्**	= विनाश
येन	= जिससे	**कर्तुम्**	= करनेमें
इदम्	= यह		
सर्वम्	= { सम्पूर्ण जगत् (दृश्यवर्ग)	**कश्चित्**	= कोई भी
		न, अर्हति	= समर्थ नहीं है।

यही प्रमाण गीता अध्याय 18 श्लोक 46 में भी है। इसमें भी गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमेश्वर के विषय में कहा है कि ''जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों की उत्पत्ति हुई है और जिससे यह समस्त जगत व्याप्त है, उस परमेश्वर की अपने स्वभाविक कर्मों द्वारा पूजा करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त हो जाता है।

पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 18 श्लोक 46 की :-

यतः, प्रवृत्तिः, भूतानाम्, येन्, सर्वम्, इदम्, ततम्,
स्वकर्मणा, तम्, अभ्यर्च्य, सिद्धिं, विन्दति, मानवः ॥ ४६ ॥

यतः	= जिस परमेश्वरसे	**तम्**	= उस परमेश्वरकी
भूतानाम्	= सम्पूर्ण प्राणियोंकी	**स्वकर्मणा**	= { अपने स्वाभाविक कर्मोंद्वारा
प्रवृत्तिः	= उत्पत्ति हुई है (और)		
येन	= जिससे	**अभ्यर्च्य**	= पूजा करके[२]
इदम्	= यह	**मानवः**	= मनुष्य
सर्वम्	= समस्त (जगत्)	**सिद्धिम्**	= परम सिद्धिको
ततम्	= व्याप्त है*,	**विन्दति**	= प्राप्त हो जाता है।

गीता अध्याय 18 श्लोक 61 में भी यही प्रमाण है। गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमेश्वर के विषय में कहा है कि हे अर्जुन! शरीर रूप यंत्र में आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को अंतर्यामी परमेश्वर अपनी माया (शक्ति) से (उनके कर्मों के अनुसार) भ्रमण करवाता हुआ सब प्राणियों के हृदय में स्थित है।

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 61 की फोटोकॉपी :-

ईश्वरः, सर्वभूतानाम्, हृद्देशे, अर्जुन, तिष्ठति,
भ्रामयन्, सर्वभूतानि, यन्त्रारूढानि, मायया ॥ ६१ ॥

क्योंकि—

अर्जुन	= हे अर्जुन!		(उनके कर्मोंके अनुसार)
यन्त्रारूढानि	= { शरीररूप यन्त्रमें आरूढ़ हुए	**भ्रामयन्**	= भ्रमण कराता हुआ
सर्वभूतानि	= सम्पूर्ण प्राणियोंको	**सर्वभूतानाम्**	= सब प्राणियोंके
ईश्वरः	= अन्तर्यामी परमेश्वर	**हृद्देशे**	= हृदयमें
मायया	= अपनी मायासे	**तिष्ठति**	= स्थित है।

अब पेश है प्रमाण जिसमें गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 18 के श्लोक 62 में भी अपने से अन्य परमेश्वर की शरण में जाने की राय दी है। कहा है कि हे भारत! (तू) सब प्रकार से उस परमेश्वर की शरण में जा (जिसके विषय में ऊपर कहा है), उस परमात्मा की कृपा से ही तू परम शांति को तथा सनातन परम धाम (अमर लोक/सतलोक) को प्राप्त होगा।

वह परमेश्वर कौन है? उसके विषय में गीता ज्ञान बोलने वाले ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में बताया है कि वह ''परम अक्षर ब्रह्म'' है।

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 62 की फोटोकॉपी :-

तम्, एव, शरणम्, गच्छ, सर्वभावेन, भारत,
तत्प्रसादात्, पराम्, शान्तिम्, स्थानम्, प्राप्स्यसि, शाश्वतम्॥ ६२॥

इसलिये—

भारत	= हे भारत! (तू)	**तत्प्रसादात्**	= उस परमात्माकी कृपासे (ही तू)
सर्वभावेन	= सब प्रकारसे		
तम्	= उस परमेश्वरकी	**पराम्**	= परम
एव	= ही	**शान्तिम्**	= शान्तिको (तथा)
		शाश्वतम्	= सनातन
शरणम्	= शरणमें*	**स्थानम्**	= परम धामको
गच्छ	= जा।	**प्राप्स्यसि**	= प्राप्त होगा।

''गीता अनुवादकों की अज्ञानता का प्रमाण''

पेश है श्री कष्ण जी के वकील साहेबानों की सरेआम अज्ञानता व शब्दों के अर्थों के अनर्थ का प्रमाण :-

गीता अध्याय 18 श्लोक 66 :- गीता जी के सब अनुवादकों ने गीता अध्याय 18 श्लोक 66 का अनुवाद गलत किया है। इस श्लोक 66 के मूल पाठ में ''व्रज'' शब्द है जिसका अर्थ आना किया है जो गलत है। ''व्रज'' का अर्थ जाना, चले जाना, प्रस्थान करना, एक स्थान से दूसरे स्थान पर जाना है।

प्रमाण के लिए पेश है फोटोकॉपी ''संस्कत-हिन्दी कोश'' की जिसके संग्रहकर्ता हैं वामन शिवराम आप्टे :-

संस्कृत-हिन्दी कोश

(दस हजार नये शब्दों तथा लेखक द्वारा संकलित छन्द एवं साहित्यिक तथा भारत के प्राचीन इतिहास में प्राप्त भौगोलिक नामों के परिशिष्टों सहित)

लेखक

वामन शिवराम आप्टे

चौखम्बा विद्याभवन

वाराणसी

(९९३)

व्रज् (भ्वा० पर० व्रजति) 1. जाना, चलना, प्रगति करना, —नाविनीतर्व्रजेद् धुर्यैः—मनु० ४।६७ 2. पधारना, पहुँचना दर्शन करना—मामेकं शरणं व्रज—भग० १८।६६ 3. बिदा होना, सेवा से निवृत्त होना, पीछे हटना 4. (समय का) बीतना—इयं व्रजति यामिनी त्यज नरेन्द्र निद्रारसम्—विक्रम० ११।७४, (यह धातु प्रायः गम् या या धातु की भाँति प्रयुक्त होती है), अनु—, 1. बाद में जाना, अनुगमन करना—मनु० ११।१११ कु० ७।३८ 2. अभ्यास करना, सम्पन्न करना 3. सहारा लेना, आ—, आना, पहुँचना, परि —, भिक्षु या साधु के रूप में इधर-उधर घूमना, संन्यासी या परिव्राजक हो जाना, प्र—, 1. निर्वासित होना 2. सांसारिक वासनाओं को छोड़ देना, चौथे आश्रम में प्रविष्ट होना, अर्थात् संन्यासी हो जाना—मनु० ६।३८, ८।३६३।

शब्दकोश से स्पष्ट हुआ कि ''व्रज'' माने जाना है।

अन्य प्रमाण :- एस्कोन के संस्थापक श्री प्रभुपाद जी महाराज द्वारा अनुवादित श्रीमद्भगवत गीता के अध्याय 18 श्लोक 66 के अनुवाद से पहले शब्दों के अर्थ लिखे हैं। उनमें तो ''व्रज'' माने जाना लिखा है। परंतु जहाँ श्लोक 66 का अनुवाद किया है, उसमें आना किया है।

''स्वामी प्रभुपाद जी की गलती''

प्रमाण के लिए पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की जिसके अनुवादक हैं स्वामी प्रभुपाद जी तथा भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट द्वारा प्रकाशित है :-

गीतोपनिषद्

श्रीमद्भगवद्गीता

यथारूप

संपूर्ण एवं अखण्ड संस्करण

परिवर्धित एवं परिशोधित

मूल संस्कृत पाठ, शब्दार्थ,
अनुवाद तथा विस्तृत तात्पर्य सहित

कृष्णकृपामूर्ति

श्री श्रीमद् ए.सी. भक्तिवेदान्त स्वामी प्रभुपाद

संस्थापकाचार्य : अन्तर्राष्ट्रीय कृष्णभावनामृत संघ

भक्तिवेदान्त बुक ट्रस्ट

५५४ श्रीमद्भगवद्गीता यथारूप अध्याय १८

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥ ६६ ॥

सर्व-धर्मान्–समस्त प्रकार के धर्म; **परित्यज्य**–त्यागकर; **माम्**–मेरी; **एकम्**–एकमात्र; **शरणम्**–शरण में; **व्रज**–जाओ; **अहम्**–मैं; **त्वाम्**–तुमको; **सर्व**–समस्त; **पापेभ्यः**–पापों से; **मोक्षयिष्यामि**–उद्धार करूँगा; **मा**–मत; **शुचः**–चिन्ता करो।

समस्त प्रकार के धर्मों का परित्याग करो और मेरी शरण में आओ। मैं समस्त पापों से तुम्हारा उद्धार कर दूँगा। डरो मत।

तात्पर्य : भगवान् ने अनेक प्रकार के ज्ञान तथा धर्म की विधियाँ बताई हैं—परब्रह्म का ज्ञान, परमात्मा का ज्ञान, अनेक प्रकार के आश्रमों तथा वर्णों का ज्ञान, संन्यास का ज्ञान, अनासक्ति, इन्द्रिय तथा मन का संयम, ध्यान आदि का ज्ञान। उन्होंने अनेक प्रकार से नाना प्रकार के धर्मों का वर्णन किया है। अब, *भगवद्गीता* का सार प्रस्तुत करते हुए भगवान् कहते हैं कि हे अर्जुन! अभी तक बताई गई सारी विधियों का परित्याग करके, अब केवल मेरी शरण में आओ। इस शरणागति से वह समस्त पापों से बच जाएगा, क्योंकि भगवान् स्वयं उसकी रक्षा का वचन दे रहे हैं।

इस फोटोकॉपी में स्पष्ट है कि ऊपर शब्दों के अर्थ में तो ''व्रज'' का अर्थ तो जाना (जाओ) ठीक किया है, परंतु अनुवाद में आना (आओ) कर दिया जिससे गीता के सब ज्ञान का अज्ञान बना दिया। कारण यही रहा कि इन गुरूजनों को श्री कष्ण से आगे का ज्ञान ही नहीं है। इनको अपने सद्ग्रन्थों का भी ज्ञान नहीं है। इसलिए लिख दिया कि ''मेरी शरण में आ जा।'' गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में ''गच्छ'' शब्द है जिसका अर्थ भी ''जाना'' है, वहाँ ठीक कर दिया। जब श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता अपने से अन्य उस परमेश्वर (तत् ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म) की शरण में जाने को कह रहा है। श्लोक 66 में अपनी शरण में आने को नहीं कहा है क्योंकि गीता अध्याय 2 श्लोक 7 में अर्जुन ने कहा है कि मैं आपकी शरण हूँ यानि अर्जुन शरण में तो पहले ही था। फिर यह कहना कि मेरी शरण में आ, न्याय संगत भी नहीं है। यह अध्यात्म ज्ञान का टोटा है। पेश है लेखक द्वारा

किया इस श्लोक का यथार्थ अनुवाद :-

गीता अध्याय 18 श्लोक 66 का यथार्थ अनुवाद :-

सर्वधर्मान् परित्यज्य, माम्, एकम् शरणम् व्रज।
अहम्, त्वा, सर्व पापेभ्यः, मोक्षयिष्यामि, मा, शुचः।।66।।

अनुवाद :- गीता ज्ञान देने वाले ने कहा है कि (सर्वधर्मान् माम्) मेरे स्तर के जितने भी धार्मिक कर्म हैं, उन सबको मुझमें (परित्यज्य) त्यागकर (एकम्) उस एक सर्व शक्तिमान परम अक्षर ब्रह्म की (शरणम्) शरण में (व्रज) जा। (अहम्) मैं (त्वा) तेरे को (सर्व पापेभ्यः) सब पापों से (मोक्षयिष्यामि) मुक्त कर दूँगा (मा शुचः) शोक न कर।

विशेष :- इस श्लोक में एकम् = एक शब्द है। इसका अर्थ एक यानि अद्वितीय परमेश्वर है। गीता अध्याय 13 श्लोक 30 में भी ''एकस्थ'' शब्द है जिसका अर्थ ''उस एक परमात्मा में स्थित'' किया है। जो गीता ज्ञान दाता से अन्य है। गीता अध्याय 13 श्लोक 27-28 तथा 30 में भी गीता ज्ञान देने वाले काल ब्रह्म ने अपने से अन्य परमेश्वर की जानकारी दी है। कहा है कि :-

गीता अध्याय 13 श्लोक 27 :- (यः) जो साधक (विनश्यत्सु) नष्ट होते हुए (सर्वेषु भूतेषु) सब प्राणियों में (परमेश्वरम्) परमेश्वर यानि परम अक्षर ब्रह्म को (अविनश्यन्तम्) अविनाशी तथा (समम्) समभाव से (पश्यति) देखता है, (सः) वह परमेश्वर को (पश्यति) सही रूप में देखता है यानि वह उस परमेश्वर को ठीक से समझा है। गीता अध्याय 13 श्लोक 28 में कहा है कि :- (हि) क्योंकि जो साधक (सर्वत्र) सब स्थान पर (समवस्थितम्) समान भाव से स्थित (ईश्वरम्) परमेश्वर को (समम्) समान (पश्यन्) देखता हुआ (आत्मना) अपने द्वारा (आत्मानम्) अपने को (न हिनस्ति) नष्ट नहीं करता यानि सत्य भाव से उस गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म से अन्य परम अक्षर ब्रह्म को जानकर उसी की भक्ति करके (पराम्) गीता ज्ञान देने वाले काल ब्रह्म से मिलने वाली गति यानि मोक्ष जो गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में बताई है, उससे अन्य (गतिम्) परम गति को (याति) प्राप्त होता है। यही प्रसंग गीता अध्याय 13 श्लोक 30 में चला है। कहा है (यदा) ''जिस समय साधक (भूतपथग्भावम्) प्राणियों के पथक-पथक भाव को (एकस्थम्) उस अद्वितीय एक परमात्मा से (एव) ही (विस्तारम्) सब प्राणियों का विस्तार यानि उत्पत्ति (अनुपश्यति) होना देखता है यानि जानता है। (तदा) उस समय (ब्रह्म) उस परमेश्वर को (सम्पद्यते) पूजकर उसी को प्राप्त हो जाता है।

इससे सिद्ध हो जाता है कि गीता अध्याय 18 श्लोक 66 में ''एकम् शरणं व्रज'' का अर्थ भी उस परम अक्षर ब्रह्म की शरण में जाओ ही सही है। (प्रमाण के लिए पढ़ें गीता अध्याय 13 श्लोक 27-28 तथा 30 की फोटोकॉपी इसी पुस्तक के पष्ठ 278-280 पर।)

''पेश हैं गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की अन्य अनुवादकों की फोटोकॉपियाँ।''

''श्री रामसुख दास की गलती''

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी श्री रामसुखदास जी महाराज के अनुवाद की :-

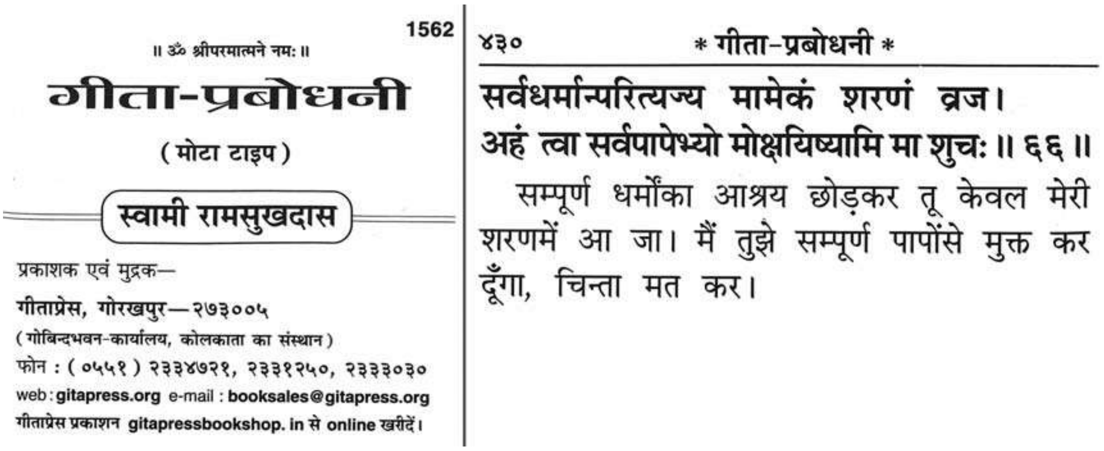
1562

॥ ॐ श्रीपरमात्मने नमः ॥

गीता-प्रबोधनी

(मोटा टाइप)

स्वामी रामसुखदास

प्रकाशक एवं मुद्रक—

गीताप्रेस, गोरखपुर—२७३००५

(गोविन्दभवन-कार्यालय, कोलकाता का संस्थान)

फोन : (०५५१) २३३४७२१, २३३१२५०, २३३३०३०

web : gitapress.org e-mail : booksales@gitapress.org

गीताप्रेस प्रकाशन gitapressbookshop. in से online खरीदें।

४३० * गीता-प्रबोधनी *

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥ ६६ ॥

सम्पूर्ण धर्मोंका आश्रय छोड़कर तू केवल मेरी शरणमें आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापोंसे मुक्त कर दूँगा, चिन्ता मत कर।

''श्री ज्ञानानंद जी महाराज की गलती''

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी श्री ज्ञानानंद महाराज जी के अनुवाद की:-

श्री कृष्ण कृपा

श्रीमद्भगवद्गीता

(पद्यानुवाद सहित)

(गीता ज्ञान सुधा)

(सप्तम संस्करण - 10,000 प्रतियाँ)

निमित्तमात्र :

गीता मनीषी

स्वामी श्री ज्ञानानन्द जी महाराज

पंजीकृत कार्यालय जीओ गीता

GIEO GITA 479 कोहाट एन्कलेव, पीतमपुरा, दिल्ली–34

gieogita@gmail.com, www.gieogita.com

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

सम्पूर्ण धर्मों का आश्रय छोड़कर तू केवल मेरी शरण में आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर।

आरोपित धर्म छोड़कर तूँ ये सब,
आ, एक मेरी ही ले शरण अब।
तुझे पापों से मुक्त कर दूँगा मैं,
चिन्ता न कर तूँ किसी भी तरह ।। ६६।।

(192)

''श्री सुधांशु जी महाराज की गलती''

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी श्री सुधांशु जी महाराज के अनुवाद की:-

श्रीमद् भगवद्गीता

गीतामृत प्रवचन - परम पूज्य श्री सुधांशु जी महाराज

संपादक: डॉ. आशा किरण
सह-संपादक: आचार्य अनिल शास्त्री
मुद्रक: पी. पी. स.,
फोन: 9811671022

प्रकाशक:
विश्व जागृति मिशन
आनंदधाम आश्रम, नांगलोई-नजफगढ़ रोड,
बक्करवाला मार्ग, दिल्ली-110041
दूरभाष: 011-28345656, 28344767
ईमेल: info@sudhanshujimaharaj.net
वेबसाइट: www.sudhanshujimaharaj.net

अध्याय 18 | मोक्षसंन्यासयोग

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः॥६६॥

सभी धर्मों को छोड़कर तू केवल मेरी शरण में आ जा। मैं तुझे सभी पापों से मुक्त कर दूंगा। चिंता मत कर।

श्रीमद्भगवद्गीता | 375

''श्री आशाराम जी महाराज की गलती''

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी श्री आशाराम जी महाराज के अनुवाद की:-

श्रीमद् भगवद्गीता

(माहात्म्य-श्लोक-अनुवाद)

महिला उत्थान ट्रस्ट
संत श्री आशारामजी आश्रम
संत श्री आशारामजी बापू आश्रम मार्ग, अहमदाबाद-३८०००५.
फोन : (०७९) २७५०५०१०-११.
आश्रम रोड, जहाँगीरपुरा, सूरत-३९५००५. फोन : (०२६१) २७७२२०१-२.
वन्दे मातरम् रोड, रवीन्द्र रंगशाला के सामने, नई दिल्ली-६०.
फोन : (०११) २५७२९३३८, २५७६४१६१.

अठारहवाँ अध्याय : मोक्षसंन्यासयोग २७३

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज ।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥६६॥

सम्पूर्ण धर्मों को अर्थात् सम्पूर्ण कर्तव्यकर्मों को मुझमें त्यागकर तू केवल एक मुझ सर्वशक्तिमान सर्वाधार परमेश्वर की ही शरण में आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, तू शोक मत कर। (६६)

''श्री अड़गड़ानंद जी महाराज की गलती''

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी श्री अड़गड़ानंद जी महाराज के अनुवाद की :-

।। श्रीमद्भगवद्गीता ।।

।। यथार्थ गीता ।।

मानव-धर्मशास्त्र

प्रत्यक्षानुभूत व्याख्या :
परमपूज्य श्री परमहंस महाराज का कृपा-प्रसाद
स्वामी श्री अड़गड़ानन्द जी
श्री परमहंस आश्रम
ग्राम-पत्रालय- शक्तेषगढ़, जिला-मिर्जापुर, उ०प्र०, भारत
फोन : (०५४४३) २३८०४०
प्रकाशक :
श्री परमहंस स्वामी अड़गड़ानन्दजी आश्रम ट्रस्ट
न्यू अपोलो स्टेट, गाला नं- ५, मोगरा लेन (रेलवे सब वे के पास)
अंधेरी (पूर्व), मुम्बई - ४०००६९

अष्टादश अध्याय ३५३

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।६६।।

सम्पूर्ण धर्मों को त्यागकर (अर्थात् मैं ब्राह्मण श्रेणी का कर्त्ता हूँ या शूद्र श्रेणी का, क्षत्रिय हूँ अथवा वैश्य- इसके विचार को त्यागकर) केवल एक मेरी अनन्य शरण को प्राप्त हो। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा। तू शोक मत कर।

''हंसादेश पंथ वालों की गलती''

पेश है हंसादेश वाले पंथ (श्री सतपाल जी महाराज व श्री प्रेम रावत जी महाराज के आश्रम) से अनुवादित गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी :-

श्रीमद्भगवद्गीता

भाव प्रबोधिनि भाषा टीका सहित
अनुवादक
ब्रह्मलीन महात्मा सत्यानन्द (म० सर्वाज्ञानंद)
आदि सम्पादक—हंसादेश
प्रकाशक
मानव उत्थान सेवा समिति
२/१२, पंजाबी बाग नई दिल्ली—११००२६
फोन : ५४३५७३६
मुद्रक—राजेश्वरी फोटो सेटर्स (प्रा.) लि., नई दिल्ली—२६

अथ अष्टादशोऽध्यायः] [१६७

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः ॥

सर्वधर्मों के कर्मों को छोड़कर केवल मेरी ही शरण में आ। मेरी शरणागत रूप धर्म में लग, मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूंगा।
।। अ० १८ श्लोक ६६ ।।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट है कि मेरे (लेखक के) अतिरिक्त किसी को भी गीता का ज्ञान नहीं है। सब ने शब्द के अर्थों का अनर्थ करके ज्ञान का अज्ञान बनाकर जनता को भ्रमित कर रखा है।

➢ <u>उपरोक्त श्लोकों से प्रमाणित हुआ कि गीता ज्ञान देने वाले से अन्य परमेश्वर है जो सृष्टि की उत्पत्तिकर्ता व धारण-पोषणकर्ता परम शांति प्रदान करने वाला परमेश्वर है। उसी की शरण में जाने के लिए कहा है।</u>

गीता ज्ञान देने वाले से अन्य समर्थ परमेश्वर है। अन्य प्रमाण :-

गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में गीता ज्ञान बोलने वाले ने (जिसे आप श्री कृष्ण उर्फ विष्णु मानते हो, उसने) अपने से अन्य परमेश्वर के विषय में बताया है। कहा है कि जो मेरी शरण होकर यानि मेरी राय मानकर (उस परमेश्वर के विषय में किसी तत्त्वदर्शी संत से तत्त्वज्ञान समझ लेते हैं,) जरा यानि वृद्धावस्था (बुढ़ापे) तथा मरण (मृत्यु) से छुटने के लिए यत्न करते हैं। वे 'तत् ब्रह्म' यानि उस परमेश्वर को, सम्पूर्ण अध्यात्म को तथा सम्पूर्ण कर्मों को जानते हैं।

पेश है गीता अध्याय 7 श्लोक 29 की फोटोकॉपी :-

जरामरणमोक्षाय, माम्, आश्रित्य, यतन्ति, ये,
ते, ब्रह्म, तत्, विदुः, कृत्स्नम्, अध्यात्मम्, कर्म, च, अखिलम्॥ २९॥

और—

ये	= जो	**ब्रह्म**	= ब्रह्मको,
माम्	= मेरे	**कृत्स्नम्**	= सम्पूर्ण
आश्रित्य	= शरण होकर		
जरामरणमोक्षाय	= जरा और मरणसे छूटनेके लिये	**अध्यात्मम्**	= अध्यात्मको
		च	= तथा
यतन्ति	= यत्न करते हैं,	**अखिलम्**	= सम्पूर्ण
ते	= वे (पुरुष)	**कर्म**	= कर्मको
तत्	= उस	**विदुः**	= जानते हैं।

गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने गीता ज्ञान देने वाले से प्रश्न किया कि जो आपने गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में ''तत् ब्रह्म'' कहा है, जिसको जानने वाले केवल वृद्ध अवस्था से तथा मरण से छूटने का प्रयत्न करते हैं यानि केवल मोक्ष चाहते हैं। संसार की किसी सुख-सुविधा की इच्छा नहीं करते। कृपया बताईए ''किम् तत् ब्रह्म'' अर्थात् वह ब्रह्म कौन है? इसका उत्तर गीता ज्ञान दाता ने इसी अध्याय 8 के श्लोक 3 में दिया है। कहा है कि वह ''परम अक्षर ब्रह्म'' है।

प्रमाण के लिए पेश हैं गीता अध्याय 8 श्लोक 1 तथा 3 की फोटोकॉपी :-

(गीता अध्याय 8 श्लोक 1 की फोटोकॉपी)

किम्, तत्, ब्रह्म, किम्, अध्यात्मम्, किम्, कर्म, पुरुषोत्तम,
अधिभूतम्, च, किम्, प्रोक्तम्, अधिदैवम्, किम्, उच्यते ॥ १ ॥

इस प्रकार भगवान्के वचनोंको न समझकर अर्जुन बोले—

पुरुषोत्तम	= हे पुरुषोत्तम!	**अधिभूतम्**	= अधिभूत (नामसे)
तत्	= वह		
ब्रह्म	= ब्रह्म	**किम्**	= क्या
किम्	= क्या है?	**प्रोक्तम्**	= कहा गया है
अध्यात्मम्	= अध्यात्म	**च**	= और
किम्	= क्या है?	**अधिदैवम्**	= अधिदैव
कर्म	= कर्म	**किम्**	= किसको
किम्	= क्या है?	**उच्यते**	= कहते हैं?

(गीता अध्याय 8 श्लोक 3 की फोटोकॉपी)

अक्षरम्, ब्रह्म, परमम्, स्वभावः, अध्यात्मम्, उच्यते,
भूतभावोद्भवकरः, विसर्गः, कर्मसञ्ज्ञितः ॥ ३ ॥

इस प्रकार अर्जुनके प्रश्न करनेपर श्रीभगवान् बोले, अर्जुन!—

परमम्	= परम	**उच्यते**	= कहा जाता है (तथा)
अक्षरम्	= अक्षर	**भूतभावोद्भवकरः**	= भूतोंके भावको उत्पन्न करनेवाला (जो)
ब्रह्म	= 'ब्रह्म' है,	**विसर्गः**	= त्याग है, (वह)
स्वभावः	= अपना स्वरूप अर्थात् जीवात्मा	**कर्मसञ्ज्ञितः**	= 'कर्म' नामसे कहा गया है।
अध्यात्मम्	= 'अध्यात्म' (नामसे)		

❖ अन्य प्रमाण गीता ज्ञान दाता से अन्य परमेश्वर का :-

इसी गीता अध्याय 8 के श्लोक 5 तथा 7 में तो गीता ज्ञान दाता ने अपनी पूजा करने को कहा है। कहा है कि हे अर्जुन! यदि तू मेरी भक्ति करेगा तो निसंदेह मेरे को ही प्राप्त होगा। इसलिए युद्ध भी कर और मेरा स्मरण भी कर। मुझे ही प्राप्त होगा।

फिर इसी गीता अध्याय 8 के श्लोक नं. 8, 9 तथा 10 में अपने से अन्य (तत् ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म) परम दिव्य पुरूष यानि परमेश्वर के विषय में बताया है। कहा है कि जो साधक उस परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) की भक्ति करता है, तो उसी को प्राप्त होता है।

पेश हैं गीता अध्याय 8 के श्लोक 5 व 7 की फोटोकॉपी जिनमें गीता ज्ञान देने वाले ने अपनी भक्ति करने के लिए कहा है :-

(गीता अध्याय 8 श्लोक 5 की फोटोकॉपी)

अन्तकाले, च, माम्, एव, स्मरन्, मुक्त्वा, कलेवरम्,
यः, प्रयाति, सः, मद्भावम्, याति, न, अस्ति, अत्र, संशयः ॥ ५ ॥

और

यः	= जो पुरुष	**सः**	= वह
अन्तकाले, च	= अन्तकालमें भी	**मद्भावम्**	= मेरे साक्षात् स्वरूपको
माम्	= मुझको		
एव	= ही	**याति**	= प्राप्त होता है—
स्मरन्	= स्मरण करता हुआ	**अत्र**	= इसमें (कुछ भी)
कलेवरम्	= शरीरको	**संशयः**	= संशय
मुक्त्वा	= त्यागकर	**न**	= नहीं
प्रयाति	= जाता है,	**अस्ति**	= है।

(गीता अध्याय 8 श्लोक 7 की फोटोकॉपी)

[निरन्तर भगवच्चिन्तन करते हुए युद्ध करनेकी आज्ञा एवं उसका फल]

तस्मात्, सर्वेषु, कालेषु, माम्, अनुस्मर, युध्य, च,
मयि, अर्पितमनोबुद्धिः, माम्, एव, एष्यसि, असंशयम् ॥ ७ ॥

तस्मात्	= इसलिये (हे अर्जुन! तू)	**मयि**	= मुझमें
सर्वेषु	= सब	**अर्पितमनोबुद्धिः**	= अर्पण किये हुए मन-बुद्धिसे युक्त होकर (तू)
कालेषु	= समयमें (निरन्तर)		
माम्	= मेरा	**असंशयम्**	= निःसन्देह
अनुस्मर	= स्मरण कर	**माम्**	= मुझको
च	= और	**एव**	= ही
युध्य	= युद्ध भी कर। (इस प्रकार)	**एष्यसि**	= प्राप्त होगा।

''गीता ज्ञान दाता से अन्य परमेश्वर''

<u>पेश हैं गीता अध्याय 8 के ही श्लोक नं. 8, 9 तथा 10 की फोटोकॉपी जिनमें गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परम दिव्य पुरूष यानि परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करने को कहा है।</u>

(गीता अध्याय 8 के श्लोक 8 की फोटोकॉपी)

अभ्यासयोगयुक्तेन, चेतसा, नान्यगामिना,
परमम्, पुरुषम्, दिव्यम्, याति, पार्थ, अनुचिन्तयन्॥ ८ ॥

पार्थ = हे पार्थ! (यह नियम है कि)
अभ्यासयोगयुक्तेन = परमेश्वरके ध्यानके अभ्यासरूप योगसे युक्त
नान्यगामिना = दूसरी ओर न जानेवाले
चेतसा = चित्तसे
अनुचिन्तयन् = निरन्तर चिन्तन करता हुआ (मनुष्य)
परमम् = परम (प्रकाशस्वरूप)
दिव्यम् = दिव्य
पुरुषम् = पुरुषको अर्थात् परमेश्वरको (ही)
याति = प्राप्त होता है।

(गीता अध्याय 8 के श्लोक 9 की फोटोकॉपी)

कविम्, पुराणम्, अनुशासितारम्, अणोः, अणीयांसम्,
अनुस्मरेत्, यः, ,सर्वस्य, धातारम्, अचिन्त्यरूपम्, आदित्यवर्णम्, तमसः, परस्तात्॥ ९ ॥

यः = जो पुरुष
कविम् = सर्वज्ञ,
पुराणम् = अनादि,
अनुशासितारम् = सबके नियन्ता, *
अणोः, अणीयांसम् = सूक्ष्मसे भी अति सूक्ष्म,
सर्वस्य = सबके
धातारम् = धारण-पोषण करनेवाले,
अचिन्त्यरूपम् = अचिन्त्यस्वरूप
आदित्यवर्णम् = सूर्यके सदृश नित्य चेतन प्रकाशरूप (और)
तमसः = अविद्यासे
परस्तात् = अति परे शुद्ध सच्चिदानन्दघन परमेश्वरका
अनुस्मरेत् = स्मरण करता है—

(गीता अध्याय 8 के श्लोक 10 की फोटोकॉपी)

प्रयाणकाले, मनसा, अचलेन, भक्त्या, युक्तः, योगबलेन,
च, एव, भ्रुवोः, मध्ये, प्राणम्, आवेश्य, सम्यक्, सः, तम्,
परम्, पुरुषम्, उपैति, दिव्यम्॥ १०॥

सः	= वह	**अचलेन**	= निश्चल
भक्त्या, युक्तः	= भक्तियुक्त पुरुष	**मनसा**	= मनसे
प्रयाणकाले	= अन्तकालमें (भी)	**(स्मरन्)**	= स्मरण करता हुआ
योगबलेन	= योगबलसे	**तम्**	= उस
भ्रुवोः	= भृकुटीके	**दिव्यम्**	= दिव्यरूप
मध्ये	= मध्यमें	**परम्**	= परम
प्राणम्	= प्राणको	**पुरुषम्**	= पुरुष परमात्माको
सम्यक्	= अच्छी प्रकार	**एव**	= ही
आवेश्य	= स्थापित करके	**उपैति**	= प्राप्त होता है—
च	= फिर		

विशेष :- गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में अपनी भक्ति का मंत्र (नाम) बताया है।

मूल पाठ :-

ओम् इति एकाक्षरम् ब्रह्म व्याहरन् माम् अनुस्मरन्।
यः प्रयाति त्यजन देहम् सः याति परमाम् गतिम्।।(13)

अर्थात् (माम्) मुझ (ब्रह्म) ब्रह्म का (अनुस्मरन्) स्मरण करने का (इति) यह (एकाक्षरम्) एक अक्षर (ओम्) ॐ है। (यः) जो साधक (त्यजन देहम्) शरीर त्यागकर (प्रयाति) जाता है यानि अंतिम श्वांस तक इसका स्मरण करता है तो (सः) वह साधक ओम् नाम के जाप से मिलने वाली (परमाम् गतिम्) परमगति को यानि ब्रह्मलोक को (याति) प्राप्त होता है।

☛ **ओम् (ॐ) नाम के जाप से साधक ब्रह्मलोक में जाता है। यह प्रमाण श्रीमद् देवी भागवत के सातवें स्कन्ध के 36वें अध्याय में है। इस अध्याय की फोटोकॉपी इसी पुस्तक के पृष्ठ 45 पर लगी है।**

गीता अध्याय 8 के ही श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्मलोक में गए साधक का जन्म-मरण का चक्र सदा बना रहता है। ब्रह्मलोक में गए भक्त भी पुनरावर्ती में हैं।

पेश है गीता अध्याय 8 श्लोक 16 की फोटोकॉपी :-

आब्रह्मभुवनात्, लोकाः, पुनरावर्तिनः, अर्जुन,
माम्, उपेत्य, तु, कौन्तेय, पुनर्जन्म, न, विद्यते ॥ १६ ॥

क्योंकि—

अर्जुन	= हे अर्जुन!	**माम्**	= मुझको
आब्रह्मभुवनात्	= ब्रह्मलोकपर्यन्त	**उपेत्य**	= प्राप्त होकर
लोकाः	= सब लोक		
पुनरावर्तिनः	= पुनरावर्ती* हैं,	**पुनर्जन्म**	= पुनर्जन्म
तु	= परंतु	**न**	= नहीं
कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र!	**विद्यते**	= होता;

कृपया अदालत नोट करे :- इस श्लोक के अनुवाद में गलती है। लिखा है कि मुझ (गीता ज्ञान देने वाले) को प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता।

गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 2 श्लोक 12 तथा गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में स्पष्ट किया है कि मेरे अनेकों जन्म हो चुके हैं, आगे भी होते रहेंगे। जब उसके स्वयं जन्म-मृत्यु होते हैं। फिर यहाँ कैसे कह सकता है कि मेरे को प्राप्त होकर पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होता? इसका यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

हे अर्जुन! ब्रह्मलोक में गए साधक भी पुनरावर्ती में हैं यानि नीचे से लेकर ब्रह्मलोक तक सब लोकों के प्राणी पुनरावर्ती में हैं अर्थात् सदा जन्म-मरण के चक्र में रहते हैं। जो यह नहीं जानते, वे मेरी भक्ति करके मुझे प्राप्त होकर (ब्रह्मलोक में जाकर) भी जन्मते-मरते रहते हैं यानि उस साधक का पुनर्जन्म होता है।

☛ गीता ज्ञान देने वाले ने अपने से अन्य परम अक्षर ब्रह्म यानि परमेश्वर की भक्ति करने का मंत्र (नाम) गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में बताया है जो सांकेतिक है। कहा है कि सच्चिदानंद घन ब्रह्म (परम अक्षर ब्रह्म) की भक्ति का ॐ (ओम्) तत् सत्, यह तीन नाम का स्मरण बताया है जिसकी स्मरण की विधि भी तीन प्रकार से है।

ये तीनों नाम सांकेतिक हैं। ''ॐ'', यह भी सांकेतिक है। इसका स्पष्ट नाम ''ओम्'' इसी प्रकार तत् तथा सत् भी सांकेतिक हैं। इनके स्पष्ट नाम अन्य हैं जो दास के पास हैं। वर्तमान में दास (रामपाल दास) के अतिरिक्त विश्व में किसी गुरू, ऋषि, संत, देवता आदि को इन यथार्थ मंत्रों का ज्ञान नहीं है। मेरे कुछ अनुयाईयों को दास ने तीनों नाम स्पष्ट कर रखे हैं। वे उनका जाप करते हैं।

पेश है गीता अध्याय 17 श्लोक 23 की फोटोकॉपी :-

ॐ, तत्, सत्, इति, निर्देशः, ब्रह्मणः, त्रिविधः, स्मृतः,
ब्राह्मणाः, तेन, वेदाः, च, यज्ञाः, च, विहिताः, पुरा ॥ २३ ॥

और हे अर्जुन!—

ॐ	= ॐ,	**तेन**	= उसीसे
तत्	= तत्,	**पुरा**	= सृष्टिके आदिकालमें
सत्	= सत्—		
इति	= ऐसे (यह)	**ब्राह्मणाः**	= ब्राह्मण
त्रिविधः	= तीन प्रकारका	**च**	= और
ब्रह्मणः	= सच्चिदानन्दघन ब्रह्मका	**वेदाः**	= वेद
		च	= तथा
निर्देशः	= नाम	**यज्ञाः**	= यज्ञादि
स्मृतः	= कहा है;	**विहिताः**	= रचे गये।

गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि मैं उस ''तत् ब्रह्म'' यानि परम अक्षर ब्रह्म (परमेश्वर) के विषय में सम्पूर्ण ज्ञान नहीं जानता। किसी तत्त्वदर्शी संतों के पास जाकर उस ज्ञान को समझ। उनको दण्डवत प्रणाम कर, उनकी सेवा कर। नम्रतापूर्वक प्रश्न कर। तब वे तत्त्वज्ञानी महात्मा तुझे तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

पेश है गीता अध्याय 4 श्लोक 34 की फोटोकॉपी :-

तत्, विद्धि, प्रणिपातेन, परिप्रश्नेन, सेवया,
उपदेक्ष्यन्ति, ते, ज्ञानम्, ज्ञानिनः, तत्त्वदर्शिनः ॥ ३४ ॥

तत्	= उस ज्ञानको (तू तत्त्वदर्शी ज्ञानियोंके पास जाकर)	**परिप्रश्नेन**	= सरलतापूर्वक प्रश्न करनेसे
		ते	= वे
विद्धि	= समझ, (उनको)	**तत्त्वदर्शिनः**	= परमात्मतत्त्व-को भली-भाँति जाननेवाले
प्रणिपातेन	= भलीभाँति दण्डवत्-प्रणाम करनेसे, (उनकी)	**ज्ञानिनः**	= ज्ञानी महात्मा (तुझे उस)
सेवया	= सेवा करनेसे और कपट छोड़कर	**ज्ञानम्**	= तत्त्वज्ञानका
		उपदेक्ष्यन्ति	= उपदेश करेंगे—

☛ तत्त्वदर्शी संत की पहचान भी बताई है :- गीता अध्याय 15 के श्लोक 1-4 में स्पष्ट किया है कि यह संसार रूपी पीपल का वृक्ष मानो। उसकी जड़ ऊपर को पूर्ण ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म है। नीचे को तीनों गुण रूप शाखाएँ हैं। जो संत इस संसार रूपी वृक्ष के सब अंगों की जानकारी रखता है, वह वेद के तात्पर्य को जानने वाला है यानि वह तत्त्वदर्शी संत है।

पेश है गीता अध्याय 15 श्लोक 1 की फोटोकॉपी :-

ऊर्ध्वमूलम्, अध:शाखम्, अश्वत्थम्, प्राहु:, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, य:, तम्, वेद, स:, वेदवित्॥ १ ॥

उसके पश्चात् श्रीभगवान् फिर बोले, हे अर्जुन!—

ऊर्ध्वमूलम्	= आदि पुरुष परमेश्वररूप मूलवाले[१] (और)	**यस्य**	= जिसके
अध:शाखम्	= ब्रह्मारूप मुख्य शाखावाले[२] (जिस)	**पर्णानि**	= पत्ते (कहे गये हैं—)
अश्वत्थम्	= संसाररूप पीपलके वृक्षको	**तम्**	= उस संसाररूप वृक्षको
अव्ययम्	= अविनाशी[१]	**य:**	= जो पुरुष (मूलसहित)
प्राहु:	= कहते हैं; (तथा)	**वेद**	= तत्त्वसे जानता है,
छन्दांसि	= वेद[२]	**स:**	= वह
		वेदवित्	= वेदके तात्पर्यको जाननेवाला है[३]।

गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि ''तत्त्वज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परम पद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक कभी लौटकर संसार में नहीं आता।'' यह भी स्पष्ट है कि उसी की भक्ति करनी चाहिए।

पेश है गीता अध्याय 15 श्लोक 4 की फोटोकॉपी :-

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न,
निवर्तन्ति, भूयः, तम्, एव्, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये,
यतः, प्रवृत्तिः, प्रसृता, पुराणी ॥ ४ ॥

ततः	= उसके पश्चात्	**पुराणी**	= पुरातन
तत्	= उस	**प्रवृत्तिः**	= संसारवृक्षकी प्रवृत्ति
पदम्	= परमपदरूप परमेश्वरको	**प्रसृता**	= विस्तारको प्राप्त हुई है,
परिमार्गितव्यम्	= भलीभाँति खोजना चाहिये,	**तम्, एव**	= उसी
यस्मिन्	= जिसमें	**आद्यम्, पुरुषम्**	= आदि- पुरुष नारायणके
गताः	= गये हुए पुरुष	**प्रपद्ये**	= मैं शरण हूँ—(इस प्रकार दृढ़ निश्चय करके उस परमेश्वरका मनन और निदिध्यासन करना चाहिये।)
भूयः	= फिर		
न, निवर्तन्ति	= लौटकर संसारमें नहीं आते		
च	= और		
यतः	= जिस परमेश्वरसे (इस)		

गीता अध्याय 15 के ही श्लोक 16-17 में तीन पुरूष (प्रभु) बताए हैं। क्षर पुरूष (गीता ज्ञान देने वाला) जो केवल इक्कीस ब्रह्मंडों का प्रभु है, अक्षर पुरूष जो सात संख ब्रह्मडों का स्वामी प्रभु है तथा तीसरा परम अक्षर ब्रह्म यानि परमेश्वर सबका मालिक है। जो उपरोक्त क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष से अन्य है, वह वास्तव में अविनाशी है। वही पुरूषोत्तम है। वही परमात्मा कहा जाता है।

पेश है गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 की फोटोकॉपी (अगले पष्ठ पर)।

(गीता अध्याय 15 श्लोक 16 की फोटोकॉपी)

द्वौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते ॥ १६ ॥

तथा हे अर्जुन!—

लोके	= इस संसारमें	**सर्वाणि**	= सम्पूर्ण
क्षरः	= नाशवान्	**भूतानि**	= भूतप्राणियोंके शरीर (तो)
च	= और		
अक्षरः	= अविनाशी	**क्षरः**	= नाशवान्
एव	= भी—	**च**	= और
इमौ	= ये	**कूटस्थः**	= जीवात्मा
द्वौ	= दो प्रकारके*	**अक्षरः**	= अविनाशी
पुरुषौ	= पुरुष हैं।(इनमें)	**उच्यते**	= कहा जाता है।

(गीता अध्याय 15 श्लोक 17 की फोटोकॉपी)

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम्, आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः ॥ १७ ॥

तथा इन दोनोंसे—

उत्तमः	= उत्तम	**बिभर्ति**	= सबका धारण-पोषण करता है (एवं)
पुरुषः	= पुरुष		
तु	= तो	**अव्ययः**	= अविनाशी,
अन्यः	= अन्य ही है,	**ईश्वरः**	= परमेश्वर (और)
यः	= जो	**परमात्मा**	= परमात्मा
लोकत्रयम्	= तीनों लोकोंमें	**इति**	= इस प्रकार
आविश्य	= प्रवेश करके	**उदाहृतः**	= कहा गया है।

❖ गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 का श्लोक 1-4 से संबंध है। गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 में कहा है कि ''यह संसार पीपल के वक्ष के समान जानों। इसकी जड़ (मूल) ऊपर को मानो जो परम अक्षर ब्रह्म है तथा नीचे को तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) जानों। इस संसार रूप वक्ष के पत्ते आदि (तना व मोटी डार) विभाग हैं। जो इस संसार रूप वक्ष के सब अंगों (मूल, तना, डार, शाखा तथा पत्ते) को जानता है, वह तत्त्वदर्शी संत है। परमेश्वर कबीर जी ने काशी (बनारस) शहर (भारत देश) में

प्रकट काल (सन् 1398-1518) में लगभग 550 वर्ष पूर्व यानि सन् 1398-1518 के दौरान तत्त्वदर्शी संत रूप में यह भेद बताया था। कहा था कि :-

''कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, क्षर पुरूष वाकी डार।
तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।''

अर्थात् इस संसार रूप वृक्ष का तना तो अक्षर पुरूष जानो, डार मानो क्षर पुरूष, तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) शाखा मानों और छोटी टहनियों तथा पत्तों को देवता समेत अन्य जीव-जन्तु जानों। (मूल रूप परमेश्वर कबीर जी हैं जो आगे प्रमाणों से सिद्ध हो जाएगा।) गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में कहा है कि क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष दोनों तथा इनके लोकों के सब प्राणी नाशवान हैं। आत्मा सबकी अमर हैं।

❖ गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि ''उत्तम पुरूष यानि पुरूषोत्तम तो (उपरोक्त क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष से) अन्य ही है जो परमात्मा कहा जाता है। जो तीनों लोकों में (क्षर पुरूष का लोक, अक्षर पुरूष के लोक तथा अपने परम अक्षर ब्रह्म के लोक, इन तीनों लोकों में) प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। वास्तव में अविनाशी परमेश्वर यानि परम अक्षर ब्रह्म है क्योंकि वृक्ष का पोषण मूल (जड़) से होता है।

उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ है कि श्री विष्णु उर्फ श्री कृष्ण से अन्य परमेश्वर है जो वास्तव में अविनाशी है। सबका धारण-पोषणकर्ता है। सबकी उत्पत्तिकर्ता है। वही उत्तम पुरूष (पुरूषोत्तम) है। अविनाशी परमेश्वर है। परम शांतिदायक है। जन्म-मरण से छूटने के लिए गीता ज्ञान देने वाले ने अर्जुन के माध्यम से भक्त समाज को उसी अपने से अन्य कबीर परमेश्वर की शरण में जाने के लिए कहा है।

''परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष होता है''

काल ब्रह्म व देवताओं की भक्ति करके भी जीव का जन्म-मरण का चक्र समाप्त नहीं होता क्योंकि ये स्वयं जन्म व मृत्यु के चक्र में पड़े हैं।

संत गरीबदास जी ने परमेश्वर कबीर जी से प्राप्त ज्ञान को इस प्रकार बताया है :-

{संत गरीबदास जी, गाँव-छुड़ानी हरियाणा की अमृतवाणी}

मन तू चलि रे सुख के सागर, जहाँ शब्द सिंधु रत्नागर। (टेक)
कोटि जन्म तोहे मरतां होगे, कुछ नहीं हाथ लगा रे।
कुकर–सुकर खर भया बौरे, कौआ हँस बुगा रे।।1।।
कोटि जन्म तू राजा किन्हा, मिटि न मन की आशा।
भिक्षुक होकर दर–दर हांड्या, मिल्या न निर्गुण रासा।।2।।
इन्द्र कुबेर ईश की पद्वी, ब्रह्मा, वरूण धर्मराया।
विष्णुनाथ के पुर कूं जाकर, बहुर अपूठा आया।।3।।

असँख्य जन्म तोहे मरते होगे, जीवित क्यूं ना मरै रे।
द्वादश मध्य महल मठ बौरे, बहुर न देह धरै रे।।4।।
दोजख बहिश्त सभी तै देखे, राज–पाट के रसिया।
तीन लोक से तप्त नाहीं, यह मन भोगी खसिया।।5।।
सतगुरू मिलै तो इच्छा मेटैं, पद मिल पदै समाना।
चल हँसा उस लोक पठाऊँ, जो आदि अमर अस्थाना।।6।।
चार मुक्ति जहाँ चम्पी करती, माया हो रही दासी।
दास गरीब अभय पद परसै, मिलै राम अविनाशी।।7।।

सूक्ष्मवेद की वाणी का सरलार्थ :-

आत्मा अपने साथी मन को अमर लोक के सुख तथा इस काल ब्रह्म के लोक के दुख को बताकर सुख के सागर रूपी अमर लोक (सत्यलोक) में चलने के लिए प्ररित कर रही हैं। काल (ब्रह्म) के लोक (इक्कीस ब्रह्माण्डों) में रहने वाले प्राणी को क्या-क्या कष्ट होते हैं, पहले यह जानकारी बताई है। कहा है कि :-

काल (ब्रह्म) के लोक का अटल विधान है कि जो जन्मता है, उसकी मत्यु निश्चित है और जो मर जाता है, उसका जन्म निश्चित है।

प्रमाण गीता जी में देखें :-

श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 2 श्लोक 22 में इस प्रकार कहा है :-

- **जैसे मनुष्य पुराने वस्त्रों को त्यागकर दूसरे नये वस्त्र ग्रहण करता है, वैसे ही जीवात्मा पुराने शरीरों को त्यागकर दूसरे नये शरीरों को प्राप्त करता है।**
- **गीता अध्याय 2 श्लोक 27 :- क्योंकि जन्मे हुए की मत्यु निश्चित है और मरे हुए का जन्म निश्चित है। इसलिए बिना उपाय वाले विषय में तू शोक करने के योग्य नहीं है।**

श्रीमद् भगवत गीता शास्त्र से स्पष्ट हुआ कि काल (ब्रह्म) के लोक का अटल नियम है कि जन्म तथा मत्यु सदा बने रहेंगे। जैसे गीता अध्याय 2 श्लोक 12 में भी कहा है कि :- हे अर्जुन! तू, मैं (गीता ज्ञान दाता) तथा ये सर्व राजा लोग पहले भी जन्मे, ये आगे भी जन्मेंगे।

- **गीता अध्याय 4 श्लोक 5 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, उन सबको तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ।**
- **गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान ने यह भी स्पष्ट किया है कि मेरी उत्पत्ति को न तो ऋषिजन जानते हैं, न देवता जानते हैं क्योंकि ये सर्व मेरे से उत्पन्न हुए हैं।**

इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 15 में कहा है कि :-

माम् उपेत्य पुनर्जन्मः दुःखालयम् अशाश्वतम्।
न आप्नुवन्ति महात्मानः संसिद्धिम् परमाम् गता।।

अनुवाद :- गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि (माम्) मुझे (उपेत्य) प्राप्त होकर तो (दुःखालयम् अशाश्वतम्) दुःखों के घर व नाशवान संसार में (पुनर्जन्मः) पुनर्जन्म है। (महात्मानः) महात्माजन जो (संसिद्धिम् परमाम्) परम सिद्धि को (गता) प्राप्त हो गए हैं, (न अप्नुवन्ति) पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होते।

विशेष :- पाठकजनों से निवेदन है कि मुझ (लेखक संत रामपाल दास) से पहले सर्व अनुवादकों ने गीता के इस श्लोक का गलत (Wrong) अनुवाद किया है। (गीता ज्ञान दाता ने कहा

है कि मुझे प्राप्त होकर पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होते।)

विचार करें :- पहले लिखे अनेकों गीता के श्लोकों में आप जी ने पढ़ा कि गीता ज्ञान दाता ने स्वयं कहा है कि मेरे तथा तेरे अनेकों जन्म हो चुके हैं। फिर भी इस श्लोक का यह अर्थ करना कि मुझे प्राप्त महात्मा का पुनर्जन्म नहीं होता, गीता की यथार्थता के साथ खिलवाड़ करना तथा अर्थों का अनर्थ करना मात्र है।

❖ सूक्ष्मवेद की अमतवाणी का यह भावार्थ है :-

वाणी का सरलार्थ :- आत्मा और मन को पात्र बनाकर संत गरीबदास जी ने संसार के मानव को समझाया है। कहा है कि ''यह संसार दुःखों का घर है। इससे भिन्न एक और संसार है। जहाँ कोई दुःख नहीं है। वह शाश्वत् स्थान है (सनातन परम धाम = सत्यलोक) वह सुख सागर है तथा वहाँ का प्रभु (अविनाशी परमेश्वर) भी सुखदायी है जो उस सुख सागर में निवास करता है।

सुख सागर अर्थात् अमर लोक की संक्षिप्त परिभाषा बताई है :-

शंखों लहर मेहर की ऊपजैं, कहर नहीं जहाँ कोई।
दास गरीब अचल अविनाशी, सुख का सागर सोई।।

भावार्थ :- जिस समय मैं (लेखक) अकेला होता हूँ, तो कभी-कभी ऐसी हिलोर अंदर से उठती है, उस समय सब अपने-से लगते हैं। चाहे किसी ने मुझे कितना ही कष्ट दे रखा हो, उसके प्रति द्वेष भावना नहीं रहती। सब पर दया भाव बन जाता है। यह स्थिति कुछ मिनट ही रहती है। उसको मेहर की लहर कहा है। सतलोक अर्थात् सनातन परम धाम में जाने के पश्चात् प्रत्येक प्राणी को इतना आनन्द आता है। वहाँ पर ऐसी असँख्यों लहरें आत्मा में उठती रहती हैं। जब वह लहर मेरी आत्मा से हट जाती है तो वही दुःखमय स्थिति प्रारम्भ हो जाती है। उसने ऐसा क्यों कहा?, वह व्यक्ति अच्छा नहीं है, वो हानि हो गई, यह हो गया, वह हो गया। यह कहर (दुःख) की लहर कही जाती है।

उस सतलोक में असँख्य लहर मेहर (दया) की उठती हैं, वहाँ कोई कहर (भयँकर दुःख) नहीं है। वैसे तो सतलोक में कोई दुःख नहीं है। कहर का अर्थ भयँकर कष्ट होता है। जैसे एक गाँव में आपसी रंजिस के चलते विरोधियों ने दूसरे पक्ष के एक परिवार के तीन सदस्यों की हत्या कर दी, कहीं पर भूकंप के कारण हजारों व्यक्ति मर जाते हैं, उसे कहते हैं कहर टूट पड़ा या कहर कर दिया। ऊपर लिखी वाणी में सुख सागर की परिभाषा संक्षिप्त में बताई है। कहा है कि वह अमर लोक अचल अविनाशी अर्थात् कभी चलायमान नहीं है, कभी ध्वस्त नहीं होता तथा वहाँ रहने वाला परमेश्वर अविनाशी है। वह स्थान तथा परमेश्वर सुख का समन्दर है। जैसे समुद्री जहाज बंदरगाह के किनारे से 100 या 200 किमी. दूर चला जाता है तो जहाज के यात्रियों को जल अर्थात् समंदर के अतिरिक्त कुछ भी दिखाई नहीं देता। सब और जल ही जल नजर आता है। इसी प्रकार सतलोक (सत्यलोक) में सुख के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है अर्थात् वहाँ कोई दुःख नहीं है।

अब पूर्व में लिखी वाणी का सरलार्थ किया जाता है :-

मन तू चल रे सुख के सागर, जहाँ शब्द सिंधु रत्नागर।।(टेक)
कोटि जन्म तोहे भ्रमत होगे, कुछ नहीं हाथ लगा रे।
कुकर शुकर खर भया बौरे, कौआ हँस बुगा रे।।

परमेश्वर कबीर जी ने अपनी अच्छी आत्मा संत गरीबदास जी को सूक्ष्मवेद समझाया, उसको

संत गरीबदास जी (गाँव-छुड़ानी जिला-झज्जर, हरियाणा प्रान्त) ने आत्मा तथा मन को पात्र बनाकर विश्व के मानव को काल (ब्रह्म) के लोक का कष्ट तथा सतलोक का सुख बताकर उस परमधाम में चलने के लिए सत्य साधना जो शास्त्रोक्त है, करने की प्रेरणा की है। मन तू चल रे सुख के सागर अर्थात् हे मन! तू सनातन परम धाम में चल। शब्द को अविनाशी अर्थ दिया है क्योंकि शब्द नष्ट नहीं होता। इसलिए शब्द का अर्थ अविनाशीपन से है कि वह स्थान अमरत्व का सिंधु अर्थात् सागर है और मोक्षरूपी रत्न का आगार अर्थात् खान है। इस काल ब्रह्म के लोक में आप जी ने भक्ति भी की। परंतु शास्त्रानुकूल साधना बताने वाले तत्त्वदर्शी संत न मिलने के कारण आप करोड़ों जन्मों से भटक रहे हो। करोड़ों-अरबों रूपये संग्रह करने में पूरा जीवन लगा देते हो। अचानक मत्यु हो जाती है। वह जोड़ा हुआ धन जो आपके पूर्व के संस्कारों से प्राप्त हुआ था, उसे छोड़कर संसार से चला गया। उस धन के संग्रह करने में जो पाप किए, वे आप जी के साथ गए। आप जी ने उस मानव जीवन में तत्त्वदर्शी संत से दीक्षा लेकर शास्त्रविधि अनुसार भक्ति की साधना नहीं की। जिस कारण से आपको कुछ हाथ नहीं आया। पूर्व के पुण्यों के बदले धन ले लिया। वह धन यहीं रह गया, आपको कुछ भी नहीं मिला। आपको मिले धन संग्रह तथा भक्ति शास्त्रानुकूल न करने के पाप।

जिनके कारण आप कुकर = कुत्ता, खर = गधा, सुकर = सूअर, कौआ = काग पक्षी, हँस = एक पक्षी जो केवल सरोवर में मोती खाता है, बुगा = बुगला पक्षी आदि-आदि की योनियों को प्राप्त करके कष्ट उठाया।

कोटि जन्म तू राजा कीन्हा, मिटि न मन की आशा।
भिक्षुक होकर दर–दर हांड्या, मिला न निर्गुण रासा।।

सरलार्थ :- हे मानव! आप जी ने काल (ब्रह्म) की कठिन से कठिन साधना की। घर त्यागकर जंगल में निवास किया, फिर भिक्षा प्राप्ति के लिए गाँव व नगर में घर-घर के द्वार पर हांड्या अर्थात् घूमा। जंगल में साधनारत साधक निकट के गाँव या शहर में जाता है। एक घर से भिक्षा पूरी नहीं मिलती तो अन्य घरों से भोजन लेकर जंगल में चला जाता है। कभी-कभी तो साधक एक दिन भिक्षा माँगकर लाते हैं, उसी से दो-तीन दिन निर्वाह करते हैं। रोटियों को पतले कपड़े रूमाल जैसे कपड़े को छालना कहते हैं। छालने में लपेटकर वक्ष की टहनियों से बाँध देते थे। वे रोटियाँ सूख जाती हैं। उनको पानी में भिगोकर नर्म करके खाते थे। वे प्रतिदिन भिक्षा माँगने जाने में जो समय व्यर्थ होता था, उसकी बचत करके उस समय को काल ब्रह्म की साधना में लगाते थे। भावार्थ है कि जन्म-मरण से छुटकारा पाने के लिए अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्ति के लिए वेदों में वर्णित विधि तथा लोकवेद से घोरतप करते थे। उनको तत्त्वदर्शी संत न मिलने के कारण निर्गुण रासा अर्थात् गुप्त ज्ञान जिसे तत्त्वज्ञान कहते हैं। वह नहीं मिला क्योंकि यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10 में तथा चारों वेदों का सारांश रूप श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में कहा है कि जो यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों का विस्तत ज्ञान स्वयं सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म अपने मुख कमल से बोलकर सुनाता है, वह तत्त्वज्ञान अर्थात् सूक्ष्मवेद है। गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि उस तत्त्वज्ञान को तू तत्त्वज्ञानियों के पास जाकर समझ, उनको दण्डवत् प्रणाम करने से नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्म तत्त्व को भली-भाँति जानने वाले तत्त्वदर्शी संत तुझे तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे। इससे सिद्ध हुआ कि तत्त्वज्ञान न वेदों में है और न ही गीता शास्त्र में। यदि होता तो एक अध्याय और बोल देता। कह देता कि तत्त्वज्ञान उस अध्याय में पढ़ें। संत गरीबदास जी ने मन के

बहाने मानव शरीरधारी प्राणियों को समझाया है कि वह निर्गुण रासा अर्थात् तत्त्वज्ञान न मिलने के कारण काल ब्रह्म की साधना करके आप जी करोड़ों जन्मों में राजा बने। फिर भी मन की इच्छा समाप्त नहीं हुई क्योंकि राजा सोचता है कि स्वर्ग में सुख है, यहाँ राज में कोई सुख-चैन नहीं है, शान्ति नहीं है।

निर्गुण रासा का भावार्थ :- निर्गुण का अर्थ है कि वह वस्तु तो है परंतु उसका लाभ नहीं मिल रहा। वक्ष के बीज में फल तथा वक्ष निर्गुण रूप में है, उस बीज को मिट्टी में बीजकर सिंचाई करके वह सरगुण वस्तु (वक्ष, वक्ष को फल) प्राप्त की जाती है। यह ज्ञान न होने से आम के फल व छाया से वंचित रह जाते हैं। रासा = झंझट अर्थात् उलझा हुआ कार्य। सूक्ष्मवेद में परमेश्वर कबीर जी ने कहा है कि :-

नौ मन (360 कि.ग्रा.) सूत = कच्चा धागा

कबीर, नौ मन सूत उलझिया, ऋषि रहे झख मार।
सतगुरू ऐसा सुलझा दे, उलझे न दूजी बार।।

सरलार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने कहा है कि अध्यात्म ज्ञान रूपी नौ मन सूत उलझा हुआ है। एक कि.ग्रा. उलझे हुए सूत को सीधा करने में एक दिन से भी अधिक जुलाहों का लग जाता था। यदि सुलझाते समय धागा टूट जाता तो कपड़े में गाँठ लग जाती। गाँठ-गठीले कपड़े को कोई मोल नहीं लेता था। इसलिए परमेश्वर कबीर जुलाहे ने जुलाहों का सटीक उदाहरण बताकर समझाया है कि अधिक उलझे हुए सूत को कोई नहीं सुलझाता था। अध्यात्म ज्ञान उसी नौ मन उलझे हुए सूत के समान है जिसको सतगुरू अर्थात् तत्त्वदर्शी संत ऐसा सुलझा देगा जो पुनः नहीं उलझेगा। बिना सुलझे अध्यात्म ज्ञान के आधार से अर्थात् लोकवेद के अनुसार साधना करके स्वर्ग-नरक, चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के जीवन, पथ्वी पर किसी टुकड़े का राज्य, स्वर्ग का राज्य प्राप्त किया, पुनः फिर जन्म-मरण के चक्र में गिरकर कष्ट पर कष्ट उठाया। परंतु काल ब्रह्म की वेदों में वर्णित विधि अनुसार साधना करने से वह परम शांति तथा सनातन परम धाम प्राप्त नहीं हुआ जो गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है और न ही परमेश्वर का वह परम पद प्राप्त हुआ जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में कभी नहीं आते जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है। काल ब्रह्म की साधना से निम्न लाभ होता रहता है।

वाणी नं 3 :- इन्द्र–कुबेर, ईश की पदवी, ब्रह्मा वरूण धर्मराया।
विष्णुनाथ के पुर कूं जाकर, बहुर अपूठा आया।।

सरलार्थ :- काल ब्रह्म की साधना करके साधक इन्द्र का पद भी प्राप्त करता है। इन्द्र स्वर्ग के राजा का पद है। इसको देवराज अर्थात् देवताओं का राजा तथा सुरपति भी कहते हैं। यह सिंचाई विभाग अर्थात् वर्षा मंत्रालय भी अपने आधीन रखता है।

प्रश्न :- इन्द्र की पदवी कैसे प्राप्त होती है?

उत्तर :- अधिक तप करने से या सौ मन (4 हजार कि.ग्रा.) गाय-भैंस के घी का प्रयोग करके धर्मयज्ञ करने से एक धर्मयज्ञ सम्पन्न होती है। ऐसी-ऐसी सौ धर्मयज्ञ निर्विघ्न करने से इन्द्र की पदवी साधक प्राप्त करता है। तप या यज्ञ के दौरान यज्ञ या तप की मर्यादा भंग हो जाती है तो नए सिरे से यज्ञ तथा तप करना पड़ता है। सफल होने पर ही इन्द्र की पदवी प्राप्त होती है। इस प्रकार इन्द्र की पदवी प्राप्त होती है।

प्रश्न :- इन्द्र का शासन काल कितना है? मत्यु उपरांत इन्द्र के पद को छोड़कर प्राणी किस योनि को प्राप्त करता है?

उत्तर :- इन्द्र स्वर्ग के राजा के पद पर 72 चौकड़ी अर्थात् 72 चतुर्युग तक बना रहता है। {एक चतुर्युग में सत्ययुग+त्रेतायुग+द्वापरयुग तथा कलयुग का समय होता है। जो 1728000 + 1296000 + 864000 + 432000 क्रमशः सत्ययुग + त्रेतायुग + द्वापरयुग + कलयुग का समय अर्थात् 43 लाख 20 हजार वर्ष का समय एक चतुर्युग में होता है। ऐसे बने 72 चतुर्युग तक वह साधक इन्द्र के पद पर स्वर्ग के राजा का सुख भोगता है।} एक कल्प अर्थात् ब्रह्मा जी के एक दिन में (जो एक हजार आठ (1008) चतुर्युग का होता है) 14 जीव इन्द्र के पद पर रहकर अपना किया पुण्य-कर्म भोगते हैं। इन्द्र के पद को भोगकर वे प्राणी गधे का जीवन प्राप्त करते हैं।

''कथा-मार्कण्डेय ऋषि तथा अप्सरा का संवाद''

एक समय बंगाल की खाड़ी में मार्कण्डेय ऋषि तप कर रहा था। इन्द्र के पद पर विराजमान को यह शर्त होती है कि तेरे शासनकाल में 72 चौकड़ी युग के दौरान यदि पथ्वी पर कोई व्यक्ति इन्द्र पद प्राप्त करने योग्य तप या धर्मयज्ञ कर लेता है और उसकी क्रिया में कोई बाधा नहीं आती है तो उस साधक को इन्द्र का पद दे दिया जाता है और वर्तमान इन्द्र से वह पद छीन लिया जाता है। इसलिए जहाँ तक संभव होता है, इन्द्र अपने शासनकाल में किसी साधक का तप या धर्मयज्ञ पूर्ण नहीं होने देता। उसकी साधना भंग करा देता है, चाहे कुछ भी करना पड़े।

जब इन्द्र को उसके दूतों ने बताया कि बंगाल की खाड़ी में मार्कण्डेय नामक ऋषि तप कर रहे हैं। इन्द्र ने मार्कण्डेय ऋषि का तप भंग करने के लिए उर्वशी भेजी। सर्व श्रंगार करके देवपरी मार्कण्डेय ऋषि के सामने नाचने-गाने लगी। उर्वशी ने अपनी सिद्धि से उस स्थान पर बसंत ऋतु जैसा वातावरण बना दिया। मार्कण्डेय ऋषि ने कोई उत्सुकता नहीं दिखाई। उर्वशी ने कमर-नाड़ा तोड़ दिया, निःवस्त्र हो गई। तब मार्कण्डेय ऋषि बोले, हे बेटी!, हे बहन!, हे माई! आप यह क्या कर रही हो? आप यहाँ गहरे जंगल में अकेली किसलिए आई? उर्वशी ने कहा कि ऋषि जी मेरे रूप को देखकर इस आरण्य खण्ड (बन-खण्ड) के सर्व साधक अपना संतुलन खो गए परंतु आप डगमग नहीं हुए, न जाने आपकी समाधि कहाँ थी? कप्या आप मेरे साथ इन्द्रलोक में चलो, नहीं तो मुझे सजा मिलेगी कि तू हार कर आ गई। मार्कण्डेय ऋषि ने कहा कि मेरी समाधि ब्रह्मलोक में गई थी, जहाँ पर मैं उन उर्वशियों का नाच देख रहा था जो इतनी सुंदर हैं कि तेरे जैसी तो उनकी 7-7 बांदियाँ अर्थात् नौकरानियाँ हैं। इसलिए मैं तेरे को क्या देखता, तेरे पर क्या आसक्त होता? यदि तेरे से कोई सुंदर हो तो उसे ले आ। तब देवपरी ने कहा कि इन्द्र की पटरानी अर्थात् मुख्य पत्नी मैं ही हूँ। मुझसे सुन्दर स्वर्ग में कोई औरत नहीं है।

तब मार्कण्डेय ऋषि ने पूछा कि इन्द्र की मत्यु होगी, तब तू क्या करेगी? उर्वशी ने उत्तर दिया कि मैं 14 इन्द्र भोगूँगी। भावार्थ है कि श्री ब्रह्मा जी के एक दिन में 1008 चतुर्युग होते हैं जिसमें 72-72 चतुर्युग का शासनकाल पूरा करके 14 इन्द्र मत्यु को प्राप्त होते हैं। इन्द्र की रानी वाली आत्मा ने किसी मानव जन्म में इतने अत्यधिक पुण्य किए थे। जिस कारण से वह 14 इन्द्रों की पटरानी बनकर स्वर्ग सुख तथा पुरूष सुख को भोगेगी।

मार्कण्डेय ऋषि ने कहा कि वे 14 इन्द्र भी मरेंगे, तब तू क्या करेगी? उर्वशी ने कहा कि फिर

मैं मत्यु लोक में गधी बनाई जाऊँगी और जितने इन्द्र मेरे पति होंगे, वे भी पथ्वी पर गधे की योनि प्राप्त करेंगे।

मार्कण्डेय ऋषि बोले कि फिर मुझे ऐसे लोक में क्यों ले जा रही थी जिसका राजा गधा बनेगा और रानी गधी की योनि प्राप्त करेगी? उर्वशी बोली कि अपनी इज्जत रखने के लिए, नहीं तो वे कहेंगे कि तू हारकर आई है।

मार्कण्डेय ऋषि ने कहा कि गधियों की कैसी इज्जत? तू वर्तमान में भी गधी है क्योंकि तू चौदह खसम करेगी और मत्यु उपरांत तू स्वयं स्वीकार रही है कि मैं गधी बनूंगी। विधानानुसार अपना इन्द्र का राज्य मार्कण्डेय ऋषि को देने के लिए वहीं पर इन्द्र आ गया और कहा कि ऋषि जी हम हारे और आप जीते। आप इन्द्र की पदवी स्वीकार करें। मार्कण्डेय ऋषि बोले अरे-अरे इन्द्र! इन्द्र की पदवी मेरे किसी काम की नहीं। मेरे लिए तो काग (कौवे) की बीट के समान है। मार्कण्डेय ऋषि ने इन्द्र से फिर कहा कि तू मेरे बताए अनुसार साधना कर, तेरे को ब्रह्मलोक ले चलूँगा। इस इन्द्र के राज्य को छोड़ दे। इन्द्र ने कहा कि हे ऋषि जी अब तो मुझे मौज-मस्ती करने दो। फिर कभी देखूंगा।

पाठकजनो! विचार करो :- इन्द्र को पता है कि मत्यु के उपरांत गधे का जीवन मिलेगा, फिर भी उस क्षणिक सुख को त्यागना नहीं चाहता। कहा कि फिर कभी देखूंगा। फिर कब देखेगा? गधा बनने के पश्चात् तो कुम्हार देखेगा। कितना वजन गधे की कमर पर रखना है? कहाँ-सी डण्डा मारना है? ठीक इसी प्रकार इस पथ्वी पर कोई छोटे-से टुकड़े का प्रधानमंत्री, मंत्री, मुख्यमंत्री या राज्य में मंत्री बना है या किसी पद पर सरकारी अधिकारी या कर्मचारी बना है या धनी है। उसको कहा जाता है कि आप भक्ति करो नहीं तो गधे बनोगे। वे या तो नाराज हो जाते हैं कि क्यों बनेंगे गधे? फिर से मत कहना। कुछ सभ्य होते हैं, वे कहते हैं कि किसने देखा है, गधे बनते हैं? फिर उनको बताया जाता है कि सब संत तथा ग्रन्थ बताते हैं। तो अधिकतर कहते हैं कि देखा जाएगा।

उनसे निवेदन है कि मत्यु के पश्चात् गधा बनने के बाद आप क्या देखोगे, फिर तो कुम्हार देखेगा कि आप जी के साथ कैसा बर्ताव करना है? देखना है तो वर्तमान में देख। बुराई छोड़कर शास्त्रानुकूल साधना करो जो वर्तमान में विश्व में केवल मेरे पास (लेखक रामपाल दास के पास) है। आओ ग्रहण करो और अपने जीव का कल्याण कराओ।

ऊपर लिखी वाणी नं. 3 में बताया है कि इन्द्र-कुबेर तथा ईश की पदवी प्राप्त करने वाले तथा ब्रह्मा जी का पद वरूण, धर्मराय का पद प्राप्त करके तथा विष्णु जी के लोक को प्राप्त कर देव पद प्राप्त भी वापिस जन्म-मरण के चक्र में रहता है।

स्वर्ग लोक में 33 करोड़ देव पद हैं। जैसे भारत वर्ष की संसद में 540 सांसदों के पद हैं। व्यक्ति बदलते रहते हैं। उन्हीं सांसदों में से प्रधानमंत्री तथा अन्य केंद्रीय मंत्री आदि बनते हैं।

इसी प्रकार उन 33 करोड़ देवताओं में से ही कुबेर का पद अर्थात् धन के देवता का पद प्राप्त होता है जैसे वित्त मंत्री होता है। ईश की पदवी का अर्थ है प्रभु पद जो कुल तीन माने गए हैं :- 1. श्री ब्रह्मा जी 2. श्री विष्णु जी तथा 3. श्री शिव जी।

वरूणदेव जल का देवता है। धर्मराय मुख्य न्यायधीश है जो सब जीवों को कर्मों का फल देता है, उसे धर्मराज भी कहते हैं। ये सर्व काल ब्रह्म की साधना करके पद प्राप्त करते हैं। पुण्य क्षीण होने के पश्चात् पद से मुक्त होकर पशु-पक्षियों आदि की 84 लाख प्रकार की योनियों में चले जाते

हैं। फिर नए ब्रह्मा जी, नए विष्णु जी तथा नए शिव जी इन पदों पर विराजमान होते हैं।

उपरोक्त सर्व देवता जन्मते-मरते हैं। ये अविनाशी नहीं हैं। इनकी स्थिति आप जी को ''सृष्टि रचना'' अध्याय में इसी पुस्तक में स्पष्ट होगी कि ये कितने प्रभु हैं? किसके पुत्र हैं तथा कौन इनकी माता जी हैं?

अन्य प्रमाण :- श्री देवी पुराण (सचित्र मोटा टाईप केवल हिन्दी, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के तीसरे स्कंद में पृष्ठ 123 पर लिखा है कि तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह सारा संसार आप से ही उद्भाषित हो रहा है। मैं (विष्णु), ब्रह्मा और शंकर आपकी कृपा से विद्यमान हैं। हमारा तो अविर्भाव अर्थात् जन्म तथा तिरोभाव अर्थात् मृत्यु हुआ करता है। आप प्रकृति देवी हैं।

शंकर भगवान बोले कि हे देवी! यदि विष्णु के पश्चात् उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा आपसे उत्पन्न हुए हैं तो क्या मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या आपकी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हो। हम तो केवल नियमित कार्य ही कर सकते हैं अर्थात् जिसके भाग्य में जो लिखा है, हम वही प्रदान कर सकते हैं। न अत्यधिक कर सकते, न कम कर सकते।

पाठकजनो! इस श्री देवी पुराण के उल्लेख से स्पष्ट हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शंकर जी नाशवान हैं। इनकी माता जी का नाम श्री देवी दुर्गा है। अधिक जानकारी आप ''सृष्टि रचना'' अध्याय से ग्रहण करेंगे जो इसी पुस्तक में लिखी है। ये प्रधान देवता हैं। अन्य इनसे निम्न स्तर के देव हैं। ये सर्व जन्मते-मरते हैं, अविनाशी राम यानि अविनाशी परमात्मा नहीं हैं।

श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में लिखा है कि गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने कहा है कि ''मेरी उत्पत्ति को न तो देवता जानते और न महर्षिजन जानते क्योंकि इन सबका आदि कारण मैं ही हूँ अर्थात् ये सर्व मेरे से उत्पन्न हुए हैं।''

गीता अध्याय 14 श्लोक 3 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! मेरी प्रकृति अर्थात् दुर्गा तो गर्भ धारण करती है, मैं उसके गर्भ में बीज स्थापित करता हूँ जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है।

गीता अध्याय 14 श्लोक 4 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! नाना प्रकार की सब योनियों में जितने शरीरधारी मूर्तियाँ उत्पन्न होती हैं (महत्) प्रकृति तो उन सबकी गर्भ धारण करने वाली माता है। (अहम् ब्रह्म) मैं ब्रह्म बीज स्थापित करने वाला पिता हूँ।

गीता अध्याय 14 श्लोक 5 :- गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट किया है कि हे अर्जुन! सत्वगुण श्री विष्णु जी, रजगुण श्री ब्रह्मा जी तथा तमगुण श्री शिव जी, ये प्रकृति अर्थात् दुर्गा देवी से उत्पन्न तीनों देवता अर्थात् तीनों गुण अविनाशी जीवात्मा को कर्मों के अनुसार शरीर में बाँधते हैं।

उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि उपरोक्त देवता नाशवान हैं तथा काल ब्रह्म के पुत्र हैं।

प्रसंग चल रहा है कि वाणी सँख्या 3 का सरलार्थ :-

इन्द्र, कुबेर, ईश अर्थात् ब्रह्मा, विष्णु, शिव तक की पदवी को प्राप्त करके तथा वरूण, धर्मराय की पदवी तथा श्री विष्णुनाथ के लोक को प्राप्त करके भी जन्म-मरण के चक्र में रहते हैं।

❖ मार्कण्डेय ऋषि जी ब्रह्म साधना कर रहे थे। उसी को सर्वोत्तम मान रहे थे। इसीलिए इन्द्र को कह रहे थे कि आ तेरे को ब्रह्म साधना का ज्ञान कराऊँ। ब्रह्म लोक की तुलना में स्वर्ग का राज्य लापसी (बिना देशी घी से बना भोजन जो हलवे जैसा दिखाई देता है) की तुलना में जैसे कौवे की बीट है।

पाठकजनो! सत्यलोक को हलवा जानों! आप जी ने ब्रह्म साधना करने वाले श्री चुणक ऋषि, श्री दुर्वासा ऋषि तथा कपिल मुनि की दशा जान ली, उनकी साधना को गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम अर्थात् घटिया बताया है। उसी श्रेणी की साधना मार्कण्डेय ऋषि जी की थी। जिसको अति उत्तम मानकर कर रहे थे तथा इन्द्र जी को भी राय दे रहे थे कि ब्रह्म साधना कर ले।

सूक्ष्मवेद में कहा है कि :- औरों पंथ बतावहीं, आप न जाने राह।

भावार्थ :- अन्य को मार्गदर्शन करते हैं, स्वयं भक्ति मार्ग का ज्ञान नहीं। श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 4 श्लोक 25 से 29 तक यही बताया है कि जो साधक जैसी भी साधना करता है, उसे उत्तम मानकर कर रहा होता है, सर्व साधक अपनी-अपनी भक्ति को पापनाशक जानते हैं।

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में स्पष्ट किया है कि यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों का ज्ञान स्वयं सच्चिदानन्द घन ब्रह्म ने अपने मुख कमल से बोली वाणी में विस्तार के साथ कहा है, वह तत्त्वज्ञान है। जिसे जानकर साधक सर्व पापों से मुक्त हो जाता है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में स्पष्ट किया है कि उस तत्त्वज्ञान को तत्त्वदर्शी संत जानते हैं, उनको दण्डवत प्रणाम करने से, नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे तत्त्वज्ञान को जानने वाले ज्ञानी महात्मा तुझे तत्त्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

वह तत्त्वज्ञान जिसे ऊपर की वाणी में निर्गुण रासा कहा है, नहीं मिलने से सर्व साधक जन्म-मरण के चक्र में रह गए।

मार्कण्डेय ऋषि ब्रह्म साधना कर रहा था। श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्मलोक में गए साधक भी पुनरावर्ती अर्थात् बार-बार जन्म-मरण के चक्र में ही रहते हैं।

वाणी सँख्या 4 :- असंख जन्म तोहे मरतां होगे, जीवित क्यों न मरै रे।
द्वादश मध्य महल मठ बोरे, बहुर न देह धरै रे।।

सरलार्थ :- हे मानव! तू अनन्त बार जन्म और मर चुका है। सत्य साधना कर तथा जीवित मर। जीवित मरने का तात्पर्य है कि भक्त को ज्ञान हो जाता है कि इस संसार की प्रत्येक वस्तु अस्थाई है। यह शरीर भी स्थाई नहीं है। जन्म-मत्यु का बखेड़ा भी भयँकर है। इस संसार में दुख के अतिरिक्त कुछ नहीं है। मानव शरीर प्राप्त करके मोक्ष प्राप्त नहीं किया तो पशु जैसा जीवन जीया। जैसे गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है कि जो साधक केवल जरा अर्थात् वद्धावस्था के कष्ट तथा मरण के दुःख से ही मुक्ति के लिए जो साधनारत हैं, वे तत् ब्रह्म को तथा सम्पूर्ण अध्यात्म को तथा कर्मों को जानते हैं।

इसी प्रकार तत्त्वज्ञान होने के पश्चात् मानव को अनावश्यक वस्तुओं की इच्छा नहीं होती, तम्बाकू, शराब-माँस सेवन नहीं करता। नाच-गाना मूर्खों का काम लगता है। जैसा भोजन मिल जाए, उसी में संतुष्ट रहता है।

❖ जीवित मरना :- आत्म कल्याण कराने के लिए साधक विचार करता है कि यदि मैं सत्संग में नहीं आऊँगा तो गुरू जी के दर्शन नहीं कर पाऊँगा। सत्संग विचार न सुनने से मन फिर से विकार करने लगेगा। वह साधक सर्व कार्य छोड़कर सत्संग सुनने के लिए चल पड़ता है। वह विचार करता है कि हम प्रतिदिन सुनते हैं तथा देखते हैं कि छोटे-छोटे बच्चों को छोड़कर पिता संसार से चला जाता है, मर जाता है। बड़े-बड़े पूंजीपति दुर्घटना में मर जाते हैं। सर्व सम्पत्ति जो सारे जीवन

में जोड़ी थी, उसे छोड़कर चले जाते हैं, दोबारा उस सम्पत्ति को सँभालने नहीं आते। मत्यु से पहले एक दिन भी कार्य छोड़ने का दिल नहीं करता था, अब स्थाई (Parmanent) कार्य छूट गया।

एक भक्त सत्संग में जाने लगा। दीक्षा ले ली, ज्ञान सुना और भक्ति करने लगा। अपने मित्र से भी सत्संग में चलने तथा भक्ति करने के लिए प्रार्थना की। परंतु दोस्त नहीं माना। कह देता कि कार्य से फुर्सत नहीं है। छोटे-छोटे बच्चे हैं। इनका पालन-पोषण भी करना है। काम छोड़कर सत्संग में जाने लगा तो सारा धँधा चौपट हो जाएगा।

वह सत्संग में जाने वाला भक्त जब भी सत्संग में चलने के लिए अपने मित्र से कहता तो वह यही कहता कि अभी काम से फुर्सत नहीं है। एक वर्ष पश्चात् उस मित्र की मत्यु हो गई। उसकी अर्थी उठाकर नगरवासी चले, साथ-साथ सैंकड़ों नगर-मौहल्ले के व्यक्ति भी साथ-साथ चले। सब बोल रहे थे कि राम नाम सत् है, सत् बोले गत् है।

भक्त कह रहा था कि राम नाम तो सत् है परंतु आज भाई को फुर्सत है। नगरवासी कह रहे थे कि सत् बोले गत् है, भक्त कह रहा था कि आज भाई को फुर्सत है। अन्य व्यक्ति उस भक्त से कहने लगे कि ऐसे मत बोल, इसके घर वाले बुरा मानेंगे। भक्त ने कहा कि मैं तो ऐसे ही बोलूँगा। मैंने इस मूर्ख से हाथ जोड़कर प्रार्थना की थी कि सत्संग में चल, कुछ भक्ति कर ले। यह कहता था कि अभी फुर्सत अर्थात् समय नहीं है। आज इसको परमानैंट फुर्सत है। छोटे-छोटे बच्चे भी छोड़ चला जिनके पालन-पोषण का बहाना करके परमात्मा से दूर रहा। भक्ति करता तो खाली हाथ नहीं जाता। कुछ भक्ति धन लेकर जाता। बच्चों का पालन-पोषण परमात्मा करता है। भक्ति करने से साधक की आयु भी परमात्मा बढ़ा देता है। भक्तजन ऐसा विचार करके भक्ति करते हैं, कार्य त्यागकर सत्संग सुनने जाते हैं।

भक्त विचार करते हैं कि परमात्मा न करे, हमारी मत्यु हो जाए। फिर हमारे कार्य कौन करेगा? हम यह मान लेते हैं कि हमारी मत्यु हो गई। हम तीन दिन के लिए सत्संग में चलें, अपने को मत मान लें और सत्संग में चले गए। वैसे तो परमात्मा के भक्तों का कार्य बिगड़ता नहीं, फिर भी हम मान लेते हैं कि हमारी गैर-हाजिरी में कुछ कार्य खराब हो गया तो तीन दिन बाद जाकर ठीक कर लेंगे। वास्तव में टिकट कट गई अर्थात् मत्यु हो गई तो परमानैंट कार्य बिगड़ गया। फिर कभी ठीक करने नहीं आ सकते। इस स्थिति को जीवित मरना कहते हैं।

वाणी का शेष सरलार्थ :-

द्वादश मध्य महल मठ बौरे, बहुर न देहि धरै रे।

सरलार्थ :- श्रीमद् भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्त्वज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में कभी नहीं आते अर्थात् उनका पुनर्जन्म नहीं होता। वे फिर देह धारण नहीं करते। सूक्ष्मवेद की यह वाणी यही स्पष्ट कर रही है कि वह परम धाम द्वादश अर्थात् 12वें द्वार को पार करके उस परम धाम में जाया जाता है। आज तक सर्व ऋषि-महर्षि, संत, मंडलेश्वर केवल 10 द्वार बताया करते। परंतु परमेश्वर कबीर जी ने अपने स्थान को प्राप्त कराने का सत्यमार्ग, सत्य स्थान स्वयं ही बताया है। उन्होंने 12वां द्वार बताया है। इससे भी स्पष्ट हुआ कि आज तक (सन् 2014 तक) पूर्व के सर्व ऋषियों, संतों, पंथों की भक्ति काल ब्रह्म तक की थी। जिस कारण से जन्म-मत्यु का चक्र चलता रहा।

वाणी सँख्या 5 :- दोजख बहिश्त सभी तै देखे, राजपाट के रसिया।
तीन लोक से तप्त नाहीं, यह मन भोगी खसिया।।

सरलार्थ :- तत्त्वज्ञान के अभाव में पूर्णमोक्ष का मार्ग न मिलने के कारण कभी दोजख अर्थात् नरक में गए, कभी बहिश्त अर्थात् स्वर्ग में गए,कभी राजा बनकर आनन्द लिया। यदि इस मानव को तीन लोक का राज्य भी दे दें तो भी तप्ति नहीं होती।

उदाहरण :- यदि कोई गाँव का सरपंच बन जाता है तो वह इच्छा करता है कि विधायक बने तो मौज हो जाए। विधायक इच्छा करता है कि मन्त्री बनूँ तो बात कुछ अलग हो जाएगी। मंत्री बनकर इच्छा करता है कि मुख्यमंत्री बनूँ तो पूरी चौधर (महिमा) हो। आनन्द ही न्यारा होगा। सारे प्रान्त पर कमांड चलेगी। मुख्यमंत्री बनने के पश्चात् प्रबल इच्छा होती है कि प्रधानमंत्री बनूँ तो जीवन की सफलता है। तब तक जीवन लीला समाप्त हो जाएगी। फिर गधा बनकर कुम्हार के लठ खा रहा होगा। इसलिए तत्त्वज्ञान में समझाया है कि काल ब्रह्म द्वारा बनाई स्वर्ग-नरक तथा राजपाट प्राप्ति की भूल-भुलईया में सारा जीवन व्यर्थ कर दिया।

एक अब्राहिम सुल्तान अधम नाम का बलख शहर का राजा था। वह पूर्व जन्म का बहुत अच्छा भक्त था। परंतु वर्तमान के ऐश्वर्य में मस्त होकर परमात्मा को भूल चुका था। राज के ठाठ में तथा महलों में आनंदमान बैठा था। एक दिन परमात्मा कबीर जी सत्यलोक से आकर एक यात्री का रूप बनाकर राजा के महल में गए तथा कहा कि सराय वाले! एक कमरा किराए पर दे, पैसे बता, रात्रि बितानी है। राजा ने कहा हे भोले यात्री! आपको यह सराय दिखाई देती है। मैं राजा हूँ और यह मेरा महल है। यात्री रूप में परमात्मा ने पूछा कि आपसे पहले इस महल में कौन रहते थे? राजा ने कहा कि मेरे पिता, दादा-परदादा रहते थे। यात्री रूप में परमेश्वर ने कहा कि आप कितने दिन रहोगे इस महल में? राजा ने कहा एक दिन मैं भी चला जाऊँगा इन्हें छोड़कर। परमेश्वर बोले कि यह सराय (धर्मशाला) नहीं तो क्या है? यह सराय है। जैसे तेरे बाप-दादा गए, ऐसे ही तू चला जाएगा, इसलिए मैंने महलों को धर्मशाला बताया है। राजा को वास्तविकता का ज्ञान हुआ। संसार की इच्छा त्यागकर आत्म-कल्याण करवाया। सदा रहने वाला सुख तथा अमर जीवन प्राप्त करने के लिए दीक्षा ली और आजीवन भक्ति की, अपना मानव जीवन सफल किया।

वाणी सँख्या 6 :-सतगुरू मिलैं तो इच्छा मेटैं, पद मिल पदे समाना।
चल हंसा उस लोक पठाऊँ, जो आदि अमर अस्थाना।।

सरलार्थ :- यदि तत्त्वदर्शी संत (सतगुरू) मिलें तो उपरोक्त ज्ञान बताकर काल ब्रह्म के लोक की सर्व वस्तुओं से तथा पदों से इच्छा समाप्त करके ''पद मिल पदे समाना'' इसमें एक 'पद' का अर्थ है पद्धति अर्थात् शास्त्रविधि अनुसार साधना। दूसरे पद का अर्थ है अमर लोक स्थान। सतगुरू साधना करवाकर परमेश्वर के उस परम पद की प्राप्ति करा देता है जहाँ जाने के पश्चात् फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। हे भक्त! चल तुझे उस लोक में भेज दूँ जो आदि अमर अस्थान है अर्थात् गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में वर्णित सनातन परम धाम है जहाँ पर परम शांति है।

वाणी सँख्या 7 :- चार मुक्ति जहाँ चम्पी करती, माया हो रही दासी।
दास गरीब अभय पद परसै, मिले राम अविनाशी।।

सरलार्थ :- उस सनातन परम धाम में परम शान्ति तथा अत्यधिक सुख है। काल ब्रह्म के लोक में चार मुक्ति मानी जाती है, जिनको प्राप्त करके साधक अपने को धन्य मानता है। परंतु वे स्थाई

नहीं हैं। कुछ समय उपरांत पुण्य समाप्त होते ही फिर 84 लाख प्रकार की योनियों में कष्ट उठाता है। परंतु उस सत्यलोक में चारों मुक्ति वाला सुख सदा बना रहेगा। माया आपकी नौकरानी बनकर रहेगी।

संत गरीबदास जी ने बताया है कि अमर लोक में जाने के पश्चात् प्राणी निर्भय हो जाता है और उस सनातन परम धाम में वह अविनाशी राम अर्थात् परमेश्वर मिलेगा। इसलिए पूर्ण मोक्ष के लिए शास्त्रानुकूल भक्ति करनी चाहिए जिससे उस परमात्मा तक जाया जा सकता है।

उपरोक्त वाणी तथा पूर्वोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा शिव जी और इनके पिता काल ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरूष व अक्षर पुरूष सर्व राम अर्थात् प्रभु नाशवान हैं। केवल परम अक्षर ब्रह्म ही अविनाशी राम अर्थात् प्रभु है। उस परमेश्वर की भक्ति से ही परमशांति तथा सनातन परम धाम अर्थात् पूर्ण मोक्ष प्राप्त होगा जहाँ पर चार मुक्ति का सुख सदा बना रहेगा। माया अर्थात् सर्व सुख-सुविधाऐं साधक के नौकर की तरह हाजिर रहती हैं।

सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

कबीर, माया दासी संत की, उभय दे आशीष।
विलसी और लातों छड़ी, सुमर–सुमर जगदीश।।

भावार्थ :- सर्व सुख-सुविधाऐं धन से होती हैं। वह धन शास्त्रविधि अनुसार भक्ति करने वाले संत-भक्त की भक्ति का अन् उदेशित उत्पाद (By Product) होता है। जैसे जिसने गेहूँ की फसल बीजी तो उसका उद्देश्य गेहूँ का अन्न प्राप्त करना है। परंतु भूस अर्थात् चारा भी अवश्य प्राप्त होता है। चारा, तूड़ा गेहूँ के अन्न का अन् उदेशित उत्पाद (By Product) है। इसी प्रकार सत्य साधना करने वाले को अपने आप धन माया मिलती है। साधक उसको भोगता है, वह चरणों में पड़ी रहती है अर्थात् धन का अभाव नहीं रहता अपितु आवश्यकता से अधिक प्राप्त रहती है। परमेश्वर की भक्ति करके माया का भी आनन्द भक्त, संत प्राप्त करते हैं। माया को धर्म के कार्यों में खर्चते हैं। तथा पूर्ण मोक्ष भी प्राप्त करते हैं।

''गीता का ज्ञान श्री कृष्ण में प्रवेश करके काल ब्रह्म ने कहा''

कबीर जी का वकील :- दास श्री कृष्ण जी के वकील साहेबानों से अदालत में पुनः जानना चाहता हूँ कि कृपया बताएँ श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान किसने कहा?

कृष्ण जी के वकील :- इस बात को तो बच्चा भी जानता है कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने अर्जुन को बताया।

कबीर जी का वकील :- लगता है कि श्री कृष्ण जी के वकील साहेबानों को अपने ही सद्ग्रंथों का ज्ञान नहीं है। इसलिए सब ऊवा-बाई बोल रहे हैं। स्वयं भी भ्रमित हैं तथा अदालत को भी भ्रमित करना चाहते हैं। दास प्रमाणों सहित पेश करता है, सद्ग्रंथों की सच्चाई जो इस प्रकार है :- श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी ने नहीं कहा। उनके शरीर के अंदर प्रेतवत् प्रवेश करके काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने बोला था।

प्रमाण :- महाभारत ग्रंथ में लिखा है कि महाभारत के युद्ध के पश्चात् युद्धिष्ठिर जी को राजगद्दी पर बैठाकर श्री कृष्ण जी ने द्वारका जाने की तैयारी की तो अर्जुन ने कहा

कि ''आप एक सत्संग करके जाना। मेरे को गीता वाला ज्ञान फिर से बताना जो आप जी ने युद्ध के समय बताया था। मैं भूल गया हूँ। श्री कष्ण जी ने कहा कि अर्जुन! तू बड़ा बुद्धिहीन है, श्रद्धाहीन है। तूने उस निर्मल गीता ज्ञान को क्यों भुला दिया है। अब मुझे भी याद नहीं।'' फिर श्री कष्ण जी ने अपने स्तर की गीता का ज्ञान बताया जिसमें श्रीमद्भगवत गीता वाला एक भी शब्द नहीं है।

पेश है संक्षिप्त महाभारत (द्वितीय खण्ड) के अध्याय ''आश्वमेधिकपर्व'' के पष्ठ 800-802 की फोटोकॉपी :-

८०० संक्षिप्त महाभारत [आश्वमेधिकपर्व

अर्जुनका श्रीकृष्णसे गीताका विषय पूछना और श्रीकृष्णका अर्जुनसे सिद्ध महर्षि और काश्यपका संवाद

जनमेजयने पूछा—ब्रह्मन्! शत्रुओंका नाश हो जानेके बाद जब महात्मा श्रीकृष्ण और अर्जुन सभामें बैठकर वार्तालाप कर रहे थे, उस समय उनमें क्या-क्या बातचीत हुई?

वैशम्पायनजीने कहा—राजन्! श्रीकृष्णके सहित अर्जुनने जब अपने राज्यपर पूरा अधिकार प्राप्त कर लिया तो वे दिव्य सभाभवनमें आनन्दके साथ रहने लगे। एक दिन स्वजनोंसे घिरे हुए वे दोनों मित्र स्वेच्छासे घूमते-घूमते सभामण्डपके ऐसे भागमें पहुँचे जो स्वर्गके समान सुन्दर था। पाण्डुनन्दन अर्जुन श्रीकृष्णके साथ रहकर बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने एक बार उस रमणीय सभाकी ओर दृष्टि डालकर भगवान्से यह वचन कहा—'देवकीनन्दन! जब युद्धका अवसर उपस्थित था, उस समय मुझे आपके माहात्म्यका ज्ञान और ईश्वरीय स्वरूपका दर्शन हुआ था; किंतु केशव! आपने स्नेहवश पहले मुझे जो ज्ञानका उपदेश किया था, वह सब इस समय बुद्धिके दोषसे भूल गया है। उन विषयोंको सुननेके लिये

बारंबार मेरे मनमें उत्कण्ठा होती है। इधर, आप जल्दी ही द्वारका जानेवाले हैं; अत: पुन: वह सब विषय मुझे सुना दीजिये।'

वैशम्पायनजी कहते हैं—अर्जुनके ऐसा कहनेपर वक्ताओंमें श्रेष्ठ महातेजस्वी भगवान् श्रीकृष्णने उन्हें गलेसे लगाकर इस प्रकार उत्तर दिया।

श्रीकृष्ण बोले—अर्जुन! उस समय मैंने तुम्हें अत्यन्त गोपनीय विषयका श्रवण कराया था, अपने स्वरूपभूत धर्म—सनातन पुरुषोत्तम-तत्त्वका परिचय दिया था और (शुक्ल-कृष्ण गतिका निरूपण करते हुए) नित्य लोकोंका भी वर्णन किया था; किंतु तुमने जो अपनी नासमझीके कारण उस उपदेशको याद नहीं रखा यह जानकर मुझे बड़ा खेद हुआ है। उन बातोंका अब पूरा-पूरा स्मरण होना सम्भव नहीं जान पड़ता। पाण्डुनन्दन! निश्चय ही तुम बड़े श्रद्धाहीन हो, तुम्हारी बुद्धि अच्छी नहीं जान पड़ती। अब मेरे लिये उस उपदेशको ज्यों-का-त्यों दुहरा देना कठिन है; क्योंकि उस समय योगयुक्त होकर मैंने परमात्मतत्त्वका वर्णन किया था। अब उस विषयका ज्ञान करानेके लिये मैं एक प्राचीन इतिहासका वर्णन करता हूँ। इससे तुम्हें श्रेष्ठ एवं स्थिर बुद्धि प्राप्त होगी, जिसके द्वारा तुम परम उत्तम गतिको पा जाओगे। एक दिनकी बात है, एक दुर्द्धर्ष ब्राह्मण ब्रह्मलोकसे उतरकर मेरे यहाँ आये। मैंने उनकी विधिवत् पूजा की और मोक्षधर्मके विषयमें प्रश्न किया। मेरे प्रश्नका उन्होंने बड़े अच्छे ढंगसे उत्तर दिया। वही मैं तुम्हें बतला रहा हूँ। कोई अन्यथा विचार न करके इसे ध्यान देकर सुनो।

ब्राह्मणने कहा—मधुसूदन! तुमने सब प्राणियोंपर कृपा करके उनके मोहका नाश करनेके लिये जो यह मोक्षधर्मसे सम्बन्ध रखनेवाला प्रश्न किया है, उसका मैं यथावत् उत्तर दे रहा हूँ। सावधान होकर मेरी बात श्रवण करो—प्राचीन समयमें काश्यप नामके एक धर्मात्मा और तपस्वी ब्राह्मण किसी सिद्ध ब्रह्मर्षिके पास गये; जो धर्मके विषयमें शास्त्रके सम्पूर्ण रहस्योंको जाननेवाले, भूत और भविष्यके ज्ञान-विज्ञानमें प्रवीण, लोक-तत्त्वके ज्ञानमें कुशल, सुख-दु:खके रहस्यको समझनेवाले, जन्म-मृत्युके तत्त्वज्ञ, पाप-पुण्यके ज्ञाता और ऊँच-नीच प्राणियोंको कर्मानुसार प्राप्त होनेवाली गतिके प्रत्यक्ष द्रष्टा थे। वे मुक्तकी भाँति विचरनेवाले, सिद्ध, शान्तचित्त, जितेन्द्रिय, ब्रह्मतेजसे देदीप्यमान, सर्वत्र जा सकनेवाले और अन्तर्धान होनेकी विद्याको जाननेवाले थे। अदृश्य रहनेवाले चक्रधारी सिद्धोंके साथ विचरते, बातचीत करते और उन्हींके साथ एकान्तमें बैठते थे। जैसे वायु कहीं आसक्त न होकर सर्वत्र प्रवाहित होती है, उसी प्रकार वे स्वच्छन्दतापूर्वक अनासक्त भावसे सर्वत्र विचरा करते थे। महर्षि काश्यप उनकी उपर्युक्त महिमा सुनकर ही उनके पास गये थे। निकट जाकर उन मेधावी, तपस्वी, धर्माभिलाषी और एकाग्रचित्त महर्षिने न्यायानुसार उन सिद्ध महात्माके चरणोंमें प्रणाम किया। वे ब्राह्मणोंमें श्रेष्ठ और बड़े अद्भुत संत थे। उनमें सब प्रकारकी योग्यता थी। वे शास्त्रके ज्ञाता और सच्चरित्र थे। उनका दर्शन करके काश्यपको बड़ा विस्मय हुआ। वे उन्हें गुरु मानकर उनकी सेवामें लग गये और अपनी विशेष शुश्रूषा, गुरुभक्ति तथा श्रद्धाभावके द्वारा उन्होंने उन सिद्ध महात्माको संतुष्ट कर लिया। जनार्दन! अपने शिष्य काश्यपके ऊपर प्रसन्न होकर उन सिद्ध महर्षिने परासिद्धिके सम्बन्धमें विचार करके जो उपदेश किया, उसे बताता हूँ, सुनो।

सिद्धने कहा—तात काश्यप! मनुष्य नाना प्रकारके शुभ कर्मोंका अनुष्ठान करके केवल पुण्यके संयोगसे इस लोकमें उत्तम फल और देवलोकमें स्थान प्राप्त करते हैं। जीवको कहीं भी अत्यन्त सुख नहीं मिलता। किसी भी लोकमें वह सदा नहीं रहने पाता। तपस्या आदिके द्वारा कितने ही कष्ट सहकर बड़े-से-बड़े स्थानको क्यों न प्राप्त किया जाय, वहाँसे भी बार-बार नीचे आना ही पड़ता है। मैंने काम-क्रोधसे युक्त और तृष्णासे मोहित होकर अनेकों बार पाप किये हैं और उनके फलस्वरूप घोर कष्ट देनेवाली अशुभ गतियोंको भोगा है। बार-बार जन्म और बार-बार मृत्युका क्लेश उठाया है। तरह-तरहके पदार्थ भोजन किये और अनेकों स्तनोंका दूध पिया है। बहुत-से पिता और भाँति-भाँतिकी माताएँ देखी हैं। विचित्र-विचित्र सुख-दुःखोंका अनुभव किया है। कितनी ही बार मुझसे प्रियजनोंका वियोग और अप्रिय मनुष्योंका संयोग हुआ है। जिस धनको मैंने बहुत कष्ट सहकर कमाया था, वह मेरे देखते-देखते नष्ट हो गया है। राजा और स्वजनोंकी ओरसे मुझे कई बार बड़े-बड़े कष्ट और अपमान उठाने पड़े हैं। अत्यन्त दुःसह शारीरिक और मानसिक वेदनाएँ सहनी पड़ी हैं। मैंने अनेकों बार घोर अपमान, प्राणान्त दण्ड और कड़ी कैदकी सजाएँ भोगी हैं। नरकमें पड़कर यमलोककी यातनाएँ सही हैं। इस लोकमें जन्म लेकर बारंबार बुढ़ापा, रोग और राग-द्वेष आदि द्वन्द्वोंके दुःखोंका अनुभव किया है। इस प्रकार बारंबार क्लेश उठानेसे एक दिन मेरे मनमें बड़ा संताप हुआ और मैंने दुःखोंसे घबराकर परमात्माकी शरण ली तथा समस्त लोक-व्यवहारका परित्याग कर दिया। इस तरह अनुभवके पश्चात् मैंने इस मार्गका आश्रय लिया है और अब परमात्माकी कृपासे मुझे यह उत्तम सिद्धि प्राप्त हुई है। अब मैं पुनः इस संसारमें नहीं आऊँगा। जबतक यह सृष्टि कायम रहेगी और जबतक मेरी मुक्ति नहीं हो जायगी, तबतक मैं अपनी और दूसरे प्राणियोंकी शुभ गतिका अवलोकन करूँगा। द्विजश्रेष्ठ! इस प्रकार मुझे यह उत्तम सिद्धि मिली है। इसके बाद मैं उत्तम-से-उत्तम सत्यलोकमें जाऊँगा और क्रमशः अव्यक्त ब्रह्मपद (मोक्ष) को प्राप्त कर लूँगा। इसमें तुम्हें तनिक भी संदेह नहीं करना चाहिये। अब मुझे मर्त्यलोकमें नहीं आना पड़ेगा। महामते! मैं तुम्हारे ऊपर बहुत प्रसन्न हूँ। बोलो, तुम्हारा कौन-सा प्रिय कार्य करूँ? तुम जिस इच्छासे मेरे पास आये हो उसके पूर्ण होनेका यह समय आ गया है। तुम्हारे आनेका उद्देश्य क्या है? इसे मैं जानता हूँ और शीघ्र ही यहाँसे जानेवाला हूँ। इसीलिये स्वयं तुम्हें प्रश्न करनेके लिये प्रेरित कर रहा हूँ। विद्वन्! तुम्हारे उत्तम आचरणसे मुझे बड़ा संतोष है। तुम अपने कल्याणकी बात पूछो, मैं तुम्हारे अभीष्ट प्रश्नका उत्तर दूँगा। काश्यप! मैं तुम्हारी बुद्धिकी सराहना करता और उसे बहुत आदर देता हूँ। तुमने मुझे पहचान लिया है, इसीसे कह रहा हूँ कि तुम बड़े बुद्धिमान् हो।

❖ इस फोटोकॉपी में श्री कृष्ण जी ने ब्रह्मलोक से उतरकर उनके पास आए ब्राह्मण दुर्द्धर्ष से मोक्ष धर्म यानि मुक्ति कैसे हो सकती है, यह जानना चाहा। उस ब्राह्मण की विधिवत पूजा की। इस प्रकरण से भी स्वसिद्ध हो जाता है कि श्री कृष्ण जी को अध्यात्म ज्ञान नहीं था, न गीता का ज्ञान था। यदि गीता का ज्ञान हो तो उस ब्राह्मण से जानने की आवश्यकता ही नहीं पड़ती क्योंकि गीता में मुक्ति का ज्ञान बता रखा है। इस प्रकरण में गीता वाला एक भी शब्द नहीं है।

''अदालत के प्रश्न तथा कबीर जी के वकील के उत्तर''

❖ अदालत में प्रमाण पेश हैं कि श्रीमद्भगवत् गीता का ज्ञान श्री कष्ण ने नहीं कहा। उनके शरीर में प्रवेश करके काल ब्रह्म ने कहा था।

अदालत का कबीर जी के वकील से प्रश्न नं. 1 :- गीता का ज्ञान कब तथा किसने, किसको सुनाया, किसने लिखा? विस्तार से बताएँ।

कबीर जी के वकील का उत्तर :- श्री मद्भगवत् गीता का ज्ञान श्री कष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके काल भगवान ने (जिसे वेदों व गीता में "ब्रह्म" नाम से भी जाना जाता है) अर्जुन को सुनाया। जिस समय कौरव तथा पाण्डव अपनी सम्पत्ति अर्थात् दिल्ली के राज्य पर अपने-अपने हक का दावा करके युद्ध करने के लिए तैयार हो गए थे, दोनों की सेनाएँ आमने-सामने कुरूक्षेत्र के मैदान में खड़ी थी। अर्जुन ने देखा कि सामने वाली सेना में भीष्म पितामह, गुरू द्रोणाचार्य, रिश्तेदार, कौरवों के बच्चे, दामाद, बहनोई, ससुर आदि-आदि लड़ने-मरने के लिए खड़े हैं। कौरव और पाण्डव आपस में चचेरे भाई थे। अर्जुन में साधु भाव जागत हो गया तथा विचार किया कि जिस राज्य को प्राप्त करने के लिए हमें अपने चचेरे भाईयों, भतीजों, दामादों, बहनोइयों, भीष्म पितामह जी तथा गुरूजनों को मारेंगे। यह भी नहीं पता कि हम कितने दिन संसार में रहेंगे? इसलिए इस प्रकार से प्राप्त राज्य के सुख से अच्छा तो हम भिक्षा माँगकर अपना निर्वाह कर लेंगे, परन्तु युद्ध नहीं करेंगे। यह विचार करके अर्जुन ने धनुष-बाण हाथ से छोड़ दिया तथा रथ के पिछले भाग में बैठ गया। अर्जुन की ऐसी दशा देखकर श्री कष्ण बोले :- देख ले सामने किस योद्धा से आपने लड़ना है। अर्जुन ने उत्तर दिया कि हे कष्ण! मैं किसी कीमत पर भी युद्ध नहीं करूँगा। अपने उद्देश्य तथा जो विचार मन में उठ रहे थे, उनसे भी अवगत कराया। उसी समय श्री कष्ण जी में काल भगवान प्रवेश कर गया जैसे प्रेत किसी अन्य व्यक्ति के शरीर में प्रवेश करके बोलता है। ऐसे ही काल ने श्री कष्ण के शरीर में प्रवेश करके श्री मद्भगवत गीता का ज्ञान युद्ध करने की प्रेरणा करने के लिए तथा कलयुग में वेदों को जानने वाले व्यक्ति नहीं रहेंगे, इसलिए चारों वेदों का संक्षिप्त वर्णन व सारांश "गीता ज्ञान" रूप में 18 अध्यायों में 584 श्लोकों में सुनाया।(श्रीमद्भगवत गीता में कुल 700 श्लोक हैं जिनमें से 584 काल ब्रह्म ने श्री कष्ण के शरीर में प्रवेश करके बोले थे। शेष संजय, धतराष्ट्र संवाद के श्लोक हैं।) श्री कष्ण को तो पता नहीं था कि मैंने क्या बोला था गीता ज्ञान में।

❖ कुछ वर्षो के बाद वेदव्यास ऋषि ने इस अमतज्ञान को संस्कत भाषा में देवनागरी लिपि में लिखा। बाद में अनुवादकों ने अपनी बुद्धि के अनुसार इस पवित्र ग्रन्थ का हिन्दी तथा अन्य भाषाओं में अनुवाद किया जो वर्तमान में गीता प्रेस गोरखपुर (U.P) से प्रकाशित किया जा रहा है जो कुछ गलत कुछ ठीक है।

पेश हैं ढ़ेर सारे प्रमाण कि गीता शास्त्र का ज्ञान "काल" ने कहा।

सर्व प्रथम गीता से ही प्रमाणित करता हूँ :-

❖ **प्रमाण नं. 1 :- गीता अध्याय 11 में प्रमाण है कि जब गीता ज्ञान दाता ने अपना विराट रूप दिखा दिया तो उसको देखकर अर्जुन भयभीत हो गया, काँपने लगा। यहाँ पर यह बताना भी अनिवार्य है कि अर्जुन का साला था श्री कष्ण क्योंकि श्री कष्ण की बहन सुभद्रा का विवाह अर्जुन से हुआ था।**

गीता ज्ञान दाता ने जिस समय अपना भयंकर विराट रूप दिखाया जो हजार भुजाओं वाला था। तब अर्जुन ने पूछा कि हे देव! आप कौन हैं?(गीता अध्याय 11 श्लोक 31)

पेश है गीता अध्याय 11 श्लोक 31 की फोटोकॉपी :-

आख्याहि, मे, कः, भवान्, उग्ररूपः, नमः, अस्तु, ते,
देववर,प्रसीद, विज्ञातुम्, इच्छामि, भवन्तम्, आद्यम्,
न, हि, प्रजानामि, तव, प्रवृत्तिम्॥ ३१॥

हे भगवन्! कृपा करके—

मे	= मुझे	**आद्यम्**	= आदिपुरुष
आख्याहि	= बतलाइये (कि)	**भवन्तम्**	= आपको (मैं)
भवान्	= आप		
उग्ररूपः	= उग्ररूपवाले	**विज्ञातुम्**	= विशेषरूपसे जानना
कः	= कौन हैं ?	**इच्छामि**	= चाहता हूँ;
देववर	= हे देवोंमें श्रेष्ठ!	**हि**	= क्योंकि (मैं)
ते	= आपको	**तव**	= आपकी
नमः	= नमस्कार	**प्रवृत्तिम्**	= प्रवृत्तिको
अस्तु	= हो। (आप)	**न**	= नहीं
प्रसीद	= प्रसन्न होइये।	**प्रजानामि**	= जानता।

❖ गीता अध्याय 11 श्लोक 46 :- हे सहंस्राबाहु (हजार भुजा वाले) आप अपने चतुर्भुज रूप में दर्शन दीजिए (क्योंकि अर्जुन उन्हें विष्णु अवतार कष्ण तो मानता ही था, परन्तु उस समय श्री कष्ण के शरीर से बाहर निकलकर काल ने अपना अपार विराट रूप दिखाया था) मैं भयभीत हूँ, आपके इस रूप को सहन नहीं कर पा रहा हूँ।

ध्यान रहे :- श्री विष्णु (श्री कष्ण) केवल चार भुजा से युक्त हैं। ये दो भुजा तो बना सकते हैं, परंतु चार से अधिक का प्रदर्शन नहीं कर सकते। काल ब्रह्म हजार (संहस्र) भुजा युक्त है। यह एक हजार तथा इन से नीचे भुजाओं का प्रदर्शन कर सकता है। हजार भुजाओं से अधिक का प्रदर्शन नहीं कर सकता। चार भुजा, दो भुजा, दस भुजा आदि-आदि बना सकता है। शरीर में बने कमल चक्रों में भी इस काल ब्रह्म के चक्र का नाम संहस्र कमल दल चक्र है।

पेश है गीता अध्याय 11 श्लोक 46 की फोटोकॉपी :-

किरीटिनम्, गदिनम्, चक्रहस्तम्, इच्छामि, त्वाम्,
द्रष्टुम्, अहम्, तथा, एव, तेन, एव, रूपेण, चतुर्भुजेन,
सहस्रबाहो, भव, विश्वमूर्ते ॥ ४६ ॥

और हे विष्णो!—

अहम्	= मैं	**इच्छामि**	= चाहता हूँ,
तथा	= वैसे	**(अतः)**	= इसलिये
एव	= ही	**विश्वमूर्ते**	= हे विश्वस्वरूप!
त्वाम्	= आपको	**सहस्रबाहो**	= हे सहस्रबाहो! (आप)
किरीटिनम्	= मुकुट धारण किये हुए (तथा)	**तेन एव**	= उसी
गदिनम्, चक्रहस्तम्	= गदा और चक्र हाथमें लिये हुए	**चतुर्भुजेन रूपेण**	= चतुर्भुजरूपसे (प्रकट)
द्रष्टुम्	= देखना	**भव**	= होइये।

❖ <u>विचारणीय विषय है कि क्या हम अपने साले से पूछेंगे कि हे महानुभाव! बताईए आप कौन हैं?</u> {एक समय एक व्यक्ति में प्रेत बोलने लगा। साथ बैठे व्यक्ति ने पूछा आप कौन बोल रहे हो? उत्तर मिला कि तेरा मामा बोल रहा हूँ। मैं दुर्घटना में मरा था। क्या हम अपने भाई को नहीं जानते? ठीक इसी प्रकार श्री कष्ण में काल बोल रहा था।}

❖ <u>प्रमाण नं. 2 :- गीता अध्याय 11 श्लोक 21 में अर्जुन ने कहा कि आप तो देवताओं के समूह के समूह को ग्रास (खा) रहे हैं जो आपकी स्तुति हाथ जोड़कर भयभीत होकर कर रहे हैं। महर्षियों तथा सिद्धों के समुदाय आप से अपने जीवन की रक्षार्थ मंगल कामना कर रहे हैं। गीता अध्याय 11 श्लोक 32 में गीता ज्ञान दाता ने बताया कि हे अर्जुन! मैं बढ़ा हुआ काल हूँ। अब प्रवत हुआ हूँ अर्थात् श्री कष्ण के शरीर में अब प्रवेश हुआ हूँ। सर्व व्यक्तियों का नाश करूँगा। विपक्ष की सर्व सेना, तू युद्ध नहीं करेगा तो भी नष्ट हो जाएगी।</u>

पेश है गीता अध्याय 11 श्लोक 21 व 32 की फोटोकॉपी :-

(गीता अध्याय 11 श्लोक 21 की फोटोकॉपी)

अमी, हि, त्वाम्, सुरसङ्घाः, विशन्ति, केचित्, भीताः,
प्राञ्जलयः, गृणन्ति, स्वस्ति, इति, उक्त्वा, महर्षिसिद्धसङ्घाः,
स्तुवन्ति, त्वाम्, स्तुतिभिः, पुष्कलाभिः ॥ २१ ॥

और हे गोविन्द!—

अमी	= वे ही	**गृणन्ति**	= उच्चारण करते हैं (तथा)
सुरसङ्घाः, हि	= देवताओंके समूह	**महर्षिसिद्धसङ्घाः**	= महर्षि और सिद्धोंके समुदाय
त्वाम्	= आपमें		
विशन्ति	= प्रवेश करते हैं (और)	**स्वस्ति**	= 'कल्याण हो'
		इति	= ऐसा
केचित्	= कुछ	**उक्त्वा**	= कहकर
भीताः	= भयभीत होकर	**पुष्कलाभिः**	= उत्तम-उत्तम
प्राञ्जलयः	= हाथ जोड़े (आपके नाम और गुणोंका)	**स्तुतिभिः**	= स्तोत्रोंद्वारा
		त्वाम्	= आपकी
		स्तुवन्ति	= स्तुति करते हैं।

(गीता अध्याय 11 श्लोक 32 की फोटोकॉपी)

कालः, अस्मि, लोकक्षयकृत्, प्रवृद्धः, लोकान्,
समाहर्तुम्, इह, प्रवृत्तः, ऋते, अपि, त्वाम्, न, भविष्यन्ति,
सर्वे, ये, अवस्थिताः, प्रत्यनीकेषु, योधाः ॥ ३२ ॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीभगवान् बोले, हे अर्जुन! मैं—

लोकक्षयकृत्	= लोकोंका नाश करनेवाला	**अवस्थिताः**	= स्थित
		योधाः	= योद्धा लोग हैं,
प्रवृद्धः	= बढ़ा हुआ	**(ते)**	= वे
कालः	= महाकाल	**सर्वे**	= सब
अस्मि	= हूँ।	**त्वाम्**	= तेरे
इह	= इस समय	**ऋते**	= बिना
लोकान्	= इन लोकोंको	**अपि**	= भी
समाहर्तुम्	= नष्ट करनेके लिये	**न**	= नहीं
प्रवृत्तः	= प्रवृत्त हुआ हूँ। (इसलिये)	**भविष्यन्ति**	= रहेंगे अर्थात् तेरे युद्ध न करनेसे भी इन सबका नाश हो जायगा।
ये	= जो		
प्रत्यनीकेषु	= प्रतिपक्षियोंकी सेनामें		

<u>इससे सिद्ध हुआ कि गीता का ज्ञान श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रविष्ट होकर काल ने कहा है। श्री कृष्ण जी ने पहले कभी नहीं कहा कि मैं काल हूँ। श्री कृष्ण जी को देखकर कोई भयभीत नहीं होता था। गोप-गोपियाँ, ग्वाल-बाल, पशु-पक्षी सब दर्शन करके आनंदित</u>

होते थे। तो ''क्या श्री कृष्ण जी काल थे?'' नहीं। इसलिए गीता ज्ञान दाता ''काल'' है जिसने श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके गीता शास्त्र का ज्ञान दिया।

❖ प्रमाण नं. 3 :- गीता अध्याय 11 श्लोक 47 में गीता ज्ञानदाता ने कहा कि हे अर्जुन! मैंने प्रसन्न होकर अपनी कृपा से तेरी दिव्य दृष्टि खोलकर यह विराट रूप दिखाया है। यह विराट रूप तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा है।

❖ विचार करें :- महाभारत ग्रन्थ में प्रकरण आता है कि जिस समय श्री कृष्ण जी कौरवों की सभा में उपस्थित थे और उनसे कह रहे थे कि आप दोनों (कौरव और पाण्डव) आपस में बातचीत करके अपनी सम्पत्ति (राज्य) का बटँवारा कर लो, युद्ध करना शोभा नहीं देता। पाण्डवों ने कहा कि हमें पाँच (5) गाँव दे दो, हम उन्हीं से निर्वाह कर लेंगे। दुर्योधन ने यह भी माँग नहीं मानी और कहा कि पाण्डवों के लिए सुई की नोक के समान भी राज्य नहीं है, युद्ध करके ले सकते हैं। इस बात से श्री कृष्ण भगवान बहुत नाराज हो गए तथा दुर्योधन से कहा कि तू पृथ्वी के नाश के लिए जन्मा है, कुलनाश करके टिकेगा। भले मानव! कहाँ आधा, राज्य कहाँ 5 गाँव। कुछ तो शर्म कर ले।

इतनी बात श्री कृष्ण जी के मुख से सुनकर अभिमानी दुर्योधन राजा आग-बबूला हो गया और सभा में उपस्थित अपने भाईयों तथा मन्त्रियों से बोला कि इस कृष्ण यादव को गिरफ्तार कर लो। उसी समय श्री कृष्ण जी ने विराट रूप दिखाया। सभा में उपस्थित सर्व सभासद उस विराट रूप को देखकर भयभीत होकर कुर्सियों के नीचे छिप गए, कुछ आँखों पर हाथ रखकर जमीन पर गिर गए। श्री कृष्ण जी सभा छोड़ कर चले गए तथा अपना विराट रूप समाप्त कर दिया।

गीता अध्याय 11 श्लोक 47 में गीता ज्ञान दाता ने कहा था कि यह मेरा विराट रूप तेरे अतिरिक्त अर्जुन! पहले किसी ने नहीं देखा था। यदि श्री कृष्ण गीता ज्ञान बोल रहे होते तो यह कभी नहीं कहते कि मेरा विराट रूप तेरे अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा था क्योंकि श्री कृष्ण जी के विराट रूप को कौरव तथा अन्य सभासद पहले देख चुके थे।

☛ इससे भी सिद्ध हुआ कि श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कृष्ण ने नहीं कहा, उनके शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके काल (क्षर पुरूष) ने कहा था। (यह तीसरा प्रमाण हुआ।)

पेश है गीता अध्याय 11 श्लोक 47 की फोटोकॉपी :-

मया, प्रसन्नेन, तव, अर्जुन, इदम्, रूपम्, परम्, दर्शितम्,
आत्मयोगात्, तेजोमयम्, विश्वम्, अनन्तम्, आद्यम्,
यत्, मे, त्वदन्येन, न, दृष्टपूर्वम्॥ ४७॥

इस प्रकार अर्जुनकी प्रार्थनाको सुनकर श्रीभगवान् बोले—

अर्जुन	= हे अर्जुन!	**अनन्तम्**	= सीमारहित
प्रसन्नेन	= अनुग्रहपूर्वक	**विश्वम्**	= विराट्
मया	= मैंने	**रूपम्**	= रूप
आत्मयोगात्	= अपनी योग-शक्तिके प्रभावसे	**तव**	= तुझको
		दर्शितम्	= दिखलाया है,
इदम्	= यह	**यत्**	= जिसे
मे	= मेरा		
परम्	= परम	**त्वदन्येन**	= तेरे अतिरिक्त दूसरे किसीने
तेजोमयम्	= तेजोमय		
आद्यम्	= सबका आदि (और)	**न दृष्टपूर्वम्**	= पहले नहीं देखा था।

<u>प्रमाण के लिए पेश है गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 की फोटोकॉपी जिनमें काल ब्रह्म यानि गीता का ज्ञान बताने वाले ने कहा है कि मैं कभी भी किसी के समक्ष प्रकट नहीं होता। अपनी योग माया (भक्ति की शक्ति) से छिपा रहता हूँ :-</u>

(गीता अध्याय 7 श्लोक 24 की फोटोकॉपी)

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः,
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्॥ २४॥

ऐसा होनेपर भी सब मनुष्य मेरा भजन नहीं करते, इसका कारण

अबुद्धयः	= बुद्धिहीन पुरुष	**माम्**	= मुझ सच्चिदानन्दघन परमात्माको
मम	= मेरे		
अनुत्तमम्	= अनुत्तम		(मनुष्यकी भाँति जन्मकर)
अव्ययम्	= अविनाशी		
परम्	= परम	**व्यक्तिम्**	= व्यक्ति-भावको
भावम्	= भावको	**आपन्नम्**	= प्राप्त हुआ
अजानन्तः	= न जानते हुए	**मन्यन्ते**	= मानते हैं।
अव्यक्तम्	= मन-इन्द्रियोंसे परे		

(गीता अध्याय 7 श्लोक 25 की फोटोकॉपी)

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावृतः,
मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम्॥ २५॥

तथा—

योगमाया-समावृतः	= अपनी योगमायासे छिपा हुआ	माम्	= मुझ
अहम्	= मैं	अजम्	= जन्मरहित
सर्वस्य	= सबके	अव्ययम्	= अविनाशी परमेश्वरको
प्रकाशः	= प्रत्यक्ष	न	= नहीं
न	= नहीं होता, (इसलिये)		
अयम्	= यह	अभिजानाति	= जानता अर्थात् मुझको जन्मने-मरनेवाला समझता है।
मूढः	= अज्ञानी		
लोकः	= जनसमुदाय		

यथार्थ अनुवाद :- गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 का यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है:- काल ब्रह्म ने कहा है कि मुझ अव्यक्त (गुप्त रहने वाले) को ये बुद्धिहीन जन-समुदाय मेरे (अनुतमम्) घटिया (अव्ययम्) अविनाशी यानि अटल नियम को नहीं जानते कि मैं अपने यथार्थ रूप में किसी के सामने प्रत्यक्ष नहीं होता। मुझे (व्यक्तिम्) मनुष्य रूप में यानि कृष्ण मान रहे हैं। (मैं कृष्ण नहीं हूँ।) श्लोक 25 में कहा है कि मैं अपनी योग माया से छिपा रहता हूँ। किसी के सामने प्रत्यक्ष नहीं होता। यह (मूढ़ः) अज्ञानी जन समुदाय मुझको इस प्रकार नहीं जानता कि मैं कृष्ण की तरह नहीं जन्मता। गीता 4 श्लोक 9 में गीता बोलने वाले ने कहा है कि मेरे जन्म तथा कर्म अलौकिक (दिव्य) हैं यानि यह जन्मता-मरता तो है। वह अलग परम्परा है। उपरोक्त दोनों श्लोकों से सिद्ध हुआ कि काल गुप्त रहकर कार्य करता है।

❖ प्रमाण नं. 4 :- श्री विष्णु पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के चौथे अंश के अध्याय 2 श्लोक 19-26 में प्रमाण है कि एक समय देवताओं और राक्षसों का युद्ध हुआ। देवता पराजित होकर समुद्र के किनारे जाकर छिप गए। फिर भगवान की तपस्या स्तुति करने लगे। काल का विधान है अर्थात् काल ने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं अपने वास्तविक काल रूप में कभी किसी को दर्शन नहीं दूंगा। अपनी योग माया से छिपा रहूँगा। (प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में) इसलिए यह काल (क्षर पुरूष) किसी को विष्णु जी के रूप में दर्शन देता है, किसी को शंकर जी के रूप में, किसी को ब्रह्मा जी के रूप में दर्शन देता है।

देवताओं को श्री विष्णु जी के रूप में दर्शन देकर कहा कि मैंने जो आप की समस्या है, वह जान ली है। आप पुरंज्य राजा को युद्ध के लिए तैयार कर लो। मैं उस राजा श्रेष्ठ के शरीर में प्रविष्ट होकर राक्षसों का नाश कर दूंगा, ऐसा ही किया गया।

पेश है श्री विष्णु पुराण के चौथे अंश के अध्याय 2 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

१६८ * श्रीविष्णुपुराण * [अ० २

दिया॥ १८॥ पिताके मरनेके अनन्तर उसने इस पृथिवीका धर्मानुसार शासन किया॥ १९॥ उस शशादके पुरंजय नामक पुत्र हुआ ॥ २०॥

पुरंजयका भी यह एक दूसरा नाम पड़ा— ॥ २१॥ पूर्वकालमें त्रेतायुगमें एक बार अति भीषण देवासुरसंग्राम हुआ॥ २२॥ उसमें महाबलवान् दैत्यगणसे पराजित हुए देवताओंने भगवान् विष्णुकी आराधना की॥ २३॥ तब आदि-अन्त-शून्य, अशेष जगत्प्रतिपालक, श्रीनारायणने देवताओंसे प्रसन्न होकर कहा— ॥ २४॥ "आपलोगोंका जो कुछ अभीष्ट है वह मैंने जान लिया है। उसके विषयमें यह बात सुनिये— ॥ २५॥ राजर्षि शशादका जो पुरंजय नामक पुत्र है उस क्षत्रियश्रेष्ठके शरीरमें मैं अंशमात्रसे स्वयं अवतीर्ण होकर उन सम्पूर्ण दैत्योंका नाश करूँगा। अतः तुमलोग पुरंजयको दैत्योंके वधके लिये तैयार करो" ॥ २६॥

अतः उसका नाम ककुत्स्थ पड़ा॥ ३२॥ ककुत्स्थके अनेना नामक पुत्र हुआ॥ ३३॥ अनेनाके पृथु, पृथुके विष्टराश्व, उनके चान्द्र युवनाश्व तथा उस चान्द्र युवनाश्वके शावस्त नामक पुत्र हुआ जिसने शावस्ती पुरी बसायी थी॥ ३४—३७॥ शावस्तके बृहदश्व तथा बृहदश्वके कुवलयाश्वका जन्म हुआ, जिसने वैष्णवतेजसे पूर्णता लाभ कर अपने इक्कीस सहस्र पुत्रोंके साथ मिलकर महर्षि उदकके अपकारी धुन्धु नामक दैत्यको मारा था; अतः उनका नाम धुन्धुमार हुआ॥ ३८—४०॥ उनके सभी पुत्र धुन्धुके मुखसे निकले हुए निःश्वासाग्निसे जलकर मर गये॥ ४१॥ उनमेंसे केवल दृढाश्व, चन्द्राश्व और कपिलाश्व—ये तीन ही बचे थे॥ ४२॥

दृढाश्वसे हर्यश्व, हर्यश्वसे निकुम्भ, निकुम्भसे अमिताश्व, अमिताश्वसे कृशाश्व, कृशाश्वसे प्रसेनजित् और प्रसेनजित्से युवनाश्वका जन्म हुआ॥ ४३—

इस फोटोकॉपी में स्पष्ट लिखा है कि गीता ज्ञान देने वाला काल ब्रह्म अन्य के शरीर में प्रवेश करके कार्य करता है। इसी प्रकार श्री कृष्ण जी में प्रवेश करके गीता का ज्ञान कहा है।

❖ प्रमाण नं. 5 :- श्री विष्णु पुराण के चौथे अंश के अध्याय 3 श्लोक 4-6 में प्रमाण है कि एक समय नागवंशियों तथा गंधर्वों का युद्ध हुआ। गंधर्वों ने नागों के सर्व बहुमूल्य हीरे, लाल व खजाने लूट लिए, उनके राज्य पर भी कब्जा कर लिया। नागाओं ने भगवान की स्तुति की, वही ''काल'' भगवान विष्णु रूप धारण करके प्रकट हुआ। कहा कि आप पुरूकुत्स राजा को गंधर्वों के साथ युद्ध के लिए तैयार कर लें। मैं राजा पुरूकुत्स के शरीर में प्रवेश करके दुष्ट गंधर्वों का नाश कर दूँगा, ऐसा ही हुआ।

पेश है श्री विष्णु पुराण के चौथे अंश के अध्याय 3 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

तीसरा अध्याय

मान्धाताकी सन्तति, त्रिशंकुका स्वर्गारोहण तथा सगरकी उत्पत्ति और विजय

अब हम मान्धाताके पुत्रोंकी सन्तानका वर्णन करते हैं॥ १ ॥ मान्धाताके पुत्र अम्बरीषके युवनाश्व नामक पुत्र हुआ॥ २ ॥ उससे हारीत हुआ जिससे अंगिरा-गोत्रीय हारीतगण हुए॥ ३ ॥ पूर्वकालमें रसातलमें मौनेय नामक छः करोड़ गन्धर्व रहते थे। उन्होंने समस्त नागकुलोंके प्रधान-प्रधान रत्न और अधिकार छीन लिये थे॥ ४ ॥ गन्धर्वोंके पराक्रमसे अपमानित उन नागेश्वरोंद्वारा स्तुति किये जानेपर उसके श्रवण करनेसे जिनकी विकसित कमलसदृश आँखें खुल गयी हैं निद्राके अन्तमें जगे हुए उन जलशायी भगवान् सर्वदेवेश्वरको प्रणाम कर उनसे नागगणने कहा—"भगवन्! इन गन्धर्वोंसे उत्पन्न हुआ हमारा भय किस प्रकार शान्त होगा?" ॥ ५ ॥ तब आदि-अन्तरहित भगवान् पुरुषोत्तमने कहा—'युवनाश्वके पुत्र मान्धाताका जो यह पुरुकुत्स नामक पुत्र है उसमें प्रविष्ट होकर मैं उन सम्पूर्ण दुष्ट गन्धर्वोंका नाश कर दूँगा'॥ ६ ॥ यह सुनकर भगवान् जलशायीको प्रणाम कर समस्त नागाधिपतिगण नागलोकमें लौट आये और पुरुकुत्सको लानेके लिये [अपनी बहिन एवं पुरुकुत्सकी भार्या] नर्मदाको प्रेरित किया॥ ७ ॥ तदनन्तर नर्मदा पुरुकुत्सको रसातलमें ले आयी॥ ८ ॥

रसातलमें पहुँचनेपर पुरुकुत्सने भगवान्‌के तेजसे अपने शरीरका बल बढ़ जानेसे सम्पूर्ण गन्धर्वोंको मार डाला और फिर अपने नगरमें लौट आया॥ ९-१० ॥ उस समय समस्त नागराजोंने

उपरोक्त विष्णु पुराण की दोनों कथाओं से प्रमाणित हुआ कि यह काल भगवान (क्षर पुरूष) इस प्रकार अव्यक्त (गुप्त) रहकर कार्य करता है। इसी प्रकार इसने श्री कष्ण जी में प्रवेश करके गीता का ज्ञान कहा है।

❖ प्रमाण नं. 6 :- महाभारत ग्रन्थ में (गीता प्रैस गोरखपुर (U.P) से प्रकाशित में) भाग-2 पष्ठ 800-802 पर लिखा है कि महाभारत के युद्ध के पश्चात् राजा युधिष्ठर को राजगद्दी पर बैठाकर श्री कष्ण जी ने द्वारिका जाने की तैयारी की। तब अर्जुन ने श्री कष्ण जी से कहा कि आप वह गीता वाला ज्ञान फिर से सुनाओ, मैं उस ज्ञान को भूल गया हूँ। श्री कष्ण जी ने कहा कि हे अर्जुन! आप बड़े बुद्धिहीन हो, बड़े श्रद्धाहीन हो। आपने उस अनमोल ज्ञान को क्यों भुला दिया, अब मैं उस ज्ञान को नहीं सुना सकता क्योंकि मैंने उस समय योगयुक्त होकर गीता का ज्ञान सुनाया था। जब वक्ता को ज्ञान नहीं तो श्रोता को कैसे याद रह सकता है। इससे सिद्ध है कि श्री कष्ण ने गीता का ज्ञान नहीं कहा।

☛ प्रमाण के लिए पढ़ें संक्षिप्त महाभारत ग्रन्थ (भाग-2) के पष्ठ 800-802 की फोटोकॉपी इसी पुस्तक के पष्ठ 78-80 पर।

❖ विचार करें :- युद्ध के समय योगयुक्त हुआ जा सकता है तो शान्त वातावरण में योगयुक्त होने में क्या समस्या हो सकती है? वास्तव में यह ज्ञान काल ने श्री कष्ण में प्रवेश करके बोला था।

❖ श्री क ष्ण जी को स्वयं तो वह गीता ज्ञान याद नहीं, यदि वे वक्ता थे तो वक्ता को तो सर्व ज्ञान याद होना चाहिए। श्रोता को तो प्रथम बार में 40 प्रतिशत ज्ञान याद रहता है। इससे सिद्ध है कि गीता का ज्ञान श्री क ष्ण जी में प्रवेश होकर काल (क्षर पुरूष) ने बोला था। उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि श्रीमद् भगवत गीता का ज्ञान श्री क ष्ण ने नहीं कहा। उनको तो पता ही नहीं कि क्या कहा था, श्री क ष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके काल पुरूष (क्षर पुरूष) ने बोला था।

''आँखों वाले अंधे''

संत गरीबदास जी ने इन तत्त्वज्ञान नेत्रहीन (अंधे) धर्म प्रचारकों गुरूओं के विषय में कहा है कि :-

गरीब, बेद पढ़ें पर भेद न जानें, पढ़ें पुराण अठारा। पत्थर की पूजा करें, विसरे स जनहारा।।

अर्थात् ये गुरूजन चारों वेदों तथा अठारह पुराणों को पढ़ते हैं, परंतु गूढ़ रहस्यों को नहीं समझ सके। जो अध्यापक अपने पाठ्यक्रम (Syllabus) की पुस्तकों के गूढ़ ज्ञान को नहीं जानकर पाठ्यक्रम से बाहर का (outer) ज्ञान विद्यार्थियों को पढ़ाता है तो वह नालायक व्यक्ति है। विद्यार्थियों का जीवन नष्ट कर रहा है। यही दशा इन धर्म के नाम पर बने धर्म गुरूजनों की है। धर्म ग्रंथों को न समझकर उनसे बाहर की दंत कथा (लोक वेद) बता रहे हैं। संत गरीबदास जी ने फिर कहा है कि :-

गीता और भागौत पढ़ें, नहीं बूझें शब्द ठिकाने नूं। मन मथुरा दिल द्वारका नगरी, क्या करो बरसाने नूं।।
मोती मुक्ता दर्शत नांही, ये गुरू सब अंध रे। दीखत के तो नैन चिसम हैं, इनकै फिरा मोतिया बिंद रे।।

अर्थात् ये सब के सब गुरूजन श्रीमद्भगवत गीता तथा श्रीमद् भागवत (सुधा सागर) को पढ़ते हैं। इनको आधार बताकर जनता को ज्ञान बताते हैं। संस्क त बोलते हैं। श्रोता इनको परम विद्वान मानते हैं। गीता मनीषी की उपाधि श्रद्धालुओं ने इनको दे रखी है, परंतु इनको ग्रंथों का यथार्थ ज्ञान नहीं है। ये पढ़ते हैं गीता, इनको पता ही नहीं कि गीता का ज्ञान किस अद श्य शक्ति ने श्री क ष्ण के शरीर में प्रवेश करके बोला था। गीता पढ़ते हैं, परंतु ''नहीं बूझें शब्द ठिकाने नूं'' यानि जिस (ठिकाने के शब्द) यथार्थ नाम जाप से मोक्ष होना है, उसको जानना नहीं चाहते। जैसे गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में गीता ज्ञान दाता ने अपना जाप करने का मंत्र ओं (ॐ) बताया है तथा गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में अपने से अन्य परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) का जाप करने का मंत्र सांकेतिक शब्दों (Code words) में बताया है :- ''ॐ तत् सत्''। इस ॐ तत् सत् मंत्र के (ठिकाने के शब्द) यथार्थ नाम अन्य हैं। उनको ये गुरूजन जानते नहीं और न जानना चाहते हैं। मोक्ष इन्हीं तीन मंत्रों से होना है। इन तीनों नामों के यथार्थ नामों का जाप न करके चाहे चारों वेदों व गीता आदि ग्रंथों को पढ़ते-पढ़ाते रहो, जीवन व्यर्थ हो जाएगा।

इसलिए कहा है कि इन गुरूओं को अज्ञान रूपी मोतियाबिंद हुआ है। मोतियाबिंद वाले की आँखें स्वस्थ दिखाई देती हैं, परंतु दिखाई कुछ नहीं देता। इसी प्रकार ये धर्मगुरू संस्क त बोलते हैं तो श्रोताओं को लगता है कि ये बड़े विद्वान हैं। परंतु इनको सद्ग्रन्थों की कुछ भी समझ नहीं है। ये अज्ञानी हैं। यथार्थ ज्ञान नेत्रहीन (अंधे) हैं। गीता ज्ञान देने वाला अपने आपको नाशवान कहता

है। अपने से अन्य को अविनाशी कहता है। उसी की शरण में जाने को कहा है। ये श्री क ष्ण को ही अविनाशी जगत का कर्ता बताकर जनता के साथ धोखा कर रहे हैं। ये आँखों वाले अंधे हैं।

प्रश्न 2 :- काल पुरूष कौन है?

उत्तर :- Annexure सष्टि रचना जो पष्ठ 389 पर लिखी है। उसमें विस्तारपूर्वक लिखा है।

प्रश्न 3 : काल भगवान अर्थात् ब्रह्म अविनाशी है या जन्मता-मरता है?

उत्तर :- जन्मता-मरता है।

प्रश्न 4 :- गीता में कहाँ प्रमाण है?

उत्तर : श्री मद्भगवत गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता स्वयं स्वीकार करता है कि मेरी भी जन्म व मत्यु होती है, मैं अविनाशी नहीं हूँ। कहा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। तू, मैं और ये राजा लोग व सैनिक पहले भी थे, आगे भी होंगे, यह न जान कि हम केवल वर्तमान में ही हैं। मेरी उत्पत्ति को न तो देवता लोग जानते और न ही ऋषिजन क्योंकि यह सब मेरे से उत्पन्न हुए हैं।

इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता काल पुरूष अविनाशी नहीं है। इसलिए इसको क्षर पुरूष (नाशवान प्रभु) कहा जाता है। इन श्लोकों की फोटोकॉपी पष्ठ 46 से 47 पर लगी हैं।

प्रश्न 5 : क्या ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव अविनाशी हैं?

उत्तर : नहीं। ये नाशवान हैं, इनकी भी जन्म-मत्यु होती है, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी के माता-पिता भी हैं।

प्रश्न 6 : कोई प्रमाण बताओ, माता-पिता का नाम भी बताओ।

उत्तर : श्री देवी महापुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के तीसरे स्कन्ध के अध्याय 4-5 में श्री विष्णु जी ने अपनी माता दुर्गा की स्तुति करते हुए कहा है कि हे मातः! आप शुद्ध स्वरूपा हो, सारा संसार आप से ही उद्भाषित हो रहा है, हम आपकी कपा से विद्यमान हैं, मैं, ब्रह्मा और शंकर तो जन्मते-मरते हैं, हमारा तो अविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मत्यु) हुआ करता है, हम अविनाशी नहीं हैं। तुम ही जगत जननी और सनातनी देवी हो और प्रकति देवी हो। शंकर भगवान बोले, हे माता! विष्णु के बाद उत्पन्न होने वाला ब्रह्मा जब आपका पुत्र है तो क्या मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर तुम्हारी सन्तान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हो। इस देवी महापुराण के उल्लेख से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शंकर जी को जन्म देने वाली माता श्री दुर्गा देवी (अष्टंगी देवी) है और तीनों नाशवान हैं।

पेश है श्रीमद् देवीभागवत (देवी पुराण) के तीसरे स्कन्ध के अध्याय 4-5 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

१३८ * संक्षिप्त देवीभागवत * [तीसरा

सूर्य जगत्को प्रकाशित करता है। तुम शुद्धस्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हींसे उद्भासित हो रहा है। मैं, ब्रह्मा और शंकर—हम सभी तुम्हारी कृपासे ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव और तिरोभाव हुआ करता है। केवल तुम्हीं नित्य हो, जगज्जननी हो, प्रकृति और सनातनी देवी हो।

भगवान् शंकर बोले—'देवी! यदि महाभाग विष्णु तुम्हींसे प्रकट हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होनेवाले ब्रह्मा भी तुम्हारे ही बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करनेवाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ—अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करनेवाली तुम्हीं हो। शिवे! सम्पूर्ण संसारकी सृष्टि करनेमें तुम बड़ी चतुर हो। अपनी इच्छाके अनुसार क्रीड़ा करती और शान्त भी हो जाती हो। इस संसारकी सृष्टि, स्थिति, और संहारमें तुम्हारे गुण सदा समर्थ हैं। उन्हीं तीनों गुणोंसे उत्पन्न हम ब्रह्मा, विष्णु एवं शंकर नियमानुसार कार्यमें तत्पर रहते हैं।

श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी का पिता कौन है?

श्री ब्रह्मा (रजगुण), श्री विष्णु (सतगुण) तथा श्री शिव जी (तमगुण) की माता देवी दुर्गा है तथा पिता काल ज्योति निरंजन है।

प्रमाण :- श्री शिव महापुराण (गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित) में इनके पिता का ज्ञान है, श्री शिव महापुराण के रूद्रसंहिता खण्ड में अध्याय 5 से 9 तक निम्न प्रकरण है:-

अपने पुत्र नारद जी के प्रश्न का उत्तर देते हुए श्री ब्रह्मा जी ने कहा कि हे पुत्र! आपने सृष्टि के उत्पत्तिकर्ता के विषय में जो प्रश्न किया है, उसका उत्तर सुन।

प्रारम्भ में केवल एक "सद्ब्रह्म" ही शेष था। सब स्थानों पर प्रलय था। उस निराकार परमात्मा ने अपना स्वरूप शिव जैसा बनाया। उसको "सदाशिव" कहा जाता है, उसने अपने शरीर से एक स्त्री निकाली, वह स्त्री दुर्गा, जगदम्बिका, प्रकृति देवी तथा त्रिदेव (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) की जननी कहलाई जिसकी आठ भुजाएं हैं, इसी को शिवा भी कहा है।

❖ "श्री विष्णु जी की उत्पत्ति":- सदाशिव और शिवा (दुर्गा) ने पति-पत्नी रूप में रहकर एक पुत्र की उत्पत्ति की, उसका नाम विष्णु रखा।

❖ "श्री ब्रह्मा जी की उत्पत्ति" :- श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि जिस प्रकार विष्णु जी की उत्पत्ति शिव तथा शिवा के संयोग (भोग-विलास) से हुई है, उसी प्रकार शिव और शिवा ने मेरी (ब्रह्मा की) भी उत्पत्ति की।

नोट :– यहाँ पर शिव को काल ब्रह्म जानें, शिवा को दुर्गा जानें, (अदालत नोट करे) इस रूद्र संहिता खण्ड में शंकर जी की उत्पत्ति का प्रकरण नहीं है, यह अनुवादकर्ता की गलती है। वैसे देवी पुराण में शंकर जी ने स्वयं स्वीकारा है कि मेरा जन्म दुर्गा (प्रकृति) से हुआ है।

पेश है संक्षिप्त शिवपुराण की रूद्र संहिता खंड से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

अपने पुत्र नारदकी यह बात सुनकर लोक-पितामह ब्रह्मा वहाँ इस प्रकार बोले— (अध्याय ५)

महाप्रलयकालमें केवल सद्ब्रह्मकी सत्ताका प्रतिपादन, उस निर्गुण-निराकार ब्रह्मसे ईश्वरमूर्ति (सदाशिव)-का प्राकट्य, सदाशिवद्वारा स्वरूपभूता शक्ति (अम्बिका)-का प्रकटीकरण, उन दोनोंके द्वारा उत्तम क्षेत्र (काशी या आनन्दवन)-का प्रादुर्भाव, शिवके वामांगसे परम पुरुष (विष्णु)-का आविर्भाव तथा उनके सकाशसे प्राकृत तत्त्वोंकी क्रमशः उत्पत्तिका वर्णन

ब्रह्माजीने कहा—ब्रह्मन्! देवशिरोमणे! तुम सदा समस्त जगत्के उपकारमें ही लगे रहते हो। तुमने लोगोंके हितकी कामनासे यह बहुत उत्तम बात पूछी है। जिसके सुननेसे सम्पूर्ण लोकोंके समस्त पापोंका क्षय हो जाता है, उस अनामय शिवतत्त्वका मैं तुमसे वर्णन करता हूँ। शिवतत्त्वका स्वरूप बड़ा ही उत्कृष्ट और अद्भुत है। जिस समय समस्त चराचर जगत् नष्ट हो गया था, सर्वत्र केवल अन्धकार-ही-अन्धकार था। न सूर्य दिखायी देते थे न चन्द्रमा। अन्यान्य ग्रहों और नक्षत्रोंका भी पता नहीं था। न दिन होता था न रात; अग्नि, पृथ्वी, वायु और जलकी भी सत्ता नहीं थी। प्रधान तत्त्व (अव्याकृत प्रकृति)-से रहित सूना आकाशमात्र शेष था, दूसरे किसी तेजकी उपलब्धि नहीं होती थी। अदृष्ट आदिका भी अस्तित्व नहीं था। शब्द और स्पर्श भी साथ छोड़ चुके थे। गन्ध और रूपकी भी अभिव्यक्ति नहीं होती थी। रसका भी अभाव हो गया था। दिशाओंका भी भान नहीं होता था। इस प्रकार सब ओर निरन्तर सूचीभेद्य घोर अन्धकार फैला हुआ था। उस समय 'तत्सद्ब्रह्म' इस श्रुतिमें जो 'सत्' सुना जाता है, एकमात्र वही शेष था। जब 'यह', 'वह', 'ऐसा', 'जो' इत्यादि रूपसे निर्दिष्ट होनेवाला भावाभावात्मक जगत् नहीं था, उस समय एकमात्र वह 'सत्' ही शेष था, जिसे योगीजन अपने हृदयाकाशके

भीतर निरन्तर देखते हैं। वह सत्तत्त्व मनका विषय नहीं है। वाणीकी भी वहाँतक कभी

पहुँच नहीं होती। वह नाम तथा रूप-रंगसे भी शून्य है। वह न स्थूल है न कृश, न ह्रस्व है न दीर्घ तथा न लघु है न गुरु। उसमें न कभी वृद्धि होती है न ह्रास। श्रुति भी उसके विषयमें चकितभावसे 'है' इतना ही कहती है, अर्थात् उसकी सत्तामात्रका ही निरूपण कर पाती है, उसका कोई विशेष विवरण देनेमें असमर्थ हो जाती है। वह सत्य, ज्ञानस्वरूप, अनन्त, परमानन्दमय, परम ज्योतिःस्वरूप, अप्रमेय, आधाररहित, निर्विकार, निराकार, निर्गुण, योगिगम्य, सर्वव्यापी, सबका एकमात्र कारण, निर्विकल्प, निरारम्भ, मायाशून्य, उपद्रव-रहित, अद्वितीय, अनादि, अनन्त, संकोच-विकाससे शून्य तथा चिन्मय है।

जिस परब्रह्मके विषयमें ज्ञान और अज्ञानसे पूर्ण उक्तियोंद्वारा इस प्रकार (ऊपर बताये अनुसार) विकल्प किये जाते हैं; उसने कुछ कालके बाद (सृष्टिका समय आनेपर) द्वितीयकी इच्छा प्रकट की— उसके भीतर एकसे अनेक होनेका संकल्प उदित हुआ। तब उस निराकार परमात्माने अपनी लीलाशक्तिसे अपने लिये मूर्ति (आकार-की कल्पना की। वह मूर्ति सम्पूर्ण ऐश्वर्य-गुणोंसे सम्पन्न, सर्वज्ञानमयी, शुभ-स्वरूपा, सर्वव्यापिनी, सर्वरूपा, सर्वदर्शिनी, सर्वकारिणी, सबकी एकमात्र वन्दनीया, सर्वाद्या, सब कुछ देनेवाली और सम्पूर्ण संस्कृतियोंका केन्द्र थी। उस शुद्धरूपिणी ईश्वर-मूर्तिकी कल्पना करके वह अद्वितीय, अनादि, अनन्त, सर्वप्रकाशक, चिन्मय, सर्वव्यापी और अविनाशी परब्रह्म अन्तर्हित हो गया। जो मूर्तिरहित परम ब्रह्म है, उसीकी मूर्ति (चिन्मय आकार) भगवान् सदाशिव हैं। अर्वाचीन और प्राचीन विद्वान् उन्हींको ईश्वर कहते हैं। उस समय एकाकी रहकर स्वेच्छानुसार विहार करनेवाले उन सदाशिवने अपने विग्रहसे स्वयं ही एक स्वरूपभूता शक्तिकी सृष्टि की, जो उनके अपने श्रीअंगसे कभी अलग होनेवाली नहीं थी। उस पराशक्तिको प्रधान, प्रकृति, गुणवती, माया, बुद्धितत्त्वकी जननी तथा विकाररहित बताया गया है। वह शक्ति अम्बिका कही गयी है। उसीको प्रकृति, सर्वेश्वरी, त्रिदेवजननी, नित्या और मूलकारण भी कहते हैं। सदाशिवद्वारा प्रकट की गयी उस शक्तिके आठ भुजाएँ हैं। उस शुभलक्षणा देवीके मुखकी शोभा विचित्र है। वह अकेली ही अपने मुखमण्डलमें सदा एक सहस्र चन्द्रमाओंकी कान्ति धारण करती है। नाना प्रकारके आभूषण उसके श्रीअंगोंकी शोभा बढ़ाते हैं। वह देवी नाना प्रकारकी गतियोंसे सम्पन्न है और अनेक प्रकारके अस्त्र-शस्त्र धारण करती है। उसके खुले हुए नेत्र खिले हुए कमलके समान जान पड़ते हैं। वह अचिन्त्य तेजसे जगमगाती है। वह सबकी योनि है और सदा उद्यमशील रहती है। एकाकिनी होनेपर भी वह माया संयोगवशात् अनेक हो जाती है।

वे जो सदाशिव हैं, उन्हें परमपुरुष, ईश्वर, शिव, शम्भु और महेश्वर कहते हैं। वे अपने मस्तकपर आकाश-गंगाको धारण करते हैं। उनके भालदेशमें चन्द्रमा शोभा पाते हैं। उनके पाँच मुख हैं और प्रत्येक मुखमें तीन-तीन नेत्र हैं। उनका चित्त सदा प्रसन्न रहता है। वे दस भुजाओंसे युक्त और त्रिशूलधारी हैं। उनके श्रीअंगोंकी प्रभा

कर्पूरके समान श्वेत-गौर है। वे अपने सारे अंगोंमें भस्म रमाये रहते हैं। उन कालरूपी ब्रह्मने एक ही समय शक्तिके नाथ 'शिवलोक' नामक क्षेत्रका निर्माण किया था। उस उत्तम क्षेत्रको ही काशी कहते हैं। वह परम निर्वाण या मोक्षका स्थान है, जो सबके ऊपर विराजमान है। वे प्रिया-प्रियतमरूप शक्ति और शिव, जो परमानन्दस्वरूप हैं, उस मनोरम क्षेत्रमें नित्य निवास करते हैं। काशीपुरी परमानन्दरूपिणी है। मुने! शिव और शिवाने प्रलयकालमें भी कभी उस क्षेत्रको अपने सांनिध्यसे मुक्त नहीं किया है। इसलिये विद्वान् पुरुष उसे 'अविमुक्त क्षेत्र' के नामसे भी जानते हैं। वह क्षेत्र आनन्दका हेतु है। इसलिये पिनाकधारी शिवने पहले उसका नाम 'आनन्दवन' रखा था। उसके बाद वह 'अविमुक्त' के नामसे प्रसिद्ध हुआ।

देवर्षे! एक समय उस आनन्दवनमें रमण करते हुए शिवा और शिवके मनमें यह इच्छा हुई कि किसी दूसरे पुरुषकी भी सृष्टि करनी चाहिये, जिसपर यह सृष्टि-संचालनका महान् भार रखकर हम दोनों केवल काशीमें रहकर इच्छानुसार विचरें और निर्वाण धारण करें। वही पुरुष हमारे अनुग्रहसे सदा सबकी सृष्टि करे, पालन करे और वही अन्तमें सबका संहार भी करे। यह चित्त एक समुद्रके समान है। इसमें चिन्ताकी उत्ताल तरंगें उठ-उठकर इसे चंचल बनाये हुए हैं। इस विशाल चित्त-समुद्रको संकुचित करके हम दोनों उस पुरुषके प्रसादसे आनन्दकानन (काशी)-में सुख-पूर्वक निवास करें। यह आनन्दवन वह

स्थान है, जहाँ हमारी मनोवृत्ति सब ओरसे सिमिटकर इसीमें लगी हुई है तथा जिसके बाहरका जगत् चिन्तासे आतुर प्रतीत होता है। ऐसा निश्चय करके शक्तिसहित सर्वव्यापी परमेश्वर शिवने अपने वामभागके दसवें अंगपर अमृत मल दिया। फिर तो वहाँसे एक पुरुष प्रकट हुआ, जो तीनों लोकोंमें सबसे अधिक सुन्दर था। वह शान्त था। उसमें सत्त्वगुणकी अधिकता थी तथा वह गम्भीरताका अथाह सागर था। मने! क्षमा

शिवने कहा—वत्स! व्यापक होनेके कारण तुम्हारा विष्णु नाम विख्यात हुआ।

(अध्याय ६)

रुद्रसंहिता १२३

भगवान् विष्णुकी नाभिसे कमलका प्रादुर्भाव, शिवेच्छावश ब्रह्माजीका उससे प्रकट होना, कमलनालके उद्गमका पता लगानेमें असमर्थ ब्रह्माका तप करना, श्रीहरिका उन्हें दर्शन देना, विवादग्रस्त ब्रह्मा-विष्णुके बीचमें अग्नि-स्तम्भका प्रकट होना तथा उसके ओर-छोरका पता न पाकर उन दोनोंका उसे प्रणाम करना

ब्रह्माजी कहते हैं—देवर्षे! तत्पश्चात् कल्याणकारी परमेश्वर साम्ब सदाशिवने पूर्ववत् प्रयत्न करके मुझे अपने दाहिने अंगसे उत्पन्न किया। मुने! उन महेश्वरने मुझे तुरंत ही अपनी मायासे मोहित करके नारायणदेवके नाभिकमलमें डाल दिया और लीलापूर्वक मुझे वहाँसे प्रकट किया। इस प्रकार उस कमलसे पुत्रके रूपमें मुझ हिरण्यगर्भका जन्म हुआ।

१३० *संक्षिप्त शिवपुराण*

इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रुद्र—इन तीन देवताओंमें गुण हैं, परंतु शिव गुणातीत माने गये हैं। (अध्याय ९)

❖ श्री शकंर जी भी शिव (काल ब्रह्म) तथा शिवा (देवी दुर्गा) का पुत्र है :- श्री शिव महापुराण के विद्येश्वर संहिता के प्रथम खण्ड अध्याय 6 से 10 में प्रमाण :- एक समय श्री ब्रह्मा जी तथा श्री विष्णु जी का इस बात पर युद्ध हो गया कि ब्रह्मा जी ने कहा मैं तेरा पिता हूँ क्योंकि यह संसार मेरे से उत्पन्न हुआ है, मैं प्रजापिता हूँ। विष्णु जी ने कहा कि मैं तेरा पिता हूँ, तू मेरे नाभि कमल से उत्पन्न हुआ है। दोनों एक-दूसरे को मारने के लिए तत्पर हो गए। उसी समय सदाशिव अर्थात् काल ब्रह्म ने उन दोनों के बीच में एक सफेद रंग का प्रकाशमय स्तंभ खड़ा कर दिया। उसके पश्चात् अपने पुत्र तमगुण शिव के रूप में प्रकट होकर उस स्तंभ को अपने लिंग (Private Part) का आकार दे दिया। उसी दिन से शिव जी का लिंग विख्यात हुआ। लिंग पूजा आरंभ हुई।(पाँचवें अध्याय के श्लोक 26-31 में) उस काल ब्रह्म ने स्वयं शंकर के रूप में प्रकट होकर उनको बताया कि तुम दोनों में से कोई भी कर्ता नहीं है। तुमने (ब्रह्मा व विष्णु ने) जो अज्ञानता से अपने आपको ''ईश'' माना यानि अपने को जगत का कर्ता माना, यह बड़ा ही अद्भुत हुआ। उसी (भ्रम) को दूर करने के लिए मैं रणस्थल पर आया हूँ। अब तुम दोनों अपना अभिमान त्यागकर मुझ ईश्वर में अपनी बुद्धि लगाओ।

हे पुत्रो! मैंने तुमको तुम्हारे तप के प्रतिफल में जगत की उत्पत्ति और स्थिति रूपी दो कार्य दिए हैं, इसी प्रकार मैंने शंकर और रूद्र को दो कार्य संहार व तिरोगति दिए हैं, मुझे वेदों में ब्रह्म कहा है। मेरे पाँच मुख हैं, एक मुख से अकार (अ), दूसरे मुख से उकार (उ) तथा तीसरे मुख से मकार (म), चौथे मुख से बिन्दु (.) तथा पाँचवे मुख से नाद (शब्द) प्रकट हुए हैं, उन्हीं पाँच अवयवों से एकीभूत होकर एक अक्षर ओम् (ॐ) बना है, यह मेरा मूल मन्त्र है।

शिव पुराण के इस उल्लेख से यह भी सिद्ध हुआ कि मेरे को ब्रह्म कहते हैं। पाँच अक्षरों से बना एक ओम् (ॐ) मेरा मूल मंत्र (नाम) है जो मेरी साधना है। गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में भी इसी ब्रह्म ने कहा है कि (माम् ब्रह्म) मुझ ब्रह्म का स्मरण करने का एक ॐ (ओम्) अक्षर है। इससे भी स्वसिद्ध है कि गीता का ज्ञान काल रूप ब्रह्म ने श्री कृष्ण के शरीर में प्रेतवत् प्रवेश करके बोला है।

लिंग व लिंगी की पूजा करने को कहना :- काल ब्रह्म ने अपने लिंग (Private Part) तथा स्त्री की लिंगी (Private Part) की पूजा करने को कहा है। जो मंदिरों में शिवलिंग स्थापित किया होता है, उसको ध्यान से देखा जाए तो पता चलता है कि पत्थर की लिंगी (स्त्री की योनि) में पत्थर का लिंग यानि शिव का लिंग (पेशाब इन्द्री) प्रविष्ट किया गया होता है। श्री शिव पुराण के विद्येश्वर संहिता के खण्ड-1 अध्याय 5 श्लोक 26-31 तथा अध्याय 9 श्लोक 40-46 में प्रमाण है। इनकी फोटोकॉपी आगे लगाई हैं, वहाँ पर पढ़ें। विचार करें कि यह कितनी बेशर्मी की बात है। कितना अभद्र मजाक काल ब्रह्म ने किया। ब्रह्मा तथा विष्णु से कहा कि तुम इस मेरे लिंग व लिंगी (स्त्री योनि) की पूजा करो।

पेश है (श्री वैंकटेश्वर प्रेस मुम्बई से प्रकाशित, संस्कृत-हिन्दी अनुवाद वाली) शिव महापुराण के विद्येश्वर संहिता खंड के अध्याय 5, 6, 7, 8, 9 तथा 10 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

शि०पु० ॥११॥

हे योगीन्द्र ! मैं उस लिंगाविर्भावका लक्षण सुना चाहता हूं ॥ नन्दिकेश्वर बोले हे वत्स ! सुनो मैं तुम्हारी प्रीतिसे कहता हूं ॥ २६ ॥ पूर्वकालमें जो पहला कल्प था जो लोकमें विख्यात है उस समय महात्मा ब्रह्मा और विष्णुका परस्पर युद्ध हुआ था ॥ २७ ॥ उनके मान दूर करनेको उनके बीचमें उन निष्कल परमात्माने स्तम्भरूप अपना स्वरूप दिखाया ॥ २८ ॥ तब जगत्के हितकी इच्छासे निर्गुण शिवने उस तेजोमयस्तंभसे अपने लिंगाकारका स्वरूप दिखाया ॥ २९ ॥ उसीदिनसे लोकमें वह निष्कल शिवजीका लिंग विख्यात हुआ, और

श्रोतुमिच्छामियोगींद्रलिंगाविर्भावलक्षणम् ॥ नंदिकेश्वरउवाच ॥ शृणुवत्सभवत्प्रीत्यावक्ष्यामिपरमार्थतः ॥२६॥ पुराकल्पेमहाकाले प्रपन्नेलोकविश्रुते ॥ आयुध्येतांमहात्मानौब्रह्मविष्णूपरस्परम् ॥२७॥ तयोर्मानंनिराकर्तुंतन्मध्येपरमेश्वरः ॥ निष्कलस्तंभरूपेणस्वरूपंसमदर्शयत् ॥२८॥ ततःस्वलिंगचिह्नत्वात्स्तंभतोनिष्कलंशिवः ॥ स्वलिंगंदर्शयामासजगतांहितकाम्यया ॥२९॥ तदाप्रभृतिलोकेषुनिष्कलंलिंगमैश्वरम्॥सकलंचतथाबेरंशिवस्यैवप्रकल्पितम् ॥३०॥ शिवान्येषःतुदेवानांबेरमात्रंप्रकल्पितम् ॥ तत्तद्बेरंतुदेवानांतत्तद्भोगप्रदंशुभम् ॥ शिवस्यलिंगबेरत्वभोगमोक्षप्रदंशुभम् ॥३१॥ इतिश्रीशिवमहापुराणेविद्येश्वरसंहितायांपंचमोऽध्यायः ॥५॥ नंदिकेश्वरउवाच ॥ पुराकदाचिद्योगींद्रविष्णुर्विषधरासनः ॥ सुष्वापपरयाभूत्यास्वानुगैरपिसंवृतः ॥१॥ यदृच्छयागतस्तत्रब्रह्माब्रह्मविदांवरः ॥ अपृच्छत्पुंडरीकाक्षंशयनंसर्वसुन्दरम् ॥ २ ॥

वि०सं०१ अ० ६

सगुणरूपमें बेररूप की कल्पना की गई ॥ ३० ॥ देवताओंकी वह बेर पूजा इच्छानुसार भोगोंको देनेहारी है परन्तु शिवका लिंगबेर भोग और मोक्ष दोनोंका देनेहारा है ॥ ३१ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहिताभाषायां पंचमोध्यायः ॥ ५ ॥ नन्दिकेश्वर बोले हे योगींद्र ! आगे एक समय विष्णु भगवान् शेषशय्यापर अपने गरुड़ादि पार्षदोंसे संयुक्त लक्ष्मीसहित शयन करते थे ॥ १ ॥ उस समय ब्रह्मज्ञानियोंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजी अपनी इच्छासेही वहाँ आये सब प्रकार सुन्दर सेजपर शयन करते हुए कमललोचन विष्णुजीसे पूछने लगे ॥ २ ॥

तुम कौन हो जो मुझे देखकर अभिमानी पुरुषके समान शयन करते हो. हे वत्स ! उठो देखो मैं तुम्हारा स्वामी आया हूँ ॥ ३ ॥ आये हुए गुरुको देखकर जो अभिमान करता है उस द्रोही मूढका प्रायश्चित्त होना उचित है ॥ ४ ॥ यह सुनकर विष्णुजीके अंतरमें तो क्रोध हुआ परंतु बाहरसे शांत रहे, और बोले हे वत्स ! तुम्हारा मंगल हो बैठो इस आसनपर विराजो ॥ ५ ॥ इस समय तुम्हारा नेत्र कुटिल और मुख वक्र क्यों होरहा है ? ब्रह्माजी बोले हे वत्स विष्णु ! तुमको समयके प्रभावसे अभिमान है ॥ ६ ॥ हे पुत्र ! मैं तुम्हारा रक्षक और जगत्का पितामह हूँ विष्णुजी बोले यह तो सब जगत् मुझमें स्थित है तुम चोरके समान किस प्रकार अपना कहते हो ॥७॥ तुम मेरी नाभिकमलसे उत्पन्न

कस्त्वंपुरुषवच्छेषेदृष्ट्वामामपिदृप्तवत्॥उत्तिष्ठवत्समांपश्यतवनाथमिहागतम् ॥३॥ आगतंगुरुमाराध्यंदृष्ट्वायोदृप्तवच्चरेत्॥द्रोहिणस्तस्यमूढस्यप्रायश्चित्तंविधीयते ॥ ४ ॥ इतिश्रुत्वावचःक्रुद्धोबहिःशांतवदाचरत्॥स्वस्तितेस्वागतंवत्सतिष्ठपीठमितोविश ॥५॥ किमुतेऽव्यग्रवद्वक्त्रंविभातिविषमेक्षणम् ॥ ब्रह्मोवाच ॥ वत्सविष्णोमहामानमागतंकालवेगतः ॥६॥ पितामहश्चजगतःपाताचतववत्सक॥विष्णुरुवाच ॥ मत्स्थंजगदिदंवत्समनुषेत्वंहिचोरवत्॥७॥मन्नाभिकमलाज्जातःपुत्रस्त्वंभाषसेवृथा॥ नंदिकेश्वरउवाच॥ एवंहिवदतोस्तत्रमुग्धयोरजयोस्तदा ॥८॥ अहमेववरोनत्वमहंप्रभुरहंप्रभुः॥परस्परंहंतुकामौचक्रतुःसमरोद्यमम् ॥९॥ युयुधातेऽमरौवीरौहंसपक्षींद्रवाहनौ ॥ वैरंच्यावैष्णवाश्चैवंमिथोयुयुधिरेतदा॥१०॥तावद्विमानगतयःसर्वावैदेवजातयः॥दिदृक्षवःसमाजग्मुःसमरंतंमहाद्भुतम् ॥११॥ क्षिपंतःपुष्पवर्षाणिपश्यंतःस्वैरमंबरे ॥ सुपर्णवाहनस्तत्र क्रुद्धोवैब्रह्मवक्षसि ॥ १२ ॥

हुए हो इससे मेरे पुत्र हो मुझे पुत्र कहना वृथा है. नंदिकेश्वर बोले इस प्रकार ब्रह्मा विष्णु दोनों ही रजोगुणसे मुग्ध होकर विवाद करने लगे ॥ ८ ॥ मैं श्रेष्ठ हूँ मैं स्वामी हूँ ऐसा कहकर एक दूसरेको मारनेकी इच्छासे युद्ध करनेमें उत्सुक हुए ॥ ९ ॥ और हंस और गरुड़ वाहनपर स्थित हो यह दोनों देव युद्ध करने लगे तब ब्रह्मा और विष्णुके वाहन गण भी युद्ध करने लगे ॥ १० ॥ तब सम्पूर्ण देवता विमानोंमें बैठकर उस महाअद्भुत युद्ध देखनेको चले आये॥११॥और आकाशमें उनके ऊपर फूल बर्षाने लगे । तब विष्णुजीने क्रोधकर ब्रह्माजीकी छातीमें॥१२॥

शि०पु० ॥१३॥ हे कुमार ! इस प्रकार मधुरवाणीसे पार्वतीपति शंकरने उन सब देवताओंको सन्तुष्ट किया ॥३॥ तब शिवने अपने सौ गणोंको उस समरस्थानमें जानेकी आज्ञा दी जहां ब्रह्मा और विष्णु थे ॥ ४ ॥ तब शंकरके पयानसमयमें अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे अनेक प्रकारके वाहनोंपर चढ विविध भूषण पहरे गणेश्वर चलनेको उद्यत हुए ॥ ५ ॥ प्रणवके समान आकारसे सर्वत्र व्याप्त पंचमंडलसे मंडित भद्ररथमें अम्बिकापति गिरीश चढे और पुत्र तथा गण भी संग हुए उस समय इन्द्रादि देवता उनके पीछे चलने लगे ॥ ६ ॥ सुन्दर ध्वजाव्यजन चमर पुष्प वर्षा संगीत नृत्य बाजोंसे सम्मानित हो शिवजी पार्वती सहित ब्रह्मा विष्णुके निकट समरभूमिमें सेनासहित गये ॥७॥ जाकर मेघोंके मध्यमें छिपकर

इतिसस्मितयामाध्व्याकुमारपरिभाषया॥समतोषयदंबायाःसपतिस्तत्सुरव्रजम्॥३॥अथयुद्धांगणंगंतुंहरिधात्रोरधीश्वरः॥आज्ञाप यद्गणेशानांशतंतत्रैवसंसदि॥४॥ततोवाद्यंबहुविधंप्रयाणायपरेशितुः॥गणेश्वराश्चसंनद्धानानावाहनभूषणाः ॥५॥ प्रणवाकारमाद्यं तंपंचमंडलमंडितम् ॥ आरुरोहरथंभद्रमंबिकापतिरीश्वरः ॥ ससूनुगणमिंद्राद्याःसर्वेप्यनुययुःसुराः ॥६॥चित्रध्वजव्यजनचामर पुष्प वर्षसंगतिनृत्यनिवहैरपिवाद्यवर्गैः संमानितः पशुपतिःपरयाचदेव्यासाकंतयोःसमरभूमिमगात्ससैन्यः॥७॥ समीक्ष्यंतुतयो र्युद्धंनिगूढांऽभ्रंसमास्थितः॥समाप्तवाद्यनिर्घोषःशांतोरुगणनिःस्वनः ॥८॥अथब्रह्माच्युतौवीरौहंतुकामौपरस्परम्॥माहेश्वरेणचाऽ स्त्रेणतथापाशुपतेनच॥९॥अस्त्रज्वालैरथोदग्धंब्रह्मविष्णवोर्जगत्त्रयम्॥ईशोपितंनिरीक्ष्याथह्यकालप्रलयंभृशम्॥१०॥महानलस्तंभ विभीषणाकृतिर्बभूवतन्मध्यतलेसनिष्कलः॥११॥तेअस्त्रेचापिसज्वालेलोकसंहरणक्षमे॥निपेततुःक्षणेनैवह्याविर्भूतेमहानले॥१२॥

वि०सं०१ अ० ७ उनका निरन्तर होनेवाला युद्ध देखा, उस समय बाजोंकी ध्वनि नहीं होती थी और बड़ा गणोंका भी शब्द शान्त होगया था ॥ ८ ॥ उस समय ब्रह्मा और विष्णु परस्पर एक दूसरेको मारनेकी इच्छासे माहेश्वर और पाशुपतास्त्रसे ॥ ९ ॥ तथा अस्त्रोंकी ज्वालासे मानों त्रिलोकी भस्म करने लगे तब शिवजीने वह अकाल प्रलय देखकर ॥ १० ॥ महाअग्निके स्तम्भके समान महाभयंकर आकृतिके समान उन दोनोंके बीचमें वह निर्गुण ब्रह्म स्थित हुए ॥११॥ वह लोक क्षय करनेमें समर्थ अस्त्र उस महाअग्निके प्रगट होतेही क्षणमात्रमें निपतित हो गये ॥१२॥

यह अस्त्र शांत होनेका अद्भुत चित्र देख यह अद्भुत आकार क्या है ऐसा ब्रह्मा और विष्णु परस्पर कहने लगे ॥ १३ ॥ यह इंद्रिय अगोचर स्तम्भ अग्निरूपसा क्या उठा है हम दोनोंको इसका ऊपर और नीचेका भाग देखना चाहिये कि यह कहांसे हुआ है ॥ १४ ॥ इस प्रकार कह वह दोनों वीर मानी परस्पर मिलकर उसकी परीक्षा करनेको बहुत शीघ्रतासे गये ॥ १५ ॥ हम दोनोंके मिलनेसे यह कार्य नहीं होगा ऐसा कहकर विष्णु शूकर शरीर धारण कर उसके मूल भाग देखनेको नीचे चले गये ॥ १६ ॥ और ब्रह्माजी हंसका रूप धार उसके ऊपरका

दृष्ट्वा तदद्भुतं चित्रमस्त्रशांतिकरं शुभम्॥किमेतदद्भुताकारमित्यूचुश्चपरस्परम्॥१३॥ अतींद्रियमिदंस्तंभमग्निरूपंकिमुत्थितम् ॥ अस्योर्ध्वमपिचाधश्चआवयोर्लक्ष्यमेव हि॥१४॥इतिव्यवसितौवीरौमिलितौवीरमानिनौ ॥तत्परौतत्परीक्षार्थंप्रतस्थातेऽथसत्वरम् ॥१५॥ आवयोर्मिश्रयोस्तत्रकार्यमेकंनसंभवेत् ॥ इत्युक्त्वासूकरतनुर्विष्णुस्तस्यादिमीयिवान् ॥१६॥ तथाब्रह्माहंसतनुस्तदंतंवी क्षितुंययौ ॥ भित्त्वापातालनिलयंगत्वादूरतरंहरिः ॥१७॥ नाऽपश्यत्तस्यसंस्थानंस्तंभस्यानलवर्चसः॥श्रांतःससूकरहरिःप्रापपूर्व रणांगणम् ॥१८॥ अथगच्छंस्तुव्योम्नाचविधिस्तातपितातव ॥ ददर्शकेतकीपुष्पंकिंचिद्विच्युतमद्भुतम् ॥१९॥ अतिसौरभ्यम म्लानंबहुवर्षच्युतं तथा ॥ अन्वीक्ष्य च तयोः कृत्यं भगवान्परमेश्वरः ॥ २० ॥

भाग देखनेको गये हरि पाताल स्थानको भेदकर दूरतक चले गये ॥ १७ ॥ परन्तु उस अग्निके समान प्रज्वलित स्तम्भका पार नहीं पाया और शांत होकर हरि उस युद्ध स्थानमें चले आये ॥ १८ ॥ और ब्रह्माजी आकाशमार्गमें चले गये उन्होंके वहां केतकीका किंचित् च्युत होना अद्भुत पुष्प देखा ॥ १९ ॥ यद्यपि वो बहुत वर्षोंसे टूटा था परन्तु उसमें बडी सुगन्ध थी और मलीन न था ब्रह्मा और विष्णुके कृत्यको देखकर भगवान् परमेश्वरने ॥ २० ॥

शि०पु० स्तम्भ है सो जगत्के दर्शन और पूजनके निमित्त अणुमात्र बहुतछोटा)होजायगा ॥१९॥ यह लिंग भुक्ति और मुक्तिका साधक होगा, इसके दर्शन
॥१७॥ स्पर्शन और ध्यानसेही प्राणियोंके जन्म मरण छूट जायँगे॥२०॥जो अग्निपर्वतके समान प्रादुर्भूत हुआ है सो यह अरुणाचल नामसे जगत्में विख्यात होगा ॥२१॥ यहां बड़ा भरी तीर्थ होगा यहां प्राणियोंके निवास करने या तनु त्यागनेसे मुक्ति हो जायगी ॥२२॥ रथयात्रा उत्सव कल्याण और जनोंके निवास योग्य यह स्थान होगा. यहां किया हुआ जप तप हवन करोड़ गुणा होजायगा ॥२३॥ हमारे सब क्षेत्रोंसे यह श्रेष्ठ होगा, यहां मेरा स्मरण करतेही प्राणी मुक्त हो जाँयगे ॥२४॥ इस कारण यह क्षेत्र महान् और अत्यन्त शोभित होगा सब प्रकारके कल्याणदायक और सब

भोगावहमिदंलिंगंभुक्तिमुक्त्येकसाधनम् ॥ दर्शनस्पर्शनध्यानाज्जंतूनांजन्ममोचनम् ॥२०॥ अनलाचलसंकाशंयदिदंलिंगमुत्थितम् ॥ अरुणाचलमित्येवतदिदंख्यातिमेष्यति ॥२१॥ अत्रतीर्थंचबहुधाभविष्यतिमहत्तरम्॥ मुक्तिरप्यत्रजंतूनःवासेनमरणेनच ॥२२॥रथोत्सवादिकल्याणंजनावासंतुसर्वतः॥अत्रदत्तंहुतंजप्तंसर्वंकोटिगुणंभवेत्॥२३॥मत्क्षेत्रादपिसर्वस्मात्क्षेत्रमेतन्महत्तरम्॥ अत्रसंस्मृतिमात्रेणमुक्तिर्भवतिदेहिनाम्॥२४॥तस्मान्महत्तरमिदंक्षेत्रमत्यंतशोभनम्॥सर्वकल्याणसंपूर्णसर्वमुक्तिकरंशुभम्॥२५॥ अर्चयित्वाऽत्रमामेवलिंगेलिंगिनमीश्वरम्॥सालोक्यंचैवसामीप्यंसारूप्यंसार्ष्टिरेवच ॥२६॥ सायुज्यमितिपंचैतेक्रियादीनांफलं मतम् ॥ सर्वेपियूयंसकलंप्राप्स्यथाशुमनोरथम्॥२७॥नंदिकेश्वर उवाच ॥ इत्यनुगृह्यभगवान्विनीतौविधिमाधवौ॥ यत्पूर्वंप्रहतं युद्धेतयोःसैन्यंपरस्परम् ॥२८॥ तदुत्थापयदत्यर्थंस्वशक्त्याऽमृतधारया ॥ तयोमाढ्यंचवैरंचव्यपनेतुमुवाचतौ ॥ २९ ॥

वि०सं०१ प्रकार मुक्तिदायक होगा ॥२५॥ जो यहां लिंगमें मुझ लिंगेश्वरकी पूजा करेंगे उन्हें सालोक्य सामीप्य सारूप्य सार्ष्टि ॥ २६ ॥ सायुज्य यह
अ० ९ पांचों मुक्ति क्रियाके फलको प्राप्त होजाँयगी और यहां पूजन करनेसे तुमभी सब मनोरथोंको प्राप्त होंगे ॥२७॥ नंदिकेश्वर बोले इस प्रकार भगवानने उन नम्र हुए ब्रह्मा और विष्णुपर अनुग्रह करके उनके युद्धमें जो परस्पर उनकी सेना मारी गईथी॥२८॥ उस सबको अपनी शक्तिसे जिवाकर उठाया जिस शक्तिमें अमृतकी धारा रहती है और उन दोनोंकी अज्ञानता और वैरको दूर करनेके अर्थ दोनोंसे कहा ॥ २९ ॥

मेरे सकल और निष्कल भेदसे दोस्वरूप हैं परन्तु और ईश्वर नहीं इस कारण उनके दो रूप नहीं हो सकते ॥३०॥ पहला स्तम्भरूप और पीछे मूर्तिमान् रूप धारण किया इसमें ब्रह्मरूप निष्फल है और ईशरूप सगुण है ॥ ३१ ॥ मेरे यह दोनों रूप सिद्ध हैं दूसरे किसीके नहीं हो सकते. इस कारण तुम दोनोंको अथवा दूसरोंको ईश्वरत्वकी प्राप्ति नहीं हो सकती॥३२॥तुमने जो अज्ञानसे अपनेको ईश माना यह बडा अद्भुत हुआ उसके दूर करनेकोही मैं रणस्थानमें आया ॥ ३३ ॥ अब तुम अपना अभिमान त्यागकर मुझ ईश्वरमें अपनी बुद्धि लगाओ मेरे प्रसादसे लोकमें सब अर्थ प्रकाश करते हैं ॥ ३४ ॥ मुझ गुरुके वचनही तुमको वारंवार प्रमाण हैं, तुम्हारी प्रीतिसेही यह गूढ ब्रह्मत्व मैं तुमसे

सकलंनिष्कलंचेतिस्वरूपद्वयमस्तिमे ॥ नान्यस्यकस्यचित्तस्मादन्यःसर्वोप्यनीश्वरः ॥३०॥ पुरस्तात्स्तंभरूपेणपश्चाद्रूपेणचार्भकौ ॥ ब्रह्मत्वंनिष्कलंप्रोक्तमीशत्वंसकलंतथा ॥३१॥ द्वयंममैवसंसिद्धंनमदन्यस्यकस्यचित् ॥ तस्मादीशत्वमन्येषांयुवयोरपिनक्वचित् ॥३२॥ तदज्ञानेनवांवृत्तमीशमानंमहाद्भुतम्॥तन्निराकर्तुमत्रैवमुत्थितोऽहंरणक्षितौ॥३३॥ त्यजतंमानमात्मीयंमयीशे कुरुतंमतिम् ॥ मत्प्रसादेनलोकेषुसर्वोप्यर्थःप्रकाशते ॥३४॥ गुरूक्तिर्व्यंजकंतत्रप्रमाणंवापुनःपुनः॥ ब्रह्मतत्त्वमिदंगूढंभवत्प्रीत्या भणाम्यहम् ॥ ३५ ॥ अहमेवपरंब्रह्ममत्स्वरूपंकलाकलम् ॥ब्रह्मत्वादीश्वरश्चाहंकृत्यंमेनुग्रहादिकम् ॥३६॥ बृहत्त्वाद्बृंहणत्वाच्च ब्रह्माहंब्रह्मकेशवौ ॥ समत्वाद्व्यापकत्वाच्चतथैवात्माहमर्भकौ ॥३७॥ अनात्मानःपरेसर्वेजीवाएवनसंशयः ॥ अनुग्रहाद्यंसर्गातंजगत्कृत्यंचपंकजम् ॥ ३८ ॥ ईशत्वादेवमेनित्यंनमदन्यस्यकस्यचित् ॥ आदौब्रह्मत्त्वबुद्ध्यर्थंनिष्कलंलिंगमुत्थितम् ॥ ३९ ॥

कहता हूं ॥ ३५ ॥ मैंही पर ब्रह्म हूं और मेराही कल अकलरूप है ब्रह्म होनेसे मैं ईश्वर हूं अनुग्रहादिकही मेरा कृत्य है ॥ ३६ ॥ सर्वव्यापी होनेसे और जगत्के वर्द्धक होनेसे मैं ब्रह्मा हूं, हे ब्रह्मकेशव ! समत्व और व्यापक होनेसे मैं आत्मा हूं ॥ ३७ ॥ और सम्पूर्ण जीव आत्मा नहीं हैं इसमें सन्देह नहीं, अनुग्रहसेही यह सर्गके अन्ततक जो जगत्का कृत्य और पंचक है ॥ ३८ ॥ मैं इस सबका ईश हूं यह मेरा है मेरे सिवाय किसी दूसरेका नहीं है. प्रथम तो ब्रह्मत्वज्ञानके निमित्त निष्कलब्रह्मका प्रादुर्भाव हुआ है ॥ ३९ ॥

शि०पु० संसारके आरंभका नाम सर्ग, उसकी वृद्धिका नाम स्थिति है, उसके नष्ट करनेका नाम संहार उद्धारका नाम उत्क्रम है ॥ ३ ॥ उस संसारसे
॥१८॥ मोक्ष करनेका अनुग्रह है सब यही मेरे पांच कृत्य हैं और पृथ्वी आदि इस मेरे कृत्यको गोपुरके बिंबके समान मौन होकर धारण करते हैं ॥ ४ ॥ यह सर्गादि चार कृत्य तो सृष्टिके कर्म्ममें प्रवेश करते हैं और पांचवाँ मुक्तिका कारण सदा मुझमेंही स्थित रहता है ॥५॥ सो यह पंचभूतोंमें मेरे जनोंद्वारा दीखता है. पृथ्वीमें सृष्टि जलमें स्थिति अग्निमें संहार ॥ ६ ॥ पवनमें तिरोभाव आकाशमें अनुग्रह है सब कुछ पृथ्वी उत्पन्न करती है जलसे सबकी वृद्धि होती है ॥ ७ ॥ तेजसे सब नष्ट होते वायुमें सब लय होते और आकाशद्वारा सबपर अनुग्रह होता है ऐसा

सर्गः संसारसंरंभस्तत्प्रतिष्ठास्थितिर्मता ॥ संहारोमर्दनंतस्यतिरोभावस्तदुत्क्रमः॥३॥तन्मोक्षोऽनुग्रहस्तन्मेकृत्यमेवंहिपंचकम् ॥ कृत्यमेतद्वहत्यन्यस्तूष्णींगोपुरबिंबवत्॥४॥सर्गादियच्चतुष्कृत्यंसंसारपरिजृंभणम् ॥ पंचमंमुक्तिहेतुर्वैनित्यं मयि च सुस्थिरम् ॥ ५ ॥ तदिदंपंचभूतेषुदृश्यतेमामकैर्जनैः ॥सृष्टिर्भूमौस्थितिस्तोयेसंहारः पावकेतथा ॥६॥तिरोभावोऽनिलेतद्वदनुग्रहइहाम्बरे ॥ सृज्यतेधरयासर्वमद्भिः ॥ सर्वंप्रवर्द्धते ॥७॥ अर्द्यतेतेजसासर्ववायुना चापनीयते ॥ व्योम्नानुगृह्यतेसर्वंज्ञेयमेवंहिसूरिभिः ॥ ८॥ पंचकृत्यमिदंवोढुंममास्तिमुखपंचकम् ॥ चतुर्दिक्षुचतुर्वक्त्रंतन्मध्येपंचमंमुखम् ॥९॥ युवाभ्यांतपसालब्धमेतत्कृत्यद्वयंसुतौ ॥ सृष्टिस्थित्यमिधंभाग्यंमत्तःप्रीतादतिप्रियम्॥ १० ॥ तथारुद्रमहेशाभ्यामन्यत्कृत्यद्वयंपरम् ॥ अनुग्रहाख्यंकेनापिलब्धुंनैवहि शक्यते ॥ ११ ॥ तत्सर्वंपौर्विकंकर्मयुवाभ्यांकालविस्मृतम् ॥ नतद्रुद्रमहेशाभ्यांविस्मृतंकर्मतादृशम् ॥ १२ ॥

वि०सं०१ प्राचीन कवियोंको जानना चाहिये ॥ ८ ॥ इसी पांच कृत्यके धारण करनेको मेरे पांच मुख हैं चार दिशाओंमें चार मध्यमें और पांचवाँ
अ० १० मुख है ॥ ९ ॥ हे पुत्रो ! यह कृत्य आपने तपसे प्राप्त किया है जोकि सृष्टिकी उत्पत्ति और पालन कहाता है सो मैंने प्रसन्न होकर तुम्हें दिया है ॥१०॥ इसी प्रकारसे दूसरे दो कृत्य रुद्र और महेशको प्रदान किये हैं परन्तु अनुग्रह कृत्य कोई भी पानेको समर्थ नहीं है ॥११॥ सो पूर्वके कर्म्म तुमने समयसे बिसार दिये रुद्र और महेशने उनको नहीं भुलाया है ॥ १२ ॥

शि०पु० ॥१८॥ इसीसे मैं अज्ञातस्वरूप हूं पीछे तुम्हें प्रगट दर्शन देनेके निमित्त साक्षात् ईश्वर तत्क्षणही मैं सगुणरूप हुआ हूं ॥ ४० ॥ मेरे ईशत्वरूपको सकलत्व जानो और यह निष्कलत्व स्तंभ ब्रह्मका बोधक है ॥ ४१ ॥ लिंगलक्षण होनेसे यह मेरा लिंगस्वरूप निर्गुण होगा इस कारण हे पुत्रो ! तुम नित्य इनकी अर्चना करना ॥ ४२ ॥ यह सदा मेरी आत्मारूप है और मेरी निकटताका कारण है लिंग और लिंगीके अभेदसे यह महत्व निन्य पूजनीय है ॥ ४३ ॥ जहां कहीं किसीने मेरे इस लिंगकी प्रतिष्ठा की है हे पुत्र ! वहां मैं अप्रतिष्ठित भी स्थित हूं ॥४४॥ एक लिंगके स्थापनसे मेरे समान रूपकी प्राप्ति यह फल होता है, और दूसरे लिंगके स्थापन करनेमें मेरी एकताकी प्राप्ति होती है ॥ ४५ ॥

तस्मादज्ञातमीशत्वंव्यक्तंद्योतयितुंहिवाम्॥सकलोहमतोजातःसाक्षादीशस्तुतत्क्षणात्४०सकलत्वमतोज्ञेयमीशत्वंमयिसत्वरम्॥ यदिदंनिष्कलंस्तंभंममब्रह्मत्वबोधकम्॥ ॥४१॥ लिंगलक्षणयुक्तत्वान्ममलिंगंभवेदिदम् ॥ तदिदंनित्यमभ्यर्च्यंयुवाभ्यामत्रपुत्रकौ ॥४२॥ मदात्मकमिदंनित्यंममसान्निध्यकारणम् ॥ महत्पूज्यमिदंनित्यमभेदाल्लिंगलिंगिनोः ॥४३॥यत्रप्रतिष्ठितंयेनमदीयंलिंगमीदृशम् ॥ तत्रप्रतिष्ठितःसोहमप्रतिष्ठोपिवत्सकौ ॥ ४४ ॥ मत्साम्यमेकलिंगस्यस्थापनेफलमीरितम् ॥ द्वितीयेस्थापितेलिंगेमदैक्यंफलमेवहि ॥४५॥ लिंगंप्राधान्यतःस्थाप्यंतथाबेरंतुगौणकम्॥लिंगाभावेनतत्क्षेत्रंसबेरमपिसर्वतः ॥४६॥ इति श्रीशिवमहापुराणेविद्येश्वरसंहितायांनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ब्रह्मविष्णूऊचतुः ॥ सर्गादिपंचकृत्यस्यलक्षणंब्रूहिनौप्रभो ॥ शिवउवाच॥ मत्कृत्यबोधनंगुह्यंकृपयाप्रब्रवीमिवाम् १सृष्टिःस्थितिश्चसंहारस्तिरोभावोऽप्यनुग्रहः॥ पंचैवमेजगत्कृत्यंनित्यसिद्धमजाच्युतौ२॥

वि०सं०१ अ० १० वह लिंग प्रधान है और बेरलिंग गौण है लिंगके अभावसे बेर सहित भी वह स्थान क्षेत्र नहीं होता है ॥ ४६ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहिता भाषाटीकायां नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ब्रह्मा और विष्णु बोले हे प्रभो ! आप हमसे सर्गादि पंचकृत्यका लक्षण कहिये शिवजी बोले हमारा कृत्य और ज्ञान दुर्लभ है मैं कृपासे तुमको कहता हूं ॥ १ ॥ हे ब्रह्मा, विष्णु सृष्टि स्थिति संहार तिरोभाव अनुग्रह यह पांच हमारे जगत्के कृत्य नित्यसिद्ध हैं ॥ २ ॥

शि०पु० ॥१९॥ रूपवेश कृत्य आसन वाहन और आयुधादिमें हमारी साम्यता थी ॥ १३ ॥ हे सौम्य ! मेरे ज्ञानके विमुख होनेसे तुम्हें अज्ञानता आगई मेरा ज्ञान होनेसे ऐसा नहीं होता ज्ञान और रूप महेशके तुल्य होजाता है ॥ १४ ॥ इस कारण उस ज्ञानकी सिद्धिके निमित्त ॐकार नामक मंत्र जप करो यह अभिमानका दूर करनेवाला है ॥ १५ ॥ सोई निज मंत्र उपदेश करते हैं यह ॐकार मेरे मुखसे उत्पन्न होनेसे मेरेही रूपका बोधक हैं और महामंगल करनेवाला है॥१६॥यह वाचक है और मैं वाच्य हूं. यह मंत्र मेरा आत्मा है उसके स्मरणसे मेरास्मरण होता है ॥ १७ ॥ उत्तरकी ओरके मुखसे अकार' पश्चिमके मुखसे उकार, दक्षिणके मुखसे मकार, पूर्वके मुखसे बिन्दु ॥ १८ ॥ मध्यके मुखसे नाद

रूपेवेशेचकृत्येचवाहनेचासनेतथा ॥ आयुधादौचमत्साम्यमस्माभिस्तत्कृतेकृतम्॥ १३ ॥मद्ध्यानविरहाद्वत्सौमौढ्यंवामेवमागतम्मज्ज्ञानेसतिनैवंस्यान्मानंरूपेमहेशवत्॥ १४ ॥ तस्मान्मज्ज्ञानसिद्ध्यर्थंमंत्रमोंकारनामकम्॥ इतःपरंप्रजपतंमामकंमानभंजनम् ॥ ॥ १५ ॥ उपादिशं निजं मंत्रमोंकारमुरुमंगलम् ॥ ओंकारो मन्मुखाज्जज्ञे प्रथमं मत्प्रबोधकः ॥ १६ ॥ वाचकोऽयमहंवाच्योमंत्रोऽयंहिमदात्मकः ॥ तदनुस्मरणंनित्यंममानुस्मरणंभवेत् ॥ १७॥ अकारउत्तरात्पूर्वमुकारः पश्चिमाननात् ॥ मकारोदक्षिणमुखाद्बिंदुःप्राङ्मुखतस्तथा ॥ १८ ॥ नादोमध्यमुखादेवंपंचधाऽसौविजृंभितः ॥ एकीभूतःपुनस्तद्वदोमित्येकाक्षरोभवत् ॥ १९ ॥ नामरूपात्मकंसर्वंवेदभूतकुलद्वयम् ॥ व्याप्तमेतेनमंत्रेणशिवशक्त्योश्चबोधकः ॥ २० ॥ अस्मात्पंचाक्षरंजज्ञेबोधकंसकलस्यतत् ॥ आकारादिक्रमेणैवनकारादियथाक्रमम् ॥ २१ ॥

वि०सं०१ अ० १० उत्पन्न हुआ. इस प्रकार पांच प्रकारसे वह निर्गत हुआ वह सब एक होकर 'ॐ' ऐसा एकाक्षर होजाता है ॥ १९ ॥ यह सब नाम रूपात्मक वेदभूत दोनों कुल अर्थात् स्त्रीपुरुष भेदसे भौतिक शरीर वर्ग दोका भेदवाला है वह इसी मंत्रसे व्याप्त है और शिवशक्तिका बोधक है ॥ २० ॥ इसी ॐकारसे सब जगत्का बोधक प्रणव उत्पन्न हुआ है अकारादिक्रमसे अर्थात् अकारसे नकार उकारसे मकार मकारसे 'शि' बिन्दुसे 'वा' नादसे 'य' प्रगट हुआ है ॥ २१ ॥

❖ <u>उपरोक्त शिव महापुराण के प्रकरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शकंर जी की माता श्री दुर्गा देवी (अष्टंगी देवी) है तथा पिता सदाशिव अर्थात् "काल ब्रह्म" है जिसने श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान श्री कष्ण जी में प्रवेश करके बोला था। इसी को क्षर पुरूष, क्षर ब्रह्म (ज्योति निरंजन) काल ब्रह्म भी कहा गया है। यही प्रमाण श्री मद्भगवत गीता अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 में भी है कि रज् (रजगुण ब्रह्मा), सत् (सतगुण विष्णु), तम् (तमगुण शंकर) तीनों गुण प्रकति अर्थात् दुर्गा देवी से उत्पन्न हुए हैं। प्रकति तो सब जीवों को उत्पन्न करने वाली माता है। मैं (गीता ज्ञान दाता) सब जीवों का पिता हूँ। मैं दुर्गा (प्रकति) के गर्भ में बीज स्थापित करता हूँ जिससे सबकी उत्पत्ति होती है।</u>

ये तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) ही जीवात्मा को शरीर में बाँधते हैं यानि सब जीवों को काल के जाल में फसांकर रखने वाले ये ही तीनों देवता हैं। यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 में है कि जिनकी बुद्धि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) से मिलने वाले क्षणिक लाभ तक सीमित है यानि जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख हैं जो मुझे (गीता ज्ञान दाता को) नहीं भजते।

विशेष :- श्री शिव पुराण के विद्येश्वर संहिता संहिता खण्ड-1 अध्याय 9 के श्लोक 40-46 तथा अध्याय 5 के श्लोक 26-31 की फोटोकॉपी ऊपर लगी हैं। इनमें कहा है कि काल ब्रह्म ने कहा है कि जीवों को जन्म-म त्यु के चक्र में रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव (ये तीनों गुण यानि तीनों देवता) डालते हैं। अपना बचाव कर रहा है। यह (काल ब्रह्म) इस प्रकार कपटयुक्त कार्य करता है। गीता अध्याय 7 श्लोक 12 में इसी ने कहा है कि जो कुछ तीनों गुणों यानि रजगुण ब्रह्मा से उत्पत्ति, सतगुण विष्णु से स्थिति तथा तमगुण शिव से संहार हो रहा है, इसका निमित मैं हूँ। परम अक्षर ब्रह्म यानि कबीर जी ने यथार्थ ज्ञान अपनी प्रिय आत्मा संत गरीबदास (छुड़ानी वाले) को बताया। उन्होंने अपनी वाणी में उसे समझाया। कहा कि अकेले ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव इसके कारण नहीं हैं। वाणी :-

ब्रह्मा, विष्णु, महेश्वर, माया और धर्मराया कहिए।
इन पाँचों मिल प्रपंच बनाया, वाणी हमरी लहिए।।
इन पाँचों मिल जीव अटकाए। जुगन जुगन हम आन छुड़ाए।।

पेश है गीता अध्याय 14 श्लोक 4-5 की फोटोकॉपी :-

(गीता अध्याय 14 श्लोक 4 की फोटोकॉपी)

सर्वयोनिषु, कौन्तेय, मूर्तयः, सम्भवन्ति, याः,
तासाम्, ब्रह्म, महत्, योनिः, अहम्, बीजप्रदः, पिता ॥ ४ ॥

तथा—

कौन्तेय	= हे अर्जुन!	**तासाम्**	= उन सबकी
सर्वयोनिषु	= नाना प्रकारकी सब योनियोंमें	**योनिः**	= गर्भ धारण करनेवाली माता है (और)
याः	= जितनी	**अहम्**	= मैं
मूर्तयः	= मूर्तियाँ अर्थात् शरीरधारी प्राणी	**बीजप्रदः**	= बीजको स्थापन करनेवाला
सम्भवन्ति	= उत्पन्न होते हैं,		
महत्, ब्रह्म	= प्रकृति (तो)	**पिता**	= पिता हूँ।

(गीता अध्याय 14 श्लोक 5 की फोटोकॉपी)

सत्त्वम्, रजः, तमः, इति, गुणाः, प्रकृतिसम्भवाः,
निबध्नन्ति, महाबाहो, देहे, देहिनम्, अव्ययम्॥५॥

तथा—

महाबाहो	= हे अर्जुन!	**गुणाः**	= तीनों गुण
सत्त्वम्	= सत्त्वगुण,	**अव्ययम्**	= अविनाशी
रजः	= रजोगुण और		
तमः	= तमोगुण—	**देहिनम्**	= जीवात्माको
इति	= ये	**देहे**	= शरीरमें
प्रकृतिसम्भवाः	= प्रकृतिसे उत्पन्न	**निबध्नन्ति**	= बाँधते हैं।

यही सच्चाई छः सौ वर्ष पूर्व कबीर जी ने बताई थी। जो आज सब ग्रन्थों से प्रमाणित हुई जो इस प्रकार है :-

"पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमतवाणी में सष्टि रचना"

विशेष :- निम्न अमतवाणी सन् 1403 से {जब पूज्य कविर्देव (कबीर परमेश्वर) लीलामय शरीर में पाँच वर्ष के हुए} सन् 1518 {जब कविर्देव (कबीर परमेश्वर) मगहर स्थान से सशरीर सतलोक गए} के बीच में लगभग 600 वर्ष पूर्व परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी द्वारा अपने निजी सेवक (दास भक्त) आदरणीय धर्मदास साहेब जी को सुनाई थी तथा धनी धर्मदास साहेब जी ने लिपिबद्ध की थी। परन्तु उस समय के पवित्र हिन्दुओं तथा पवित्र मुसलमानों के नादान गुरुओं (नीम-हकीमों) ने कहा कि यह धाणक (जुलाहा) कबीर झूठा है। किसी भी सद् ग्रन्थ में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के माता-पिता का नाम नहीं है। ये तीनों प्रभु अविनाशी हैं इनका जन्म मत्यु नहीं होता। न ही पवित्र वेदों व पवित्र कुरान शरीफ आदि में कबीर परमेश्वर का प्रमाण है तथा परमात्मा को निराकार लिखा है। हम प्रतिदिन पढ़ते हैं। भोली आत्माओं ने उन विचक्षणों (चतुर गुरुओं) पर विश्वास कर लिया कि सचमुच यह कबीर धाणक तो अशिक्षित है तथा गुरु जी शिक्षित हैं, सत्य कह रहे होंगे। आज वही सच्चाई प्रकाश में आ रही है तथा अपने सर्व पवित्र धर्मों के पवित्र सद्ग्रन्थ साक्षी हैं। इससे सिद्ध है कि पूर्ण परमेश्वर, सर्व सष्टि रचनहार, कुल करतार तथा सर्वज्ञ कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही है जो काशी (बनारस) में कमल के फूल पर प्रकट हुए तथा 120 वर्ष तक वास्तविक तेजोमय शरीर के ऊपर मानव सदश शरीर हल्के तेज का बना कर रहे तथा अपने द्वारा रची सष्टि का ठीक-ठीक (वास्तविक तत्व) ज्ञान देकर सशरीर सतलोक चले गए। कपा प्रेमी पाठक पढ़ें निम्न अमतवाणी परमेश्वर कबीर साहेब जी द्वारा उच्चारित :-

धर्मदास यह जग बौराना। कोई न जाने पद निरवाना।।
यही कारन मैं कथा पसारा। जग से कहियो राम नियारा।।
यही ज्ञान जग जीव सुनाओ। सब जीवों का भ्रम नशाओ।।
अब मैं तुम से कहों चिताई। त्रयदेवन की उत्पति भाई।।
कुछ संक्षेप कहों गुहराई। सब संशय तुम्हरे मिट जाई।।
भरम गये जग वेद पुराना। आदि राम का भेद न जाना।।

राम राम सब जगत बखाने। आदि राम कोई बिरला जाने।।
ज्ञानी सुने सो हिरदै लगाई। मूर्ख सुने सो गम्य ना पाई।।
माँ अष्टंगी पिता निरंजन। वे जम दारुण वंशन अंजन।।
पहिले कीन्ह निरंजन राई। पीछे से माया उपजाई।।
माया रूप देख अति शोभा। देव निरंजन तन मन लोभा।।
कामदेव धर्मराय सत्ताये। देवी को तुरत ही धर खाये।।
पेट से देवी करी पुकारा। साहब मेरा करो उबारा।।
टेर सुनी तब हम तहाँ आये। अष्टंगी को बंद छुड़ाये।।
सतलोक में कीन्हा दुराचारि, काल निरंजन दिन्हा निकारि।।
माया समेत दिया भगाई, सोलह संख कोस दूरी पर आई।।
अष्टंगी और काल अब दोई, मंद कर्म से गए बिगोई।।
धर्मराय को हिकमत कीन्हा। नख रेखा से भग कर लीन्हा।।
धर्मराय किन्हाँ भोग विलासा। माया को रही तब आसा।।
तीन पुत्र अष्टंगी जाये। ब्रह्मा विष्णु शिव नाम धराये।।
तीन देव विस्तार चलाये। इनमें यह जग धोखा खाये।।
पुरुष गम्य कैसे को पावै। काल निरंजन जग भरमावै।।
तीन लोक अपने सुत दीन्हा। सुन्न निरंजन बासा लीन्हा।।
अलख निरंजन सुन्न ठिकाना। ब्रह्मा विष्णु शिव भेद न जाना।।
तीन देव सो उनको धावें। निरंजन का वे पार ना पावें।।
अलख निरंजन बड़ा बटपारा। तीन लोक जिव कीन्ह अहारा।।
ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं बचाये। सकल खाय पुन धूर उड़ाये।।
तिनके सुत हैं तीनों देवा। आंधर जीव करत हैं सेवा।।
अकाल पुरुष काहू नहीं चीन्हां। काल पाय सबही गह लीन्हां।।
ब्रह्म काल सकल जग जाने। आदि ब्रह्म को ना पहिचाने।।
तीनों देव और औतारा। ताको भजे सकल संसारा।।
तीनों गुण का यह विस्तारा। धर्मदास मैं कहों पुकारा।।
गुण तीनों की भक्ति में, भूल परो संसार।
कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरैं पार।।

उपरोक्त अमतवाणी में परमेश्वर कबीर साहेब जी अपने निजी सेवक श्री धर्मदास साहेब जी को कह रहे हैं कि धर्मदास यह सर्व संसार तत्वज्ञान के अभाव से विचलित है। किसी को पूर्ण मोक्ष मार्ग तथा पूर्ण सष्टि रचना का ज्ञान नहीं है। इसलिए मैं आपको मेरे द्वारा रची सष्टि की कथा सुनाता हूँ। बुद्धिमान व्यक्ति तो तुरंत समझ जायेंगे। परन्तु जो सर्व प्रमाणों को देखकर भी नहीं मानेंगे तो वे नादान प्राणी काल प्रभाव से प्रभावित हैं, वे भक्ति योग्य नहीं। अब मैं बताता हूँ तीनों भगवानों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी) की उत्पत्ति कैसे हुई? इनकी माता जी तो अष्टंगी (दुर्गा) है तथा पिता ज्योति निरंजन (ब्रह्म, काल) है। पहले ब्रह्म की उत्पत्ति अण्डे से हुई। फिर दुर्गा की उत्पत्ति हुई। दुर्गा के रूप पर आसक्त होकर काल (ब्रह्म) ने गलती (छेड़-छाड़) की, तब दुर्गा

(प्रकति) ने इसके पेट में शरण ली। मैं वहाँ गया जहाँ ज्योति निरंजन काल था। तब भवानी को ब्रह्म के उदर से निकाल कर इक्कीस ब्रह्माण्ड समेत 16 संख कोस की दूरी पर भेज दिया। ज्योति निरंजन (धर्मराय) ने प्रकति देवी (दुर्गा) के साथ भोग-विलास किया। इन दोनों के संयोग से तीनों गुणों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की उत्पत्ति हुई। इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की ही पूजा करके सर्व प्राणी काल जाल में फंसे हैं। जब तक वास्तविक मंत्र नहीं मिलेगा, पूर्ण मोक्ष कैसे होगा?

विशेष :- भक्तजन विचार करें कि श्री ब्रह्मा जी श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की स्थिति अविनाशी बताई गई थी। सर्व हिन्दु समाज अभी तक तीनों परमात्माओं को अजर, अमर व जन्म-मत्यु रहित मानते रहे जबकि ये तीनों नाश्वान हैं। इन के पिता काल रूपी ब्रह्म तथा माता दुर्गा (प्रकति/अष्टांगी) हैं जैसा आप ने पूर्व प्रमाणों में पढा यह ज्ञान अपने शास्त्रों में भी विद्यमान है परन्तु हिन्दु समाज के कलयुगी गुरूओं, ऋषियों, सन्तों को ज्ञान नहीं। जो अध्यापक पाठ्यक्रम (सलेबस) से ही अपरिचित है वह अध्यापक ठीक नहीं (विद्वान नहीं) है, विद्यार्थियों के भविष्य का शत्रु है। इसी प्रकार जिन गुरूओं को अभी तक यह नहीं पता कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी के माता-पिता कौन हैं? तो वे गुरू, ऋषि,सन्त ज्ञान हीन हैं। जिस कारण से सर्व भक्त समाज को शास्त्र विरूद्ध ज्ञान (लोक वेद अर्थात् दन्त कथा) सुना कर अज्ञान से परिपूर्ण कर दिया। शास्त्रविधि विरूद्ध भक्तिसाधना करा के परमात्मा के वास्तविक लाभ (पूर्ण मोक्ष) से वंचित रखा सबका मानव जन्म नष्ट करा दिया क्योंकि श्री मद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में यही प्रमाण है कि जो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण पूजा करता है। उसे कोई लाभ नहीं होता पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने पाँच वर्ष की लीलामय आयु में सन् 1403 से ही सर्व शास्त्रों युक्त ज्ञान अपनी अमतवाणी (कविरवाणी) में बताना प्रारम्भ किया था। परन्तु उन अज्ञानी गुरूओं ने यह ज्ञान भक्त समाज तक नहीं जाने दिया। जो वर्तमान में सर्व सद्ग्रन्थों से स्पष्ट हो रहा है इससे सिद्ध है कि कविंदेव (कबीर प्रभु) तत्वदर्शी सन्त रूप में स्वयं पूर्ण परमात्मा ही आए थे।

"आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमतवाणी में सष्टि रचना का प्रमाण"

आदि रमैणी (सद् ग्रन्थ पष्ठ नं. 690 से 692 तक)

आदि रमैंणी अदली सारा। जा दिन होते धुंधुंकारा।।1।।
सतपुरुष कीन्हा प्रकाशा। हम होते तखत कबीर खवासा ।।2।।
मन मोहिनी सिरजी माया। सतपुरुष एक ख्याल बनाया।।3।।
धर्मराय सिरजे दरबानी। चौसठ जुगतप सेवा ठांनी।।4।।
पुरुष पथिवी जाकूं दीन्ही। राज करो देवा आधीनी।।5।।
ब्रह्माण्ड इकीस राज तुम्ह दीन्हा। मन की इच्छा सब जुग लीन्हा।।6।।

माया मूल रूप एक छाजा। मोहि लिये जिनहूँ धर्मराजा।।7।।
धर्म का मन चंचल चित धार्या। मन माया का रूप बिचारा।।8।।
चंचल चेरी चपल चिरागा। या के परसे सरबस जागा।।9।।
धर्मराय कीया मन का भागी। विषय वासना संग से जागी।।10।।
आदि पुरुष अदली अनरागी। धर्मराय दिया दिल सें त्यागी।।11।।
पुरुष लोक सें दीया ढहाही। अगम दीप चलि आये भाई।।12।।
सहज दास जिस दीप रहंता। कारण कौंन कौंन कुल पंथा।।13।।
धर्मराय बोले दरबानी। सुनो सहज दास ब्रह्मज्ञानी।।14।।
चौसठ जुग हम सेवा कीन्ही। पुरुष पंथिवी हम कूं दीन्ही।।15।।
चंचल रूप भया मन बौरा। मनमोहिनी ठगिया भौंरा।।16।।
सतपुरुष के ना मन भाये। पुरुष लोक से हम चलि आये।।17।।
अगर दीप सुनत बड़भागी। सहज दास मेटो मन पागी।।18।।
बोले सहजदास दिल दानी। हम तो चाकर सत सहदानी।।19।।
सतपुरुष सें अरज गुजारूं। जब तुम्हारा बिवाण उतारूं।।20।।
सहज दास को कीया पीयाना। सत्यलोक लीया प्रवाना।।21।।
सतपुरुष साहिब सरबंगी। अविगत अदली अचल अभंगी।।22।।
धर्मराय तुम्हरा दरबानी। अगर दीप चलि गये प्रानी।।23।।
कौंन हुकम करी अरज अवाजा। कहां पठावौ उस धर्मराजा।।24।।
भई अवाज अदली एक साचा। विषय लोक जा तीन्यूं बाचा।।25।।
सहज विमाँन चले अधिकाई। छिन में अगर दीप चलि आई।।26।।
हमतो अरज करी अनरागी। तुम्ह विषय लोक जावो बड़भागी।।27।।
धर्मराय के चले विमाना। मानसरोवर आये प्राना।।28।
मानसरोवर रहन न पाये। दरै कबीरा थांना लाये।।29।।
बंकनाल की विषमी बाटी। तहां कबीरा रोकी घाटी।।30।।
इन पाँचों मिलि जगत बंधाना। लख चौरासी जीव संताना।।31।।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया। धर्मराय का राज पठाया।।32।।
यौह खोखा पुर झूठी बाजी। भिसति बैकुण्ठ दगासी साजी।।33।।
कंतिम जीव भुलांनें भाई। निज घर की तो खबरि न पाई।।34।।
सवा लाख उपजें नित हंसा। एक लाख विनशें नित अंसा।।35।।
उपति खपति प्रलय फेरी। हर्ष शोक जौंरा जम जेरी।।36।।
पाँचों तत्त्व हैं प्रलय माँही। सत्त्वगुण रजगुण तमगुण झांई।।37।।
आठों अंग मिली है माया। पिण्ड ब्रह्माण्ड सकल भरमाया।।38।।
या में सुरति शब्द की डोरी। पिण्ड ब्रह्माण्ड लगी है खोरी।।39।।
श्वासा पारस मन गह राखो। खोल्हि कपाट अमीरस चाखो।।40।।
सुनाऊं हंस शब्द सुन दासा। अगम दीप है अग है बासा।।41।।
भवसागर जम दण्ड जमाना। धर्मराय का है तलबांना।।42।।

पाँचों ऊपर पद की नगरी। बाट बिहंगम बंकी डगरी।।43।।
हमरा धर्मराय सों दावा। भवसागर में जीव भरमावा।।44।।
हम तो कहैं अगम की बानी। जहाँ अविगत अदली आप बिनानी।।45।।
बंदी छोड़ हमारा नामं। अजर अमर है अस्थीर ठामं।।46।।
जुगन जुगन हम कहते आये। जम जौरा सें हंस छुटाये।।47।।
जो कोई मानें शब्द हमारा। भवसागर नहीं भरमें धारा।।48।।
या में सुरति शब्द का लेखा। तन अंदर मन कहो कीन्ही देखा।।49।।
दास गरीब अगम की बानी। खोजा हंसा शब्द सहदानी।।50।।

उपरोक्त अमतवाणी का भावार्थ है कि आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि यहाँ पहले केवल अंधकार था तथा पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब जी सत्यलोक में तख्त (सिंहासन) पर विराजमान थे। हम वहाँ चाकर थे। परमात्मा ने ज्योति निरंजन को उत्पन्न किया। फिर उसके तप के प्रतिफल में इक्कीस ब्रह्माण्ड प्रदान किए। फिर माया (प्रकति) यानि देवी दुर्गा की उत्पत्ति की। युवा दुर्गा के रूप पर मोहित होकर ज्योति निरंजन (काल ब्रह्म) ने दुर्गा (प्रकति) से बलात्कार करने की चेष्टा की। ब्रह्म को उसकी सजा मिली। उसे सत्यलोक से निकाल दिया तथा शाप लगा कि एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का प्रतिदिन आहार करेगा, सवा लाख उत्पन्न करेगा।

काल ब्रह्म ने देवी दुर्गा से विवाह किया। तीन पुत्र उत्पन्न हुए। रजगुण युक्त ब्रह्मा, सतगुण युक्त विष्णु तथा तमगुण युक्त शिव को सुनियोजित षड़यंत्र के तहत उत्पन्न किया है। काल ब्रह्म अपने आहार के लिए अपने तीनों पुत्रों से उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार करवाता है। इस षड़यंत्र की पोल परम अक्षर ब्रह्म यानि सतपुरूष जी ने पथ्वी पर आकर खोली है। सब जीव अज्ञानता के कारण इन्हीं ब्रह्मा, विष्णु, शिव तथा देवी व अन्य देवताओं को पूर्ण परमात्मा मानकर भक्ति करते हैं। काल के जाल से निकल नहीं पाते। जन्म-मरण के चक्र में कष्ट उठा रहे हैं। कोई जीव काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्मण्डों में सुखी नहीं है। ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश भी यहाँ कष्ट पर कष्ट उठाते हैं। इसी पुस्तक के पष्ठ 43 पर लगी श्री देवी पुराण के प्रथम स्कंध के अध्याय 4 की फोटोकॉपी में श्री विष्णु जी ने ब्रह्मा जी से कहा है कि मैं सदा तप करने में लगा रहता हूँ। (तप से सिद्धि-शक्ति प्राप्त करके यानि बैट्री चॉर्ज करके) फिर राक्षसों से युद्ध करता रहता हूँ। जनता को दुःख देने वाले दानवों को मारता हूँ। कभी सौभाग्य से समय मिला तो लक्ष्मी के साथ सुखपूर्वक समय व्यतीत करता हूँ।

इस प्रकरण से सिद्ध हो जाता है कि यहाँ सर्व प्राणी जन्म-मत्यु का कष्ट उठा रहे हैं। यदि कोई पूर्ण परमात्मा का वास्तविक शब्द (सच्चानाम जाप मंत्र) हमारे से प्राप्त करेगा, उसको काल की बंद से छुड़वा देंगे। हमारा बन्दी छोड़ नाम है। आदरणीय गरीबदास जी अपने गुरु व प्रभु कबीर जी के आधार पर कह रहे हैं कि सच्चे मंत्र अर्थात् सत्यनाम व सारशब्द की प्राप्ति कर लो, पूर्ण मोक्ष हो जायेगा। नहीं तो नकली नाम देने वाले शास्त्र विरूद्ध ज्ञान बताने वाले संतों व महन्तों की मीठी-मीठी बातों में फंसकर शास्त्रविधि रहित साधना करके काल जाल में रह जाओगे। फिर कष्ट पर कष्ट उठाओगे।

।।गरीबदास जी महाराज की वाणी।।

माया आदि निरंजन भाई, अपने जाए आपै खाई।।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर चेला, ऊँ सोहं का है खेला।।

शिखर सुन्न में धर्म अन्यायी, जिन शक्ति डायन महल पठाई।।
लाख ग्रासै नित उठ दूती, माया आदि तख्त की कुती।।
सवा लाख घड़िये नित भांडे, हंसा उतपति परलय डांडे।।
ये तीनों चेला बटपारी, सिरजे पुरुषा सिरजी नारी।।
खोखापुर में जीव भुलाये, स्वपना बहिस्त वैकुंठ बनाये।।
यो हरहट का कुआ लोई, या गल बंध्या है सब कोई।।
कीड़ी कुजंर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा।
अरब अलील इन्द्र हैं भाई, हरहट डोरी बंधे सब आई।।
शेष महेश गणेश्वर ताहिं, हरहट डोरी बंधे सब आहिं।
शुक्रादिक ब्रह्मादिक देवा, हरहट डोरी बंधे सब खेवा।।
कोटिक कर्ता फिरता देख्या, हरहट डोरी कहूँ सुन लेखा।
चतुर्भुजी भगवान कहावैं, हरहट डोरी बंधे सब आवैं।।
यो है खोखापुर का कुआ, या में पड़ा सो निश्चय मुवा।।

ज्योति निरंजन (कालबली) के वश होकर के ये तीनों देवता (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) अपनी महिमा दिखाकर जीवों को स्वर्ग नरक तथा भवसागर में (लख चौरासी योनियों में) भटकाते रहते हैं। ज्योति निरंजन अपनी माया से नागिनी की तरह जीवों को पैदा करता है और फिर मार देते हैं। नागिन अपने बच्चों को खाती है। उसी प्रकार ज्योति निरंजन उत्पन्न करता है तथा मारता है। ज्योति निरंजन (काल) एक लाख मानव शरीर प्रतिदिन खाता है। उदाहरण बताया है कि नागिन अपने अण्डों से बच्चे निकालते समय अपने शरीर के पिछले भाग से (फन से आगे वाले भाग से) अण्डों के चारों ओर घेरा लगा लेती है। फिर अण्डों को अपना फन (मुख) मार-मारकर फोड़ती है। अण्डों से बच्चे निकलते ही भागने लगते हैं। नागिन उनको खाने लगती है। जो कोई उसके शरीर के ऊपर से होकर घेरे से बाहर निकल जाते हैं, वे ही बच पाते हैं। नहीं तो कुण्डली में वह (नागिनी) छोड़ती नहीं। जितने बच्चे उस कुण्डली के अन्दर होते हैं, उन सबको खा जाती है।

माया काली नागिनी, अपने जाये खात। कुण्डली में छोड़ै नहीं, सौ बातों की बात।।

इसी प्रकार यह कालबली का जाल है। निरंजन तक की भक्ति पूरे संत से नाम लेकर करेगें तो भी इस निरंजन की कुण्डली (इक्कीस ब्रह्माण्डों) से बाहर नहीं निकल सकते। स्वयं ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आदि माया शेराँवाली भी निरंजन की कुण्डली में है। ये अवतार धार कर आते हैं और जन्म-मत्यु का चक्कर काटते रहते हैं। इसलिए विचार करें सोहं जाप जो कि ध्रुव व प्रहलाद व शुकदेव ऋषि ने जपा, वह भी पार नहीं हुए। क्योंकि श्री विष्णु पुराण के प्रथम अंश के अध्याय 12 के श्लोक 93 में पष्ठ 51 पर लिखा है कि ध्रुव केवल एक कल्प अर्थात् एक हजार चतुर्युग तक ही मुक्त है। इसलिए काल लोक में ही रहे तथा 'ॐ नमः भगवते वासुदेवाय नमः**' मन्त्र जाप करने वाले भक्त भी कष्ण तक की भक्ति कर रहे हैं, वे भी चौरासी लाख योनियों के चक्कर काटने से नहीं बच सकते। यह परम पूज्य कबीर साहिब जी व आदरणीय गरीबदास साहेब जी महाराज की वाणी प्रत्यक्ष प्रमाण देती हैं।**

अनन्त कोटि अवतार हैं, माया के गोविन्द। कर्ता हो हो अवतरे, बहुर पड़े जग फंध।।

सतपुरुष कबीर साहिब जी की भक्ति से ही जीव मुक्त हो सकता है। जब तक जीव सतलोक में वापिस नहीं चला जाएगा तब तक काल लोक में इसी तरह कर्म करेगा और की हुई नाम व दान धर्म की

कमाई स्वर्ग रूपी होटलों में समाप्त करके वापिस कर्म आधार से चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीर में कष्ट भोगता रहेगा तथा इस काल लोक में चक्कर काटता रहेगा। माया (दुर्गा) से उत्पन्न हो कर करोड़ों गोबिन्द(ब्रह्मा-विष्णु-शिव) मर चुके हैं। भगवान का अवतार बन कर आये थे। फिर कर्म बन्धन में बन्ध कर कर्मों को भोग कर चौरासी लाख योनियों में चले गए। जैसे भगवान विष्णु जी को देवर्षि नारद का शाप लगा। वे श्री रामचन्द्र रूप में अयोध्या में आए। फिर श्री राम जी रूप में बाली का वध किया था। उस कर्म का दण्ड भोगने के लिए श्री कष्ण जी का जन्म हुआ। फिर बाली वाली आत्मा शिकारी बना तथा अपना प्रतिशोध लिया। श्री कष्ण जी के पैर में विषाक्त तीर मार कर वध किया। महाराज गरीबदास जी अपनी वाणी में कहते हैं :

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया, और धर्मराय कहिये।
इन पाँचों मिल परपंच बनाया, वाणी हमरी लहिये।।
इन पाँचों मिल जीव अटकाये, जुगन–जुगन हम आन छुटाये।
बन्दी छोड़ हमारा नामं, अजर अमर है अस्थिर ठामं।।
पीर पैगम्बर कुतुब औलिया, सुर नर मुनिजन ज्ञानी।
येता को तो राह न पाया, जम के बंधे प्राणी।।
धर्मराय की धूमा–धामी, जम पर जंग चलाऊँ।
जोरा को तो जान न दूगां, बांध अदल घर ल्याऊँ।।
काल अकाल दोहूँ को मोसूं, महाकाल सिर मूंडू।
मैं तो तख्त हजूरी हुकमी, चोर खोज कूं ढूंढू।।
मूला माया मग में बैठी, हंसा चुन–चुन खाई।
ज्योति स्वरूपी कह निरंजन, मैं ही कर्ता भाई।।
संहस अठासी दीप मुनीश्वर, बंधे मुला डोरी।
ऐत्यां में जम का तलबाना, चलिए पुरुष कीशोरी।।
मूला का तो माथा दागूं, सतकी मोहर करूंगा।
पुरुष दीप कूं हंस चलाऊँ, दरा न रोकन दूंगा।।
हम तो बन्दी छोड़ कहावां, धर्मराय है चकवै।
सतलोक की सकल सुनावां, वाणी हमरी अखवै।।
नौ लख पटट्न ऊपर खेलूं, साहदरे कूं रोकूं।
द्वादस कोटि कटक सब काटूं, हंस पठाऊँ मोखूं।।
चौदह भुवन गमन है मेरा, जल थल में सरबंगी।
खालिक खलक खलक में खालिक, अविगत अचल अभंगी।।
अगर अलील चक्र है मेरा, जित से हम चल आए।
पाँचों पर प्रवाना मेरा, बंधि छुटावन धाये।।
जहाँ ओंकार निरंजन नाहीं, ब्रह्मा विष्णु वेद नहीं जाहीं।
जहाँ कर्ता नहीं काल भगवाना, काया माया पिण्ड न प्राणा।।
पाँच तत्व तीनों गुण नाहीं, जोरा काल दीप नहीं जाहीं।
अमर करूं सतलोक पठाँऊ, तातैं बन्दी छोड़ कहाऊँ।।

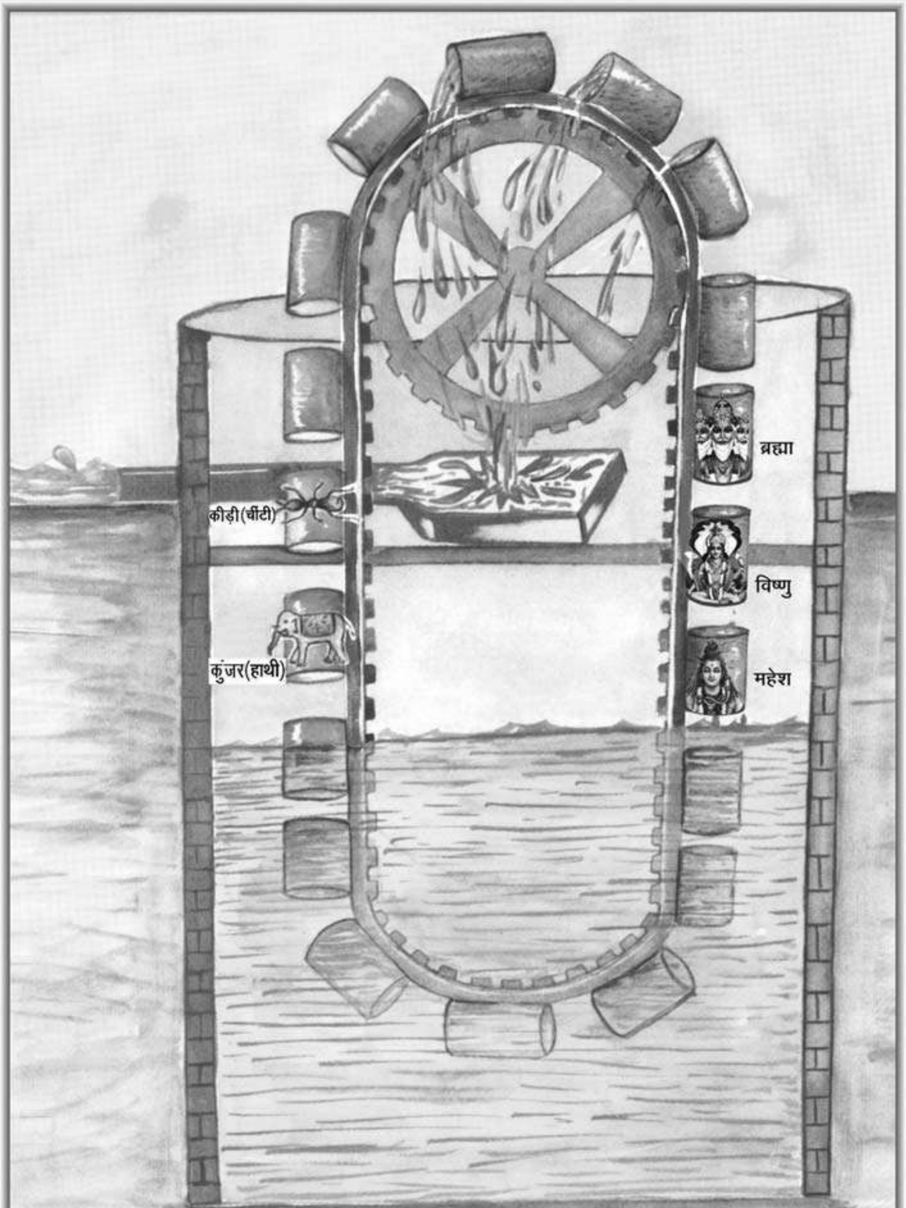

योह हरहट का कुआँ लोई, या गल बंध्या है सब कोई।
कीड़ी कुंजर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा।।

काल लोक में जन्म-मरण रूपी हरहट (चक्र)

अर्थात् संत गरीबदास जी ने कबीर परमेश्वर से प्राप्त ज्ञान को बताया है कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी, श्री देवी दुर्गा जी तथा ज्योति निरंजन काल, इन पाँचों ने षड़यंत्र के तहत सब जीवों को रोक रखा है।

यही प्रमाण श्री मद्भगवत गीता अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 में भी है कि रज् (रजगुण ब्रह्मा), सत् (सतगुण विष्णु), तम् (तमगुण शंकर) तीनों गुण प्रकृति अर्थात् दुर्गा देवी से उत्पन्न हुए हैं। प्रकृति तो सब जीवों को उत्पन्न करने वाली माता है। मैं (गीता ज्ञान दाता) सब जीवों का पिता हूँ। मैं दुर्गा (प्रकृति) के गर्भ में बीज स्थापित करता हूँ जिससे सबकी उत्पत्ति होती है।

ये तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) ही जीवात्मा को शरीर में बाँधते हैं यानि सब जीवों को काल के जाल में फसांकर रखने वाले ये ही तीनों देवता हैं। यही प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 में है कि जिनकी बुद्धि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) से मिलने वाले क्षणिक लाभ तक सीमित है यानि जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख हैं जो मुझे (गीता ज्ञान दाता को) नहीं भजते।

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की महिमा बताते हुए आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि हमारे प्रभु कविर् (कविर्देव) बन्दी छोड़ हैं। {बन्दी छोड़ का भावार्थ है काल की कारागार से छुटवाने वाला, काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्डों में सर्व प्राणी पापों के कारण काल के बंदी हैं। पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब पाप का विनाश कर देते हैं। पापों का विनाश न ब्रह्म, न परब्रह्म, न ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव जी कर सकते हैं। केवल जैसा कर्म है, उसका वैसा ही फल दे देते हैं। इसीलिए यजुर्वेद अध्याय 5 के मन्त्र 32 में लिखा है 'कविरंघारिरसि' कविर्देव (कबीर परमेश्वर) पापों का शत्रु है, 'बम्भारिरसि' बन्धनों का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ है।}

इन पाँचों (ब्रह्मा-विष्णु-शिव-माया और धर्मराय) से ऊपर सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) है जो सतलोक में रहता है, सबका मालिक है और सर्व परब्रह्म-ब्रह्म तथा ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी व आदि माया नाशवान हैं। महाप्रलय में ये सब तथा इनके लोक समाप्त हो जाएंगे। इन देवताओं की आम जीव से कई हजार गुणा ज्यादा लम्बी आयु है। परन्तु जो समय निर्धारित है वह एक दिन पूरा अवश्य होगा। आदरणीय गरीबदास जी महाराज कहते हैं :-

शिव ब्रह्मा का राज, इन्द्र गिनती कहां। चार मुक्ति वैकुंण्ठ समझ, येता लह्या।।
संख जुगन की जुनी, उम्र बड़ धारिया। जा जननी कुर्बान, सु कागज पारिया।।
येती उम्र बुलंद मरैगा अंत रे। सतगुरु लगे न कान, न भैंटे संत रे।।

चाहे संख युग की लम्बी उम्र भी क्यों न हो वह एक दिन समाप्त जरूर होगी। यदि सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब के नुमाँयदे पूर्ण संत(गुरु) जो तीन नाम का मंत्र (जिसमें एक ओ३म + तत् + सत् सांकेतिक हैं) देता है तथा उसे पूर्ण संत द्वारा नाम दान करने का आदेश है, उससे उपदेश लेकर नाम की कमाई करेंगे तो हम सतलोक के अधिकारी हंस हो सकते हैं। सत्य साधना बिना बहुत लम्बी उम्र कोई काम नहीं आएगी क्योंकि निरंजन का लोक दुःखालय है यानि यहाँ पर दुःख ही दुःख है।

कबीर, जीवना तो थोड़ा ही भला, जै सत सुमरन होय।
लाख वर्ष का जीवना, लेखै धरै ना कोय।।

कबीर साहिब अपनी (पूर्णब्रह्म की) जानकारी स्वयं बताते हैं कि इन परमात्माओं से ऊपर असंख्य भुजा का परमात्मा सतपुरुष है जो सत्यलोक (सच्च खण्ड, सतधाम) में रहता है तथा उसके अन्तर्गत सर्वलोक [ब्रह्म (काल) के 21 ब्रह्माण्ड व ब्रह्मा, विष्णु, शिव शक्ति के लोक तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड व अन्य सर्व ब्रह्माण्ड] आते हैं और वहाँ पर सत्यनाम-सारनाम के जाप द्वारा जाया जाएगा जो पूरे गुरु से प्राप्त होता है। सच्चखण्ड (सतलोक) में जो आत्मा चली जाती है उसका पुनर्जन्म नहीं होता। सतपुरुष (पूर्णब्रह्म) कबीर साहेब (कविर्देव) ही अन्य लोकों में स्वयं ही भिन्न-भिन्न नामों से विराजमान हैं। जैसे अलख लोक में अलख पुरुष, अगम लोक में अगम पुरुष तथा अकह लोक में अनामी पुरुष रूप में विराजमान हैं। ये तो उपमात्मक नाम हैं, परन्तु वास्तविक नाम उस पूर्ण पुरुष का कविर्देव (भाषा भिन्न होकर कबीर साहेब) है।

प्रश्न 7 : यह कहाँ प्रमाण है कि रजगुण ब्रह्मा है, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर है?

उत्तर : प्रमाण नं. 1. श्री मार्कण्डेय पुराण (सचित्र मोटा टाईप गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित) के अध्याय 25 में 131 पष्ठ पर कहा है कि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर, तीनों ब्रह्म की प्रधान शक्तियाँ है, ये ही तीन देवता हैं। ये ही तीन गुण हैं।

पेश है प्रमाण के लिए संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराण से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

एक ही परमात्माके त्रिविध रूप, ब्रह्माजीकी आयु आदिका मान तथा सृष्टिका संक्षिप्त वर्णन १३१

भीतरसे ब्रह्माजी प्रकट होते हैं—यह बात तुम्हें बतलायी जा चुकी है। यद्यपि ब्रह्माजी सम्पूर्ण जगत्‌की उत्पत्तिके स्थान और निर्गुण हैं, तथापि रजोगुणका उपभोग करते हुए सृष्टिमें प्रवृत्त होते हैं और ब्रह्माके कर्तव्यका पालन करते हैं। फिर परमेश्वर सत्त्वगुणके उत्कर्षसे युक्त हो श्रीविष्णुका स्वरूप धारणकर धर्मपूर्वक प्रजाका पालन करते हैं। फिर तमोगुणकी अधिकतासे युक्त हो रुद्ररूप धारण करके सम्पूर्ण जगत्‌का संहार करते और निश्चिन्त सोते हैं। इस प्रकार सृष्टि, पालन और संहार—इन तीनों कालोंमें तीन गुणोंसे युक्त होकर भी वे परमेश्वर वास्तवमें निर्गुण ही हैं। इस तरह स्वयम्भू परमात्माकी तीन अवस्थाएँ होती हैं। रजोगुणप्रधान ब्रह्मा, तमोगुणप्रधान रुद्र और सत्त्वप्रधान विश्वपालक विष्णु हैं। ये ही तीन देवता हैं और ये ही तीन गुण हैं।

❖ प्रमाण नं. 2. श्री देवी महापुराण संस्कत व हिन्दी अनुवाद {श्री वैंकटेश्वर प्रैस बम्बई (मुंबई) से प्रकाशित} में तीसरे स्कन्ध अध्याय 5 श्लोक 8 में लिखा है कि शंकर भगवान बोले, हे मातः! यदि आप हम पर दयालु हैं तो मुझे तमोगुण, ब्रह्मा रजोगुण तथा विष्णु सतोगुण युक्त क्यों किया?

पेश है प्रमाण के लिए श्री देवी महापुराण तीसरा स्कंध के अध्याय 5 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

दे. भा. ॥११॥

वह यथार्थ नहीं जानते, जो कहते हैं कि यह जगत् हरि हर ब्रह्माका किया हुआ है. यह अन्यथा कहते हैं यहतीनों देवता आपकेही किये हैं, और चराचर जगत् निर्माण करते हैं ॥४॥ भूमि, वायु, आकाश, अग्नि, जलादिके गुणोंसे यह जगत् होता है; यदि यह हो तो विना तुम्हारी चित्कलाके यह जगत् स्फुट कैसे होता? ॥ ५ ॥ यह विष्णु अज शिवके द्वारा कल्पना किया हुआ होता है, हे मातः! इसमें आप अनेक वेष और कुतूहलसे यथारुचि विलास करती हुई ॥ ६ ॥ सब लोकके सृजनकरनेकी इच्छा करनेवाले हरि ब्रह्मा और शिव यह सब तुम्हारे चरणारविंदकी भक्ति और प्रीतिको प्राप्त होकर कर सकते हैं ॥ ७ ॥ हे मातः! यदि हमारे ऊपर सदा आप दयायुक्त हो तो हमको तमोगुणमें किस प्रकार प्रधान किया है, ब्रह्मा रजोगुण और हरि सत्त्वगुण

न च विदंति वदंति च येऽन्यथा हरिहराजकृतं निखिलं जगत् ॥ तव कृताखय एव सदैव ते विरचयंति जगत्सचराचरम् ॥ ४ ॥ अव निवायुखवह्निजलादिभिः सविषयैः सगुणैश्च जगद्भवेत् ॥ यदि तदा कथमद्य च तत्स्फुटंप्रभवतीति तवांब कलामृते ॥ ५ ॥ भवसि सर्वमिदं सचराचरं त्वमजविष्णुशिवाकृतिकल्पितम् ॥ विविधवेषविलासकुतूहलैर्विरमसे रमसेऽब यथारुचि ॥ ६ ॥ सकललोकसिसृक्षुरहं हरिः कम लभूश्च भवाम यदांबिके ॥ तव पदांबुजपांसु परिग्रहं समधिगम्य तदा ननु चक्रिम ॥ ७ ॥ यदि दयार्द्रमना न सदांऽबिके कथमहं विहितश्च तमोगुणः ॥ कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्त्वगुणो हरिः ॥ ८ ॥ यदि न ते विषमा मतिरंबिके कथमिदं बहुधा विहितं जगत् ॥ सचिवभूपतिभृत्यजनावृतं बहुधनैरधनैश्च समाकुलम् ॥ ९ ॥ तव गुणास्त्रय एव सदा क्षमाः प्रकटनावनसंहरणेषु वै ॥ हरिहरद्रु हिणाश्च क्रमात्त्वया विरचितास्त्रिजगतां किल कारणम् ॥ १० ॥ परिचितानि मया हरिणा तथा कमलजेन विमानगतेन वै ॥ पथि गतेर्भु वनानि कृतानि वा कथय केन भवानि नवानि च ॥ ११ ॥

भा. टी. तृ. अ. ५

युक्त किये ॥ ८ ॥ हे मातः! यदि आपकी विषममति नहीं है तो यह जगत् अनेकप्रकारका क्यों किया है? राजा मंत्री भूपति दासजन तथा धनी निर्धनींसे युक्त क्यों किया है? ॥९॥ तुम्हारे तीनों गुण सृजन पालन संहारमें स्थित हैं उन्हींसे आपने हरि हर और ब्रह्माजीको जगत्के कारणरूप निर्माण किया है ॥ १० ॥ मैंने विष्णु और ब्रह्माजीने विमानमें स्थित हुए तुमको जाना मार्गमें स्थित हुए हमने अनेक लोक देखे कहो वह किसके किये हैं? क्या नवीन हैं? ॥ ११ ॥

इस देवीपुराण की फोटोकॉपी में स्पष्ट है कि श्री शिव जी ने अपनी माता देवी दुर्गा से दुःखी मन से कहा कि हे मातः! यदि आप हम पर दयालु हैं तो मेरे को तमगुण युक्त क्यों उत्पन्न किया, विष्णु को सतगुण तथा ब्रह्मा को रजगुण युक्त क्यों उत्पन्न किया? यह भाव व्यक्त करने का अर्थ यह है कि ये तीनों भी समझते हैं कि यहाँ सब जीव दुःखी हैं।

इनकी उत्पत्ति का ब्रह्मा का रजगुण कारण है जिससे प्रभावित होकर परवश हुए नर-मादा मिलन करते हैं। जीव उत्पन्न होते हैं। ऋषियों ने कामदेव से बचने के लिए घोर तप किए। एकांत वास किया। लेकिन अंत में हार गए। स्त्री भोग किया। विष्णु जी के सतगुण के प्रभाव से एक-दूसरे में मोह उत्पन्न होता है। जैसे द्रोणाचार्य को पता चला कि उनका पुत्र अश्वथामा युद्ध में मर गया तो वह पुत्र मोह के कारण हथियार भी नहीं उठा सका। इतना बेहाल हो गया कि युद्ध नहीं कर सका। कितना बलवान निपुण योद्धा धनुषधारी था। कतई टूट गया। जब श्रवण को राजा दशरथ का तीर लगा और वह मर गया। श्रवण भक्त के माता-पिता को पता चला तो रो-रो कर तड़फ-तड़फकर प्राण त्याग दिए तथा राजा दशरथ को श्राप भी दे दिया कि तुम भी हमारी तरह पुत्र वियोग में मरोगे। ऐसा ही हुआ। जब श्री रामचन्द्र पुत्र दशरथ वनवास में जाने लगे तो दशरथ राजा पुत्र मोह के कारण पुत्र को देखने के लिए महल पर चढ़ गया। कुछ दूर रामचन्द्र चला गया तो महल के ऊपर बने चौबारे के ऊपर चढ़कर देखने लगा। फिर चौबारे की तीन फुट ऊँची मंडेर पर चढ़ गया। पैर फिसलकर गिर गया। गिरते ही मर गया। यह सतगुण विष्णु से स्थिति होती है यानि एक-दूसरे से मोह बनाकर काल के जाल में फंसे रहें। शिव जी के तमगुण से क्रोधवश जीव झगड़ा करके कत्ल कर देता है। राजा लोग आपस में लड़-मरते हैं। हजारों सैनिक मारे जाते हैं। इस प्रकार संहार का कार्य श्री शिव जी तमगुण से होता है। यह सब काल ब्रह्म करवा रहा है।

इसलिए शिव जी ने दुःखी मन से अपनी माता देवी दुर्गा से प्रश्न किया था। काल ब्रह्म ने देवी जी को सख्त हिदायत दे रखी है कि मेरा व मेरे षड़यंत्र का भेद किसी को नहीं बताएगी। अपने

पुत्रों को भी नहीं बताना है। यदि पता चल गया तो जब सतपुरूष का भेजा संत आएगा तो सब उसकी शरण में जाकर सत्य साधना करके मेरे लोक से चले जाएँगे। मेरी क्षुधा (भूख) कैसे शांत होगी? काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) के डर से देवी किसी को यह भेद नहीं बताती। परमेश्वर कबीर जी ने आकर यह भेद बताया है। दास (रामपाल दास) ने समझाया है।

☛ उपरोक्त प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शंकर जी हैं। ये ही तीन देवता हैं, ये ही तीन गुण हैं।

प्रश्न 8 :- परमात्मा को अजन्मा, अजर-अमर कहते हैं। उपरोक्त प्रकरण तथा प्रमाणों से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा श्री विष्णु तथा श्री शंकर तीनों नाशवान हैं, फिर अविनाशी परमात्मा कौन है, क्या ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर और काल ब्रह्म परमात्मा नहीं हैं? प्रमाण सहित बताऐं :-

उत्तर :- पहले स्पष्ट करता हूँ कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु, श्री शंकर तथा ब्रह्म परमात्मा है या नहीं। यह तो आपने अपने प्रश्न में ही सिद्ध कर दिया कि परमात्मा तो अजन्मा अर्थात् जिसका कभी जन्म न हुआ हो, वह होता है, पूर्वोक्त विवरण तथा प्रमाणों से सिद्ध हो चुका है कि ब्रह्मा, विष्णु और शंकर के माता-पिता हैं। इनका पिता ब्रह्म भी नाशवान है, इसका भी जन्म हुआ है, इससे स्वसिद्ध हुआ कि ये परमात्मा नहीं हैं। अब प्रश्न रहा फिर अविनाशी कौन है? इसके उत्तर में श्री मद्भगवत गीता से ही प्रमाणित करते हैं कि अविनाशी परमात्मा गीता ज्ञान देने वाले (ब्रह्म) से अन्य है। श्री मद्भगवत गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ने अपनी स्थिति स्पष्ट कर दी कि मेरी उत्पत्ति हुई है, मैं जन्मता-मरता हूँ, अर्जुन मेरे और तेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, मैं भी नाशवान हूँ। गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में कहा है कि अविनाशी तो उसको जान जिसको मारने में कोई भी सक्षम नहीं है और जिस परमात्मा ने सर्व की रचना की है, अविनाशी परमात्मा का यह प्रथम प्रमाण हुआ।

❖ प्रमाण नं. 2 : श्री मद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरुष (प्रभु) कहे हैं। गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में कहा है कि इस लोक में दो पुरूष प्रसिद्ध हैं :- क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष। ये दोनों प्रभु तथा इनके अन्तर्गत सर्व प्राणी नाशवान हैं, आत्मा तो सबकी अमर है। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि उत्तम पुरुष अर्थात् पुरूषोत्तम तो कोई अन्य ही है, जिसे परमात्मा कहा गया है जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है, वह वास्तव में अविनाशी है।

गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है कि जो साधक केवल जरा (वद्धावस्था), मरण (मत्यु), दुःख से छूटने के लिए प्रयत्न करते हैं। वे ''तत् ब्रह्म'' को जानते हैं, सब कर्मों तथा सम्पूर्ण अध्यात्म से परिचित हैं। गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा कि "तत् ब्रह्म" क्या है? गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि वह "परम अक्षर ब्रह्म'' है अर्थात् परम अक्षर पुरूष है। (पुरूष कहो चाहे ब्रह्म) गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में जो ''उत्तम पुरूषः तु अन्यः परमात्मा इति उदाहृतः'' कहा है, वह "परम अक्षर ब्रह्म" है, इसी को पुरूषोत्तम कहा है।

❑ स्पष्टीकरण :- गीता अध्याय 15 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं उन सर्व प्राणियों से उत्तम अर्थात् शक्तिमान हूँ जो मेरे 21 ब्रह्माण्डों में रहते हैं, इसलिए लोकवेद अर्थात् दन्त कथा के आधार से मैं पुरुषोत्तम प्रसिद्ध हूँ। वास्तव में पुरुषोत्तम तो गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में स्पष्ट कर दिया। उत्तम पुरूष अर्थात् पुरूषोत्तम तो क्षर पुरुष (गीता ज्ञान दाता) तथा अक्षर पुरुष (जो 7 शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है) से अन्य ही है, वही परमात्मा कहा जाता है। वह सर्व का

धारण-पोषण करता है, वास्तव में अविनाशी है। वह "परम अक्षर ब्रह्म" है जो असंख्य ब्रह्माण्डों का मालिक है जो सर्व सजनहार है, कुल का मालिक है अर्थात् परमात्मा है।

प्रश्न 9 :- अक्षर का अर्थ अविनाशी होता है। आपने गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में भी अक्षर पुरूष को भी नाशवान बताया है, स्पष्ट करें।

उत्तर :- यह सत्य है कि "अक्षर" का अर्थ अविनाशी होता है, परन्तु प्रकरणवश अर्थ अन्य भी होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में कहा है कि क्षर और अक्षर ये दो पुरूष (प्रभु) इस लोक में है, ये दोनों नाशवान हैं तथा इनके अन्तर्गत जितने जीव हैं, वे भी नाशवान हैं, आत्मा किसी की भी नहीं मरती। फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में स्पष्ट किया है कि पुरूषोत्तम तो उपरोक्त दोनों प्रभुओं से अन्य है। वही सबका धारण-पोषण करने वाला वास्तव में अविनाशी है। गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में तत् ब्रह्म को परम अक्षर ब्रह्म कहा है। अक्षर का अर्थ अविनाशी है, परन्तु यहाँ परम अक्षर ब्रह्म कहा है। इससे भी सिद्ध हुआ कि अक्षर से आगे परम अक्षर ब्रह्म है, वह वास्तव में अविनाशी है।

❖ प्रमाण :- जैसे ब्रह्मा जी की आयु 100 वर्ष बताई जाती है, देवताओं का वर्ष कितने समय का है? सुनो! चार युग (सत्ययुग, त्रेतायुग, द्वापरयुग तथा कलयुग) का एक चतुर्युग होता है जिसमें मनुष्यों के 43,20,000 (त्रितालीस लाख बीस हजार) वर्ष होते हैं। इस प्रकार बने 1008 चतुर्युग का ब्रह्मा जी का दिन और इतनी ही रात्रि होती है, ऐसे 30 दिन-रात्रि का एक महीना तथा 12 महीनों का ब्रह्मा जी का एक वर्ष हुआ। ऐसे 100 (सौ) वर्ष की श्री ब्रह्मा जी की आयु है।

श्री विष्णु जी की आयु श्री ब्रह्मा जी से 7 गुणा है। = 700 वर्ष।

श्री शंकर जी की आयु श्री विष्णु जी से 7 गुणा अधिक = 4900 वर्ष।

ब्रह्म (क्षर पुरूष) की आयु = 70 हजार शंकर की मत्यु के पश्चात् एक ब्रह्म की मत्यु होती है अर्थात् क्षर पुरूष की मत्यु होती है। इतने समय का अक्षर पुरूष का एक युग होता है।

अक्षर पुरूष की आयु :- गीता अध्याय 8 श्लोक 17 में कहा है :-

सहंस्र युग पर्यन्तम् अहः यत् ब्रह्मणः विदुः।
रात्रिम् युग सहंस्रान्तम् ते अहोरात्रा विदः जनाः।। (17)

अनुवाद :- आज तक सर्व अनुवादकर्ताओं ने उचित अनुवाद नहीं किया। सबने ब्रह्मा का एक हजार चतुर्युग लिखा है, यह गलत है।

पेश है गीता अध्याय 8 श्लोक 17 के अनुवाद की फोटोकॉपी जो गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित है :-

सहस्त्रयुगपर्यन्तम्, अहः, यत्, ब्रह्मणः, विदुः,
रात्रिम्, युगसहस्त्रान्ताम्, ते, अहोरात्रविदः, जनाः ॥ १७ ॥

हे अर्जुन!—

ब्रह्मणः	= ब्रह्माका	युगसहस्त्रान्ताम्	= एक हजार चतुर्युगीतककी अवधिवाली
यत्	= जो	(ये)	= जो पुरुष
अहः	= एक दिन है, (उसको)	विदुः	= तत्त्वसे जानते हैं, *
सहस्त्रयुगपर्यन्तम्	= एक हजार चतुर्युगीतककी अवधिवाला (और)	ते	= वे
		जनाः	= योगीजन
रात्रिम्	= रात्रिको (भी)	अहोरात्रविदः	= कालके तत्त्वको जाननेवाले हैं।

मूल पाठ में "सहस्र युग" लिखा है, न कि सहस्र चतुर्युग। इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 17 का अनुवाद ऐसे बनता है :- (ब्रह्मणः) अक्षर पुरूष का (यत) जो (अहः) दिन है वह (सहस्रयुग प्रयन्तम्) एक हजार युग की अवधि वाला और (रात्रिम्) रात्रि को भी (युग सहस्रान्तम्) एक हजार युग की अवधि वाली जो पुरूष (विदुः) जानते हैं (ते) वे (जना) व्यक्ति (अहोरात्र) दिन-रात को (विदः) जानने वाले हैं।

भावार्थ :- इस श्लोक में "ब्रह्मा" शब्द मूल पाठ में नहीं है और न ही "चतुर युग" शब्द मूल पाठ में है, इसमें "ब्रह्मणः" शब्द है जिसका अर्थ सचिदानन्द ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म होता है, परंतु प्रकरण अनुसार ब्रह्मणः का अर्थ ब्रह्म से अन्य परब्रह्म (अक्षर ब्रह्म) भी होता है।

❖ प्रमाण :- गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ब्रह्मणः का अर्थ सचिदानन्द घन ब्रह्म किया है, वह अनुवादकों ने ठीक किया है। इस गीता अध्याय 8 श्लोक 17 में आयु का प्रकरण है। इसलिए यहाँ पर "ब्रह्मण" का अर्थ "अक्षर ब्रह्म" बनता है, यहाँ अक्षर पुरूष की आयु की जानकारी दी है। अक्षर पुरूष का एक दिन उपरोक्त एक हजार युग का होता है। {70 हजार शंकर की मत्यु के पश्चात् एक क्षर पुरूष की मत्यु होती है, वह समय एक युग अक्षर पुरूष का होता है।} ऐसे बने हुए एक हजार युग का अक्षर पुरूष का दिन तथा इतनी ही रात्रि होती है, ऐसे 30 दिन रात्रि का एक महीना तथा 12 महीनों का अक्षर पुरूष का एक वर्ष तथा ऐसे 100 वर्ष की अक्षर पुरूष की आयु है। इसके पश्चात् इसकी मत्यु होती है, इसलिए गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष दोनों नाशवान कहे हैं। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में जो वास्तव में अविनाशी परमात्मा कहा है। यह परमात्मा सर्व प्राणियों के नष्ट होने पर भी नाश में नहीं आता।

पेश है गीता अध्याय 17 श्लोक 23 की फोटोकॉपी जिसमें ब्रह्मणः का अर्थ 'सच्चिदानंद घन ब्रह्म' किया है :-

ॐ, तत्, सत्, इति, निर्देशः, ब्रह्मणः, त्रिविधः, स्मृतः,
ब्राह्मणाः, तेन, वेदाः, च, यज्ञाः, च, विहिताः, पुरा ॥ २३ ॥

और हे अर्जुन!—

ॐ	= ॐ,	**तेन**	= उसीसे
तत्	= तत्,	**पुरा**	= सृष्टिके आदिकालमें
सत्	= सत्—		
इति	= ऐसे (यह)	**ब्राह्मणाः**	= ब्राह्मण
त्रिविधः	= तीन प्रकारका	**च**	= और
ब्रह्मणः	= सच्चिदानन्दघन ब्रह्मका	**वेदाः**	= वेद
		च	= तथा
निर्देशः	= नाम	**यज्ञाः**	= यज्ञादि
स्मृतः	= कहा है;	**विहिताः**	= रचे गये।

प्रमाण :- गीता अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में स्पष्ट है कि वह परम अक्षर ब्रह्म सब प्राणियों के नष्ट होने पर भी कभी नष्ट नहीं होता।

उदाहरण :- जैसे सफेद मिट्टी के बने कप-प्लेट होते हैं, उनका ज्ञान है कि हाथ से छूटे और पक्के फर्श पर गिरे और टूटे अर्थात् नाशवान "क्षर" है, यह स्थिति तो क्षर पुरूष की जानो।

2. दूसरे कप-प्लेट स्टील (इस्पॉत) के बने हों, वे बहुत समय उपरान्त जंग लगकर नष्ट होते हैं, शीघ्र नहीं टूटते व नष्ट नहीं होते। मिट्टी के बने कप-प्लेट की तुलना में स्टील के कप-प्लेट चिर-स्थाई हैं, अविनाशी प्रतीत होते हैं, परन्तु हैं नाशवान। इसी प्रकार स्थिति "अक्षर पुरूष" की जानो।

3. तीसरे कप-प्लेट सोने के बने हों। वे कभी नष्ट नहीं होते, उनको जंग नहीं लगता। यह स्थिति "परम अक्षर ब्रह्म" की जानो। यह वास्तव में अविनाशी हैं, इसलिए प्रकरणवश "अक्षर" का अर्थ नाशवान भी होता है, वास्तव में अक्षर का अर्थ अविनाशी होता है।

उदाहरण के लिए :- गीता अध्याय 8 श्लोक 11 में मूल पाठ =

यत् अक्षरम् वेद विदः वदन्ति विशन्ति यत् यतयः बीतरागाः।
यत् इच्छन्तः ब्रह्मचर्यम चरन्ति तत् ते पदम् संग्रहेण प्रवक्ष्ये।।(11)

अनुवाद : इस श्लोक में "अक्षर" का अर्थ अविनाशी परमात्मा के लिए हैः-(वेद विदः) तत्वदर्शी सन्त अर्थात् वेद के तात्पर्य को जानने वाले महात्मा (यत्) जिसे (अक्षरम्) अविनाशी (वदन्ति) कहते हैं। (यतयः) साधना रत (बीतरागा) आसक्ति रहित साधक (यत्) जिस लोक में (विशन्ति) प्रवेश करते हैं और (यत्) जिस परमात्मा को (इच्छन्तः) चाहने वाले साधक (ब्रह्म चर्यम) ब्रह्मचर्य अर्थात् शिष्य परम्परा का (चरन्ति) आचरण करते हैं, (तत्) उस (पदम्) पद को (ते) तेरे लिए मैं (संग्रहेण) संक्षेप में (प्रवक्ष्ये) कहूँगा। इस श्लोक में "अक्षर" का अर्थ अविनाशी परमात्मा ठीक है।

कबीर जी ने सूक्ष्म वेद में कहा है कि -

गुरू बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुस छिड़े मूढ़ किसाना।

गुरू बिन वेद पढ़े जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी।।

प्रश्न 10 : आप पूर्ण मोक्ष किसे मानते हैं?

उत्तर :- गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में वर्णन है कि तत्वदर्शी सन्त की प्राप्ति के पश्चात् तत्वज्ञान रूपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर अर्थात् अच्छी तरह ज्ञान समझकर उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की (सत्यलोक की) खोज करनी चाहिए। जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते अर्थात् उनका जन्म कभी नहीं होता। जिस परमात्मा ने सर्व रचना की है, केवल उसी की भक्ति पूजा करो। पूर्ण मोक्ष उसी को कहते हैं जिसकी प्राप्ति के पश्चात् पुनः जन्म न हो। जन्म-मरण का चक्र सदा के लिए समाप्त हो जाए।

प्रश्न 11 : क्या गीता ज्ञान दाता ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष संभव है?

उत्तर : नहीं।

प्रश्न 12 : गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में प्रमाण है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन! मुझे प्राप्त होकर पुनर्जन्म नहीं होता। आप कैसे कहते हैं कि ब्रह्म भक्ति से पूर्ण मोक्ष संभव नहीं।

उत्तर : श्री देवी महापुराण (सचित्र मोटा टाईप केवल हिन्दी गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) के सातवें स्कन्ध के अध्याय 36 में प्रमाण है कि श्री देवी जी ने राजा हिमालय को उपदेश देते हुए कहा है कि हे राजन! अन्य सब बातों को छोड़कर मेरी भक्ति भी छोड़कर केवल एक ऊँ नाम का जाप कर, "ब्रह्म" प्राप्ति का यही एक मंत्र है, इससे संसार के उस पार जो ब्रह्म है, उसको पा जाओगे, तुम्हारा कल्याण हो। वह ''ब्रह्म'' ब्रह्मलोक रूपी दिव्य आकाश में रहता है।

पेश है श्रीमद् देवीभागवत (देवी पुराण) के सातवें स्कन्ध के के अध्याय 36 से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

स्कन्ध] * देवीके द्वारा हिमालयको ज्ञानोपदेश—ब्रह्मस्वरूपका वर्णन * ५७३

देवीके द्वारा हिमालयको ज्ञानोपदेश—ब्रह्मस्वरूपका वर्णन

श्रीदेवीजी कहने लगीं—पर्वतराज! इस प्रकार योगयुक्त होकर मुझ ब्रह्मस्वरूपा देवीका ध्यान करे। यह ध्यान आसनपर भलीभाँति बैठकर अहैतुकी भक्तिके साथ करना चाहिये। उस ब्रह्मका क्या स्वरूप है—यह बतलाया जाता है। जो प्रकाशस्वरूप, सबके अत्यन्त समीपमें स्थित, हृदयरूप गुहामें स्थित होनेके कारण 'गुहाचर' नामसे प्रसिद्ध और महान् पद अर्थात् परम प्राप्य है—जितने भी चेष्टा करनेवाले, श्वास लेनेवाले, आँखोंको खोलने-मूँदनेवाले प्राणी हैं, सब उस ब्रह्ममें ही समर्पित हैं, उसीमें स्थित हैं। सत्, असत् सब कुछ वही है, वही सबके द्वारा वरण करनेयोग्य सर्वोत्कृष्ट है। वह समस्त प्रजाके ज्ञानसे परे है—अर्थात् किसीकी बुद्धिमें आनेवाला नहीं है। यह तुम जानो। जो परम प्रकाशरूप है, जो सूक्ष्मसे भी अत्यन्त सूक्ष्म है, जिसमें सम्पूर्ण लोक और उन लोकोंमें निवास करनेवाले प्राणी स्थित हैं,

वही यह 'अक्षर ब्रह्म' है, वही सबके प्राण है, वही सबकी वाणी है और वही सबके मन है। वह यह परम सत्य और अमृत—अविनाशी तत्त्व है। सौम्य! उस वेधनेयोग्य लक्ष्यका तुम वेधन करो—मन लगाकर उसमें तन्मय हो जाओ।

सौम्य! उपनिषद्में कथित महान् अस्त्ररूप धनुष लेकर उसपर उपासनाद्वारा तीक्ष्ण किया हुआ बाण संधान करो और फिर भावानुगत चित्तके द्वारा उस बाणको खींचकर उस अक्षररूप ब्रह्मको ही लक्ष्य बनाकर वेधन करो। प्रणव (ॐ) धनुष है, जीवात्मा बाण है और ब्रह्मको उसका लक्ष्य कहा जाता है। प्रमादरहित—अत्यन्त तत्परतासे साधन-संलग्न होकर उसका वेधन करना चाहिये और बाणके समान उसमें तन्मय हो जाना चाहिये। जिस ब्रह्ममें स्वर्ग, पृथ्वी, अन्तरिक्ष (स्वर्ग और पृथ्वीके बीचका आकाश), सम्पूर्ण प्राणोंके सहित इन्द्रिययुक्त मनबुद्धिरूप अन्तःकरण ओत-प्रोत है, उस एकमात्र परमात्माको ही जाने, दूसरी सब बातोंको छोड़ दे। यही अमृतरूप परमात्माके पास पहुँचानेवाला पुल है। संसार-समुद्रसे पार होकर अमृतस्वरूप परमात्माको प्राप्त करानेका यही सुलभ साधन है।

इस आत्माका 'ॐ' के जपके साथ ध्यान करो। इससे अज्ञानमय अन्धकारसे सर्वथा परे और संसार-समुद्रसे उस पार जो ब्रह्म है, उसको पा जाओगे। तुम्हारा कल्याण हो। जो सदा जाननेवाला, जो सब ओरसे सब कुछ जाननेवाला है, जिसकी जगत्में यह महिमा है, वह यह सबका आत्मा ब्रह्म ब्रह्मलोकरूप दिव्य आकाशमें स्थित है।

भावार्थ है कि ब्रह्म साधना का केवल एक ओम् (ॐ) नाम का जाप है, इससे ब्रह्म की प्राप्ति होती है और वह साधक ब्रह्म लोक में चला जाता है। इसी गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक सहित सर्व लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्मलोक में गए साधक का भी पुनर्जन्म होता है। ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष नहीं होता। इस गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का अनुवाद (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित गीता में तथा अन्य प्रकाशन की गीता में) गलत किया है।

पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 8 श्लोक 16 की (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) :-

आब्रह्मभुवनात्, लोकाः, पुनरावर्तिनः, अर्जुन,
माम्, उपेत्य, तु, कौन्तेय, पुनर्जन्म, न, विद्यते॥ १६॥

क्योंकि—

अर्जुन	= हे अर्जुन!	**माम्**	= मुझको
आब्रह्मभुवनात्	= ब्रह्मलोकपर्यन्त	**उपेत्य**	= प्राप्त होकर
लोकाः	= सब लोक		
पुनरावर्तिनः	= पुनरावर्ती* हैं,	**पुनर्जन्म**	= पुनर्जन्म
तु	= परंतु	**न**	= नहीं
कौन्तेय	= हे कुन्तीपुत्र!	**विद्यते**	= होता;

❖ इसका वास्तविक अनुवाद इस प्रकार है :- ब्रह्म लोक तक सर्व लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्म लोक में भी गए व्यक्तियों का पुनर्जन्म होता है जो यह नहीं जानते हैं। हे अर्जुन! मुझे प्राप्त

होकर भी उनका पुनर्जन्म होता है, इस श्लोक में "विद्यते" शब्द का अर्थ "जानना" बनता है। गीता अध्याय 6 श्लोक 23 में ''विद्यात्'' शब्द का अर्थ जानना किया है। यहाँ इस श्लोक में भी ''विद्यते'' का अर्थ ''जानना'' बनता है। देखें इसी पुस्तक में इसी श्लोक की फोटोकापी में। अधिक स्पष्ट करने के लिए गीता अध्याय 8 श्लोक 15 पर्याप्त है।

मूल पाठ :–माम् उपेत्य पुनर्जन्म दुःखालयम् अशाश्वतम्।
न आप्नुवन्ति महात्मनः संसिद्धिम परमाम् गताः।। (8/15)

अनुवाद :- (माम) मुझे प्राप्त होकर (पुनर्जन्म) पुनर्जन्म होता है जो (अशाश्वतम्) नाशवान जीवन (दुःखालयम) दुखों का घर है। (परमाम्) परम (संसिद्धिम् गता) सिद्धि को प्राप्त (महात्मयः) महात्माजन (न आप्नुवन्ति) पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होते।(गीता अध्याय 8 श्लोक 15)

भावार्थ :- गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मुझे प्राप्त होकर तो दुःखों का घर यह क्षणभंगुर जीवन जन्म-मरण होता है। जो महात्मा परम गति को प्राप्त हो जाते हैं, उनका पुनर्जन्म नहीं होता।

❖ विचारें :- यदि गीता अध्याय 8 श्लोक 1 से 10 तक का सारांश निकालें जो इस प्रकार है :- अर्जुन ने पूछा (गीता अध्याय 8 श्लोक 1) कि तत् ब्रह्म क्या है? गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में उत्तर दिया कि वह "परम अक्षर ब्रह्म" है।

फिर गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 8 श्लोक 5 व 7 में अपनी भक्ति करने को कहा है तथा गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 में "परम अक्षर ब्रह्म" की भक्ति करने को कहा है। अपनी भक्ति का मन्त्र गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में बताया है कि मुझ ब्रह्म का केवल एक ओम् (ॐ) अक्षर है। उच्चारण करके स्मरण करता हुआ जो शरीर त्याग कर जाता है, वह परम गति को प्राप्त होता है। पूर्व में श्री देवी पुराण से सिद्ध कर आए हैं कि ॐ का जाप करके ब्रह्म लोक प्राप्त होता है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में स्पष्ट है कि ब्रह्म लोक में गए साधक का भी पुनर्जन्म होता है। इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में ॐ नाम के जाप से होने वाली परम गति का वर्णन है, परन्तु गीता अध्याय 8 श्लोक 8, 9, 10 में जिस सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम दिव्य पुरूष की भक्ति करने को कहा है, उसका मन्त्र गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में लिखा है।

ॐ, तत्, सत्, इति, निर्देशः, ब्रह्मणः, त्रिविधः, स्मृतः
ब्राह्मणाः, तेन, वेदाः, च, यज्ञाः, च विहिताः, पुरा।।

अनुवाद :- सचिदानन्द घन ब्रह्म की भक्ति का मन्त्र ''ॐ तत् सत्'' है।

"ॐ'' मन्त्र ब्रह्म यानि क्षर पुरूष का है। "तत्" यह सांकेतिक है जो अक्षर पुरूष का है। ''सत्'' मंत्र भी सांकेतिक मन्त्र है जो परम अक्षर ब्रह्म का है। इन तीनों मन्त्रों के जाप से वह परम गति प्राप्त होगी जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कही है कि जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते।

यदि गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का यह अर्थ सही मानें कि मुझे प्राप्त होने वाले का पुनर्जन्म नहीं होता तो गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2, गलत सिद्ध हो जाते हैं जिनमें गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। मेरी उत्पत्ति को न देवता जानते, न महर्षिगण तथा न सिद्ध जानते। विचारणीय विषय यह है कि जब साध्य इष्ट का ही जन्म-मृत्यु होता है तो साधक को वह मोक्ष कैसे प्राप्त हो सकता है जिससे पुनर्जन्म नहीं होता है।

इसलिए गीता अध्याय 8 श्लोक 16 का अनुवाद जो मैंने (रामपाल दास ने) ऊपर किया है, वही सही है कि गीता ज्ञानदाता ने कहा है कि ब्रह्म लोक तक सब लोक पुनरावर्ती में हैं अर्थात् ब्रह्मलोक में गए प्राणी भी लौटकर संसार में जन्म को प्राप्त होते हैं। जो यह नहीं जानते, वे मेरी भक्ति करके भी पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं। इसीलिए तो गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे अर्जुन! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा, उस परमेश्वर की कपा से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परमधाम अर्थात् सत्यलोक को प्राप्त होगा। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में है कि तत्वदर्शी सन्त से तत्वज्ञान प्राप्त करके उस तत्वज्ञान रुपी शस्त्र से अज्ञान को काटकर उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते।

जिस परमेश्वर से संसार रुपी वक्ष की प्रवति विस्तार को प्राप्त हुई है अर्थात् जिस परमेश्वर ने संसार की रचना की है। गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि केवल उसी की भक्ति कर, सर्व का उसी से कल्याण सम्भव है।

❖ प्रमाणित हुआ कि ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष सम्भव नहीं है। केवल पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) की भक्ति से ही पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

प्रश्न 13 : ओम् (ॐ) यह मन्त्र तो ब्रह्म का जाप हुआ, फिर यह क्यों कह रहे हो कि ब्रह्म की भक्ति से पूर्ण मोक्ष नहीं होता। आपने बताया कि गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ''ॐ तत् सत्'' इस मन्त्र के जाप से पूर्ण मोक्ष होता है। इस मन्त्र में भी तो ओम् (ॐ) मन्त्र है।

उत्तर : जैसे इन्जीनियर या डॉक्टर बनने के लिए शिक्षा की आवश्यकता होती है। पहले प्रथम कक्षा पढ़नी पड़ती है, फिर धीरे-धीरे पाँचवीं-आठवीं, इस प्रकार दसवीं कक्षा पास करनी पड़ती है। उसके पश्चात् आगे पढ़ाई करनी होती है। फिर ट्रेनिंग करके इन्जीनियर या डॉक्टर बना जाता है। ठीक इसी प्रकार श्री ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश तथा देवी की साधना करनी पड़ती है, मैं स्वयं करता हूँ तथा अपने अनुयाइयों से कराता हूँ। यह तो पाँचवी कक्षा तक की पढ़ाई अर्थात् साधना जानें, दूसरे शब्दों में पाँचों कमलों को खोलने की साधना है और ब्रह्म की साधना दसवीं कक्षा तक की पढ़ाई जानें अर्थात् ब्रह्मलोक तक की साधना है जो ''ॐ'' (ओम्) का जाप करना है और अक्षर पुरुष की साधना को 14वीं कक्षा की पढ़ाई अर्थात् साधना जानो जो ''तत्'' मन्त्र का जाप है। ''तत्'' मन्त्र तो सांकेतिक है, वास्तविक मन्त्र तो इससे भिन्न है जो उपदेशी को ही बताया जाता है।

परम अक्षर पुरुष की साधना इन्जीनियर या डॉक्टर की पढ़ाई अर्थात् साधना जानो जो ''सत्'' शब्द से करनी होती है। यह ''सत्'' मन्त्र भी सांकेतिक है। वास्तविक मन्त्र भिन्न है जो उपदेशी को बताया जाता है। इसको सारनाम भी कहते हैं।

इसलिए अकेले ''ब्रह्म'' के नाम ओम् (ॐ) से पूर्ण मोक्ष प्राप्त नहीं हो सकता। ''ॐ'' नाम का जाप ब्रह्म का है। इसकी साधना से ब्रह्म लोक प्राप्त होता है जिसके विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में कहा है कि ब्रह्म लोक में गए साधक भी पुनर्जन्म को प्राप्त होते हैं। पुनर्जन्म है तो पूर्ण मोक्ष नहीं हुआ जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि परमात्मा के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक कभी लौटकर पुनर्जन्म में नहीं आता। वह पूर्ण मोक्ष पूर्ण गुरु से शास्त्रानुकूल भक्ति प्राप्त करके ही संभव है। विश्व में वर्तमान में मेरे (संत रामपाल दास) अतिरिक्त किसी के पास नहीं है। जो ॐ, तत्, सत् का स्मरण करते हैं, वे ब्रह्मलोक में ॐ नाम

का प्रतिफल प्राप्त नहीं करते। इसके स्मरण की कमाई ब्रह्म को दे देते हैं जिसके बदले में यह यानि काल ब्रह्म साधक को पाप मुक्त कर देता है।

प्रश्न 14 :- परमात्मा एक है या अनेक हैं? किस प्रभु की भक्ति करें?

उत्तर :- कुल का मालिक एक है। उसी की भक्ति करो।

संत गरीबदास जी ने कहा है :- "भजन करो उस रब का जो दाता है कुल सब का।"

संत गरीबदास जी के ग्रन्थ से राग आसावरी शब्द नं. 66 में बताया है :-

❖ **शब्द नं. 66 :-** भजन करौ उस रब का, जो दाता है कुल सब का।।टेक।। बिनां भजन भय मिटै न जम का, समझि बूझि रे भाई। सतगुरु नाम दान जिनि दीन्हा, याह संतौं ठहराई।।1।। सत कबीर नाम कर्ता का, कलप करै दिल देवा। सुमरन करै सुरति सै लापै, पावै हरि पद भेवा।।2।। आसन बंध पवन पद परचै, नाभी नाम जगावै। त्रिकुटी कमल में पदम झलकै, जा सें ध्यान लगावै।।3।। सब सुख भुक्ता जीवत मुक्ता, दुःख दालिद्र दूरी। ज्ञान ध्यान गलतांन हरी पद, ज्यौं कुरंग कसतूरी।।4।। गज मोती हसती कै मसतगि, उनमन रहै दिवानां। खाय न पीवै मंगल घूमें, आठ बखत गलतानां।।5।। ऐसैं तत पद के अधिकारी, पलक अलख सें जोरैं। तन मन धन सब अरपन करहीं, नेक न माथा मोरैं।।6।। बिनहीं रसना नाम चलत है, निरबांनी सें नेहा। गरीबदास भोडल में दीपक, छांनि नहीं सनेहा।।7।।66।।

❖ **सरलार्थ :- हे मानव! उस (रब) परमेश्वर भक्ति की करो जो सबका (दाता) धारण-पोषण करने वाला है। सबका मालिक है। हे भाई! विचार कर! संतों से ज्ञान समझ, भक्ति के बिना (जम) काल का भय नहीं मिटेगा। संतों ने यह निष्कर्ष निकाला है कि सतगुरू दीक्षा में नाम दान करे तो मोक्ष मिलता है। जिनको सतगुरू ने नाम दान दिया है, उनका मोक्ष हुआ है। उस (कर्त्ता) सबकी उत्पत्ति करने वाले परमेश्वर का नाम सत कबीर है। वह (दिल देवा) हृदय में निवास करने वाला परमेश्वर है। {जिस विषय में गीता अध्याय 18 श्लोक 61 में कहा है कि परमात्मा सब प्राणियों को उनके कर्मों के अनुसार भ्रमण करवाता है जो सबके हृदय में निवास करता है। गीता अध्याय श्लोक में कहा है कि हे भारत! तू सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा। उस परमात्मा की कृपा से ही तू परम शांति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।} वह परमेश्वर अपने भक्त से दिल से प्यार करता है। उसकी (कलप) कल्पना करो। सतगुरू द्वारा दिए नाम का स्मरण (सुरति) ध्यानपूर्वक करें, तब उस परमात्मा के परम पद (सतलोक स्थान) को प्राप्त करेगा। नाभि तथा त्रिकुटी आदि सब कमलों को खोलने वाले मंत्रों का जाप भी सतगुरू देता है। उनका जाप करके कमलों को खोलें। इससे इस संसार के सब सुख मिलेंगे। मार्ग भी मिलेगा। सतलोक जाते समय कोई बाधा नहीं आएगी। सब दुःख तथा (दालिद्र) निर्धनता समाप्त हो जाएँगे। स्मरण में ध्यान ऐसे लगाए जैसे (कुरंग) मृग कस्तूरी में लगाता है। उसके लिए तड़फ जाता है। एक पल भी उसकी गंध बिना नहीं रहता। जैसे हाथी के मस्तिक के ऊपर की खाल में मोती बन जाता है। जिसके प्रभाव से हाथी मस्त रहता है, उसी में ध्यान रखता है। जो (तत् पद) उस खास अमर स्थान के अधिकारी हैं, वे ऐसे साधना करते हैं, परमात्मा से दोस्ती करते हैं। तन-मन-धन समर्पित कर देते हैं। (नेक न माथा मोरैं) कभी भी तन, मन, धन देने से आना-कानी नहीं करते। उन भक्तों का नाम बिना (रसना) जीभ के श्वांस द्वारा चलता है। संत गरीबदास जी ने कहा है कि उनकी भक्ति का प्रभाव छुपा नहीं रहता। जैसे दीपक को (भोडल) मोमी कागज यानि पोलीथीन से छुपाया जाए तो उसके**

प्रकाश की झलक दिखाई अवश्य देती है।

राग बिलावल का शब्द नं. 17 :- तत कहन कूं राम है, दूजा नहीं देवा। ब्रह्मा बिष्णु महेश से, जाकी करि हैं सेवा।।टेक।। जप तप तीर्थ थोथरे, जाकी क्या आशा। कोटि यज्ञ पुण्य दान से, जम कटै न फांसा।।1।। यहां देन वहां लेन है, योह मिटै न झगरा। वाह बिना पंथ की बाट है, पावै को दगरा।।2।। बिन इच्छा जो देत है, सो दान कहावै। फल बांचै नहीं तास का, अमरापुर जावै।।3।। सकल द्वीप नौ खंड के, क्षत्री जिन जीते। सो तो पद में ना मिले, विद्या गुण चीते।।4।। कोटि उनंचा पृथ्वी, जिन दीन्ही दाना। परशुराम अवतार कूं, कीन्ही कुरबाना।।5।। कंचन मेर सुमेर रे, आये सब माही। कामधेनु कल्पबृक्ष रे, सो दान कराहीं।।6।। सुर नर मुनिजन सेवहीं, सनकादिक ध्यावैं। शेष सहंस मुख रटत हैं, जाका पार न पावैं।।7।। ब्रह्मा बिष्णु महेश रे, देवा दरबारी। संख कल्प युग हो गये, जाकी खुल्है न तारी।।8।। सर्ब कला सम्पूर्णा रे, सब पीरन का पीरा। अनन्त लोक में गाज है, जाका नाम कबीरा।।9।। प्रलय संख्य असंख्य रे, पल मांहि बिहानी। गरीब दास निज नाम की, महिमा हम जानी।।10।।17।।

❖ **सरलार्थ :- राम तो सबको कहते हैं, परंतु पूर्ण ब्रह्म तो एक ही है। दूसरा कोई परमेश्वर नहीं है। ब्रह्मा, विष्णु, महेश जैसे भी उसकी पूजा करते हैं। परंतु साधना गलत है। तीर्थ, व्रत व्यर्थ हैं। इनकी क्या आशा लगाकर साधना करते हैं? करोड़ यज्ञ व दान करने से (यम) काल ब्रह्म का (फांसा) कर्मों का बंधन समाप्त नहीं होगा। यहाँ पथ्वी पर दान-धर्म किया, स्वर्ग में सुख भोगा। पुण्य खत्म होते ही फिर पथ्वी के ऊपर जन्म होगा। यह झगड़ा नहीं मिटता। बिना मनोकामना पूर्ति के जो निःस्वार्थ दान करता है, वह वास्तव में दान है। उस दान के फल की इच्छा नहीं करे। नाम जाप करे। वह (अमरापुर) अविनाशी नगर यानि सत्यलोक में जाता है। परशुराम ने पूरी पथ्वी के क्षत्रिय मार डाले थे। परंतु परशुराम भी काल जाल में रह गया। पापों का अंबार लेकर संसार से गया। सतपुरूष के दरबार में ब्रह्मा, विष्णु तथा महेश शेष जैसे तो दरबारी (नौकर) हैं। सतपुरूष सर्व कलाओं से परिपूर्ण है। सब पीरों का पीर है जिसकी अनंत लोक में धाक है। उसका नाम कबीर है। संत गरीबदास जी ने कहा है कि नाम की सच्ची साधना करके जो सतलोक में चले गए, वे कभी प्रलय में नष्ट नहीं होते। संखों असँख्यों प्रलय होती रही, उनके पल के समान भी नहीं हैं। निज नाम की महिमा ऐसी है जो हमने जानी है।**

राग बिलावल शब्द नं. 21 :- अविगत राम कबीर हैं, चकवै अविनाशी। ब्रह्मा विष्णु वजीर हैं, शिव करत खवासी।।टेक।। इन्द्र कोटि अनंत हैं, जाकै प्रतिहारा। बरन कुमेरं धर्मराय, ठाढे दरबारा।।1।। तेतीस कोटि देवता, ऋषि सहंस अठासी। वैष्णव कोटि अनंत हैं, गुण गावैं राशी।।2।। नौ जोगेश्वर नाद भरि, सुर पूरै संखा। सनकादिक संगीत हैं, अबिचल गढ बंका।।3।। शेष गणेश रु सरस्वती, और लक्ष्मी राजैं। सावित्री गौरा रटैं, गण संख बिराजैं।।4।। अनंत कोटि मुनि साध हैं, गण गंधर्व ज्ञानी। अरपैं पिंड रु प्राण कूं, जहां संखौं दानी।।5।। सावंत शूर अनंत हैं, कुछ गिणती नाहीं। जती सती और शीलवंत, लीला गुण गाहीं।।6।। चंद्र सूर बिनती करैं, तारा गण गाढे। पांच तत्व हाजिर खड़े, हुकमी दर ठाढे।।7।। तीर्थ कोटि अनंत हैं, और नदी बिहंगा। ठारा भार तो कूं रटै, जल पवन तरंगा।।8।। अष्ट कुली परबत रटैं, धर अंबर ध्याना। महताब अगनि तो कूं जपैं, साहिब रहमाना।।9।। अर्स कुर्स पर सेज है, तन तबक तिराजी। एक पलक में करत हैं, सो राज बिराजी।।10।। अलख बिनानी कबीर कूं, रंग खूब चवाया। एक पानी की बूंद से, संसार बनाया।।11।। अनंत कोटि ब्रह्मण्ड हैं, कछू वार

न पारा। लख चौरासी खान का, तूं सिरजनहारा।।12।। सूक्ष्म रूप स्वरूपहै, बौह रंग बिनानी। गरीबदास के मुकट में, हाजिर प्रवानी।।13।।21।।

❖ सरलार्थ :- (अविगत) दिव्य परम पुरूष कबीर जी हैं। (चकवै) चक्रवर्ती {चक्रवर्ती राजा उसे कहते हैं जिसका राज्य पूरी पथ्वी पर होता था जो सब छोटे राजाओं का मालिक महाराजा होता था। कबीर सतपुरूष का राज्य सम्पूर्ण लोकों पर जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश, ज्योति निरंजन तथा अक्षर पुरूष सहित सब छोटे देवों का मालिक महाराजा यानि महादेव है।} परमात्मा हैं, अविनाशी हैं। ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव भी इनकी (खवासी) गुलामी करते हैं। इन्द्र तथा तेतीस करोड़ देवता, अठासी हजार ऋषि, नौ योगेश्वर, सनकादिक चारों, शेषनाग, गणेश, सरस्वती, लक्ष्मी, सावित्री, पार्बती, शंखों गण, सब उसी के आदेश से चलते हैं। सबके ऊपर कबीर परमेश्वर का राज है। कबीर जी ने जल की बूंद से मानव शरीर कितना सुंदर बना रखा है। असँख्यों ब्रह्मण्डों को तथा चौरासी लाख प्रकार के जीवों को उत्पन्न करने वाले आप कबीर जी ही हैं। सबका सजनहार है। संत गरीबदास जी ने कहा है कि अनेकों रूपों में लीला करने वाला परमेश्वर मेरे सिर पर विराजमान है।

प्रश्न 15 :- वह परमात्मा कौन है जो कुल का मालिक है, कहाँ प्रमाण है?

उत्तर :- वह परमात्मा ''परम अक्षर ब्रह्म'' है जो कुल का मालिक है।

प्रमाण :- श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में है। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 का सारांश व भावार्थ है कि ''उल्टे लटके हुए वक्ष के समान संसार को जानो। जैसे वक्ष की जड़ें तो ऊपर हैं, नीचे तीनों गुण रुपी शाखाएं जानो। गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में यह भी स्पष्ट किया है कि तत्वदर्शी सन्त की क्या पहचान है? तत्वदर्शी सन्त वह है जो संसार रुपी वक्ष के सर्वांग (सभी भाग) भिन्न-भिन्न बताए।

☛ विशेष :- वेद मन्त्रों की जो आगे फोटोकॉपियाँ लगाई हैं, ये आर्यसमाज के आचार्यों तथा महर्षि दयानंद द्वारा अनुवादित हैं और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली द्वारा प्रकाशित हैं। जिनमें वर्णन है कि परमेश्वर स्वयं पथ्वी पर सशरीर प्रकट होकर कवियों की तरह आचरण करता हुआ सत्य अध्यात्मिक ज्ञान सुनाता है। (प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 86 मन्त्र 26-27, ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 82 मन्त्र 1-2, सुक्त 96 मन्त्र 16 से 20, ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 94 मन्त्र 1, ऋग्वेद मण्डल 9 सुक्त 95 मन्त्र 2, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 20 मन्त्र 1, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में) इन मन्त्रों में कहा है कि परमात्मा सर्व भवनों अर्थात् लोकों के उपर के लोक में विराजमान है। जब-जब पथ्वी पर अज्ञान की वद्धि होने से अधर्म बढ़ जाता है तो परमात्मा स्वयं सशरीर चलकर पथ्वी पर प्रकट होकर यथार्थ अध्यात्म ज्ञान का प्रचार लोकोक्तियों, शब्दों, चौपाईयों, साखियों, कविताओं के माध्यम से कवियों जैसा आचरण करके घूम-फिरकर करता है। जिस कारण से एक प्रसिद्ध कवि की उपाधि भी प्राप्त करता है। कपया देखें उपरोक्त मन्त्रों की फोटोकॉपी इसी पुस्तक के पष्ठ 314 पर।

परमात्मा ने अपने मुख कमल से ज्ञान बोलकर सुनाया था। उसे सूक्ष्म वेद कहते हैं। उसी को 'तत्व ज्ञान' भी कहते हैं। तत्वज्ञान का प्रचार करने के कारण परमात्मा ''तत्वदर्शी सन्त'' भी कहलाने लगता है। उस तत्वदर्शी सन्त रूप में प्रकट परमात्मा ने संसार रुपी वक्ष के सर्वांग इस प्रकार बताये :-

कबीर, अक्षर पुरुष एक वक्ष है, क्षर पुरुष वाकि डार। तीनों देवा शाखा हैं, पात रुप संसार।।

भावार्थ : वक्ष का जो हिस्सा पथ्वी से बाहर दिखाई देता है, उसको तना कहते हैं। जैसे संसार

रुपी वक्ष का तना तो अक्षर पुरुष है। तने से मोटी डार निकलती है वह क्षर पुरुष जानो, डार के मानो तीन शाखाऐं निकलती हों, उनको तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव) हैं तथा इन शाखाओं पर टहनियों व पत्तों को संसार जानों। इस संसार रुपी वक्ष के उपरोक्त भाग जो पथ्वी से बाहर दिखाई देते हैं। मूल (जड़ें), जमीन के अन्दर हैं। जिनसे वक्ष के सर्वांगों का पोषण होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरुष कहे हैं। श्लोक 16 में दो पुरुष कहे हैं ''क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष'' दोनों की स्थिति ऊपर बता दी है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16 में भी कहा है कि क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष दोनों नाशवान हैं। इनके अन्तर्गत जितने भी प्राणी हैं, वे भी नाशवान हैं। परन्तु आत्मा तो किसी की भी नहीं मरती। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि उत्तम पुरुष अर्थात् पुरुषोत्तम तो क्षर पुरुष और अक्षर पुरुष से भिन्न है जिसको परमात्मा कहा गया है। इसी प्रभु की जानकारी गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में है जिसको ''परम अक्षर ब्रह्म'' कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में इसी का वर्णन है। यही प्रभु तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। यह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है। मूल से ही वक्ष की परवरिश होती है, इसलिए सबका धारण-पोषण करने वाला परम अक्षर ब्रह्म है। जैसे पूर्व में गीता अध्याय 15 श्लोक 1-4 में बताया है कि ऊपर को जड़ (मूल) वाला, नीचे को शाखा वाला संसार रुपी वक्ष है। जड़ से ही वक्ष का धारण-पोषण होता है। इसलिए परम अक्षर ब्रह्म जो संसार रुपी वक्ष की जड़ (मूल) है, यही सर्व पुरुषों (प्रभुओं) का पालनहार इनका विस्तार (रचना करने वाला = सजनहार) है। यही कुल का मालिक है। यह वही है जो काशी शहर (भारत) में जुलाहा था। कबीर नाम से जाना जाता है।

प्रश्न 16 : क्या रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर (शिव) की पूजा (भक्ति) करनी चाहिए?

उत्तर : नहीं।

प्रश्न 17 : कहाँ प्रमाण है कि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर (शिव) की पूजा (भक्ति) नहीं करनी चाहिए?

उत्तर : श्री मद्भगवत गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15, 20 से 23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 23-24, गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में प्रमाण है कि जो व्यक्ति रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव की भक्ति करते हैं, वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझे भी नहीं भजते। (यह प्रमाण गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में है। फिर गीता अध्याय 7 के ही श्लोक 20 से 23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 23-24 में यही कहा है और क्षर पुरुष, अक्षर पुरुष तथा परम अक्षर पुरुष गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में जिनका वर्णन है), को छोड़कर श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी अन्य देवताओं में गिने जाते हैं। इन दोनों अध्यायों (गीता अध्याय 7 तथा अध्याय 9 में) में ऊपर लिखे श्लोकों में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जो साधक जिस भी उद्देश्य को लेकर अन्य देवताओं को भजते हैं, वे भगवान समझकर भजते हैं। उन देवताओं को मैंने कुछ शक्ति प्रदान कर रखी है। देवताओं के भजने वालों को मेरे द्वारा किए विधान के अनुसार कुछ लाभ मिलता है। परन्तु उन देवताओं की पूजा करने वाले अल्प बुद्धि वालों का वह फल नाशवान होता है। देवताओं को पूजने वाले देवताओं के लोक में जाते हैं। मेरे पुजारी मुझे प्राप्त होते हैं।

➢ तीनों देवताओं की पूजा करने वाले कैसे कर्म करते हैं। प्रमाण के लिए पेश हैं कुछ उदाहरणः-

विचार करें :- रावण ने भगवान शिव जी को मत्युंजय, अजर-अमर, सर्वेश्वर मान कर भक्ति की, दस बार शीश काट कर समर्पित कर दिया, जिसके बदले में युद्ध के समय दस शीश रावण को प्राप्त हुए, परन्तु मुक्ति नहीं हुई, राक्षस कहलाया। यह दोष रावण के गुरुदेव का है जिस नादान (नीम-हकीम) ने वेदों को ठीक से न समझ कर अपनी सोच से तमोगुण युक्त भगवान शिव को ही पूर्ण परमात्मा बताया तथा भोली आत्मा रावण ने झूठे गुरुदेव पर विश्वास करके जीवन व अपने कुल का नाश किया।

1. एक भस्मागिरी नाम का साधक था, जिसने शिव जी (तमोगुण) को ही ईष्ट मान कर शीर्षासन (ऊपर को पैर नीचे को शीश) करके 12 वर्ष तक साधना की, भगवान शिव को वचन बद्ध करके भस्मकण्डा ले लिया। भगवान शिव जी को ही मारने लगा। उद्देश्य यह था कि भस्मकण्डा प्राप्त करके भगवान शिव जी को मार कर पार्वती जी को पत्नी बनाऊँगा। भगवान श्री शिव जी डर के मारे भाग गए, फिर श्री विष्णु जी ने उस भस्मासुर को गंडहथ नाच नचा कर उसी भस्मकण्डे से भस्म किया। वह शिव जी (तमोगुण) का साधक राक्षस कहलाया। हरिण्यकशिपु ने भगवान ब्रह्मा जी (रजोगुण) की साधना की तथा राक्षस कहलाया।

2. एक समय आज (सन् 2006) से लगभग 335 वर्ष पूर्व हरिद्वार में हर की पैड़ियों पर (शास्त्र विधि रहित साधना करने वालों के) कुम्भ पर्व की परबी का संयोग हुआ। वहाँ पर सर्व (त्रिगुण उपासक) महात्मा जन स्नानार्थ पहुँचे। गिरी, पुरी, नाथ, नागा आदि भगवान श्री शिव जी (तमोगुण) के उपासक तथा वैष्णों भगवान श्री विष्णु जी (सतोगुण) के उपासक हैं। प्रथम स्नान करने के कारण नागा तथा वैष्णों साधुओं में घोर युद्ध हो गया। लगभग 25000 (पच्चीस हजार) त्रिगुण उपासक मत्यु को प्राप्त हुए। जो व्यक्ति जरा-सी बात पर नरसंहार (कत्ले आम) कर देता है वह साधु है या राक्षस स्वयं विचार करें। आम व्यक्ति भी कहीं स्नान कर रहे हों और कोई व्यक्ति आ कर कहे कि मुझे भी कुछ स्थान स्नान के लिए देने की कपा करें। शिष्टाचार के नाते कहते हैं कि आओ आप भी स्नान कर लो। इधर-उधर हो कर आने वाले को स्थान दे देते हैं। इसलिए पवित्र गीता जी अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में कहा है कि जिनका मेरी त्रिगुणमई माया (रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी) की पूजा के द्वारा ज्ञान हरा जा चुका है, वे केवल मान बड़ाई के भूखे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच अर्थात् आम व्यक्ति से भी पतित स्वभाव वाले, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मेरी भक्ति भी नहीं करते। गीता अध्याय 7 श्लोक 16 से 18 तक पवित्र गीता जी के बोलने वाला (ब्रह्म) प्रभु कह रहा है कि मेरी भक्ति (ब्रह्म साधना) भी चार प्रकार के साधक करते हैं। एक तो अर्थार्थी (धन लाभ चाहने वाले) जो वेद मंत्रों से ही जंत्र-मंत्र, हवन आदि करते रहते हैं। दूसरे आर्त्त (संकट निवार्ण के लिए वेदों के मंत्रों का जन्त्र-मंत्र हवन आदि करते रहते हैं) तीसरे जिज्ञासु जो परमात्मा के ज्ञान को जानने की इच्छा रखने वाले केवल ज्ञान संग्रह करके वक्ता बन जाते हैं तथा दूसरों में ज्ञान श्रेष्ठता के आधार पर उत्तम बन कर ज्ञानवान बनकर अभिमानवश भक्ति हीन हो जाते हैं, चौथे ज्ञानी। वे साधक जिनको यह ज्ञान हो गया कि मानव शरीर बार-बार नहीं मिलता, इससे प्रभु साधना नहीं बन पाई तो जीवन व्यर्थ हो जाएगा। फिर वेदों को पढ़ा, जिनसे ज्ञान हुआ कि (ब्रह्मा-विष्णु-शिवजी) तीनों गुणों व ब्रह्म (क्षर पुरुष) तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) से ऊपर पूर्ण ब्रह्म की ही भक्ति करनी चाहिए, अन्य देवताओं की नहीं। उन ज्ञानी उदार आत्माओं को मैं अच्छा लगता

हूँ तथा मुझे वे इसलिए अच्छे लगते हैं कि वे तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिवजी) से ऊपर उठ कर मेरी (ब्रह्म) साधना तो करने लगे जो अन्य देवताओं से अच्छी है परन्तु वेदों में 'ओ३म्' नाम जो केवल ब्रह्म की साधना का मंत्र है उसी को वेद पढ़ने वाले विद्वानों ने अपने आप ही विचार - विमर्श करके पूर्ण ब्रह्म का मंत्र जान कर वर्षों तक साधना करते रहे। प्रभु प्राप्ति हुई नहीं। अन्य सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। क्योंकि पवित्र गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 10 में वर्णित तत्वदर्शी संत नहीं मिला, जो पूर्ण ब्रह्म की साधना तीन मंत्र से बताता है, इसलिए ज्ञानी भी ब्रह्म (काल) साधना करके जन्म-मत्यु के चक्र में ही रह गए।

एक ज्ञानी उदारात्मा महर्षि चुणक जी ने वेदों को पढ़ा तथा एक पूर्ण प्रभु की भक्ति का मंत्र ओ३म् जान कर इसी नाम के जाप से वर्षों तक साधना की। एक मानधाता चक्रवर्ती राजा था। (चक्रवर्ती राजा उसे कहते हैं जिसका पूरी पथ्वी पर शासन हो।) उसने अपने अन्तर्गत राजाओं को युद्ध के लिए ललकारा, एक घोड़े के गले में पत्र बांध कर सारे राज्य में घुमाया। शर्त थी कि जिसने राजा मानधाता की गुलामी (आधीनता) स्वीकार न हो उसे युद्ध करना पड़ेगा। वह इस घोड़े को पकड़ कर बांध ले। किसी ने घोड़ा नहीं पकड़ा। महर्षि चुणक जी को इस बात का पता चला कि राजा बहुत अभिमानी हो गया है। कहा कि मैं इस राजा के युद्ध को स्वीकार करता हूँ युद्ध शुरु हुआ। मानधाता राजा के पास 72 करोड़ सेना थी। उसके चार भाग करके एक भाग (18 करोड़) सेना से महर्षि चुणक पर आक्रमण कर दिया। दूसरी ओर महर्षि चुणक जी ने अपनी साधना की कमाई से चार पूतलियाँ (बम्ब) बनाई तथा राजा की चारों भाग सेना का विनाश कर दिया।

विशेष :- श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म की भक्ति से पाप तथा पुण्य दोनों का फल भोगना पड़ता है, पुण्य स्वर्ग में तथा पाप नरक में व चौरासी लाख प्राणियों के शरीर में नाना यातनाऐं भोगनी पड़ती हैं। जैसे ज्ञानी आत्मा श्री चुणक जी ने जो ओ३म् नाम के जाप की कमाई की उससे कुछ तो सिद्धि शक्ति (चार पुतलियाँ बनाकर) में समाप्त कर दिया जिससे महर्षि कहलाया। कुछ साधना फल को महास्वर्ग में भोग कर फिर नरक में जाएगा तथा फिर चौरासी लाख प्राणियों के शरीर धारण करके कष्ट पर कष्ट सहन करेगा। जो 72 करोड़ प्राणियों (सैनिकों) का संहार वचन से किया था, उसका भोग भी भोगना होगा। चाहे कोई हथियार से हत्या करे, चाहे वचन रूपी तलवार से दोनों को समान दण्ड प्रभु देता है। जब उस महर्षि चुणक जी का जीव कुत्ते के शरीर में होगा उसके सिर में जख्म होगा, उसमें कीड़े बनकर उन सैनिकों के जीव अपना प्रतिशोध लेंगे। कभी टांग टूटेगी, कभी पिछले पैरों से अर्धंग हो कर केवल अगले पैरों से घिसड़ कर चलेगा तथा गर्मी-सर्दी का कष्ट असहनीय पीड़ा नाना प्रकार से भोगनी ही पड़ेगी।

इसलिए पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) गीता अ. 7 श्लोक 18 में स्वयं कह रहा है कि ये सर्व ज्ञानी आत्माऐं हैं तो उदार (नेक)। परन्तु पूर्ण परमात्मा की तीन मंत्र की वास्तविक साधना बताने वाला तत्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण ये सब मेरी ही (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ मुक्ति (गती) की आस में ही आश्रित रहे अर्थात् मेरी साधना भी अश्रेष्ठ है। इसलिए पवित्र गीता जी अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे अर्जुन! तू सर्व भाव से उस पूर्ण परमात्मा की शरण में चला जा। जिसकी कपा से ही तू परम शान्ति तथा सनातन परम धाम (सतलोक) को प्राप्त होगा। पवित्र गीता जी को श्री कष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके ब्रह्म (काल) ने बोला, फिर कई वर्षों उपरांत पवित्र गीता जी तथा पवित्र चारों वेदों को महर्षि व्यास जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके स्वयं

ब्रह्म (क्षर पुरुष) द्वारा लिपिबद्ध भी स्वयं ही किए हैं। इनमें परमात्मा कैसा है, कैसे उसकी भक्ति करनी है तथा क्या उपलब्धि होगी, ज्ञान तो पूर्ण वर्णन है। परन्तु पूजा की विधि केवल ब्रह्म (क्षर पुरुष) अर्थात् ज्योति निरंजन-काल तक की ही है।

पूर्ण ब्रह्म की भक्ति के लिए पवित्र गीता अ. 4 श्लोक 34 में पवित्र गीता बोलने वाला (ब्रह्म) प्रभु स्वयं कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा की भक्ति व प्राप्ति के लिए किसी तत्वज्ञानी सन्त को ढूंढ ले फिर जैसे वह विधि बताएं वैसे कर। पवित्र गीता जी को बोलने वाला प्रभु कह रहा है कि पूर्ण परमात्मा का पूर्ण ज्ञान व भक्ति विधि मैं नहीं जानता। अपनी साधना के बारे में गीता अ. 8 के श्लोक 13 में कहा है कि मेरी भक्ति का तो केवल एक 'ओ3म् ' अक्षर है जिसका उच्चारण करके अन्तिम स्वांस (त्यजन् देहम्) तक जाप करने से मेरी वाली परमगति को प्राप्त होगा। फिर गीता अ. 7 श्लोक 18 में कहा है कि जिन प्रभु चाहने वाली आत्माओं को तत्वदर्शी सन्त नहीं मिला जो पूर्ण ब्रह्म की साधना जानता हो, इसलिए वे उदारात्माऐं मेरे वाली (अनुत्तमाम्) अति अनुत्तम परमगति में ही आश्रित हैं।(पवित्र गीता जी बोलने वाला प्रभु स्वयं कह रहा है कि मेरी साधना से होने वाली गति अर्थात् मुक्ति भी अति अश्रेष्ठ है।)

गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि शास्त्रविधि को त्यागकर जो साधक मनमाना आचरण करते हैं अर्थात् जिन देवताओं पितरों, यक्षों, भैरों-भूतों की भक्ति करते हैं और मनकल्पित मन्त्रों का जाप करते हैं, उनको न तो कोई सुख होता है, न कोई सिद्धि प्राप्त होती है तथा न उनकी गति अर्थात् मोक्ष होता है। इससे तेरे लिए हे अर्जुन! कर्तव्य (जो भक्ति करनी चाहिए) और अकर्त्तव्य (जो भक्ति न करनी चाहिए) की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं। गीता अध्याय 17 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा कि हे कष्ण! (क्योंकि अर्जुन मान रहा था कि श्री कष्ण ही ज्ञान सुना रहा है, परन्तु श्री कष्ण के शरीर में प्रेत की तरह प्रवेश करके काल (ब्रह्म) ज्ञान बोल रहा था जो पहले प्रमाणित किया जा चुका है)। जो व्यक्ति शास्त्रविधि को त्यागकर मनमाना आचरण करके अन्य देवताओं आदि की पूजा करते हैं, वे स्वभाव में कैसे होते हैं? गीता ज्ञान दाता ने उत्तर दिया कि सात्विक व्यक्ति देवताओं का पूजन करते हैं। राजसी व्यक्ति यक्षों व राक्षसों की पूजा तथा तामसी व्यक्ति प्रेत आदि की पूजा करते हैं। ये सब शास्त्रविधि रहित कर्म हैं। फिर गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में कहा है कि जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित केवल मनकल्पित घोर तप को तपते हैं, वे दम्भी (ढ़ोंगी) हैं और शरीर के कमलों में विराजमान शक्तियों को तथा मुझे भी क्रश करने वाले राक्षस स्वभाव के अज्ञानी जान।

सूक्ष्मवेद में भी परमेश्वर जी ने कहा है कि :-

''कबीर, माई मसानी सेढ़ शीतला भैरव भूत हनुमंत। परमात्मा से न्यारा रहै, जो इनको पूजंत।।
राम भजै तो राम मिलै, देव भजै सो देव। भूत भजै सो भूत भवै, सुनो सकल सुर भेव।।''

स्पष्ट हुआ कि श्री ब्रह्मा जी (रजगुण), श्री विष्णु जी (सत्गुण) तथा श्री शिवजी (तमगुण) की पूजा (भक्ति) नहीं करनी चाहिए तथा इसके साथ-साथ भूतों, पितरों की पूजा, (श्राद्ध कर्म, तेरहवीं, पिण्डोदक क्रिया, सब प्रेत पूजा होती है) भैरव तथा हनुमान जी की पूजा भी नहीं करनी चाहिए।

प्रश्न 18 : क्या क्षर पुरुष (ब्रह्म) की पूजा (भक्ति) करनी चाहिए या नही?

उत्तर : यदि पूर्ण मोक्ष चाहते हो जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में बताया है कि ''तत्वज्ञान प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक

लौटकर फिर कभी संसार में जन्म नहीं लेता।'' तो क्षर पुरुष (ब्रह्म) ''जो संसार रुपी वक्ष की डार है'' की पूजा (भक्ति) नहीं करनी चाहिए।

प्रश्न 19 : पूर्व में जितने ऋषि-महर्षि हुए हैं, वे सब ब्रह्म की पूजा करते और कराते थे। ''ओम्'' (ॐ) नाम को सबसे बड़ा तथा उत्तम मन्त्र जाप करने का बताते थे, क्या वे अज्ञानी थे? यदि ब्रह्म की भक्ति उत्तम नहीं है तो गीता में कोई प्रमाण बताऐं।

उत्तर : पूर्व में बताया गया है कि यथार्थ अध्यात्म ज्ञान स्वयं परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) धरती पर सशरीर प्रकट होकर ठीक-ठीक बताता है। देखें प्रमाण वेद मन्त्रों में इसी पुस्तक के पष्ठ 314 पर। परमेश्वर द्वारा बताए ज्ञान को सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) कहा गया है। तत्वज्ञान में परमात्मा ने बताया है कि :-

गुरु बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुस छड़े मूढ़ किसाना।
गुरु बिन बेद पढ़ै जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी।।

जिन ऋषियों व महर्षियों को सत्गुरु नहीं मिला। उनकी यह दशा थी कि वेद पढ़ते थे परन्तु वेदों का सार नहीं समझ सके। उदाहरण के लिये श्री देवी पुराण (सचित्र मोटा टाईप, गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित) के छठे स्कन्ध के चौथे अध्याय में पष्ठ 425 में लिखा है कि सत्ययुग के ब्राह्मण (महर्षि) वेद के पूर्ण विद्वान होते थे और श्री देवी (दुर्गा) की पूजा करते थे। देवी का मंदिर गाँव-गाँव बनवाते थे।

❖ विचार किया जाए :- वेदों में तथा गीता में कहीं नहीं लिखा है कि श्री देवी (दुर्गा) जी की पूजा करो और उसके मंदिर बनवाओ। ऋषिजन पढ़ते थे वेद, कर्म सब वेद विरूद्ध करते थे। तो क्या खाक विद्वान थे?

पेश है प्रमाण के लिए श्रीमद् देवीभागवत (देवी पुराण) के स्कन्ध छः से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

[छठा स्कन्ध] * त्रिविध कर्म, युगधर्म, तीर्थ, चित्तशुद्धि और तीर्थकी महत्ता * ४२५

जनमेजयने पूछा—महाभाग! किस युगमें कैसा धर्मका स्वरूप है—इस सम्पूर्ण विषयको विशेषरूपसे बतानेकी कृपा कीजिये।

व्यासजी बोले—

राजन्! यह निश्चय है कि सत्ययुगमें ब्राह्मण वेदके पूर्ण विद्वान् थे। उनके द्वारा निरन्तर भगवती जगदम्बाकी आराधना होती थी। भगवतीका दर्शन करनेके लिये उनका मन सदा लालायित रहता था। गायत्रीके ध्यान, प्राणायाम और जपमें वे अपना सारा समय व्यतीत करते थे। मायाबीजका जप करना उनका प्रधान कार्य था। प्रत्येक गाँवमें शक्ति-मन्दिरका उद्घाटन हो—इस विषयकी उनके मनमें बड़ी उत्सुकता थी।

धर्मकी यही स्थिति त्रेतामें भी रही; परंतु कुछ ह्रास हो गया था। सत्ययुगकी जो स्थिति थी, वह द्वापरमें विशेषरूपसे कम हो गयी। राजन्! उन प्राचीन युगोंमें जो राक्षस समझे जाते थे, वे कलिमें ब्राह्मण माने जाते हैं, क्योंकि अबके ब्राह्मण प्रायः पाखण्ड करनेमें तत्पर रहते हैं। दूसरोंको ठगना, झूठ बोलना और वैदिक धर्म-कर्मोंसे अलग रहना—कलियुगी ब्राह्मणोंका स्वाभाविक गुण बन गया है। वे कभी वेद नहीं पढ़ते।

❖ विचार करें :- श्रीमद्भगवत गीता चारों वेदों का सारांश है। आप जी गीता जी को तो जानते ही हो, पढ़ते भी होंगे। क्या गीता में कहीं लिखा है कि 'श्री देवी' की पूजा करो? इसी प्रकार चारों वेदों में कहीं नहीं लिखा है कि दुर्गा (श्री देवी) की पूजा करो और उसके मंदिर बनवाओ तो क्या समझा वेदों को उन महर्षियों ने? क्या खाक विद्वान थे सत्ययुग के महर्षि? उन्हीं महर्षियों का मनमाना विधान है कि ऊँ (ओम्) नाम सबसे बड़ा अर्थात् उत्तम है जो कहते थे कि ब्रह्म पूजा (भक्ति) सर्वश्रेष्ठ है। जो ब्रह्म की पूजा इष्ट देव मानकर करते थे, वे अज्ञानी थे। उनकी ब्रह्म साधना अनुत्तम गति देने वाली है।

{विशेष :- यह दशा तो सत्ययुग के ब्राह्मणों की थी। कलयुग के ब्राह्मणों (शंकराचार्य ब्राह्मण हैं, अन्य कर्मकांड भी अधिकतर ब्राह्मण ही करते व करवाते हैं तथा जो अन्य गुरूजन हैं, वे उन्हीं कलयुगी ब्राह्मणों से सुना अज्ञान प्रचार करते हैं। इन कलयुग के गुरूजनों यानि ब्राह्मणों) के विषय में इसी श्री देवीभागवत पुराण की फोटोकॉपी में बताया है कि जो सत्ययुग में राक्षस माने जाते थे। वैसे कलयुग के ब्राह्मण हैं क्योंकि अब के ब्राह्मण प्रायः पाखंड करने में तत्पर रहते हैं। दूसरों को ठगना, झूठ बोलना और वैदिक धर्म-कर्म से अलग रहना कलयुगी ब्राह्मणों का स्वभाविक गुण बन गया है।}

गीता में प्रमाण : श्रीमद्भगवत् अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में तो बताया है कि जो तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शंकर) की पूजा करने वाले राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझे भी नहीं भजते। यह गीता ज्ञान दाता ने कहा है। फिर गीता अध्याय 7 के ही श्लोक 16 से 18 तक में गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने कहा है कि मेरी भक्ति चार प्रकार से करते हैं। अर्थार्थी, आर्त, जिज्ञासु तथा ज्ञानी। फिर कहा कि ज्ञानी मुझे अच्छा लगता है, ज्ञानी को मैं अच्छा लगता हूँ। (गीता अध्याय 7 श्लोक 18) इस श्लोक में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि ये ज्ञानी आत्मा हैं तो उदार (अच्छी) परन्तु ये सब मेरी अनुत्तम गति अर्थात् घटिया गति में आश्रित हैं। इस श्लोक (गीता अध्याय 7 श्लोक 18) में गीता ज्ञान दाता ब्रह्म स्वयं स्वीकार कर रहा है कि मेरी भक्ति से होने वाली गति अनुत्तम (अश्रेष्ठ/घटिया) है।

गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 7 श्लोक 19 में कहा है कि :-

बहुनाम्, जन्मानाम्, अन्ते, ज्ञानवान्, माम्, प्रपद्यते, वासुदेवः, सर्वम्, इति, सः, महात्मा, सुदुर्लभः।।

अनुवाद :- गीता ज्ञान दाता ब्रह्म ने कहा है कि मेरी भक्ति बहुत-बहुत जन्मों के अन्त में कोई ज्ञानी आत्मा करता है अन्यथा अन्य देवी देवताओं व भूत, पितरों की भक्ति में जीवन नाश करते रहते हैं। गीता ज्ञान दाता ने अपनी भक्ति से होने वाले लाभ अर्थात् गति को भी गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अनुत्तम (घटिया) बता दिया है। इसलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 19 में कहा है कि :-

यह बताने वाला महात्मा मुश्किल से मिलता है कि ''वासुदेव'' ही सब कुछ है। यही सबका सजनहार है। यही पापनाशक, पूर्ण मोक्षदायक है, यही पूजा के योग्य है। यही (वासुदेव ही) कुल का मालिक (परम अक्षर ब्रह्म) है। केवल इसी की भक्ति करो, अन्य की नहीं।

गीता ज्ञान दाता ने भी स्वयं कहा है कि ''हे अर्जुन! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा। उस परमेश्वर की कपा से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परमधाम (सत्यलोक) को प्राप्त होगा।'' (यह गीता अध्याय 18 श्लोक 62 तथा 66 में प्रमाण है) फिर गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में तथा अध्याय 18 श्लोक 46 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि ''जिस परमेश्वर से सम्पूर्ण प्राणियों

की उत्पत्ति हुई है, जिससे यह समस्त जगत व्याप्त है। उस परमेश्वर की अपने स्वाभाविक कर्म करते-करते पूजा करके मनुष्य परम सिद्धि को प्राप्त हो जाता है। फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्वज्ञान को समझकर उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए। जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आता, जिस परमेश्वर से संसार रुपी वक्ष की प्रवत्ति विस्तार को प्राप्त हुई है अर्थात् जिस परमेश्वर ने सर्व की रचना की है, उसी की पूजा करो। इससे सिद्ध हुआ कि उन ऋषियों को वेद का गूढ़ रहस्य समझ नहीं आया। वे अज्ञानी रहे।

प्रश्न 20 : गीता ज्ञान दाता ने अपनी गति को अनुत्तम क्यों कहा?

उत्तर : गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 2 श्लोक 12 गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में कहा है कि अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। मेरी उत्पत्ति को ऋषि-महर्षि तथा देवता नहीं जानते। तू और मैं तथा ये राजा व सैनिक बहुत बार पहले भी जन्मे हैं, आगे भी जन्मेंगे। पाठक जन विचार करें! जब ब्रह्म कह रहा है कि मेरा भी जन्म-मरण होता है तो ब्रह्म के पुजारी को गीता अध्याय 15 श्लोक 4 वाली गति (मोक्ष) प्राप्त नहीं हो सकती जिसमें जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाता है। साधक कभी लौटकर संसार में नहीं आता यानि जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाता है। जब तक जन्म-मरण है, तब तक परमशान्ति नहीं हो सकती। उसके लिए गीता ज्ञानदाता ने अपनी भक्ति से होने वाली गति को अनुत्तम (घटिया) कहा है। गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि परमशान्ति के लिए उस परमेश्वर (परम अक्षर ब्रह्म) की शरण में जा, उसी की कपया से ही तू परमशान्ति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा। गीता अध्याय 8 श्लोक 5 व 7 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरी भक्ति करेगा तो युद्ध भी करना पड़ेगा, जहाँ युद्ध है, वहाँ शान्ति नहीं होती, परम शान्ति का घर दूर है। इसलिए गीता ज्ञान दाता ने अपनी गति को (ऊँ नाम के जाप से होने वाला लाभ) अनुत्तम (घटिया) बताया है।

प्रश्न 21 : आपने प्रश्न नं. 13 के उत्तर में कहा है कि पूर्ण मोक्ष की प्राप्ति के लिए ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश तथा देवी और क्षर ब्रह्म व अक्षर ब्रह्म की साधना करनी पड़ती है। दूसरी ओर कह रहे हो कि ब्रह्मा, विष्णु, शिव अन्य देवता हैं, क्षर ब्रह्म भी पूजा (भक्ति) योग्य नहीं है। केवल परम अक्षर ब्रह्म की ही पूजा (भक्ति) करनी चाहिए?

उत्तर : पहले तो यह स्पष्ट करता हूँ कि पूजा तथा साधना में क्या अन्तर है?

❖ प्राप्य वस्तु की चाह पूजा कही जाती है तथा उसको प्राप्त करने के प्रयत्न को साधना कहते हैं।

उदाहरण : जैसे हमें जल प्राप्त करना है। यह हमारा प्राप्य है। हमें जल की चाह है। जल की प्राप्ति के लिए हैण्डपम्प लगाना पड़ेगा। हैण्डपम्प लगाने के लिए जो-जो उपकरण प्रयोग किए जाएंगे, बोकी लगाई जाएगी, यह प्रयत्न है। इसी प्रकार परमेश्वर का वह परमपद प्राप्त करना हमारी चाह है, जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर संसार में नहीं आता। हमारा प्राप्य परमेश्वर तथा उनका सनातन परम धाम है। उसको प्राप्त करने के लिए किया गया नाम जाप हवन-यज्ञ आदि-2 साधना है। उस साधना से पूज्य वस्तु परमात्मा प्राप्त होगा। जैसे प्रश्न 13 के उत्तर में स्पष्ट किया है, वही सटीक उदाहरण है। उस पूर्ण मोक्ष के लिए तीन बार में दीक्षा क्रम पूरा करना होता है।

1. प्रथम नाम दीक्षा = ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश, देवी के मन्त्रों की साधना दी जाती है।

2. दूसरी बार में क्षर ब्रह्म तथा अक्षर ब्रह्म के दो अक्षर मन्त्र जाप दिए जाते हैं जिसको सन्तों

ने ''सत् नाम'' कहा है। गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में तीन नाम हैं, ''ओम्-तत्-सत्'' इस सतनाम में दो अक्षर होते हैं, एक ''ओम्'' (ॐ) दूसरा ''तत्'' है। (यह सांकेतिक अर्थात् गुप्त नाम है जो उपदेश के समय उपदेशी को ही बताया जाता है)

3. तीसरी बार में सारनाम की दीक्षा दी जाती है जिस मन्त्र को गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ''सत्'' कहा है, यह भी सांकेतिक है। उपदेश लेने वाले को दीक्षा के समय बताया जाता है। इस प्रकार पूर्ण मोक्ष प्राप्त होता है।

कबीर जी का वकील :- कृष्ण जी के वकील साहेबान श्री विष्णु जी यानि श्री कृष्ण जी को जगदीश (जगत+ ईश) यानि सारे संसार का प्रभु बताते हैं। पुराणों को सत्य मानते हैं। पेश है अदालत में सबूत श्री शिव महापुराण से (जो गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित है) कि श्री विष्णु जी, श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी ''ईश'' नहीं हैं। (ये जगदीश नहीं हैं।) इनका जन्म-मृत्यु होता है। इनका पिता काल ब्रह्म है।

पेश है शिव महापुराण (गीताप्रेस गोखपुर से प्रकाशित) के विद्येश्वर खंड के अध्याय 5-10 की फोटोकॉपी :-

४४ * संक्षिप्त शिवपुराण *

पाँच कृत्योंका प्रतिपादन, प्रणव एवं पंचाक्षर-मन्त्रकी महत्ता, ब्रह्मा-विष्णुद्वारा भगवान् शिवकी स्तुति तथा उनका अन्तर्धान

ब्रह्मा और विष्णुने पूछा—**प्रभो! सृष्टि आदि पाँच कृत्योंके लक्षण क्या हैं, यह हम दोनोंको बताइये।**

भगवान् शिव बोले—**मेरे कर्तव्योंको समझना अत्यन्त गहन है, तथापि मैं कृपापूर्वक तुम्हें उनके विषयमें बता रहा हूँ। ब्रह्मा और अच्युत! 'सृष्टि', 'पालन', 'संहार', 'तिरोभाव' और 'अनुग्रह'—ये पाँच ही मेरे जगत्-सम्बन्धी कार्य हैं, जो नित्यसिद्ध हैं। संसारकी रचनाका जो**

आरम्भ है, उसीको सर्ग या 'सृष्टि' कहते हैं। पुत्रो! तुम दोनोंने तपस्या करके प्रसन्न हुए मुझ परमेश्वरसे सृष्टि और स्थिति नामक दो कृत्य प्राप्त किये हैं। ये दोनों तुम्हें बहुत प्रिय हैं। इसी प्रकार मेरी विभूतिस्वरूप 'रुद्र' और 'महेश्वर'-में दो अन्य उत्तम कृत्य—संहार और तिरोभाव मुझसे प्राप्त किये हैं। परंतु अनुग्रह नामक कृत्य दूसरा कोई नहीं पा सकता। रुद्र और महेश्वर अपने कर्मको भूले नहीं हैं। इसलिये मैंने उनके लिये अपनी समानता प्रदान की है। वे रूप, वेष, कृत्य, वाहन, आसन और आयुध आदिमें मेरे समान ही हैं। मैंने पूर्वकालमें अपने स्वरूपभूत मन्त्रका उपदेश किया है, जो ओंकारके रूपमें प्रसिद्ध है। वह महामंगलकारी मन्त्र है। सबसे पहले मेरे मुखसे ओंकार (ॐ) प्रकट हुआ, जो मेरे स्वरूपका बोध करानेवाला है। ओंकार वाचक है और मैं वाच्य हूँ। यह मन्त्र मेरा स्वरूप ही है। प्रतिदिन ओंकारका निरन्तर स्मरण करनेसे मेरा ही सदा स्मरण होता है।

मेरे उत्तरवर्ती मुखसे अकारका, पश्चिम मुखसे उकारका, दक्षिण मुखसे मकारका, पूर्ववर्ती मुखसे विन्दुका तथा मध्यवर्ती मुखसे नादका प्राकट्य हुआ। इस प्रकार पाँच अवयवोंसे युक्त ओंकारका विस्तार हुआ है। इन सभी अवयवोंसे एकीभूत होकर वह प्रणव 'ॐ' नामक एक अक्षर हो गया।

पेश हैं और प्रमाण, शिव महापुराण (श्री वैकंटेश्वर प्रेस मुबंई से प्रकाशित जिसमें संस्कत यानि मूल पाठ भी लिखा है, साथ में हिन्दी अनुवाद भी किया है) के विद्येश्वर संहिता खंड के अध्याय 5-10 की फोटोकॉपी :-

शि०पु० ॥११॥

हे योगीन्द्र ! मैं उस लिंगाविर्भावका लक्षण सुना चाहता हूं ॥ नन्दिकेश्वर बोले हे वत्स ! सुनो मैं तुम्हारी प्रीतिसे कहता हूं ॥ २६ ॥ पूर्वकालमें जो पहला कल्प था जो लोकमें विख्यात है उस समय महात्मा ब्रह्मा और विष्णुका परस्पर युद्ध हुआ था ॥ २७॥ उनके मान दूर करनेको उनके बीचमें उन निष्कल परमात्माने स्तम्भरूप अपना स्वरूप दिखाया ॥ २८ ॥ तब जगत्के हितकी इच्छासे निर्गुण शिवने उस तेजोमयस्तंभसे अपने लिंगाकारका स्वरूप दिखाया ॥ २९ ॥ उसीदिनसे लोकमें वह निष्कल शिवजीका लिंग विख्यात हुआ, और

श्रोतुमिच्छामियोगींद्रलिंगाविर्भावलक्षणम् ॥ नंदिकेश्वरउवाच ॥ शृणुवत्सभवत्प्रीत्यावक्ष्यामिपरमार्थतः ॥२६॥ पुराकल्पेमहाकाले प्रपन्नेलोकविश्रुते॥ आयुध्येतांमहात्मानौब्रह्मविष्णूपरस्परम् ॥२७॥ तयोर्मानंनिराकर्तुंतन्मध्येपरमेश्वरः ॥ निष्कलस्तंभरूपेणस्वरूपंसमदर्शयत् ॥२८॥ ततःस्वलिंगचिह्नत्वात्स्तंभतोनिष्कलंशिवः ॥ स्वलिंगंदर्शयामासजगतांहितकाम्यया ॥२९॥ तदाप्रभृतिलोकेषुनिष्कलंलिंगमैश्वरम्॥सकलंचतथाबेरंशिवस्यैवप्रकल्पितम् ॥३०॥ शिवान्येषःतुदेवानांबेरमात्रंप्रकल्पितम् ॥ तत्तद्बेरंतुदेवानांतत्तद्भोगप्रदंशुभम्॥ शिवस्यलिंगबेरत्वभोगमोक्षप्रदंशुभम् ॥३१॥ इतिश्रीशिवमहापुराणेविद्येश्वरसंहितायांपंचमोऽध्यायः ॥५॥ नंदिकेश्वरउवाच ॥ पुराकदाचिद्योगींद्रविष्णुर्विषधरासनः ॥ सुष्वापपरयाभूत्यास्वानुगैरपिसंवृतः ॥१॥ यदृच्छयागतस्तत्रब्रह्माब्रह्मविदांवरः ॥ अपृच्छत्पुंडरीकाक्षंशयनंसर्वसुन्दरम् ॥ २ ॥

वि०सं०१ अ० ६

सगुणरूपमें बेररूप की कल्पना की गई ॥ ३० ॥ देवताओंकी वह बेर पूजा इच्छानुसार भोगोंको देनेहारी है परन्तु शिवका लिंगबेर भोग और मोक्ष दोनोंका देनेहारा है ॥ ३१ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहिताभाषायां पंचमोध्यायः ॥ ५ ॥ नन्दिकेश्वर बोले हे योगींद्र ! आगे एक समय विष्णु भगवान् शेषशय्यापर अपने गरुड़ादि पार्षदोंसे संयुक्त लक्ष्मीसहित शयन करते थे ॥ १ ॥ उस समय ब्रह्मज्ञानियोंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजी अपनी इच्छासेही वहाँ आये सब प्रकार सुन्दर सेजपर शयन करते हुए कमललोचन विष्णुजीसे पूछने लगे ॥ २ ॥

तुम कौन हो जो मुझे देखकर अभिमानी पुरुषके समान शयन करते हो. हे वत्स ! उठो देखो मैं तुम्हारा स्वामी आया हूँ ॥ ३ ॥ आये हुए गुरुको देखकर जो अभिमान करता है उस द्रोही मूढका प्रायश्चित्त होना उचित है ॥ ४ ॥ यह सुनकर विष्णुजीके अंतरमें तो क्रोध हुआ परंतु बाहरसे शांत रहे, और बोले हे वत्स ! तुम्हारा मंगल हो बैठो इस आसनपर विराजो ॥ ५ ॥ इस समय तुम्हारा नेत्र कुटिल और मुख वक्र क्यों होरहा है ? ब्रह्माजी बोले हे वत्स विष्णु ! तुमको समयके प्रभावसे अभिमान है ॥ ६ ॥ हे पुत्र ! मैं तुम्हारा रक्षक और जगत्का पितामह हूँ विष्णुजी बोले यह तो सब जगत् मुझमें स्थित है तुम चोरके समान किस प्रकार अपना कहते हो ॥७॥ तुम मेरी नाभिकमलसे उत्पन्न

कस्त्वंपुरुषवच्छेषेदृष्ट्वामामपिदृप्तवत्॥उत्तिष्ठवत्समांपश्यतवनाथमिहागतम् ॥३॥ आगतंगुरुमाराध्यंदृष्ट्वायोदृप्तवच्चरेत्॥द्रोहिणस्तस्यमूढस्यप्रायश्चित्तंविधीयते ॥ ४ ॥ इतिश्रुत्वावचःक्रुद्धोबहिःशांतवदाचरत्॥स्वस्तितेस्वागतंवत्सतिष्ठपीठमितोविश ॥५॥ किमुतेव्याग्रवद्वक्रंविभातिविषमेक्षणम् ॥ ब्रह्मोवाच ॥ वत्सविष्णोमहामानमागतंकालवेगतः ॥६॥ पितामहश्चजगतःपाताचतववत्सक॥विष्णुरुवाच ॥ मत्स्थंजगदिदंवत्समनुषेत्वंहिचोरवत्॥७॥मन्नाभिकमलाज्जातःपुत्रस्त्वंभाषसेवृथा॥ नंदिकेश्वरउवाच॥ एवंहिवदतोस्तत्रमुग्धयोरजयोस्तदा ॥८॥ अहमेववरोनत्वमहंप्रभुरहंप्रभुः॥परस्परंहंतुकामौचक्रतुःसमरोद्यमम् ॥९॥ युयुधातेऽमरौवीरौहंसपक्षींद्रवाहनौ ॥ वैरंच्यावैष्णवाश्चैवंमिथोयुयुधिरेतदा॥१०॥तावद्विमानगतयःसर्वावैदेवजातयः॥दिदृक्षवःसमाजग्मुःसमरंतंमहाद्भुतम् ॥११॥ क्षिपंतःपुष्पवर्षाणिपश्यंतःस्वैरमंबरे ॥ सुपर्णवाहनस्तत्र क्रुद्धोवैब्रह्मवक्षसि ॥ १२ ॥

हुए हो इससे मेरे पुत्र हो मुझे पुत्र कहना वृथा है. नंदिकेश्वर बोले इस प्रकार ब्रह्मा विष्णु दोनों ही रजोगुणसे मुग्ध होकर विवाद करने लगे ॥ ८ ॥ मैं श्रेष्ठ हूँ मैं स्वामी हूँ ऐसा कहकर एक दूसरेको मारनेकी इच्छासे युद्ध करनेमें उत्सुक हुए ॥ ९ ॥ और हंस और गरुड़ वाहनपर स्थित हो यह दोनों देव युद्ध करने लगे तब ब्रह्मा और विष्णुके वाहन गण भी युद्ध करने लगे ॥ १० ॥ तब सम्पूर्ण देवता विमानोंमें बैठकर उस महाअद्भुत युद्ध देखनेको चले आये॥११॥और आकाशमें उनके ऊपर फूल बर्षाने लगे । तब विष्णुजीने क्रोधकर ब्रह्माजीकी छातीमें॥१२॥

शि०पु० हे कुमार ! इस प्रकार मधुरवाणीसे पार्वतीपति शंकरने उन सब देवताओंको सन्तुष्ट किया ॥३॥ तब शिवने अपने सौ गणोंको उस समरस्थानमें
॥१३॥ जानेकी आज्ञा दी जहां ब्रह्मा और विष्णु थे ॥ ४ ॥ तब शंकरके पयानसमयमें अनेक प्रकारके बाजे बजने लगे अनेक प्रकारके वाहनोंपर चढ विविध भूषण पहरे गणेश्वर चलनेको उद्यत हुए ॥ ५ ॥ प्रणवके समान आकारसे सर्वत्र व्याप्त पंचमंडलसे मंडित भद्ररथमें अम्बिकापति गिरीश चढे और पुत्र तथा गण भी संग हुए उस समय इन्द्रादि देवता उनके पीछे चलने लगे ॥ ६ ॥ सुन्दर ध्वजाव्यजन चमर पुष्प वर्षा संगीत नृत्य बाजोंसे सम्मानित हो शिवजी पार्वती सहित ब्रह्मा विष्णुके निकट समरभूमिमें सेनासहित गये ॥७॥ जाकर मेघोंके मध्यमें छिपकर

इतिसस्मितयामाध्व्याकुमारपरिभाषया॥समतोषयदंबायाःसपतिस्तत्सुरव्रजम्॥३॥अथयुद्धांगणंगंतुंहरिधात्रोरधीश्वरः॥आज्ञापयद्गणेशानांशतंतत्रैवसंसदि॥४॥ततोवाद्यंबहुविधंप्रयाणायपरेशितुः॥गणेश्वराश्चसंनद्धानानावाहनभूषणाः ॥५॥ प्रणवाकारमाद्यंतंपंचमंडलमंडितम् ॥ आरुरोहरथंभद्रमंबिकापतिरीश्वरः ॥ ससूनुगणमिंद्राद्याःसर्वेप्यनुययुःसुराः ॥६॥चित्रध्वजव्यजनचामरपुष्प वर्षसंगतिनृत्यनिवहैरपिवाद्यवर्गैः संमानितः पशुपतिःपरयाचदेव्यासाकंतयोःसमरभूमिमगात्ससैन्यः॥७॥ समीक्ष्यंतुतयोर्युद्धंनिगूढाऽभ्रंसमास्थितः॥समाप्तवाद्यनिर्घोषःशांतोरुगणनिःस्वनः ॥८॥अथब्रह्माच्युतौवीरौहंतुकामौपरस्परम्॥माहेश्वरेणचाऽस्त्रेणतथापाशुपतेनच॥९॥अस्त्रज्वालैरथोदग्धंब्रह्मविष्ण्वोर्जगत्त्रयम्॥ईशोपितंनिरीक्ष्याथह्यकालप्रलयंभृशम्॥१०॥महानलस्तंभविभीषणाकृतिर्बभूवतन्मध्यतलेसनिष्कलः॥११॥तेअस्त्रेचापिसज्वालेलोकसंहरणक्षमे॥निपतेतुःक्षणेनैवह्याविर्भूतेमहानले॥१२॥

वि०सं०१ उनका निरन्तर होनेवाला युद्ध देखा, उस समय बाजोंकी ध्वनि नहीं होती थी और बड़ा गणोंका भी शब्द शान्त होगया था ॥ ८ ॥ उस
अ० ७ समय ब्रह्मा और विष्णु परस्पर एक दूसरेको मारनेकी इच्छासे माहेश्वर और पाशुपतास्त्रसे ॥ ९ ॥ तथा अस्त्रोंकी ज्वालासे मानों त्रिलोकी भस्म करने लगे तब शिवजीने वह अकाल प्रलय देखकर ॥ १० ॥ महाअग्निके स्तम्भके समान महाभयंकर आकृतिके समान उन दोनोंके बीचमें वह निर्गुण ब्रह्म स्थित हुए ॥११॥ वह लोक क्षय करनेमें समर्थ अस्त्र उस महाअग्निके प्रगट होवेही क्षणमात्रमें निपतित हो गये ॥१२॥

यह अस्त्र शांत होनेका अद्भुत चित्र देख यह अद्भुत आकार क्या है ऐसा ब्रह्मा और विष्णु परस्पर कहने लगे ॥ १३ ॥ यह इंद्रिय अगोचर स्तम्भ अग्निरूपसा क्या उठा है हम दोनोंको इसका ऊपर और नीचेका भाग देखना चाहिये कि यह कहांसे हुआ है ॥ १४ ॥ इस प्रकार कह वह दोनों वीर मानी परस्पर मिलकर उसकी परीक्षा करनेको बहुत शीघ्रतासे गये ॥ १५ ॥ हम दोनोंके मिलनेसे यह कार्य नहीं होगा ऐसा कहकर विष्णु शूकर शरीर धारण कर उसके मूल भाग देखनेको नीचे चले गये ॥ १६ ॥ और ब्रह्माजी हंसका रूप धार उसके ऊपरका

दृष्ट्वा तदद्भुतं चित्रमस्त्रशांतिकरं शुभम्॥किमेतदद्भुताकारमित्यूचुश्चपरस्परम्॥१३॥ अतींद्रियमिदंस्तंभमग्निरूपंकिमुत्थितम् ॥ अस्योर्ध्वमपिचाधश्चआवयोर्लक्ष्यमेव हि॥१४॥इतिव्यवसितौवीरौमिलितौवीरमानिनौ ॥तत्परौतत्परीक्षार्थंप्रतस्थातेऽथसत्वरम् ॥१५॥ आवयोर्मिश्रयोस्तत्रकार्यमेकंनसंभवेत् ॥ इत्युक्त्वासूकरतनुर्विष्णुस्तस्यादिमीयिवान् ॥१६॥ तथाब्रह्माहंसतनुस्तदंतंवीक्षितुंययौ ॥ भित्त्वापातालनिलयंगत्वादूरतरंहरिः ॥१७॥ नाऽपश्यत्तस्यसंस्थानंस्तंभस्यानलवर्चसः॥श्रांतःससूकरहरीःप्रापपूर्वरणांगणम् ॥१८॥ अथगच्छंस्तुव्योम्नाचविधिस्तातपितातव ॥ ददर्शकेतकीपुष्पंकिंचिद्विच्युतमद्भुतम् ॥१९॥ अतिसौरभ्यमम्लानंबहुवर्षच्युतं तथा ॥ अन्वीक्ष्य च तयोः कृत्यं भगवान्परमेश्वरः ॥ २० ॥

भाग देखनेको गये हरि पाताल स्थानको भेदकर दूरतक चले गये ॥ १७ ॥ परन्तु उस अग्निके समान प्रज्वलित स्तम्भका पार नहीं पाया और शांत होकर हरि उस युद्ध स्थानमें चले आये ॥ १८ ॥ और ब्रह्माजी आकाशमार्गमें चले गये उन्होंके वहां केतकीका किंचित् च्युत होना अद्भुत पुष्प देखा ॥ १९ ॥ यद्यपि वो बहुत वर्षांसे टूटा था परन्तु उसमें बडी सुगन्ध थी और मलीन न था ब्रह्मा और विष्णुके कृत्यको देखकर भगवान् परमेश्वरने ॥ २० ॥

शि०पु० स्तम्भ है सो जगत्के दर्शन और पूजनके निमित्त अणुमात्र बहुतछोटा)होजायगा ॥१९॥ यह लिंग भुक्ति और मुक्तिका साधक होगा, इसके दर्शन
॥१७॥ स्पर्शन और ध्यानसेही प्राणियोंके जन्म मरण छूट जायँगे॥२०॥जो अग्निपर्वतके समान प्रादुर्भूत हुआ है सो यह अरुणाचल नामसे जगत्में विख्यात
होगा ॥२१॥ यहां बड़ा भरी तीर्थ होगा यहां प्राणियोंके निवास करने या तनु त्यागनेसे मुक्ति हो जायगी ॥२२॥ रथयात्रा उत्सव कल्याण और
जनोंके निवास योग्य यह स्थान होगा. यहां किया हुआ जप तप हवन करोड़ गुणा होजायगा ॥२३॥ हमारे सब क्षेत्रोंसे यह श्रेष्ठ होगा, यहां
मेरा स्मरण करतेही प्राणी मुक्त हो जाँयगे ॥२४॥ इस कारण यह क्षेत्र महान् और अत्यन्त शोभित होगा सब प्रकारके कल्याणदायक और सब

भोगावहमिदंलिंगंभुक्तिमुक्त्येकसाधनम् ॥ दर्शनस्पर्शनध्यानाज्जंतूनांजन्ममोचनम् ॥२०॥ अनलाचलसंकाशंयदिदंलिंगमुत्थि
तम् ॥ अरुणाचलमित्येवतदिदंख्यातिमेष्यति ॥२१॥ अत्रतीर्थंचबहुधाभविष्यतिमहत्तरम्॥मुक्तिरप्यत्रजंतूनःवासेनमरणेनच
॥२२॥रथोत्सवादिकल्याणंजनावासंतुसर्वतः॥अत्रदत्तंहुतंजप्तंसर्वंकोटिगुणंभवेत॥२३॥मत्क्षेत्रादपिसर्वस्मात्क्षेत्रमेतन्महत्तरम्॥
अत्रसंस्मृतिमात्रेणमुक्तिर्भवतिदेहिनाम्॥२४॥तस्मान्महत्तरमिदंक्षेत्रमत्यंतशोभनम्॥सर्वकल्याणसंपूर्णसर्वमुक्तिकरंशुभम्॥२५॥
अर्चयित्वाऽत्रमामेवलिंगेलिंगिनमीश्वरम्॥सालोक्यंचैवसामीप्यंसारूप्यंसार्ष्टिरेवच ॥२६॥ सायुज्यमितिपंचैतेक्रियादीनांफलं
मतम् ॥ सर्वेपियूयंसकलंप्राप्स्यथाशुमनोरथम्॥२७॥नंदिकेश्वर उवाच ॥ इत्यनुगृह्यभगवान्विनीतौविधिमाधवौ॥ यत्पूर्वंप्रहतं
युद्धेतयोःसैन्यंपरस्परम् ॥२८॥ तदुत्थापयदत्यर्थंस्वशक्त्याऽमृतधारया ॥ तयोर्माढ्यंचवैरंचव्यपनेतुमुवाचतौ ॥ २९ ॥

वि०सं०१ प्रकार मुक्तिदायक होगा ॥२५॥ जो यहां लिंगमें मुझ लिंगेश्वरकी पूजा करेंगे उन्हें सालोक्य सामीप्य सारूप्य सार्ष्टि ॥ २६ ॥ सायुज्य यह
अ० ९ पांचों मुक्ति क्रियाके फलको प्राप्त होजाँयगी और यहां पूजन करनेसे तुमभी सब मनोरथोंको प्राप्त होंगे ॥२७॥ नंदिकेश्वर बोले इस प्रकार
भगवानने उन नम्र हुए ब्रह्मा और विष्णुपर अनुग्रह करके उनके युद्धमें जो परस्पर उनकी सेना मारी गईथी॥२८॥ उस सबको अपनी शक्तिसे
जिवाकर उठाया जिस शक्तिमें अमृतकी धारा रहती है और उन दोनोंकी अज्ञानता और वैरको दूर करनेके अर्थ दोनोंसे कहा ॥ २९ ॥

मेरे सकल और निष्कल भेदसे दोस्वरूप हैं परन्तु और ईश्वर नहीं इस कारण उनके दो रूप नहीं हो सकते ॥३०॥ पहला स्तम्भरूप और
पीछे मूर्तिमान् रूप धारण किया इसमें ब्रह्मरूप निष्फल है और ईशरूप सगुण है ॥ ३१ ॥ मेरे यह दोनों रूप सिद्ध हैं दूसरे किसीके नहीं
हो सकते. इस कारण तुम दोनोंको अथवा दूसरोंको ईश्वरत्वकी प्राप्ति नहीं हो सकती॥३२॥तुमने जो अज्ञानसे अपनेको ईश माना यह बडा
अद्भुत हुआ उसके दूर करनेकोही मैं रणस्थानमें आया ॥ ३३ ॥ अब तुम अपना अभिमान त्यागकर मुझ ईश्वरमें अपनी बुद्धि लगाओ मेरे
प्रसादसे लोकमें सब अर्थ प्रकाश करते हैं ॥ ३४ ॥ मुझ गुरुके वचनही तुमको वारंवार प्रमाण हैं, तुम्हारी प्रीतिसेही यह गूढ ब्रह्मत्व मैं तुमसे

सकलंनिष्कलंचेतिस्वरूपद्वयमस्तिमे ॥ नान्यस्यकस्यचित्तस्मादन्यःसर्वोप्यनीश्वरः ॥३०॥ पुरस्तात्स्तंभरूपेणपश्चाद्रूपेणचा
र्भकौ ॥ ब्रह्मत्वंनिष्कलंप्रोक्तमीशत्वंसकलंतथा ॥३१॥ द्वयंममैवसंसिद्धंनमदन्यस्यकस्यचित् ॥ तस्मादीशत्वमन्येषांयुवयोर
पिनक्वचित् ॥३२॥ तदज्ञानेनवांवृत्तमीशमानंमहाद्भुतम्॥तन्निराकर्तुमत्रैवमुत्थितोऽहंरणक्षितौ॥३३॥ त्यजतंमानमात्मीयंमयीशे
कुरुतंमतिम् ॥ मत्प्रसादेनलोकेषुसर्वोप्यर्थःप्रकाशते ॥३४॥ गुरूक्तिर्व्यंजकंतत्रप्रमाणंवापुनःपुनः॥ ब्रह्मतत्त्वमिदंगूढंभवत्प्रीत्या
भणाम्यहम् ॥ ३५ ॥ अहमेवपरंब्रह्ममत्स्वरूपंकलाकलम् ॥ब्रह्मत्वादीश्वरश्चाहंकृत्यंमेनुग्रहादिकम् ॥३६॥ बृहत्त्वाद्बृंहणत्वाच्च
ब्रह्माहंब्रह्मकेशवौ ॥ समत्वाद्व्यापकत्वाच्चतथैवात्माहमर्भकौ ॥३७॥अनात्मानःपरेसर्वेजीवाएवनसंशयः ॥ अनुग्रहाद्यंसर्गांतंजग
त्कृत्यंचपंकजम् ॥ ३८ ॥ ईशत्वादेवमेनित्यंनमदन्यस्यकस्यचित् ॥ आदौब्रह्मत्त्वबुद्ध्यर्थंनिष्कलंलिंगमुत्थितम् ॥ ३९ ॥

कहता हूं ॥ ३५ ॥ मैंही पर ब्रह्म हूं और मेराही कल अकलरूप है ब्रह्म होनेसे मैं ईश्वर हूं अनुग्रहादिकही मेरा कृत्य है ॥ ३६ ॥ सर्वव्यापी
होनेसे और जगत्के वर्द्धक होनेसे मैं ब्रह्मा हूं, हे ब्रह्मकेशव ! समत्व और व्यापक होनेसे मैं आत्मा हूं ॥ ३७ ॥ और सम्पूर्ण जीव आत्मा
नहीं हैं इसमें सन्देह नहीं, अनुग्रहसेही यह सर्गके अन्ततक जो जगत्का कृत्य और पंचक है ॥ ३८ ॥ मैं इस सबका ईश हूं यह मेरा है मेरे
सिवाय किसी दूसरेका नहीं है. प्रथम तो ब्रह्मत्वज्ञानके निमित्त निष्कलब्रह्मका प्रादुर्भाव हुआ है ॥ ३९ ॥

शि०पु० संसारके आरंभका नाम सर्ग, उसकी वृद्धिका नाम स्थिति है, उसके नष्ट करनेका नाम संहार उद्धारका नाम उत्क्रम है ॥ ३ ॥ उस संसारसे
॥१८॥ मोक्ष करनेका अनुग्रह है सब यही मेरे पांच कृत्य हैं और पृथ्वी आदि इस मेरे कृत्यको गोपुरके बिंबके समान मौन होकर धारण करते हैं
॥ ४ ॥ यह सर्गादि चार कृत्य तो सृष्टिके कर्म्ममें प्रवेश करते हैं और पांचवाँ मुक्तिका कारण सदा मुझमेंही स्थित रहता है ॥५॥ सो यह
पंचभूतोंमें मेरे जनोंद्वारा दीखता है. पृथ्वीमें सृष्टि जलमें स्थिति अग्निमें संहार ॥ ६ ॥ पवनमें तिरोभाव आकाशमें अनुग्रह है सब कुछ पृथ्वी
उत्पन्न करती है जलसे सबकी वृद्धि होती है ॥ ७ ॥ तेजसे सब नष्ट होते वायुमें सब लय होते और आकाशद्वारा सबपर अनुग्रह होता है ऐसा

सर्गः संसारसंरंभस्तत्प्रतिष्ठास्थितिर्मता ॥ संहारोमर्दनंतस्यतिरोभावस्तदुत्क्रमः॥३॥तन्मोक्षोऽनुग्रहस्तन्मेकृत्यमेवंहिपंचकम् ॥
कृत्यमेतद्वहत्यन्यस्तूष्णींगोपुरबिंबवत॥४॥सर्गादियच्चतुष्कृत्यंसंसारपरिजृंभणम् ॥ पंचमंमुक्तिहेतुर्वैनित्यं मयि च सुस्थिरम्
॥ ५ ॥ तदिदंपंचभूतेषुदृश्यतेमामकैर्जनैः ॥सृष्टिर्भूमौस्थितिस्तोयेसंहारः पावकेतथा ॥६॥तिरोभावोऽनिलेतद्वदनुग्रहइहाम्बरे ॥
सृज्यतेधरयासर्वमद्भिः ॥ सर्वंप्रवर्द्धते ॥७॥ अर्द्यतेतेजसासर्ववायुना चापनीयते ॥ व्योम्नानुगृह्यतेसर्वंज्ञेयमेवंहिसूरिभिः ॥ ८॥
पंचकृत्यमिदंवोढुंममास्तिमुखपंचकम् ॥ चतुर्दिक्षुचतुर्वक्रंतन्मध्येपंचमंमुखम् ॥९॥ युवाभ्यांतपसालब्धमेतत्कृत्यद्वयंसुतौ ॥
सृष्टिस्थित्यभिधंभाग्यंमत्तःप्रीतादतिप्रियम्॥ १० ॥ तथारुद्रमहेशाभ्यामन्यत्कृत्यद्वयंपरम् ॥ अनुग्रहाख्यंकेनापिलब्धुंनैवहि
शक्यते ॥ ११ ॥ तत्सर्वंपौर्विकंकर्मयुवाभ्यांकालविस्मृतम् ॥ नतद्रुद्रमहेशाभ्यांविस्मृतंकर्मतादृशम् ॥ १२ ॥

वि०सं०१ प्राचीन कवियोंको जानना चाहिये ॥ ८ ॥ इसी पांच कृत्यके धारण करनेको मेरे पांच मुख हैं चार दिशाओंमें चार मध्यमें और पांचवाँ
अ० १० मुख है ॥ ९ ॥ हे पुत्रो ! यह कृत्य आपने तपसे प्राप्त किया है जोकि सृष्टिकी उत्पत्ति और पालन कहाता है सो मैंने प्रसन्न होकर तुम्हें
दिया है ॥१०॥ इसी प्रकारसे दूसरे दो कृत्य रुद्र और महेशको प्रदान किये हैं परन्तु अनुग्रह कृत्य कोई भी पानेको समर्थ नहीं है ॥११॥
सो पूर्वके कर्म्म तुमने समयसे बिसार दिये रुद्र और महेशने उनको नहीं भुलाया है ॥ १२ ॥

शि०पु० ॥१९॥ रूपवेश कृत्य आसन वाहन और आयुधादिमें हमारी साम्यता थी ॥ १३ ॥ हे सौम्य ! मेरे ज्ञानके विमुख होनेसे तुम्हें अज्ञानता आगई मेरा ज्ञान होनेसे ऐसा नहीं होता ज्ञान और रूप महेशके तुल्य होजाता है ॥ १४ ॥ इस कारण उस ज्ञानकी सिद्धिके निमित्त ॐकार नामक मंत्र जप करो यह अभिमानका दूर करनेवाला है ॥ १५ ॥ सोई निज मंत्र उपदेश करते हैं यह ॐकार मेरे मुखसे उत्पन्न होनेसे मेरेही रूपका बोधक हैं और महामंगल करनेवाला है॥१६॥यह वाचकहै और मैंवाच्यहूं. यह मंत्र मेरा आत्मा है उसके स्मरणसे मेरास्मरण होता है ॥ १७ ॥ उत्तरकी ओरके मुखसे अकार' पश्चिमके मुखसे उकार, दक्षिणके मुखसे मकार, पूर्वक मुखसे बिन्दु ॥ १८ ॥ मध्यके मुखसे नाद

रूपेवेशेचकृत्येचवाहनेचासनेतथा ॥ आयुधादौचमत्साम्यमस्माभिस्तत्कृतेकृतम् ॥ १३ ॥ मद्ध्यानविरहाद्वत्सौमौढ्यंवामेवमागतम्मज्ज्ञानेसतिनैवंस्यान्मानंरूपेमहेशवत् ॥ १४ ॥ तस्मान्मज्ज्ञानसिद्ध्यर्थंमंत्रमोंकारनामकम् ॥ इतःपरंप्रजपतंमामकंमानभंजनम् ॥ ॥ १५ ॥ उपादिशं निजं मंत्रमोंकारमुरुमंगलम् ॥ ओंकारो मन्मुखाज्जज्ञे प्रथमं मत्प्रबोधकः ॥ १६ ॥ वाचकोऽयमहंवाच्योमंत्रोऽयंहिमदात्मकः ॥ तदनुस्मरणंनित्यंममानुस्मरणंभवेत् ॥ १७ ॥ अकारउत्तरात्पूर्वमुकारः पश्चिमाननात् ॥ मकारोदक्षिणमुखाद्बिंदुःप्राङ्मुखतस्तथा ॥ १८ ॥ नादोमध्यमुखादेवंपंचधाऽसौविजृंभितः ॥ एकीभूतःपुनस्तद्वदोमित्येकाक्षरोभवत् ॥ १९ ॥ नामरूपात्मकंसर्ववेदभूतकुलद्वयम् ॥ व्याप्तमेतेनमंत्रेणशिवशक्त्योश्चबोधकः ॥ २० ॥ अस्मात्पंचाक्षरंजज्ञेबोधकंसकलस्यतत् ॥ आकारादिक्रमेणैवनकारादियथाक्रमम् ॥ २१ ॥

वि०सं०१ अ० १० उत्पन्न हुआ. इस प्रकार पांच प्रकारसे वह निर्गत हुआ वह सब एक होकर 'ॐ' ऐसा एकाक्षर होजाता है ॥ १९ ॥ यह सब नाम रूपात्मक वेदभूत दोनों कुल अर्थात् स्त्रीपुरुष भेदसे भौतिक शरीर वर्ग दोका भेदवाला है वह इसी मंत्रसे व्याप्त है और शिवशक्तिका बोधक है ॥ २० ॥ इसी ॐकारसे सब जगत्का बोधक प्रवण उत्पन्न हुआ है अकारादिक्रमसे अर्थात् अकारसे नकार उकारसे मकार मकारसे 'शि' बिन्दुसे 'वा' नादसे 'य' प्रगट हुआ है ॥ २१ ॥

कष्ण जी के वकील :- हम चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद), श्रीमद्भगवत गीता, अठारह पुराणों, महाभारत ग्रंथ तथा श्रीमद्भगवत सुधा सागर को सत्य शास्त्र मानते हैं। इन्हीं सद्ग्रन्थों को आधार मानकर ज्ञान बताते हैं तथा साधना बताते हैं। श्री कष्ण उर्फ श्री विष्णु, श्री शिव जी, श्री देवी दुर्गा की पूजा करने को कहते हैं। श्राद्ध करना बताते हैं। देव पूजा करते तथा करवाते हैं।

कबीर जी का वकील :- दास अदालत को बताना चाहता है कि श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा कि :-

अध्याय 16 श्लोक 23 :- जो पुरूष यानि साधक शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है। (जो शास्त्रों में वर्णित साधना नहीं है, वह साधना शास्त्रविधि त्यागकर स्वइच्छा से आचरण करना कहा है।) वह न सिद्धि को प्राप्त होता है, न परमगति को, न सुख को ही।

सबूत के लिए पढ़ें गीता अध्याय 16 श्लोक 23 की फोटोकॉपी :-

यः, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, वर्तते, कामकारतः,
न, सः, सिद्धिम्, अवाप्नोति, न, सुखम्, न, पराम्, गतिम् ॥ २३ ॥

और—

यः	= जो पुरुष	**सिद्धिम्**	= सिद्धिको
शास्त्रविधिम्	= शास्त्रविधिको	**अवाप्नोति**	= प्राप्त होता है,
उत्सृज्य	= त्यागकर	**न**	= न
कामकारतः	= अपनी इच्छासे मनमाना	**पराम्**	= परम
वर्तते	= आचरण करता है,	**गतिम्**	= गतिको (और)
सः	= वह	**न**	= न
न	= न	**सुखम्**	= सुखको ही।

गीता अध्याय 16 श्लोक 24 :- (हे अर्जुन!) इससे तेरे लिए कर्तव्य यानि जो साधना करनी चाहिए और अकर्तव्य यानि जो साधना नहीं करनी चाहिए, उसके लिए शास्त्र ही प्रमाण हैं। ऐसा जानकर तू शास्त्रविधि से नियत कर्म कर यानि शास्त्रों में जो नहीं लिखा, वह न कर। जो शास्त्रों में वार्णित है, वही साधना कर।

पढ़ें प्रमाण के लिए गीता अध्याय 16 श्लोक 24 की फोटोकॉपी :-

तस्माच्छास्त्रं प्रमाणं ते कार्याकार्यव्यवस्थितौ।
ज्ञात्वा शास्त्रविधानोक्तं कर्म कर्तुमिहार्हसि॥ २४॥

तस्मात्, शास्त्रम्, प्रमाणम्, ते, कार्याकार्यव्यवस्थितौ,
ज्ञात्वा, शास्त्रविधानोक्तम्, कर्म, कर्तुम्, इह, अर्हसि॥ २४॥

तस्मात्	= इससे	**प्रमाणम्**	= प्रमाण है।
ते	= तेरे लिये	**(एवम्)**	= ऐसा
इह	= इस	**ज्ञात्वा**	= जानकर (तू)
कार्याकार्यव्यवस्थितौ	= कर्तव्य और अकर्तव्यकी व्यवस्थामें	**शास्त्रविधानोक्तम्**	= शास्त्रविधिसे नियत
		कर्म	= कर्म (ही)
		कर्तुम्	= करने
शास्त्रम्	= शास्त्र (ही)	**अर्हसि**	= योग्य है।

''गीता, वेदों व पुराणों में भी पित्तर व भूत पूजा मोक्षदायक नहीं बताई है।''

प्रमाण :- श्री कष्ण जी के वकील साहेबान कहते हैं कि हम श्राद्ध करते तथा करवाते हैं जबकि गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में कहा है कि जो पितरों की पूजा करते हैं, वे पितरों को प्राप्त होंगे यानि पितर योनि प्राप्त करके पितर लोक में जाएँगे, मोक्ष नहीं होगा। जो भूत पूजते हैं, वे भूतों को प्राप्त होंगे यानि भूत बनेंगे। श्राद्ध करना पितर पूजा तथा भूत पूजा है। तेरहवीं क्रिया करना, वर्षी क्रिया करना, शमशान घाट से शेष बची हड्डियों के अवशेष उठाकर गंगा में प्रवाह करना व पुरोहितों से प्रवाह करवाना आदि-आदि सब पितर तथा भूत पूजा है जिससे मोक्ष नहीं दुर्गति प्राप्त होती है जिसके जिम्मेदार श्री कष्ण जी के वकील जी हैं।

कष्ण जी के वकील :- श्राद्ध कर्म तो भगवान रामचन्द्र जी ने वनवास के दौरान भी अपने पिता श्री दशरथ जी का किया था। सीता जी ने अपने हाथों से भोजन बनाया था। जब ब्राह्मण श्राद्ध का भोजन खा रहे थे, उसी पंक्ति में सीता जी ने अपने स्वसूर दशरथ जी को भोजन खाते आँखों देखा। सीता ने घूंघट निकाला और श्री रामचन्द्र को बताया। दशरथ जी स्वर्ग से श्राद्ध खाने आए थे। इसलिए श्राद्ध कर्म करना चाहिए।

कबीर जा का वकील :- अदालत को बताना चाहता हूँ कि इन्होंने यानि शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करने व करवाने वालों ने ही दशरथ जैसी नेक आत्माओं को गलत साधना करने के लिए प्रेरित करके भूत व पित्तर बनवाया। फिर वह श्राद्ध ही खाएगा। उसे स्वर्ग के पकवान कहाँ से मिलेंगे या मोक्ष कहाँ से मिलेगा?

गीता में चारों वेदों वाला ज्ञान संक्षिप्त में कहा है। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में श्राद्ध व पिंड

आदि कर्मकांड को गलत कहा है। मार्कण्डेय पुराण में भी प्रमाण है कि वेदों में पित्तर पूजा, भूत पूजा यानि श्राद्ध करना, अविद्या यानि मूर्खों का कार्य बताया है।

पेश है प्रमाण के लिए गीता अध्याय 9 श्लोक 25 की फोटोकॉपी :-

यान्ति, देवव्रताः, देवान्, पितॄन्, यान्ति, पितृव्रताः,
भूतानि, यान्ति, भूतेज्याः, यान्ति, मद्याजिनः, अपि, माम्॥ २५॥

कारण यह नियम है कि—

देवव्रताः	= देवताओंको पूजनेवाले	**यान्ति**	= प्राप्त होते हैं (और)
देवान्	= देवताओंको	**मद्याजिनः**	= मेरा पूजन करनेवाले भक्त
यान्ति	= प्राप्त होते हैं,		
पितृव्रताः	= पितरोंको पूजनेवाले	**माम्**	= मुझको
		अपि	= ही
पितॄन्	= पितरोंको	**यान्ति**	= प्राप्त होते हैं। (इसीलिये मेरे भक्तोंका पुनर्जन्म नहीं होता।*)
यान्ति	= प्राप्त होते हैं,		
भूतेज्याः	= भूतोंको पूजनेवाले		
भूतानि	= भूतोंको		

यह अनुवाद श्री जयदयाल गोयन्दका का किया हुआ गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित है। इसमें लिखा है कि ''इसलिए मेरे भक्तों का पुनर्जन्म नहीं होता'' यह गलत लिखा है। प्रथम तो मूल पाठ में ऐसा कोई शब्द नहीं है जिसका अर्थ यह बनता हो। दूसरे गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में स्पष्ट किया है कि मेरा पुनर्जन्म होता है। बार-बार जन्मता-मरता हूँ। जब गीता ज्ञान दाता स्वयं जन्मता-मरता है तो पुजारी का जन्म-मरण कैसे समाप्त हो सकता है? श्री कष्ण के वकील साहेबानों (हिन्दू धर्मगुरूओं) ने जनता को झूठा ज्ञान बताकर भ्रमित कर रखा है। अनमोल मानव जन्म बरबाद करवा रहे हैं।

''श्राद्ध-पिण्डदान गीता अनुसार कैसा है?''

आप (श्री कष्ण जी के वकील) श्राद्ध व पिण्डदान करते तथा करवाते हो। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में स्पष्ट किया है कि भूत पूजने वाले भूतों को प्राप्त होंगे। श्राद्ध करना, पिण्डदान करना यह भूत पूजा है, यह व्यर्थ साधना है। पुराणों में कुछ वेद ज्ञान है।

''श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रूची ऋषि का वेदमत''

मार्कण्डेय पुराण में ''रौच्य ऋषि के जन्म'' की कथा आती है। एक रुची ऋषि था। वह ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदों अनुसार साधना करता था। विवाह नहीं कराया था। रुची ऋषि के पिता, दादा, परदादा तथा तीसरे दादा सब पित्तर (भूत) योनि में भूखे-प्यासे भटक रहे थे। एक दिन उन चारों ने रुची ऋषि को दर्शन दिए तथा कहा कि बेटा! आप ने विवाह क्यों नहीं किया? विवाह करके हमारे श्राद्ध करना। रुची ऋषि ने कहा कि हे पितामहो! वेद में इस श्राद्ध आदि कर्म को अविद्या कहा है, मूर्खों का कार्य कहा है। फिर आप मुझे इस कर्म को करने को क्यों कह रहे

हो?

''पित्तरों ने कहा कि यह बात सत्य है कि श्राद्ध आदि कर्म को वेदों में अविद्या अर्थात् मूर्खों का कार्य ही कहा है। पित्तरों ने यह भी कहा है कि बेटा! तुम जिस मार्ग पर चल रहे हो, यह मोक्ष का मार्ग है।''

❖ विचार करो :- रूची ऋषि के पूर्वज सब ब्राह्मण (ऋषि) थे। वेद पढ़ते थे। कर्मकाण्ड वेद विरूद्ध करते थे। जिस कारण से प्रेत योनि में गिरे। उन्होंने वेद तो पढ़ रखे थे। इसलिए स्वीकारा कि वेद में ऐसा ही कहा है। फिर उन पित्तरों ने वेद विरूद्ध ज्ञान बताकर रूची ऋषि को भ्रमित कर दिया क्योंकि मोह भी अज्ञान की जड़ है। मार्कण्डेय पुराण के प्रकरण से सिद्ध हुआ कि वेदों में तथा वेदों के ही संक्षिप्त रुप गीता में श्राद्ध-पिण्डोदक आदि भूत पूजा के कर्म को निषेध बताया है, नहीं करना चाहिए। उन मूर्ख ऋषियों ने अपने पुत्र को भी श्राद्ध करने के लिए विवश किया। उसने विवाह कराया, उससे रौच्य ऋषि का जन्म हुआ, बेटा भी पाप का भागी बना लिया। पितर बना दिया। आश्चर्य की बात तो यह है कि रूची ऋषि के पित्तरों ने कहा है कि बेटा! तुम जिस मार्ग पर चले हो, वह मोक्ष का मार्ग है। फिर भी रूची को भ्रमित किया कि पित्तर पूज और पित्तर बन। करवा दुर्गति जैसे उन पित्तरों की हो रही थी। रूची सही मार्ग पर था। उसे भी नरक का भागी बना दिया। ऐसे कर्म हैं इन श्री कष्ण जी के वकीलों यानि धर्मगुरूओं के। धिक्कार है ऐसे लोगों को जो मानव जाति को भ्रमित करके उनका अनमोल मानव जीवन नष्ट करवा रहे हैं, स्वयं भी दुर्गति को प्राप्त हो रहे हैं।

पेश है प्रमाण के लिए संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराण के अध्याय ''रौच्य मनुकी उत्पत्ति-कथा'' से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

२५० संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण

रौच्य मनुकी उत्पत्ति-कथा

मार्कण्डेयजी कहते हैं—ब्रह्मन्! पूर्वकालकी बात है, प्रजापति रुचि ममता और अहङ्कारसे रहित इस पृथ्वीपर विचरते थे। उन्हें किसीसे भय नहीं था। वे बहुत कम सोते थे। उन्होंने न तो अग्निकी स्थापना की थी और न अपने लिये घर ही बना रखा था। वे एक बार भोजन करते और बिना आश्रमके ही रहते थे। उन्हें सब प्रकारकी आसक्तियोंसे रहित एवं मुनिवृत्तिसे रहते देख उनके पितरोंने उनसे कहा।

पितर बोले—बेटा! विवाह स्वर्ग और अपवर्गका हेतु* होनेके कारण एक पुण्यमय कार्य है; उसे तुमने क्यों नहीं किया? गृहस्थ पुरुष समस्त देवताओं, पितरों, ऋषियों और अतिथियोंकी पूजा करके पुण्यमय लोकोंको प्राप्त करता है। वह 'स्वाहा' के उच्चारणसे देवताओंको, 'स्वधा' शब्दसे पितरोंको तथा अन्नदान (बलिवैश्वदेव) आदिसे भूत आदि प्राणियों एवं अतिथियोंको उनका भाग समर्पित करता है। बेटा! हम ऐसा मानते हैं कि गृहस्थ आश्रमको स्वीकार न करनेपर तुम्हें इस जीवनमें क्लेश-पर-क्लेश उठाना पड़ेगा तथा मृत्युके बाद और दूसरे जन्ममें भी क्लेश ही भोगने पड़ेंगे।

रुचिने कहा—पितृगण! परिग्रहमात्र ही अत्यन्त दु:ख एवं पापका कारण होता है तथा उससे मनुष्यकी अधोगति होती है, यही सोचकर मैंने पहले स्त्री-संग्रह नहीं किया। मन और इन्द्रियोंको नियन्त्रणमें रखकर जो यह आत्मसंयम किया जाता है, वह भी परिग्रह करनेपर मोक्षका साधक नहीं होता। ममतारूप कीचड़में सना हुआ होनेपर भी यह आत्मा जो परिग्रहशून्य चित्तरूपी जलसे

प्रतिदिन धोया जाता है, वह श्रेष्ठ प्रयत्न है। जितेन्द्रिय विद्वानोंको चाहिये कि वे अनेक जन्मोंद्वारा सञ्चित कर्मरूपी पङ्कमें सने हुए आत्माका सद्वासनारूपी जलसे प्रक्षालन करें।

पितर बोले—बेटा! जितेन्द्रिय होकर आत्माका प्रक्षालन करना उचित ही है; किन्तु तुम जिसपर चल रहे हो, वह मोक्षका मार्ग है। किन्तु फलेच्छारहित दान और शुभाशुभके उपभोगसे भी पूर्वकृत अशुभ कर्म दूर होता है। इसी प्रकार दयाभावसे प्रेरित होकर जो कर्म किया जाता है, वह बन्धनकारक नहीं होता। फल-कामनासे रहित कर्म भी बन्धनमें नहीं डालता। पूर्वजन्ममें किया हुआ मानवोंका शुभाशुभ कर्म सुख-दुःखमय भोगोंके रूपमें प्रतिदिन भोगनेपर ही क्षीण होता है।[1] इस प्रकार विद्वान् पुरुष आत्माका प्रक्षालन करते और उसकी बन्धनोंसे रक्षा करते हैं। ऐसा करनेसे वह अविवेकके कारण पापरूपी कीचड़में नहीं फँसता।

रुचिने पूछा—पितामहो! वेदमें कर्ममार्गको अविद्या कहा गया है, फिर क्यों आपलोग मुझे उस मार्गमें लगाते हैं?

पितर बोले—यह सत्य है कि कर्मको अविद्या ही कहा गया है, इसमें तनिक भी मिथ्या नहीं है; फिर भी इतना तो निश्चित है कि उस विद्याकी प्राप्तिमें कर्म ही कारण है। विहित कर्मका पालन न करके जो अधम मनुष्य संयम करते हैं, वह संयम अन्तमें मोक्षकी प्राप्ति नहीं कराता; अपितु अधोगतिमें ले जानेवाला होता है। वत्स! तुम तो समझते हो कि मैं आत्माका प्रक्षालन करता हूँ;

किन्तु वास्तवमें तुम शास्त्रविहित कर्मोंके न करनेके कारण पापोंसे दग्ध हो रहे हो! कर्म अविद्या होनेपर भी विधिके पालनद्वारा शोधे हुए विषकी भाँति मनुष्योंका उपकार करनेवाला ही होता है। इसके विपरीत वह विद्या भी विधिकी अवहेलनासे निश्चय ही हमारे बन्धनका कारण बन जाती है।[2] अतः वत्स! तुम विधिपूर्वक स्त्री-संग्रह करो। ऐसा न हो कि इस लोकका

आन-उपासना करना व्यर्थ है

☛ श्री कष्ण जी के वकील मूर्ति पूजा करने की राय देते हैं। यह काल ब्रह्म द्वारा दिया गलत ज्ञान है जो वेदों व गीता के विरूद्ध साधना होने से व्यर्थ है।

सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) में कबीर परमेश्वर जी ने आन-उपासना निषेध बताया है। उपासना का अर्थ है अपने ईष्ट देव के निकट जाना यानि ईष्ट को प्राप्त करने के लिए की जाने वाली तड़फ, दूसरे शब्दों में पूजा करना।

आन-उपासना वह पूजा है जो शास्त्रों में वर्णित नहीं है।

❖ मूर्ति-पूजा आन-उपासना है :-

इस विषय पर सूक्ष्मवेद में कबीर साहेब ने इस प्रकार स्पष्ट किया है :-

कबीर, पत्थर पूजें हरि मिले तो मैं पूजूँ पहार। तातें तो चक्की भली, पीस खाए संसार।।

बेद पढ़ैं पर भेद ना जानें, बांचें पुराण अठारा। पत्थर की पूजा करें, भूले सिरजनहारा।।

शब्दार्थ :- किसी देव की पत्थर की मूर्ति बनाकर उसकी पूजा करते हैं जो शास्त्रविरूद्ध है। जिससे कुछ लाभ नहीं होता। कबीर परमेश्वर ने कहा है कि यदि एक छोटे पत्थर (देव की प्रतिमा) के पूजने से परमात्मा प्राप्ति होती हो तो मैं तो पहाड़ की पूजा कर लूँ ताकि शीघ्र मोक्ष मिले। परंतु यह मूर्ति पूजा व्यर्थ है। इस (मूर्ति वाले पत्थर) से तो घर में रखी आटा पीसने वाली पत्थर की चक्की भी लाभदायक है जिससे कणक पीसकर आटा बनाकर सब भोजन बनाकर खा रहे हैं।

वेदों व पुराणों का यथार्थ ज्ञान न होने के कारण हिन्दू धर्म के धर्मगुरू पढ़ते हैं वेद, पुराण व गीता, परंतु पूजा मनमाना आचरण करके करता तथा करवाते। पत्थर की मूर्ति व शिवलिंग बनवाकर पूजा करते तथा अनुयाईयों से करवाते हैं। इनको सजनहार यानि परम अक्षर ब्रह्म का ज्ञान ही नहीं है। उसको न पूजकर अन्य देवी-देवताओं की पूजा तथा उन्हीं की काल्पनिक मूर्ति पत्थर की बनाकर पूजा का विधान लोकवेद (दंत कथा) के आधार से बनाकर यथार्थ परमात्मा को भूल गए हैं। उस परमेश्वर (तत् ब्रह्म यानि परम अक्षर ब्रह्म) की भक्ति विधि का भी ज्ञान नहीं है।

❖ विवेक से काम लेते हैं :- परमात्मा कबीर जी ने समझाने की कोशिश की है कि आप जी को आम का फल खाने की इच्छा हुई। किसी ने आपको बताया कि यह पत्थर की मूर्ति आम के फल की है। आम के फल के ढ़ेर सारे गुण बताए। आप जी उस आम के फल के गुण तो उसको खाकर प्राप्त कर सकते हैं। जो आम की मूर्ति पत्थर की बनी है, उससे आम वाला लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। आप जी को आम का फल चाहिए। उसकी यथार्थ विधि है कि पहले मजदूरी-नौकरी करके धन प्राप्त करो। फिर बाजार में जाकर आम के फल विक्रेता को खोजो। फिर वह वांछित वस्तु मिलेगी।

इसी प्रकार जिस भी देव के गुणों से प्रभावित होकर उससे लाभ लेने के लिए आप प्रयत्नशील हैं, उससे लाभ की प्राप्ति उसकी मूर्ति से नहीं हो सकती। उसकी विधि शास्त्रों में वर्णित है। वह अपनाऐं तथा मजदूरी यानि साधना करके भक्ति धन संग्रह करें। फिर वक्ष की शाखा रूपी देव आप जी को मन वांछित फल आपके भक्ति कर्म के आधार से देंगे।

अन्य उदाहरण :- किसी संत (बाबा) से उसके अनुयाईयों को बहुत सारे लाभ हुआ करते थे। श्रद्धालु अपनी समस्या बाबा यानि गुरू जी को बताते थे। गुरू जी उस कष्ट के निवारण की युक्ति बताते थे। अनुयाईयों को लाभ होता था। उस बाबा की मत्यु के पश्चात् श्रद्धालुओं ने श्रद्धावश उस महात्मा की पत्थर की मूर्ति बनाकर मंदिर बनवाकर उसमें स्थापित कर दी। फिर उसकी पूजा प्रारम्भ कर दी। उस मूर्ति को भोजन बनाकर भोग लगाने लगे। उसी के सामने अपने संकट निवारण की प्रार्थना करने लगे। उस मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठित करने का भी आयोजन करते हैं। यह अंध श्रद्धा भक्ति है जो मानव जीवन की नाशक है।

❖ विचार करें :- एक डॉक्टर (वैद्य) था। जो भी रोगी उससे उपचार करवाता था, वह स्वस्थ हो जाता था। डॉक्टर रोगी को रोग बताता था और उसके उपचार के लिए औषधि देकर औषधि के सेवन की विधि बताता था। साथ में किन वस्तुओं का सेवन करें, किनका न करें, सब हिदायत देता था। इस प्रकार उपचार से रोगी स्वस्थ हो जाते थे। जिस कारण से वह डॉक्टर उस क्षेत्र के व्यक्तियों में आदरणीय बना था। उसकी प्रसिद्धि दूर-दूर तक थी। यदि उस डॉक्टर की मत्यु के पश्चात् उसकी पत्थर की मूर्ति बनवाकर मंदिर बनाकर प्राण प्रतिष्ठित करवाकर स्थापित कर दी

जाए। फिर उसके सामने रोगी खड़ा होकर अपने रोग के उपचार के लिए प्रार्थना करे तो क्या वह पत्थर बोलेगा? क्या पहले जीवित रहते की तरह औषधि सेवन, विधि तथा परहेज बताएगा? नहीं, बिल्कुल नहीं। उन रोगियों को उसी जैसा अनुभवी डॉक्टर खोजना होगा जो जीवित हो। पत्थर की मूर्ति से उपचार की इच्छा करने वाले अपने जीवन के साथ धोखा करेंगे। वे बिल्कुल भोले या बालक बुद्धि के हो सकते हैं।

❖ एक बात और विशेष विचारणीय है कि जो व्यक्ति कहते हैं कि मूर्ति में प्राण प्रतिष्ठित कर देने से मूर्ति सजीव मानी जाती है। यदि मूर्ति में प्राण (जीवन-श्वांस) डाल दिए हैं तो उसे आपके साथ बातें भी करनी चाहिए। भ्रमण के लिए भी जाना चाहिए। भोजन भी खाना चाहिए। ऐसा प्राण प्रतिष्ठित कोई भी मूर्ति नहीं करती है। इससे सिद्ध हुआ कि यह अंध श्रद्धा भक्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

❖ शिव लिंग पूजा :- जो अपने धर्मगुरूओं द्वारा बताई गई धार्मिक साधना कर रहे हैं, वे पूर्ण रूप से संतुष्ट हैं कि यह साधना सही है। इसलिए वे अंधविश्वास (Blind Faith) किए हुए हैं।

इस शिव लिंग पर प्रकाश डालते हुए मुझे अत्यंत दुःख व शर्म का एहसास हो रहा है। परंतु अंधविश्वास को समाप्त करने के लिए प्रकाश डालना अनिवार्य तथा मजबूरी है।

शिव लिंग (शिव जी की पेशाब इन्द्री) के चित्र में देखने से स्पष्ट होता है कि शिव का लिंग (Private Part) स्त्री की लिंगी (पेशाब इन्द्री यानि योनि) में प्रविष्ट है। इसकी पूजा हिन्दू श्रद्धालु कर रहे हैं।

शिव लिंग की पूजा कैसे प्रारम्भ हुई?

शिव महापुराण {जो वैंकटेश्वर प्रेस मुंबई से छपी है तथा जिसके प्रकाशक हैं ''खेमराज श्री कष्णदास प्रकाशन मुंबई (बम्बई), हिन्दी टीकाकार (अनुवादक) हैं विद्यावारिधि पंडित ज्वाला प्रसाद जी मिश्र} भाग-1 में विद्येश्वर संहिता अध्याय 5 पष्ठ 11 पर नंदीकेश्वर यानि शिव के वाहन ने बताया कि शिव लिंग की पूजा कैसे प्रारम्भ हुई?

❖ विद्येश्वर संहिता अध्याय 5 श्लोक 27-30 :- पूर्व काल में जो पहला कल्प जो लोक में विख्यात है। उस समय महात्मा ब्रह्मा और विष्णु का परस्पर युद्ध हुआ।(27) उनके मान को दूर करने को उनके बीच में उन निष्कल परमात्मा ने स्तम्भरूप अपना स्वरूप दिखाया।(28) तब जगत के हित की इच्छा से निर्गुण शिव ने उस तेजोमय स्तंभ से अपने लिंग आकार का स्वरूप दिखाया।(29) उसी दिन से लोक में वह निष्कल शिव जी का लिंग विख्यात हुआ।(30)

❖ विद्येश्वर संहिता पष्ठ 18 अध्याय 9 श्लोक 40-43 :- इससे मैं अज्ञात स्वरूप हूँ। पीछे तुम्हें दर्शन के निमित साक्षात् ईश्वर तत्क्षण ही मैं सगुण रूप हुआ हूँ।(40) मेरे ईश्वर रूप को सकलत्व जानों और यह निष्कल स्तंभ ब्रह्म का बोधक है।(41) लिंग लक्षण होने से यह मेरा लिंग स्वरूप निर्गुण होगा। इस कारण हे पुत्रो! तुम नित्य इसकी अर्चना करना।(42) यह सदा मेरी आत्मा रूप है और मेरी निकटता का कारण है। लिंग और लिंगी के अभेद से यह महत्व नित्य पूजनीय है।(43)

पेश है शिव पुराण के विद्येश्वर संहिता के अध्याय 5 श्लोक 27-30 व अध्याय 9 श्लोक 40-43 की फोटोकॉपी :-

शि०पु० ॥११॥ हे योगीन्द्र ! मैं उस लिंगाविर्भावका लक्षण सुना चाहता हूं ॥ नन्दिकेश्वर बोले हे वत्स ! सुनो मैं तुम्हारी प्रीतिसे कहता हूं ॥ २६ ॥ पूर्वकालमें जो पहला कल्प था जो लोकमें विख्यात है उस समय महात्मा ब्रह्मा और विष्णुका परस्पर युद्ध हुआ था ॥ २७॥ उनके मान दूर करनेको उनके बीचमें उन निष्कल परमात्माने स्तम्भरूप अपना स्वरूप दिखाया ॥ २८ ॥ तब जगत्‌के हितकी इच्छासे निर्गुण शिवने उस तेजोमयस्तंभसे अपने लिंगाकारका स्वरूप दिखाया ॥ २९ ॥ उसीदिनसे लोकमें वह निष्कल शिवजीका लिंग विख्यात हुआ, और

श्रोतुमिच्छामियोगींद्रलिंगाविर्भावलक्षणम् ॥ नंदिकेश्वरउवाच ॥ शृणुवत्सभवत्प्रीत्यावक्ष्यामिपरमार्थतः ॥२६॥ पुराकल्पेमहाकाले प्रपन्नेलोकविश्रुते ॥ आयुध्येतांमहात्मानौब्रह्मविष्णूपरस्परम् ॥२७॥ तयोर्मानंनिराकर्तुंतन्मध्येपरमेश्वरः ॥ निष्कलस्तंभरूपेणस्वरूपंसमदर्शयत् ॥२८॥ ततःस्वलिंगचिह्नत्वात्स्तंभतोनिष्कलंशिवः ॥ स्वलिंगंदर्शयामासजगतांहितकाम्यया ॥२९॥ तदाप्रभृतिलोकेषुनिष्कलंलिंगमैश्वरम्॥सकलंचतथाबेरंशिवस्यैवप्रकल्पितम् ॥३०॥ शिवान्येषःतुदेवानांबेरमात्रंप्रकल्पितम् ॥ तत्तद्बेरंतुदेवानांतत्तद्भोगप्रदंशुभम् ॥ शिवस्यलिंगबेरत्वभोगमोक्षप्रदंशुभम् ॥३१॥ इतिश्रीशिवमहापुराणेविद्येश्वरसंहितायांपंचमोऽध्यायः ॥५॥नंदिकेश्वरउवाच ॥ पुराकदाचिद्योगींद्रविष्णुर्विषधरासनः ॥ सुष्वापपरयाभूत्यास्वानुगैरपिसंवृतः ॥१॥ यदृच्छयागतस्तत्रब्रह्माब्रह्मविदांवरः ॥ अपृच्छत्पुंडरीकाक्षंशयनंसर्वसुन्दरम् ॥ २ ॥

वि०सं०१ अ० ६ सगुणरूपमें बेररूप की कल्पना की गई ॥ ३० ॥ देवताओंकी वह बेर पूजा इच्छानुसार भोगोंको देनेहारी है परन्तु शिवका लिंगबेर भोग और मोक्ष दोनोंका देनेहारा है ॥ ३१ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहिताभाषायां पंचमोध्यायः ॥ ५ ॥ नन्दिकेश्वर बोले हे योगींद्र ! आगे एक समय विष्णु भगवान् शेषशय्यापर अपने गरुड़ादि पार्षदोंसे संयुक्त लक्ष्मीसहित शयन करते थे ॥ १ ॥ उस समय ब्रह्मज्ञानियोंमें श्रेष्ठ ब्रह्माजी अपनी इच्छासेही वहाँ आये सब प्रकार सुन्दर सेजपर शयन करते हुए कमललोचन विष्णुजीसे पूछने लगे ॥ २ ॥

शि०पु० ॥१८॥ इसीसे मैं अज्ञातस्वरूप हूं पीछे तुम्हें प्रगट दर्शन देनेके निमित्त साक्षात् ईश्वर तत्क्षणही मैं सगुणरूप हुआ हूं ॥ ४० ॥ मेरे ईशत्वरूपको सकलत्व जानो और यह निष्कलत्व स्तंभ ब्रह्मका बोधक है ॥ ४१ ॥ लिंगलक्षण होनेसे यह मेरा लिंगस्वरूप निर्गुण होगा इस कारण हे पुत्रो ! तुम नित्य इनकी अर्चना करना ॥ ४२ ॥ यह सदा मेरी आत्मारूप है और मेरी निकटताका कारण है लिंग और लिंगीके अभेदसे यह महत्व निन्य पूजनीय है ॥ ४३ ॥ जहां कहीं किसीने मेरे इस लिंगकी प्रतिष्ठा की है हे पुत्र ! वहां मैं अप्रतिष्ठित भी स्थित हूं ॥४४॥ एक लिंगके स्थापनसे मेरे समान रूपकी प्राप्ति यह फल होता है, और दूसरे लिंगके स्थापन करनेमें मेरी एकताकी प्राप्ति होती है ॥ ४५ ॥

तस्मादज्ञातमीशत्वंव्यक्तंद्योतयितुंहिवाम्॥सकलोहमतोजातःसाक्षादीशस्तुतत्क्षणात्४०सकलत्वमतोज्ञेयमीशत्वंमयिसत्वरम् ॥ यदिदंनिष्कलंस्तंभंममब्रह्मत्वबोधकम् ॥ ॥४१॥ लिंगलक्षणयुक्तत्वान्ममलिंगंभवेदिदम् ॥ तदिदंनित्यमभ्यर्च्यंयुवाभ्यामत्रपुत्रकौ ॥४२॥ मदात्मकमिदंनित्यंममसान्निध्यकारणम् ॥ महत्पूज्यमिदंनित्यमभेदाल्लिंगलिंगिनोः ॥४३॥यत्रप्रतिष्ठितंयेनमदीयंलिंगमीदृशम् ॥ तत्रप्रतिष्ठितःसोहमप्रतिष्ठोपिवत्सकौ ॥ ४४ ॥ मत्साम्यमेकलिंगस्यस्थापनेफलमीरितम् ॥ द्वितीयेस्थापितेलिंगेमदैक्यंफलमेवहि ॥४५॥ लिंगंप्राधान्यतःस्थाप्यंतथाबेरंतुगौणकम् ॥लिंगाभावेनतत्क्षेत्रंसबेरमपिसर्वतः ॥४६॥ इति श्रीशिवमहापुराणेविद्येश्वरसंहितायांनवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ब्रह्मविष्णूऊचतुः ॥ सर्गादिपंचकृत्यस्यलक्षणंब्रूहिनौप्रभो ॥ शिवउवाच॥ मत्कृत्यबोधनंगुह्यंकृपयाप्रब्रवीमिवाम् १सृष्टिःस्थितिश्चसंहारस्तिरोभावोऽप्यनुग्रहः॥ पंचैवमेजगत्कृत्यंनित्यसिद्धमजाच्युतौ२॥

वि०सं०१ अ० १० वह लिंग प्रधान है और बेरलिंग गौण है लिंगके अभावसे बेर सहित भी वह स्थान क्षेत्र नहीं होता है ॥ ४६ ॥ इति श्रीशिवमहापुराणे विद्येश्वरसंहिता भाषाटीकायां नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ ब्रह्मा और विष्णु बोले हे प्रभो ! आप हमसे सर्गादि पंचकृत्यका लक्षण कहिये शिवजी बोले हमारा कृत्य और ज्ञान दुर्लभ है मैं कृपासे तुमको कहता हूं ॥ १ ॥ हे ब्रह्मा, विष्णु सृष्टि स्थिति संहार तिरोभाव अनुग्रह यह पांच हमारे जगतके कृत्य नित्यसिद्ध हैं ॥ २ ॥

विवेचन :- यह विवरण श्री शिव महापुराण (खेमराज श्री कष्ण दास प्रकाश मुंबई द्वारा प्रकाशित) से शब्दाशब्द लिखा है। फोटोकॉपी भी लगाई है। इसमें स्पष्ट है कि काल ब्रह्म ने जान-बूझकर शास्त्र विरूद्ध साधना बताई है क्योंकि यह नहीं चाहता कि कोई शास्त्रों में वर्णित साधना करे। इसलिए अपने लिंग (गुप्तांग) यानि अपने Private part की पूजा करने को कह दिया। पहले तो तेजोमय स्तंभ ब्रह्मा तथा विष्णु के बीच में खड़ा कर दिया। फिर शिव रूप में प्रकट होकर अपनी पत्नी दुर्गा को पार्वती रूप में प्रकट कर दिया और उस तेजोमय स्तंभ को गुप्त कर दिया और अपने लिंग (गुप्तांग) के आकार की पत्थर की मूर्ति प्रकट की तथा स्त्री के (Private part) गुप्तांग (लिंगी) की पत्थर की मूर्ति प्रकट की। उस पत्थर के लिंग को लिंगी यानि स्त्री की योनि में प्रवेश करके ब्रह्मा तथा विष्णु से कहा कि यह लिंग तथा लिंगी अभेद रूप हैं यानि इन दोनों को ऐसे ही रखकर नित्य पूजा करना।

इसके पश्चात् यह बेशर्म पूजा सब हिन्दुओं में देखा-देखी चल रही है। आप मंदिर में शिवलिंग को देखना। उसके चारों ओर स्त्री इन्द्री का चित्र है जिसमें शिवलिंग प्रविष्ट दिखाई देता है। यह पूजा काल ब्रह्म ने प्रचलित करके मानव समाज को दिशाहीन कर दिया। वेदों तथा गीता के विपरीत साधना बता दी।

आप जी ने ऊपर शिव पुराण भाग-1 में विद्यवेश्वर संहिता के पृष्ठ 11 पर अध्याय 5 श्लोक 27-30 में पढ़ा कि शिव ने जो तेजोमय स्तंभ खड़ा किया था। फिर उस स्तंभ को गुप्त करके पत्थर को अपने लिंग (गुप्तांग) का आकार दे दिया और बोला कि इसकी पूजा किया करो। इस तरह की बकवाद तो शरारती बच्चा जो पुराने समय में पशु चराता था, वह पाली किया करता जो वाद-विवाद में अन्य बालक से कहता था कि ले मेरे इस (गुप्तांग) की धोक मार ले। यही दशा शिवलिंग की पूजा बताने वाले काल ब्रह्म यानि सदाशिव की है जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी के पूज्य पिता जी हैं।

❖ चेतावनी :- वक्त है, अब भी संभल जाओ। नहीं तो मानव जीवन का अवसर हाथ से जाने के पश्चात् रोने के अतिरिक्त कुछ नहीं रहेगा। गीता व वेदों का ज्ञान परम अक्षर ब्रह्म का बताया हुआ है। इसलिए वह शास्त्र प्रमाणित होने से लाभदायक है।

आप देखें यह शिव लिंग का चित्र :-

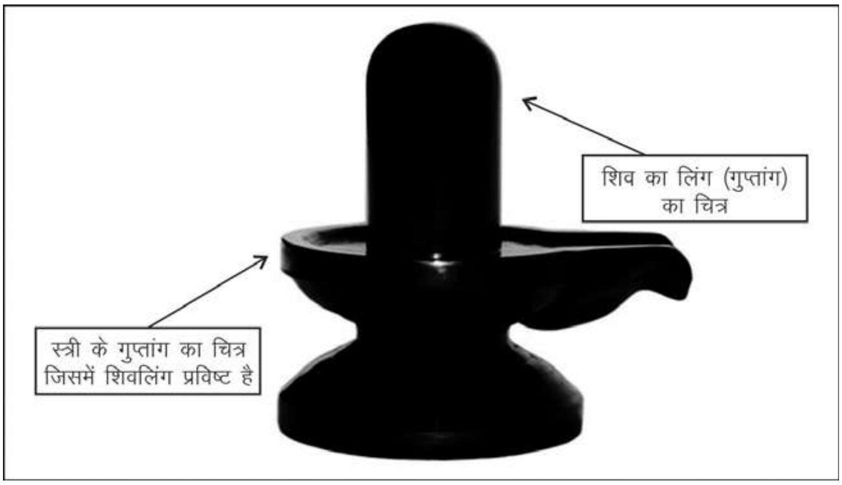

इस शिवलिंग की पूजा अंध श्रद्धावान करते हैं जो शर्म की बात तो है ही, परंतु धर्म के विरूद्ध भी है क्योंकि यह गीता व वेद शास्त्रों में नहीं लिखी है।

इसका खण्डन सूक्ष्मवेद में इस प्रकार किया है कि :-

(संत गरीबदास जी की वाणी)

धरैं शिव लिंगा बहु विधि रंगा, गाल बजावैं गहले।
जे लिंग पूजें शिव साहिब मिले, तो पूजो क्यों ना खैले।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने समझाया है कि तत्वज्ञानहीन मूर्ति पूजक अपनी साधना को श्रेष्ठ बताने के लिए गहले यानि ढ़ीठ व्यक्ति गाल बजाते हैं यानि व्यर्थ की बातें बड़बड़ करते हैं जिनका कोई शास्त्र आधार नहीं होता। वे जनता को भ्रमित करने के लिए विविध प्रकार के रंग-बिरंगे

पत्थर के शिवलिंग रखकर अपनी रोजी-रोटी चलाते हैं।

कबीर जी ने कहा है कि मैं उन्हें बताना चाहता हूँ कि यदि शिव जी के लिंग को पूजने से शिव जी भगवान का लाभ लेना चाहते हो तो आप धोखे में हैं। यदि ऐसी बेशर्म साधना करनी है तो खागड़ (Ox=Male Cow) के लिंग की पूजा कर लो जिससे गाय को गर्भ होता है। उससे अमत दूध मिलता है। हल जोतने के लिए बैल व दूध पीने के लिए गाय उत्पन्न होती है जो प्रत्यक्ष लाभ दिखाई देता है। आपको पता है कि खागड़ के लिंग से कितना लाभ मिलता है। फिर भी उसकी पूजा नहीं कर सकते क्योंकि यह बेशर्मी का कार्य है।

इससे स्पष्ट है कि आप अंध श्रद्धावानों को यही नहीं पता है कि यह पत्थर का बना शिवलिंग व जिसमें यह प्रविष्ट दिखाया है, यह क्या है? यदि आपको पता होता तो इसको एक आँख भी नहीं देखते, पूजा तो बहुत दूर की कौड़ी है।

''शास्त्र विरूद्ध साधना की प्रेरणा भी काल ब्रह्म करता है''

जैसे लिंग (शिवलिंग) को लिंगी में प्रवेश पत्थर की मूर्ति की पूजा काल ब्रह्म ने प्रारम्भ करवाई। इसी प्रकार शास्त्रविधि से भी भ्रमित यही करता है। प्रमाण :- श्री विष्णु पुराण ततीय अंश अध्याय 17 श्लोक 1-44 तथा अध्याय 18 श्लोक 1-36 में।

<u>काल जाल का अन्य प्रमाण</u> :- श्री विष्णु पुराण के ततीय अंश के अध्याय 17 श्लोक 1 से 44 तथा अध्याय 18 श्लोक 1 से 36 में पष्ठ 125 से 221 पर लिखा है कि देवता तथा दैत्य दोनों ही वैदिक धर्म अनुसार साधना करते थे। एक समय दोनों का सौ दिव्य वर्ष तक युद्ध हुआ। देवता पराजित हो गए। देवताओं ने क्षीर समुद्र के उत्तरीय तट पर जाकर तपस्या की और भगवान विष्णु की आराधना के लिए इस स्तव का गान किया। देवगण बोले- हम लोग लोक नाथ भगवान विष्णु की आराधना के लिए जिस वाणी का उच्चारण करते हैं, उससे वे आद्य-पुरूष श्री विष्णु भगवान प्रसन्न हों।(अध्याय 17/मन्त्र 11) उस ब्रह्मस्वरूप को जो निराकार है। उस ब्रह्मस्वरूप को नमस्कार है। हे पुरूषोतम्! आप का जो क्रूरता ओर माया से युक्त घोर तमोमय रुप हैं, उस राक्षस स्वरूप को नमस्कार है।(20) जो कल्पान्त में समस्त भूतों अर्थात प्राणियों का भक्षण कर जाता है, आपके उस काल स्वरूप को नमस्कार है।(25) जो प्रलय काल में देवता आदि समस्त प्राणियों का भक्षण करके नत्य करता है, आपके उस रूद्रस्वरूप को नमस्कार है।(26) विष्णु पुराण ततीय अंश अध्याय 17 के श्लोक 11 से 34 तक स्त्रोत के समाप्त हो जाने पर देवताओं ने श्री हरि को हाथ में शंख चक्र, गदा लिए गरूड़ पर आरूढ़ समुख विराजमान देखा।(35) देवताओं की प्रार्थना सुनकर भगवान विष्णु ने अपने शरीर से (वचन शक्ति से) एक मायामोह को उत्पन्न किया तथा कहा कि वह माया मोह दैत्यों को वेद मार्ग की साधना से हटा कर मनमुखी साधना पर आरूढ़ कर देगा। जिस कारण से दैत्य भक्तिहीन हो जाऐंगें तब, तुम देवता उन्हें मार डालना। ऐसा ही हुआ, माया मोह ने सर्व दैत्यों (राक्षसों) को वैदिक मार्ग से विचलित करके मनमुखी साधना पर आरूढ़ कर दिया। कुछ पश्चात् देवता तपस्या करके (बैट्री चार्ज करके) दैत्यों के साथ युद्ध करने के लिए उपस्थित हुए। दैत्यों ने तपस्या करनी त्याग दी थी जिससे उनमें सिद्धि शक्ति नहीं रही। (उनकी बैट्री चार्ज नहीं हुई) इस कारण से देवताओं ने दैत्यों को मार डाला।

☛ उपरोक्त विष्णु पुराण के उल्लेख का निष्कर्ष :-

काल ब्रह्म ने सर्व प्राणियों (देवताओं, ऋषियों, ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव तथा अन्य प्राणियों) को

भ्रमित किया हुआ है। यह स्वयं ही अपने तीनों पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) का रूप धारण कर लेता है। उपरोक्त स्तोत्र में देवताओं ने श्री विष्णु की स्तुती करनी चाही है, कर रहे हैं काल ब्रह्म की। वह काल ब्रह्म ही विष्णु रूप धारण करके गरूड़ पर बैठ कर आश्वासन दे गया। अपने वचन से एक व्यक्ति उत्पन्न कर के माया मोह नाम रख कर राक्षसों के पास भेज दिया। जो दैत्यगण तपस्या अर्थात् हठयोग करते थे, उससे सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती थी। माया मोह ने वह साधना भी छुड़वा दी जिससे असुर गण सिद्धियों से रहित हो गए। देवता गण भी पहले दैत्यों से युद्ध करने के कारण सिद्धियाँ समाप्त कर चुके थे तथा हारकर जान बचाकर चले गए थे। फिर तपस्या की तथा सिद्धियाँ प्राप्त करके असुरों से युद्ध किया तथा विजय पाई। जब देवतागण राक्षसों से हारे थे, उस समय दैत्य भी वही साधना (तपस्या अर्थात् हठ योग) करते थे जो देवता करते थे। इससे सिद्ध हुआ कि भक्ति करने से भी देवता, दैत्यों से रद्दी (पिछड़े हुए) थे क्योंकि राक्षस वही साधना करके देवताओं पर विजय पाए थे जो देवतागण करते थे।

वास्तव में शास्त्रविधि अनुसार साधना न देवता करते थे न दैत्य। केवल काल द्वारा बताई गई तपस्या (जो ब्रह्मा को जन्म के समय आकाशवाणी द्वारा काल ब्रह्म द्वारा कमल के फूल पर बताई थी, उस तपस्या) अर्थात् हठ योग को दोनों करते थे। दोनों ही सिद्धियाँ प्राप्त करते थे। जैसे शराब को देवता पीऐ चाहे दैत्य, दोनों को ही सरूर होगा। सिद्धियाँ प्राप्त होने पर प्राणी को अभिमान का नशा हो जाता है। फिर आपस में एक-दूसरे पर सिद्धियों का प्रयोग करके स्वयं के जीवन को नष्ट कर जाते हैं। यह सर्व काल ब्रह्म द्वारा फैलाया भयंकर जाल है जिसे तत्वज्ञान से ही समझा जा सकता है तथा इस जाल से निकला जा सकता है।

वर्तमान में कुछ पंथ हैं जो न तो देशी घी की ज्योति लगाने देते हैं, न गीता, वेद या स्वसम वेद वाणी का पाठ करने को बताते हैं, न वास्तविक नाम जाप को देते हैं। कहते हैं सन्त कुछ नाम जाप करने को दे दे, वही मोक्षदायक है। अढ़ाई घण्टे सुबह तथा कम से कम अढ़ाई घण्टे शाम को हठयोग करने को कहते हैं। यह मोक्ष मार्ग नहीं है। ये सन्त काल ब्रह्म द्वारा माया मोह की तरह भेजे गए हैं जिन्होंने वह साधना भी छुड़ा दी जिससे स्वर्ग तक जाने की भक्ति तो बनती थी। जैसे प्रतिदिन गीता, वेद या स्वसम वेद (कबीर वाणी या कबीर जी से परिचित सन्तों की वाणी) वाणी के पाठ से ज्ञान यज्ञ का फल मिलता है तथा देशी घी की ज्योति से हवन यज्ञ का फल मिलता है। दण्डवत् प्रणाम से प्रणाम यज्ञ का फल मिलता है। वे नकली पंथ सुना-सुनाया सतलोक-सतलोक तो कहते हैं परन्तु सतलोक में सतपुरूष निराकार बताते हैं। वहाँ प्रकाश ही प्रकाश है, आनन्द ही आनन्द है। आत्मा भी उस प्रकाश में ऐसे समा जाती है जैसे समुन्द्र में बूंद समा जाती है। ऐसा व्यर्थ ज्ञान अनुयाईयों को बता कर कहते हैं चलो सतलोक में, वहाँ आनन्द ही आनन्द है। विचार करें किसी लड़की को कोई मूर्ख कहे तेरी सगाई अमूक गाँव में कर दी है। वहाँ तेरा पति निराकार है। तेरे पति के घर में प्रकाश ही प्रकाश है, पति साकार नहीं है, वहाँ विवाह करवाकर जा, लड़की वहाँ आनन्द ही आनन्द है। उस मूर्ख से पूछे कि यदि पति ही साकार नहीं है तो उस कन्या का क्या उत्साह होगा विवाह करने व बिना पति वाले घर जाने का? कोई उमंग नहीं हो सकती।

ठीक इसी प्रकार जो गुरू जन सतपुरूष अर्थात् परमात्मा को निराकार कहते हैं तथा कहते हैं कि केवल प्रभु का प्रकाश ही देखा जा सकता है। वे भ्रमित कर रहे हैं। उनको कोई ज्ञान नहीं है। उनको परमात्मा प्राप्ति भी नहीं हुई है। उनसे कोई पूछे कि तुम कहते हो कि सतपुरूष (अविनाशी परमेश्वर) का केवल प्रकाश देखा जा सकता है क्योंकि सतपुरूष (सच्चा परमेश्वर) तो निराकार है। जैसे कोई

अन्धा कहे कि सूर्य तो निराकार है, उसका केवल प्रकाश ही देखा जा सकता है। सूर्य बिना प्रकाश किसका देखा? जब सूर्य निराकार है तो प्रकाश काहे का? इसी प्रकार जो ज्ञान नेत्रहीन सन्त, ऋषि, महर्षि परमात्मा को निराकार कहते हैं तथा परमात्मा को सूर्य तुल्य प्रकाशमान कहते हैं तथा परमात्मा का प्रकाश देखा कहते हैं, वे सनीपात के ज्वर के रोगी की तरह बरड़ा रहे हैं, उन्हें यही नहीं पता कि वे क्या बोल रहे हैं। वे सर्व काल ब्रह्म के द्वारा भेजे गए मोहमाया जैसे भ्रमित करने वाले दूत हैं जिन्होंने भोली आत्माओं को उल्टा पाठ पढ़ाकर दिशाभ्रष्ट कर दिया है।

अन्य शास्त्र विरूद्ध भक्ति पर प्रकाश

परमात्मा कबीर जी का शब्द :-

रै भोली–सी दुनिया, सतगुरू बिन कैसे सरियाँ।(टेक)
अपने लला के बाल उतरवावैं, कह कैंची ना लग जईयाँ।
एक बकरी का बच्चा लेकर, उसका गला कटईयाँ।।1।।
काचा–पाका भोजन बनाकर, माता धोकने गईयाँ।
इस मूर्ति माता पर कुत्ता मूतै, वह क्यों ना मर गईयाँ।।2।।
जीवित बाप से लठ्ठम–लठ्ठा, मूवे गंग पहुँचईयाँ।
जब आवै आसौज का महीना, कऊवा बाप बणईयाँ।।3।।
पीपल पूजै जाँडी पूजे, सिर तुलसाँ के अहोइयाँ।
दूध–पूत में खैर राखियो, न्यूं पूजूं सूं तोहियाँ।।4।।
आपै लीपै आपै पोतै, आपै बनावै होईयाँ।
उससे भौंदू पोते माँगै, अकल मूल से खोईयाँ।।5।।
पति शराबी घर पर नित ही, करत बहुत लड़ईयाँ।
पत्नी षोडष शुक्र व्रत करत है, देहि नित तुड़ईयाँ।।6।।
तज पाखण्ड सत नाम लौ लावै, सोई भवसागर से तरियाँ।
कह कबीर मिले गुरू पूरा, स्यों परिवार उधरियाँ।।7।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने अंध श्रद्धा भक्ति करने वाले तत्वज्ञानहीन जनताजनों को उनके द्वारा की जा रही शास्त्र विरूद्ध साधना यानि उपासना को तर्क करके लाभ रहित यानि व्यर्थ सिद्ध किया है। कहा है कि :-

हे भोली जनता! गुरू के बिना आपका कोई भी अध्यात्म कार्य नहीं सरेगा यानि सिद्ध नहीं होगा।

वाणी सँख्या 1 :- अपने लला के बाल उतरवावैं, कह कैंची ना लग जईयाँ।
एक बकरी का बच्चा लेकर, उसका गला कटईयाँ।।1।।

भावार्थ :- शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करने के लिए अज्ञानी गुरूओं द्वारा भ्रमित अंध श्रद्धालु माता अपने नवजात बच्चे को लेकर अपने ईष्ट देव-देवी के मंदिर में जाती है। आन-उपासकों द्वारा बनाए शास्त्रविरूद्ध विद्यान अनुसार नवजात शिशु के सिर के प्रथम बार वाले बाल उतरवाती (कटवाती) है। उन बालों को मंदिर में अपने ईष्ट पर चढ़ाती है। यह मान रखा है कि इससे ईष्ट देव या देवी प्रसन्न होते हैं तथा बच्चे की सदा रक्षा करते हैं। बाल काटने के लिए

मंदिर में मेले के समय उपस्थित नाई के पास बाल कटवाने वालों की लाईन लगी होती है। नाई शीघ्र-शीघ्र निपटाने के उद्देश्य से तेजी से कैंची चलाता है। किसी-किसी बच्चे को कैंची लग जाती है। बच्चा रोता है। अपने बच्चे के बाल कटवाने की बारी आते ही माता नाई को सतर्क करती है कि हे भाई नाई! ध्यान से कैंची चलाना, मेरे लला (बालक-बेटे) का कच्चा सिर है, कहीं कैंची न लग जाए। बच्चे के कटे हुए बालों को कपड़े में बाँधकर मंदिर में चढ़ा देती है। पुजारी उसको खोलकर एक खाली कट्टे में डालता रहता है। मेला समाप्त होने के पश्चात् उन बालों को दूर कचरे के ढ़ेर में डाल देता है। बाल मंदिर में चढ़ाने के पश्चात् ईष्ट को बकरे की बलि दी जाती है जो पहले से ही अपने होने वाले बच्चे की खैर (रक्षा) के लिए संकल्प की गई होती है।

❖ कबीर परमेश्वर जी ने इस विषय में सटीक तर्क देते हुए कहा है कि हे अंध श्रद्धावान! कुछ तो विवेक कर। अपने बच्चे को तो कैंची लगने से भी बचाती है, उसकी रक्षा (खैर) के लिए बकरी के बच्चे की गर्दन कटवाते समय कुछ भी तरस (दया) नहीं आया। परमात्मा का विधान है कि जो पाप किया (बकरे की बलि दी) वह तो तेरे को भोगना पड़ेगा। वह पत्थर की देवी या देव कुछ भी मदद न तेरी, न तेरे बच्चे की कर सकती है जो आपको भ्रम है।

विचार करें :- यदि वहाँ उस मंदिर में वास्तव में देवी या देव होता और आप उसके घर में बाल डालते तो इसी बात पर आप से नाराज होकर दण्ड देते। देवी-देवता सभ्य और शाकाहारी नेक प्रवति के होते हैं। वे कभी माँस, मदिरा तथा अन्य नशीली वस्तुओं का सेवन नहीं करते। पुजारी उन बालों को फैंक देते हैं। क्या वे बाल बैंक में जमा करवाने के योग्य होते हैं? आप अपने बच्चों के बाल स्वयं ही किसी नाई से कटवा दो। किसी मंदिर में ले जाकर अपने कर्म व धन तथा वक्त नष्ट न करो।

पूर्ण गुरू से शिक्षा लो यानि आध्यात्मिक ज्ञान सुनो तथा दीक्षा लो यानि गुरू बनाकर शास्त्र वर्णित साधना करके पापों से मुक्ति पाओ तथा मोक्ष कराओ।

वाणी सँख्या 2 :- काचा–पाका भोजन बनाकर, माता धोकने गईयाँ।
इस मूर्ति माता पर कुत्ता मूतै, वह क्यों ना मर गईयाँ।।2।।

भावार्थ :- आन-उपासना की अन्य विधि यह भी है कि गाँव या नगर के बाहर किसी वक्ष के नीचे तने से सटाकर या किसी ऊँचे स्थान पर बिना वक्ष के ही दस फुट लम्बा चौड़ा या इससे भी छोटा चबूतरा (चौरा) यानि प्लेटफार्म बनाकर उसके ऊपर दो फुट या तीन-चार फुट ऊँचा तथा एक-डेढ़ फुट चौड़ा एक मंदिरनुमा घर बनाते हैं, उसे मंढ़ी कहते हैं। वर्ष में एक या दो बार, किसी निश्चित दिन उस देई धाम पर धोक लगाने (पूजा करने) दादी माँ अपने पूरे परिवार को लेकर जाती है। उसे पता होता है कि जो भी भोजन ईष्ट के लिए बनाकर उस मंढ़ी में रखते हैं, उसे कुत्ते खाते हैं। वह वद्धा अपनी पुत्रवधु से कहती है कि बेटी! आज माता की धोक लगाने मंढ़ी पर चलना है। उसके लिए मीठा दलिया या पूड़े-गुलगुले बना ले। पुत्रवधु माता का भोग तैयार करने लग जाती है। देर तो लगती ही है। उधर से खेत या मजदूरी के लिए जाने का समय भी हो जाता है। बुढ़िया कहती है कि बेटी! काच्चा-पाक्का बना दे, जल्दी कर। कुत्तों ने तो खाना ही है। पूरे परिवार को साथ लेकर वद्धा उस मंढ़ी पर वह माता का भोग प्रसाद दूर से फैंक देती है तथा पूरे परिवार को कहती है कि हाथ जोड़कर चच-चच कह दो। एक लोटे में जल लेकर जाती है। उसे माता के ऊपर डाल देती है। परिवार माता की धोक लगाकर चबूतरे से नीचे भी नहीं आता, उसी समय कुत्ते जो वहीं पर भोग

लगाने के लिए बेताब (उतावले) खड़े होते हैं, माता की मंढ़ी के प्लेटफार्म पर चढ़कर प्रथम तो माता का भोग चट करते हैं, चलते समय उस माता पर पेशाब कर देते हैं।

परमेश्वर कबीर जी ने इस विषय पर तर्क दिया है कि हे भोली अंध भक्ति करने वाली जनता! विचार कर, जिस मंढ़ी वाली देवी माता की आप पूजा इसलिए करती हो कि यह मंढ़ी में उपस्थित देवी हमारे परिवार की तथा खेती और पशुधन की रक्षा करती है। यदि उस मंढ़ी में देवी उपस्थित होती तो उसके भोजन को कुत्ता खा गया, उसके ऊपर मूत्र की धार लगा गया। वह कुत्ता तेरी पत्थर की माता ने मारा क्यों नहीं? यदि आप भोजन कर रहे हो और कोई कुत्ता आकर आपके भोजन को खाने लगे तो आप उसको डंडे-लाठी से मारोगे। यदि आपके ऊपर मूत दे तो उसकी हड्डी-पसली एक कर दो। परंतु आपकी पूज्य देवी तो बहुत विवश है या उसे अधरंग लगा है। उससे भक्ति लाभ की झूठी आशा त्यागकर पूर्ण गुरू से शास्त्र विधि अनुसार सत्य भक्ति की दीक्षा व शिक्षा (ज्ञान) लेकर अपना तथा परिवार का कल्याण करवाओ।

''श्राद्ध-पिण्डदान करें या न करें''

वाणी सँख्या 3 :- जीवित बाप से लठ्ठम–लठ्ठा, मूवे गंग पहुँचईयाँ।
जब आवै आसौज का महीना, कऊवा बाप बणईयाँ।।3।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने लोकवेद (दंत कथा) के आधार से चल रही पितर तथा भूत पूजा पर शास्त्रोक्त तर्क दिया है। कहा है कि शास्त्रोक्त अध्यात्म ज्ञान के अभाव से बेटे अपने पिता से किसी न किसी बात पर विरोध करते हैं। पिता जी अपने अनुभव के आधार से बेटे से अपने व्यवसाय में टोका-टाकी कर देते हैं। पिता जी को पता होता है कि इस कार्य में पुत्र को हानि होगी। परंतु पुत्र पिता की शिक्षा कम बाहर के व्यक्तियों की शिक्षा को अधिक महत्व देता है। उसे ज्ञान नहीं होता कि पिता जैसा पुत्र का हमदर्द कोई नहीं हो सकता। पुत्र को जवानी और अज्ञानता के नशे के कारण शिष्टाचार का टोटा हो जाता है। पिता को पता होता है कि बेटा इस कार्य में हानि उठाएगा। परंतु पुत्र पिता की बात नहीं मानता है। उल्टा पिता को भला-बुरा कहता है। पिता अपने पुत्र के नुकसान को नहीं देख सकता। वह फिर उसको आग्रह करता है कि पुत्र! ऐसा ना कर। जिस कारण से जवानी के नशे से हुई सभ्यता की कमी के कारण इतने निर्लज्ज हो जाते हैं, कई पुत्रों को देखा है जो पिता को डण्डों से पीट देते हैं। वही होता है जो पिता को अंदेशा था। पिता फिर समझाता है कि आगे से ऐसा ना करना। यह हानि तो धीरे-धीरे पूरी हो जाएगी। पिता-पिता ही होता है। वह पुत्र-पुत्री को सुखी देखना चाहता है। आगे चलकर जो पिता भक्ति नहीं कर रहा था, उसे कोई न कोई रोग वृद्ध अवस्था में अवश्य घेर लेता है। संतान बहुत कम है जो पिता को वह प्रेम दे जो माता-पिता अपने पुत्र तथा पुत्रवधु से अपेक्षा किया करते हैं। वर्तमान में वृद्धों की बेअदबी किसी से छिपी नहीं है। माता-पिता वृद्धाश्रमों या अनाथालयों में जीवन के शेष दिन पूरे कर रहे हैं या घर पर पुत्र व पुत्रवधु के कटु वचन (कड़वे बोल) पीकर जीवन के दिन गिन रहे हैं। कबीर जी ने कहा है कि :-

वृद्ध हुआ जब पड़े खाट में, सुनै वचन खारे।
कुत्ते तावन का सुख भी कोन्या, छाती फूकन हारे।।

शब्दार्थ :- वृद्ध अवस्था में शरीर निर्बल हो जाता है। आँखों की रोशनी कम हो जाती है। जिस

कारण से वद्ध पिता-माता अधिक समय चारपाई पर व्यतीत करते हैं। एक स्त्री अपनी सासू माँ से यह कहकर कुऐं या नल से पानी लेने चली गई कि आप ध्यान रखना। कहीं कुत्ता घर में घुसकर नुकसान न कर दे। वद्धा को दिखाई कम देता था। कुत्ता अंदर घर में घुस गया, एक लोटा दो किलो दूध से भरा रखा था। उसको पी गया और गिरा गया। वद्धा को दिखाई नहीं दिया। पुत्रवधु आई और कुत्ते द्वारा किए नुकसान से क्रोधित होकर बोली कि तुम्हारा (सास-ससुर का) तो इतना भी सुख नहीं रहा कि कुत्तों से घर की रक्षा कर सको। तुमने मेरी छाती जला दी यानि व्यर्थ का अनाज का खर्च पुत्रवधु को लग रहा था। जिस कारण कटी-जली बातें कही थी। सास-ससुर को अपने ऊपर व्यर्थ का भार मान रही थी। कबीर जी ने बताया है कि यह दशा उन व्यक्तियों की होती है जो परमात्मा को कभी याद नहीं करते जो गुरू धारण करके सत्य भक्ति नहीं करते।

अब वाणी सँख्या 3 का शब्दार्थ पूरा करता हूँ।

अंध श्रद्धा भक्ति वाले जब तक माता-पिता जीवित रहते हैं, तब तक तो उनको प्यार व सम्मान के साथ कपड़ा-रोटी भी नहीं देते। झींकते रहते हैं। (सब नहीं।) मत्यु के उपरांत श्रद्धा दिखाते हैं। उसके शरीर को चिता पर जला दिया जाता है। कुछ हड्डियाँ बिना जली छोटी-छोटी रह जाती हैं। शास्त्र नेत्रहीन गुरूओं से भ्रमित पुत्र उन अस्थियों को उठाकर हरिद्वार में हर की पौड़ियों पर अपने कुल के पुरोहित के पास ले जाता है। उस पुरोहित द्वारा शास्त्रविरूद्ध साधना के आधार से मनमाना आचरण करके उन अस्थियों को पवित्र गंगा दरिया में प्रवाह किया जाता है। जो धनराशि पुरोहित माँगे, खुशी-खुशी दे देता है। कारण यह होता है कि कहीं पिता या माता मत्यु के उपरांत प्रेत बनकर घर में न आ जाऐं। इसलिए उनकी गति करवाने के लिए कुलगुरू पंडित जी को मुँह माँगी धनराशि देते हैं कि पक्का काम कर देना। फिर पुरोहित के कहे अनुसार अपने घर की चोखट में लोहे की मेख (मोटी कील) गाड़ दी जाती है कि कहीं पिता जी-माता जी की गति होने में कुछ त्रुटि रह जाए और वे प्रेत बनकर हमारे घर में न घुस जाऐं।

कबीर परमेश्वर जी ने बताया है कि जीवित पिता को तो समय पर टूक (रोटी) भी नहीं दिया जाता। उसका अपमान करता है। (सभी नहीं, अधिकतर) मत्यु के पश्चात् उसको पवित्र दरिया में बहाकर आता है। कितना खर्च करता है। अपने माता-पिता की जीवित रहते प्यार से सेवा करो। उनकी आत्मा को प्रसन्न करो। उनकी वास्तविक श्रद्धा सेवा तो यह है।

कबीर जी जो स्पष्ट करना चाहते हैं कि आध्यात्मिक ज्ञान न होने के कारण अंध श्रद्धा भक्ति के आधार से सर्व हिन्दू समाज अपना अनमोल जीवन नष्ट कर रहा है। जैसे मत्यु के उपरांत अपने पिता जी की अस्थियाँ गंगा दरिया में पुरोहित द्वारा क्रिया कराकर पिता जी की गति करवाई।

❖ फिर तेरहवीं या सतरहवीं यानि मत्यु के 13 दिन पश्चात् की जाने वाली क्रिया को तेरहवीं कहा जाता है। सतरह दिन बाद की जाने वाली लोकवेद धार्मिक क्रिया सतरहवीं कहलाती है। महीने बाद की जाने वाली महीना क्रिया तथा छः महीने बाद की जाने वाली छःमाही तथा वर्ष बाद की जाने वाली बर्षी क्रिया (बरसौदी) कही जाती है। लोकवेद (दंत कथा) बताने वाले गुरूजन उपरोक्त सब क्रियाऐं करने को कहते हैं। ये सभी क्रियाऐं मतक की गति के उद्देश्य से करवाई जाती हैं।

❖ सूक्ष्मवेद में इस शास्त्र विरूद्ध धार्मिक क्रियाओं यानि साधनाओं पर तर्क इस प्रकार किया है कि घर के सदस्य की मत्यु के पश्चात् ज्ञानहीन गुरूजी क्या-क्या करते-कराते हैं :-

कुल परिवार तेरा कुटम्ब–कबीला, मसलित एक ठहराई।

बांध पींजरी (अर्थी) ऊपर धर लिया, मरघट में ले जाई।
अग्नि लगा दिया जब लम्बा, फूंक दिया उस ठांही।
पुराण उठा फिर पंडित आए, पीछे गरूड़ पढ़ाई।
प्रेत शिला पर जा विराजे, पितरों पिण्ड भराई।
बहुर श्राद्ध खाने कूं आए, काग भए कलि माहीं।
जै सतगुरू की संगति करते, सकल कर्म कटि जाई।
अमरपुरी पर आसन होता, जहाँ धूप न छांई।

शब्दार्थ :- कुछ व्यक्ति मत्यु के पश्चात् उपरोक्त क्रियाऐं तो करते ही हैं, साथ में गरूड़ पुराण का पाठ भी करते हैं। परमेश्वर कबीर जी ने सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) की वाणी में स्पष्ट किया है कि लोकवेद (दंत कथा) के आधार से ज्ञानहीन गुरूजन मतक की आत्मा की शांति के लिए गरूड़ पुराण का पाठ करते हैं। गरूड़ पुराण में एक विशेष प्रकरण है कि जो व्यक्ति धर्म-कर्म ठीक से नहीं करता तथा पाप करके धन उपार्जन करता है, मत्यु के उपरांत उसको यम के दूत घसीटकर ले जाते हैं। ताम्बे की धरती गर्म होती है, नंगे पैरों उसे ले जाते हैं। उसे बहुत पीड़ा देते हैं। जो शुभ कर्म करके गए होते हैं, वे स्वर्ग में हलवा-खीर आदि भोजन खाते दिखाई देते हैं। उस धर्म-कर्महीन व्यक्ति को भूख-प्यास सताती है। वह कहता है कि भूख लगी है, भोजन खाऊँगा। यमदूत उसको पीटते हैं। कहते हैं कि यह भोजन खाने के कर्म तो नहीं कर रखे। चल तुझे धर्मराज के पास ले चलते हैं। जैसा तेरे लिए आदेश होगा, वैसा ही करेंगे। धर्मराज उसके कर्मों का लेखा देखकर कहता है कि इसे नरक में डालो या प्रेत व पितर, वक्ष या पशु-पक्षियों की योनि दी जाती हैं। पितर योनि भूत प्रजाति की श्रेष्ठ योनि है। यमलोक में भूखे-प्यासे रहते हैं। उनकी तप्ति के लिए श्राद्ध निकालने की प्रथा शास्त्रविरूद्ध मनमाने आचरण के तहत शुरू की गई है। कहा जाता है कि एक वर्ष में जब आसौज (अश्विन) का महीना आता है तो भादवे (भाद्र) महीने की पूर्णमासी से आसौज महीने की अमावस्या तक सोलह श्राद्ध किए जाऐं। जिस तिथि को जिसके परिवार के सदस्य की मत्यु होती है, उस दिन वर्ष में एक दिन श्राद्ध किया जाए। ब्राह्मणों को भोजन करवाया जाए। जिस कारण से यमलोक में पितरों के पास भोजन पहुँच जाता है। वे एक वर्ष तक तप्त रहते हैं। कुछ भ्रमित करने वाले गुरूजन यह भी कहते हैं कि श्राद्ध के सोलह दिनों में यमराज उन पितरों को नीचे पथ्वी पर आने की अनुमति देता है। पितर यमलोक (नरक) से आकर श्राद्ध के दिन भोजन करते हैं। हमें दिखाई नहीं देते या हम पहचान नहीं सकते।

❖ भ्रमित करने वाले गुरूजन अपने द्वारा बताई शास्त्रविरूद्ध साधना की सत्यता के लिए इस प्रकार के उदाहरण देते हैं कि रामायण में एक प्रकरण लिखा है कि वनवास के दिनों में श्राद्ध का समय आया तो सीता जी ने भी श्राद्ध किया। भोजन खाते समय सीता जी को श्री रामचन्द्र जी पिता दशरथ सहित रघुकुल के कई दादा-परदादा दिखाई दिए। उन्हें देखकर सीता जी को शर्म आई। इसलिए मुख पर पर्दा (घूंघट) कर लिया।

❖ विचार करो पाठकजनो :- श्री रामचन्द्र के सर्व वंशज प्रेत-पितर बने हैं तो अन्य सामान्य नागरिक भी वही क्रियाऐं कर रहे हैं। वे भी नरक में पितर बनकर पितरों के पास जाऐंगे। इस कारण यह शास्त्रविधि विरूद्ध साधना है जो पूरा हिन्दू समाज कर रहा है। श्रीमद्भगवत गीता के अध्याय 9 का श्लोक 25 भी यही कहता है कि जो पितर पूजा (श्राद्ध आदि) करते हैं, वे मोक्ष प्राप्त नहीं

कर पाते, वे यमलोक में पितरों को प्राप्त होते हैं।

❖ जो भूत पूजा (अस्थियाँ उठाकर पुरोहित द्वारा पूजा कराकर गंगा में बहाना, तेरहवीं, सतरहवीं, महीना, छःमाही, वर्षी आदि-आदि) करते हैं, वे प्रेत बनकर गया स्थान पर प्रेत शिला पर बैठे होते हैं।

❖ कुछ व्यक्तियों को धर्मराज जी कर्मानुसार पशु, पक्षी, वक्ष आदि-आदि के शरीरों में भेज देता है।

❖ परमात्मा कबीर जी समझाना चाहते हैं कि हे भोले प्राणी! गरूड़ पुराण का पाठ उसे मत्यु से पहले सुनाना चाहिए था ताकि वह परमात्मा के विधान को समझकर पाप कर्मों से बचता। पूर्ण गुरू से दीक्षा लेकर अपना मोक्ष करता। जिस कारण से वह न प्रेत बनता, न पितर बनता, न पशु-पक्षी आदि-आदि के शरीरों में कष्ट उठाता। मत्यु के पश्चात् गरूड़ पुराण के पाठ का कोई लाभ नहीं मिलता।

सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) में तथा चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) तथा इन चारों वेदों के सारांश गीता में स्पष्ट किया है कि उपरोक्त आन-उपासना नहीं करनी चाहिए क्योंकि ये शास्त्रों में वर्णित न होने से मनमाना आचरण है जो गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में व्यर्थ बताया है। शास्त्रोक्त साधना करने का आदेश दिया है। सर्व हिन्दू समाज उपरोक्त आन-उपासना करते हैं जिससे भक्ति की सफलता नहीं होती। जिस कारण से नरकगामी होते हैं तथा प्रेत-पितर, पशु-पक्षी आदि के शरीरों में महाकष्ट उठाते हैं।

➢ कबीर जी के वकील (लेखक) का उद्देश्य किसी की साधना की आलोचना करना नहीं है, अपितु आप जी को सत्य साधना का ज्ञान करवाकर इन कष्टों से बचाना है।

प्रसंग चल रहा है कि जो शास्त्रविरूद्ध साधना करते हैं, उनके साथ महाधोखा हो रहा है। बताया है कि :-

1. मतक की गति (मोक्ष) के लिए पहले तो अस्थियाँ उठाकर गुरूजी के द्वारा पूजा करवाकर गंगा दरिया में प्रवाहित की और बताया गया कि इसकी गति हो गई।

2. उसके पश्चात् तेरहवीं, सतरहवीं, महीना, छःमाही, वर्षी आदि-आदि क्रियाऐं उसकी गति करवाने के लिए कराई।

3. पिण्डदान किया गति करवाने के लिए।

4. श्राद्ध करने लगे, उसे यमलोक में तप्त करवाने के लिए।

❖ श्राद्धों में गुरू जी भोजन बनाकर सर्वप्रथम कुछ भोजन छत पर रखता है। कौआ उस भोजन को खाता है। पुरोहित जी कहता है कि देख! तेरा पिता कौआ बनकर भोजन खा रहा है। कौए के भोग लगाने से श्राद्ध की सफलता बताते हैं।

❖ परमेश्वर कबीर जी ने यही भ्रम तोड़ा है। कहा है कि आपके तत्वज्ञान नेत्रहीन (अंधे) धर्मगुरूओं ने अपने धर्म के शास्त्रों को ठीक से नहीं समझ रखा। आप जी को लोकवेद (दन्तकथा) के आधार से मनमानी साधना कराकर आप जी का जीवन नष्ट कर रहे हैं।

कबीर जी ने कहा है कि विचार करो। उपरोक्त अनेकों पूजाऐं कराई मतक पिता की गति कराने के लिए, अंत में कौआ बनवाकर दम लिया। अब श्राद्धों का आनंद गुरू जी ले रहे हैं। वे गुरू जी भी नरक तथा पशु-पक्षियों की योनियों को प्राप्त होंगे। यह दास (रामपाल दास) परमात्मा कबीर जी द्वारा बताए तत्वज्ञान द्वारा समझाकर सत्य साधना शास्त्रविधि अनुसार बताकर आप तथा आपके अज्ञानी धर्मगुरूओं का कल्याण करवाने के लिए यह परमार्थ कर रहा है। मेरे अनुयाई इसी दलदल

में फँसे थे। इसी तत्वज्ञान को समझकर शास्त्रों में वर्णित सत्य साधना को अपनी आँखों देखकर अकर्तव्य साधना त्यागकर कर्तव्य शास्त्रोक्त साधना करके अपना तथा परिवार के जीवन को धन्य बना रहे हैं। ये दान देते हैं। फिर इन पुस्तकों को छपवाकर आप तक पहुँचाने के लिए पुस्तक बाँटने की सेवा निस्वार्थ निःशुल्क करते हैं। ये आपके हितैषी हैं। परंतु आप पुस्तक को ठीक से न पढ़कर इनका विरोध करते हैं, प्रचार में बाधा डालकर महापाप के भागी बनते हैं।

आप पुस्तक को पढ़ें तथा शांत मन से विचार करें तथा पुस्तकों में दिए शास्त्रों के अध्याय तथा श्लोकों का मेल करें। फिर गलत मिले तो हमें सूचित करें, आपकी शंका का समाधान किया जाएगा।

❖ श्राद्ध आदि-आदि शास्त्रविरूद्ध क्रियाऐं झूठे गुरूओं के कहने से करके अपना जीवन नष्ट करते हैं। यदि सतगुरू (तत्वदर्शी संत) का सत्संग सुनते, उसकी संगति करते तो सर्व पापकर्म नष्ट हो जाते। सत्य साधना करके अमर लोक यानि गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहे (शाश्वतं स्थानं) सनातन परम धाम में आप जी का आसन यानि स्थाई ठिकाना होता जहाँ कोई कष्ट नहीं। वहाँ पर परम शांति है क्योंकि वहाँ पर कभी जन्म-मत्यु नहीं होता। गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में भी इस सनातन परम धाम को प्राप्त करने को कहा है। उसके लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में तत्वदर्शी संतों से शास्त्रोक्त ज्ञान व साधना प्राप्त करने को कहा है। वह तत्वदर्शी संत वर्तमान (इक्कीसवीं सदी) में यह दास (रामपाल दास) है। आओ और अपना कल्याण करवाओ।

❑ भूत पूजा तथा पितर पूजा क्या है? यह आप जी ने ऊपर (पहले) पढ़ा।

इन पूजाओं के निषेध का प्रमाण पवित्र गीता शास्त्र के अध्याय 9 श्लोक 25 में लिखा है जो आप जी को पहले वर्णन कर दिया है कि भूत पूजा करने वाले भूत बनकर भूतों के समूह में मत्यु उपरांत चले जाऐंगे। पितर पूजा करने वाले पितर लोक में पितर योनि प्राप्त करके पितरों के पास चले जाऐंगे। मोक्ष प्राप्त प्राणी सदा के लिए जन्म-मरण से मुक्त हो जाता है।

➢ प्रेत (भूत) पूजा तथा पितर पूजा उस परमेश्वर की पूजा नहीं है। इसलिए गीता शास्त्र अनुसार व्यर्थ है।

➢ वेदों में भूत-पूजा व पितर पूजा यानि श्राद्ध आदि कर्मकाण्ड को मूर्खों का कार्य बताया है।

❖ पवित्र मार्कण्डेय पुराण में प्रमाण :-

''श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रूची ऋषि का वेदमत''

मार्कण्डेय पुराण में ''रौच्य ऋषि के जन्म'' की कथा आती है। एक रुची ऋषि था। वह ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदों अनुसार साधना करता था। विवाह नहीं कराया था। रुची ऋषि के पिता, दादा, परदादा तथा तीसरे दादा सब पित्तर (भूत) योनि में भूखे-प्यासे भटक रहे थे। जिस समय रूची ऋषि की आयु चालीस वर्ष थी, तब उन चारों ने रुची ऋषि को दर्शन दिए तथा कहा कि बेटा! आप ने विवाह क्यों नहीं किया? विवाह करके हमारे श्राद्ध करना। रुची ऋषि ने कहा कि हे पितामहो! वेद में इस श्राद्ध-पिण्डोदक आदि कर्मों को अविद्या कहा है यानि मूर्खों का कार्य कहा है। फिर आप मुझे इस कर्म को करने को क्यों कह रहे हो?

पितरों ने भी माना और कहा कि यह बात सत्य है कि श्राद्ध आदि कर्म को वेदों में अविद्या अर्थात् मूर्खों का कार्य ही कहा है। फिर उन पित्तरों ने वेद विरूद्ध ज्ञान बताकर रूची ऋषि को भ्रमित

कर दिया क्योंकि मोह भी अज्ञान की जड़ है। रूची ने विवाह करवाया। फिर श्राद्ध-पिण्डोदक क्रियाऐं करके अपना जन्म भी नष्ट किया।

मार्कण्डेय पुराण के प्रकरण से सिद्ध हुआ कि वेदों में तथा वेदों के ही संक्षिप्त रुप गीता में श्राद्ध-पिण्डोदक आदि भूत पूजा के कर्मकाण्ड को निषेध बताया है, नहीं करना चाहिए। उन मूर्ख ऋषियों ने अपने पुत्र को भी श्राद्ध करने के लिए विवश किया। उसने विवाह कराया, उससे रौच्य ऋषि का जन्म हुआ, बेटा भी पाप का भागी बना लिया।

रूची ऋषि भी ब्राह्मण थे। उन्होंने वेदों को कुछ ठीक से समझा था। अपनी आत्मा के कल्याणार्थ शास्त्र विरूद्ध सर्व मनमाना आचरण त्यागकर शास्त्रोक्त केवल एक ब्रह्म की भक्ति कर रहा था। जो उसके पिता तथा उनके पहले तीन दादा जी शास्त्रविधि त्यागकर यही कर्मकाण्ड करते-कराते थे जिसका परिणाम गीता अध्याय 9 श्लोक 25 वाला होना ही था कि पितर पूजने वाले पितरों को प्राप्त होंगे, वही हुआ। अब वर्तमान की शिक्षित जनता को अंध श्रद्धा भक्ति त्यागकर विवेक से काम लेकर गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहे आदेश का पालन करना चाहिए। जिसमें कहा है कि इससे तेरे लिए अर्जुन शास्त्र ही प्रमाण हैं यानि जो शास्त्रों में करने को कहा है, वही करें। जो शास्त्रों में प्रमाणित नहीं है, उसे त्याग दें। गीता में परमात्मा का बताया विद्यान है तथा पुराणों में ऋषियों का अनुभव है। यदि पुराणों में श्राद्ध आदि कर्मकाण्ड करने को लिखा है तो वह गीता विरूद्ध होने से अमान्य है।

उदाहरण :- एक व्यक्ति की दोस्ती थानेदार से थी। एक दिन उस व्यक्ति ने अपने मित्र दरोगा को बताया कि मेरे को मेरे गाँव का एक दबंग व्यक्ति परेशान करता रहता है। दरोगा ने कहा कि उसको लठ मार, मैं आप निपट लूँगा। कोई मुकदमा नहीं बनने दूँगा। उस व्यक्ति ने दरोगा के आदेशानुसार गाँव के उस व्यक्ति को लठ मारा जो सिर में लगा और व्यक्ति की मत्यु हो गई। हत्या का मुकदमा दरोगा के मित्र पर बना। उस क्षेत्र के थाने का प्रभारी होने के कारण उसी दरोगा मित्र ने मुकदमा बनाया और हत्या के कारण उसको मत्युदंड मिला।

❖ विचार करें :- राजा का विधान है कि किसी से झगड़ा मत करो। कानूनी कार्यवाही करो। उस व्यक्ति ने अधिकारी दरोगा का आदेश पालन किया जो राजा के संविधान के विपरीत था। जिस कारण से जीवन से हाथ धो बैठा यानि दण्ड का भागी बना। इसी प्रकार ऋषियों या पितरों का श्राद्ध करने, पिण्डदान आदि करने को कहने का आदेश परमात्मा के शास्त्रोक्त विधान के विरूद्ध है। उसका पालन करने से परमात्मा का विधान भंग होने के कारण मोक्ष के स्थान पर भूत-पितर, पशु-पक्षियों के शरीर धारण करके अनेकों कष्ट उठाते हैं।

''मार्कण्डेय पुराण में पितरों की दुर्गति का प्रमाण''

जिन्दा महात्मा अर्थात् परमेश्वर ने धर्मदास जी से कहा कि ''हे धर्मदास जी! आपने बताया कि आप भूत पूजा (तेरहवीं, सत्तरहवीं आदि भी करते हैं तथा अस्थियाँ उठाकर गति कराते हो) पित्तर पूजा (श्राद्ध आदि करना पिण्ड भराना) तथा देवताओं विष्णु-शिव आदि की पूजा भी करते हो। जबकि गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में गीता ज्ञानदाता ने मना किया है। संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराण में मदालसा वाले प्रकरण में पष्ठ 90 पर लिखा है ''जो पितर देवलोक में हैं, जो तिर्यग्योनि में पड़े हैं, जो मनुष्य योनि में एवं भूतवर्ग में अर्थात् प्रेत बने हैं, वे पुण्यात्मा हों या पापात्मा जब भूख–प्यास विकल (तड़फते) होते है तो

पिण्डदान तथा जलदान द्वारा तृप्त किया जाता है। (**लेख समाप्त**)

पेश है मार्कण्डेय पुराण के संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

१० संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण

जो पितर देवलोकमें हैं, जो तिर्यग्योनिमें पड़े हैं, जो मनुष्ययोनिमें एवं भूतवर्गमें स्थित हैं, वे पुण्यात्मा हों या पापात्मा, जब भूख-प्याससे विकल होते हैं तो अपने कर्मोंमें लगा हुआ मनुष्य पिण्डदान तथा जलदानके द्वारा उन्हें तृप्त करता है।

❖ विचार करें :- शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण अर्थात् मनमानी पूजा (देवों की, पितरों की, भूतों की पूजा) करके प्राणी पितर व भूत (प्रेत) बने। वे देवलोक (जो देवताओं की पूजा करके देवलोक में चले गए वे अपने पुण्यों के समाप्त होने पर पितर रूप में रहते हैं।) में हैं चाहे यमलोक में या प्रेत बने हैं, सर्व कष्टमय जीवन व्यतीत कर रहे हैं। अब जो उनकी पूजा करेगा वह भी इसी कष्टमयी योनि को प्राप्त होगा। इसलिए सर्व मानव समाज को शास्त्रविधि अनुसार साधना करनी चाहिए। जिससे उन पितरों की पितर योनि छूट जाएगी तथा साधक भी पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा।

श्री विष्णु पुराण के ततीय अंश के अध्याय 14 के श्लोक 10 से 14 में श्राद्ध के विषय में श्री सनत्कुमार ने कहा है कि ततीया, कार्तिक, शुक्ला नौमी, भाद्रपद कष्णा त्रयोदशी तथा माघमास की अमावस्या इन चारों तिथीयाँ अनन्त पुण्यदायीनि हैं। चन्द्रमा या सूर्य ग्रहण के समय तीन अष्टकाओं अथवा उत्तरायण या दक्षिणायन के आरम्भ में जो पुरूष एकाग्रह चित से पितर गणों को तिल सहित जल भी दान करता है वह मानो एक हजार वर्ष तक के लिए श्राद्ध कर लेता है। यह परम रहस्य स्वयं पितर गण ही बताते है।'' (लेख समाप्त)

पेश है श्री विष्णु पुराण के ततीय अंश के अध्याय 14 के श्लोक 10-14 की फोटोकॉपी :-

अ० १४] * तीसरा अंश * १४९

जो पुरुष पितृगण और देवगणको तृप्त करना चाहते हों उनके लिये धनिष्ठा, पूर्वाभाद्रपदा अथवा शतभिषानक्षत्रयुक्त अमावास्या अति दुर्लभ है॥ ९॥ हे पृथिवीपते! जब अमावास्या इन नौ नक्षत्रोंसे युक्त होती है उस समय किया हुआ श्राद्ध पितृगणको अत्यन्त तृप्तिदायक होता है। इनके अतिरिक्त पितृभक्त इलापुत्र महात्मा पुरूरवाके अति विनीत भावसे पूछनेपर श्रीसनत्कुमारजीने जिनका वर्णन किया था वे अन्य तिथियाँ भी सुनो॥ १०-११॥

श्रीसनत्कुमारजी बोले— वैशाखमासकी शुक्ला तृतीया, कार्तिक शुक्ला नवमी, भाद्रपद कृष्णा त्रयोदशी तथा माघमासकी अमावास्या—इन चार तिथियोंको पुराणोंमें 'युगाद्या' कहा है। ये चारों तिथियाँ अनन्त पुण्यदायिनी हैं। चन्द्रमा या सूर्यके ग्रहणके समय, तीन अष्टकाओंमें अथवा उत्तरायण या दक्षिणायनके आरम्भमें जो पुरुष एकाग्रचित्तसे पितृगणको तिलसहित जल भी दान करता है वह मानो एक सहस्र वर्षके लिये श्राद्ध कर देता है—यह परम रहस्य स्वयं पितृगण ही कहते हैं॥ १२—१४॥

विचार करें उपरोक्त श्राद्ध विधि पितरों के द्वारा बताई गई है न की वेदोक्त या श्री मद्भगवत् गीता के आधार से है।

श्री विष्णु पुराण के ततीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 11 में लिखा है ''क्षीरमेकशफाना यदौष्ट्रमाविकमेव च। मार्ग च माहिष चैव वर्जयेच्छाकर्माणि''।। **इस श्लोक का हिन्दी अनुवाद = एक खुरवालों का, ऊंटनी का, भेड़ का मगी का तथा भैंस का दूध श्राद्धकर्म में प्रयोग न करें। (काम में न लाऐं)**

पेश है श्री विष्णु पुराण के ततीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 11 की फोटोकॉपी :-

१५४ * श्रीविष्णुपुराण * [अ० १६

श्राद्धके योग्य नहीं होता॥ १०॥ एक खुरवालोंका, ऊँटनीका, भेड़का, मृगीका तथा भैंसका दूध श्राद्धकर्ममें काममें न ले॥ ११॥

❖ **समीक्षा :- वर्तमान (सन् 2014 तक) सर्व व्यक्ति श्राद्धों में भैस के दूध का ही प्रयोग कर रहे हैं जो पुराण में वर्जित है। जिस कारण से उनके द्वारा किया श्राद्ध कर्म भी व्यर्थ हुआ। श्री विष्णु पुराण के ततीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 1 से 3 में (मांस द्वारा श्राद्ध करने से पितर गण सदा तप्त रहते हैं।) लिखा है** ''हविष्यमत्स्य मांसैस्तु शशस्य नकुलस्य च। सौकरछाग लैणेयरौरवैर्गवयेन च।। (1) और भ्रगव्यैश्च तथा मासवृद्धया पिता महाः (2) खडगमांसमतीवात्र कालशाकं तथा मधु। शस्तानि कर्मण्यत्यन्ततृप्तिदानि नरेश्वर ।। (3)

हिन्दी अनुवाद :– हवि, मत्सय (मच्छली) शशंक (खरगोश) नकुल, शुकर (सुअर), छाग, कस्तूरिया मृग, काला मृग, गवय (नील गाय/वन गाय) और मेष (भेड़) के मांसों से गव्य (गौ के घी, दूध) से पितरगण एक–एक मास अधिक तृप्त रहते हैं और वार्घ्रीणस पक्षी के मांस से सदा तृप्त रहते हैं।(1-2) श्राद्ध कर्म में गेड़े का मांस काला शाक और मधु अत्यंत प्रशस्त और अत्यंत तृप्ती दायक है।।(3) श्री विष्णु पुराण अध्याय 2 चतुर्थ अंश पृष्ठ 233 पर भी श्राद्ध कर्म में मांस प्रयोग प्रमाण स्पष्ट है।

पेश है श्री विष्णु पुराण के ततीय अंश के अध्याय 16 के श्लोक 1-3 की फोटोकॉपी :-

अ० १६] * तीसरा अंश * १५३

सोलहवाँ अध्याय

श्राद्ध-कर्ममें विहित और अविहित वस्तुओंका विचार

और्व बोले—हवि, मत्स्य, शशक (खरगोश), नकुल, शूकर, छाग, कस्तूरिया मृग, कृष्ण मृग, गवय (वनगाय) और मेषके मांसोंसे तथा गव्य (गौके दूध-घी आदि)-से पितृगण क्रमशः एक-एक मास अधिक तृप्ति लाभ करते हैं और वार्ध्रीणस पक्षीके मांससे सदा तृप्त रहते हैं॥ १-२॥ हे नरेश्वर! श्राद्धकर्ममें गेंडेका मांस, कालशाक और मधु अत्यन्त प्रशस्त और अत्यन्त तृप्तिदायक हैं *॥ ३॥

समीक्षा :- उपरोक्त पुराण के ज्ञान आदेशानुसार श्राद्ध कर्म करने से पुण्य के स्थान पर पाप ही प्राप्त होगा।

क्या यह उपरोक्त मांस द्वारा श्राद्ध करने का आदेश अर्थात् प्रावधान न्याय संगत है अर्थात् नहीं। इसलिए पुराणों में वर्णित भक्तिविधि तथा पुण्य साधना कर्म शास्त्रविरूद्ध है। जो लाभ के स्थान पर हानिकारक है।

❖ **विशेष :- उपरोक्त श्लोक 1-2 के अनुवाद कर्ता ने कुछ अनुवाद को घुमा कर लिखा है। मूल संस्कत भाषा में स्पष्ट गाय का मांस श्राद्ध कर्म में प्रयोग करने को कहा गया है। हिन्दी अनुवाद कर्ता ने गव्य अर्थात् गौ के मांस के स्थान पर कोष्ठ में ''गौ के घी दूध से'' लिखा है।**

विचार करें क्या हिन्दु धर्म उपरोक्त मांस आहार को श्राद्ध कर्म में प्रयोग कर सकता है। कभी नहीं। इसलिए ऐसे श्राद्ध न करके श्रद्धापूर्वक धार्मिक अनुष्ठान पूर्ण सन्त के बताए मार्ग से करना चाहिए। वह है नाम मंत्र का जाप, पांचों यज्ञ, तीनों समय की उपासना वाणी पाठ से जो यह दास (रामपाल दास) बताता है। जिससे पितरों, प्रेतों आदि का भी कल्याण होकर उपासक पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगा तथा उसके पितर (पूर्वज) जो भूत या पितर योनियों में कष्ट उठा रहे हैं, उनकी वह योनि छूटकर तुरन्त मानव शरीर प्राप्त करके इस भक्ति को प्राप्त करेगें। जिससे उनका भी पूर्ण मोक्ष हो जाएगा।

मार्कण्डेय पुराण (गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित) में अध्याय ''श्राद्धकर्म का वर्णन पष्ठ 100 पर लिखा है ''जो प्रपितामह के ऊपर के तीन पीढ़ीयाँ जो नरक में निवास करती हैं, जो पशु–पक्षी की योनि में पड़े है, तथा जो भूत प्रेत आदि के रूप में स्थित है उन सब को विधि पूर्वक श्राद्ध करने वाला यजमान तृप्त करता है। पृथ्वी पर जो अन्न बिखेरते हैं (श्राद्ध कर्म करते समय) उससे पिशाच योनि में पड़े पितरों की तृप्ति होती है। स्नान के वस्त्र से जो जल पृथ्वी पर टपकता है, उससे वृक्ष योनि में पड़े हुए पितर तृप्त होते हैं। नहाने पर अपने शरीर से जो जल के कण पृथ्वी पर गिरते हैं उनसे उन पितरो की तृप्ति होती है जो देव भाव को प्राप्त हुए हैं। पिण्डों के उठाने पर जो अन्न के कण पृथ्वी पर गिरते हैं, उनसे पशु–पक्षी की योनि में पड़े हुए पितरों की तृप्ति होती है। अन्यायोपार्जित धन से जो श्राद्ध किया जाता है, उससे चाण्डाल आदि योनियों में पड़े हुए पितरों की तृप्ति होती है।

पेश है मार्कण्डेय पुराण के अध्याय श्राद्ध कर्म के वर्णन की संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

१०० संक्षिप्त मार्कण्डेयपुराण

इनसे ऊपरके सभी पितर पूर्वज कहलाते हैं। इनमेंसे जो नरकमें निवास करते हैं, जो पशु-पक्षीकी योनिमें पड़े हैं तथा जो भूत-प्रेत आदिके रूपमें स्थित हैं, उन सबको विधिपूर्वक श्राद्ध करनेवाला यजमान तृप्त करता है। किस प्रकार तृप्त करता है, यह बतलाती हूँ; सुनो। मनुष्य पृथ्वीपर जो अन्न बिखेरते हैं, उससे पिशाच-योनिमें पड़े हुए पितरोंकी तृप्ति होती है। बेटा! स्नानके वस्त्रसे जो जल पृथ्वीपर टपकता है, उससे वृक्ष-योनिमें पड़े हुए पितर तृप्त होते हैं। नहानेपर अपने शरीरसे जो जलके कण इस पृथ्वीपर गिरते हैं, उनसे उन पितरोंकी तृप्ति होती है, जो देवभावको प्राप्त हुए हैं। पिण्डोंके उठानेपर जो अन्नके कण पृथ्वीपर गिरते हैं, उनसे पशु-पक्षीकी योनिमें पड़े हुए पितरोंकी तृप्ति होती है। कुलमें जो बालक श्राद्धकर्मके योग्य होकर भी संस्कारसे वञ्चित रह गये हैं अथवा जलकर मरे हैं, वे बिखेरे हुए अन्न और सम्मार्जनके जलको ग्रहण करते हैं। ब्राह्मणलोग भोजन करके जब हाथ-मुँह धोते हैं और चरणोंका प्रक्षालन करते हैं, उस जलसे भी अन्यान्य पितरोंकी तृप्ति होती है। बेटा! उत्तम विधिसे श्राद्ध करनेवाले पुरुषोंके अन्य पितर यदि दूसरी-दूसरी योनियोंमें चले गये हों तो भी उस श्राद्धसे उन्हें बड़ी तृप्ति होती है। अन्यायोपार्जित धनसे जो श्राद्ध किया जाता है, उससे चाण्डाल आदि योनियोंमें पड़े हुए पितर तृप्त होते हैं।

❖ **विचार करें :- उपरोक्त योनियों में जो अपने पूर्वज पड़े हैं। उसका मूल कारण है कि उन्होंने शास्त्रविधि अनुसार भक्ति नहीं की। पवित्र गीता जी व पवित्र वेदों में वर्णित विधि अनुसार साधना करते**

तो उपरोक्त महाकष्ट दायक योनियों में नहीं पड़ते। मुझ दास (लेखक-रामपाल दास) की सर्व मानव समाज से कर बद्ध प्रार्थना है अब तो जागो, पीछे जो गलती हो चुकी है, उसकी आवत्ति न हो। जो साधना यह दास (रामपाल दास) बताता है उससे आपके पूर्वज (सात पीढ़ी तक के) किसी भी योनि में (पितर, भूत, पिशाच, पशु-पक्षी, वक्ष आदि में) पड़े हों उन सर्व की वर्तमान योनि छूटकर तुरन्त मानव जन्म मिलेगा। फिर वे वर्तमान में मुझ दास (रामपाल दास) द्वारा भक्ति साधना प्राप्त करके यदि मर्यादा में रह कर आजीवन यह भक्ति करते रहेगें तो पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगें। यही प्रमाण कबीर परमेश्वर द्वारा दिए तत्वज्ञान को संत गरीबदास जी बता रहे हैं :-

अग्नि लगा दिया जद लम्बा, फूंक दिया उस ठाई। पुराण उठाकर पण्डित आए, पीछे गरूड़ पढ़ाई।।
नर सेती फिर पशुवा किजे गधा बैल बनाई, छप्पन भोग कहा मन बौरे किते कुरड़ी चरने जाई।
प्रेत शिला पर जाय विराजे पितरों पिण्ड भराई, बहुर श्राद्ध खाने को आऐ काग भए कलि माहीं।
जै सतगुरू की संगत करते सकल कर्म कट जाई। अमर पुरी पर आसन होते जहाँ धूप ना छांई।

उपरोक्त वाणी पांचवे वेद (सूक्ष्म अर्थात् स्वसम वेद) की है। जिसमें स्पष्ट किया है कि पितरों आदि के पिण्ड दान करते हुए अर्थात् श्राद्ध कर्म करते-करते भी पशु-पक्षी व भूत प्रेत की योनियों में प्राणी पड़ते हैं तो वह श्राद्ध कर्म किस काम आया? फिर कहा है कि यदि सतगुरू (तत्वज्ञान दाता तत्वदर्शी संत) का संग करते अर्थात् उसके बताए अनुसार भक्ति साधना करते तो सर्व कर्म कट जाते। न पशु बनते, न पक्षी, न पितर बनते, न प्रेत। सीधे सतधाम (शाश्वत स्थान) पर चले जाते जहां जाने के पश्चात् फिर लौट कर इस संसार में किसी भी योनि में नहीं आते (प्रमाण गीता अध्याय 4 श्लोक 34 अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा श्लोक 16-17 में तथा अध्याय 18 श्लोक 62 में व अध्याय 9 श्लोक 25 में)

पुराणों में लिखा है (जो ऋषि का अनुभव है) कि पितर धन देते हैं, पुत्र देते हैं। रोग नष्ट कर देते हैं आदि-आदि।

❖ विचार करें :- पितर स्वयं भूखे-प्यासे यमलोक (नरक लोक) में कष्ट उठाते हैं। अपनी भूख-प्यास शांत करने के लिए आप जी से श्राद्ध-कर्म करने को भ्रमित ज्ञान के आधार से कहते हैं तो वे आपको सुखी कर सकें, यह बात न्याय संगत नहीं है। अपने धर्मगुरू यह भी कहा करते हैं कि किस्मत लिखा ही प्राणी प्राप्त करते हैं, उसमें कोई परिवर्तन नहीं हो सकता। परंतु सच्चाई यह है कि यदि साधक पूर्ण परमात्मा की सत्य साधना करता है तो परमात्मा को ही यह अधिकार है कि भाग्य से भिन्न भी दे सकता है। अन्य किसी देवी-देव तथा पितर आदि को यह अधिकार नहीं है। गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 तथा 20-23 में तो तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा रजगुण, श्री विष्णु सतगुण तथा श्री शिव तमगुण) की भक्ति करना भी निषेध बताया है। हिन्दू ब्रह्म की साधना न करके अन्य उपरोक्त देवताओं या अन्य देवताओं की पूजा करते हैं। इनकी पूजा करने वालों को राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है। आप जी विचार करें कि पितर कौन-से खेत की मूली हैं? पितर साधक को धन, पुत्र आदि दे देंगे, यह दूर की कौड़ी है।

''प्रभु कबीर जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

एक समय काशी नगर (बनारस) में गंगा दरिया के घाट पर कुछ पंडित जी श्राद्धों के दिनों में अपने पितरों को जल दान करने के उद्देश्य से गंगा के जल का लोटा भरकर पटरी पर खड़े होकर सुबह के समय सूर्य की ओर मुख करके पथ्वी पर लोटे वाला जल गिरा रहे थे। परमात्मा कबीर

जी ने यह सब देखा तो जानना चाहा कि आप यह किस उद्देश्य से कर रहे हैं? पंडितों ने बताया कि हम अपने पूर्वजों को जो पितर बनकर स्वर्ग में निवास कर रहे हैं, जल दान कर रहे हैं। यह जल हमारे पितरों को प्राप्त हो जाएगा। यह सुनकर परमेश्वर कबीर जी उन अंध श्रद्धा भक्ति करने वालों का अंधविश्वास समाप्त करने के लिए उसी गंगा दरिया में घुटनों पानी खड़ा होकर दोनों हाथों से गंगा दरिया का जल सूर्य की ओर पटरी पर शीघ्र-शीघ्र फैंकने लगे। उनको ऐसा करते देखकर सैंकड़ों पंडित तथा सैंकड़ों नागरिक इकट्ठे हो गए। पंडितों ने पूछा कि हे कबीर जी! आप यह कौन-सी कर्मकाण्ड की क्रिया कर रहे हो? इससे क्या लाभ होगा? यह तो कर्मकाण्ड में लिखी ही नहीं है।

कबीर जी ने उत्तर दिया कि यहाँ से एक मील (1½ कि.मी.) दूर मेरी कुटी के आगे मैंने एक बगीची लगा रखी है। उसकी सिंचाई के लिए क्रिया कर रहा हूँ। यह जल मेरी बगीची की सिंचाई कर रहा है। यह सुनकर सर्व पंडित हँसने लगे और बोले कि यह कभी संभव नहीं हो सकता। एक मील दूर यह जल कैसे जाएगा? यह तो यहीं रेत में समा गया है। कबीर जी ने कहा कि यदि आपके द्वारा गिराया जल करोड़ों मील दूर स्वर्ग में जा सकता है तो मेरे द्वारा गिराए जल को एक मील जाने पर कौन-सी आश्चर्य की बात है? यह बात सुनकर पंडित जी समझ गए कि हमारी क्रियाऐं व्यर्थ हैं। कबीर जी ने एक घण्टा बाहर पटरी पर खड़े होकर कर्मकाण्ड यानि श्राद्ध व अन्य क्रियाओं पर सटीक तर्क किया। कहा कि आप एक ओर तो कह रहे हो कि आपके पितर स्वर्ग में हैं। दूसरी ओर कह रहे हो, उनको पीने का पानी नहीं मिल रहा। वे वहाँ प्यासे हैं। उनको सूर्य को अर्ध देकर जल पार्सल करते हो। यदि स्वर्ग में पीने के पानी का ही अभाव है तो उसे स्वर्ग नहीं कह सकते। वह तो रेगिस्तान होगा। वास्तव में वे पितरगण यमराज के आधीन यमलोक रूपी कारागार में अपराधी बनाकर डाले जाते हैं। वहाँ पर जो निर्धारित आहार है, वह सबको दिया जाता है। जब पृथ्वी पर बनी कारागार में कोई भी कैदी खाने बिना नहीं रहता। सबको खाना-पानी मिलता है तो यमलोक वाली कारागार जो निरंजन काल राजा ने बनाई है, उसमें भी भोजन-पानी का अभाव नहीं है।

कुछ पितरगण पृथ्वी पर विचरण करने के लिए यमराज से आज्ञा लेकर पृथ्वी पर पैरोल पर आते हैं। वे जीभ के चटोरे होते हैं। उनको कारागार वाला सामान्य भोजन अच्छा नहीं लगता। वे भी मानव जीवन में इसी भ्रम में अंध भक्ति करते थे कि श्राद्धों में एक दिन के श्राद्ध कर्म से पितरगण एक वर्ष के लिए तृप्त हो जाते हैं। उसी आधार से रूची ऋषि के चारों पूर्वज पितरों ने पैरोल पर आकर काल प्रेरणा से रूची ऋषि को भ्रमित करके वेद अनुसार शास्त्रोक्त साधना छुड़वाकर विवाह कराकर श्राद्ध आदि शास्त्रविरूद्ध कर्मकाण्ड के लिए प्रेरित किया। उस भले ब्राह्मण को भी पितर बनाकर छोड़ा। पृथ्वी पर आकर पितर रूपी भूत किसी व्यक्ति (स्त्री-पुरूष) में प्रवेश करके भोजन का आनंद लेते हैं। अन्य के शरीर में प्रवेश करके भोजन खाते हैं। भोजन की सूक्ष्म वासना से उनका सूक्ष्म शरीर तृप्त होता है। लेकिन एक वर्ष के लिए नहीं। यदि कोई पिता-दादा, दादी, माता आदि-आदि किसी पशु के शरीर को प्राप्त हैं तो उसको कैसे तृप्ति होगी? उसको दस-पंद्रह किलोग्राम चारा खाने को चाहिए। कोई श्राद्ध करने वाला गुरू-पुरोहित भूसा खाता देखा है। आवश्यक नहीं है कि सबके माता-पिता, दादा-दादी आदि-आदि पितर बने हों। कुछ के पशु-पक्षी आदि अन्य योनियों को भी प्राप्त होते हैं। परंतु श्राद्ध सबके करवाए जाते हैं। इसे कहते हैं शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण यानि शास्त्र विरूद्ध भक्ति।

''श्री नानक जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

❖ अन्य उदाहरण :- सिक्ख धर्म के प्रवर्तक श्री नानक देव साहेब जी की जीवनी में एक घटना ऐसी है जिसका वर्णन करता हूँ जो पवित्र पुस्तक ''भाई बाले वाली जन्म साखी श्री नानक देव'' में लिखी है जिसकी हैडिंग है ''आगे साखी दुनिचंद खत्री नाल होई''।

☛ संक्षिप्त प्रकरण इस प्रकार है :-

श्री नानक जी को परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) बेई नदी पर उस समय मिले थे, जिस समय श्री नानक जी सुलतानपुर शहर से सुबह के समय प्रतिदिन की तरह बेई नदी में स्नान करने के लिए गए थे। अन्य नगरवासी भी स्नान कर रहे थे। उस समय परमेश्वर कबीर जी बाबा जिंदा के वेश में आए और श्री नानक जी के साथ दरिया में स्नान करने के बहाने प्रवेश हुए। अन्य उपस्थित व्यक्ति देख रहे थे। दोनों ने दरिया में डुबकी लगाई, परंतु बाहर नहीं आए। दोनों को दरिया में डूबा मान लिया गया था। परमेश्वर जी श्री नानक जी की आत्मा को लेकर (शरीर को दूर जंगल में छोड़कर) अपने साथ अपने निवास स्थान सतलोक (सच्चखण्ड) में ले गए। तीन दिन तक काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्डों, अक्षर पुरूष के सात शंख ब्रह्माण्डों तथा अपने सतलोक के असंख्य ब्रह्माण्डों की स्थिति को आँखों दिखाया, यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान बताया तथा यथार्थ मोक्ष मंत्र सतनाम (जो दो अक्षर का है जिसमें एक ॐ मंत्र है तथा दूसरा गुप्त है जो उपदेशी को बताया जाता है।) से मुक्ति होना बताया। फिर एक नाम (सारनाम) का विशेष योगदान मानव के मोक्ष की साधना में है, उससे परिचित कराया तथा सतनाम और सारनाम को कलयुग के पाँच हजार पाँच सौ पाँच (5505) वर्ष बीत जाने तक गुप्त रखने की आज्ञा दी। श्राद्ध-पिण्डदान आदि कर्मकाण्ड को व्यर्थ बताया और स्वर्ग-नरक को दिखाया। तीसरे दिन श्री नानक जी की आत्मा को शरीर में प्रवेश करके अंतर्ध्यान हो गए। उसके पश्चात् श्री नानक जी ने अपने दो शिष्यों ''भाई बाला तथा मर्दाना'' को साथ लेकर प्रभु से प्राप्त यथार्थ ज्ञान व आँखों देखी ऊपर के लोकों की व्यवस्था का प्रचार करने के उद्देश्य से देश-प्रदेश में बारह वर्ष भ्रमण किया। उसी दौरान लाहौर में एक धनी व्यक्ति दुनिचन्द खत्री की प्रार्थना पर उनके घर गए। उस दिन सेठ दुनिचन्द खत्री ने अपने पिता जी का श्राद्ध किया था। कई ब्राह्मणों को भोजन करवाया तथा वस्त्र व हजारों रूपये दक्षिणा दी थी। श्री नानक जी ने पूछा कि हे दुनिचन्द! आज किस उपलक्ष्य में इतने पकवान बनाऐ हैं। दुनिचन्द ने बताया कि महाराज जी! आज मेरे पिता जी का श्राद्ध किया है। श्री नानक जी ने पूछा कि आपके पिता जी कहाँ है? उत्तर दुनिचन्द का कि वे स्वर्गवासी हो चुके हैं। श्राद्ध करने से उनको एक वर्ष तक स्वर्ग में भूख नहीं लगती। यह बात सुनकर श्री नानक जी ने कहा कि हे दुनिचन्द! आपको आपके अज्ञानी गुरूओं ने भ्रमित कर रखा है। आपका पिता जी तो बाघ (Lion) के शरीर को प्राप्त होकर उस जंगल में एक वक्ष के नीचे भूख से व्याकुल बैठा है। यदि मेरी बात पर विश्वास नहीं है तो जाँच कर सकते हैं। तू एक व्यक्ति का भोजन तैयार कर, उस जंगल में जा, तेरी दष्टि पड़ते ही मेरे आशीर्वाद से उस बाघ (सिंह) को मनुष्य बुद्धि आ जाएगी। उसको अपना पूर्व जन्म भी याद आ जाएगा। दुनिचन्द जी को श्री नानक जी पर पूर्ण विश्वास था कि इन्होंने जो बोल दिया, वह सिद्ध है। इस महात्मा में लोग बड़ी शक्ति बताते हैं।

दुनीचन्द सेठ एक व्यक्ति का भोजन जो श्राद्ध के बाद बचा था, लेकर उस बताए जंगल में

उसी झाड़ के पास गया तो एक सिंह दिखाई दिया जो दुनिचन्द की ओर कुत्ते की तरह दुम हिला-हिलाकर भाव प्रकट करने लगा कि मैं कोई हानि नहीं करूंगा, आ जा मेरे पास। दुनिचन्द सेठ ने भोजन बाघ के सामने थाली में रख दिया। सर्व भोजन बाघ खा गया। दुनिचन्द ने पूछा कि हे पिता जी! आप तो बड़े धर्म-कर्म करते थे। आप तो सदा शाकाहारी रहे थे। आपकी यह दशा कैसे हुई? श्री नानक महाराज जी की शक्ति से सिंह ने कहा कि बेटा! जब मेरे प्राण निकल रहे थे, उसी समय साथ वाले मकान में माँस पकाया जा रहा था। उसकी गंध मेरे तक आई, मेरे मन में माँस खाने की इच्छा हुई। उसी समय मेरे प्राण निकल गए। जिस कारण से मुझे शेर का शरीर मिला। बेटा दुनिचन्द! आप किसी पूर्ण संत से दीक्षा लेकर अपने जीव का कल्याण करा लेना। मानव जीवन बड़ी कठिनता से मिलता है। यह कहकर शेर जंगल की ओर गहरा चला गया। दुनिचन्द ने उन अज्ञानी धर्मगुरूओं को धिक्कारा कि सबको भ्रमित कर रहे हैं। अब विश्वास हुआ कि श्राद्ध करने से कोई लाभ मतक को नहीं मिलता। घर आकर श्री नानक जी के चरणों में गिरकर अपने कल्याण के लिए यथार्थ भक्ति का ज्ञान तथा मंत्र लेकर आजीवन स्मरण किया तथा सर्व अंधविश्वास वाली साधना त्याग दी जो शास्त्रों के विरूद्ध कर रहा था। मानव जीवन सफल किया।

❖ अन्य उदाहरण :-

''संत गरीबदास जी द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

संत गरीबदास जी महाराज (गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर, प्रान्त-हरियाणा) को श्री नानक जी की तरह दस वर्ष की आयु में सन् 1727 (विक्रमी संवत् 1784) में नला नाम के खेत (जंगल) में जिंदा बाबा के वेश में परम अक्षर ब्रह्म मिले थे। उस समय छुड़ानी गाँव के दस-बारह व्यक्तियों ने बाबा जिंदा को देखा, बातें की। अन्य व्यक्ति अपने-अपने कार्य में लग गए। बालक गरीबदास जी की आत्मा को निकालकर परमात्मा सतलोक ले गए। ऊपर के सब लोकों का अवलोकन करवाकर सर्व यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान बताकर लगभग 8-9 घण्टे बाद वापिस शरीर में प्रविष्ट कर दिया। बालक गरीबदास जी को मत जानकर चिता पर रख दिया था। अग्नि लगाने वाले थे। उसी समय संत गरीबदास जी उठकर घर की ओर चल पड़े। परमेश्वर कबीर जी ने उनको यथार्थ भक्ति ज्ञान दिया। उनके बहुत सारे शिष्य हुए। गाँव छुड़ानी के एक भक्त को संत गरीबदास जी की बात पर विश्वास नहीं था कि श्राद्ध कराया हुआ मतक को नहीं मिलता। श्राद्धों के दिनों में उस भक्त के दोनों माता-पिता के श्राद्ध लगातार दो दिन किए गए। पहले दिन माता जी का और अगले दिन पिता जी का। संत गरीबदास जी ने कहा कि हे भक्त! आपके माता-पिता तो तुम्हारे खेत की जोहड़ी (जिसे ग्रामीण भाषा में लेट यानि छोटा तालाब = जोहड़ी कहते हैं।) पर भूखे रो रहे हैं। आप दो व्यक्तियों का भोजन लेकर मेरे साथ चलो। वह भक्त अति शीघ्र अपने पिता के श्राद्ध से बची खीर व रोटी दो व्यक्तियों की लेकर संत गरीबदास जी के साथ गया। उनके खेत में बनी जोहड़ी से लगभग दो सौ फुट दूर खड़े होकर संत गरीबदास जी ने आवाज लगाई कि हे फतेह सिंह तथा दया कौर (काल्पनिक नाम)! आओ, आपका पुत्र आपके लिए भोजन लाया है। उसी समय गीदड़ तथा गीदड़ी झाड़ियों से बाहर निकले। पहले तो ऊपर को मुख करके चिल्लाए। फिर दौड़े-दौड़े संत गरीबदास जी के पास आए। दोनों के सामने खीर-रोटी रख दी। शीघ्र-शीघ्र खाकर दौड़ गए। उस दिन उस भ्रमित भक्त का अज्ञान भंग हुआ। वह प्रतिदिन दो व्यक्तियों का भोजन जैसा भी घर पर बनता था, एक समय उस जोहड़ी की झाड़ियों में रख देता। प्रतिदिन वे दोनों जानवर भोजन खा जाते। कुछ

वर्ष पश्चात् उनकी मत्यु हो गई। यह देखकर भी अन्य गाँव वाले तो उस भक्त का मजाक करते थे कि तेरे को गरीबु (संत गरीबदास जी को गाँव के लोग गरीबा-गरीबु आदि-आदि अपभ्रंस नामों से पुकारते थे) ने बहका दिया है। श्राद्ध नहीं करता, बड़ी हानि हो जाएगी। परंतु भक्त को अटल विश्वास हो चुका था। आजीवन मर्यादा में रहकर साधना करके जीवन सफल किया। जीवन में कोई हानि नहीं हुई, अपितु अद्भुत लाभ हुए। धनी हो गया। सैंकड़ों गाय मोल ले ली। बड़ी हवेली (कोठी) बना ली। कुछ वर्ष पश्चात् बच्चों ने भी दीक्षा ले ली। सुखी जीवन जीया।

❖ अन्य उदाहरण :-

''लेखक (रामपाल दास) द्वारा श्राद्ध भ्रम खण्डन''

"सत्य कथा"

मेरे पूज्य गुरुदेव स्वामी रामदेवानन्द जी गाँव-बड़ा पैंतावास, तहसील-चरखी दादरी, जिला-भिवानी (प्रान्त-हरियाणा) के निवासी थे जो लगभग सोलह वर्ष की आयु में पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति के लिए अचानक घर त्याग कर निकल गए। प्रतिदिन पहनने वाले वस्त्रों को अपने ही खेतों के निकट घने जंगल में किसी मत पशु की अस्थियों के पास डाल गए। शाम को घर न पहुँचने के कारण घर वालों ने जंगल में तलाश की। रात्रि का समय था। कपड़े पहचान कर दुःखी मन से पशु की अस्थियों को बच्चे की अस्थियाँ जान कर उठा लाए तथा यह सोचा कि बच्चा जंगल में चला गया, किसी हिंसक जानवर ने खा लिया। अन्तिम संस्कार कर दिया। सर्व क्रियाऐं की, तेरहवीं-बरसौदी (वर्षी) आदि की तथा श्राद्ध भी निकालते रहे। लगभग 104 वर्ष की आयु प्राप्त होने के उपरान्त स्वामी जी अचानक अपने गाँव बड़ा पैंतावास जिला भिवानी, तहसील-चरखी दादरी, हरियाणा में पहुँच गए। स्वामी जी का बचपन का नाम श्री हरिद्वारी जी था तथा पवित्र ब्राह्मण कुल में जन्म था। मुझ दास को पता चला तो मैं भी दर्शनार्थ पहुँच गया। स्वामी जी की भाभी जी जो लगभग 92 वर्ष की आयु की थी। मैंने उस वद्धा से पूछा कि हमारे गुरु जी के घर त्याग जाने के उपरान्त क्या महसूस किया? उस वद्धा ने बताया कि मेरा विवाह हुआ तब मुझे बताया गया कि इनका एक भाई हरिद्वारी था जो किसी हिंसक जानवर ने जंगल में खा लिया था। उसके श्राद्ध निकाले जा रहे हैं। मुझे भी इनके श्राद्ध निकालने को कहा गया। वद्धा ने बताया कि 70 श्राद्ध तो मैं अपने हाथों निकाल चुकी हूँ। जब कभी फसल अच्छी नहीं होती या कोई घर का सदस्य बीमार हो जाता तो अपने पुरोहित (गुरु जी) से कारण पूछते तो वह कहा करता कि हरद्वारी पितर बना है, वह तुम्हें दुःखी कर रहा है। श्राद्धों के निकालने में कोई अशुद्धि रही है। अब की बार सर्व क्रिया मैं स्वयं अपने हाथों से करूंगा। पहले मुझे समय नहीं मिला था क्योंकि एक ही दिन में कई जगह श्राद्ध क्रियाऐं करने जाना पड़ा। इसलिए बच्चे को भेजा था। तब तक कुछ भेंट चढ़ाओ ताकि उसे शान्त किया जाए। तब उसे 21 या 51 रूपये जो भी कहता था, डरते भेंट करते थे। फिर श्राद्धों के समय गुरु जी स्वयं श्राद्ध करते थे। तब मैंने कहा माता जी अब तो छोड़ दो इस गीता जी विरुद्ध साधना को, नहीं तो आप भी प्रेत बनोगी। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 सुनाया। तब वह वद्धा कहने लगी गीता कि मैं भी पढती हूँ। दास ने कहा आपने पढा है, समझा नहीं। आगे से तो बन्द कर दो इस साधना को। वद्धा ने उत्तर दिया न भाई, कैसे छोड़ दें श्राद्ध निकालना, यह तो सदियों पुरानी (लाग) परम्परा है। हे पाठको! यह दोष भोली आत्माओं का नहीं है। यह दोष मूर्ख गुरुओं (नीम हकीमों) का है जिन्होंने अपने पवित्र शास्त्रों

को समझे बिना मनमाना आचरण (पूजा का मार्ग) बता दिया। जिस कारण न तो कोई कार्य सिद्ध होता है, न परमगति तथा न कोई सुख ही प्राप्त होता है। (प्रमाण :- पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24)

शंका प्रश्न :- यदि किसी के माता-पिता भूखे हों, वे दिखाई देकर कहें तो वह पुत्र नहीं जो उनकी इच्छा पूरी न करे।

❖ शंका समाधान :- यदि किसी का बच्चा कुएं में गिरा हो वह तो चिल्लाएगा कि मुझे बचा लो। पिता जी आ जाओ। मैं मर रहा हूँ। वह पिता मूर्ख होगा जो भावुक होकर कुएं में छलाँग लगाकर बच्चे को बचाने की कोशिश करके स्वयं भी डूबकर मर जाएगा। बच्चे को भी नही बचा पाएगा। उसको चाहिए कि लम्बी रस्सी का प्रबन्ध करे। फिर उस कुएं में छोड़े। बच्चा उसे पकड़ ले। फिर बाहर खींचकर बच्चे को कुएं से निकाले। इसी प्रकार पूर्वज तो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण (पूजा) करके पितर बन चुके हैं। संतान को भी पितर बनाने के लिए पुकार रहे हैं। तत्वज्ञान को समझकर अपना कल्याण कराऐं तथा मुझ दास (रामपाल दास) के पास परमेश्वर कबीर बंदी छोड़ जी की प्रदान की हुई वह विधि है जो साधक का तो कल्याण करेगी ही, उसके पित्तरों की भी पितर योनि छूटकर मानव जन्म प्राप्त होगा तथा भक्ति युग में जन्म होकर सत्य भक्ति करके एक या दो जन्म में पूर्ण मोक्ष प्राप्त करेगें।

❖ विचार करें :- जैसा कि उपरोक्त रूची ऋषि की कथा में पित्तर डर रहे हैं कि यदि हमारे श्राद्ध नहीं किए गए तो हम पतन को प्राप्त होगें अर्थात् हमारा पतन (मत्यु) हो जाएगा। अब उनको पित्तर योनि जो अत्यंत कष्टमय है, अच्छी लग रही है। उसे त्यागना नहीं चाह रहे। यह तो वही कहानी वाली बात है कि ''एक समय एक ऋषि को अपने भविष्य के जन्म का ज्ञान हुआ। उसने अपने पुत्रों को बताया कि मेरा अगला जन्म अमूक व्यक्ति के घर एक सूअरी से होगा। मैं सूअर का जन्म पाऊंगा। उस सूअरी के गले में गांठ है। यह उसकी पहचान है। उसके उदर से मेरा जन्म होगा। मेरी पहचान यह होगी कि मेरे सिर पर गांठ होगी जो दूर से दिखाई देगी। मेरे बच्चो! उस व्यक्ति से मुझे मोल ले लेना तथा मुझे मार देना, मेरी गति कर देना। बच्चों ने कहा बहुत अच्छा पिता जी। ऋषि ने फिर आँखों में पानी भरकर कहा कि बच्चो! कहीं लालचवश मुझे मोल न लो और मुझे तुम मारो नहीं, यह कार्य तुम अवश्य करना, नहीं तो मैं सूअर योनि में महाकष्ट उठाऊंगा। बच्चों ने पूर्ण विश्वास दिलाया।

उसके पश्चात् कुछ दिनों में उस ऋषि का देहांत हो गया। उसी व्यक्ति के घर पर उसी गले में गांठ वाली सूअरी के वहीं सिर पर गांठ वाला बच्चा भी अन्य बच्चों के साथ उत्पन्न हुआ। उस ऋषि के बच्चों ने वह सूअरी का बच्चा मोल ले लिया। तब उसे मारने लगे। उसी समय वह बच्चा बोला, बेटा! मुझे मत मारो। मेरा जीवन नष्ट करके तुम्हें क्या मिलेगा? तब उस ऋषि के पूर्व जन्म के बेटों ने कहा, पिता जी! आपने ही तो कहा था। तब वह सुअर के बच्चे रूप में ऋषि बोला कि मैं आपके सामने हाथ जोड़ता हूँ। मुझे मत मारो, मेरे भाईयों (अन्य सूअर के बच्चों) के साथ मेरा दिल लगा है। मुझे बख्श दो। बच्चों ने वह बच्चा छोड़ दिया, मारा नहीं। इस प्रकार यह जीव जिस भी योनि में उत्पन्न हो जाता है, उसे त्यागना नहीं चाहता। जबकि यह शरीर एक दिन सर्व का जाएगा। इसलिए भावुकता में न बहकर विवेक से कार्य करना चाहिए। यह दास (रामपाल दास) जो साधना बताएगा, उससे आम के आम और गुठलियों के दाम भी मिलेगें। इसी विष्णु पुराण में ततीय अंश के अध्याय 15 श्लोक 55-56 पष्ठ 213 पर लिखा है कि ''(और्व ऋषि सगर राजा को बता रहा है)'' हे राजन् श्राद्ध करने वाले पुरूष से पितरगण, विश्वदेव गण आदि सर्व संतुष्ट हो जाते हैं। हे भूपाल! पितरगण का आधार चन्द्रमा है और चन्द्रमा का आधार योग (शास्त्रअनुकूल भक्ति) है। इसलिए श्राद्ध में योगी जन (तत्व ज्ञान अनुसार शास्त्रविधि

अनुसार साधक जन) को अवश्य बुलाए यदि श्राद्ध में एक हजार ब्राह्मण भोजन कर रहे हों उनके सामने एक योगी (शास्त्रअनुकूल साधक) भी हो तो वह उन एक हजार ब्राह्मणों का भी उद्धार कर देता है तथा यजमान का भी उद्धार कर देता है। **(पित्तरों का उद्धार का अर्थ है कि पित्तरों की योनि छूटकर मानव शरीर मिलेगा। यजमान तथा ब्राह्मणों के उद्धार से तात्पर्य यह है कि उनको सत्य साधना का उपदेश करके मोक्ष का अधिकारी बनाएगा)**

पेश है प्रमाण के लिए श्री विष्णु पुराण के तृतीय अंश के अध्याय 15 श्लोक 55-56 की फोटोकॉपी:-

अ० १५] * तीसरा अंश * १५३

हे भूपाल! पितृगणका आधार चन्द्रमा है और चन्द्रमाका आधार योग है, इसलिये श्राद्धमें योगिजनको नियुक्त करना अति उत्तम है॥ ५५॥ हे राजन्! यदि श्राद्धभोजी एक सहस्र ब्राह्मणोंके सम्मुख एक योगी भी हो तो वह यजमानके सहित उन सबका उद्धार कर देता है॥ ५६॥

❖ योगी की परिभाषा :- गीता अध्याय 2 श्लोक 53 में कहा है कि हे अर्जुन! जिस समय आप की बुद्धि भिन्न-2 प्रकार के भ्रमित करने वाले ज्ञान से हटकर एक तत्व ज्ञान पर स्थिर हो जाएगी, तब तू योगी बनेगा अर्थात् भक्त बनेगा। (योग का प्राप्त होगा) भावार्थ है कि तत्व ज्ञान आधार से साधना करने वाला ही मोक्ष का अधिकारी बनता है। उसी में नाम साधना (भक्ति) का धन होता है। वह राम नाम की कमाई का धनी होता है।

इसलिए यह दास (रामपाल दास) आपको वह शास्त्रानुकूल साधना प्रदान करेगा जिससे आप योगी (सत्य साधक) हो जाओगे। आपका कल्याण तथा आपके पित्तरों का भी कल्याण हो जाएगा। जैसा कि विष्णु पुराण तृतीय अंश अध्याय 15 श्लोक 13 से 17 पृष्ठ 210 पर लिखा है कि देवताओं के निमित्त श्राद्ध (पूजा) में अयुग्म संख्या (3,5,7,9 की संख्या) में ब्राह्मणों को एक साथ भोजन कराए तथा उनका मुँह पूर्व की ओर बैठाकर भोजन कराए तथा पित्तरों के लिए श्राद्ध (पूजा) करने के समय युग्म संख्या (दो, चार, छः, आठ की संख्या) में उत्तर की ओर मुख करके बैठाए तथा भोजन कराए। विचार करने की बात यह है कि इसी विष्णु पुराण, इसी तृतीय अंश के अध्याय 15 में श्लोक 55-56 पृष्ठ 213 पर यह भी तो लिखा है कि एक योगी (शास्त्रानुकूल सत्य साधक) अकेला ही पित्तरों तथा एक हजार ब्राह्मणों तथा यजमान सहित सर्व का उद्धार कर देगा। क्यों न हम एक योगी की खोज करें जिससे सर्व लाभ प्राप्त हो जाएगा। कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि :-

एकै साधे सब सधै, सब साधै सब जाय। माली सीचें मूल को, फलै फूलै अघाय।।

यह दास (रामपाल दास) भी धार्मिक अनुष्ठान (श्रद्धा से पूजा) करता और कराता है। जिसके करने से साधक पितर, भूत नहीं बनता अपितु पूर्ण मोक्ष प्राप्त करता है तथा जो पूर्वज गलत साधना (शास्त्रविधि त्याग कर मनमाना आचरण अर्थात् पूजा) करके पित्तर भूत बने हैं, उनका भी छुटकारा हो जाता है। यही प्रमाण इसी विष्णु पुराण पृष्ठ 209 पर इसी तृतीय अंश के अध्याय 14 श्लोक 20 से 31 में भी लिखा है कि जिसके पास श्राद्ध करने के लिए धन नहीं है तो वह यह कहे '' हे पितर गणों! आप मेरी भक्ति से तृप्ति लाभ प्राप्त करें क्योंकि मेरे पास श्राद्ध करने के लिए वित्त नहीं है।'' कृपया पाठक जन विचार करें कि जब भक्ति (मन्त्र जाप की कमाई) से पित्तर तृप्त हो जाते हैं तो फिर अन्य कर्मकाण्ड की क्या आवश्यकता है? यह सर्व प्रपंच ज्ञानहीन गुरू लोगों ने अपने उदर पोषण के लिए ही किया है क्योंकि गीता अध्याय 4 श्लोक 33 में भी लिखा है द्रव्य (धन द्वारा किया) यज्ञ (धार्मिक अनुष्ठान) से ज्ञान यज्ञ

(तत्वज्ञान आधार पर नाम जाप साधना) श्रेष्ठ है।

एक और विशेष विचारणीय विषय है कि विष्णु पुराण में पित्तर व देव पूजने का आदेश एक ऋषि का है तथा वेदों व गीता जी में पित्तरों वे देवताओं की पूजा का निषेध है जो आदेश ब्रह्म (काल रूपी ब्रह्म) भगवान का है। यदि पुराणों के अनुसार साधना करते हैं तो प्रभु के आदेश की अवहेलना होती है। जिस कारण से साधक दण्ड का भागी होता है।

''श्राद्ध करने की श्रेष्ठ विधि''

श्री विष्णु पुराण के तीसरे अंश में अध्याय 15 श्लोक 55-56 पृष्ठ 153 पर लिखा है कि श्राद्ध के भोज में यदि एक योगी यानि शास्त्रोक्त साधक को भोजन करवाया जाए तो श्राद्ध भोज में आए हजार ब्राह्मणों तथा यजमान के पूरे परिवार सहित तथा सर्व पितरों का उद्धार कर देता है।

❖ विवेचन :- मेरे (लेखक के) तत्वज्ञान को सुन-समझकर भक्त दीक्षा लेकर साधना करते हैं। ये योगी यानि शास्त्रोक्त साधक हैं। हम सत्संग समागम करते हैं। उसमें भोजन-भण्डारा (लंगर) भी चलाते हैं। जो व्यक्ति उस भोजन-भण्डारे में दान करता है। उससे बने भोजन को योगी यानि मेरे शिष्य तथा यह दास (लेखक) सब खाते हैं। यह दास (लेखक) सत्संग सुनाकर नए व्यक्तियों को यथार्थ भक्ति ज्ञान बताता है। शास्त्रों के प्रमाण प्रोजेक्टर पर दिखाता है। जिस कारण से श्रोता शास्त्र विरूद्ध साधना त्यागकर शास्त्रोक्त साधना करते हैं। इस प्रकार उस परिवार का उद्धार हुआ। उनके द्वारा दिए दान से बने भोजन को भक्तों ने खाया। इससे पितरों का उद्धार हुआ। पितर जूनी छूटकर अन्य जन्म मिल जाता है। सत्संग में यदि हजार ब्राह्मण भी उपस्थित हों तो वे भी सत्संग सुनकर शास्त्र विरूद्ध साधना त्यागकर अपना कल्याण करवा लेंगे। जैसे आप जी ने पहले पढ़ा कि कबीर जी ने गंगा के तट पर ब्राह्मणों को ज्ञान देकर उनकी शास्त्र विरूद्ध साधना को गलत सिद्ध करके सत्य साधना के लिए प्रेरित किया। उन ब्राह्मणों ने सतगुरू कबीर जी से दीक्षा लेकर अपना कल्याण करवाया। अन्य साधना जो शास्त्रों के विरूद्ध थी, त्याग दी। सुखी हुए।

दास की प्रार्थना है कि वर्तमान में मानव समाज शिक्षित है, वह अवश्य ध्यान दे तथा शास्त्र विधि अनुसार साधना करके पूर्ण परमात्मा के सनातन परमधाम (शाश्वतम् स्थानम्) अर्थात् सतलोक को प्राप्त करे जिससे पूर्ण मोक्ष तथा परम शान्ति प्राप्त होती है।(गीता अध्याय 15 श्लोक 4 तथा अध्याय 18 श्लोक 62 में जिसको प्राप्त करने के लिए कहा है।) इसके लिए तत्वदर्शी संत की तलाश करो। (गीता अध्याय 4 श्लोक 34)

एक श्रद्धालु ने कहा कि मैं आप से उपदेश लेकर आप द्वारा बताई साधना भी करता रहूँगा तथा श्राद्ध भी निकालता रहूँगा तथा अपने घरेलू देवी-देवताओं को भी उपरले मन से पूजता रहूँगा। इसमें क्या दोष है?

➢ मुझ दास की प्रार्थना :- संविधान की किसी भी धारा का उल्लंघन कर देने पर सजा अवश्य मिलेगी। इसलिए पवित्र गीता जी व पवित्र चारों वेदों में वर्णित व वर्जित विधि के विपरीत साधना करना व्यर्थ है। (प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 16 श्लोक 23-24 में) यदि कोई कहे कि मैं कार में पैंचर उपरले मन से कर दूंगा। नहीं, राम नाम की गाड़ी में पैंचर करना मना है। ठीक इसी प्रकार शास्त्र विरूद्ध साधना हानिकारक ही है।

एक श्रद्धालु ने कहा कि मैं और कोई विकार (मदिरा-मास आदि सेवन) नहीं करता। केवल

तम्बाखू (बीड़ी-सिगरेट-हुक्का) सेवन करता हूँ। आपके द्वारा बताई पूजा व ज्ञान अति उत्तम है। मैंने गुरु जी भी बनाया है, परन्तु यह ज्ञान आज तक किसी संत के पास नहीं है, मैं 25 वर्ष से घूम रहा हूँ तथा तीन गुरुदेव बदल चुका हूँ। कृपया मुझे तम्बाखू सेवन की छूट दे दो, शेष सर्व शर्तें मंजूर हैं। तम्बाखू से भक्ति में क्या बाधा आती है?

➢ लेखक की प्रार्थना :- दास ने प्रार्थना की कि अपने शरीर को ऑक्सीजन की आवश्यकता है। तम्बाखू का धुआँ कार्बन-डाई-ऑक्साइड है जो फेफड़ों को कमजोर व रक्त दूषित करता है। मानव शरीर प्रभु प्राप्ति व आत्म कल्याण के लिए ही प्राप्त हुआ है। इसमें परमात्मा पाने का रस्ता सुष्मना नाड़ी से प्रारम्भ होता है। जो नाक के दोनों छिद्र हैं उन्हें दायें को ईड़ा तथा बाऐं को पिंगुला कहते हैं। इन दोनों के मध्य में सुष्मणा नाड़ी है जिसमें एक छोटी सूई (needle) में धागा पिरोने वाले छिद्र के समान द्वार होता है जो तम्बाखू के धुऐं से बंद हो जाता है। जिससे प्रभु प्राप्ति के मार्ग में अवरोध हो जाता है। यदि प्रभु पाने का रस्ता ही बन्द हो गया तो मानव शरीर व्यर्थ हुआ। इसलिए प्रभु भक्ति करने वाले साधक के लिए प्रत्येक नशीले व अखाद्य (माँस आदि) पदार्थों का सेवन निषेध है।

एक श्रद्धालु ने कहा कि मैं तम्बाखु प्रयोग नहीं करता। माँस व मदिरा सेवन जरूर करता हूँ। इससे भक्ति में क्या बाधा है? यह तो खाने-पीने के लिए ही बनाई है तथा पेड़-पौधों में भी तो जीव है, वह खाना भी तो मांस भक्षण तुल्य ही है।

दास की प्रार्थना :- यदि कोई हमारे माता-पिता-भाई-बहन व बच्चों आदि को मारकर खाए तो कैसा लगे?

जैसा दर्द आपने होवै, वैसा जान बिराने।
कहै कबीर वे जाऐं नरक में, जो काटें शिश खुरांनें।।

जो व्यक्ति पशुओं को मारते समय खुरों तथा शीश को बेरहमी से काट कर माँस खाते हैं, वे नरक के भागी होंगे। जैसा दुःख अपने बच्चों व सम्बन्धियों की हत्या का होता है, ऐसा ही दूसरे को जानना चाहिए। रही बात पेड़-पौधों को खाने की। इनको खाने का प्रभु का आदेश है तथा ये जड़ जूनी के हैं। अन्य चेतन प्राणियों का वध प्रभु आदेश विरुद्ध है, इसलिए अपराध (पाप) है।

मदिरा सेवन भी प्रभु आदेश नहीं है, परन्तु स्पष्ट मना है तथा मानव जीवन को बर्बाद करने का है। शराब पान किया हुआ व्यक्ति कुछ भी गलती कर सकता है। मदिरा पान धन-तन व पारिवारिक शान्ति तथा समाज सभ्यता की महाशत्रु है। प्यारे बच्चों के भावी चरित्र पर कुप्रभाव पड़ता है। मदिरा पान करने वाला व्यक्ति कितना ही नेक हो परन्तु उसकी न तो इज्जत रहती है तथा न ही विश्वास।

एक समय यह दास एक गाँव में सत्संग करने गया हुआ था। उस दिन नशा निषेध पर सत्संग किया। सत्संग के उपरान्त एक ग्यारह वर्षीय कन्या फूट-फूट कर रोने लगी। पूछने पर उस बेटी ने बताया कि महाराज जी मेरे पिता जी पालम हवाई अड्डे पर बढ़िया नौकरी करते हैं। परन्तु सर्व पैसे की शराब पी जाते हैं। मेरी मम्मी के मना करने पर इतना पीटते हैं कि शरीर पर नीले दाग बन जाते हैं। एक दिन मेरे पापा जी मेरी मम्मी को पीटने लगे। मैं अपनी मम्मी के ऊपर गिर कर बचाव करने लगी तो मुझे भी पीटा। मेरा होंठ सूज गया। दस दिन में ठीक हुआ। मेरी मम्मी जी हमें छोड़ कर मेरे मामा जी के घर चली गई। छः महीने में मेरी दादी जी जाकर लाई। तब तक हम अपनी दादी जी के पास रहे। पापा जी ने दवाई भी नहीं दिलाई। सुबह शीघ्र ही उठकर नौकरी

पर चला गया। शाम को शराब पीकर आता। हम तीन बहनें हैं, दो मेरे से छोटी हैं। अब जब पापा जी शाम को आते हैं तो हम तीनों बहनें चारपाई के नीचे छुप जाती हैं।

विचार करो पुण्यात्माओं! जिन बच्चों को पिताजी ने सीने से लगाना चाहिए था तथा बच्चे पिता जी के घर आने की राह देखते हैं कि पापा जी घर आयेंगे, फल लायेंगे। आज इस मानव समाज की दुश्मन शराब ने क्या घर घाल दिए? शराबी व्यक्ति अपनी तो हानि करता है साथ में बहुत व्यक्तियों की आत्मा दुःखाने का भी पाप सिर पर रखता है। जैसे पत्नी के दुःख में उसके माता-पिता, बहन-भाई दुःखी, फिर स्वयं के माता-पिता, भाई-बहन, दादा-दादी आदि परेशान। एक शराबी व्यक्ति आस-पास के भद्र व्यक्तियों की अशान्ति का कारण बनता है क्योंकि घर में झगड़ा करता है। पत्नी व बच्चों की चिल्लाहट सुनकर पड़ौसी बीच-बचाव करें तो शराबी गले पड़ जाऐ, नहीं करें तो नेक व्यक्तियों को नींद नहीं आए। इस दास से उपदेश लेने के उपरान्त प्रतिदिन शराब पीने वाले लगभग एक लाख व्यक्तियों ने सर्व नशीले पदार्थ व मांस भक्षण पूर्ण रूप से त्याग दिया है तथा जिस समय शाम को शराब प्रेतनी का नत्य होता था, अब वे पुण्यात्मायें अपने बच्चों सहित बैठकर संध्या आरती करते हैं। हरियाणा प्रदेश व निकटवर्ती प्रान्तों में लगभग दस हजार गाँवों व शहरों में आज भी प्रत्येक में चार -पाँच चैम्पियन (एक नम्बर के शराबी) उदाहरण हैं जो सर्व विकारों से रहित होकर अपना मानव जीवन सफल कर रहे हैं। कुछ कहते हैं कि हम इतनी नहीं पीते-खाते, बस कभी ले लेते हैं। जहर तो थोड़ा ही बुरा है, जो भक्ति व मुक्ति में बाधक है।

मान लिजिए दो किलो ग्राम घी का हलवा बनाया (सतभक्ति की)। फिर 250 ग्राम बालु रेत(तम्बाखु-मांस-मदिरा सेवन व आन उपासना कर ली) भी डाल दिया। वह तो किया कराया व्यर्थ हुआ। इसलिए पूर्ण परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) की पूजा पूर्ण संत से प्राप्त करके आजीवन मर्यादा में रहकर करते रहने से ही पूर्ण मोक्ष लाभ होता है।

❑ उपरोक्त प्रमाणों को पढ़कर बुद्धिजीवी समाज विचार करे और अंध श्रद्धा भक्ति त्यागकर सत्य श्रद्धा करके जीवन धन्य बनाऐं।

दास (लेखक) के परमार्थी प्रयत्न को आलोचना न समझें। मेरा उद्देश्य आप जी को शास्त्रोक्त भक्ति साधना बताकर आपके ऊपर भविष्य में आने वाले पर्वत जैसे कष्ट (चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीरों में कष्ट उठाने तथा नरक जाने से) से बचाना है। मेरे अनुयाई इस तत्वज्ञान से परिचित हैं। वे भी आप तक मेरे द्वारा लिखी पुस्तक पहुँचाकर आपके भविष्य को सुखी बनाने के उद्देश्य से वितरित करते हैं। परंतु कुछ धर्मोन्ध व्यक्ति अपने स्वार्थवश आप और परमेश्वर के बीच में दीवार बनकर खड़े हैं। मेरे को तथा मेरे अनुयाईयों पर झूठे आरोप लगाकर बदनाम करते हैं। आप जी अपनी आँखों प्रमाण देखो और सत्य की राह पकड़ो। हमारा उद्देश्य है कि हम संसार के लोगों को बुराईयों-कुरीतियों से दूर करके सुखी देखना चाहते हैं। हम अपना प्रयत्न जारी रखेंगे। आप कब समझेंगे? इंतजार करेंगे।

''पीपल, जांडी के वक्षों तथा तुलसी के पौधे की पूजा पर टिप्पणी''

वाणी सँख्या 4 :- पीपल पूजै जाँडी पूजे, सिर तुलसाँ के होइयाँ।
दूध–पूत में खैर राखियो, न्यूं पूजूं सूं तोहियाँ।।4।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने अंध श्रद्धा भक्ति करने वालों की अन्य साधनाओं का वर्णन

किया है कि भोली जनता को ज्ञानहीन आध्यात्मिक गुरूओं ने कितने निम्न स्तर की साधना पर लगाकर उनके जीवन के साथ कितना बड़ा धोखा किया है। अज्ञानी गुरूओं से भ्रमित होकर पीपल व जांडी के वृक्षों तथा तुलसी के पौधे की पूजा करते हैं। प्रार्थना करते हैं कि आप सबकी पूजा इसलिए करते हैं कि मेरे दूध यानि दुधारू पशुओं की तथा पूत यानि मेरे पुत्रों व पोत्रों की खैर रखना (रक्षा करना) यानि पशु पूरा समय दूध दें। मृत्यु न हो तथा पुत्रों, पोत्रों व परपात्रों की मृत्यु ना हो। उनकी आप (पीपल तथा जांडी के पेड़ तथा तुलसी का पौधा) रक्षा करना।

परमेश्वर कबीर जी ने समझाया है कि हे अंधे पुजारियो! कुछ तो अक्ल से काम लो। जिन जड़ (जो चल-फिर नहीं सकते। उनको पशु हानि पहुँचाते हैं। वे अपनी रक्षा नहीं कर पाते। तुलसी को बकरा खा जाता है। वह अपनी रक्षा नहीं कर सकती।) वृक्षों और पौधों की पूजा करके घर-परिवार में आप धन वृद्धि तथा जीवन की रक्षा की आशा करते हो। वे स्वयं विवश हैं। आपकी रक्षा कैसे करेंगे? यह आपकी अंध श्रद्धा है जो आपके अनमोल मानव जीवन के लिए खतरा है यानि आपका मानव जीवन शास्त्र वर्णित साधना त्यागकर शास्त्र विरूद्ध साधना रूपी मनमाना आचरण करने से नष्ट हो जाएगा। वाणी सँख्या 4 में एक वाक्य है कि :- पीपल पूजै, जांडी पूजै, सिर तुलसां के होइयां।

''सिर होना'' का तात्पर्य है कि जो कुछ नहीं कर सकता, अज्ञानता के कारण उसी व्यक्ति से अपने कार्यवश बार-बार निवेदन करना। वह व्यक्ति उस भोले मानव से कहता है कि मेरे सिर क्यों हो रहा है? मैं आपका यह कार्य नहीं कर सकता। परमेश्वर कबीर जी ने समझाया है कि जो आपके कार्य को करने में सक्षम नहीं हैं, जो कार्य परमात्मा के अतिरिक्त कोई नहीं कर सकता और जो स्वयं असहाय हैं, उनसे आप कार्य सिद्धि की आशा करते हैं। यह अज्ञानता है।

वाणी सँख्या 5 :- आपै लीपै आपै पोतै, आपै बनावै अहोइयाँ।
उससे भौंदू पोते माँगै, अकल मूल से खोईयाँ।।5।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने आन-उपासना की एक और अंधश्रद्धा का स्पष्टीकरण किया है। कहा कि एक भोली वृद्धा लोकवेद के अनुसार आन-उपासना करते हुए स्वयं ही अहोई नामक माता (देवी) का चित्र बनाती है। उसके लिए पहले दीवार को गारा तथा गाय के गोबर को मिलाकर लीपती है (पलस्तर करती है) उस पर अहोई देवी का चित्र अंकित करती है। फिर उसकी पूजा करके पुत्रवधु के लिए बेटा माँगती है। परमात्मा कबीर जी ने कहा कि ऐसे अंधश्रद्धा भक्ति करने वालों की अकल (बुद्धि) मूल से यानि जड़ से समाप्त है, वे निपट मूर्ख हैं। मन्नत मानते समय वृद्धा कहती है कि हे अहोई देवी! आप पुत्रवधु को बेटा देना, गाय को बछड़ा देना, (पुराने समय में गाय को बछड़ा होना लाभदायक था क्योंकि बछड़ा बैल बनता था। बैलों से खेती होती थी।) भैंस को चाहे कटिया (कटड़ी) ही दे देना। वृद्धा कितनी चतुर है। उसके कहने का भाव है कि आप देवी को नर यानि बछड़ा तथा बेटा माँगकर परेशान नहीं करना चाहती। भैंस को तो भले ही मादा (कटिया) दे देना। उसे पता है कि कटड़े की अपेक्षा कटिया कितनी लाभदायक है। कटड़ा तो कसाईयों को काटने के लिए बेचते थे, कोई काम नहीं आता था। बुढ़िया देवी के साथ भी कितनी चतुरता कर रही है। अपने देवताओं के साथ भी हेरा-फेरी की बातें करती है। उपरोक्त पूज्य बनावटी देवी तथा पेड़-पौधों से मन्नत माँगते समय दक्षिणा के रूप में सवा रूपया (एक रूपया और चार आने) अपनी चुनरी के पल्ले से बाँधकर कहती है कि यदि मेरी सब मनोकामना पूरी हो गई तो सवा

रूपये का प्रसाद बाँटूगी। यह दक्षिणा भी तब दूँगी, जब सारी मन्नत पूरी हो जाऐंगी। यदि एक भी ना हुई तो कोई दक्षिणा नहीं दी जाएगी।

''परमात्मा के साथ धोखा''

कबीर जी कहते हैं कि :-

अहरण की चोरी करें, करें सूई का दान। स्वर्ग जान की आस में, कह आया नहीं विमान।।

शब्दार्थ :- परमात्मा कबीर जी ने कंजूस व्यक्ति की नीयत बताई है कि दो नंबर का कार्य करके यानि चोरी-रिश्वत लेकर, हेराफेरी करके मिलावट करके धन तो करोड़ों का प्राप्त करता है और दान सवा रूपया करता है। जैसे चोरी तो अहरण जितने लोहे की करता है (अहरण लुहार कारीगरों के पास होता है जिसका कुल लोहा 30-40 किलोग्राम भार का होता है) और दान करता है केवल सूई जितना लोहे की कीमत का। उसी धर्म-कर्म को मूर्ख इतना अधिक मानता है कि परमात्मा मेरे को स्वर्ग में ले जाने के लिए विमान भेजेगा। जब मनोकामना पूर्ण नहीं होती है तो वह कंजूस विचार करता है कि परमात्मा ने विमान भेजने में देरी क्यों कर रखी है?

परमेश्वर कबीर जी ने ऐसे धर्म के कार्यों पर कहा है कि :-

कबीर, जिन हर जैसा सुमरिया, ताको तैसा लाभ।
ओसां प्यास ना भागही, जब तक धसै नहीं आब।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने स्पष्ट किया है कि जो साधक जैसी भक्ति तथा दान-धर्म करता है, उसी के अनुसार लाभ देता है। पूर्ण लाभ के लिए धर्म-कर्म भी पूर्ण करने से पर्याप्त लाभ मिलता है। जैसे घास पर गिरी औस के पानी को चाटने से प्यास नहीं बुझती। प्यास बुझाने के लिए गिलास भरकर पानी पीना पड़ता है। इसी प्रकार परमात्मा से पूर्ण लाभ लेने के लिए दान-धर्म भी पर्याप्त मात्रा में करना चाहिए।

❑ **उदाहरण :- एक कंजूस व्यक्ति की दूध वाली भैंस गुम हो गई। उसे खोजने के लिए पिता-पुत्र चल पड़े। रास्ते में सर्वप्रथम हनुमान जी का मंदिर आया। पिता जी ने मूर्ति के सामने संकल्प किया कि हे बजरंग बली! आपने तो सात समन्दर के पार सीता माता की खोज कर दी थी। आपके लिए हमारी भैंस की खोज करना कौन-सा कठिन कार्य है? यदि मेरी भैंस मिल गई तो अंजना के लाल! एक थन का दूध जब तक भैंस दूध देती रहेगी, आपको चढ़ाया करूंगा। कपा ध्यान देना, शीघ्र करना। यह संकल्प पुत्र भी सुन रहा था।**

❖ **आगे गए तो रास्ते में शिव जी का मंदिर था। वहाँ उसने कहा कि भैंस मिल गई तो एक थन का दूध शिव जी को चढ़ाने का वायदा किया।**

❖ **आगे गए तो रास्ते में श्री कष्ण जी का मंदिर था। एक थन का दूध उसके लिए बोल दिया।**

❖ **आगे गए तो रास्ते में गणेश जी का मंदिर था। एक थन का दूध उसी तरह चढ़ाने का संकल्प करके पिता-पुत्र आगे चले तो पुत्र ने पिता से कहा कि पिता जी! जब तक भैंस दूध देवेगी, तब तक चारों थनों (स्तनों) का दूध यानि भैंस का सारा दूध तो देवता पीऐंगे। फिर हम भैंस की खोज किसके लिए करें? चलो वापिस चलते हैं। हेराफेरी मास्टर कंजूस पिता बोला, बेटा! एक बार भैंस मिलने दे। इन देवताओं का जी जानेगा, जैसा इनको दूध पिलाऊँगा। बेटा बोला, पिता जी! मैं समझा नहीं। पिता बोला कि भैंस मिलने के बाद दो गिलास दूध और उसमें दो गिलास पानी मिलाकर एक दिन**

एक-एक गिलास चारों देवताओं को चढ़ाकर कह दूँगा, देवता जी! आपका धन्यवाद। आपने भैंस मिला दी, परंतु मैं भी बाल-बच्चेदार हूँ। मेरे से आपकी पूजा में इतना ही दूध पुग्या है यानि मेरी वित्तीय स्थिति इतना ही दूध चढ़ाने की है। आगे नहीं चढ़ा पाऊँगा। माफ करना। आप सबको दूध पिलाने वाले हो। आपको दूध की क्या आवश्यकता है? भैंस मिल गई, यही पूजा की गई।

❖ परमेश्वर कबीर जी बताना चाहते हैं कि तत्वज्ञान न होने के कारण भक्त की नीयत साफ नहीं हो सकती। जिस कारण से वह संसारिक क्षेत्र में तो हेराफेरी करता ही है। परमात्मा को भी नहीं छोड़ता। यह अंध भक्ति है जो शास्त्र के विरूद्ध है जिसमें कोई लाभ होने वाला नहीं है। जिससे जीव की मानसिकता का विकास नहीं हो सकता।

''सोलह शुक्रवार के व्रत करना''

वाणी सँख्या 6 :- पति शराबी घर पर नित ही, करत बहुत लड़ईयाँ।
पत्नी षोडष शुक्र व्रत करत है, देहि नित तुड़ईयाँ।।6।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने तत्वज्ञानहीन उपासकों की अंध श्रद्धा भक्ति पर प्रकाश डाला है। कहा है कि बिना विवेक किए जो साधना करते हैं, वह व्यर्थ है।

❑ उदाहरण :- एक लड़की का पति शराब पीता था। अन्य नशा भी करता था। कोई काम-धंधा नहीं करता था। जमीन को वह लड़की ही संभालती थी। शराब पीने से मना करने पर वह शराबी अपनी पत्नी को मारता-पीटता था। घर नरक बना था। उस लड़की के माता-पिता, भाई-भाभी सबने मुझ दास (लेखक) से दीक्षा ले रखी थी। ज्ञान भी ठीक से समझा था। वे अपनी लड़की की दुर्दशा से चिंतित थे। एक दिन वे अपनी लड़की को समझाकर दीक्षा दिलाने आश्रम में मेरे पास लाए। लड़की को बताया गया कि कोई आन-उपासना मूर्ति पूजा, व्रत रखना आदि-आदि नहीं करनी हैं। लड़की ने कहा कि मैंने सोलह शुक्रवार के व्रत करने की प्रतिज्ञा कर रखी है कि घर में शांति हो जाए। अभी तो मैंने आधे ही किए हैं, ये पूरे करके फिर दीक्षा लूँगी।

उस बेटी को अच्छी तरह समझाया, तब उस शास्त्र विरूद्ध साधना को त्यागने को तैयार हुई और दीक्षा लेकर सुखी हुई। पति ने भी शराब त्याग दी। पूरा परिवार दीक्षा लेकर शास्त्रविधि अनुसार साधना कर रहा है।

विचार :- अंध श्रद्धा भक्ति करने वालों को इतना भी विवेक नहीं कि जो साधना कर रहे हो, इससे लाभ है या हानि।

उस बेटी से पूछा कि ''सोलह शुक्रवार के व्रतों से ज्ञानहीन गुरूओं ने क्या लाभ बताया है?'' उस लड़की ने बताया कि एक स्त्री का पति रोजगार के लिए दूर देश में चला गया। वह वर्षों तक नहीं आया। उस स्त्री को चिंता सताने लगी। एक दिन उसको देवी संतोषी माता दिखाई दी और बोली कि मेरे सोलह शुक्रवार के व्रत लगातार कर दे। तेरा पति घर आ जाएगा। ऐसा ही हुआ।

विचार करो बेटी! आपका पति तो तेरे पास ही रहता है। प्रतिदिन लड़ाई करता है। आपकी देही तोड़ता है यानि मार-पीट करता है। आप भी इस व्रत को किसलिए कर रही हो? आपने तो ऐसा व्रता करना चाहिए था कि वह कई दिन घर ना आए और मार ना पड़े। आप तो अपनी आफत लाने का व्रत कर रही थी।

व्रत रखना गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में मना किया है। कहा है कि जो बिल्कुल अन्न नहीं

खाते यानि व्रत करते हैं, उनका योग यानि भक्ति कर्म कभी सफल नहीं होता। उसने बताया कि मेरी सहेली एक गुरू के पास जाती है। उसने मुझे बताया था। मैं भी व्रत करने लगी। मुझे तो आज पता चला कि मैं तो व्यर्थ भक्ति कर रही थी।

सूक्ष्मवेद में कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि :-

गुरूवाँ गाम बिगाड़े संतो, गुरूवाँ गाम बिगाड़े।
ऐसे कर्म जीव कै ला दिए, बहुर झड़ैं नहीं झाड़े।।

शब्दार्थ :- परमेश्वर कबीर जी ने समझाया है कि तत्वज्ञानहीन गुरूओं ने गाँव के गाँव को शास्त्रविरूद्ध साधना पर लगाकर उनका जीवन नाश कर रखा है।

भोली जनता को शास्त्र विरूद्ध साधना पर इतना दृढ़ कर दिया है कि वे शास्त्रों में प्रमाण देखकर भी उस व्यर्थ पूजा को त्यागना नहीं चाहते।

वाणी सँख्या 7 :- तज पाखण्ड सत नाम लौ लावै, सोई भव सागर से तरियाँ।
कह कबीर मिले गुरू पूरा, स्यों परिवार उधरियाँ।।7।।

शब्दार्थ :- परमात्मा कबीर जी ने स्पष्ट किया है कि उपरोक्त तथा अन्य शास्त्रविरूद्ध पाखण्ड पूजा को त्यागकर पूर्ण सतगुरु से सच्चे नाम का जाप प्राप्त करके श्रद्धा से भक्ति करके भक्तजन पार हो जाते हैं। उनके परिवार के सर्व सदस्य भी भक्ति करके कल्याण को प्राप्त हो जाते हैं।

''गीता में व्रत के विषय में''

❖ प्रश्न :- क्या एकादशी, कृष्ण अष्टमी या अन्य व्रत भी शास्त्रों में वर्जित हैं?

उत्तर :- गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में बताया है कि बिल्कुल न खाने वाले यानि व्रत रखने वाले का योग यानि परमात्मा से मिलने का उद्देश्य पूरा नहीं होता।

➢ गीता अध्याय 6 श्लोक 16 :- हे अर्जुन यह योग (यानि परमात्मा प्राप्ति के लिए की गई साधना) न तो बहुत खाने वाले का और न बिल्कुल न खाने वाले का तथा न बहुत शयन करने वाले का और न सदा जागने वाले का ही सिद्ध होता है।

❖ इसलिए व्रत रखना शास्त्रविरूद्ध होने से व्यर्थ सिद्ध हुआ।

''तीर्थ तथा धाम क्या हैं?''

प्रश्न :- तीर्थों, धामों पर श्रद्धा से दर्शनार्थ तथा पूजा करने से हिन्दू गुरुजन बहुत पुण्य बताते हैं। यह साधना लाभदायक है या नहीं? कृप्या शास्त्रों के अनुसार बताऐं।

उत्तर :- तीर्थ या धाम वे पवित्र स्थान हैं जहाँ पर या तो किसी महापुरूष का जन्म हुआ था या निर्वाण (परलोक वास) हुआ था या किसी साधक ने साधना की थी या कोई अन्य ऋषि या देवी-देव की कथा से जुड़ी यादगारें हैं।

विचार करें :- पवित्र तीर्थ तथा पवित्र धाम तो यादगारें हैं कि यहाँ पर ऐसी घटना घटी थी ताकि उनका प्रमाण बना रहे।

उदाहरण :- जैसे अमरनाथ धाम है। उसकी कथा का सर्व हिन्दुओं को ज्ञान है कि उस एकान्त स्थान पर श्री शिव जी ने अपनी पत्नी पार्वती जी को नाम दीक्षा दी थी जिसका देवी जी जाप कर रही हैं। जिस मन्त्र की साधना के प्रभाव से उनको अमरत्व प्राप्त हुआ है।

वर्तमान में वह एक यादगार के अतिरिक्त कुछ नहीं है। वह प्रमाण है कि यहाँ पर वास्तव में देवी जी को श्री शिव भगवान ने अमर होने का मन्त्र दिया था। यदि किसी को विश्वास नहीं हो रहा हो तो वहाँ जाकर देखकर भ्रम मिटा सकता है। परन्तु कोई यह कहे कि उस स्थान के दर्शन करने तथा वहाँ दान-धर्म करने से मुक्ति मिलेगी या भक्ति लाभ होगा, ऐसा कुछ नहीं है। रही बात दान धर्म करने की, आप कहीं पर भी धर्म का कार्य करो, आपको उसका फल मिलेगा क्योंकि वह आपको शुभ कर्मों में परमात्मा उसी समय लिख देता है। जैसे कोई व्यक्ति एकान्त स्थान पर कोई हत्या या अन्य अपराध करता है तो उसके अशुभ कर्मों में लिखा जाता है, उसका फल अवश्य मिलता है।

इसलिए पुण्य का कार्य कहीं पर करो। उसका फल तो मिलेगा। पुण्य करने के लिए दूर स्थान तीर्थ पर जाना बुद्धिमता नहीं। यही प्रश्न एक समय जिंदा साधु के रूप में मथुरा में प्रकट परमेश्वर कबीर जी से एक तीर्थ यात्री श्री धर्मदास सेठ द्वारा किया गया था जो मथुरा तीर्थ पर स्नानार्थ तथा दान-धर्म करने के लिए अपने गुरू रूपदास वैष्णव के बताए भक्ति कर्म को करने 'बांधवगढ़' नामक नगर (मध्य प्रदेश) से आया था। परमात्मा ने उसे समझाया था कि यहाँ मथुरा-वन्दावन में वर्तमान में श्री कष्ण जी नहीं हैं और विचार कर कि जब श्री कष्ण जी ही इस स्थान को त्यागकर हजारों कि.मी. दूर द्वारिका में सपरिवार तथा सर्व यादवों को लेकर चले गए थे तो इस स्थान का महत्व ही क्या रह गया? यह तो एक यादगार है कि कभी श्री कष्ण जी ने कुछ समय यहाँ बिताया था। कंस, केशी तथा चाणूर अन्यायियों को मारा था। परमात्मा ने कहा कि हे धर्मदास! आप गीता शास्त्र को साथ लिए हो, इसका नित्य पाठ भी करते हो। इसमें कहीं वर्णन है कि तीर्थ जाया कर अर्जुन, बेड़ा पार हो जाएगा। धर्मदास जी ने कहा, नहीं प्रभु! गीता में कहीं पर भी प्रभु का आदेश ऐसा नहीं लिखा है। परमेश्वर जी ने कहा कि गीता अध्याय 16 श्लोक 23 को पढ़। उसके अनुसार तो यह तीर्थ यात्रा शास्त्र में वर्णित न होने से व्यर्थ साधना है।

❑ यदि आपके तत्वज्ञानहीन गुरूओं की मानें कि तीर्थ पर जाने से पुण्य लगता है। फिर पुण्य तो एक लगा और पाप लगे करोड़ों-अरबों-खरबों। यह सुनकर सेठ धर्मदास अंध श्रद्धा भक्ति करने वाला काँप गया और उसका गला सूख गया। बोला कि हे जिंदा! इतने पाप कैसे लगे? कपा समझाईये।

❖ परमेश्वर कबीर जी (जिंदा वेशधारी प्रभु) ने समाधान इस प्रकार किया :-

➢ कहा कि हे धर्मदास! आप बांधवगढ़ से मथुरा नगरी में वंदावन में आए हो। बांधवगढ़ यहाँ से लगभग दो सौ पचास कोस (लगभग सात सौ पचास कि.मी.) है। वहाँ से यहाँ तक पैरों चलकर आने से आपके द्वारा अनेकों जीव हिंसा हो गई है। आपने इस मथुरा तीर्थ के जल में स्नान किया। करोड़ों सूक्ष्म जीव भी तीर्थ के जल में थे जो आपके स्नान करने से रगड़ लगने से मारे गए तथा आप जी ने भोजन बनाने से पहले जो चौंका गॉरा तथा गाय के गोबर से लीपा, उसमें उसी जल का प्रयोग किया तथा पथ्वी पर उपस्थित जीव चौंका लीपते समय करोड़ों जीव मारे गए। यह सब पाप आपको लगे। आप बताओ कि आप लाभ का सौदा कर रहे हो या घाटे का? धर्मदास जी के मुख से कोई बात नहीं निकली, उत्तर नहीं आया क्योंकि वह भय के कारण स्तब्ध हो गया था। कुछ क्षण के पश्चात् परमात्मा जिंदा वेशधारी के चरणों में गिर गया तथा यथार्थ शास्त्रोक्त भक्ति बताने की याचना की। परमात्मा कबीर जी ने शास्त्रों में वर्णित साधना करने को बताई तथा अन्य सब आन-उपासना यानि पाखण्ड पूजा त्यागने को कहा। धर्मदास जी विवेकी थे। ढ़ेर सारे प्रश्न-उत्तर

करके समझ गए। अपने कल्याण का मार्ग जान लिया ओर अपनी पत्नी को समझाकर सतगुरू कबीर जी से दीक्षा दिलाकर अपना तथा अपने परिवार को शास्त्रोक्त साधना पर लगाया। भक्ति का पूर्ण लाभ प्राप्त किया।

❖ धर्मदास जी को कबीर परमेश्वर जी एक साधु (जिंदा बाबा) के वेश में मिले थे। जो तीर्थों पर भ्रमण कर रहा था तथा सब देवी-देवताओं की पूजा किया करता था। उसे परमेश्वर जी ने समझाया कि हे धर्मदास! तेरी साधना गलत है। धर्मदास जी ने अनेकों शंकाओं का समाधान जाना। उनमें से एक यह भी थी कि :-

''वैष्णव देवी, नैना देवी, ज्वाला देवी तथा अन्नपूर्णा देवी के मंदिरों की स्थापना''

प्रश्न :- वैष्णो देवी, नैना देवी, ज्वाला देवी तथा अन्नपूर्णा देवी आदि पवित्र स्थानों पर अनेकों हिन्दू जाते हैं। क्या वहाँ जाने से भी भक्ति लाभ नहीं है?

उत्तर (कबीर जी जिंदा महात्मा का) :- हे धर्मदास! अभी बताया था कि तीर्थों-धामों पर जाने से क्या लाभ-हानि होती है। फिर भी सुन।

पूरा हिन्दू समाज जानता है कि ये पवित्र धर्म स्थान कैसे बने। आप अनजान मत बनो। जिस समय दक्ष पुत्री सती जी अपने पति श्री शिव जी से रूठकर पिता दक्ष जी के पास अपने घर आई। राजा दक्ष ने सती जी का अनादर किया। राजा दक्ष उस समय यज्ञ कर रहे थे। बहुत बड़े हवन कुण्ड में हवन चल रहा था। सती जी अपने पिता की बातों का दुःख मानकर हवन कुण्ड की अग्नि में गिरकर जल मरी। भगवान शिव को पता चला तो उन्होंने उसके बचे हुए नर कंकाल को उठाया तथा पत्नी के वियोग में उसे उठाए फिरते रहे। पत्नी के मोहवश महादुःखी थे। आपके पुराण में लिखा है कि दस हजार वर्षों तक सती पार्वती जी के कंकाल को लिए घूमते रहे। फिर श्री विष्णु जी ने सुदर्शन चक्र से उस कंकाल (अस्थि पिंजर) के टुकड़े-टुकड़े कर दिए। उस समय श्री शिव जी का मोह भंग हुआ। सती जी के शरीर के भाग कहीं-कहीं गिरे।

➢ वैष्णों देवी मंदिर की स्थापना :-

जहाँ पर देवी जी का धड़ वाला भाग गिरा। वहाँ पर यादगार बनाए रखने के लिए श्रद्धालुओं ने धड़ को श्रद्धा के साथ पथ्वी में दफनाकर उसके ऊपर एक छोटी-सी मंदिरनुमा यादगार बना दी। बाद में समय अनुसार इसका विस्तार होता रहा।

इस यादगार को देखने और वहाँ पर पूजा करने जाने से कोई पुण्य नहीं, अपितु पाप लगता है जो आने-जाने में जीव हिंसा होती है।

➢ नैना देवी के मंदिर की स्थापना :-

जिस स्थान पर सती पार्वती जी की आँखों वाला शरीर का भाग गिरा, वहाँ पर भी उसी प्रकार जमीन मे दफनाकर मंदिर बना दिया ताकि घटना का प्रमाण रहे। कोई पुराण कथा को गलत न बताए।

➢ ज्वाला जी की स्थापना :-

जिस स्थान पर कांगड़ा जिले (हिमाचल प्रदेश) में देवी जी की अधजली जीभ वाला भाग गिरा, उसको श्रद्धा से उस स्थान पर पथ्वी में उस जीभ को श्रद्धा से दबाकर यादगार रूप में छोटा

मंदिर बना दिया। बाद में बहुत बड़ा मंदिर बनाया गया। वह ज्वाला देवी जी का मंदिर है।

➢ अन्नपूर्णा देवी मंदिर की स्थापना :-

जिस स्थान पर सती पार्वती जी के शरीर का नाभि वाला भाग गिरा। उसको श्रद्धा से पृथ्वी में दबाकर उसके ऊपर यादगार रूप में छोटा-सा मंदिर बना दिया था। बाद में उसका बहुत विस्तार किया गया और शास्त्र विरूद्ध साधना शुरू कर दी गई है।

यह सब प्रमाण रूप हैं।

❖ विचार करो :- ऐसे स्थानों पर भक्ति व पूजा तथा पुण्य प्राप्त करने के लिए जाना शास्त्रविरूद्ध होने से हानिकारक है। इसलिए यह व्यर्थ है।

यदि किसी को पुराणों में लिखी घटना पर विश्वास न हो तो देखने जाओ तो जाओ, लेकिन पुण्य के स्थान पर जीव हिंसा का पाप ही प्राप्त होगा। जो आने-जाने के दौरान पैरों या गाड़ी-घोड़े के नीचे दबकर मरेंगे। इसी प्रकार अन्य दर्शनीय स्थलों (आदि बद्रीनाथ, केदारनाथ, जगन्नाथपुरी, द्वारकापुरी आदि-आदि) पर किसी आध्यात्मिक लाभ के लिए जाना अंध श्रद्धा भक्ति के अतिरिक्त कुछ भी नहीं है।

''केदारनाथ मंदिर भारत में तथा पशुपति मंदिर नेपाल में कैसे बना?''

(केदार का अर्थ दलदल है)

महाभारत में कथा है कि पाँचों पाण्डव (युद्धिष्ठर, अर्जुन, भीम, नकुल व सहदेव) जीवन के अंतिम समय में हिमालय पर्वत पर तप कर रहे थे। एक दिन सदाशिव यानि काल ब्रह्म ने दुधारू भैंस का रूप बनाया और उस क्षेत्र में घूमने लगा। भीम दूध प्राप्ति के उद्देश्य से उसे पकड़ने के लिए दौड़ा तो भैंस पृथ्वी में समाने लगी। भीम ने भैंस का पिछला भाग दृढ़ता से पकड़ लिया जो पृथ्वी से बाहर शेष था। वह पत्थर का हो गया और बाहर ही रह गया, वह केदारनाथ बना। भैंस के शरीर के अन्य भाग जैसे अगले पैर, पिछले पैर आदि-आदि जहाँ-जहाँ निकले, वहाँ-वहाँ पर अन्य केदार बने। ऐसे-ऐसे सात केदार हिमालय में बने हैं। उस भैंस का सिर वाला भाग काठमाण्डू में निकला जिसको पशुपति कहा गया। उसके ऊपर मंदिर बना दिया गया। उस भैंस के पिछले भाग पर तथा अन्य अंग जहाँ-जहाँ निकले, उनको केदार नाम देकर यादगार बनाई गई थी कि यह पौराणिक घटना सत्य है। ये साक्षी हैं। सब मंदिर किसी न किसी कथा के साक्षी हैं। परंतु पूजा करना गलत है, व्यर्थ है।

लगभग सौ वर्ष पूर्व केदारनाथ पर अधिक वर्षा के कारण दलदल अधिक हो गई थी। लगभग साठ (60) वर्ष तक वहाँ कोई पूजा-आरती नहीं की गई। न कोई दर्शन करने गया था। बाद में तीस-चालीस वर्ष से पुनः दर्शनार्थी जाने लगे हैं।

❑ सन् 2012 में केदारनाथ धाम के दर्शनार्थ व पूजार्थ गए लाखों व्यक्ति बाढ़ में बह गए। परिवार के परिवार अंध श्रद्धा भक्ति करने वाले मारे गए। यदि यह साधना पवित्र गीता में वर्णित होती तो वहाँ जाने वाले श्रद्धालु मर भी जाते तो भी पुण्यों के साथ परमात्मा के दरबार जाते। परंतु शास्त्रविरूद्ध भक्ति करते हुए ऐसे मरते हैं तो व्यर्थ जीवन गया।

"तीर्थ तथा धाम की अन्य जानकारी"

किसी साधक ऋषि जी ने किसी स्थान या जलाशय पर बैठ कर साधना की या अपनी आध्यात्मिक शक्ति का प्रदर्शन किया। वह अपनी भक्ति कमाई करके साथ ले गया तथा अपने ईष्ट लोक को प्राप्त हुआ। उस साधना स्थल का बाद में तीर्थ या धाम नाम पड़ा। अब कोई उस स्थान को देखने जाए कि यहां कोई साधक रहा करता था। उसने बहुतों का कल्याण किया। अब न तो वहाँ संत जी है, जो उपदेश दे। वह तो अपनी कमाई करके चला गया।

❖ विचार करें :- कप्या तीर्थ व धाम को हमोमदस्ता (हमामदस्ता) जानें। (एक डेढ़ फुट का लोहे का गोल पात्र लगभग नौ इंच परिधि का उखल जैसा होता है तथा डेढ़ फुट लम्बा तथा दो इन्च परिधि का गोल लोहे का डंडा-सा मूसल जैसा होता है जो सामग्री व दवाईयाँ आदि कूटने के काम आता है, उसे हमोमदस्ता (हमामदस्ता) कहते हैं।) एक व्यक्ति अपने पड़ौसी का हमोम दस्ता मांग कर लाया। उसने हवन की सामग्री कूटी तथा मांज-धोयकर लौटा दिया। जिस कमरे में हमोम दस्ता रखा था उस कमरे में सुगंध आने लगी। घर के सदस्यों ने देखा कि यह सुगन्ध कहां से आ रही है तो पता चला कि हमोम दस्ते से आ रही है। वे समझ गए कि पड़ौसी ले गया था, उसने कोई सुगंध युक्त वस्तु कूटी है। कुछ दिन बाद वह सुगंध भी आनी बंद हो गई।

इसी प्रकार तीर्थ व धाम को एक हमोमदस्ता (हमामदस्ता) जानों। जैसे सामग्री कूटने वाले ने अपनी सर्व वस्तु पोंछ कर रख ली। खाली हमोम दस्ता लौटा दिया। अब कोई उस हमोम दस्ते को सूंघकर ही कत्यार्थ माने तो नादानी है। उसको भी सामग्री लानी पड़ेगी, तब पूर्ण लाभ होगा।

ठीक इसी प्रकार किसी धाम व तीर्थ पर रहने वाला पवित्र आत्मा तो राम नाम की सामग्री कूट कर झाड़-पौंछ कर अपनी सर्व भक्ति साधना की कमाई को साथ ले गया। बाद में अनजान श्रद्धालु, उस स्थान पर जाने मात्र से कल्याण समझें तो उनके मार्ग दर्शकों (गुरुओं) की शास्त्र विधि रहित बताई साधना का ही परिणाम है। उस महान आत्मा सन्त की तरह प्रभु साधना करने से ही कल्याण सम्भव है। उसके लिए तत्वदर्शी संत की खोज करके उससे उपदेश लेकर आजीवन भक्ति करके मोक्ष प्राप्त करना चाहिए। शास्त्र विधि अनुकूल सत साधना मुझ दास (रामपाल दास) के पास उपलब्ध है कप्या निःशुल्क प्राप्त करें।

''तीर्थ स्थापना के प्रमाण''

1. शुक्र तीर्थ कैसे बना? :- श्री ब्रह्मा पुराण लेखक कृष्णद्वेपायन अर्थात व्यास जी प्रकाशक गीता प्रेस गोरखपुर पृष्ठ 167-168 पर भृगु ऋषि का पुत्र कवि अर्थात शुक्र ने गौतमी नदी के उत्तर तट पर जहाँ भगवान महेश्वर की आराधना करके विद्या पायी थी, वह स्थान शुक्र तीर्थ कहलाता है।

2. ➽ सरस्वती संगम तीर्थ तथा पुरूरव तीर्थ :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 172-173 पर एक दिन राजा पुरूरवा, ब्रह्मा जी की सभा में गये, वहाँ ब्रह्मा जी की पुत्री सरस्वती को देखकर उससे मिलने की इच्छा प्रकट की। सरस्वती ने हाँ कर दी। सरस्वती नदी के तट पर सरस्वती तथा पुरूरवा ने अनेक वर्षों तक संभोग (सैक्स) किया। एक दिन ब्रह्मा ने उनको विलास करते देख लिया। अपनी बेटी को शाप दे दिया। वह नदी रूप में समा गई। जहाँ पर पुरूरवा तथा सरस्वती ने संभोग किया था। वह पवित्र तीर्थ सरस्वती संगम नाम से विख्यात हुआ। जहाँ पर पुरूरवा ने महादेव की भक्ति की वह

स्थान पुरूरवा तीर्थ नाम से विख्यात हुआ।

3. वृद्धा संगम तीर्थ :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 173 से 175 एक गौतम ऋषि थे। उनका एक हजार वर्ष की आयु तक विवाह नहीं हुआ। वह वेद ज्ञान भी नहीं पढ़ा था केवल गायत्री मंत्र याद था। उसी का जाप करता था। एक दिन वह एक पर्वत पर एक गुफा में गया। वहाँ पर नब्बे हजार वर्ष की आयु की एक वृद्धा स्त्री मिली। दोनों ने विवाह किया। एक दिन वशिष्ठ ऋषि तथा वाम देव ऋषि वहाँ गुफा में अन्य ऋषियों के साथ आए। उन्होंने गौतम ऋषि का उपहास किया कहा हे गौतम जी! यह वृद्धा आप की माँ है या दादी माँ? उनके जाने के पश्चात् दोनों बहुत दुःखी हुए। अगस्त ऋषि की राय से गोदावरी नदी के गौतमी तट पर गये और कठोर तपस्या करने लगे। उन्होंने भगवान शंकर और विष्णु का स्तवन किया तथा पत्नी के लिए गंगा जी को भी खुश किया। गंगा ने उनके तप से प्रशन्न होकर कहा :– ब्राह्मण आप मन्त्र पढ़ते हुए मेरे जल से अपनी पत्नी का अभिषेक करो। इससे वह रूपवती हो जाएगी। गंगा जी के आदेश से दोनों ने एक दुसरे के लिए ऐसा ही किया। दोनों पति–पत्नी सुन्दर रूप वाले हो गये। वह जल जो मन्त्रों का था। उससे वृद्धा नाम नदी बह चली। उसी स्थान पर गौतम ऋषि ने उस वृद्धा के साथ जो युवती हो गई थी। मन भरकर संभोग किया। तब से उस स्थान का नाम ''वृद्धा संगम'' तीर्थ हो गया। वहीं पर गौतम ऋषि ने साधनार्थ एक शिवलिंग स्थापित किया था। वह भी वृद्धा के नाम पर वृद्धेश्वर कहलाया। इस वृद्धा संगम तीर्थ की कथा सब पापों का नाश करने वाली है। वहाँ किया हुआ स्नान–दान सब मनोरथों को सिद्ध करने वाला है।

4. अश्वतीर्थ अर्थात् भानु तीर्थ तथा पंचवटी आश्रम की स्थापना :- श्री ब्रह्मा पुराण पृष्ठ 162-163 तथा श्री मार्कण्डेय पुराण पृष्ठ 173 से 175 पर लिखा है ''महर्षि कश्यप के ज्येष्ठ पुत्र आदित्य (सूर्य) है, उनकी पत्नी का नाम उषा है (मार्कण्डेय पुराण में सूर्य की पत्नी का नाम संज्ञा लिखा है जो महर्षि विश्वकर्मा की बेटी है) सूर्य पत्नी अपने पति सूर्य के तेज को सहन न कर सकने के कारण दुःखी रहती थी। एक दिन अपनी सिद्धि शक्ति से अन्य स्त्री अपनी ही स्वरूप की उत्पन्न की उसे कहा आप मेरे पति की पत्नी बन कर रहो तेरी तथा मेरी शक्ल समान है। आप यह भेद मेरी सन्तान तथा पति को भी नहीं बताना यह कह कर संज्ञा (उषा) तप करने के उद्देश्य से उत्तर कुरूक्षेत्र में चली गई वहाँ घोड़ी का रूप धारण करके तपस्या करने लगी। भेद खुलने पर सूर्य भी घोड़े का रूप धारण करके वहाँ गया जहाँ संज्ञा (उषा) घोड़ी रूप में तपस्या कर रही थी। घोड़े रूप में सूर्य ने घोड़ी रूप धारी संज्ञा से संभोग करना चाहा। उषा (संज्ञा) घोड़ी रूप में वहाँ से भाग कर गौतमी नदी के तट पर आई घोड़ा रूप धारी सूर्य ने भी पीछा किया। वहाँ आकर घोड़ी रूप में अपने पतिव्रत धर्म की रक्षा के लिए घोड़ा रूप धारी पति को न पहचान कर उस की ओर अपना पृष्ठ भाग न करके मुख की ओर से ही सामना किया। दोनों की नासिका मिली। सूर्य वासना के वेग को रोक नहीं सके तथा घोड़ी रूप धारी उषा (संज्ञा) के मुख ओर ही संभोग करने के उद्देश्य से प्रयत्न किया। नासिका द्वारा वीर्य प्रवेश से घोड़ी रूप धारी उषा के मुख से दो पुत्र अश्वनी कुमार (नासत्य तथा दस्र) उत्पन्न हुए तथा शेष वीर्य जमीन पर गिरने से रेवन्त नामक पुत्र उत्पन्न हुआ। वह स्थान अश्व तीर्थ भानु तीर्थ तथा पंचवटी आश्रम नाम से विख्यात हुआ। उसी स्थान पर सूर्य की बेटियों का अरूणा तथा वरूणा नामक नदियों के रूप में समागम हुआ। उसमें भिन्न–2 देवताओं और तीर्थों का पृथक–पृथक समागम हुआ है। उक्त संगम में सताईस हजार तीर्थों का समुदाय है। वहाँ किया हुआ स्नान व दान अक्षय पुण्य

देने वाला है। नारद! उस तीर्थ के स्मरण से कीर्तन और श्रवण से भी मनुष्य सब पापों से मुक्त हो धर्मवान् और सुखी होता है।

5. जन स्थान तीर्थ की स्थापना :- श्री ब्रह्म पुराण (गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित) पृष्ठ 161-162 पर ऋषि याज्ञवल्क्य से राजा जनक ने पूछा कि हे द्विजश्रेष्ठ! बड़े–2 मुनियों ने निर्णय किया है कि भोग और मोक्ष दोनों श्रेष्ठ हैं। आप बताऐं! भोग से भी मुक्ति प्राप्त कैसे होती है? ऋषि याज्ञवल्क्य जी ने कहा इस प्रश्न का उत्तर आप श्वशुर वरूण जी ठीक–2 बता सकते हैं। चलो उनसे पूछते हैं। दोनों भगवान वरूण के पास गए तथा वरूण ने बताया कि ''वेद में यह मार्ग निश्चित किया है कि कर्म न करने की उपेक्षा कर्म करना श्रेष्ठ है। धर्म, अर्थ, काम तथा मोक्ष ये चारों पुरूषार्थ कर्म से बंधे हुए हैं। नृप श्रेष्ठ! कर्म द्वारा सब प्रकार से साध्यों की सिद्धी होती है, इसलिए मनुष्यों को सब तरह से वैदिक कर्म का अनुष्ठान करना चाहिए। इससे वे इस लोक में भोग तथा मोक्ष दोनों प्राप्त करते हैं। अकर्म से कर्म पवित्र इसके पश्चात् राजा जनक ने ऋषि याज्ञवल्क्य को पुरोहित बनाकर गंगा के तट पर अनेकों यज्ञ किए। इसलिए उस स्थान का नाम ''जन स्थान'' तीर्थ के नाम से विख्यात हुआ। उस तीर्थ का चिन्तन करने, वहाँ जाने और भक्ति पूर्वक उसका सेवन (पूजन) करने से मनुष्य सब अभिलाषित वस्तुओं को पाता है और मोक्ष का भोगी होता है।

उपरोक्त पुराणों के लेखों का निष्कर्ष :- प्रमाण संख्या 1 में कहा है कि भगु ऋषि के पुत्र शुक्र ने गौतमी नदी के उत्तर तट पर साधना की थी जिस कारण से वह स्थान शुक्र तीर्थ नाम से विख्यात हुआ। यदि कोई उस शुक्र तीर्थ में केवल स्नान व वहाँ पर बैठे कामचोर व्यक्तियों को दान करने से ही मोक्ष मानता है वह ज्ञानहीन व्यक्ति है। परमात्मा की साधना जैसे शुक्राचार्य ने की थी। वैसी ही साधना किसी भी स्थान पर कोई साधक करेगा तो शुक्राचार्य को जो लाभ हुआ था वह प्राप्त होगा। यही स्थिति प्रमाण संख्या 5 की समझें की गंगा के तट पर जिस स्थान पर राजा जनक ने अनेकों अश्वमेघ यज्ञ किए। एक अश्वमेघ यज्ञ में करोंड़ों रूपये (वर्तमान में अरबों रूपये) खर्च हुए थे। तब राजा जनक को स्वर्ग प्राप्ति हुई थी। यदि कोई अज्ञानी कहे कि उस जन स्थान तीर्थ पर जाने व स्नान करने तथा वहाँ उपस्थित ऐबी (शराब,तम्बाकू व मांस सेवन करने वाले) व्यक्तियों कों दान करने से राजा जनक वाला लाभ मिलेगा। क्या यह बात न्याय संगत है? इतना कुछ करने के पश्चात् भी राजा जनक मुक्त नहीं हो सका। वही आत्मा कलयुग में सन्त नानक जी के रूप में श्री कालु राम महता के घर जन्मा। फिर पूर्ण परमात्मा की भक्ति पूर्ण गुरु कबीर परमेश्वर से नाम प्राप्त करके की तब मोक्ष प्राप्त हुआ। प्रमाण संख्या 2 में ब्रह्मा की बेटी सरस्वती ने पूरूरवा नामक राजा के साथ अपने पिता से छुपकर सैक्स (संभोग) किया। जब पिता जी ने उन्हें ऐसा करते देखा तो श्राप दे दिया। वह स्थान जहाँ पर सरस्वती ने तथा राजा पुरूरवा ने दुराचार किया उस स्थान का नाम सरस्वती संगत तीर्थ विख्यात हुआ।

❖ विचार करें :- क्या ऐसे स्थान पर जाने व स्नान करने से कोई लाभ हो सकता है? प्रमाण संख्या 3 में कहा है कि एक गौतम नामक ऋषि ने एक हजार वर्ष की आयु में नब्बे हजार वर्ष की आयु की वद्धा से विवाह किया। अपने को युवा बनाने के उद्देश्य से दोनों ने गोदावरी नदी के गौतमी तट पर कठोर तप किया। पश्चात् मन्त्रों से जल मन्त्रित करके एक-दूसरे पर डाला। दोनों युवा हो गये। तत्पश्चात् उस स्थान पर दोनों ने मन भर कर संभोग अर्थात् विलास (सैक्स) किया। वह स्थान वद्धा संगम तीर्थ कहलाया।

विचार करने योग्य बात है कि ऐसे स्थानों पर जाने से आत्मकल्याण के स्थान पर पतन ही होगा। आत्म उद्वार नहीं। प्रमाण संख्या 4 में कहा है कि सूर्य की पत्नी घोड़ी का रूप धारण करके तपस्या कर रही थी। सूर्य काम वासना (सैक्स प्रैसर) के वश होकर घोड़ा रूप धारण करके घोड़ी रूप धारी अपनी पत्नी के पास गया। घोड़ी ने उसे अपने पष्ठ भाग (पीछे) की ओर नहीं जाने दिया। सूर्य इतना सैक्स प्रैसर (काम वासना के दबाव) में था कि उसने घोड़ी के मुख की ओर ही संभोग क्रिया प्रारम्भ की जिस कारण से उन्हें तीन पुत्र प्राप्त हुए। वह स्थान अश्व तीर्थ नाम से विख्यात हुआ। वहीं पर सूर्य की दो बेटियाँ जाकर नदी बन कर बहने लगी। जिस कारण से वही स्थान पंचवटी आश्रम नाम से भी प्रसिद्ध हुआ। उसी स्थान को भानू तीर्थ भी कहा जाता है। इस तीर्थ का लाभ लिखा है कि इसके स्मरण से तथा कीर्तन करने से तथा इसकी कथा श्रवण करने से सब पापों से मुक्त होकर धर्मवान और सुखी होता है विचार करो पुण्यात्माओं क्या ऐसी कथाओं को सुनने तथा ऐसे स्थान पर जाने से आत्म कल्याण सम्भव है। इसलिए शास्त्रों (पाचों वेदों, गीता जी) के अनुसार भक्ति करने से सर्व पापों से मुक्त होकर पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

''जगन्नाथ पुरी धाम की स्थापना''

श्री कष्ण को एक बालिया नामक शिकारी ने विषाक्त तीर मारा था। श्री कष्ण जी मत्यु के निकट थे। उसी समय उनके रिश्तेदार तथा भक्त पाँचों पांडव पहुँच गए। तब श्री कष्ण जी ने उनसे कहा था कि तुम मेरा अंतिम संस्कार करके उस शेष बची अस्थियुक्त भस्म को एक लकड़ी का छोटा संदूक (Box) में बंद करके समुद्र में छोड़ देना। संदूक में जल प्रवेश न हो सके, ऐसा (Waterproof) बनवाना। पांडवों ने वैसा ही किया। वह संदूक (डिब्बा) लहरों द्वारा गति पाकर बहता-बहता उड़ीसा प्रांत में समुद्र के उस किनारे के निकट आ गया जिस स्थान पर वर्तमान में श्री जगन्नाथ जी का मंदिर बना है।

एक समय उड़ीसा प्रांत में इन्द्रदमन नाम का राजा था। वह भगवान श्री कष्ण जी का अनन्य भक्त था। एक रात्रि को श्री कष्ण जी ने राजा को स्वपन में दर्शन देकर कहा कि जगन्नाथ नाम से मेरा एक मन्दिर बनवा दे। स्वपन में वह संदूक समुद्र में दिखाया और कहा कि मेरी अस्थियों व राख को नीचे दबाकर इस स्थान पर मंदिर बनवाना। श्री कष्ण जी ने यह भी कहा था कि इस मन्दिर में मूर्ति पूजा नहीं करनी है। केवल एक संत छोड़ना है जो दर्शकों को पवित्र गीता अनुसार ज्ञान प्रचार करे। समुद्र तट पर वह स्थान भी दिखाया जहाँ मन्दिर बनाना था। सुबह उठकर राजा इन्द्रदमन ने अपनी पत्नी को बताया कि आज रात्री को भगवान श्री कष्ण जी दिखाई दिए। मन्दिर बनवाने के लिए कहा है। रानी ने कहा शुभ कार्य में देरी क्या? सर्व सम्पत्ति उन्हीं की दी हुई है। उन्हीं को समर्पित करने में क्या सोचना है? राजा ने उस स्थान पर मन्दिर बनवा दिया जो श्री कष्ण जी ने स्वपन में समुद्र के किनारे पर दिखाया था। मन्दिर बनने के बाद समुद्री तुफान उठा, मन्दिर को तोड़ दिया। निशान भी नहीं बचा कि यहाँ मन्दिर था। ऐसे राजा ने पाँच बार मन्दिर बनवाया। पाँचों बार समुद्र ने तोड़ दिया।

राजा ने निराश होकर मन्दिर न बनवाने का निर्णय ले लिया। यह सोचा कि न जाने समुद्र मेरे से कौन-से जन्म का प्रतिशोध ले रहा है। कोष रिक्त हो गया, मन्दिर बना नहीं। कुछ समय उपरान्त पूर्ण परमेश्वर (कविर्देव) ज्योति निरंजन (काल) को दिए वचन अनुसार राजा इन्द्रदमन के

पास आए तथा राजा से कहा आप मन्दिर बनवाओ। अब के समुद्र मन्दिर (महल) नहीं तोड़ेगा। राजा ने कहा संत जी मुझे विश्वास नहीं है। मैं भगवान श्री कृष्ण (विष्णु) जी के आदेश से मन्दिर बनवा रहा हूँ। श्री कृष्ण जी समुद्र को नहीं रोक पा रहे हैं। पाँच बार मन्दिर बनवा चुका हूँ, यह सोच कर कि कहीं भगवान मेरी परीक्षा ले रहे हों। परन्तु अब तो परीक्षा देने योग्य भी नहीं रहा हूँ क्योंकि कोष भी रिक्त हो गया है। अब मन्दिर बनवाना मेरे वश की बात नहीं। परमेश्वर ने कहा इन्द्रदमन जिस परमेश्वर ने सर्व ब्रह्मण्डों की रचना की है, वही सर्व कार्य करने में सक्षम है, अन्य प्रभु नहीं। मैं उस परमेश्वर की वचन शक्ति प्राप्त हूँ। मैं समुद्र को रोक सकता हूँ (अपने आप को छुपाते हुए सत कह रहे थे)। राजा ने कहा कि संत जी मैं नहीं मान सकता कि श्री कृष्ण जी से भी कोई प्रबल शक्ति युक्त प्रभु है। जब वे ही समुद्र को नहीं रोक सके तो आप कौन से खेत की मूली हो। मुझे विश्वास नही होता तथा न ही मेरी वित्तीय स्थिति मन्दिर (महल) बनवाने की है। संत रूप में आए कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने कहा राजन् यदि मन्दिर बनवाने का मन बने तो मेरे पास आ जाना मैं अमूक स्थान पर रहता हूँ। अब के समुद्र मन्दिर को नहीं तोड़ेगा। यह कह कर प्रभु चले आए। उसी रात्रि में प्रभु श्री कृष्ण जी ने फिर राजा इन्द्रदमन को दर्शन दिए तथा कहा इन्द्रदमन एक बार फिर महल बनवा दे। जो तेरे पास संत आया था उससे सम्पर्क करके सहायता की याचना कर ले। वह ऐसा वैसा संत नहीं है। उसकी भक्ति शक्ति का कोई वार-पार नहीं है।

राजा इन्द्रदमन नींद से जागा, स्वपन का पूरा वृतान्त अपनी रानी को बताया। रानी ने कहा प्रभु कह रहे हैं तो आप मत चुको। प्रभु का महल फिर बनवा दो। रानी की सद्भावना युक्त वाणी सुन कर राजा ने कहा अब तो कोष भी खाली हो चुका है। यदि मन्दिर नहीं बनवाऊंगा तो प्रभु अप्रसन्न हो जायेंगे। मैं तो धर्म संकट में फंस गया हूँ। रानी ने कहा मेरे पास गहने रखे हैं। उनसे आसानी से मन्दिर बन जायेगा। आप यह गहने लो तथा प्रभु के आदेश का पालन करो, यह कहते हुए रानी ने सर्व गहने जो घर रखे थे तथा जो पहन रखे थे निकाल कर प्रभु के निमित अपने पति के चरणों में समर्पित कर दिये। राजा इन्द्रदमन उस स्थान पर गया जो परमेश्वर ने संत रूप में आकर बताया था। कबीर प्रभु अर्थात् अपरिचित संत को खोज कर समुद्र को रोकने की प्रार्थना की। प्रभु कबीर जी (कविर्देव) ने कहा कि जिस तरफ से समुद्र उठ कर आता है, वहाँ समुद्र के किनारे एक चौरा (चबूतरा) बनवा दे। जिस पर बैठ कर मैं प्रभु की भक्ति करूंगा तथा समुद्र को रोकूंगा। राजा ने एक बड़े पत्थर को कारीगरों से चबूतरा जैसा बनवाया, परमेश्वर कबीर जी उस पर बैठ गए।

(जगन्नाथ मंदिर को बचाने के लिए समुद्र को रोकना)

छठी बार मन्दिर बनना प्रारम्भ हुआ। उसी समय एक नाथ परम्परा के सिद्ध महात्मा आ गए। नाथ जी ने राजा से कहा राजा बहुत अच्छा मन्दिर बनवा रहे हो, इसमें मूर्ति भी स्थापित करनी चाहिए। मूर्ति बिना मन्दिर कैसा? यह मेरा आदेश है। राजा इन्द्रदमन ने हाथ जोड़ कर कहा नाथ जी प्रभु श्री कष्ण जी ने मुझे स्वपन में दर्शन दे कर मन्दिर बनवाने का आदेश दिया था तथा कहा था कि इस महल में न तो मूर्ति रखनी है, न ही पाखण्ड पूजा करनी है। राजा की बात सुनकर नाथ ने कहा स्वपन भी कोई सत होता है। मेरे आदेश का पालन कीजिए तथा चन्दन की लकड़ी की मूर्ति अवश्य स्थापित कीजिएगा। यह कह कर नाथ जी बिना जल पान ग्रहण किए उठ गए। राजा ने डर के मारे चन्दन की लकड़ी मंगवाई तथा कारीगर को मूर्ति बनाने का आदेश दे दिया। एक मूर्ति श्री कष्ण जी की स्थापित करने का आदेश श्री नाथ जी का था। फिर अन्य गुरुओं-संतों ने राजा को राय दी कि अकेले प्रभु कैसे रहेंगे? वे तो श्री बलराम को सदा साथ रखते थे। एक ने कहा बहन सुभद्रा तो भगवान श्री कष्ण जी की लाड़ली बहन थी, वह कैसे अपने भाई बिना रह सकती है?

तीन मूर्तियाँ बनवाने का निर्णय लिया गया। तीन कारीगर नियुक्त किए। मूर्तियाँ तैयार होते ही टुकड़े-टुकड़े हो गई। ऐसे तीन बार मूर्तियाँ खण्ड हो गई। राजा बहुत चिन्तित हुआ। सोचा मेरे भाग्य में यह यश व पुण्य कर्म नहीं है। मन्दिर बनता है वह टूट जाता है। अब मूर्तियाँ टूट रही हैं। नाथ जी रूष्ट हो कर गए हैं। यदि कहूँगा कि मूर्तियाँ टूट जाती हैं तो सोचेगा कि राजा बहाना बना रहा है, कहीं मुझे शाप न दे दे। चिन्ता ग्रस्त राजा न तो आहार कर रहा है, न रात्रि भर निन्द्रा आई। सुबह बेचैन अवस्था में राज दरबार में गया। उसी समय पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) कबीर प्रभु एक अस्सी वर्षीय कारीगर का रूप बनाकर राज दरबार में उपस्थित हुआ। कमर पर एक थैला लटकाए हुए था जिसमें आरी बाहर

स्पष्ट दिखाई दे रही थी, मानों बिना बताए कारीगर का परिचय दे रही थी तथा अन्य बसोला व बरमा आदि थेले में भरे थे। कारीगर वेश में प्रभु ने राजा से कहा मैंने सुना है कि प्रभु के मन्दिर के लिए मूर्तियाँ पूर्ण नहीं हो रही हैं। मैं 80 वर्ष का वद्ध हो चुका हूँ तथा 60 वर्ष का अनुभव है। चन्दन की लकड़ी की मूर्ति प्रत्येक कारीगर नहीं बना सकता। यदि आप की आज्ञा हो तो सेवक उपस्थित है। राजा ने कहा कारीगर आप मेरे लिए भगवान ही कारीगर बन कर आये लगते हो। मैं बहुत चिन्तित था। सोच ही रहा था कि कोई अनुभवी कारीगर मिले तो समस्या का समाधान बने। आप शीघ्र मूर्तियाँ बना दो। वद्ध कारीगर रूप में आए कविर्देव (कबीर प्रभु) ने कहा राजन मुझे एक कमरा दे दो, जिसमें बैठ कर प्रभु की मूर्ति तैयार करूंगा। मैं अंदर से दरवाजा बंद करके स्वच्छता से मूर्ति बनाऊंगा। ये मूर्तियां जब तैयार हो जायेंगी तब दरवाजा खुलेगा, यदि बीच में किसी ने खोल दिया तो जितनी मूर्तियाँ बनेगी उतनी ही रह जायेंगी। राजा ने कहा जैसा आप उचित समझो वैसा करो।

बारह दिन मूर्तियाँ बनाते हो गए तो नाथ जी आ गए। नाथ जी ने राजा से पूछा इन्द्रदमन मूर्तियाँ बनाई क्या? राजा ने कर बद्ध हो कर कहा कि आप की आज्ञा का पूर्ण पालन किया गया है महात्मा जी। परन्तु मेरा दुर्भाग्य है कि मूर्तियाँ बन नहीं पा रही हैं। आधी बनते ही टुकड़े-टुकड़े हो जाती हैं नौकरों से मूर्तियों के टुकड़े मंगवाकर नाथ जी को विश्वास दिलाने के लिए दिखाए। नाथ जी ने कहा कि मूर्ति अवश्य बनवानी है। अब बनवाओं मैं देखता हूँ कैसे मूर्ति टूटती है। राजा ने कहा नाथ जी प्रयत्न किया जा रहा है। प्रभु का भेजा एक अनुभवी 80 वर्षीय कारीगर बन्द कमरें में मूर्ति बना रहा है। उसने कहा है कि मूर्तियाँ बन जाने पर मैं अपने आप द्वार खोल दूंगा। यदि किसी ने बीच में द्वार खोल दिया तो जितनी मूर्तियाँ बनी होंगी उतनी ही रह जायेंगी। आज उसे मूर्ति बनाते बारह दिन हो गये। न तो बाहर निकला है, न ही जल पान तथा आहार ही किया है।

नाथ जी ने कहा कि मूर्तियाँ देखनी चाहिये, कैसी बना रहा है? बनने के बाद क्या देखना है। ठीक नहीं बनी होंगी तो ठीक बनायेंगे। यह कहकर नाथ जी राजा इन्द्रदमन को साथ लेकर उस कमरे के सामने गए जहाँ मूर्ति बनाई जा रही थी तथा आवाज लगाई कारीगर द्वार खोलो। कई बार कहा परन्तु द्वार नहीं खुला तथा जो खट-खट की आवाज आ रही थी, वह भी बन्द हो गई। नाथ जी ने कहा कि 80 वर्षीय वद्ध बता रहे हो, बारह दिन खाना-पीना भी नहीं किया है। अब आवाज भी बंद है, कहीं मर न गया हो। धक्का मार कर दरवाजा तोड़ दिया, देखा तो तीन मूर्तियाँ रखी थी, तीनों के हाथ के व पैरों के पंजे नहीं बने थे। कारीगर अंतर्ध्यान था।

मन्दिर बन कर तैयार हो गया और चारा न देखकर अपने हठ पर अडिग नाथ जी ने कहा ऐसी ही मूर्तियों को स्थापित कर दो, हो सकता है प्रभु को यही स्वीकार हो, लगता है श्री कष्ण ही स्वयं मूर्तियां बना कर गए हैं।

मुख्य पांडे ने शुभ मुहूर्त निकाल कर अगले दिन ही मूर्तियों की स्थापना कर दी। सर्व पाण्डे तथा मुख्य पांडा व राजा तथा सैनिक व श्रद्धालु मूर्तियों में प्राण स्थापना करने के लिए चल पड़े। पूर्ण परमेश्वर (कविर्देव) एक शुद्र का रूप धारण करके मन्दिर के मुख्य द्वार के मध्य में मन्दिर की ओर मुख करके खड़े हो गए। ऐसी लीला कर रहे थे मानों उनको ज्ञान ही न हो कि पीछे से प्रभु की प्राण स्थापना की सेना आ रही है। आगे-आगे मुख्य पांडा चल रहा था। परमेश्वर फिर भी द्वार के मध्य में ही खड़े रहे। निकट आ कर मुख्य पांडे ने शुद्र रूप में खड़े परमेश्वर को ऐसा धक्का मारा कि दूर जा कर गिरे तथा एकान्त स्थान पर शुद्र लीला करते हुए बैठ गए। राजा सहित सर्व

श्रद्धालुओं ने मन्दिर के अन्दर जा कर देखा तो सर्व मूर्तियाँ उसी द्वार पर खड़े शुद्र रूप परमेश्वर का रूप धारण किए हुए थी। इस कौतूक को देखकर उपस्थित व्यक्ति अचम्भित हो गए। मुख्य पांडा कहने लगा प्रभु क्षुब्ध हो गया है क्योंकि मुख्य द्वार को उस शुद्र ने अशुद्ध कर दिया है। इसलिए सर्व मूर्तियों ने शुद्र रूप धारण कर लिया है। बड़ा अनिष्ट हो गया है। कुछ समय उपरान्त मूर्तियों का वास्तविक रूप हो गया। गंगा जल से कई बार स्वच्छ करके प्राण स्थापना की गई। {कविर्देव ने कहा अज्ञानता व पाखण्ड वाद की चरम सीमा देखें। कारीगर मूर्ति का भगवान बनाता है। फिर पूजारी या अन्य संत उस मूर्ति रुपी प्रभु में प्राण डालता है अर्थात् प्रभु को जीवन दान देता है। तब वह मिट्टी या लकड़ी का प्रभु कार्य सिद्ध करता है, वाह रे पाखण्डियों खूब मूर्ख बनाया प्रभु प्रेमी आत्माओं को।}

मूर्ति स्थापना हो जाने के कुछ दिन पश्चात् लगभग 40 फुट ऊँचा समुद्र का जल उठा जिसे समुद्री तुफान कहते हैं तथा बहुत वेग से मन्दिर की ओर चला। सामने कबीर परमेश्वर चौरा (चबुतरे) पर बैठे थे। अपना एक हाथ उठाया जैसे आशीर्वाद देते हैं, समुद्र उठा का उठा रह गया तथा पर्वत की तरह खड़ा रहा, आगे नहीं बढ़ सका। विप्र रूप बना कर समुद्र आया तथा चबूतरे पर बैठे प्रभु से कहा कि भगवन आप मुझे रास्ता दे दो, मैं मन्दिर तोड़ने जाऊंगा। प्रभु ने कहा कि यह मन्दिर नहीं है। यह तो महल (आश्रम) है। इस में विद्वान पुरुष रहा करेगा तथा पवित्र गीता जी का ज्ञान दिया करेगा। आपका इसको विध्वंस करना शोभा नहीं देता। समुद्र ने कहा कि मैं इसे अवश्य तोडूंगा। प्रभु ने कहा कि जाओ कौन रोकता है? समुद्र ने कहा कि मैं विवश हो गया हूँ। आपकी शक्ति अपार है। मुझे रास्ता दे दो प्रभु। परमेश्वर कबीर साहेब जी ने पूछा कि आप ऐसा क्यों कर रहे हो? विप्र रूप में उपस्थित समुद्र ने कहा कि जब यह श्री कष्ण जी त्रेतायुग में श्री रामचन्द्र रूप में आया था तब इसने मुझे अग्नि बाण दिखा कर बुरा भला कह कर अपमानित करके रास्ता मांगा था। मैं वह प्रतिशोध लेने जा रहा हूँ।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि प्रतिशोध तो आप पहले ही ले चुके हो। आपने द्वारिका को डूबो रखा है। समुद्र ने कहा कि अभी पूर्ण नहीं डूबा पाया हूँ, आधी रहती है। वह भी कोई प्रबल शक्ति युक्त संत सामने आ गया था जिस कारण से मैं द्वारिका को पूर्ण रूपेण नहीं समा पाया। अब भी कोशिश करता हूँ तो उधर नहीं जा पा रहा हूँ। उधर से मुझे बांध रखा है।

तब परमेश्वर कबीर (कविर्देव) ने कहा वहाँ भी मैं ही पहुँचा था। मैंने ही वह अवशेष बचाया था। अब जा शेष बची द्वारिका को भी निगल ले, परन्तु उस यादगार को छोड़ देना, जहाँ श्री कष्ण जी के शरीर का अन्तिम संस्कार किया गया था (श्री कष्ण जी के अन्तिम संस्कार स्थल पर बहुत बड़ा मन्दिर बना दिया गया। यह यादगार प्रमाण बना रहेगा कि वास्तव में श्री कष्ण जी की मत्यु हुई थी तथा पंच भौतिक शरीर छोड़ गये थे। नहीं तो आने वाले समय में कहेंगे कि श्री कष्ण जी की तो मत्यु ही नहीं हुई थी)। आज्ञा प्राप्त कर शेष द्वारिका को भी समुद्र ने डूबो लिया। परमेश्वर कबीर जी (कविर्देव) ने कहा अब आप आगे से कभी भी इस जगन्नाथ मन्दिर को तोड़ने का प्रयत्न नहीं करना तथा इस महल से दूर चला जा। ऐसी आज्ञा प्रभु की मान कर प्रणाम करके मन्दिर से दूर लगभग डेढ़ किलोमीटर हट गया। ऐसे श्री जगन्नाथ जी का मन्दिर अर्थात् धाम स्थापित हुआ।

''सर्व श्रेष्ठ तीर्थ''

प्रश्न :- सर्वश्रेष्ठ तीर्थ कौन-सा है जिससे सर्व तीर्थों से अधिक लाभ मिलता है?

उत्तर :- सर्व श्रेष्ठ चित शुद्ध तीर्थ है।

चितशुद्ध तीर्थ अर्थात् तत्वदर्शी सन्त का सत्संग सर्व तीर्थों से श्रेष्ठ :- श्री देवी पुराण छठा स्कन्द अध्याय 10 पृष्ठ 417 पर लिखा है व्यास जी ने राजा जनमेजय से कहा राजन्! यह निश्चय है कि तीर्थ देह सम्बन्धी मैल को साफ कर देते हैं, किन्तु मन के मैल को धोने की शक्ति तीर्थों में नहीं है। चितशुद्ध तीर्थ गंगा आदि तीर्थों से भी अधिक पवित्र माना जाता है। यदि भाग्यवश चितशुद्ध तीर्थ सुलभ हो जाए तो अर्थात् तत्वदर्शी संतों का सत्संग रूपी तीर्थ प्राप्त हो जाए तो मानसिक मैल के धुल जाने में कोई संदेह नहीं। परन्तु राजन्! इस चितशुद्ध तीर्थ को प्राप्त करने के लिए ज्ञानी पुरूषों अर्थात् तत्वदर्शी सन्तों के सत्संग की विशेष आवश्यकता है। वेद, शास्त्र, व्रत, तप, यज्ञ और दान से चितशुद्ध होना बहुत कठिन है। वशिष्ठ जी ब्रह्मा जी के पुत्र थे। उन्होंने वेद और विद्या का सम्यक प्रकार से अध्ययन किया था। गंगा के तट पर निवास करते थे। तथापि द्वेष के कारण उनका विश्वामित्र के साथ वैमनस्य हो गया और दोनों ने परस्पर श्राप दे दिए तथा उनमें भयंकर युद्ध होने लगा। इससे सिद्ध हुआ कि संतों के सत्संग से चितशुद्ध कर लेना अति आवश्यक है अन्यथा वेद ज्ञान, तप, व्रत, तीर्थ, दान तथा धर्म के जितने साधन है वे सबके सब कोई विशेष प्रयोजन सिद्ध नहीं कर सकते (श्री देवी पुराण से लेख समाप्त)

❖ **विशेष विचार :- उपरोक्त श्री देवी पुराण के लेख से स्पष्ट है कि तत्वदर्शी सन्तों के सत्संग से श्रेष्ठ कोई भी तीर्थ नहीं है तथा तत्वदष्टा सन्त के बताए मार्ग से साधना करने से कल्याण सम्भव है। तीर्थ, व्रत, तप, दान आदि व्यर्थ प्रयत्न है। तत्वदर्शी सन्त के अभाव के कारण केवल चारों वेदों में वर्णित भक्ति विद्यी से पूर्ण मोक्ष लाभ नहीं है। परमेश्वर कबीर जी ने कहा है :-**

सतगुरु बिन वेद पढ़ें जो प्राणी, समझे ना सार रहे अज्ञानी।।
सतगुरु बिन काहू न पाया ज्ञाना, ज्यों थोथा भुष छिड़ै मूढ किसाना।।
अड़सठ तीर्थ भ्रम–भ्रम आवै सर्व फल सतगुरू चरणा पावै।।
कबीर तीर्थ करि–करि जग मुआ, उड़ै पानी नहाय। सतनाम जपा नहीं, काल घसीटें जाय।।

सूक्ष्मवेद (तत्वज्ञान) में कहा है कि :-

अड़सठ तीर्थ भ्रम–भ्रम आवै। सो फल सतगुरू चरणों पावै।।
गंगा, यमुना, बद्री समेते। जगन्नाथ धाम है जेते।।
भ्रमें फल प्राप्त होय न जेतो। गुरू सेवा में फल पावै तेतो।।
कोटिक तीर्थ सब कर आवै। गुरू चरणां फल तुरंत ही पावै।।
सतगुरू मिलै तो अगम बतावै। जम की आंच ताहि नहीं आवै।।
भक्ति मुक्ति का पंथ बतावै। बुरा होन को पंथ छुड़ावै।।
सतगुरू भक्ति मुक्ति के दानी। सतगुरू बिना ना छूटै खानी।।
सतगुरू गुरू सुर तरू सुर धेनु समाना। पावै चरणन मुक्ति प्रवाना।।

सरलार्थ :- पूर्ण परमात्मा द्वारा दिए तत्वज्ञान यानि सूक्ष्मवेद में कहा है कि तीर्थों और धामों पर जाने से कोई पुण्य लाभ नहीं। असली तीर्थ सतगुरू (तत्वदर्शी संत) का सत्संग सुनने जाना

है। जहाँ तत्वदर्शी संत का सत्संग होता है, वह सर्व श्रेष्ठ तीर्थ तथा धाम है। इसी कथन का साक्षी संक्षिप्त श्रीमद्देवीभागवत महापुराण भी है। उसमें छठे स्कंद के अध्याय 10 में लिखा है कि सर्व श्रेष्ठ तीर्थ तो चित शुद्ध तीर्थ है। जहाँ तत्वदर्शी संत का सत्संग चल रहा है। उसके अध्यात्म ज्ञान से चित की शुद्धि होती है। शास्त्रोक्त अध्यात्म ज्ञान तथा शास्त्रोक्त भक्ति विधि का ज्ञान होता है जिससे जीव का कल्याण होता है। अन्य तीर्थ मात्र भ्रम हैं। इसी पुराण में लिखा है कि सतगुरू रूप तीर्थ मिलना अति दुर्लभ है।

सूक्ष्मवेद में बताया है कि सतगुरू तो कल्पवक्ष तथा कामधेनू के समान है। जैसे पुराणों में कहा है कि स्वर्ग में कल्पवक्ष तथा कामधेनू हैं। उनसे जो भी माँगो, सब सुविधाऐं प्रदान कर देते हैं। इसी प्रकार सतगुरू जी सत्य साधना बताकर सर्व लाभ साधक को प्रदान करवा देते हैं तथा अपने आशीर्वाद से भी अनेकों लाभ देते हैं। भक्ति करवाकर मुक्ति की राह आसान कर देते हैं। इसलिए कहा है कि :-

एकै साधै सब सधै, सब साधैं सब जाय। माली सींचै मूल को, फलै फूलै अघाय।।

शब्दार्थ :- एक सतगुरू रूप तीर्थ पर जाने से सब लाभ मिल जाता है। सब तीर्थो-धामों व अन्य अंध श्रद्धा भक्ति से सब लाभ समाप्त हो जाते हैं। जैसे आम के पौधे की एक जड़ की सिंचाई करने से पौधा विकसित होकर पेड़ बनकर बहुत फल देता है। यदि पौधे को उल्टा करके जमीन में गढ्ढ़े में शाखाओं की ओर से रोपकर शाखाओं की सिंचाई करेंगे तो पौधा नष्ट हो जाता है। कोई लाभ नहीं मिलता। इसलिए एक सतगुरू रूप तीर्थ पर जाने से सर्व लाभ मिल जाता है। जैसा कि संक्षिप्त श्रीमद्देवीभागवत महापुराण में लिखा है कि सतगुरू रूप तीर्थ मिलना अति दुर्लभ है, परंतु आप जी को सतगुरू रूप तीर्थ अति शुलभ है। यह दास (लेखक रामपाल दास) विश्व में एकमात्र सतगुरू तीर्थ यानि तत्वज्ञानी है। आओ और सत्य भक्ति प्राप्त करके जीवन सफल बनाओ।

आप जी को फिर ध्यान दिला दूँ कि गीता शास्त्र का ज्ञान चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) का सारांश है। वेदों का ज्ञान पूर्ण परमात्मा यानि परम अक्षर ब्रह्म का दिया हुआ है जो काल ब्रह्म के अन्तःकरण में डाला गया था। काल ब्रह्म के श्वासों द्वारा उसके शरीर से बाहर आया था जिसका कुछ अंश काल ब्रह्म ने जान-बूझकर समाप्त कर दिया था। शेष अपने पुत्र ब्रह्मा जी को दिया। श्री कष्ण द्वैपायन जी ने इसको चार भागों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) में बाँटा। जिस कारण से उनको वेद व्यास (वेदों का विस्तारक) कहा जाने लगा। यही ज्ञान श्रीमद्भगवत गीता में काल ब्रह्म ने श्री कष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके कहा था। इसलिए गीता का ज्ञान परमात्मा का बताया है। पुराणों का ज्ञान श्री ब्रह्मा जी तथा ऋषियों का अनुभव है। पुराणों में जो ज्ञान गीता-वेदों से नहीं मिलता, वह शास्त्र विरूद्ध है। उसको आधार मानकर साधना करना व्यर्थ है।

❖ चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) तथा इन्हीं के सार रूप गीता में केवल ब्रह्म (जिसे काल ब्रह्म भी कहा जाता है) तक की साधना का ज्ञान है। इन शास्त्रों में परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् उस परमेश्वर की साधना का ज्ञान नहीं है जिसके विषय में गीता ज्ञान देने वाले ने गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है कि हे भारत! तू सर्व भाव से उस परमेश्वर की शरण में जा। उसकी कपा से ही तू परमशांति को तथा सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।

❖ उस परमेश्वर का ज्ञान जानने के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक 32, 34 में कहा है कि उस

तत्वज्ञान को जो स्वयं परमेश्वर ने अपने मुख कमल से बोलकर वाणी द्वारा बताया है, वह तत्वदर्शी संतों के पास जाकर समझ। इससे सिद्ध है कि गीता में न तो यह ज्ञान है कि वह परमेश्वर कौन है तथा न उसकी प्राप्ति की साधना का वर्णन है, परंतु गीता का ज्ञान अपने स्तर का सत्य ज्ञान है। जैसे दसवीं कक्षा तक सलेबस है, वह उस स्तर का तो सत्य है, परंतु बी.ए. तथा एम.ए. का नहीं है। वह सूक्ष्मवेद यानि तत्वज्ञान में है। सूक्ष्मवेद पाँचवां सम्पूर्ण वेद है जिसमें गीता-वेदों व पुराणों वाला ज्ञान भी है। जो इनमें नहीं है, वह ज्ञान भी है। वर्तमान में सूक्ष्मवेद का सम्पूर्ण ज्ञान विश्व में मेरे (लेखक के) अलावा किसी को नहीं है।

श्रीमद्भगवत गीता में पित्तर व भूत पूजा व देवता पूजा करने का परिणाम बताया है कि व भूत व पित्तर बनेंगे तथा देवताओं के पुजारी देवताओं को प्राप्त होंगे यानि उनके नौकर लगेंगे। जो जिसकी पूजा करता है, उसी के लोक में जाता है।

गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15, 20-23 में गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट किया है कि जो तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव जी) की पूजा करते हैं। जिनका ज्ञान इन्हीं तीनों देवताओं के द्वारा हरा गया है। वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख हैं। वे मेरी भक्ति नहीं करते।

पेश है प्रमाण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 की फोटोकॉपियाँ। (अगले पष्ठों पर।)

गीता अध्याय 7 श्लोक 12 की फोटोकॉपी :-

ये, च, एव, सात्त्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मत्तः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि॥ १२॥

तथा—

च	= और	**तान्**	= उन सबको (तू)
एव	= भी	**मत्तः, एव**	= मुझसे ही (होनेवाले हैं)
ये	= जो		
सात्त्विकाः	= सत्त्वगुणसे उत्पन्न होनेवाले	**इति**	= ऐसा
		विद्धि	= जान
भावाः	= भाव हैं (और)	**तु**	= परंतु (वास्तवमें)[१]
ये	= जो	**तेषु**	= उनमें
राजसाः	= रजोगुणसे	**अहम्**	= मैं (और)
च	= तथा	**ते**	= वे
तामसाः	= तमोगुणसे होनेवाले भाव हैं,	**मयि**	= मुझमें
		न	= नहीं हैं।

गीता अध्याय 7 श्लोक 12 का भावार्थ यह है कि ''गीता ज्ञान देने वाला काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन काल) है। इसको श्रापवश एक लाख मानव (स्त्री-पुरूष) खाने होते हैं। उसके लिए इसने अपने तीनों पुत्रों को गुण युक्त उत्पन्न किया है। रजगुण युक्त ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त विष्णु जी तथा तमगुण युक्त शिवजी को अपनी पत्नी श्री देवी दुर्गा के गर्भ से उत्पन्न किया है। ब्रह्मा जी के

रजगुण के प्रभाव से प्रभावित सब प्राणी भोग-विलास करके संतानोत्पत्ति करते हैं। विष्णु जी के सतगुण के प्रभाव से प्रभावित होकर सब प्राणी एक-दूसरे से मोह-ममता के कारण जकड़े हुए हैं। जैसे पिता का संतान से मोह, माता का संतान से मोह, बच्चों का माता-पिता से मोह, सम्पति से मोह यानि विष्णु जी से निकल रहा सतगुण का प्रभाव सब जीवों को एक-दूसरे से बांधे रखता है। इसे स्थिति स्थापित करना कहा है। शिव जी के तमगुण के प्रभाव से युद्ध होते हैं। हजारों-लाखों सैनिक मारे जाते हैं। आपसी कलह, झगड़े होते हैं। तीनों देवता (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) काल ब्रह्म के खाने के लिए व्यवस्था करते हैं। (अधिक जानकारी Annexure सष्टि रचना इसी पुस्तक के पष्ठ 389 पर)।

इसलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 12 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि रजगुण (ब्रह्मा) से, सतगुण (विष्णु) से तथा तमगुण (शिव) से जो कुछ भी हो रहा है, उन सबको तू मुझसे ही होने वाला जान यानि सब मेरी योजना के तहत हो रहा है। परंतु मैं उनमें नहीं हूँ और वे मुझमें नहीं हैं।(क्योंकि काल ब्रह्मलोक में गुप्त रहता है। उस तक किसी की पहुँच नहीं, इसलिए कहा है।)

प्रमाण के लिए पेश है गीता अध्याय 7 श्लोक 13 की फोटोकॉपी :-

त्रिभिः, गुणमयैः, भावैः, एभिः, सर्वम्, इदम्, जगत्,
मोहितम्, न, अभिजानाति, माम्, एभ्यः, परम्, अव्ययम्॥ १३॥

किंतु—

गुणमयैः	= गुणोंके कार्यरूप सात्त्विक, राजस और तामस—	**मोहितम्**	= मोहित हो रहा है, (इसीलिये)
एभिः	= इन	**एभ्यः**	= इन तीनों गुणोंसे
त्रिभिः	= तीनों प्रकारके	**परम्**	= परे
भावैः	= भावोंसे[२]	**माम्**	= मुझ
इदम्	= यह	**अव्ययम्**	= अविनाशीको
सर्वम्	= सारा		
जगत्	= संसार— प्राणिसमुदाय	**न**	= नहीं
		अभिजानाति	= जानता।

अध्याय 7 श्लोक 13 का भावार्थ है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जो थोड़ी राहत ये देवता अपने साधक को देते हैं। उसी के कारण सारा प्राणी समुदाय यानि जगत इन्हीं पर मोहित हो रहा है। इन तीनों गुणों (देवताओं) से परे मुझ अविनाशी को नहीं जानता यानि मेरी पूजा के महत्व से अपरिचित हैं। इन तीनों देवताओं का जाल मेरे से उत्पन्न है, यह मेरी माया बड़ी दुस्तर है। जो पुरूष केवल मुझको भजते हैं, वे इस माया (तीनों देवताओं) का उल्लंघन कर जाते हैं यानि इनकी भक्ति नहीं करते। इनके पास न जाकर मेरे ब्रह्मलोक में चले जाते हैं।

पेश है प्रमाण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 14 की फोटोकॉपी :-

दैवी, हि, एषा, गुणमयी, मम, माया, दुरत्यया,
माम्, एव, ये, प्रपद्यन्ते, मायाम्, एताम्, तरन्ति, ते ॥ १४ ॥

हि	= क्योंकि	**माम्**	= मुझको
एषा	= यह	**एव**	= ही (निरन्तर)
दैवी	= { अलौकिक अर्थात् अति अद्भुत	**प्रपद्यन्ते**	= भजते हैं,
		ते	= वे
गुणमयी	= त्रिगुणमयी	**एताम्**	= इस
मम	= मेरी	**मायाम्**	= मायाको
माया	= माया	**तरन्ति**	= { उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् संसारसे तर जाते हैं।
दुरत्यया	= { बड़ी दुस्तर है; (परंतु)		
ये	= जो पुरुष (केवल)		

गीता अध्याय 7 श्लोक 15 में गीता बोलने वाले काल ब्रह्म ने कहा है कि जिनकी बुद्धि इन तीनों देवताओं से आगे नहीं चलती। जिनका ज्ञान इस त्रिगुणमयी माया (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) के द्वारा हरा जा चुका है यानि जो इन्हीं की भक्ति करते हैं, वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मुनष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख लोग मुझको (गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म को) नहीं भजते।

प्रमाण के लिए पेश है गीता अध्याय 7 श्लोक 15 की फोटोकॉपी :-

न, माम्, दुष्कृतिनः, मूढाः, प्रपद्यन्ते, नराधमाः,
मायया, अपहृतज्ञानाः, आसुरम्, भावम्, आश्रिताः ॥ १५ ॥

ऐसा सुगम उपाय होनेपर भी—

मायया	= मायाके द्वारा	**नराधमाः**	= मनुष्योंमें नीच,
अपहृतज्ञानाः	= { जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, (ऐसे)	**दुष्कृतिनः**	= { दूषित कर्म करनेवाले
		मूढाः	= मूढ़लोग
आसुरम्, भावम्	= { आसुर स्वभावको	**माम्**	= मुझको
		न	= नहीं
आश्रिताः	= धारण किये हुए,	**प्रपद्यन्ते**	= भजते

➢ इसी संबंध में कुछ घटनाएँ पेश हैं :-

1. रजगुण ब्रह्मा के उपासकों का चरित्र : एक हरण्यकशिपु ब्राह्मण राजा था। किसी कारण उसको भगवान विष्णु (सतगुण) से ईर्ष्या हो गई। उस राजा ने रजगुण ब्रह्मा जी देवता को भक्ति करके प्रसन्न किया। ब्रह्मा जी ने कहा कि पुजारी! माँगो क्या माँगना चाहते हो? हरण्यकशिपु ने माँगा कि सुबह मरुँ न शाम मरुँ, बाहर मरुँ न भीतर मरुँ, दिन मरुँ न रात मरुँ, बारह मास में न मरुँ, न आकाश में मरुँ, न धरती पर मरुँ, न मानव से, न पशु-पक्षी से मरूँ। ब्रह्माजी ने कहा तथास्तु। इसके पश्चात् हरण्यकशिपु ने अपने आपको अमर मान लिया और अपना नाम जाप करने को कहने लगा। जो विष्णु का नाम जपता, उसको मार देता। उसका पुत्र प्रहलाद विष्णु जी की भक्ति करता था। उसको कितना सताया था। हे धर्मदास! कथा से तो आप परिचित हैं। भावार्थ है कि रजगुण ब्रह्मा का भक्त हरण्यकशिपु राक्षस कहलाया, कुत्ते वाली मौत मारा गया।

''रावण तथा भस्मासुर की कथा''

2. तमगुण शिवजी के उपासकों का चरित्र : लंका के राजा रावण ने तमगुण शिव की भक्ति की थी। उसने अपनी शक्ति से 33 करोड़ देवताओं को कैद कर रखा था। फिर देवी सीता का अपहरण कर लिया। उसका क्या हाल हुआ, आप सब जानते हैं। तमगुण शिव का उपासक रावण राक्षस कहलाया, सर्वनाश हुआ। निंदा का पात्र बना।

❖ अन्य उदाहरण :- आप जी को भष्मासुर की कथा का तो ज्ञान है ही। भगवान शिव (तमोगुण) की भक्ति भष्मागिरी करता था। वह बारह वर्षों तक शिव जी के द्वार के सामने ऊपर को पैर नीचे को सिर (शीर्षासन) करके भक्ति तपस्या करता रहा। एक दिन पार्वती जी ने कहा हे महादेव! आप तो समर्थ हैं। आपका भक्त क्या माँगता है? इसे प्रदान करो प्रभु। भगवान शिव ने भष्मागिरी से पूछा बोलो भक्त क्या माँगना चाहते हो। मैं तुझ पर अति प्रसन्न हूँ। भष्मागिरी ने कहा कि पहले वचनबद्ध हो जाओ, तब माँगूंगा। भगवान शिव वचनबद्ध हो गए। तब भष्मागिरी ने कहा कि आपके पास जो भष्मकण्डा(भष्मकड़ा) है, वह मुझे प्रदान करो। शिव प्रभु ने वह भष्मकण्डा भष्मागिरी को दे दिया। कड़ा हाथ में आते ही भष्मागिरी ने कहा कि होजा शिवजी होशियार! तेरे को भष्म करुँगा तथा पार्वती को पत्नी बनाउँगा। यह कहकर अभद्र ढ़ंग से हँसा तथा शिवजी को मारने के लिए उनकी ओर दौड़ा। भगवान शिव उस दुष्ट का उद्देश्य जानकर भाग निकले। पीछे-पीछे पुजारी आगे-आगे इष्टदेव शिवजी (तमगुण) भागे जा रहे थे।

विचार करें धर्मदास! यदि आपके देव शिव जी अविनाशी होते तो मत्यु के भय से नहीं डरते। आप इनको अविनाशी कहा करते थे। आप इन्हें अन्तर्यामी भी कहते थे। यदि भगवान शिव अन्तर्यामी होते तो पहले ही भष्मागिरी के मन के गन्दे विचार जान लेते। इससे सिद्ध हुआ कि ये तो अन्तर्यामी भी नहीं हैं।

जिस समय भगवान शिव जी आगे-आगे और भष्मागिरी पीछे-पीछे भागे जा रहे थे, उस समय भगवान शिव ने अपनी रक्षा के लिए परमेश्वर को पुकारा। उसी समय ''परम अक्षर ब्रह्म'' जी पार्वती का रुप बनाकर भष्मागिरी दुष्ट के सामने खड़े हो गए तथा कहा हे भष्मागिरी! आ मेरे पास बैठ। भष्मागिरी को पता था कि अब शिवजी निकट स्थान पर नहीं रुकेंगे। भष्मागिरी तो पार्वती के लिए ही तो सर्व उपद्रव कर रहा था। हे धर्मदास! आपको सर्व कथा का पता है। पार्वती रुप में परमात्मा

ने भष्मागिरी को गण्डहथ नाच नचाकर भस्म किया। तमोगुण शिव का पुजारी भष्मागिरी अपने गन्दे कर्म से भष्मासुर अर्थात् भस्मा राक्षस कहलाया।

इसलिए इन तीनों देवों के पुजारियों को राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है।

''हरिद्वार में साधुओं का कत्लेआम''

3. अब सतगुण श्री विष्णु जी के पुजारियों की कथा सुनाता हूँ।

❖ एक समय हरिद्वार में हर की पोड़ियों पर कुंभ का मेला लगा। उस अवसर पर तीनों गुणों के उपासक अपने-अपने समुदाय में एकत्रित हो जाते है। गिरी, पुरी, नागा-नाथ ये भगवान तमोगुण शिव के उपासक होते हैं तथा वैष्णव सतगुण भगवान विष्णु जी के उपासक होते हैं। हर की पोड़ियों पर प्रथम स्नान करने पर दो समुदायों ''नागा तथा वैष्णवों'' का झगड़ा हो गया। लगभग 25 हजार त्रिगुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) के पुजारी लड़कर मर गये, कत्लेआम कर दिया। तलवारों, छुरों, कटारी से एक-दूसरे की जान ले ली।

सूक्ष्मवेद में कहा है कि :-

तीर तुपक तलवार कटारी, जमधड़ जोर बधावैं हैं।
हर पैड़ी हर हेत नहीं जाना, वहाँ जा तेग चलावैं हैं।।
काटैं शीश नहीं दिल करुणा, जग में साध कहावैं हैं।
जो जन इनके दर्शन कूं जावैं, उनको भी नरक पठावैं हैं।।

हे धर्मदास! उपरोक्त सत्य घटनाओं से सिद्ध हुआ कि रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिवजी की पूजा करने वालों को गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है।

❖ परमेश्वर जिन्दा जी के मुख कमल से उपरोक्त कथा सुनकर धर्मदास जी का सिर फटने को हो गया। चक्कर आने लगे। हिम्मत करके धर्मदास बोला हे प्रभु! आपने तो मुझ ज्ञान के अँधे को आँखें दे दी दाता। उपरोक्त सर्व कथायें हम सुना तथा पढ़ा करते थे परन्तु कभी विचार नहीं आया कि हम गलत रास्ते पर चल रहे हैं। आपका सौ-सौ बार धन्यवाद। आप जी ने मुझ पापी को नरक से निकाल दिया प्रभु!

गीता अध्याय 7 के श्लोक 20-23 का उपरोक्त से संबंध है जिसका भावार्थ है कि :-

भावार्थ :- गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 तक का भावार्थ है कि जो गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में कहा है कि तीनों गुण(रजगुण श्री ब्रह्मा जी, सतगुण श्री विष्णु जी, तम् गुण श्री शिव जी) रूपी माया द्वारा जिन का ज्ञान हरा जा चुका है अर्थात् जो तीनों देवताओं की साधना करते हैं वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख, मुझ ब्रह्म की पूजा नहीं करते। इसी के सम्बन्ध में गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 में कहा है कि जिनका ज्ञान उपरोक्त तीनों देवताओं द्वारा हरा जा चुका है वे अपने स्वभाव वश उन्हीं देवताओं की पूजा मनोंकामना पूर्ण करने के उद्देश्य से करते हैं अर्थात् गीता ज्ञान दाता कह रहा है कि मेरे से अन्य देवताओं की पूजा करते है। जो भक्त जिस देवता की पूजा करता है उसकी श्रद्धा मैं ही, उस देवता के प्रतिदढ़ करता हूँ। उस देवताओं के पुजारी को भी मेरे द्वारा उस देवता को दी गई शक्ति से ही प्राप्त होता है। परन्तु उन मंद बुद्धि वालों अर्थात् मूर्खों का

वह फल नाशवान है। देवताओं के पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। मेरे भक्त मुझे प्राप्त होते हैं। भावार्थ है कि जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की पूजा या अन्य किसी देव की पूजा करते हैं उन देवताओं की पूजा का फल नाशवान है अर्थात् वह पूजा व्यर्थ है।

पेश है गीता अध्याय 7 श्लोक 20-23 की फोटोकॉपी :-

(गीता अध्याय 7 श्लोक 20 की फोटोकॉपी)

कामैः, तैः, तैः, हृतज्ञानाः, प्रपद्यन्ते, अन्यदेवताः,
तम्, तम्, नियमम्, आस्थाय, प्रकृत्या, नियताः, स्वया॥ २०॥

और हे अर्जुन!—

तैः, तैः	= उन-उन	**नियताः**	= प्रेरित होकर
कामैः	= भोगोंकी कामनाद्वारा	**तम्, तम्**	= उस-उस
हृतज्ञानाः	= जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, (वे लोग)	**नियमम्**	= नियमको
		आस्थाय	= धारण करके[२]
		अन्यदेवताः	= अन्य देवताओंको
स्वया	= अपने	**प्रपद्यन्ते**	= भजते हैं अर्थात् पूजते हैं।
प्रकृत्या	= स्वभावसे		

(गीता अध्याय 7 श्लोक 21 की फोटोकॉपी)

यः, यः, याम्, याम्, तनुम्, भक्तः, श्रद्धया, अर्चितुम्, इच्छति,
तस्य, तस्य, अचलाम्, श्रद्धाम्, ताम्, एव, विदधामि, अहम्॥ २१॥

यः, यः	= जो-जो	**तस्य**	= उस-
भक्तः	= सकाम भक्त	**तस्य**	= उस भक्तकी
याम्, याम्	= जिस-जिस	**श्रद्धाम्**	= श्रद्धाको
तनुम्	= देवताके स्वरूपको	**अहम्**	= मैं
श्रद्धया	= श्रद्धासे	**ताम्, एव**	= उसी देवताके प्रति
अर्चितुम्	= पूजना	**अचलाम्**	= स्थिर
इच्छति	= चाहता है;	**विदधामि**	= करता हूँ।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 22 की फोटोकॉपी)

सः, तया, श्रद्धया, युक्तः, तस्य, आराधनम्, ईहते,
लभते, च, ततः, कामान्, मया, एव, विहितान्, हि, तान्॥ २२॥

तथा—

सः	= वह पुरुष	**ततः**	= उस देवतासे
तया	= उस	**मया**	= मेरे द्वारा
श्रद्धया	= श्रद्धासे	**एव**	= ही
युक्तः	= युक्त होकर	**विहितान्**	= विधान किये हुए
तस्य	= उस देवताका	**तान्**	= उन
आराधनम्	= पूजन	**कामान्**	= इच्छित भोगोंको
ईहते	= करता है	**हि**	= निःसन्देह
च	= और	**लभते**	= प्राप्त करता है।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 23 की फोटोकॉपी)

अन्तवत्, तु, फलम्, तेषाम्, तत्, भवति, अल्पमेधसाम्,
देवान्, देवयजः, यान्ति, मद्भक्ताः, यान्ति, माम्, अपि॥ २३॥

तु	= परंतु	**देवान्**	= देवताओंको
तेषाम्	= उन	**यान्ति**	= प्राप्त होते हैं (और)
अल्पमेधसाम्	= अल्प बुद्धिवालोंका		
तत्	= वह	**मद्भक्ताः**	= मेरे भक्त (चाहे जैसे ही भजें, अन्तमें वे)
फलम्	= फल		
अन्तवत्	= नाशवान्		
भवति	= है (तथा वे)	**माम्**	= मुझको
देवयजः	= देवताओंको पूजनेवाले	**अपि**	= ही
		यान्ति	= प्राप्त होते हैं।

''गीता में ब्रह्म काल की भक्ति भी अनुत्तम (घटिया) कही है''

प्रश्न :- गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में अपनी साधना को गीता ज्ञान दाता ने अनुत्तम क्यों कहा है?

उत्तर :- गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5 तथा 9, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने कहा है कि हे अर्जुन! मेरे और तेरे बहुत से जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता मैं जानता हूं। श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि तत्वदर्शी सन्त से तत्वज्ञान प्राप्त करके परमेश्वर के उस परमपद की खोज करनी चाहिए, जहाँ जाने के पश्चात् साधक लौटकर फिर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर से संसार रुपी वृक्ष की प्रवत्ति

विस्तार को प्राप्त हुई हो अर्थात् जिस परमेश्वर ने सर्व संसार की उत्पत्ति की है। उसी परमेश्वर की भक्ति कर। फिर गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता ने कहा कि हे अर्जुन! तू सर्वभाव से उस परमेश्वर की शरण में जा, उस परमेश्वर की कपा से ही तू परमशांति तथा सनातन परमधाम को प्राप्त होगा। हे धर्मदास! जब तक जन्म-मरण रहेगा, तब तक परमशान्ति नहीं हो सकती और न ही सनातन परम धाम प्राप्त हो सकता। वास्तव में परमगति उसको कहते हैं जिसमें जन्म-मरण सदा के लिए समाप्त हो जाए जो ब्रह्म साधना से कभी नहीं हो सकती। इसलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि जो ज्ञानी आत्मा हैं, मेरे विचार में सब नेक हैं। परन्तु वे सब मेरी अनुत्तम (घटिया) गति में ही लीन हैं क्योंकि वे मेरी (ब्रह्म की) भक्ति कर रहे हैं। ब्रह्म की साधना का ''ऊँ'' मन्त्र है। इससे ब्रह्म लोक प्राप्त होता है। गीता अध्याय 8 श्लोक 16 में स्पष्ट है कि ब्रह्मलोक में गए हुए साधक भी पुनः लौटकर संसार में आते हैं। इसलिए उनको परमशान्ति नहीं हो सकती, सनातन परम धाम प्राप्त नहीं हो सकता। वेदों में वर्णित साधना से परमात्मा प्राप्ति नहीं होती। कुछ सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं जिनके द्वारा ऋषिजन चमत्कार करके किसी को हानि करके प्रसिद्ध हो जाते हैं। अंत में पाप के भागी होकर चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के शरीरों में कष्ट उठाते रहते हैं। इसलिए ब्रह्म साधना से होने वाली गति अर्थात् उपलब्धि अनुत्तम (**inferior**) कही है।

''ब्रह्म साधक का चरित्र''

''ऋषि चुणक द्वारा मानधाता के विनाश की कथा''

❖ कथा प्रसंग : गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने गीता अध्याय 7 श्लोक 16-17 में बताया है कि मेरी भक्ति चार प्रकार के भक्त करते हैं - 1. आर्त (संकट निवारण के लिए) 2. अर्थार्थी (धन लाभ के लिए), 3. जिज्ञासु (जो ज्ञान प्राप्त करके वक्ता बन जाते हैं) और 4. ज्ञानी (केवल मोक्ष प्राप्ति के लिए भक्ति करने वाले)। इनमें से तीन को छोड़कर चौथे ज्ञानी को अपना पक्का भक्त गीता ज्ञान दाता ने बताया है।

पेश है गीता अध्याय 7 श्लोक 16-17 की फोटोकॉपियाँ :-

(गीता अध्याय 7 श्लोक 16 की फोटोकॉपी)

चतुर्विधाः, भजन्ते, माम्, जनाः, सुकृतिनः, अर्जुन,
आर्तः, जिज्ञासुः, अर्थार्थी, ज्ञानी, च, भरतर्षभ॥ १६ ॥

और—

भरतर्षभ अर्जुन	= हे भरतवंशियोंमें श्रेष्ठ अर्जुन!	**च**	= और
		ज्ञानी	= ज्ञानी—(ऐसे)
सुकृतिनः	= उत्तम कर्म करनेवाले	**चतुर्विधाः**	= चार प्रकारके
अर्थार्थी	= अर्थार्थी,[१]	**जनाः**	= भक्तजन
आर्तः	= आर्त,[२]	**माम्**	= मुझको
जिज्ञासुः	= जिज्ञासु[३]	**भजन्ते**	= भजते हैं।

(गीता अध्याय 7 श्लोक 17 की फोटोकॉपी)

तेषाम्, ज्ञानी, नित्ययुक्तः, एकभक्तिः, विशिष्यते,
प्रियः, हि, ज्ञानिनः, अत्यर्थम्, अहम्, सः, च, मम, प्रियः ॥ १७॥

तेषाम्	= उनमें	**ज्ञानिनः**	= ज्ञानीको
नित्ययुक्तः	= नित्य मुझमें एकीभावसे स्थित	**अहम्**	= मैं
एकभक्तिः	= अनन्य प्रेमभक्तिवाला	**अत्यर्थम्**	= अत्यन्त
ज्ञानी	= ज्ञानी भक्त	**प्रियः**	= प्रिय हूँ
विशिष्यते	= अति उत्तम है;	**च**	= और
हि	= क्योंकि (मुझको तत्त्वसे जाननेवाले)	**सः**	= वह ज्ञानी
		मम	= मुझे (अत्यन्त)
		प्रियः	= प्रिय है।

❖ ज्ञानी की विशेषता :- ज्ञानी वह होता है जिसने जान लिया है कि मनुष्य जीवन केवल मोक्ष प्राप्ति के लिए ही प्राप्त होता है। उसको यह भी ज्ञान होता है कि पूर्ण मोक्ष के लिए केवल एक परमात्मा की भक्ति करनी चाहिए। अन्य देवताओं (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिवजी) की भक्ति से पूर्ण मोक्ष नहीं होता। उन ज्ञानी आत्माओं को गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 में वर्णित तत्वदर्शी सन्त न मिलने के कारण उन्होंने वेदों से स्वयं निष्कर्ष निकाल लिया कि ''ब्रह्म'' समर्थ परमात्मा है, ओम् (ॐ) इसकी भक्ति का मन्त्र है। इस साधना से ब्रह्मलोक प्राप्त हो जाता है। यही मोक्ष है।

पेश है यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 15 की फोटोकॉपी :-

वायुरनिलममृतमथेदं भस्मान्तꣳ शरीरम् ।
ओ३म् क्रतो स्मर क्लिबे स्मर कृतꣳ स्मर ॥१५॥

पदार्थः - हे (**क्रतो**) कर्म करने वाले जीव ! तू शरीर छूटते समय (**ओ३म्**) इस नामवाच्य ईश्वर को (**स्मर**) स्मरण कर (**क्लिबे**) अपने सामर्थ्य के लिये परमात्मा और अपने स्वरूप का (**स्मर**) स्मरण कर (**कृतम्**) अपने किये का (**स्मर**) स्मरण कर। इस संस्कार का (**वायुः**) धनञ्जयादिरूप वायु (**अनिलम्**) कारणरूप वायु को, कारणरूप वायु (**अमृतम्**) अविनाशी कारण को धारण करता (**अथ**) इसके अनन्तर (**इदम्**) यह (**शरीरम्**) नष्ट होने वाला सुखादि का आश्रय शरीर (**भस्मान्तम्**) अन्त में भस्म होने वाला होता है ऐसा जानो ॥१५॥

यह फोटोकॉपी यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 15 की है। इसका अनुवाद महर्षि दयानंद (आर्य समाज प्रवर्तक) ने किया है जो गलत है। इसके मूल पाठ में स्पष्ट किया है कि ''ओउम् क्रतो स्मर,

क्लिबे स्मर, कतम् स्मर'' यानि ओउम् (ओम्) नाम का जाप कार्य करते हुए करो, विशेष कसक के साथ स्मरण करो। मानव जन्म का मुख्य उद्देश्य मानकर स्मरण करो। महर्षि दयानंद जी ने लिखा है कि ''जिसका ओउम (ॐ) नाम उसको स्मरण (याद) कर'' यहीं से गलत अर्थ हो जाता है। हमने वेद के मंत्र को देखना है, अनुवाद गलत है, उसे छोड़ देना है।

इस यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 15 का यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

ओम् (ॐ) नाम का स्मरण कार्य करते-करते करो, विशेष तड़फ के साथ करो, मनुष्य जीवन का परम कर्त्तव्य मानकर स्मरण करो, ॐ का जाप मत्यु पर्यन्त करने से इतना अमरत्व प्राप्त हो जाएगा जितना ॐ के स्मरण से होता है।(यजुर्वेद 40/15)

ज्ञानी आत्माओं ने परमात्मा प्राप्ति के लिए हठयोग किया। एक स्थान पर बैठकर घोर तप किया तथा ओम् (ॐ) नाम का जाप किया। जबकि वेदों व गीता में हठ करने, घोर तप करने वाले मूर्ख दम्भी तथा राक्षस बताए हैं। (गीता अध्याय 3 श्लोक 4 से 9, गीता अध्याय 16 श्लोक 17 से 20 तथा गीता अध्याय 17 श्लोक 1 से 6)। बताता हूँ! इनको हठयोग करने की प्रेरणा कहाँ से हुई? श्री देवीपुराण (गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित सचित्र मोटा टाईप) के तीसरे स्कन्ध में लिखा है कि ब्रह्मा जी ने अपने पुत्र नारद को बताया कि जिस समय मेरी उत्पत्ति हुई, मैं कमल के फूल पर बैठा था। आकाशवाणी हुई कि तप करो-तप करो। मैंने एक हजार वर्ष तक तप किया।

पेश हैं गीता अध्याय 3 श्लोक 4-9 की फोटोकॉपियाँ :-

(गीता अध्याय 3 श्लोक 4 की फोटोकॉपी)

न, कर्मणाम्, अनारम्भात्, नैष्कर्म्यम्, पुरुषः, अश्नुते,
न, च, सन्न्यसनात्, एव, सिद्धिम्, समधिगच्छति ॥ ४ ॥

परंतु किसी भी मार्गके अनुसार कर्मोंको स्वरूपसे त्यागनेकी आवश्यकता नहीं है; क्योंकि—

पुरुषः	= मनुष्य	**च**	= और
न	= न (तो)	**न**	= न
कर्मणाम्	= कर्मोंका	**सन्न्यसनात्,**	= (कर्मोंके केवल)
अनारम्भात्	= आरम्भ किये बिना	**एव**	त्यागमात्रसे
नैष्कर्म्यम्	= निष्कर्मताको[१]	**सिद्धिम्**	= सिद्धि यानी
	यानी योग-निष्ठाको		सांख्यनिष्ठाको (ही)
अश्नुते	= प्राप्त होता है	**समधिगच्छति**	= प्राप्त होता है।

(गीता अध्याय 3 श्लोक 5 की फोटोकॉपी)

न, हि, कश्चित्, क्षणम्, अपि, जातु, तिष्ठति, अकर्मकृत्,
कार्यते, हि, अवशः, कर्म, सर्वः, प्रकृतिजैः, गुणैः ॥ ५ ॥

तथा सर्वथा कर्मोंका स्वरूपसे त्याग हो भी नहीं सकता—

हि	= निःसन्देह	**सर्वः**	= सारा मनुष्य-समुदाय
कश्चित्	= कोई भी (मनुष्य)		
जातु	= किसी भी कालमें		
क्षणम्	= क्षणमात्र	**प्रकृतिजैः**	= प्रकृतिजनित
अपि	= भी	**गुणैः**	= गुणोंद्वारा
अकर्मकृत्	= बिना कर्म किये	**अवशः**	= परवश हुआ
न	= नहीं	**कर्म**	= कर्म करनेके लिये
तिष्ठति	= रहता;	**कार्यते**	= बाध्य किया जाता है।
हि	= क्योंकि		

(गीता अध्याय 3 श्लोक 6 की फोटोकॉपी)

कर्मेन्द्रियाणि, संयम्य, यः, आस्ते, मनसा, स्मरन्,
इन्द्रियार्थान्, विमूढात्मा, मिथ्याचारः, सः, उच्यते ॥ ६ ॥

इसलिये—

यः	= जो	**इन्द्रियार्थान्**	= इन्द्रियोंके विषयोंका
विमूढात्मा	= मूढबुद्धि मनुष्य	**स्मरन्**	= चिन्तन करता
कर्मेन्द्रियाणि	= समस्त इन्द्रियों-को (हठपूर्वक ऊपरसे)	**आस्ते**	= रहता है,
		सः	= वह
		मिथ्याचारः	= मिथ्याचारी अर्थात् दम्भी
संयम्य	= रोककर		
मनसा	= मनसे (उन)	**उच्यते**	= कहा जाता है।

(गीता अध्याय 3 श्लोक 7 की फोटोकॉपी)

यः, तु, इन्द्रियाणि, मनसा, नियम्य, आरभते, अर्जुन,
कर्मेन्द्रियैः, कर्मयोगम्, असक्तः, सः, विशिष्यते ॥ ७ ॥

तु	= किंतु	**असक्तः**	= अनासक्त हुआ
अर्जुन	= हे अर्जुन!	**कर्मेन्द्रियैः**	= समस्त इन्द्रियोंद्वारा
यः	= जो (पुरुष)	**कर्मयोगम्**	= कर्मयोगका
मनसा	= मनसे	**आरभते**	= आचरण करता है,
इन्द्रियाणि	= इन्द्रियोंको	**सः**	= वही
नियम्य	= वशमें करके	**विशिष्यते**	= श्रेष्ठ है।

(गीता अध्याय 3 श्लोक 8 की फोटोकॉपी)

नियतम्, कुरु, कर्म, त्वम्, कर्म, ज्यायः, हि, अकर्मणः,
शरीरयात्रा, अपि, च, ते, न, प्रसिद्ध्येत्, अकर्मणः ॥ ८ ॥

इसलिये—

त्वम्	= तू	**ज्यायः**	= श्रेष्ठ है
नियतम्	= शास्त्रविहित	**च**	= तथा
कर्म	= कर्तव्यकर्म	**अकर्मणः**	= कर्म न करनेसे
कुरु	= कर;	**ते**	= तेरा
हि	= क्योंकि	**शरीरयात्रा**	= शरीर-निर्वाह
अकर्मणः	= कर्म न करनेकी अपेक्षा	**अपि**	= भी
		न	= नहीं
कर्म	= कर्म करना	**प्रसिद्ध्येत्**	= सिद्ध होगा।

(गीता अध्याय 3 श्लोक 9 की फोटोकॉपी)

यज्ञार्थात्, कर्मणः, अन्यत्र, लोकः, अयम्, कर्मबन्धनः,
तदर्थम्, कर्म, कौन्तेय, मुक्तसङ्गः, समाचर ॥ ९ ॥

यज्ञार्थात्	= यज्ञके निमित्त किये जानेवाले		(इसलिये)
		कौन्तेय	= हे अर्जुन! (तू)
कर्मणः	= कर्मोंसे अतिरिक्त	**मुक्तसङ्गः**	= आसक्तिसे रहित होकर
अन्यत्र	= दूसरे कर्मोंमें (लगा हुआ ही)	**तदर्थम्**	= उस यज्ञके निमित्त (ही भलीभाँति)
अयम्	= यह		
लोकः	= मनुष्य-समुदाय	**कर्म**	= कर्तव्यकर्म
कर्मबन्धनः	= कर्मोंसे बँधता है।	**समाचर**	= कर।

उपरोक्त गीता अध्याय 3 के श्लोक 4-9 में कहा है कि मनुष्य समुदाय प्रकति (दुर्गा) जनित यानि दुर्गा देवी से उत्पन्न तीनों गुण (ब्रह्मा रजगुण, विष्णु सतगुण तथा शिव तमगुण) जीव को कर्म करने के लिए बाध्य करते हैं। जिस कारण से कोई भी जीव किसी समय में भी कर्म किए बिना नहीं रह सकता। जो मूर्ख ढोंग करके एक स्थान पर बैठकर साधना करते दिखाई देते हैं, वे तन हठ करते हैं यानि हठ योग करके तप करते हैं। मन से अन्य बातों को चिंतन करते रहते हैं। वे दंभी कहे जाते हैं। इसके बजाय मन को ज्ञान से रोककर अपने कर्म करते हुए साधना करना श्रेष्ठ है। कर्म न करने यानि एक स्थान पर आसन विशेष पर बैठकर तप आदि करने की अपेक्षा कर्म करते हुए साधना करना श्रेष्ठ है। हे अर्जुन! यदि कर्म न करेगा, एक स्थान पर बैठ गया तो तेरा निर्वाह कैसे चलेगा? (यज्ञार्थात्) यज्ञ यानि धार्मिक अनुष्ठानों के निमित किए जाने वाले (कर्मणा) कर्मों के अतिरिक्त (अन्यत्र) दूसरे कर्मों में लगा हुआ मनुष्य समुदाय (कर्म बंधनः) कर्मों से बँधता है यानि भक्ति तथा सत्संग व सेवा, दान आदि न करके अन्य कर्म करने से मानव को कर्म बाँधते हैं यानि जन्म-मरण के चक्र में डालते हैं। इसलिए हे अर्जुन! तू धार्मिक अनुष्ठान व भक्ति के निमित कर्तव्य कर्म कर, घोर तप न कर।

पेश है गीता अध्याय 16 श्लोक 17-20 की फोटोकॉपियाँ :-

(गीता अध्याय 16 श्लोक 17 की फोटोकॉपी)

आत्मसम्भाविताः, स्तब्धाः, धनमानमदान्विताः,
यजन्ते, नामयज्ञैः, ते, दम्भेन, अविधिपूर्वकम्॥ १७॥

तथा—

ते	= वे	**नामयज्ञैः**	= केवल नाममात्रके यज्ञोंद्वारा
आत्मसम्भाविताः	= अपने-आपको ही श्रेष्ठ माननेवाले	**दम्भेन**	= पाखण्डसे
स्तब्धाः	= घमण्डी पुरुष	**अविधिपूर्वकम्**	= शास्त्रविधिरहित
धनमानमदान्विताः	= धन और मानके मदसे युक्त होकर	**यजन्ते**	= यजन करते हैं।

(गीता अध्याय 16 श्लोक 18 की फोटोकॉपी)

अहङ्कारम्, बलम्, दर्पम्, कामम्, क्रोधम्, च, संश्रिताः,
माम्, आत्मपरदेहेषु, प्रद्विषन्तः, अभ्यसूयकाः॥ १८॥

तथा वे—

अहङ्कारम्	= अहंकार,	**अभ्यसूयकाः**	= दूसरोंकी निन्दा करनेवाले पुरुष
बलम्	= बल,		
दर्पम्	= घमण्ड,	**आत्मपरदेहेषु**	= अपने और दूसरोंके शरीरमें (स्थित)
कामम्	= कामना, (और)		
क्रोधम्	= क्रोधादिके	**माम्**	= मुझ अन्तर्यामीसे
संश्रिताः	= परायण	**प्रद्विषन्तः**	= द्वेष करनेवाले होते हैं।
च	= और		

(गीता अध्याय 16 श्लोक 19 की फोटोकॉपी)

तान्, अहम्, द्विषतः, क्रूरान्, संसारेषु, नराधमान्,
क्षिपामि, अजस्रम्, अशुभान्, आसुरीषु, एव, योनिषु॥ १९॥

ऐसे—

तान्	= उन	**संसारेषु**	= संसारमें
द्विषतः	= द्वेष करनेवाले	**अजस्रम्**	= बार-बार
अशुभान्	= पापाचारी (और)	**आसुरीषु**	= आसुरी
क्रूरान्	= क्रूरकर्मी	**योनिषु**	= योनियोंमें
नराधमान्	= नराधमोंको	**एव**	= ही
अहम्	= मैं	**क्षिपामि**	= डालता हूँ।

(गीता अध्याय 16 श्लोक 20 की फोटोकॉपी)

आसुरीम्, योनिम्, आपन्नाः, मूढाः, जन्मनि, जन्मनि,
माम्, अप्राप्य, एव, कौन्तेय, ततः, यान्ति, अधमाम्, गतिम्॥ २०॥

इसलिये—

कौन्तेय	= हे अर्जुन!	**योनिम्**	= योनिको
मूढाः	= वे मूढ	**आपन्नाः**	= प्राप्त होते हैं, (फिर)
माम्	= मुझको	**ततः**	= उससे भी
अप्राप्य	= न प्राप्त होकर	**अधमाम्**	= अति नीच
एव*	= ही	**गतिम्**	= गतिको
जन्मनि	= जन्म-	**यान्ति**	= प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरकोंमें पड़ते हैं।
जन्मनि	= जन्ममें		
आसुरीम्	= आसुरी		

उपरोक्त गीता अध्याय 16 श्लोक 17-20 में बताया है कि जो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करते हैं, वे अपने आप चुनी हुई भक्ति साधना करते हैं। वे अपने आप को ही श्रेष्ठ मानने वाले घमंडी पुरूष शास्त्रविधि रहित (यजन्ते) भक्ति करते हैं। वे शास्त्र विरूद्ध साधना करने वाले मेरी बात न मानकर मेरे से द्वेष करने वाले होते हैं। उन द्वेष करने वाले यानि मनमाना आचरण करने वाले (अशुभान्) पाप कर्म करने वाले पापाचारी (क्रूरान्) क्रूरकर्मी (नराधमान्) नीच मनुष्यों को संसार में बार-बार आसुरी योनियों में डालता हूँ। हे अर्जुन! वे मूढ यानि मूर्ख मुझको न प्राप्त होकर जन्म-जन्म में आसुरी (राक्षस) योनि यानि जन्म को प्राप्त होते हैं। फिर उससे भी (अधमाम्) अति नीच (गतिम) गति को (यान्ति) प्राप्त होते हैं।

➢ विचार :- गीता में स्पष्ट है कि जो एक स्थान पर बैठकर घोर तप करते हैं, वे मूर्ख, राक्षस व्यक्ति हैं। घोर नरक में गिरते हैं। नीच योनियों को प्राप्त होते हैं। आप जी ने श्री देवी पुराण के प्रथम स्कंध के अध्याय 4 में पढ़ा कि श्री विष्णु जी घोर तप कर रहे थे। श्री विष्णु जी ने कहा है कि मैं तप करता रहता हूँ। फिर राक्षसों को मारता हूँ। कभी अवसर मिला तो लक्ष्मी के साथ सुखपूर्वक समय बिताने का सौभाग्य प्राप्त होता है। ''गीता जी में तप करने वालों को मूर्ख (नराधम) नीच मनुष्य क्रूरकर्मी राक्षस कहा है। श्री विष्णु जी तप करने में लगे रहते हैं। इससे यह भी सिद्ध होता है कि श्री कष्ण जी को गीता ज्ञान का क, ख भी पता नहीं था। महादुःखी रहते हैं। कभी घोर तप करते हैं। सिद्धि प्राप्त करके राक्षसों से युद्ध करते रहते हैं। नरकीय जीवन जी रहे हैं। परमेश्वर कबीर जी ने कहा वह सत्य सिद्ध होता है कि :-

''ब्रह्मा, विष्णु, शिव जी दुःखिया जिन याह राह **(जन्म-मरण की परम्परा)** चलाई हो।
''साच कहूँ तो जगत नहीं माने झूठों जगत पतियाई हो।''

जब आपके श्री कष्ण उर्फ श्री विष्णु जी ही गलत साधना करते हैं तो आप उनके पुजारियों का क्या हाल होगा? आपको यथार्थ भक्ति का ज्ञान नहीं है और आगे पढ़ें गीता अध्याय 17 श्लोक 1-6 में।

जैसे गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि जो साधक शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करते हैं। उनको न तो सुख की प्राप्ति होती है, न उनको सिद्धि प्राप्त होती है यानि कोई कार्य सिद्ध नहीं होता, न उनकी गति (मुक्ति) होती है। इसलिए अर्जुन! शास्त्रों

में वर्णित विधि से साधना कर। अध्याय 16 में कुल 24 श्लोक हैं। इसके पश्चात् अध्याय 17 प्रारंभ हो जाता है जिसके श्लोक नं. 1-6 में इसी से संबंधित प्रसंग है। अर्जुन ने गीता अध्याय 17 श्लोक 1 में प्रश्न किया कि हे कष्ण! (क्योंकि अर्जुन को तो श्री कष्ण ही बोलता दिखाई दे रहा था। इसलिए कष्ण कहा है) ये जो मनुष्य शास्त्रविधि त्यागकर श्रद्धायुक्त होकर देवादि यानि देवी-देवताओं की पूजा करते हैं, उनकी स्थिति कौन-सी है? सात्विक, राजसी वा तामसी? गीता ज्ञान देने वाले ने बताया कि उनकी भक्ति तो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण ही है, परंतु वे अपने-अपने स्वभाव अनुसार भक्ति के लिए इष्ट चुनते हैं। जो अच्छे स्वभाव के (सात्विक) हैं, वे देवताओं की पूजा करते हैं। (गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 तथा 20-23 में देवताओं के पुजारियों को राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख कहा है।) देवताओं की पूजा शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण होने से व्यर्थ बताई है, नहीं करनी चाहिए। जो यक्षों की पूजा करते हैं, वे राजस गुण से युक्त हैं तथा जो भूत, प्रेत, पित्तरों को पूजते हैं, उनका स्वभाव तामस गुण युक्त होता है। जो साधक जन शास्त्रविधि से रहित घोर तप को तपते हैं, वे दंभी, अहंकारी व्यक्ति शरीर में स्थित मुझे तथा अन्य प्राणियों {कमल चक्रों में ब्रह्मा, विष्णु, शिव, गणेश व दुर्गा देवी आदि को}, मुझको (काल ब्रह्म को) भी कश करने वाले हैं। उन अज्ञानियों को असुर (राक्षस) स्वभाव के जान।

पेश है गीता अध्याय 17 श्लोक 1-6 की फोटोकॉपियाँ :-

(गीता अध्याय 17 श्लोक 1 की फोटोकॉपी)

ये, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, यजन्ते, श्रद्धया, अन्विताः,
तेषाम्, निष्ठा, तु, का, कृष्ण, सत्त्वम्, आहो, रजः, तमः ॥ १ ॥

इस प्रकार भगवान्के वचनोंको सुनकर अर्जुन बोले—

कृष्ण	= हे कृष्ण!	**तेषाम्**	= उनकी
ये	= जो मनुष्य	**निष्ठा**	= स्थिति
शास्त्रविधिम्	= शास्त्रविधिको	**तु**	= फिर
उत्सृज्य	= त्यागकर	**का**	= कौन-सी है?
श्रद्धया	= श्रद्धासे	**सत्त्वम्**	= सात्त्विकी है
अन्विताः	= युक्त हुए	**आहो**	= अथवा
यजन्ते	= { देवादिका पूजन	**रजः**	= राजसी (किंवा)
	करते हैं,	**तमः**	= तामसी?

(गीता अध्याय 17 श्लोक 2 की फोटोकॉपी)

त्रिविधा, भवति, श्रद्धा, देहिनाम्, सा, स्वभावजा,
सात्त्विकी, राजसी, च, एव, तामसी, च, इति, ताम्, शृणु॥ २॥

इस प्रकार अर्जुनके पूछनेपर श्रीकृष्णभगवान् बोले—हे अर्जुन!—

देहिनाम्	= मनुष्योंकी	**च**	= तथा
सा	= वह (शास्त्रीय संस्कारोंसे रहित केवल)	**तामसी**	= तामसी—
		इति	= ऐसे
		त्रिविधा	= तीनों प्रकारकी
स्वभावजा	= स्वभावसे उत्पन्न*	**एव**	= ही
श्रद्धा	= श्रद्धा	**भवति**	= होती है।
सात्त्विकी	= सात्त्विकी	**ताम्**	= उसको (तू)
च	= और	**(मत्तः)**	= मुझसे
राजसी	= राजसी	**शृणु**	= सुन।

(गीता अध्याय 17 श्लोक 3 की फोटोकॉपी)

सत्त्वानुरूपा, सर्वस्य, श्रद्धा, भवति, भारत,
श्रद्धामयः, अयम्, पुरुषः, यः, यच्छ्रद्धः, सः, एव, सः ॥ ३॥

भारत	= हे भारत!	**श्रद्धामयः**	= श्रद्धामय है,
सर्वस्य	= सभी मनुष्योंकी	**(अतः)**	= इसलिये
श्रद्धा	= श्रद्धा	**यः**	= जो पुरुष
सत्त्वानुरूपा	= उनके अन्तःकरणके अनुरूप	**यच्छ्रद्धः**	= जैसी श्रद्धावाला है,
भवति	= होती है।	**सः**	= वह स्वयं
अयम्	= यह	**एव**	= भी
पुरुषः	= पुरुष	**सः**	= वही है।

(गीता अध्याय 17 श्लोक 4 की फोटोकॉपी)

यजन्ते, सात्त्विकाः, देवान्, यक्षरक्षांसि, राजसाः,
प्रेतान्, भूतगणान्, च, अन्ये, यजन्ते, तामसाः, जनाः ॥ ४॥

उनमें—

सात्त्विकाः	= सात्त्विक पुरुष	**अन्ये**	= अन्य (जो)
देवान्	= देवोंको	**तामसाः**	= तामस
यजन्ते	= पूजते हैं,	**जनाः**	= मनुष्य हैं, (वे)
राजसाः	= राजस पुरुष	**प्रेतान्**	= प्रेत
यक्षरक्षांसि	= यक्ष और राक्षसोंको (तथा)	**च**	= और
		भूतगणान्	= भूतगणोंको
		यजन्ते	= पूजते हैं।

(गीता अध्याय 17 श्लोक 5 की फोटोकॉपी)

अशास्त्रविहितम्, घोरम्, तप्यन्ते, ये, तपः, जनाः,
दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः, कामरागबलान्विताः ॥ ५ ॥

और हे अर्जुन!—

ये	= जो	दम्भाहङ्कारसंयुक्ताः	= दम्भ और अहंकारसे युक्त (एवं)
जनाः	= मनुष्य		
अशास्त्रविहितम्	= शास्त्रविधिसे रहित (केवल मनः-कल्पित)		
घोरम्	= घोर	कामरागबलान्विताः	= कामना, आसक्ति और बलके अभिमानसे भी युक्त हैं—
तपः	= तपको		
तप्यन्ते	= तपते हैं (तथा)		

(गीता अध्याय 17 श्लोक 6 की फोटोकॉपी)

कर्शयन्तः, शरीरस्थम्, भूतग्रामम्, अचेतसः, माम्,
च, एव, अन्तःशरीरस्थम्, तान्, विद्धि, आसुरनिश्चयान् ॥ ६ ॥

तथा जो—

शरीरस्थम्	= शरीररूपसे स्थित	**कर्शयन्तः**	= कृश करनेवाले हैं[2],
भूतग्रामम्	= भूत-समुदायको[1]	**तान्**	= उन
च	= और	**अचेतसः**	= अज्ञानियोंको (तू)
अन्तःशरीरस्थम्	= अन्तःकरणमें स्थित	**आसुरनिश्चयान्**	= आसुर-स्वभाववाले
माम्	= मुझ परमात्माको		
एव	= भी	**विद्धि**	= जान।

कबीर परमेश्वर जी ने कहा कि हे धर्मदास! ब्रह्माजी को वेद तो बाद में सागर मन्थन में मिले थे। उनको पढ़ा तो यजुर्वेद अध्याय 40 के मन्त्र 15 में 'ओम्'' नाम मिला। उसका जाप तथा आकाशवाणी से सुना हठयोग (घोर तप) दोनों मिलाकर ब्रह्मा जी स्वयं करने लगे तथा अपनी सन्तानों (ऋषियों) को बताया। (चारों वेदों तथा इन्हीं का निष्कर्ष श्रीमद्भगवत गीता में हठ करके घोर तप करने वालों को राक्षस, क्रूरकर्मी, नराधम यानि नीच व्यक्ति कहा है। प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 17-20 तथा अध्याय 17 श्लोक 1-6 में।) वही साधना ज्ञानी आत्मा ऋषिजन करने लगे। उन ज्ञानी आत्माओं में से एक चुणक ऋषि का प्रसंग सुनाता हूँ जिससे आप के प्रश्न का सटीक उत्तर मिल जाएगाः- एक चुणक नाम का ऋषि था। उसने हजारों वर्षों तक घोर तप किया तथा ओम् (ॐ) नाम का जाप किया। यह ब्रह्म की भक्ति है। ब्रह्म ने प्रतिज्ञा कर रखी है कि मैं किसी साधना यानि न वेदों में वर्णित यज्ञों से, न जप से, न तप से, किसी को भी दर्शन नहीं दूँगा। गीता अध्याय 11 श्लोक 48 में कहा है कि हे अर्जुन! तूने मेरे जिस रुप के दर्शन किए अर्थात् मेरा यह काल रुप देखा, यह मेरा स्वरुप है। इसको न तो वेदों में वर्णित विधि से देखा जा सकता, न किसी जप से, न तप से, न यज्ञ से तथा न किसी क्रिया से देखा जा सकता। गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय

7 श्लोक 24-25 में स्पष्ट किया है कि यह मेरा अविनाशी विधान है कि मैं कभी किसी को दर्शन नहीं देता, अपनी योग माया से छिपा रहता हूँ। ये मूर्ख लोग मुझे मनुष्य रूप अर्थात् कष्ण रूप में मान रहे हैं। जो सामने सेना खड़ी थी, उसकी ओर संकेत करके गीता ज्ञान दाता कह रहा था। कहने का भाव था कि मैं कभी किसी को दर्शन नहीं देता, अब तेरे ऊपर अनुग्रह करके यह अपना रूप दिखाया है।

भावार्थ :- वेदों में वर्णित विधि से तथा अन्य प्रचलित क्रियाओं से ब्रह्म प्राप्ति नहीं है। इसलिए उस चुणक ऋषि को परमात्मा प्राप्ति तो हुई नहीं, सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। ऋषियों ने उसी को भक्ति की अन्तिम उपलब्धि मान लिया। जिसके पास अधिक सिद्धियाँ होती थी, वह अन्य ऋषियों से श्रेष्ठ माना जाने लगा। यही उपलब्धि चुणक ऋषि को हुई थी।

एक मानधाता चक्रवर्ती राजा (जिसका राज्य पूरी पथ्वी पर हो, ऐसा शक्तिशाली राजा) था। उसके पास 72 अक्षौणी सेना थी। राजा ने अपने आधीन राजाओं को कहा कि जिसको मेरी पराधीनता स्वीकार नहीं, वे मेरे साथ युद्ध करें, एक घोड़े के गले में एक पत्र बाँध दिया कि जिस राजा को राजा मानधाता की आधीनता स्वीकार न हो, वो इस घोड़े को पकड़ ले और युद्ध के लिए तैयार हो जाए। पूरी पथ्वी पर किसी भी राजा ने घोड़ा नहीं पकड़ा। घोड़े के साथ कुछ सैनिक भी थे। वापिस आते समय ऋषि चुणक ने पूछा कि कहाँ गए थे सैनिको! उत्तर मिला कि पूरी पथ्वी पर घूम आए, किसी ने घोड़ा नहीं पकड़ा। किसी ने राजा का युद्ध नहीं स्वीकार किया। ऋषि ने कहा कि मैंने यह युद्ध स्वीकार लिया। सैनिक बोले हे कंगाल! तेरे पास दाने तो खाने को हैं नहीं और युद्ध करेगा महाराजा मानधाता के साथ? ऋषि चुणक जी ने घोड़ा पकड़कर वक्ष से बाँध लिया। मानधाता राजा को पता चला तो युद्ध की तैयारी हुई। राजा ने 72 अक्षौणी सैना की चार टुकड़ियाँ बनाई। ऋषि पर हमला करने के लिए एक टुकड़ी 18 अक्षौणी (एक अक्षौणी में लगभग पैदल + रथों पर + हाथियों व घोड़ों पर सवार सैनिक दो लाख अठारह हजार होते थे।) सेना भेज दी । दूसरी ओर ऋषि ने अपनी सिद्धि से चार पूतलियाँ बनाई। एक पुतली छोड़ी जिसने राजा की 18 अक्षौणी सेना का नाश कर दिया। राजा ने दूसरी टुकड़ी छोड़ी। ऋषि ने दूसरी पुतली छोड़ी, उसने दूसरी टुकड़ी 18 अक्षौणी सेना का नाश कर दिया। इस प्रकार चुणक ऋषि ने मानधाता राजा की चार पुतलियों से 72 अक्षौणी सेना नष्ट कर दी। जिस कारण से महर्षि चुणक की महिमा पूरी पथ्वी पर फैल गई। इस अनर्थ के कारण सर्वश्रेष्ठ ऋषि माना गया।

हे धर्मदास! (जिन्दा रुप धारी परमात्मा बोले) ऋषि चुणक ने जो सेना मारी, ये पाप कर्म ऋषि के संचित कर्मों में जमा हो गए। ऋषि चुणक ने जो ॐ (ओम्) एक अक्षर का जाप किया, वह उसके बदले ब्रह्मलोक में जाएगा। फिर अपना ब्रह्म लोक का सुख समय व्यतीत करके पथ्वी पर जन्मेगा। जो हठ योग तप किया, उसके कारण पथ्वी पर राजा बनेगा। फिर मत्यु के उपरान्त कुत्ते का जन्म होगा। जो 72 अक्षौणी सेना मारी थी, वह अपना बदला लेगी। कुत्ते के सिर में जख्म होगा और उसमें कीड़े बनकर 72 अक्षौणी सेना अपना बदला चुकाएगी। इसलिए हे धर्मदास! गीता ज्ञान दाता (ब्रह्म) ने अपनी साधना से होने वाली गति यानि मुक्ति को अनुत्तम (अश्रेष्ठ) कहा है।

कष्ण जी के वकील :- श्री कष्ण जी ने मोरध्वज राजा के पुत्र ताम्रध्वज को जीवित किया था जो ऑरे (Wood Cutter) से बीचों-बीच चीरकर दो फाड़ कर दिया था, मर गया था। क्या इनमें शक्ति नहीं है?

परमेश्वर कबीर जी का वकील :- श्री कष्ण जी ने राजा मोरध्वज के पुत्र ताम्रध्वज को तो जीवित कर दिया, परंतु अपने सगे भानजे सुभद्रा पुत्र अभिमन्यु को जीवित नहीं कर सके जो महाभारत के युद्ध में छोटी आयु में ही मारा गया था। पांडवों का एकमात्र पुत्र था।

कारण स्पष्ट है कि श्री कष्ण अर्थात् श्री विष्णु जी समर्थ परमात्मा नहीं हैं। ये तीन लोक (पथ्वी, पाताल तथा स्वर्ग) के प्रभु हैं। इनकी शक्ति सीमित है। परमेश्वर कबीर जी अनंत करोड़ ब्रह्मडों के स्वामी (प्रभु) हैं। इनकी शक्ति का कोई वार-पार नहीं है। वेदों में इस परमेश्वर को अमित औजा (विसीमित शक्ति युक्त) कहा है।

श्री कष्ण जी किसी की आयु न तो घटा सकते हैं, न बढ़ा सकते हैं। न किसी के प्रारब्ध कर्म को बदल सकते हैं। जिसकी किस्मत में जो पूर्व निर्धारित है, वही दे सकते हैं।

ताम्रध्वज की आयु शेष थी। जिस कारण उसको जीवित कर दिया। अभिमन्यु की आयु शेष नहीं थी। जिस कारण से उसको श्री कष्ण जी जीवित नहीं कर सके। पांडव रो रहे थे, श्री कष्ण जी दुःखी थे। बहन सुभद्रा पुत्र मत्यु शोक से व्याकुल थी। सन्नाटा छाया था। श्री कष्ण जी कुछ मदद नहीं कर पाए क्योंकि वे समर्थ प्रभु नहीं हैं।

परमेश्वर कबीर जी समर्थ परमेश्वर हैं। ये भक्त/भक्तमति के प्रारब्ध कर्म को भी बदल सकते हैं। संत गरीबदास जी ने कहा है कि :-

गरीब, मासा घटै ना तिल बढ़ै, विधना लिखे जो लेख। साचा सतगुरू मेट कर, ऊपर मारै मेख।।
गरीब, जम जौरा जा से डरैं, मिटें कर्म के लेख। अदली असल कबीर हैं, कुल के सतगुरू एक।।

अर्थात् जीव के कर्मों के अनुसार जो प्रारब्ध बनाया गया है। उसमें जरा-सा भी फेरबदल पूर्ण परमात्मा के बिना कोई नहीं कर सकता। पूर्ण परमात्मा जी संत व सतगुरू रूप में संत गरीबदास जी को मिले थे जो कबीर जी थे। इसलिए कहा है कि साचा सतगुरू यानि कबीर परमेश्वर जी प्रारब्ध (भाग्य) के लेख को (ऊपर मारै मेख) सदा के लिए समाप्त कर देता है। भक्त/भक्तमति की आयु भी बढ़ा सकता है। मुर्दे को भी जीवित कर देता है। वेदों में भी यही प्रमाण है।

ऋग्वेद मंडल नं. 10 सूक्त 161 मंत्र नं. 2 में कहा है कि परमेश्वर अपने साधक के असाध्य रोग को भी समाप्त करके स्वस्थ कर देता है। यदि साधक मत्यु को प्राप्त होकर परलोक चला गया है तो उसको मत्यु देवता से छुड़वाकर जीवित करके (शत) सौ वर्ष की आयु प्रदान कर देता है।

पेश है प्रमाण के लिए ऋग्वेद मंडल 10 सूक्त 161 मंत्र 2 की फोटोकॉपी :-

यदि क्षितायुर्यदि वा परेतो यदि मृत्योरन्तिकं नीत एव ।
तमा हरामि निर्ऋतेरुपस्थादस्पार्षमेनं शतशारदाय ॥२॥

पदार्थः—(यदि क्षितायुः) यदि किसी रोगी की जीवन शक्ति समाप्त हो, (यदि वा परा इतः) यदि वह सीमा से भी परे हो गया है, (यदि मृत्योः अन्तिकं) यदि वह मृत्यु के सन्निकट (नीतः एव) चला गया है, तो भी (तम्) उसे मैं (निर्ऋतेः उपस्थात् आ हरामि) भारी कष्टप्रद रोग के पंजे से मुक्त कराऊं तथा (एनं) उसे (शत-शारदाय) शत वर्ष के जीवन हेतु (अस्पार्षम्) बल-सम्पन्न करूं ॥२॥

★ अदालत में प्रमाणित करता हूँ कि समर्थ परमेश्वर कबीर जी काशी वाला जुलाहा है। आप

जी (श्री कष्ण उर्फ श्री विष्णु जी के वकील) भी सुनो अमर कथाएँ उस अमर परमेश्वर कबीर जी जुलाहे (धाणक) की। श्री कष्ण जी ने राजा मोरध्वज के पुत्र ताम्रध्वज को जीवित किया। इसी प्रकार कबीर परमेश्वर जी ने सम्मन के लड़के सेऊ को जीवित किया। कथा इस प्रकार है :-

''नेकी, सेऊ, सम्मन के बलिदान की कथा''

जिस समय परमेश्वर कबीर जी ने काशी में एक सौ बीस वर्ष लीला की थी, उस समय दिल्ली के निवासी सम्मन जाति से मनियार, उसकी पत्नी नेकी तथा पुत्र शिव (सेऊ) ने परमेश्वर से दीक्षा ली थी। आर्थिक स्थिति कमजोर थी। परमात्मा के उपदेश का दढ़ता से पालन करते थे। परमेश्वर पर पूर्ण विश्वास था। दोनों पति-पत्नी स्त्रियों को चूड़ियाँ पहनाने का कार्य घर-घर जाकर करते थे। साथ में अपने गुरूदेव कबीर जी की महिमा भी किया करते थे।

बताया करते थे कि हमारे सतगुरू देव जी ने राजा सिकंदर लोधी का असाध्य रोग आशीर्वाद मात्र से ठीक कर दिया। बादशाह सिकंदर ने स्वामी रामानन्द जी की गर्दन काट दी थी। उसको सतगुरू कबीर जी ने धड़ पर गर्दन जोड़कर जीवित कर दिया। एक कमाल नाम का लड़का मर गया था। उसके कबीले वालों ने अंतिम संस्कार रूप में दरिया में प्रवाह कर दिया था। शेखतकी जो राजा सिकंदर जी का धर्मगुरू है, उसको विश्वास नहीं था कि रामानंद जी की गर्दन काटने के पश्चात् भी कबीर जी ने जीवित कर दिया। वह राजा से कहता था कि कबीर जन्त्र-मन्त्र जानता है और कुछ नहीं है, मुर्दे कभी जिंदे नहीं होते। मेरे सामने कोई मुर्दा जिन्दा करे तो मानूँ।

{राजा सिकंदर को कबीर जी पर पूर्ण विश्वास था क्योंकि वह तो रोग से महादुःखी था तथा रामानन्द स्वामी जी को अपने हाथों से कत्ल किया था। उसके सामने कबीर जी ने जीवित किया था।} शेखतकी भी दरिया पर उपस्थित था। मुर्दे को देखकर कहा कि यदि मेरे सामने इस मुर्दे को जीवित कर दे तो मैं कबीर को अल्लाह का नबी मान लूँगा।

कबीर जी ने कहा कि हे शेख जी! आप भी बड़े पहुँचे हुए पीर हो, आप कोशिश करो, बाद में कहोगे कि मैं भी कर देता। उपस्थित सर्व मन्त्रियों और बादशाह ने भी यही कहा कि आप कौन-से छोटी हस्ती हो? कर दो काम।

शेखतकी ने शर्म के मारे जन्त्र-मन्त्र किए, परंतु व्यर्थ। कहा कि मुर्दे जिन्दा नहीं हुआ करते। कबीर तो चाहता है कि मुर्दा बहकर दूर चला जाए और इज्जत रह जाए। वह चला गया मुर्दा। कबीर जी ने अपने हाथ का संकेत किया और कहा मुर्दा वापिस आओ। इन्जन वाली नौका के समान बालक का शव वापिस आ गया। कबीर जी ने कहा, हे जीवात्मा! जहाँ भी है, कबीर हुक्म से शव में प्रवेश कर और बाहर आओ। उसी समय वह 12 वर्षीय बालक जीवित होकर दरिया से बाहर आ गया। उपस्थित दर्शकों ने कहा, कबीर जी! कमाल कर दिया। बालक का नाम कमाल रख दिया। परमात्मा कबीर जी ने उस कमाल बालक को अपने घर बच्चे की तरह पाला। शेखतकी शर्म से पानी-पानी हो गया, परंतु माना नहीं। कहने लगा कि बालक को सदमा हुआ था। गलती से मत मानकर जल प्रवाह कर दिया था। जब जानूँ, मेरी बेटी कई दिनों से कब्र में दबा रखी है। वह मत्यु को प्राप्त हो चुकी है। उसको कबीर जीवित कर दे।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि दो दिन बाद तेरी बेटी को जीवित कर दूँगा। आसपास के गाँव तथा दिल्ली में मुनादी करा दो कि सब आकर देखें। ऐसा ही किया गया। कब्र तोड़ दी गई।

कबीर परमेश्वर जी ने कहा, शेख जी! प्रयत्न करो, कहीं बाद में कहे कि लड़की सदमे में थी। उपस्थित जनता ने कहा कि कबीर जी! यदि शेख में शक्ति होती तो अपनी बेटी को कैसे मरने देता? आप कोशिश करो। कबीर जी ने कहा कि हे शेखतकी की बेटी! जीवित हो जा। लड़की जीवित नहीं हुई। ऐसा दो बार कहा। लड़की जीवित नहीं हुई। शेखतकी को अपनी बेटी के जीवित न होने का दुःख नहीं, कबीर जी की हार की खुशी मनाने लगा और ताली बजाते हुए नाचने लगा। कबीर जी ने कहा, हे जीवात्मा! जहाँ भी हो, कबीर हुक्म से अपने शरीर में प्रवेश कर और कब्र से बाहर आओ। कहने की देरी थी, उसी समय 12 वर्षीय कन्या के शरीर में हलचल हुई और लड़की उठकर बाहर आई और कबीर जी को दण्डवत् प्रणाम किया। परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि हे शेखतकी की बेटी! अपने पिता के साथ घर जाओ। शेखतकी ने भी बेटी का हाथ पकड़ा और घर चलने को कहा। कन्या का नाम कमाली रखा क्योंकि उपस्थित जनता ने कहा, कमाल है, कमाल है। इसलिए कमाली नाम रखा।

कमाली ने कहा कि शेखतकी की ओर से तो मैं यमराज के पास जा चुकी थी। अब तो मैं अल्लाह अकबर की बेटी हूँ। यह कबीर स्वयं अल्लाह है। इस प्रकार लड़की ने कबीर परमेश्वर जी के आशीर्वाद से 1½ घण्टे तक प्रवचन किए। अपने पूर्व के जन्मों की जानकारी दी कि एक बार मैं राबिया थी। उस समय 12 वर्ष की आयु में कबीर जी मिले थे। मैंने 4 वर्ष इनकी बताई साधना की थी। फिर अपने मुसलमान धर्म वाली साधना करने लगी थी जो व्यर्थ थी। फिर मैं बांसुरी लड़की बनी। मक्के में अपना शरीर भी काटकर अर्पित कर दिया था। अगले जन्म में मैंने वैश्या का जीवन जीया। उन चार वर्ष की सत्यभक्ति से मुझे 2½ जन्म मनुष्य के मिले थे। अब मेरा कोई मानव जीवन शेष नहीं था। पशु की योनि में जाना था। उसी समय परमेश्वर कबीर जी धर्मराज के पास गए और मुझे छुड़ाकर लाए और शरीर में प्रवेश कर दिया। इनकी कपा से मुझे मानव जीवन मिला है। अब मैं अपने वास्तविक पिता अल्लाह कबीर जी के साथ रहूँगी।

कबीर जी ने कमाली को बेटी की तरह पाला और अपने घर पर रखा। उपस्थित लाखों की सँख्या में दर्शकों ने परमेश्वर कबीर जी से दीक्षा ली। सबको प्रथम 5 मन्त्र का उपदेश दिया। {इस प्रकार कबीर जी के उस समय 64 लाख शिष्य हो गए थे। वे चमत्कार देखकर ही शरण में आए थे।} दिल्ली नगर की स्त्रियाँ नेकी तथा सम्मन से ये अनोखी बातें सुनकर बाद में चर्चा करती थी कि क्या ये बातें सम्भव हो सकती हैं? कुछ तो कहती थी कि हमारे घर वाला भी उस समय वहीं उपस्थित था। जब शेख की लड़की कब्र से निकालकर जीवित की गई थी, परंतु मेरा पति इस बात से नाराज हुआ कि कबीर क्यों ले गया लड़की को? जिसकी बेटी थी, उसको सौंप देनी थी।

भावार्थ है कि कुल मिलाकर वे स्त्रियां अंदर से मजाक रूप में मानती थी, परंतु उनके सम्मुख चुप रह जाती थी।

एक समय साहेब कबीर अपने भक्त सम्मन के यहाँ अचानक दो सेवकों (कमाल व शेखफरीद) के साथ पहुँच जाते हैं। सम्मन के घर कुल तीन प्राणी थे। सम्मन, सम्मन की पत्नी नेकी और सम्मन का पुत्र सेऊ (शिव)। भक्त सम्मन इतना गरीब था कि कई बार अन्न भी घर पर नहीं होता था। सारा परिवार भूखा सो जाता था। आज वही दिन था। भक्त सम्मन ने अपने गुरुदेव कबीर साहेब से पूछा कि साहेब खाने का विचार बताएँ, खाना कब खाओगे?

कबीर साहेब ने कहा कि भाई भूख लगी है। भोजन बनाओ। सम्मन अन्दर घर में जा कर अपनी

पत्नी नेकी से बोला कि अपने घर अपने गुरुदेव भगवान आए हैं। जल्दी से भोजन तैयार करो।

नेकी ने कहा कि घर पर अन्न का एक दाना भी नहीं है।

सम्मन ने कहा पड़ोस वालों से उधार मांग लाओ।

नेकी ने कहा कि मैं मांगने गई थी लेकिन किसी ने भी उधार आटा नहीं दिया। उन्होंने आटा होते हुए भी जान बूझ कर नहीं दिया और कह रहे हैं कि आज तुम्हारे घर तुम्हारे गुरु जी आए हैं। तुम कहा करते थे कि हमारे गुरु जी भगवान हैं। आपके गुरु जी भगवान हैं तो तुम्हें माँगने की आवश्यकता क्यों पड़ी? ये ही भर देगें तुम्हारे घर को आदि-2 कह कर मजाक करने लगे।

सम्मन ने कहा लाओ आपका चीर गिरवी रख कर तीन सेर आटा ले आता हूँ।

नेकी ने कहा यह चीर फटा हुआ है। इसे कोई गिरवी नहीं रखता। सम्मन सोच में पड़ जाता है और अपने दुर्भाग्य को कोसते हुए कहता है कि मैं कितना अभागा हूँ। आज घर भगवान आए और मैं उनको भोजन भी नहीं करवा सकता। हे परमात्मा! ऐसे पापी प्राणी को पथ्वी पर क्यों भेजा। मैं इतना नीच रहा हूँगा कि पिछले जन्म में कोई पुण्य नहीं किया। अब सतगुरु को क्या मुंह दिखाऊँ? यह कह कर अन्दर कोठे में जा कर फूट-2 कर रोने लगा।

तब उसकी पत्नी नेकी कहने लगी कि हिम्मत करो। रोवो मत। परमात्मा आए हैं। इन्हें ठेस पहुँचेगी। सोचेंगे हमारे आने से तंग आ कर रो रहा है। सम्मन चुप हुआ। फिर नेकी ने कहा आज रात्रि में दोनों पिता पुत्र जा कर तीन सेर (पुराना बाट किलो ग्राम के लगभग) आटा चुरा कर लाना। केवल संतों व भक्तों के लिए।

तब लड़का सेऊ बोला माँ - गुरु जी कहते हैं चोरी करना पाप है। फिर आप भी मुझे शिक्षा दिया करती कि बेटा कभी चोरी नहीं करनी चाहिए। जो चोरी करते हैं उनका सर्वनाश होता है। आज आप यह क्या कह रही हो माँ? क्या हम पाप करेंगे माँ? अपना भजन नष्ट हो जाएगा। माँ हम चौरासी लाख योनियों में कष्ट पाएंगे। ऐसा मत कहो माँ। माँ आपको मेरी कसम।

तब नेकी ने कहा पुत्र तुम ठीक कह रहे हो। चोरी करना पाप है परंतु पुत्र हम अपने लिए नहीं बल्कि संतों के लिए करेंगे। जिस नगर में निर्वाह किया है। इसकी रक्षा के लिए चोरी करेंगे। नेकी ने कहा बेटा - ये नगर के लोग अपने से बहुत चिढ़ते हैं। हमने इनको कहा था कि हमारे गुरुदेव कबीर साहेब (पूर्ण परमात्मा) पथ्वी पर आए हुए हैं। इन्होंने एक मतक गऊ तथा उसके बच्चे को जीवित कर दिया था जिसके टुकड़े सिंकदर लौधी ने करवाए थे। एक लड़के तथा एक लड़की को जीवित कर दिया। सिंकदर लौधी राजा का जलन का रोग समाप्त कर दिया तथा श्री स्वामी रामानन्द जी (कबीर साहेब के गुरुदेव) को सिंकदर लौधी ने तलवार से कत्ल कर दिया था वे भी कबीर साहेब ने जीवित कर दिए थे। इस बात का ये नगर वाले मजाक कर रहे हैं और कहते हैं कि आपके गुरु कबीर तो भगवान हैं तुम्हारे घर को भी अन्न से भर देंगे। फिर क्यों अन्न (आटे) के लिए घर घर डोलती फिरती हो?

बेटा! ये नादान प्राणी हैं। यदि आज साहेब कबीर इस नगरी का अन्न खाए बिना चले गए तो काल भगवान भी इतना नाराज हो जाएगा कि कहीं इस नगरी को समाप्त न कर दे। हे पुत्र! इस अनर्थ को बचाने के लिए अन्न की चोरी करनी है। हम नहीं खाएंगे। केवल अपने सतगुरु तथा आए भक्तों को प्रसाद बना कर खिलाएगें। यह कह कर नेकी की आँखों में आँसू भर आए और कहा पुत्र नाटियो मत अर्थात् मना नहीं करना।

तब अपनी माँ की आँखों के आँसू पौंछता हुआ लड़का सेऊ कहने लगा - माँ रो मत, आपका पुत्र

आपके आदेश का पालन करेगा। माँ आप तो बहुत अच्छी हो न।

अर्ध रात्रि के समय दोनों पिता (सम्मन) पुत्र (सेऊ) चोरी करने के लिए जाते हैं। एक सेठ की दुकान की दीवार में छिद्र किया। सम्मन ने कहा कि पुत्र मैं अन्दर जाता हूँ। यदि कोई व्यक्ति आए तो धीरे से कह देना मैं आपको आटा पकड़ा दूंगा और ले कर भाग जाना।

सेऊ ने कहा नहीं पिता जी, मैं अन्दर जाऊँगा। यदि मैं पकड़ा भी गया तो बच्चा समझ कर माफ कर दिया जाऊँगा।

सम्मन ने कहा पुत्र यदि आपको पकड़ कर मार दिया तो मैं और तेरी माँ कैसे जीवित रहेंगे?

सेऊ प्रार्थना करता हुआ छिद्र द्वार से अन्दर दुकान में प्रवेश कर जाता है। तब सम्मन कहता है कि पुत्र! केवल तीन सेर आटा लाना, अधिक नहीं। लड़का सेऊ लगभग तीन सेर आटा अपनी फटी-पुरानी चद्दर में बाँधकर चलने लगता है तो अंधेरे में तराजू के पलड़े पर पैर रखा गया। जोरदार आवाज हुई जिससे दुकानदार जाग जाता है और सेऊ को चोर-चोर करके पकड़कर रस्से से बाँध देता है। इससे पहले सेऊ वह चद्दर में बँधा हुआ आटा उस छिद्र से बाहर फैंक देता है और कहता है कि पिता जी! मुझे सेठ ने पकड़ लिया है। आप आटा ले जाओ और सतगुरु व भक्तों को भोजन करवाना। मेरी चिंता मत करना।

आटा लेकर सम्मन घर पर गया तो सेऊ को न पा कर नेकी ने पूछा लड़का कहाँ है?

सम्मन ने कहा उसे सेठ जी ने पकड़ कर थाम्ब से बाँध दिया।

नेकी ने कहा कि आप वापिस जाओ और लड़के सेऊ का सिर काट लाओ क्योंकि लड़के को पहचान कर अपने घर पर लाएंगे। फिर सतगुरु को देख कर नगर वाले कहेंगे कि ये हैं जो चोरी करवाते हैं। हो सकता है सतगुरु देव को परेशान करें। हम पापी प्राणी अपने दाता को भोजन के स्थान पर कैद न करवा दें। यह कहकर माँ अपने बेटे का सिर काटने के लिए अपने पति से कह रही है वह भी गुरुदेव जी के लिए।

सम्मन ने हाथ में कर्द (लम्बा छुरा) लिया तथा दुकान पर जा कर कहा सेऊ बेटा, एक बार गर्दन बाहर निकाल। कुछ जरूरी बातें करनी हैं। कल तो हम नहीं मिल पाएंगे। हो सकता है ये आपको मरवा दें।

तब सेऊ उस सेठ (बनिए) से कहता है कि सेठ जी बाहर मेरा बाप खड़ा है। कोई जरूरी बात करना चाहता है। कप्या करके मेरे रस्से को इतना ढीला कर दो कि मेरी गर्दन छिद्र से बाहर निकल जाए।

सेठ ने उसकी बात को स्वीकार करके रस्सा इतना ढीला कर दिया कि गर्दन आसानी से बाहर निकल गई।

सेऊ ने कहा पिता जी मेरी गर्दन काट दो। यदि आप मेरी गर्दन नहीं काटोगे तो आप मेरे पिता नहीं हो। मुझे पहचानकर घर तक सेठ पहुँचेगा। राजा तक इसकी पहुँच है। यह अपने गुरूदेव को मरवा देगा। पिताजी हम क्या मुख दिखाएँगे? सम्मन ने एकदम करद मारी और सिर काट कर घर ले गया।

सेठ ने लड़के का कत्ल हुआ देखकर उसके शव को घसीट कर साथ ही एक पजावा (ईटें पकाने का भट्ठा) था, उस खण्डहर में डाल गया।

जब नेकी ने सम्मन से कहा कि आप वापिस जाओ और लड़के का धड़ भी बाहर मिलेगा उठा लाओ। जब सम्मन दुकान पर पहुँचा। उस समय तक सेठ ने उस दुकान की दीवार के छिद्र को बंद कर लिया था। सम्मन ने शव की घसीट (चिन्हों) को देखते हुए शव के पास पहुँच कर उसे उठा लाया। ला कर अन्दर कोठे में रख कर ऊपर पुराने कपड़े (गुदड़) डाल दिए और सिर को अलमारी के ताख (एक

हिस्से) में रख कर खिड़की बंद कर दी।

कुछ समय के बाद सूर्य उदय हुआ। नेकी ने स्नान किया। सतगुरु व भक्तों का खाना बनाया। सतगुरु कबीर साहेब जी से भोजन करने की प्रार्थना की। नेकी ने साहेब कबीर व दोनों भक्त (कमाल तथा शेख फरीद), तीनों के सामने आदर के साथ तीन दौनों (मिट्टी के बर्तनों) में भोजन परोस दिया। साहेब कबीर ने कहा इसे छः दौनों में डाल कर आप तीनों भी साथ बैठो। यह प्रेम प्रसाद पाओ। बहुत प्रार्थना करने पर भी साहेब कबीर नहीं माने तो छः दौनों में प्रसाद परोसा गया। पाँचों प्रसाद के लिए बैठ गए। तब साहेब कबीर जी ने कहा :-

आओ सेऊ जीम लो, यह प्रसाद प्रेम। शीश कटत हैं चोरों के, साधों के नित्य क्षेम।।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि सेऊ आओ भोजन पाओ। सिर तो चोरों के कटते हैं। संतों (भक्तों) के नहीं। उनकी तो रक्षा होती है। उनको तो क्षमा होती है। साहेब कबीर ने इतना कहा था उसी समय सेऊ के धड़ पर सिर लग गया। कटे हुए का कोई निशान भी गर्दन पर नहीं था तथा पंगत (पंक्ति) में बैठ कर भोजन करने लगा। बोलो कबीर साहेब (कविरमितौजा) की जय। (वेदों के वचन :- कविर् = कविर्देव = कबीर परमेश्वर, अमित + औजा = जिसकी शक्ति का कोई वार-पार न हो।)

सम्मन तथा नेकी ने देखा कि गर्दन पर कोई चिन्ह भी नहीं है। लड़का जीवित कैसे हुआ? अन्दर जा कर देखा तो वहाँ शव तथा शीश नहीं था। केवल रक्त के छीटें लगे थे जो इस पापी मन के संशय को समाप्त करने के लिए प्रमाण बकाया था।

ऐसी-ऐसी बहुत लीलाएँ साहेब कबीर (कविरग्नि) ने की हैं जिनसे यह स्वसिद्ध है कि ये ही पूर्ण परमात्मा हैं। सामवेद संख्या नं. 822 तथा ऋग्वेद मण्डल 10 सूक्त 161 मंत्र 2 में कहा है कि कविर्देव अपने विधिवत् साधक साथी की आयु बढ़ा देता है। यदि मत्यु को भी प्राप्त हो चुका हो, उसे धर्मराज से छुड़वाकर सौ वर्ष का जीवन दे देता है।

"समर्थ परमेश्वर कबीर जी हैं, के अन्य प्रमाण"

{परमेश्वर कबीर कहा करते कि हिन्दू तथा मुसलमान, यहूदी तथा ईसाई सब एक प्रभु के बच्चे हो। तुम्हारे को काल शैतान ने भ्रमित करके बाँट रखा है।}

एक बार दिल्ली के मुसलमान बादशाह सिकन्दर लोधी को जलन का रोग हो गया। जलन का रोग ऐसा होता है जैसे किसी का आग में हाथ जल जाए उसमें पीड़ा बहुत होती है। जलन के रोग में कहीं से शरीर जला दिखाई नहीं देता है परन्तु पीड़ा अत्यधिक होती है। उसको जलन का रोग कहते हैं। जब प्राणी के पाप बढ़ जाते हैं तो औषधि भी बेअसर हो जाती हैं। दिल्ली के बादशाह सिकन्दर लौधी के साथ भी वही हुआ। सभी प्रकार की औषधी सेवन की। बड़े-बड़े वैद्य बुला लिए और मुँह बोला इनाम रख दिया कि मुझे ठीक कर दो, जो माँगोगे वही दूँगा। दुःख में व्यक्ति पता नहीं क्या संकल्प कर लेता है? सर्व उपाय निष्फल हुए। उसके बाद अपने धार्मिक काजी, मुल्ला, संतों आदि सबसे अपना आध्यात्मिक इलाज करवाया। परन्तु सब असफल रहा। {जब हम दुःखी हो जाते हैं तो हिन्दू और मुसलमान नहीं रहते। फिर तो कहीं पर रोग कट जाए, वही पर चले जाते हैं। वैसे तो हिन्दू कहते हैं कि मुसलमान बुरे और मुसलमान कहते हैं कि हिन्दू बुरे और बीमारी हो जाए तो फिर हिन्दू व मुसलमान नहीं देखते। जब कष्ट आए तब तो कोई बुरा नहीं। जो मुसलमान बुरे हैं, वे बुरे हैं और जो हिन्दू बुरे हैं, वे बुरे भी हैं और दोनों में अच्छे भी हैं। हर मज़हब में अच्छे

और बुरे व्यक्ति होते हैं। लेकिन हम जीव हैं। हमारी कोई जाति व्यवस्था नहीं है। हमारी जीव जाति है हमारा धर्म मानव है-परमात्मा को पाना है।} हिन्दू वैद्य तथा आध्यात्मिक संत भी बुलाए, स्वयं भी उनसे जाकर मिला और सबसे आशीर्वाद व जंत्र-मंत्र करवाऐं परन्तु सर्व चेष्टा निष्फल रही।

किसी ने बताया कि काशी शहर में एक कबीर नाम का महापुरूष है। यदि वह कपा कर दे तो आपका दुःख निवारण अवश्य हो जाएगा।

जब बादशाह सिकंदर ने सुना कि एक काशी के अन्दर महापुरूष रहता है तो उसको कुछ-कुछ याद आया कि वह तो नहीं है जिसने गाय को भी जीवित कर दिया था। हजारों अंगरक्षकों सहित दिल्ली से काशी के लिए चल पड़ा। बीरसिंह बघेला काशी नरेश पहले ही कबीर साहेब की महिमा और ज्ञान सुनकर कबीर साहेब के शिष्य हो चुके थे और पूर्ण रूप से अपने गुरुदेव में आस्था रखते थे। उनको कबीर साहेब की समर्थता का ज्ञान था क्योंकि कबीर परमेश्वर वहाँ पर बहुत लीलाएँ कर चुके थे।

जब सिकंदर लोधी बनारस(काशी) गया तथा बीरसिंह से कहा बीरसिंह मैं बहुत दुःखी हो गया हूँ। अब तो आत्महत्या ही शेष रह गई है। यहाँ पर कोई कबीर नाम का संत है ? आप तो जानते होंगे कि वह कैसा है? इतनी बात सिकंदर बादशाह के मुख से सुनी थी। काशी नरेश बीरसिंह की आँखों में पानी भर आया और कहा कि अब आप ठीक स्थान पर आ गए हो। अब आपके दुःख का अंत हो जाएगा। बादशाह सिकंदर ने पूछा कि ऐसी क्या बात है? बीरसिंह ने कहा कि वह कबीर जी स्वयं भगवान आए हुए हैं। परमेश्वर स्वरूप हैं। यदि उनकी दयादष्टि हो गई तो आपका रोग ठीक हो जाएगा। राजा सिकंदर ने कहा कि जल्दी बुला दो। काशी नरेश बीरदेवसिंह बघेल ने विनम्रता से प्रार्थना की कि आपकी आज्ञा शिरोधार्य है, आदेश भिजवा देता हूँ। लेकिन ऐसा सुना है कि संतो को बुलाया नहीं करते। यदि वे आ भी गए और रजा नहीं बख्सी तो भी आने का कोई लाभ नहीं। बाकी आपकी ईच्छा। सिकंदर ने कहा कि ठीक है मैं स्वयं ही चलता हूँ। इतनी दूर आ गया हूँ वहाँ पर भी अवश्य चलूँगा।

"सिकंदर लौधी बादशाह का असाध्य रोग ठीक करना"

शाम का समय हो गया था। बीरसिंह को पता था कि इस समय साहेब कबीर जी अपने औपचारिक गुरुदेव स्वामी रामानन्द जी के आश्रम में ही होते हैं। यह समय परमेश्वर कबीर जी का वहाँ मिलने का है। बीरदेव सिंह बघेल काशी नरेश तथा सिकंदर लोधी दिल्ली के बादशाह दोनों, स्वामी रामानन्द जी के आश्रम के सामने खड़े हो गए। वहाँ जाकर पता चला कि कबीर साहेब अभी नहीं आए हैं, आने ही वाले हैं। बीरसिंह अन्दर नहीं गए। बाहर सेवक खड़ा था उससे ही पूछा। सिकंदर ने कहा कि ''तब तक आश्रम में विश्राम कर लेते हैं।'' राजा बीरसिंह ने स्वामी रामानन्द जी के द्वारपाल सेवक से कहा कि स्वामी रामानन्द जी से प्रार्थना करो कि दिल्ली के बादशाह सिकंदर लौधी आपके दर्शन भी करना चाहते हैं और साहेब कबीर का इन्तजार भी आपके आश्रम में ही करना चाहते है। सेवक ने अन्दर जाकर रामानन्द जी को बताया कि दिल्ली के बादशाह सिकंदर लौधी आए हैं। रामानन्द जी मुसलमानों से घणा करते थे। रामानन्द जी ने कहा कि मैं इन मलेच्छों की शक्ल भी नहीं देखता। कह दो कि बाहर बैठ जाएगा। जब सिकंदर लोधी ने यह सुना तो क्रोध में भरकर (क्योंकि राजा में अहंकार बहुत होता है और वह दिल्ली का सम्राट) कहा कि

यह दो कोड़ी का महात्मा दिल्ली के बादशाह का अनादर कर सकता है तो साधारण मुसलमान के साथ यह कैसा व्यवहार करता होगा? इसको मज़ा चखा दूँ। स्वामी रामानन्द जी अलग आसन पर बैठे थे। सिकंदर लोधी ने जाकर रामानन्द जी की गर्दन तलवार से काट दी। वापिस चल पड़ा और फिर उसको याद आया कि मैं जिस कार्य के लिए आया था? वह काम अब पूरा नहीं होगा। कहा कि बीरसिंह देख मैं क्या जुल्म कर बैठा? मेरे बहुत बुरे दिन हैं। चाहता हूँ अच्छा करना और होता है बुरा। कबीर साहेब के गुरुदेव की हत्या कर दी। अब वे कभी भी मेरे ऊपर दयादष्टि नहीं करेंगे। मुझे तो यह दुःख भोग कर ही मरना पड़ेगा। मैं बहुत पापी जीव हूँ। यह कहता हुआ आश्रम से बाहर की ओर चल पड़ा। बीरसिंह अपने बादशाह के आगे क्या बोलता। ज्यों ही आश्रम से बाहर आए, कबीर साहेब आते दिखाई दिए। बीरसिंह ने कहा कि हे राजन! मेरे गुरुदेव कबीर साहेब आ गए। ज्योंही कबीर साहेब थोड़ी दूर रह गए बीरसिंह ने जमीन पर लेटकर उनको दण्डवत् प्रणाम किया। सिकंदर बहुत घबराया हुआ था। {अगर उसने यह जुल्म नहीं किया होता तो वह दण्डवत् नहीं करता और दण्डवत् नहीं करता तो साहेब उस पर रजा भी नहीं बकस पाते। क्योंकि यह नियम होता है।

'अति आधीन दीन हो प्राणी, ताते कहिए ये अकथ कहानी।''
उच्चे पात्र जल ना जाई, ताते नीचा हुजै भाई।
आधीनी के पास हैं पूर्ण ब्रह्म दयाल। मान बड़ाई मारिए बे अदबी सिर काल।।

कबीर परमेश्वर ने यहाँ पर एक तीर से दो शिकार किए। स्वामी रामान्नद जी में धर्म भेद-भाव की भावना शेष थी, वह भी निकालनी थी। रामान्नद जी मुसलमानों को हिन्दूओं से अभी भी भिन्न तथा हेय मानते थे। सिकंदर में अहंकार की भावना थी। यदि वह नम्र नहीं होता तो कबीर साहेब कपा नहीं करते तथा सिकंदर स्वस्थ नहीं होता} बीरसिंह को दंडवत करते देखकर तथा डरते हुए सिकंदर लौधी ने भी दण्डवत् प्रणाम किया। {मुसलमान कहते हैं कि हमारा सिर केवल अल्लाह के आगे झुकता है। अन्य के सामने मुसलमान का सिर नहीं झुकेगा। सामने अल्लाह अकबर खड़ा था। सिर अपने आप झुक गया।} कबीर परमेश्वर जी ने दोनों के सिर पर हाथ रखा और कहा कि दो-दो नरेश आज मुझ गरीब के पास कैसे आए हैं? मुझ गरीब को कैसे दर्शन दिए? परमेश्वर कबीर जी ने अपना हाथ उठाया भी नहीं था कि सिकंदर का जलन का रोग समाप्त हो गया। सिकंदर लौधी की आँखों में पानी आ गया। (संत के सामने मन भाग जाता है और आत्मा ऊपर आ जाती है। क्योंकि परमात्मा आत्मा का साथी है। ''अन्तरयामी एक तू आत्म के आधार।'' आत्मा का आधार कबीर भगवान है।) सिकंदर लौधी ने पैर पकड़ कर छोड़े नहीं और रोता ही रहा। जानीजान होते हुए भी कबीर साहेब ने सिकन्दर लोधी दिल्ली के बादशाह से पूछा क्या बात है?। सिकंदर ने कहा कि अल्लाह की जात! मैंने घोर अपराध कर दिया। आप मुझे क्षमा नहीं कर सकते। जिस काम के लिए मैं आया था वह असाध्य रोग तो आपके आशीर्वाद मात्र से ठीक हो गया। इस पापी को क्षमा कर दो। कबीर साहेब ने कहा क्षमा कर दिया। यह तो बता कि क्या हुआ? सिकंदर ने कहा कि आप क्षमा कर नहीं सकते। मैंने ऐसा पाप किया है। कबीर साहेब ने कहा कि क्षमा कर दिया। सिकंदर ने फिर कहा कि सच में माफ कर दिया? कबीर साहेब ने कहा कि हाँ क्षमा कर दिया। अब बता क्या कष्ट है? सिकंदर ने कहा कि दाता मुझ पापी ने गुस्से में आकर आपके गुरुदेव का कत्ल कर दिया और फिर सारी कहानी बताई। कबीर साहेब बोले कोई बात नहीं। जो हुआ प्रभु इच्छा से ही हुआ है आप स्वामी रामानन्द जी का अन्तिम संस्कार करवा कर जाना नहीं तो आप

निंदा के पात्र बनोगे। परमेश्वर कबीर साहेब जी नाराज नहीं हुए। सिकंदर लोधी ने बीरसिंह के मुख की ओर देखा और कहा कि बीरसिंह यह तो वास्तव में अल्लाह है। देखिए मैंने इनके गुरुदेव का सिर काट दिया और कबीर जी को क्रोध भी नहीं आया। बीरसिंह चुप रहा और साथ-साथ हो लिया और मन ही मन में सोचता है कि अभी क्या है, अभी तो और देखना। यह तो शुरूआत है।

"स्वामी रामानन्द जी को जीवित करना"

परमेश्वर कबीर जी ने अन्दर जाकर देखा रामान्द जी का धड़ कहीं पर और सिर कहीं पर पड़ा था। शरीर पर चादर डाल रखी थी। कबीर साहेब ने अपने गुरुदेव के मत शरीर को दण्डवत् प्रणाम किया और चरण छुए तथा कहा कि गुरुदेव उठो। दिल्ली के बादशाह आपके दर्शनार्थ आए हैं। एक बार उठना। दूसरी बार ही कहा था, सिर अपने आप उठकर धड़ पर लग गया और रामानन्द जी जीवित हो गए "बोलो सतगुरु देव की जय!"

"सर्व मनुष्य एक प्रभु के बच्चे हैं, जो दो मानता है वह अज्ञानी है"

रामान्नद जी के शरीर से आधा खून और आधा दूध निकला हुआ था। जब साहेब कबीर से स्वामी रामानन्द जी ने कारण पूछा, हे कबीर प्रभु! मेरे शरीर से आधा रक्त और आधा दूध कैसे निकला है? कबीर साहेब ने बताया कि स्वामी जी आपके अन्दर यह थोड़ी-सी कसर और रह रही है कि अभी तक आप हिन्दू और मुसलमान को दो समझते हो। इसलिए आधा खून और आधा दूध निकला है। आप अन्य जाति वालों को अपना साथी समझ चुके हो। परंतु हिन्दू तथा मुसलमान एक ही परमेश्वर के बच्चे हैं। जीव सभी एक हैं। आप तो जानीजान हो। आप तो लीला कर रहे हो अर्थात् गोल-मोल बात करके सब समझा गए।

कबीर–अलख इलाही एक है, नाम धराया दोय। कहै कबीर दो नाम सुनि, भरम परो मति कोय।।1।।
कबीर–राम रहीमा एक है, नाम धराया दोय। कहै कबीर दो नाम सुनि, भरम परो मति कोय।।2।।
कबीर–कृष्ण करीमा एक है, नाम धराया दोय। कहै कबीर दो नाम सुनि, भरम परो मति कोय।।3।।
कबीर–काशी काबा एक है, एकै राम रहीम। मैदा एक पकवान बहु, बैठि कबीरा जीम।।4।।
कबीर–एक वस्तु के नाम बहु, लीजै वस्तु पहिचान। नाम पक्ष नहीं कीजिये, सार तत्व ले जान।।5।।
कबीर–सब काहूका लीजिये, सांचा शब्द निहार। पक्षपात ना कीजिये, कहै कबीर विचार।।6।।
कबीर–राम कबीरा एक है, दूजा कबहू ना होय। अंतर टाटी कपट की, तातै दीखे दोय।।7।।
कबीर–राम कबीर एक है, कहन सुनन को दोय। दो करि सोई जानई, सतगुरु मिला न होय।।8।।

रामान्नद जी ने सिकंदर को सीने से लगाया तथा उसके बाद हिन्दू तथा मुसलमान को तथा सर्व जाति व धर्मों के व्यक्तियों को प्रभु के बच्चे जानकर प्यार देने लगे तथा अपने औपचारिक शिष्य वास्तव में परमेश्वर कबीर साहेब जी का धन्यवाद किया कि आपने मेरा अज्ञान पूर्ण रूप से दूर कर दिया। हम एक पिता प्रभु की संतान हैं, मुझे दढ़ विश्वास हो गया। {दिल्ली के बादशाह सिकंदर लोधी के साथ उनका धार्मिक गुरु शेखतकी भी बनारस गया था। वह रैस्ट हाऊस(विश्राम गह) में ही रूका था। क्योंकि शेखतकी हिन्दू संतों से बहुत ईर्ष्या करता था तथा उन्हें व उनके शिष्यों को काफिर कहता था। इसलिए स्वामी रामानन्द जी के आश्रम में जाने से इंकार कर दिया था। राजा सिकंदर लोधी के साथ स्वामी रामानन्द जी के आश्रम में नहीं गया था।}

शेखतकी पीर ने अल्लाह को नहीं पहचाना :- भारत के सम्राट सिकंदर ने विश्राम गह में आकर परमेश्वर कबीर साहेब जी द्वारा अपने असाध्य रोग का निवारण केवल आशीर्वाद मात्र से करने तथा स्वामी रामानन्द जी को पुनर् जीवित करने की अद्भुत करिश्मे की बात खुशी के साथ अपने धार्मिक पीर शेखतकी को बताई तथा कहा कि पीर जी मैं पूर्ण रूप से स्वस्थ हूँ। मुझे कोई पीड़ा किसी अंग में नहीं है। {शाम का समय था। प्रभु कबीर साहेब जी सुबह आने की कहकर अपनी कुटिया पर चले गये थे।}

शेखतकी ने बादशाह के मुख से अन्य पीर की भूरि-भूरि प्रशंसा सुनी तो अंदर ही अंदर जल-भुन गया। रात भर करवटें बदलता रहा। परमेश्वर कबीर साहेब जी को नीचा दिखाने की योजना बनाता रहा।

''बादशाह सिकंदर की शंकाओं का समाधान''

प्रश्न - बादशाह सिकंदर लोधी ने कबीर अल्लाह से पूछा, हे परवरदिगार! (क). यह ब्रह्म(काल) कौन शक्ति है? (ख). यह सभी के सामने क्यों नहीं आता?

उत्तर - परमेश्वर कबीर साहेब जी ने सिकंदर लोधी बादशाह के प्रश्न 'क-ख' के उत्तर में सष्टि रचना सुनाई। (कप्या देखें इसी पुस्तक के पष्ठ 389 से 444 पर)

(ग). क्या बाबा आदम जैसे महापुरुष भी इसी के जाल में फंसे थे?

ग के उत्तर में बताया कि पवित्र बाईबल में उत्पत्ति विषय में लिखा है कि पूर्ण परमात्मा मनुष्यों तथा अन्य प्राणियों की रचना छः दिन में करके तख्त अर्थात् सिंहासन पर चला गया। उसके बाद इस लोक की बाग डोर ब्रह्म ने संभाल ली। इसने कसम खाई है कि मैं सब के सामने कभी नहीं आऊँगा। इसलिए सभी कार्य अपने तीनों पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव) के द्वारा करवाता रहता है या स्वयं किसी के शरीर में प्रवेश करके प्रेत की तरह बोलता है या आकाशवाणी करके आदेश देता है। प्रेत, पित्तर तथा अन्य देवों (फरिश्तों) की आत्माएँ भी किसी के शरीर में प्रवेश करके अपना आदेश करती हैं। परन्तु श्रद्धालुओं को पता नहीं चलता कि यह कौन शक्ति बोल रही है। पूर्ण परमात्मा ने माँस खाने का आदेश नहीं दिया। पवित्र बाईबल उत्पत्ति विषय में सर्व प्राणियों के खाने के विषय में पूर्ण परमात्मा का प्रथम तथा अन्तिम आदेश है कि मनुष्यों के लिए फलदार वक्ष तथा बीजदार पौधे दिए हैं जो तुम्हारे खाने के लिए हैं तथा अन्य प्राणियों को जिनमें जीवन के प्राण हैं उनके लिए छोटे-छोटे पेड़ अर्थात् घास, झाड़ियाँ आदि खाने को दिए हैं। इसके बाद पूर्ण प्रभु का आदेश न पवित्र बाईबल में है तथा न किसी कतेब (तौरत, इंजिल, जुबुर तथा कुर्आन शरीफ) में है। इन कतेबों में ब्रह्म तथा उसके फरिश्तों तथा पित्तरों व प्रेतों का मिला-जुला आदेश रूप ज्ञान है।

(घ). क्या बाबा आदम से पहले भी सष्टि थी?

उत्तर - सूर्यवंश में राजा नाभिराज हुआ। उसका पुत्र राजा ऋषभदेव हुआ जो जैन धर्म का प्रवर्तक तथा प्रथम तीर्थकर माना जाता है। वही ऋषभदेव ही बाबा आदम हुआ।(यह विवरण जैन धर्म की पुस्तक ''आओ जैन धर्म को जानें'' के पष्ठ 154 पर लिखा है।)

इससे स्पष्ट है कि बाबा आदम से भी पूर्व सष्टि थी। पथ्वी का अधिक क्षेत्र निर्जन था। एक दूसरे क्षेत्र के व्यक्ति भी आपस में नहीं जानते थे कि कौन कहाँ रहता है। ऐसे स्थान पर ब्रह्म ने फिर से मनुष्य आदि की सष्टि की। उत्पत्ति ऐसे स्थान पर की जो अन्य व्यक्तियों से कटा हुआ था। काल के पुत्र ब्रह्मा के लोक से यह पुण्यात्मा (बाबा आदम) अपना कर्म संस्कार भोगने आया था।

फिर शास्त्र अनुकूल साधना न मिलने के कारण पित्तर योनी को प्राप्त होकर पित्तर लोक में चला गया। बाबा आदम से पूर्व फरिश्ते थे। पवित्र बाईबल ग्रन्थ में लिखा है।

(ड़). यदि अल्लाह का आदेश मनुष्यों को माँस न खाने का है तो बाईबल तथा कुर्आन शरीफ में कैसे लिखा गया?

उत्तर - पवित्र बाईबल में उत्पत्ति विषय में लिखा है कि पूर्ण परमात्मा ने छः दिन में संष्टि रचकर सातवें दिन विश्राम किया। उसके बाद बाबा आदम तथा अन्य नबियों को अव्यक्त अल्लाह (काल) के फरिश्ते तथा पित्तर आदि ने अपने आदेश दिए हैं। जो बाद में कुर्आन शरीफ तथा बाईबल में लिखे गए हैं।

(च). अव्यक्त प्रभु काल ने यह सर्व वास्तविक ज्ञान छुपाया है तो पूर्ण परमात्मा का संकेत किसलिए किया?

उत्तर - ज्योति निरंजन(अव्यक्त माना जाने वाला प्रभु) पूर्ण परमात्मा के डर से यह नहीं छुपा सकता कि पूर्ण परमात्मा कोई अन्य है। यह पूर्ण प्रभु की वास्तविक पूजा की विधि से अपरिचित है। इसलिए यह केवल अपनी साधना का ज्ञान ही प्रदान करता है तथा महिमा गाता है पूर्ण प्रभु की भी।

दिल्ली के सम्राट सिकंदर ने सोचा कि ऐसे भगवान को दिल्ली में ले चलता हूँ और हो सकता है वहाँ के व्यक्ति भी इस परमात्मा के चरणों में आकर एक हो जाऐं। यह हिन्दू और मुसलमान का झगड़ा समाप्त हो जाए। कबीर साहेब के विचार कोई सुनेगा तो उसका भी उद्धार होगा। बादशाह सिकंदर लोधी ने प्रार्थना की कि ''हे अल्लाह की जात! हे परवरदीगार! एक बार हमारे साथ दिल्ली चलने की कंपा करो।'' कबीर साहेब ने सिकंदर लौधी से कहा कि पहले आप मेरे से उपदेश लो फिर आपके साथ चल सकता हूँ। ऐसे नहीं जाऊँगा। सिकंदर ने कहा कि दाता जैसे आप कहोगे वैसे ही करूँगा। कबीर साहेब ने कहा कि एक तो हिन्दू से मुसलमान नहीं बनाएगा। सिकंदर ने कहा कि नहीं बनाऊँगा। कोई जीव हिंसा नहीं करवाएगा। सिकंदर ने कहा प्रभु मैं जीव हिंसा नहीं करूंगा तथा न किसी को जीव हिंसा करने के लिए कहूँगा। परन्तु ये मुल्ला तथा काजी मेरे बस से बाहर हैं। कबीर साहेब ने कहा ठीक है आप अपने मुँख से नहीं कहोगे। सिकंदर ने कहा कि ठीक है दाता अर्थात् सारे नियम बता दिए और सिकंदर ने सारे स्वीकार कर लिए। परमश्ेवर कबीर साहेब जी से दीक्षा ग्रहण कर ली तथा सर्व नियमों को आजीवन पालन करने का प्रण किया।

तब सतगुरुदेव सिकंदर लौधी को प्रथम मंत्र प्रदान करके वहाँ से उसके साथ दिल्ली को रवाना हुए। बादशाह सिकंदर ने परमेश्वर कबीर साहेब को अपने साथ हाथी पर अम्बारी में बैठाया। उसमें राजा के अतिरिक्त कोई बैठ नहीं सकता था। परन्तु सिकंदर को अल्लाह दिखाई दिया जिसने उसकी असाध्य बिमारी से रक्षा की। उसके सामने मुर्दा (स्वामी रामानन्द) जीवित कर दिया।

जब सिकंदर लौधी के धार्मिक गुरु शेखतकी को पता चला कि राजा स्वस्थ हो गया और इसके सामने कबीर परमेश्वर ने स्वामी रामानन्द जी का कटा शिश जोड़ कर जीवित कर दिया। उसने सोचा कि अब मेरे नम्बर कटेंगे अर्थात् मेरी महिमा कम हो जाएगी। मेरी कमाई तथा प्रभुता गई। शेखतकी को साहेब कबीर से इर्ष्या हो गई। वह विचार करने लगा कि किसी प्रकार इसको नीचा दिखाऊँ ताकि सिकंदर के हृदय से यह उतर जाए। मेरी प्रभुता बनी रह जाए। राजा के साथ सभी वहाँ से दिल्ली के लिए चल पड़े। रास्ते में रात्रि में एक दरिया के किनारे रूक गए। सोचा कि रात्रि में विश्राम करेंगे। सुबह चलने का इरादा करके वहाँ पर पड़ाव लगा दिया।

"मृत लड़के कमाल को जीवित करना"

शेखतकी महाराजा सिकंदर से मुख चढ़ाए फिर रहा था। सिकंदर ने पूछा कि क्या बात है पीर जी? शेखतकी ने कहा कि क्या तुझे बात नहीं मालूम? सिकंदर ने पूछा कि क्या बात है? शेखतकी ने कहा कि यह तेरे साथ कौन है? सिकंदर ने कहा कि ये तो भगवान (अल्लाह) है। शेखतकी ने कहा कि अच्छा अल्लाह अब आकार में धरती पर आने लग गया। अल्लाह कैसे है? सिकंदर ने कहा कि पहले तो अल्लाह ऐसे कि मेरा रोग ऐसा था कि किसी से भी ठीक नहीं हो पा रहा था। इस कबीर प्रभु ने हाथ ही लगाया था, मैं स्वस्थ हो गया। शेखतकी ने कहा कि ये जादूगर होते हैं। सिकंदर ने फिर कहा दूसरे अल्लाह ऐसे हैं कि मैंने उनके गुरुदेव का सिर काट दिया था और उन्होंने उसे मेरी आँखों के सामने तुरंत जीवित कर दिया।

शेखतकी ने कहा कि अगर यह कबीर अल्लाह है तो मैं इसकी परीक्षा लूँगा। यदि कबीर जी मेरे सामने कोई मुर्दा जीवित करे तो इसे अल्लाह मान लूँगा। नहीं तो दिल्ली जाकर मैं पूरे मुसलमान समाज को कह दूँगा कि यह राजा काफिर हो गया है।

सिकंदर लोधी डर गया कि कहीं ऐसा न हो कि यह जाते ही राज पलट दे। (राज को देने वाला पास बैठा है और उस मूर्ख से डर लगता है।) राजा ने शेखतकी से कहा कि आप कैसे प्रसन्न होंगे? शेखतकी ने कहा कि मैं तब प्रसन्न होऊँगा जब मेरे सामने यह कबीर कोई मुर्दा जीवित कर दे। राजा ने अपनी समस्या कबीर जी को बताई कि मेरे पीर ने कहा है कि यदि कबीर मेरे सामने मुर्दा जीवित करे तो मैं इनकी सब बातें मानने को तैयार हूँ। अन्यथा सब मुसलमानों को मेरे विरूद्ध कर देगा। मेरे राज को भी खतरा पैदा कर देगा।

कबीर साहेब ने कहा कि ठीक है। (कबीर साहेब ने सोचा कि यह शेखतकी अनाड़ी आत्मा है। अगर यह मेरी बात मान गया तो आधे से ज्यादा मुसलमान इसकी बात स्वीकार करते हैं क्योंकि यह दिल्ली के बादशाह का पीर है और अगर यह सही ढ़ंग से मुसलमानों को बता देगा तो भोली आत्माऐं सत्य साधना करके कल्याण करवा लेंगी क्योंकि अपने पीर की बात पर शीघ्र विश्वास कर लेते हैं।

इसलिए कहा कि शेखतकी! ढूँढ़ ले कोई मुर्दा। सुबह एक 10-12 वर्ष की आयु के लड़के का शव पानी में तैरता हुआ आ रहा था। शेखतकी ने कहा कि वह आ रहा है मुर्दा, इसे जिन्दा कर दो। कबीर साहेब ने कहा पहले आप प्रयत्न करो, कहीं फिर पीछे नम्बर बनाओ। उपस्थित मन्त्रियों तथा सैनिकों ने कहा कि पीर जी आप कोशिश करके देख लो।

शेखतकी जन्त्र-मन्त्र करता रहा। इतने में वह मुर्दा तीन फर्लांग आगे चला गया। शेखतकी ने कहा कि यह कबीर चाहता था कि यह बला सिर से टल जाए। कहीं मुर्दे जीवित होते हैं? मुर्दे तो कयामत के समय ही जीवित होते हैं। कबीर साहेब बोले शेख जी! आप बैठ जाओ, शांति करो। कबीर साहेब ने उस मुर्दे को हाथ से वापिस आने का संकेत किया। बारह वर्षीय बच्चे का मृत शरीर दरिया के पानी के बहाव के विपरीत चलकर कबीर जी के सामने आकर रूक गया। पानी की लहर नीचे-नीचे जा रही और शव ऊपर रूका था। कबीर साहेब ने कहा कि हे जीवात्मा जहाँ भी है कबीर हुकम से मुर्दे में प्रवेश कर और बाहर आ। कबीर साहेब ने इतना कहा ही था कि शव में कम्पन हुई तथा जीवित हो कर बाहर आ गया। कबीर साहेब के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया। "बोलो

कबीर परमेश्वर की जय"

सर्व उपस्थित जनों ने कहा कि कबीर साहेब ने तो कमाल कर दिया। उस लड़के का नाम कमाल रख दिया। लड़के को अपने साथ रखा। अपने बच्चे की तरह पालन-पोषण किया और नाम दिया। उसके बाद दिल्ली में आ गए। सभी को पता चला कि यह लड़का जो इनके साथ है यह परमेश्वर कबीर साहेब ने जीवित किया है। दूर तक बात फैल गई। शेखतकी की तो माँ सी मर गई सोचा यह कबीर अच्छा दुश्मन हुआ। इसकी तो और ज्यादा महिमा हो गई।

शेखतकी की इर्षा बढ़ती ही चली गई। उसकी तेरह वर्षीय लड़की को मत्यु पश्चात् कब्र में जमीन में दबा रखा था। शेखतकी ने कहा यदि कबीर मेरी लड़की को जो कब्र में दफना रखी है। जीवित करेगा तो मैं इसे अल्लाह मान लूंगा।

''शेख तकी द्वारा कबीर जी की अन्य परीक्षाएँ''

"कमाली के पहले के जन्म"

(पूर्ण मुक्ति पूर्ण संत बिना असंभव)

सतयुग में कमाली वाला जीव विद्याधार पंण्डित की पत्नी दीपिका थी। फिर त्रेतायुग में ऋषि वेदविज्ञ (जो विद्याधार वाली ही आत्मा थी) की पत्नी सूर्या थी। सत्ययुग तथा त्रेता में परमात्मा कबीर जी बालक रूप में इन्हीं को प्राप्त हुए थे। तत्पश्चात् अन्य जीवन धारण किए तथा कलयुग में मुस्लमान धर्म में राबी लड़की का जन्म हुआ। उसके पश्चात् एक जीवन वैश्या रूप में जीया। फिर बंसुरी नामक लड़की का जन्म हुआ। फिर कमाली नामक शेखतकी की लड़की हुई।

राबिया के प्रमाण में साखियाँ संत गरीबदास साहेब द्वारा रचित ग्रंथ साहेब से पारख के अंग की वाणी नं. 56 से 59 :-

गरीब, सुलतानी मक्के गये, मक्का नहीं मुकाम। गया रांड के लेन कूं, कहै अधम सुलतान।।56।।
गरीब, राबिया परसी रबस्यूं, मक्कै की असवारि। तीन मंजिल मक्का गया, बीबी कै दीदार।।57।।
गरीब, फिर राबिया बंसरी बनी, मक्कै चढाया शीश। सुलतान अधम चरणौं लगे, धनि सतगुरु जगदीश।।58।।
गरीब, बंसरी से बेश्वा बनी, शब्द सुनाया राग। बहुरि कमाली पुत्री, जुग जुग त्याग बैराग।।59।।

प्रमाण के लिए संत गरीबदास साहेब द्वारा रचित ग्रंथ साहेब से अचला के अंग की वाणी नं. 363 से 368 तक :-

गरीब राबी कूं सतगुरु मिले, दीना अपना तेज। ब्याही एक सहाब से, बीबी चढ़ी न सेज।।363।।
गरीब, राबी मक्के कूं चली, धर्या अल्लाह का ध्यान। कुत्ती एक प्यासी खड़ी, छुटे जात हैं प्राण।।364।।
गरीब, केश उपारे शीश के, बाटी रस्सी बीन। जाकै वस्त्र बांधि कर, जल काढ्या प्रबीन।।365।।
गरीब, सुनहीं कूं पानी पीया, उतरी अरस अवाज। तीन मंजिल मक्का गया, बीबी तुम्हरे काज।।366।।
गरीब, बीबी मक्के पर चढ़ी, राबी रंग अपार। एक लाख अस्सी जहाँ, देखै सब संसार।।367।।
गरीब, राबी पटरा घालि कर, किया जहाँ स्नान। एक लाख अस्सी बहे, मंगर मल्या सुलतान।।368।।

{उपरोक्त वाणियों में निम्न कथा का संक्षिप्त वर्णन है।}

एक राबी नाम की लड़की मुसलमान धर्म में उत्पन्न हुई। जब उसकी आयु 16 वर्ष की थी तो उसे पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब मिले। प्रभु में बहुत प्रेम था। रोजा रखना, निमाज करना, ईद मनाना जो परम्परागत साधना धर्म अनुसार थी, वह पूरी लगन से किया करती थी।

तब कबीर साहेब ने बताया बेटी यह साधना प्रभु पाने की नहीं है। सारी संष्टि रचना सुनाई तथा सत भक्ति का मार्ग बताया। उस लड़की राबिया ने उपदेश ले लिया। फिर चार वर्ष सत साधना करके समाज के दबाव से लोक-लाज के कारण सतमार्ग छोड़ दिया तथा वही परम्परागत साधना पुनः शुरू कर दी। उस लड़की की आस्था प्रभु में इतनी प्रबल थी कि शादी से मना कर दिया। माता-पिता रोने लग गए कि जवान लड़की को घर पर कैसे रखें? माता-पिता को आवश्यकता से अधिक परेशान देखकर राबिया ने शादी की स्वीकती दे दी। उस लड़की राबिया की शादी एक बहुत बड़े साहेब (अधिकारी) से हुई। परन्तु अपने पति से स्पष्ट कह दिया कि मैं सन्तान उत्पत्ति नहीं करूँगी। मैंने तो मेरे माता-पिता के विशेष दबाव तथा समाज शर्म के कारण शादी की है। यदि आप मेरी बात स्वीकार नहीं करोगे तो मैं आत्महत्या कर लूंगी। यह मेरा अन्तिम फैसला समझो। मैं केवल प्रभु भक्ति करके आत्म कल्याण चाहती हूँ।

राबिया के पति ने सोचा क्यों मैं इस भक्तात्मा को दुःखी करूं और पाप का भागी बनूं। सोच विचार करके कहा कि राबिया जिस प्रकार आपने समाज से डर था ऐसे ही मेरा भी अपना एक समाज है। आपको समाज की दष्टि में मेरी पत्नी के रूप में रहना पड़ेगा। मेरी दष्टि में आप मेरी बहन होंगी। तुझे घर से बाहर नहीं जाने दूँगा। आप भजन(भक्ति) करो। कहो तो आपके लिए दो नौकरानी छोड़ देता हूँ। राबिया बहुत प्रसन्न हुई तथा कहा कि हे प्रभु! आपने मेरी बड़ी सुनी। उस दिन के बाद राबिया मुसलमान धर्म में प्रचलित साधना करती रही।

मुसलमान धर्म में जन्म था। ईद और बकरीद, रोजे आदि श्रद्धा से करती थी। जब पचास वर्ष से ऊपर की आयु हो गई, तब अपने पति से कहा कि कहते हैं कि मक्का में जाना अति आवश्यक होता है। अब न जाने प्राण कब निकल जाऐं। एक बार मैं हज करना चाहती हूँ। उसके पति ने कहा कि आप जा सकती हो। कहो तो आपके लिए कोई ऊँट की व्यवस्था करवा देता हूँ। राबिया ने कहा कि मैं पैदल यात्रा करूँगी। अन्य भी बहुत यात्री जा रहे हैं। उसके पति ने कहा कि आप जा सकती हो।

राबिया ने मक्के में हज के लिए प्रस्थान किया। रास्ते में देखा एक कुत्तिया बहुत प्यासी थी। वह कुत्तिया कभी राबिया के पैरों की ओर दौड़ कर आ रही थी, कभी कुएँ की ओर जा रही थी। राबिया समझ गई कि यह कुत्तिया बहुत प्यासी है। साथ में इसके छोटे-छोटे बच्चे भी नजर आ रहे थे। इसको जल प्राप्त नहीं हुआ तो ये प्राण त्याग जाएगी, इसके बच्चे भी मर जाएँगे। भक्तात्मा में दया बहुत होती है। राबीया कुएँ पर गई। वहाँ देखा न वहाँ बाल्टी थी और न ही कोई रस्सा था। आसपास कोई गाँव भी नजर नहीं आ रहा था।

राबिया ने आव देखा न ताव, अपने सिर के बालों को उखाड़ कर एक लम्बी रस्सी बनाई। अपने ही कपड़े (क्योंकि उस समय मोटे खादी के कपड़े पहना करते थे।) उतार कर रस्सी से बाँध कर कुएँ में जल से भिगोकर बाहर निकाले और एक मटके का टूटा हुआ आधा हिस्सा वही पर रखा था उसको भर दिया।

कुत्तिया ने बहुत शीघ्रता से पानी पीया। राबिया का सारा शरीर लहु-लुहान हो गया। अपने कपड़ों से सारे शरीर को पोंछ कर और उन कपड़ो को धोकर कर पहन लिया तथा जैसे ही चलने के लिए तैयार हुई इतने में वह मक्का ज्यों का त्यों मकान (पवित्र मस्जिद) वहाँ से उठकर राबिया के लिए उस कुएँ के पास आ गया। आकाश वाणी हुई कि ''हे भक्तमति तेरे लिए वह मक्का तीन मंजिल अर्थात् 60 मील से उड़ कर आया है। आप इस में प्रवेश करो। राबिया ने उसमें प्रवेश किया।

मक्का वहाँ से उठा। वायुयान की तरह उड़ कर वापिस यथा स्थान पर आ गया। इस लीला को देख कर समाज में एक विशेष चर्चा हो गई कि भक्ति हो तो राबिया जैसी मुसलमान समाज में (मीरा बाई की तरह) राबिया का नाम आदर के साथ लिया जाने लगा। सभी उसका विशेष सत्कार करने लगे।

कुछ समय पश्चात् राबिया ने प्राण त्याग दिए। दूसरा जन्म मुसलमान धर्म में एक बंसुरी नाम की लड़की का हुआ। क्योंकि जहाँ जीव के संस्कार होते हैं वहीं उसकी उत्पत्ति होती रहती है। इतनी अच्छी धार्मिक वत्ति की लड़की बहुत अच्छे प्रभु के गुण-गान करती थी और अपनी धार्मिक पूजा मुसलमान धर्म के अनुसार पूरी आयु करती रही। उस लड़की ने भी लोकवेद के आधार से यही सुना था कि यदि मक्का में प्राण निकल जाएँ तो उसके लिए जन्नत का द्वार खुल जाता है यानि वह जीव सीधा स्वर्ग (बहिस्त) जाता है।

वद्ध होने पर हज करने मक्का में गई। सोचा कि इससे अच्छा सुअवसर और क्या होगा? यदि मक्का में प्राण निकल जाएं और स्वर्ग प्राप्ति हो जाए। लड़की ने अपना सिर काट कर मक्के में चढ़ा दिया। सारे मुसलमान समाज में इस बात की विशेष चर्चा हो गई कि कुर्बानी प्रभु के नाम पर ऐसे होती है। बंसुरी तो जन्नत में जाएगी।

(अब यहाँ नादान व्यक्तियों को सोचना चाहिए कि कुर्बानी अपनी करनी चाहिए। प्रभु के नाम पर बकरे और गाय या मुर्गे की नहीं। वास्तव में कुर्बानी प्रभु चरणों में समर्पण तथा सत्य भक्ति होती है। शीश काट देने तथा अविधि पूर्वक साधना करने से मुक्ति नहीं होती। यह तो काल की भूल भुलैया है। कुर्बानी गर्दन काटने से नहीं होती, समर्पण से होती है। प्रभु के निमित्त हृदय से समर्पण कर दे कि हे प्रभु तन भी तेरा, धन भी तेरा, यह दास या दासी भी तेरी, यह कुर्बानी प्रभु को पसंद है। हिंसा, हत्या प्रभु कभी पसंद नहीं करता।)

उसके बाद उसी लड़की राबिया का तीसरा जन्म अन्य समाज में हुआ। कर्म आधार पर वैश्या बनी। पूर्ण परमेश्वर (सतपुरूष कबीर साहेब) ही जीव के पाप कर्म काट सकता है अन्य नहीं काट सकते। जैसे हिन्दूस्तान का राष्ट्रपति फांसी की सजा को भी क्षमा कर सकता है, अन्य सजाएं तो कहना ही क्या है? अन्य कोई भी फांसी की सजा को क्षमा नहीं कर सकता। इसी प्रकार (पूर्ण परमात्मा) परम शक्तियुक्त कबीर साहेब हमारे सर्व दुःखों का निवारण कर सकते हैं। अन्य कोई खुदा किस्मत में लिखे कष्ट को समाप्त नहीं कर सकता।

(शेष कथा)

राबिया वाली आत्मा ने वैश्या का जीवन पूर्ण करके प्राण त्याग दिए। उसी राबिया का चौथा मानव जन्म शेखतकी, पीर के यहाँ लड़की के रूप में हुआ। जो सिकंदर लौधी का धार्मिक गुरु दिल्ली में था बारह वर्ष की आयु पूरी करके वह लड़की शरीर त्याग गई। उसको कब्र में दबा दिया गया।

कबीर साहेब कहते हैं कि :-

गरीब, जो जन मेरी शरण है, ताका हूँ मैं दास। गैल गैल लाग्या रहूं, जब लग धरणी आकाश।।
गरीब ज्यों बछा गऊ की नजर में, यों साई ने संत। भक्तों के पीछे फीरे, वो भक्त वत्सल भगवंत।।

उस पूर्ण परमात्मा की भक्ति अर्थात् कविर्देव अपनी भक्ति जो स्वयं सन्त रूप में आकर बताता है उस सतगुरु रूप में प्रकट कबीर साहेब के बताए अनुसार सत भक्ति इस लड़की ने चार-पाँच वर्ष की थी। उसके बाद त्याग दी थी। उस भक्ति के परिणाम स्वरूप इसको लगातार तीन मनुष्य शरीर प्राप्त हुए। उसका आगे मनुष्य जीवन का संस्कार शेष नहीं था। अब इस आत्मा ने चौरासी

लाख योनियों में कष्ट पर कष्ट उठाना था। कबीर प्रभु दयालु हैं। कारण बनाया, उस लड़की को वहाँ कब्र से जीवित करके अपने चरणों में ले करके कमाली नाम रखा और इस प्यारी बिटिया को उपदेश दिया और मुक्ति प्रदान की। इसी प्रकार हमने यह सोचना होगा कि हम जड़ों में पानी डालेंगे तो पौधा हरा-भरा होगा। हम पत्ते और टहनियों की पूजा कर रहे हैं ये गलत है।

कबीर, अक्षर पुरूष एक पेड़ है, निरंजन वाकी डार। तीनों देवा शाखा हैं, पात रूप संसार।।

उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वक्ष है। इसकी ऊपर को जड़ें परम अक्षर पुरुष सतपुरूष पूर्ण ब्रह्म हैं और जमीन से बाहर जो तना दिखाई देता है वह अक्षर पुरुष (परब्रह्म) समझो। उसके बाद तने के एक मोटी डार होती है। उस डाल को ज्योति निरंजन (ब्रह्म) समझो। उस डार की फिर तीन शाखाएँ ब्रह्मा, विष्णु, महेश समझो और फिर इनके ये टहनियाँ देवी देवता और पत्ते संसार समझो। ऐसा कबीर साहेब ने पूरी सष्टि रचना को एक ही दोहे में सुना दिया।

"शेखतकी की मत लड़की कमाली को जीवित करना"

शेखतकी ने देखा कि यह कबीर तो किसी प्रकार भी काबू नहीं आ रहा है। तब शेखतकी ने जनता से कहा कि यह कबीर तो जादूगर है। ऐसे ही जन्त्र-मन्त्र दिखाकर इसने बादशाह सिकंदर की बुद्धि भ्रष्ट कर रखी है। सारे मुसलमानों से कहा कि तुम मेरा साथ दो, वरना बात बिगड़ जाएगी। भोले मुसलमानों ने कहा पीर जी हम तेरे साथ हैं, जैसे तू कहेगा ऐसे ही करेंगे। शेखतकी ने कहा इस कबीर को तब प्रभु मानेंगे जब मेरी लड़की को जीवित कर देगा जो कब्र में दबी हुई है।

पूज्य कबीर साहेब से प्रार्थना हुई। कबीर साहेब ने सोचा यह नादान आत्मा ऐसे ही मान जाए। {क्योंकि ये सभी जीवात्माऐं कबीर साहेब के बच्चे हैं। यह तो काल ने (मजहब) धर्म का हमारे ऊपर कवर चढ़ा रखा है। एक-दूसरे के दुश्मन बना रखे हैं।} शेखतकी की लड़की का शव कब्र में दबा रखा था। शेखतकी ने कहा कि यदि मेरी लड़की को जीवित कर दे तो हम इस कबीर को अल्लाह स्वीकार कर लेंगे और सभी जगह ढिंढ़ोरा पिटवा दूँगा कि यह कबीर जी भगवान है। कबीर साहेब ने कहा कि ठीक है। वह दिन निश्चित हुआ। कबीर साहेब ने कहा कि सभी जगह सूचना दे दो, कहीं फिर किसी को शंका न रह जाए। हजारों की संख्या में वहाँ पर भक्त आत्मा दर्शनार्थ एकत्रित हुई। कबीर साहेब ने कब्र खुदवाई। उसमें एक बारह-तेरह वर्ष की लड़की का शव रखा हुआ था। कबीर साहेब ने शेखतकी से कहा कि पहले आप जीवित कर लो। सभी उपस्थित जनों ने कहा है कि महाराज जी यदि इसके पास कोई ऐसी शक्ति होती तो अपने बच्चे को कौन मरने देता है? अपने बच्चे की जान के लिए व्यक्ति अपना तन मन धन लगा देता है। हे दीन दयाल आप कपा करो। पूज्य कबीर परमेश्वर ने कहा कि हे शेखतकी की लड़की जीवित हो जा। तीन बार कहा लेकिन लड़की जीवित नहीं हुई। शेखतकी ने तो भंगड़ा पा दिया। नाचे-कूदे कि देखा न पाखण्डी का पाखंड पकड़ा गया। कबीर साहेब उसको नचाना चाहते थे कि इसको नाचने दे।

कबीर, राज तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह। मान बड़ाई ईर्ष्या, दुर्लभ तजना ये।।

मान-बड़ाई, ईर्ष्या की बीमारी बहुत भयानक है। अपनी लड़की के जीवित न होने का दुःख नहीं, कबीर साहेब की पराजय की खुशी मना रहा था। कबीर साहेब ने कहा कि बैठ जाओ महात्मा जी, शान्ति रखो। कबीर साहेब ने आदेश दिया कि हे जीवात्मा जहाँ भी है कबीर आदेश से इस शव में प्रवेश करो और बाहर आओ। कबीर साहेब का कहना ही था कि इतने में शव में कम्पन हुआ

और वह लड़की जीवित होकर बाहर आई, कबीर साहेब के चरणों में दण्डवत् प्रणाम किया। (बोलो सतगुरु देव की जय।)

उस लड़की ने डेढ घण्टे तक कबीर साहेब की कपा से प्रवचन किए। कहा हे भोली जनता ये भगवान आए हुए हैं। पूर्ण ब्रह्म अन्नत कोटि ब्रह्मण्ड के परमेश्वर हैं। क्या तुम इसको एक मामूली जुलाहा(धाणक) मान रहे हो। हे भूले-भटके प्राणियों ये आपके सामने स्वयं परमेश्वर आए हैं। इनके चरणों में गिरकर अपने जन्म-मरण का दीर्घ रोग कटवाओ और सत्यलोक चलो। जहाँ पर जाने के बाद जीवात्मा जन्म-मरण के चक्कर से बच जाती है। कमाली ने बताया कि इस काल के जाल से बन्दी छोड़ कबीर साहेब के बिना कोई नहीं छुटवा सकता। चाहे हिन्दू पद्धति से तीर्थ-व्रत, गीता-भागवत, रामायण, महाभारत, पुराण, उपनिषद्ध, वेदों का पाठ करना, राम, कष्ण, ब्रह्मा-विष्णु-शिव, शेराँवाली(आदि माया, आदि भवानी, प्रकति देवी), ज्योति निरंजन की उपासना भी क्यों न करें, जीव चौरासी लाख प्राणियों के शरीर में कष्ट से नहीं बच सकता और मुसलमान पद्धति से भी जीव काल के जाल से नहीं छूट सकता। जैसे रोजे रखना, ईद बकरीद मनाना, पाँच वक्त नमाज करना, मक्का-मदीना में जाना, मस्जिद में बंग देना आदि सर्व व्यर्थ है। कमाली ने सर्व उपस्थित जनों को सम्बोधित करते हुए अपने पिछले जन्मों की कथा सुनाई जो उसे कबीर साहेब की कपा से याद हो आई थी। जो कि आप पूर्व पढ़ चुके हो।

कबीर साहेब ने कहा कि बेटी अपने पिता के साथ जाओ। वह लड़की बोली मेरे वास्तविक पिता तो आप हैं। यह तो नकली पिता है। इसने तो मैं मिट्टी में दबा दी थी। मेरा और इसका हिसाब बराबर हो चुका है। सभी उपस्थित व्यक्तियों ने कहा कि कबीर परमेश्वर ने कमाल कर दिया। कबीर साहेब ने लड़की का नाम कमाली रख दिया और अपनी बेटी की तरह रखा और नाम दिया। उपस्थित व्यक्तियों ने हजारों की संख्या में कबीर परमेश्वर से उपदेश ग्रहण किया। अब शेखतकी ने सोचा कि यह तो और भी बात बिगड़ गई। मेरी तो सारी प्रभुता गई।

"कबीर साहेब को सरसों के गर्म तेल के कड़ाहे में डालना"

अब शेखतकी ने देखा कि कबीर साहेब जी की तो और अधिक महिमा हो गई। वह फिर साहेब को किसी न किसी प्रकार नीचा दिखाने की योजना बनाने लगा। इतनी लीला देखकर भी शेखतकी नीच की आँखें नहीं खुली। परमात्मा सामने थे, परन्तु मान-बड़ाई वश स्वीकार नहीं कर रहा था।

कुछ दिनों पश्चात् फिर शेखतकी ने मुसलमानों को इक्कट्ठे किया और कहा कि यह कबीर कोई जादूगर है। हम इसकी एक और परीक्षा लेंगे। हजारों की संख्या में मुसलमान शेखतकी के साथ राजा सिकंदर के पास गए तथा कहा कि हम इस कबीर को उबलते सरसों के तेल के कड़ाहे में डालेंगे। यदि यह नहीं मरा तो हम इसको भगवान मान लेंगे। सिकंदर लौधी घबरा गया कि कहीं ये मेरे राज को न पलट दें। कबीर साहेब के पास गया और प्रार्थना की कि महाराज जी मैं आपको यहाँ पर लाया तो था सेवा करने के लिए। लेकिन मैंने तो आपको दुःखी कर दिया दाता। कबीर साहेब ने पूछा कि क्या बात है राजन्? सिकंदर लौधी ने कहा कि साहेब आप तो जानीजान हो, शेखतकी ऐसे-ऐसे कह रहा है। कबीर साहेब जी बोले राजन् कोई बात नहीं, इन्होंने तो मुझे खत्म करना ही है। आज नहीं तो कल करेंगे। आज ही टंटा कट जाए तो बहुत अच्छा। कबीर साहेब ने कहा कि कह दे उनको कि तेल गर्म कर लेंगे। कबीर साहेब जी सोचते थे कि यह नादान शेखतकी

ऐसे ही मान जाए। सिकंदर लौधी ने शेखतकी से कहा कि कर लो तेल गर्म।

शेखतकी ने बहुत मोटी-मोटी लकड़ी लगा कर तेल के कड़ाहे को बहुत उबाल दिया और कहा इस कबीर को उठा कर इसमें डाल दो। कबीर साहेब बोले कि शेख जी यह कष्ट भी क्यों कर रहे हो, मैं स्वयं ही बैठ जाऊँगा। पूज्य कबीर साहेब जी उस उबलते तेल के कड़ाहे में प्रवेश कर गए। केवल गर्दन बाहर दिखाई दे रही थी। शेष शरीर उस उबलते हुए तेल में था। कबीर साहेब जी आराम से बैठे थे जैसे ठण्डे पानी में बैठे हों। शेखतकी ने कहा कि यह जंत्र-मंत्र जानता है। इसने इस तेल को ठंडा कर दिया है। यह वैसे उबलता हुआ दिखाई दे रहा है। सिकंदर लौधी ने सोचा कि कहीं सचमुच यह ठण्डा हो गया हो। सिकंदर ने परीक्षण के लिए उस उबलते हुए तेल के कड़ाहे में ऊँगली देनी चाही। कबीर साहेब ने कहा कि राजा इसमें ऊँगली मत देना, कहीं इस बावली बूच के चक्कर में आकर हाथ नष्ट करवा ले। यह इतना गर्म है कि ऊँगली ढूंढी नहीं मिलेगी। सिकंदर ने सोचा कि जब कबीर साहेब जी तेल में बैठे हैं तो तुझे क्या होगा? यह सोचकर मना करते-करते उस उबलते हुए तेल के कड़ाहे में ऊँगली दे दी। जितनी ऊँगली तेल में गई थी उतनी कट कर अलग हो गई और राजा दर्द के मारे बेहोश हो गया। कबीर साहेब ने सोचा कि यह नादान बादशाह इस ईर्षालु शेखतकी के चक्कर में मरेगा। कबीर साहेब तेल के कड़ाहे से बाहर आए। सिकंदर को होश में लाया गया। इतनी पीड़ा थी कि फिर बेहोश हो गया। कबीर साहेब ने ऊँगली को पकड़ कर पूरा कर दिया। बादशाह सिकंदर सचेत हो गया। सिकंदर ने क्षमा याचना करते हुए कहा कि मुझे माफ कर दो दाता, मेरे से गलती हो गई। कबीर साहेब ने कहा कि राजन् आपका दोष नहीं है। काल नहीं चाहता कि मेरे बच्चे मुझे पहचान लें।

शेखतकी द्वारा कबीर साहेब को गहरे कुएँ (झेरे) में डालना”

शेखतकी ने देखा कि यह तो ऐसे भी नहीं मरा। मुसलमानों को पुनर् इक्कठा किया और कहा कि अब की बार इस कबीर को कुएँ में डालकर ऊपर से मिट्टी, ईटें और रोड़े डाल देंगे। तब देखेंगे यह कैसे बचेगा? भोली जनता तो जैसे पीर जी कहे वैसे ही करने को तैयार थी।

शेखतकी ने सिकंदर लौधी से कहा कि हम इसकी एक परीक्षा और लेंगे। सिकंदर ने पूछा कि क्या परीक्षा लोगे? शेखतकी ने कहा कि हम इसको झेरे कुएँ में डालेंगे और फिर देखेंगे कि वहाँ से कैसे जीवित होगा?

{अब इतनी लीला देखकर भी राजा का अपने मालिक (खुदा कबीर) पर विश्वास नहीं बना। नहीं तो धमका देता कि जा करले तूने जो करना है। मैं नहीं दुःखी करूं अपने भगवान को। फिर देखता उसका राज्य जाता या और मौज हो जाती।} राजा ने सोचा कहीं मेरा राज्य न चला जाए। सिकंदर लौधी राजा ने साहेब से प्रार्थना की कि यह शेखतकी तो नहीं मानता और आज ऐसे-ऐसे जिद्द किए हुए है। पूज्य कबीर साहेब जी ने कहा ठीक है। कर लेने दे इसको जो यह करे। मेरा भी टंटा कटे। मैं भी दुःखी हो लिया। कह दे कि तुने जो करना है कर ले।

शेखतकी कबीर साहेब जी को बाँध जूड़ कर ले गया और जाकर गहरे झेरे कुएँ में डलवा दिया। वहाँ पर हजारों व्यक्तियों को इक्कठा किए हुए था। बहुत गहरा अंधा कुआँ जिसमें पानी गंदा और थोड़ा-सा पड़ा था और ऊपर से मिट्टी, कांटेदार छड़ी, गोबर, ईंट आदि से डेढ़ सो फूट ऊँचा पूरा भर दिया। फिर शेखतकी हाथ-मुँह धोकर सिकंदर लौधी के पास गया तथा कहा कि राजा कर

दिया तेरे शेर को समाप्त। उसके ऊपर इतनी मिट्टी डाल दी है कि अब किसी भी प्रकार बाहर नहीं आ सकता। सिकंदर लौधी ने पूछा पीर जी आप किसकी बात कर रहे हो? शेखतकी बोला कि तेरे गुरुदेव कबीर की। उसको आज हमने समाप्त कर दिया है। सिकंदर ने कहा कि पीर जी पूज्य कबीर साहेब जी तो अंदर कमरे में बैठे हैं, वे तो कहीं पर गये ही नहीं। शेखतकी ने अंदर जाकर देखा तो पूज्य कबीर साहेब अंदर कमरे में आसन पर आराम से बैठे थे। शेखतकी को तो और ज्यादा इर्ष्या हो गई कि यह कबीर तो मारे से मर नहीं रहा। अब क्या किया जाए? अन्य समझदार व्यक्ति तो मान गये, हजारों ने उपदेश लिया, प्रभु कबीर जी के शिष्य बने, परन्तु वह शेखतकी दुष्ट नहीं माना।

शाहतकी नहीं लखी, निरंजन चाल रे। इस परचे तै आगे माँगे जवाल रे।।

शेखतकी बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर की महिमा को नहीं समझ पाया। उसको चाहिए था भगवान के चरणों में गिरकर क्षमा याचना करता तथा अपना आत्म कल्याण करवाता, परन्तु मान-बड़ाई वश होकर साहेब का दुश्मन बन गया। शेखतकी ने और भी बहुत से जुल्म किए। कबीर साहेब काशी लौट गए।

"शेखतकी द्वारा कबीर साहेब को गुंडों से मरवाने की निष्फल कुचेष्टा"

कबीर साहेब के काशी आने के बाद शेखतकी ने सोचा कि यह कबीर तो किसी भी प्रकार नहीं मर रहा। वह कबीर साहेब को मारने के लिए रात्री के समय कुछ गुंडों को साथ लेकर कबीर साहेब की झोपड़ी पर गया। कबीर साहेब सो रहे थे। शेखतकी ने गुंडों से कहा कि इसके टुकड़े-टुकड़े कर दो। गुंडों ने तलवार से पूज्य कबीर साहेब जी के टुकड़े-टुकड़े कर दिए और अपनी तरफ से मरा हुआ जानकर चल पड़े। जब वे झोपड़ी से बाहर निकले तो पीछे से कबीर साहेब ने उठकर कहा कि पीर जी, दूध पीकर जाना। ऐसे थोड़े ही जाते हैं। शेखतकी व उसके गुंडों ने सोचा कि यह भूत है। वहाँ से भाग गये। उन गुंडों को तो बुखार हो गया। कई दिन तक बुखार नहीं उतरा।

कबीर साहेब उनके पास गये और उनको ठीक किया तथा कहा कि यह पीर तुम्हें मरवा कर छोड़ेगा, यह तुम्हें गुमराह कर रहा है। तब उन्होंने कबीर साहेब से क्षमा याचना की।

श्री कृष्ण जी की उपस्थिति में ऋषि दुर्वासा के श्राप से श्री कृष्ण जी का पूरा परिवार व पूरा यादव कुल आपस में लड़कर मर गया। श्री कृष्ण जी उस लड़ाई (गृह युद्ध) को रोक नहीं पाए। अपने कुल की रक्षा नहीं कर पाए तथा त्रेतायुग में श्री विष्णु जी ने श्री रामचन्द्र रूप में बाली राजा को वृक्ष की ओट लेकर धोखे से मारा था। उसका बदला द्वापर युग में श्री कृष्ण रूप में देना पड़ा। श्री कृष्ण जी को बाली वाली आत्मा (जो उस समय शिकारी जो बालिया नाम से जन्मा था) ने विषाक्त (जहर से बुझे) तीर से मारा। अपनी रक्षा भी नहीं कर सके तथा ऋषि दुर्वासा के श्राप से भी बचाव नहीं कर सके जो तीन ताप में से एक ताप है।

संत गरीबदास जी ने कहा है कि :-

तुम कौन राम का जपते जापं। तातैं कटैं ना तीनूं तापं।।

अर्थात् आप किस प्रभु को इष्ट रूप में मानकर जाप करते हो यानि श्री विष्णु (राम) भगवान की भक्ति से तीन ताप नहीं कट सकते। परम अक्षर ब्रह्म कबीर जी तीन ताप भी काट देते हैं। होने वाले युद्ध को भी टाल सकते हैं। परमेश्वर कबीर जी की मृत्यु नहीं हुई, वे सशरीर सतलोक गए थे।

''श्री कृष्ण जी का अंत महा दुःखमय रहा''

श्री कृष्ण जी की आँखों के सामने उनका सारा यादव कुल, उनके बेटे, पोते आदि-आदि आपस में लड़ाई करके कट मरे। श्री कृष्ण उनको बचा नहीं सका। श्री कृष्ण जी की हत्या (Murder) एक शिकारी ने की। क्या यही लक्षण हैं समर्थ प्रभु के? पेश है सम्पूर्ण कथा जो इस प्रकार है :-

कथा :- ''दुर्वासा ऋषि ने कृष्ण समेत छप्पन करोड़ यादवों को श्राप देकर मार डाला''

एक समय दुर्वासा ऋषि द्वारिका नगरी के पास वन में आकर ठहरा। धूना अग्नि लगाकर तपस्या करने लगा। दुर्वासा ऋषि श्री कृष्ण जी के आध्यात्मिक गुरू थे {ऋषि संदीपनी श्री कृष्ण के अक्षर ज्ञान करवाने वाले शिक्षक (गुरू) थे।} दुर्वासा जी की ख्याति चारों ओर द्वारका नगरी में फैल गई कि ऐसे पहुँचे हुए ऋषि हैं। भूत, भविष्य तथा वर्तमान की सब जानते हैं। द्वारिका के निवासी श्री कृष्ण से अधिक शक्तिशाली किसी भी ऋषि व देव को नहीं मानते थे। उनको अभिमान था कि हमारे साथ श्री कृष्ण हैं। कोई भी देव, ऋषि व साधु हमारा कुछ नहीं बिगाड़ सकता। श्री कृष्ण को सर्वशक्तिमान मान रखा था।

द्वारिका के नौजवानों को शरारत सूझी। आपस में विचार किया कि साधु लोग ढोंगी होते हैं। इनकी पोल खोलनी चाहिए। चलो दुर्वासा ऋषि की परीक्षा लेते हैं। श्री कृष्ण के पुत्र प्रद्यूमन ने गर्भवती स्त्री का स्वांग धारण किया। पेट के ऊपर छोटा कड़ाहा बाँधा। उसके ऊपर रूई-लोगड़ रखकर वस्त्र बाँधकर स्त्री के कपड़े पहना दिए। उसका एक पति बना लिया। सात-आठ नौजवान यादव उनके साथ दुर्वासा के डेरे में गए और प्रणाम करके निवेदन किया कि ऋषि जी आपका बहुत नाम सुना है कि आप भूत-भविष्य तथा वर्तमान की जानते हैं। ये पति-पत्नी हैं। इनके विवाह के बारह वर्ष बाद परमात्मा ने संतान की आशा पूरी की है। ये यह जानना चाहते हैं कि गर्भ में लड़का होगा या लड़की। ये यह जानने के लिए उतावले हो रहे हैं। कृपया बताने का कष्ट करें। दुर्वासा ऋषि ने ध्यान लगाकर देखा तो सब समझ में आ गया। क्रोध में भरकर बोला, बताऊँ क्या होगा? सबने एक स्वर में कहा कि हाँ! ऋषि जी बताओ। दुर्वासा बोला कि इस गर्भ से यादव कुल का नाश होगा। चले जाओ यहाँ से। सब भाग लिए। गाँव में बुद्धिमान बुजुर्गों को पता चला कि बच्चों ने ऋषि दुर्वासा के साथ मजाक कर दिया। ऋषि ने यादव कुल का नाश होने का शॉप दे दिया है। जुल्म हो गया। सब मरेंगे। अब क्या उपाय किया जाए? सब मिलकर अपने गुरू तथा राजा श्री कृष्ण जी के पास गए तथा सब हाल कह सुनाया। श्री कृष्ण जी से कहा कि इस कहर से आप ही बचा सकते हो। श्री कृष्ण जी ने कहा कि उन सब बच्चों को साथ लेकर ऋषि दुर्वासा के पास जाओ। इनसे क्षमा मँगवाओ। तुम भी बच्चों की ओर से क्षमा माँगो। सब मिलकर ऋषि दुर्वासा के पास गए तथा बच्चों से गलती की क्षमा याचना करवाई। स्वयं भी क्षमा याचना की। ऋषि दुर्वासा बोले कि वचन वापिस नहीं हो सकता। सब वापिस श्री कृष्ण के पास आए तथा कहा कि दुर्वासा के शॉप से बचने का उपाय बताएँ। श्री कृष्ण ने कहा कि जो-जो वस्तु गर्भ स्वांग में प्रयोग की थी। उनका नामों-निशान मिटा दो। उन्हीं से अपने कुल का नाश होना कहा है। कपड़े-रूई-लोगड़ को जलाकर उनकी राख को

प्रभास क्षेत्र में नदी में डाल दो। जो लोहे की कड़ाही है, उसे पत्थर पर घिसा-घिसाकर चूरा बनाकर प्रभास क्षेत्र में दरिया में डाल दो। न रहेगा बाँस, न बजेगी बाँसुरी।

द्वारिकावासियों ने अपने गुरू श्री कृष्ण जी के आदेश का पालन किया। लोहे की कड़ाही का एक कड़ा एक व्यक्ति को घिसाने के लिए दिया था। उसने कुछ घिसाया, पूरा नहीं घिसा। वैसे ही जमना दरिया में फैंक दिया। घिसने से उस कड़े में चमक आ गई थी। एक मछली ने उसे खाने की वस्तु समझकर खा लिया। उस मछली को एक बालिया नाम के भील ने पकड़कर काटा तो कड़ा निकला। उसका लोहा पक्का था। बालिया ने उससे अपने तीर का आगे वाला हिस्सा विषाक्त बनवा लिया। कड़ाहे का जो लोहे का चूर्ण दरिया में डाला था, उसका तेज-तीखे पत्तों वाला घास उग गया। पत्ते तलवार की तरह पैने थे। कपड़ों तथा रूई-लोगड़ (पुरानी रूई) की राख का भी घास उग गया। कुछ वर्षों के बाद दुर्वासा के शॉप के कारण द्वारिका में अनहोनी घटनाएँ होने लगी। आपसी झगड़े होने लगे। एक-दूसरे को छोटी-सी बात पर मारने लगे। सारी द्वारिका में उपद्रव होने लगे। द्वारिका नगरी के बड़े-सयाने लोग मिलकर श्री कृष्ण जी के पास गए तथा दुःख बताया कि नगरी में किसी को किसी का बोल अच्छा नहीं लग रहा है। बिना बात के मरने-मारने को तैयार हो जाते हैं। छोटे-बड़े की शर्म नहीं रही है। क्या कारण है तथा यह कैसे शान्त होगा? श्री कृष्ण जी ने बताया कि ऋषि दुर्वासा के शॉप के कारण यह हो रहा है। इसका समाधान सुनो! नगरी के सर्व नर (छोटे नवजात लड़के साहित) यादव प्रभास क्षेत्र में उसी स्थान पर यमुना नदी में स्नान करो जिस स्थान पर कड़ाही का चूर्ण डाला था।

शॉप से बचने के लिए द्वारिका नगरी के सब बालक, नौजवान तथा वृद्ध स्नान करने गए। स्नान करके बाहर निकलकर एक-दूसरे से गाली-गलौच करने लगे और उस कड़ाही के चूरे से उत्पन्न घास को उखाड़कर एक-दूसरे को मारने लगे। तलवार की तरह घास से सिर कटकर दूर गिरने लगे। कुछ व्यक्ति बचे थे। अन्य सब के सब लड़कर मर गए। उन बचे हुओं को ज्योति निरंजन काल ने स्वयं श्री कृष्ण में प्रवेश करके उस घास से मार डाला। अकेला श्री कृष्ण बचा था। एक वृक्ष के नीचे जाकर लेट गया। एक पैर को दूसरे पैर के घुटने पर रखकर लेट गया। दायें पैर के तलुए (पँजे) में पदम जन्म से लगा था जो चमक रहा था। जिस बालिया नाम के भील शिकारी ने मछली से निकले कड़ाही के कड़े का विष लगाकर तीर बनवाया था। वह शिकारी उसी तीर को लेकर उस स्थान पर शिकार की तलाश में आया जिस वृक्ष के नीचे श्री कृष्ण लेटे थे। वृक्ष की छोटी-छोटी टहनियाँ चारों और नीचे पृथ्वी को छू रही थी। लटक रही थी। उन झुरमुटों में से श्री कृष्ण के पैर का पदम ऐसा लग रहा था जैसे किसी मृग की आँख चमक रही हो। शिकारी बालिया ने आव-देखा न ताव, उस चमक पर तीर दे मारा। तीर निशाने पर लगा। पैर के तलवे में विषाक्त तीर लगने से श्री कृष्ण की चीख निकली। बालिया समझ गया कि किसी व्यक्ति को तीर लगा है। निकट जाकर देखा तो कोई राजा है। पूछने पर पता चला कि श्री कृष्ण है। अपनी गलती की क्षमा याचना करने लगा कहा कि भगवान! धोखे से तीर लग गया। मैंने आपके पैर के पदम की चमक मृग की आँख जैसी लगी। क्षमा करो।

श्री कृष्ण ने कहा कि बालिया तेरा कोई दोष नहीं है, होनी प्रबल होती है। मैंने तेरा बदला चुकाया है। त्रेतायुग में तू किसकिंधा का राजा सुग्रीव का भाई बाली था। मैं अयोध्या में रामचन्द्र नाम से राजा दशरथ के घर जन्मा था। उस समय मैंने तेरे को वृक्ष की ओट लेकर धोखा करके

लड़ाई में मारा था। अब तू मेरा एक काम कर। द्वारिका में जाकर बता दे कि सर्व यादव दुर्वासा के शॉपवश आपस में लड़कर मर गए हैं। कुछ समय उपरांत द्वारिका की स्त्रियों की भीड़ लग गई। हाहाकार मच गया। पाण्डव श्री कष्ण के रिश्तेदार थे। वे भी आ गए। श्री कष्ण ने अर्जुन से कहा कि आप सर्व गोपियों यानि यादवों की स्त्रियों को अपने पास ले जाना। यहाँ कोई नर यादव नहीं बचा है। आसपास के भील इनकी इज्जत खराब करेंगे। पाण्डवों से कहा कि तुम राज्य अपने पौत्र को देकर हिमालय में जाकर घोर तप करो और अपने युद्ध में किए पापों का नाश करो। अर्जुन ने पूछा भगवान! एक प्रश्न आज मैं आपसे करूँगा। आप सत्य उत्तर देना। आप अंतिम श्वांस गिन रहे हो, झूठ मत बोलना। श्री कष्ण ने कहा कि प्रश्न कर। अर्जुन बोला! आपने गीता का ज्ञान कुरूक्षेत्र के मैदान में महाभारत युद्ध से पहले सुनाया था। उसमें कहा था कि अर्जुन! युद्ध कर ले। तुम्हें कोई पाप नहीं लगेंगे। तू निमित मात्र बन जा। सब सैनिक मैंने मार रखे हैं। तू युद्ध नहीं करेगा तो भी मैं इन्हें मार दूँगा। जब युद्धिष्ठिर को भयंकर स्वपन आने लगे। आपसे कारण जाना तो आपने बताया था कि युद्ध में किए बंधुघात के पाप के परिणामस्वरूप कष्ट आया। समाधान यज्ञ करना बताया। उस समय मैं आपसे विवाद नहीं कर सका क्योंकि भाई की जिंदगी का सवाल था। आज फिर आपने वही जख्म हरा कर दिया। इतनी झूठ बोलकर हमारा नाश किसलिए करवाया? कौन-से जन्म का बदला लिया? श्री कष्ण ने कहा अर्जुन! तुम मेरे अजीज हो! होनहार बलवान होती है। गीता में क्या कहा, उसका मुझे कोई ज्ञान नहीं। आप मेरी आज्ञा का पालन करो। यह कहकर श्री कष्ण मर गए। पाँचों पाण्डवों व साथ गए नौकरों ने मिलकर सब यादवों का अंतिम संस्कार किया। कुछ के शव दरिया में प्रवाह कर दिए। श्री कष्ण ने कहा था कि मेरे शरीर को जलाकर बची हुई अस्थियाँ व राख को एक लकड़ी के संदूक (Box) में डालकर दरिया में बहा देना। पाण्डवों ने वैसा ही किया। {वह संदूक समुद्र में चला गया। फिर उड़ीसा प्रांत के अंदर जगन्नाथ पुरी के पास बहता हुआ चला गया। उड़ीसा के राजा इन्द्रदमन को स्वपन में श्री कष्ण ने दर्शन देकर कहा कि एक संदूक समुद्र में इस स्थान पर है। उसमें मेरे शरीर की अस्थियाँ तथा राख हैं। उसको निकालकर उसी किनारे पर उन अस्थियों (हडिड्यों) को जमीन में दबाकर ऊपर एक सुंदर मंदिर बनवा दे। ऐसा किया गया। जो जगन्नाथ नाम से मंदिर प्रसिद्ध है।}

सब यादवों का अंतिम संस्कार करके चार पाण्डव पहले चले गए। अर्जुन को गोपियों को लेकर आने को छोड़ गए। अर्जुन के पास वही गांडीव धनुष था जिससे लड़ाई करके महाभारत में जीत प्राप्त की थी। अर्जुन द्वारिका की सर्व स्त्रियों को बैलगाड़ियों में बैठाकर इन्द्रप्रस्थ (दिल्ली) के लिए चल पड़ा। रास्ते में भीलों ने अर्जुन को घेर लिया। अर्जुन को पीटा। गोपियों को लूटा। कुछ स्त्रियों को भील उठा ले गए। अर्जुन कुछ नहीं कर सका। धनुष उठा भी नहीं सका। तब अर्जुन ने कहा था कि कष्ण नाश करना था। युद्ध में पाप करवाने के लिए तो बल दे दिया। लाखों योद्धा इसी गांडीव धनुष से मार गिराए। कोई मेरे सामने टिकने वाला नहीं था। आज वही अर्जुन है, वही धनुष है। मैं खड़ा-खड़ा काँप रहा हूँ। कष्ण जालिम था। धोखेबाज था। कबीर परमेश्वर जी हमें समझाते हैं कि यह जुल्म कष्ण ने नहीं किया, ज्योति निरंजन (काल ब्रह्म) ने किया है। श्री कष्ण का जीवन देख लो। श्री कष्ण अपने कुल को मथुरा से लेकर जान बचाकर द्वारिका आया। द्वारिका में उनकी आँखों के सामने सब यादव कुल नष्ट हो गया। श्री कष्ण का बेटा मर गया। पोता मर गया। श्री कष्ण के दस हजार पुत्र थे। सब मारे गए। रावण की तरह सर्व कुल नष्ट हो गया। स्वयं

बेमौत मरा। उसके कुल की स्त्रियों की दुर्गति भीलों ने की। जबरदस्ती उठा ले गए। उनकी इज्जत खराब की। नरक का जीवन जीने के लिए मजबूर हुई। उसी श्री कष्ण की पूजा करके जो सुख-शान्ति की आशा करता है। उसमें कितनी बुद्धि है, इस घटना से पता चलता है।

➢ <u>सारांश :- श्री कष्ण दुर्वासा के शॉप से स्वयं तथा अपने कुल की रक्षा नहीं कर सका। तो क्या आपकी (कष्ण की भक्ति करने वालों की) रक्षा करेगा? कभी नहीं।</u>

<u>श्री कष्ण ने शॉप से बचाव का उपाय बताया कि कड़ाही को घिसकर चूरा बनाकर दरिया में डाल दो। वैसा ही किया गया। फिर भी शॉप ने प्रभाव दिखाया। फिर शॉप से बचने का अन्य उपाय बताया कि यमुना दरिया में स्नान करो। शॉप असर नहीं करेगा। स्नान करने गए थे, शॉप नाश करवाने वाले यादवों का ही नाश हो गया। शॉप का कष्ट तीन ताप के कारण आता है। संत गरीबदास जी ने कहा है कि</u> :-

गरीब, तुम कौन राम का जपते जापं। ताते कटें ना तीनों तापं।।

❖ <u>अर्थात् तुम किस प्रभु का जाप करते हो, भक्ति करते हो जिससे तुम्हारे तीन ताप भी समाप्त नहीं होते।</u>

गरीब, सतगुरू जो चाहें सो करही, चौदह कोटि दूत जम डर ही।
ऊत भूत जम त्रास निवारें, चित्र–गुप्त के कागज फाड़े।।
गरीब, जम जौरा जासे डरें, मिटे कर्म के लेख। सतगुरू पुरूष कबीर हैं, कुल के सतगुरू एक।।
गरीब, सब पदवी के मूल है, सकल सिद्धि हैं तीर। दास गरीब सतपुरूष भजो, अविगत कला कबीर।।

❖ अर्थात् सतगुरू कबीर जी पूर्ण परमात्मा हैं। वे तीन ताप तो क्या सर्व पापों का नाश कर देते हैं। जो चाहे सो कर सकते हैं। पाप कर्मों के लेख मिटा देते हैं। उनसे चौदह करोड़ जो यम के दूत हैं, वे भी भय मानते हैं। (जम) यमराज (जौरा) मत्यु जिससे डरते हैं, वे सतगुरू कबीर जी हैं। कुल के (सबके) एकमात्र सतगुरू (यथार्थ अध्यात्म ज्ञान कराने वाले) हैं। सतपुरूष (अविनाशी परमात्मा) समर्थ हैं। सब पदवियों के योग्य वही हैं। जैसे परमात्मा पदवी, बन्दी छोड़ की पदवी, कवि की पदवी, सजनहार की पदवी, पालनहार की पदवी आदि-आदि सब पदवी के मूल हैं। सब सिद्धियाँ उन्हीं के पास हैं। उस सतपुरूष के (कला) अवतार कबीर जी हैं। उस सतपुरूष की भक्ति करो:-

गरीब, हम सुल्तानी नानक तारे, दादू कूँ उपदेश दिया।
जाति जुलाहा भेद ना पाया, काशी मांहि कबीर हुआ।।

❖ अर्थात् संत गरीबदास जी ने स्पष्ट किया है कि कबीर कौन है? बताया है कि हम सब यानि मैं, नानक देव, दादू दास जी, अब्राहिम अधम सुल्तान भक्तजी को तारा। (पार किया।) जो काशी वाले जुलाहे जाति वाले कबीर हैं। उनका भेद किसी को नहीं मिला यानि उनको पहचान नहीं सके कि ये समर्थ सजनहार हैं।

संत गरीबदास जी ने निष्कर्ष निकाला है कि :-

गरीब, दुर्वासा कोपे तहां, समझ न आई नीच। छपन कोटि यादव कटे मची रूधिर की कीच।।

❖ अर्थात् संत गरीबदास जी ने बताया है कि दुर्वासा दुष्ट को इतनी भी समझ नहीं आई कि क्या जुल्म करने जा रहा है? जरा सी बात का इतना बड़ा दण्ड कि छप्पन करोड़ यादव कटकर मर गए। खून का कीचड़ बन गया। धरती लाल हो गई।

☛ पेश है सशरीर सतलोक जाने व गहयुद्ध को समाप्त करने की सत्य कथा :-

''प्रभु कबीर जी का मगहर से सशरीर सत्यलोक गमन तथा सूखी नदी में नीर बहाना''

धर्मगुरूओं द्वारा भ्रम फैला रखा था कि जो काशी (बनारस) शहर में प्राण त्यागता है, वह स्वर्ग जाता है तथा जो मगहर नगर में प्राण त्यागता है, वह गधा बनता है। नरक में जाता है। इस भ्रम को तोड़ने के लिए कि जो मगहर में मरता है वह गधा बनता है और कांशी में मरने वाला स्वर्ग जाता है। (बन्दी छोड़ कहते थे कि सही विधि से भक्ति करने वाला प्राणी चाहे वह कहीं पर प्राण त्याग दे वह अपने सही स्थान पर जाएगा।) उन अज्ञानियों का भ्रम निवारण करने के लिए कबीर साहेब ने कहा कि मैं मगहर में मरूँगा और सभी ज्योतिषी वाले देख लेना कि मैं कहाँ जाऊँगा? नरक में जाऊँगा या स्वर्ग से भी ऊपर सतलोक में।

कबीर साहेब ने काँशी से मगहर के लिये प्रस्थान किया। बीर सिंह बघेला और बिजली खाँ पठान ये दोनों ही सतगुरू के शिष्य थे। बीर सिंह ने अपनी सेना साथ ले ली कि कबीर साहेब वहाँ पर अपना शरीर छोड़ेंगे। इस शरीर को लेकर हम काँशी में हिन्दू रीति से अंतिम संस्कार करेंगे। यदि मुसलमान नहीं मानेंगे तो लड़ाई कर के शव को लायेंगे। सेना भी साथ ले ली, अब इतनी बुद्धि है हमारी। कबीर परमेश्वर जी हर रोज शिक्षा दिया करते कि हिन्दू मुसलमान दो नहीं हैं। अंत में फिर वही बुद्धि। उधर से बिजली खाँ पठान को पता चला कि कबीर साहेब यहाँ पर आ रहे हैं।

बिजली खाँ पठान ने सतगुरू तथा सर्व आने वाले भक्तों तथा दर्शकों की खाने तथा पीने की सारी व्यवस्था की और कहा कि सेना तुम भी तैयार कर लो। हम अपने पीर कबीर साहेब का यहाँ पर मुसलमान विधि से अंतिम संस्कार करेंगे। कबीर साहेब के मगहर पहुँचने के बाद बिजली खाँ ने कहा कि महाराज जी स्नान करो। कबीर साहेब ने कहा कि बहते पानी में स्नान करूँगा। बिजली खान ने कहा कि सतगुरू देव यहाँ पर साथ में एक आमी नदी है, वह भगवान शिव के श्राप से सूखी पड़ी है। उसमें पानी नहीं है। जैसी व्यवस्था दास से हो पाई है पानी का प्रबंध करवाया है। आपके स्नान के लिए प्रबंध किया है। लेकिन संगत बहुत आ गई। इनके नहाने की तो बात बन नहीं पाएगी। पीने का पानी पर्याप्त मात्रा में बाहर से मंगवा रखा है। कबीर साहेब ने कहा कि वह नदी देखें कहाँ पर है? उस नदी पर जा कर साहेब ने हाथ से ऐसे इशारा किया था जैसे यातायात (ट्रैफिक) का सिपाही रूकी हुई गाड़ियों को जाने का संकेत करता है। वह आमी नदी पानी से पूरी भरकर चल पड़ी। "बोलो सतगुरू देव की जय"।

(यह आमी नदी वहाँ पर अभी भी विद्यमान है।) सब ने परमेश्वर कबीर जी की जय जयकार की।

❖ कबीर साहेब ने कहा कि एक चदद्र नीचे बिछाओ, एक मैं ऊपर ओढूँगा। (क्योंकि वे जानी जान तो थे) कहने लगे कि ये सेना कैसे ला रखी है तुमने? अब बिजली खाँ पठान और बीर सिंह बघेला आमने-सामने खड़े हैं। उन्होंने तो मुँह लटका लिया और बोले नहीं। वे दूसरे हिन्दू और मुसलमान बिना नाम वाले बोले कि जी हम आपका अंतिम संस्कार अपनी विधि से करेंगे। दूसरे कहते हैं कि हम अपनी विधि से करेंगे। चढा ली बाहें, उठा लिए हथियार तथा कहने लगे कि आ जाओ। कबीर साहेब ने कहा कि नादानों क्या मैंने यही शिक्षा दी थी 120 वर्ष तक। इस मिट्टी का तुम क्या करोगे? चाहे फूँक दो या गाड़ दो, इससे क्या मिलेगा? तुमने क्या शिक्षा ली मेरे से? सुन लो यदि झगड़ा कर लिया तो मेरे से बुरा नहीं होगा। वे जानते थे कि ये कबीर साहेब परम शक्ति युक्त हैं। यदि कुछ कह दिया तो बात बिगड़

जाएगी। शांत हो गये पर मन में यही थी कि शरीर छोड़ने दो, हमने तो यही करना है। वे तो जानी जान थे। उस दिन गहयुद्ध शुरू हो जाता, सत्यानाश हो जाता, यदि साहेब अपनी कपा न बक्शते। कबीर साहेब ने कहा कि एक काम कर लेना तुम मेरे शरीर को आधा-आधा काट लेना। परन्तु लड़ना मत। ये मेरा अंतिम आदेश सुन लो और मानो, इसमें जो वस्तु मिले उसको आधा आधा कर लेना। महिना माघ शुक्ल पक्ष तिथि एकादशी वि. स. 1575 (एक हजार पाँच सौ पचहतर) सन् 1518 को कबीर साहेब ने एक चद्दर नीचे बिछाई और एक ऊपर ओढ़ ली। कुछ फूल कबीर साहेब के नीचे वाली चद्दर पर दो इंच मोटाई में बिछा दिये। थोड़ी सी देर में आकाश वाणी हुई कि मैं तो जा रहा हूँ सतलोक में (स्वर्ग से भी ऊपर)। देख लो चद्दर उठा कर इसमें कोई शव नहीं है। जो वस्तु है वे आधी-आधी ले लेना परन्तु लड़ना नहीं। जब चदद्र उठाई तो सुगंधित फूलों का ढेर शव के समान ऊँचा मिला। बोलो सतगुरू देव की जय ''सत साहेब।''

बीर देव सिंह बघेल और बिजली खाँ पठान एक दूसरे के सीने से लग कर ऐसे रोने लगे जैसे कि बच्चों की माँ मर जाती है। फिर तो वहाँ पर रूदन मच गया। हिन्दू और मुसलमानों का प्यार सदा के लिए अटूट बन गया। एक दूसरे को सीने से लगा कर हिन्दू और मुसलमान रो रहे थे। कहने लगे कि हम समझे नहीं। ये तो वास्तव में अल्लाह आए हुए थे। और ऊपर आकाश में प्रकाश का गोला जा रहा था। बोलो सतगुरू देव की जय ''सत साहेब।'' तो वहाँ मगहर में दोनों धर्मों (हिन्दुओं तथा मुसलमानों) ने एक-एक चद्दर तथा आधे-आधे सुगंधित फूल लेकर सौ फूट के अंतर पर एक-एक यादगार भिन्न-भिन्न बनाई जो आज भी विद्यमान है तथा कुछ फूल लाकर कांशी में जहाँ कबीर साहेब एक चबूतरे(चौरा) पर बैठकर सतसंग किया करते वहाँ काँशी चौरा नाम से यादगार बनाई। अब वहाँ पर बहुत बड़ा आश्रम बना हुआ है। मगहर में दोनों यादगारों के बीच में एक साझला द्वार भी है आपस में कोई भेद-भाव नहीं है।

परमेश्वर कबीर जी ने हिन्दू-मुसलमान का युद्ध टाला नहीं होता तो कत्लेआम हो जाना था। गह युद्ध जैसे हालात हो जाने थे। यह है कबीर जी की समर्थता का अद्वितीय प्रमाण। श्री कष्ण की हत्या हुई। कबीर परमेश्वर सशरीर स्वधाम गए। इसलिए कबीर बड़ा है कष्ण से।

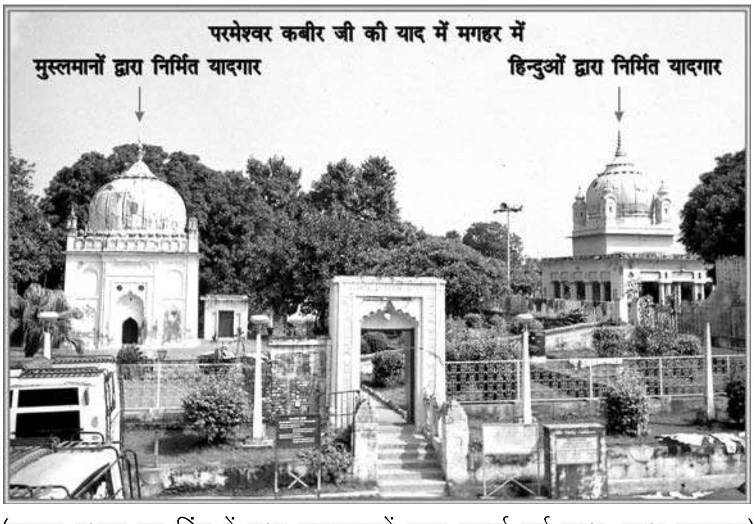

(मगहर स्थान पर हिंदुओं तथा मुसलमानों द्वारा बनाई गई साथ–साथ यादगार)

हिन्दू और मुसलमान ऐसे रहते हैं कि जैसे माँ जाए भाई रहा करते हैं। उनसे हमने बात की थी तो उन्होंने कहा कि हमारी आज तक धर्म के नाम पर कोई लड़ाई नहीं हुई। वैसे कहा सुनी तो घर के घर में हो जाती है। फिर भी हमारी आपस में धर्म के नाम पर लड़ाई नहीं होती है। बिजली खाँ पठान ने दोनों यादगारों के नाम पाँच सौ, पाँच सौ बीघा जमीन दी जिसमें हिन्दू तथा मुसलमान अपने प्रबन्धक कमेटी बनाकर व्यवस्थित किए हैं। यह दास (संत रामपाल दास जी महाराज) अपने सैंकड़ों सेवकों सहित तीन बार इस ऐतिहासिक धार्मिक स्थल को देखकर आ चुके हैं। वहाँ जाकर ऐसा लगता है जैसे हमने सच्चाई का खजाना प्राप्त हो गया हो। बोलो सतगुरू देव की जय।

प्रश्न 22 : जो साधना हम पहले कर रहे हैं, क्या वह त्यागनी पड़ेगी?

उत्तर : यदि शास्त्रविधि रहित है तो त्यागनी पड़ेगी। यदि अनाधिकारी से दीक्षा ले रखी है, उसका कोई लाभ नहीं होना। पूर्ण गुरु से साधना की दीक्षा लेनी पड़ेगी।

प्रश्न 23 :- परमात्मा साकार है या निराकार?

उत्तर :- परमात्मा साकार है, नर स्वरुप है अर्थात् मनुष्य जैसे आकार का है। अव्यक्त का अर्थ निराकार नहीं होता, साकार होता है। उदाहरण के लिए जैसा सूर्य के सामने बादल छा जाते हैं, उस समय सूर्य अव्यक्त होता है। हमें भले ही दिखाई नहीं देता, परन्तु सूर्य अव्यक्त है, साकार है। जो प्रभु हमें सामान्य साधना से दिखाई नहीं देते, वे अव्यक्त कहे जाते हैं।

जैसे गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में गीता ज्ञान दाता ने अपने आपको अव्यक्त कहा है क्योंकि वह श्री कष्ण में प्रवेश करके बोल रहा था। जब व्यक्त हुआ तो विराट रुप दिखाया था। यह पहला अव्यक्त प्रभु हुआ जो क्षर पुरुष कहलाता है। जिसे काल भी कहते है। गीता अध्याय 8 श्लोक 17 से 19 तक दूसरा अव्यक्त अक्षर पुरुष है। गीता अध्याय 8 श्लोक 20 में कहा है कि इस अव्यक्त अर्थात् अक्षर पुरुष से दूसरा सनातन अव्यक्त परमेश्वर अर्थात् परम अक्षर पुरुष है। इस प्रकार ये तीनों साकार(नराकार) प्रभु हैं। अव्यक्त का अर्थ निराकार नहीं होता। क्षर पुरुष (ब्रह्म) ने प्रतिज्ञा की है कि मैं कभी भी अपने वास्तविक रुप में किसी को भी दर्शन नहीं दूँगा।

प्रमाण : गीता अध्याय 11 श्लोक 47-48 में जिसमें कहा है कि हे अर्जुन! यह मेरा विराट रुप आपने देखा, यह मेरा रुप आपके अतिरिक्त पहले किसी ने नहीं देखा, मैंने तुझ पर अनुग्रह करके दिखाया है।

पेश है गीता अध्याय 11 श्लोक 47 की फोटोकॉपी :-

मया, प्रसन्नेन, तव, अर्जुन, इदम्, रूपम्, परम्, दर्शितम्,
आत्मयोगात्, तेजोमयम्, विश्वम्, अनन्तम्, आद्यम्,
यत्, मे, त्वदन्येन, न, दृष्टपूर्वम्॥ ४७॥

इस प्रकार अर्जुनकी प्रार्थनाको सुनकर श्रीभगवान् बोले—

अर्जुन	= हे अर्जुन!	**अनन्तम्**	= सीमारहित
प्रसन्नेन	= अनुग्रहपूर्वक	**विश्वम्**	= विराट्
मया	= मैंने	**रूपम्**	= रूप
आत्मयोगात्	= अपनी योग-शक्तिके प्रभावसे	**तव**	= तुझको
		दर्शितम्	= दिखलाया है,
इदम्	= यह	**यत्**	= जिसे
मे	= मेरा		
परम्	= परम	**त्वदन्येन**	= तेरे अतिरिक्त दूसरे किसीने
तेजोमयम्	= तेजोमय		
आद्यम्	= सबका आदि (और)	**न दृष्टपूर्वम्**	= पहले नहीं देखा था।

गीता अध्याय 11 श्लोक 48 में कहा है कि यह मेरा स्वरुप न तो वेदों में वर्णित विधि से, न जप से, न तप से, न यज्ञ आदि से देखा जा सकता। इससे सिद्ध हुआ कि क्षर पुरुष (गीता ज्ञान दाता) को किसी भी ऋषि-महर्षि व साधक ने नहीं देखा। जिस कारण से इसे निराकार मान बैठे। सूक्ष्म वेद (तत्व ज्ञान) में कहा है कि :-

''खोजत–खोजत थाकिया, अन्त में कहा बेचून।
न गुरु पूरा न साधना सत्य, हो रहे जूनमं–जून।।

पेश है गीता अध्याय 11 श्लोक 48 की फोटोकॉपी :-

न, वेदयज्ञाध्ययनैः, न, दानैः, न, च, क्रियाभिः, न,
तपोभिः, उग्रैः, एवंरूपः, शक्यः, अहम्, नृलोके, द्रष्टुम्,
त्वदन्येन, कुरुप्रवीर॥ ४८॥

कुरुप्रवीर	= हे अर्जुन!	**न**	= न
नृलोके	= मनुष्यलोकमें	**क्रियाभिः**	= क्रियाओंसे
एवंरूपः	= इस प्रकार विश्वरूपवाला	**च**	= और
		न	= न
अहम्	= मैं	**उग्रैः**	= उग्र
न	= न	**तपोभिः**	= तपोंसे (ही)
वेदयज्ञाध्ययनैः	= वेद और यज्ञोंके अध्ययनसे,	**त्वदन्येन**	= तेरे अतिरिक्त दूसरेके द्वारा
न	= न	**द्रष्टुम्**	= देखा जा
दानैः	= दानसे,	**शक्यः**	= सकता हूँ।

अब गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में गीता ज्ञान दाता ने स्पष्ट कर ही दिया है कि मैं अपनी योग माया से छिपा रहता हूँ। किसी के समक्ष नहीं आता, मैं अव्यक्त हूँ। छिपा है तो साकार है। अक्षर पुरुष भी अव्यक्त है, यह ऊपर प्रमाणित हो चुका है। इस प्रभु (अक्षर पुरूष) की यहाँ कोई भूमिका नहीं है। यह अपने 7 संख ब्रह्माण्डों तक सीमित है। इसलिए इसको कोई नहीं देख सका।

पेश है गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 की फोटोकॉपी :-

(गीता अध्याय 7 श्लोक 24 की फोटोकॉपी)

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः,
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्॥ २४॥

ऐसा होनेपर भी सब मनुष्य मेरा भजन नहीं करते, इसका कारण

अबुद्धयः	= बुद्धिहीन पुरुष	**माम्**	= मुझ सच्चिदानन्दघन परमात्माको
मम	= मेरे		(मनुष्यकी भाँति जन्मकर)
अनुत्तमम्	= अनुत्तम	**व्यक्तिम्**	= व्यक्ति-भावको
अव्ययम्	= अविनाशी	**आपन्नम्**	= प्राप्त हुआ
परम्	= परम	**मन्यन्ते**	= मानते हैं।
भावम्	= भावको		
अजानन्तः	= न जानते हुए		
अव्यक्तम्	= मन-इन्द्रियोंसे परे		

(गीता अध्याय 7 श्लोक 25 की फोटोकॉपी)

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावृतः,
मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम्॥ २५॥

तथा—

योगमाया-समावृतः	= अपनी योगमायासे छिपा हुआ	**माम्**	= मुझ
अहम्	= मैं	**अजम्**	= जन्मरहित
सर्वस्य	= सबके	**अव्ययम्**	= अविनाशी परमेश्वरको
प्रकाशः	= प्रत्यक्ष	**न**	= नहीं
न	= नहीं होता, (इसलिये)	**अभिजानाति**	= जानता अर्थात् मुझको जन्मने-मरनेवाला समझता है।
अयम्	= यह		
मूढः	= अज्ञानी		
लोकः	= जनसमुदाय		

❖ परम अक्षर पुरुष :- इस प्रभु की सर्व ब्रह्माण्डों में भूमिका है। यह सत्यलोक में रहते हैं जो काल लोक (इक्कीश ब्रह्मण्डों) से 16 शंख कोस दूर है। (एक कोस लगभग 3 किमी. का होता है) इसकी प्राप्ति की साधना वेदों (चारों वेदों) में वर्णित नहीं है। जिस कारण से इस प्रभु को कोई नहीं

देख सका। जब यह प्रभु (परम अक्षर ब्रह्म) पथ्वी पर सशरीर प्रकट होता है तो कोई इन्हें पहचान नहीं पाता।

परमात्मा कबीर जी ने कहा हैं कि :-

''हम ही अलख अल्लाह हैं, कुतुब–गोस और पीर।
गरीब दास खालिक धनी, हमरा नाम कबीर।।''

हम पूर्ण परमात्मा हैं, हम ही पीर अर्थात् सत्य ज्ञान देने वाले सत्गुरु हैं। सर्व सष्टि का मालिक भी मैं ही हूँ, मेरा नाम कबीर है। परन्तु सर्व साधकों, ऋषियों-महर्षियों ने यही ज्ञान दढ़ कर रखा होता है कि परमात्मा तो निराकार है। वह देखा नहीं जा सकता। यह पथ्वी पर विचरने वाला जुलाहा (धाणक) कबीर एक कवि कैसे परम अक्षर ब्रह्म हो सकता है?

उसका समाधान इस प्रकार है :-

विश्व में कोई भी परमात्मा चाहने वाला बुद्धिमान व्यक्ति चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) को गलत नहीं मानता। वर्तमान में आर्य समाज के प्रवर्तक महर्षि दयानन्द को वेदों का पूर्ण विद्वान माना जाता रहा है। इनका भी यह कहना है कि ''परमात्मा निराकार'' है। आर्यसमाज और महर्षि दयानन्द वेदों के ज्ञान को सत्य मानते हैं। इन्होंने स्वयं ही वेदों का हिन्दी अनुवाद किया है। जिसमें स्पष्ट लिखा है कि परमात्मा ऊपर के लोक में रहता है। वहाँ से गति करके (चल कर सशरीर) पथ्वी पर आता है। अच्छी आत्माओं को मिलता है, उनको यथार्थ भक्ति का ज्ञान सुनाता है। परमात्मा तत्वज्ञान अपने मुख कमल से उच्चारण करके लोकोक्तियों, साखियों, शब्दों, दोहों तथा चौपाईयों के रुप में पदों द्वारा बोलता है। जिस कारण से प्रसिद्ध कवि की उपाधि भी प्राप्त करता है। कवियों की तरह आचरण करता हुआ पथ्वी के ऊपर विचरण करता रहता है। भक्ति के गुप्त मन्त्रों का आविष्कार करके साधकों को बताता है। भक्ति करने के लिए प्रेरणा करता है।

प्रमाण देखें वेदों के निम्न मंत्रों की फोटोकापियाँ इसी पुस्तक के पष्ठ 314 पर।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 26-27, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 1-2, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16-20, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मन्त्र 2, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3, ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 20 मन्त्र 1 और भी अनेकों वेद मन्त्रों में उपरोक्त प्रमाण है कि परमात्मा मनुष्य जैसा नराकार है। श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 4 श्लोक 32 तथा 34 में भी प्रमाण है। गीता ज्ञान दाता ने बताया कि हे अर्जुन! परम अक्षर ब्रह्म अपने मुख कमल से तत्वज्ञान बोलकर बताता है, उस सच्चिदानन्द घन ब्रह्म की वाणी में यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों की जानकारी विस्तार से कही गई है। उसको जानकर सर्व पापों से मुक्त हो जाएगा। फिर गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में कहा है कि उस ज्ञान को तू तत्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ। उनको दण्डवत प्रणाम करके विनयपूर्वक प्रश्न करने से वे तत्वदर्शी सन्त तुझे तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

यह प्रमाण आप को बताए और विशेष बात यह है कि गीता चारों वेदों का सारांश है। इसमें सांकेतिक ज्ञान अधिक है। यह भी स्पष्ट हुआ कि तत्वज्ञान गीता ज्ञान से भी भिन्न है। वह केवल तत्वदर्शी संत ही जानते हैं जिनको परम अक्षर ब्रह्म स्वयं धरती पर प्रकट होकर बताते हैं।

(अध्याय 2)

''किसने देखा परमेश्वर''

प्रश्न 24 : किन-किन पुण्यात्मा महात्माओं को (परमात्मा) परम अक्षर ब्रह्म मिले हैं?

उत्तर : परमात्मा चारों युगों में प्रकट होकर ज्ञान सुनाते हैं। 1. सतयुग में ''सत्यसुकृत'' नाम से, 2. त्रेता युग में ''मुनीन्द्र'' नाम से, 3. द्वापर युग में ''करुणामय'' नाम से, 4. कलयुग में ''कबीर'' नाम से परमेश्वर प्रकट हुए हैं। सूक्ष्म वेद में कहा है :-

सतयुग में सतसुकृत कह टेरा, त्रेता नाम मुनिन्द्र मेरा।।
द्वापर में करुणामय कहाया, कलयुग नाम कबीर धराया।।

''परम अक्षर ब्रह्म कौन है तथा किस-किसको मिला परमात्मा''

कलयुग में परमेश्वर जिन-जिन महान आत्माओं को मिले, उनको तत्वज्ञान बताया, उनका मैं संक्षिप्त वर्णन करता हूँ :-

''सन्त धर्मदास जी से परमेश्वर कबीर जी का साक्षात्कार''

1. श्री धर्मदास जी बनिया जाति से थे जो बाँधवगढ़ (मध्य प्रदेश) के रहने वाले बहुत धनी व्यक्ति थे। उनको भक्ति की प्रेरणा बचपन से ही थी। जिस कारण से एक रुपदास नाम के वैष्णव सन्त को गुरु धारण कर रखा था। हिन्दू धर्म में जन्म होने के कारण सन्त रुपदास जी, श्री धर्मदास जी को राम कृष्ण, विष्णु तथा शंकर जी की भक्ति करने को कहते थे। एकादशी का व्रत, तीर्थों पर भ्रमण करना, श्राद्ध कर्म, पिण्डोदक क्रिया सब करने की राय दे रखी थी। गुरु रुपदास जी द्वारा बताई सर्व साधना श्री धर्मदास जी पूरी आस्था के साथ किया करते थे। गुरु रुपदास जी की आज्ञा लेकर धर्मदास जी मथुरा नगरी में तीर्थ-दर्शन, तीर्थ स्नान करने तथा गिरीराज (गोवर्धन) पर्वत की परिक्रमा करने के लिए गए थे। परम अक्षर ब्रह्म एक जिन्दा महात्मा की वेशभूषा में धर्मदास जी को स्वयं मथुरा में मिले। श्री धर्मदास जी ने उस तीर्थ तालाब में स्नान किया जिसमें श्री कृष्ण जी बाल्यकाल में स्नान किया करते थे। फिर उसी जल से एक लोटा भरकर लाये। भगवान श्री कृष्ण जी की पीतल की मूर्ति (सालिग्राम) के चरणों पर डालकर दूसरे बर्तन में डालकर चरणामृत बनाकर पीया। फिर सालिग्राम को स्नान करवाकर अपना कर्मकाण्ड पूरा किया। एक स्थान को लीपकर अर्थात् गारा तथा गाय का गोबर मिलाकर कुछ भूमि पर पलस्तर करके उस पर स्वच्छ कपड़ा बिछाकर श्रीमद्भगवत् गीता का पाठ करने बैठे। यह सर्व क्रिया जब धर्मदास जी कर रहे थे। परमात्मा जिन्दा वेश में थोड़ी दूरी पर बैठे देख रहे थे। धर्मदास जी भी देख रहे थे कि एक मुसलमान सन्त मेरी भक्ति क्रियाओं को बहुत ध्यानपूर्वक देख रहा है, लगता है इसको हम हिन्दुओं की साधना मन भा गई है। इसलिए श्रीमद्भगवत् गीता का पाठ कुछ ऊँचे स्वर में करने लगा तथा हिन्दी का अनुवाद भी पढ़ने लगा। परमेश्वर उठकर धर्मदास जी के निकट आकर बैठ गए। धर्मदास जी को अपना अनुमान सत्य लगा कि वास्तव में इस जिन्दा वेशधारी बाबा को हमारे धर्म का भक्ति मार्ग अच्छा लग रहा है। इसलिए उस दिन गीता के कई अध्याय पढ़े तथा उनका अर्थ भी सुनाया। जब धर्मदास जी अपना दैनिक भक्ति कर्म कर चुका, तब परमात्मा ने कहा कि हे महात्मा जी, आप का

शुभ नाम क्या है? कौन जाति से हैं। आप जी कहाँ के निवासी हैं? किस धर्म-पंथ से जुड़े हैं? कंपया बताने का कष्ट करें। मुझे आपका ज्ञान बहुत अच्छा लगा, मुझे भी कुछ भक्ति ज्ञान सुनाइए। आप की अति कंपा होगी।

धर्मदास जी ने उत्तर दिया :- मेरा नाम धर्मदास है, मैं बांधवगढ़ गाँव का रहने वाला वैश्य कुल से हूँ। मैं वैष्णव पंथ से दीक्षित हूँ, हिन्दू धर्म में जन्मा हूँ। मैंने पूरे निश्चय के साथ तथा अच्छी तरह ज्ञान समझकर वैष्णव पंथ से दीक्षा ली है। मेरे गुरुदेव श्री रुपदास जी हैं। आध्यात्म ज्ञान से मैं परिपूर्ण हूँ। अन्य किसी की बातों में आने वाला मैं नहीं हूँ। राम-कंष्ण जो श्री विष्णु जी के ही अवतार हुए हैं तथा भगवान शंकर की भी पूजा करता हूँ, एकादशी का व्रत रखता हूँ। तीर्थों में जाता हूँ, वहाँ दान करता हूँ। शालिग्राम की पूजा नित्य करता हूँ। यह पवित्र पुस्तक श्रीमद्भगवत् गीता है, इसका नित्य पाठ करता हूँ। मैं अपने पूर्वजों का जो स्वर्गवासी हो चुके हैं, श्राद्ध भी करता हूँ। पिण्डदान भी करता हूँ। मैं कोई जीव हिंसा नहीं करता, माँस, मदिरा, तम्बाकू सेवन नहीं करता।

परमेश्वर कबीर जी ने पूछा कि आप जिस पुस्तक को पढ़ रहे थे, इसका नाम क्या है?

धर्मदास जी ने बताया कि यह श्रीमद् भगवत गीता है। हम शुद्ध रहते हैं, शुद्र को निकट भी नहीं आने देते।

प्रश्न 25 :- (कबीर जी जिन्दा रुप में) आप क्या नाम-जाप करते हो?

उत्तर :- (धर्मदास जी का) हम हरे कंष्ण, कंष्ण-कंष्ण हरे-हरे, ओम् नमः शिवाय, ओम् भगवते वासुदेवाय नमः, राधे-राधे श्याम मिलादे, गायत्री मन्त्र का जाप 108 बार प्रतिदिन करता हूँ। विष्णु सहंस्रनाम का जाप भी करता हूँ।

प्रश्न 26 :- (जिन्दा बाबा का) हे महात्मा धर्मदास! गीता का ज्ञान किसने दिया?

उत्तर : (धर्मदास का) कुल के मालिक सर्वशक्तिमान भगवान श्री कंष्ण जी ने, यही श्री विष्णु जी हैं।

प्रश्न 27 : (जिन्दा बाबा रुप में परमात्मा का) :- आप जी के पूज्य देव श्री कंष्ण अर्थात् श्री विष्णु हैं। उनका बताया भक्ति ज्ञान गीता शास्त्र है।

हे धर्मदास! एक किसान को वंद्धावस्था में पुत्र प्राप्त हुआ। किसान ने विचार किया कि जब तक पुत्र कंषि करने योग्य होगा, तब तक मेरी मंत्यु हो जाएगी। इसलिए उसने कंषि करने का तरीका अपना अनुभव एक बही (रजिस्टर) में लिख दिया। अपने पुत्र से कहा कि बेटा जब आप युवा हो जाओ तो मेरे इस रजिस्टर में लिखे अनुभव को बार-2 पढ़ना। इसके अनुसार फसल बोना। कुछ दिन पश्चात् पिता की मंत्यु हो गई, पुत्र प्रतिदिन अपने पिता के अनुभव का पाठ करने लगा। परन्तु फसल का बीज व बिजाई, सिंचाई उस अनुभव के विपरीत करता था। तो क्या वह पुत्र अपने कंषि के कार्य में सफलता प्राप्त करेगा?

उत्तर : (धर्मदास का) : इस प्रकार तो पुत्र निर्धन हो जाएगा। उसको तो पिता के लिखे अनुभव के अनुसार प्रत्येक कार्य करना चाहिए। वह तो मूर्ख पुत्र है।

प्रश्न 28 : (बाबा जिन्दा रुप में भगवान जी का) हे धर्मदास जी! गीता शास्त्र आप के परमपिता भगवान कंष्ण उर्फ विष्णु जी का अनुभव तथा आपको आदेश है कि इस गीता शास्त्र में लिखे मेरे अनुभव को पढ़कर इसके अनुसार भक्ति करोगे तो मोक्ष प्राप्त करोगे। क्या आप जी गीता में लिखे श्री कंष्ण जी के आदेशानुसार भक्ति कर रहे हो? क्या गीता में वे मन्त्र जाप करने के लिए लिखा

है जो आप जी के गुरुजी ने आप जी को जाप करने के लिए दिए हैं? (हरे राम-हरे राम, राम-राम हरे-हरे, हरे कष्णा-हरे कष्णा, कष्ण-कष्ण हरे-हरे, ओम नमः शिवाय, ओम भगवते वासुदेवाय नमः, राधे-राधे श्याम मिलादे, गायत्री मन्त्र तथा विष्णु सहंस्रनाम) क्या गीता जी में एकादशी का व्रत करने तथा श्राद्ध कर्म करने, पिण्डोदक क्रिया करने का आदेश है?

उत्तर :- (धर्मदास जी का) नहीं है।

प्रश्न 29 :- (परमेश्वर जी का) फिर आप जी तो उस किसान के पुत्र वाला ही कार्य कर रहे हो जो पिता की आज्ञा की अवहेलना करके मनमानी विधि से गलत बीज गलत समय पर फसल बीजकर मूर्खता का प्रमाण दे रहा है। जिसे आपने मूर्ख कहा है। क्या आप जी उस किसान के मूर्ख पुत्र से कम हैं?

धर्मदास जी बोले : हे जिन्दा! आप मुसलमान फकीर हैं। इसलिए हमारे हिन्दू धर्म की भक्ति क्रिया व मन्त्रों को गलत कह रहे हो।

उत्तर : (कबीर जी का जिन्दा रुप में) हे स्वामी धर्मदास जी! मैं कुछ नहीं कह रहा, आपके धर्मग्रन्थ कह रहे हैं कि आप के धर्म के धर्मगुरु आप जी को शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करा रहे हैं जो आपकी गीता के अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी कहा है कि हे अर्जुन! जो साधक शास्त्र विधि को त्यागकर मनमाना आचरण करता है अर्थात् मनमाने मन्त्र जाप करता है, मनमाने श्राद्ध कर्म व पिण्डोदक कर्म व व्रत आदि करता है, उसको न तो कोई सिद्धि प्राप्त हो सकती, न सुख ही प्राप्त होगा और न गति अर्थात् मुक्ति मिलेगी, इसलिए व्यर्थ है। गीता अध्याय 16 श्लोक 24 में कहा है कि इससे तेरे लिए कर्त्तव्य अर्थात् जो भक्ति कर्म करने चाहिए तथा अकर्त्तव्य (जो भक्ति कर्म न करने चाहिए) की व्यवस्था में शास्त्र ही प्रमाण हैं। उन शास्त्रों में बताए भक्ति कर्म को करने से ही लाभ होगा।

धर्मदास जी : हे जिन्दा! तू अपनी जुबान बन्द करले, मुझसे और नहीं सुना जाता। जिन्दा रुप में प्रकट परमेश्वर ने कहा, हे वैष्णव महात्मा धर्मदास जी! सत्य इतनी कड़वी होती है जितना नीम, परन्तु रोगी को कड़वी औषधि न चाहते हुए भी सेवन करनी चाहिए। उसी में उसका हित है। यदि आप नाराज होते हो तो मैं चला। इतना कहकर परमात्मा (जिन्दा रुप धारी) अन्तर्ध्यान हो गए। धर्मदास को बहुत आश्चर्य हुआ तथा सोचने लगा कि यह कोई सामान्य सन्त नहीं था। यह पूर्ण विद्वान सिद्ध पुरूष लगता है। मुसलमान होकर हिन्दू शास्त्रों का पूर्ण ज्ञान है। यह कोई देव हो सकता है। धर्मदास जी अन्दर से मान रहे थे कि मैं गीता शास्त्र के विरुद्ध साधना कर रहा हूँ। परन्तु अभिमानवश स्वीकार नहीं कर रहे थे। जब परमात्मा अन्तर्ध्यान हो गए तो पूर्ण रुप से टूट गए कि मेरी भक्ति गीता के विरुद्ध है। मैं भगवान की आज्ञा की अवहेलना कर रहा हूँ। मेरे गुरु श्री रुपदास जी को भी वास्तविक भक्ति विधि का ज्ञान नहीं है। अब तो इस भक्ति को करना, न करना बराबर है, व्यर्थ है। बहुत दुःखी मन से इधर-उधर देखने लगा तथा अन्दर से ह्रदय से पुकार करने लगा कि मैं कैसा नासमझ हूँ। सर्व सत्य देखकर भी एक परमात्मा तुल्य महात्मा को अपनी नासमझी तथा हठ के कारण खो दिया। हे परमात्मा! एंक बार वही सन्त फिर से मिले तो मैं अपना हठ छोड़कर नम्र भाव से सर्वज्ञान समझूँगा। दिन में कई बार ह्रदय से पुकार करके रात्रि में सो गया। सारी रात्रि करवट लेता रहा। सोचता रहा हे परमात्मा! यह क्या हुआ। सर्व साधना शास्त्रविरुद्ध कर रहा हूँ। उस फरिश्ते ने मेरी आँखें खोल दी। मेरी आयु 60 वर्ष हो चुकी है। अब पता नहीं वह देव (जिन्दा

रुपी) पुनः मिलेगा कि नहीं। प्रातः काल वक्त से उठा। पहले खाना बनाने लगा। उस दिन भक्ति की कोई क्रिया नहीं की। पहले दिन जंगल से कुछ लकड़ियाँ तोड़कर रखी थी। उनको चूल्हे में जलाकर भोजन बनाने लगा। एक लकड़ी मोटी थी। वह बीचो-बीच थोथी थी। उसमें अनेकों चीटियाँ थीं। जब वह लकड़ी जलते-जलते छोटी रह गई तब उसका पिछला हिस्सा धर्मदास जी को दिखाई दिया तो देखा उस लकड़ी के अन्तिम भाग में कुछ तरल पानी-सा जल रहा है। चीटियाँ निकलने की कोशिश कर रही थी, वे उस तरल पदार्थ में गिरकर जलकर मर रही थी। कुछ अगले हिस्से में अग्नि से जलकर मर रही थी। धर्मदास जी ने विचार किया। यह लकड़ी बहुत जल चुकी है, इसमें अनेकों चीटियाँ जलकर भष्म हो गई है। उसी समय अग्नि बुझा दी। विचार करने लगा कि इस पापयुक्त भोजन को मैं नहीं खाऊँगा। किसी साधु सन्त को खिलाकर मैं उपवास रखूँगा। इससे मेरे पाप कम हो जाएंगे। यह विचार करके सर्व भोजन एक थाल में रखकर साधु की खोज में चल पड़ा। परमेश्वर कबीर जी ने अन्य वेशभूषा बनाई जो हिन्दू सन्त की होती है। एक वक्ष के नीचे बैठ गए। धर्मदास जी ने साधु को देखा। उनके सामने भोजन का थाल रखकर कहा कि हे महात्मा जी! भोजन खाओ। साधु रुप में परमात्मा ने कहा कि लाओ धर्मदास! भूख लगी है। अपने नाम से सम्बोधन सुनकर धर्मदास को आश्चर्य तो हुआ परंतु अधिक ध्यान नहीं दिया। साधु रुप में विराजमान परमात्मा ने अपने लोटे से कुछ जल हाथ में लिया तथा कुछ वाणी अपने मुख से उच्चारण करके भोजन पर जल छिड़क दिया। सर्वभोजन की चींटियाँ बन गई। चींटियों से थाली काली हो गई। चींटियाँ अपने अण्डों को मुख में लेकर थाली से बाहर निकलने की कोशिश करने लगी। परमात्मा भी उसी जिन्दा महात्मा के रुप में हो गए। तब कहा कि हे धर्मदास वैष्णव संत! आप बता रहे थे कि हम कोई जीव हिंसा नहीं करते, आपसे तो कसाई भी कम हिंसक है। आपने तो करोड़ों जीवों की हिंसा कर दी। धर्मदास जी उसी समय साधु के चरणों में गिर गया तथा पूर्व दिन हुई गलती की क्षमा माँगी तथा प्रार्थना कि की हे प्रभु! मुझ अज्ञानी को क्षमा करो। मैं कहीं का नहीं रहा क्योंकि पहले वाली साधना पूर्ण रुप से शास्त्र विरुद्ध है। उसे करने का कोई लाभ नहीं, यह आप जी ने गीता से ही प्रमाणित कर दिया। शास्त्र अनुकूल साधना किस से मिले, यह आप ही बता सकते हैं। मैं आप से पूर्ण आध्यात्मिक ज्ञान सुनने का इच्छुक हूँ। कपया मुझ किंकर पर दया करके मुझे वह ज्ञान सुनाऐं जिससे मेरा मोक्ष हो सके।

''व्रत करना गीता अनुसार कैसा है''

परमेश्वर (जिन्दा साधु के रुप में) बोले कि हे धर्मदास! आप एकादशी का व्रत करते हो। श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 6 श्लोक 16 में मना किया है कि हे अर्जुन! यह योग (भक्ति) न तो अधिक खाने वाले का और न ही बिल्कुल न खाने वाले का अर्थात् यह भक्ति न ही व्रत रखने वाले, न अधिक सोने वाले की तथा न अधिक जागने वाले की सफल होती है। इस श्लोक में व्रत रखना पूर्ण रुप से मना है। देख अपनी गीता खोलकर, धर्मदास जी को गीता के श्लोक याद भी थे क्योंकि प्रतिदिन पाठ किया करता था। फिर भी सोचा कि कहीं जिन्दा सन्त नाराज न हो जाए, इसलिए गीता खोलकर अध्याय 6 श्लोक 16 पढ़ा तथा स्वीकारा कि आपने मेरी आँखें खोल दी जिन्दा। आप तो परमात्मा के स्वरुप लगते हो।

पेश है फोटोकॉपी गीता अध्याय 6 श्लोक 16 की :-

न, अति, अश्नतः, तु, योगः, अस्ति, न, च, एकान्तम्, अनश्नतः,
न, च, अति, स्वप्नशीलस्य, जाग्रतः, न, एव, च, अर्जुन॥ १६॥

परंतु—

अर्जुन	= हे अर्जुन! (यह)	**च**	= तथा
योगः	= योग	**न**	= न
न	= न	**अति**	= बहुत
तु	= तो	**स्वप्नशीलस्य**	= { शयन करनेके स्वभाववालेका
अति	= बहुत		
अश्नतः	= खानेवालेका	**च**	= और
च	= और	**न**	= न (सदा)
न	= न	**जाग्रतः**	= जागनेवालेका
एकान्तम्	= बिलकुल	**एव**	= ही
अनश्नतः	= न खानेवालेका	**अस्ति**	= सिद्ध होता है।

यह फोटोकॉपी गीता अध्याय 6 श्लोक 16 की है। गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित तथा श्री जयदयाल गोयन्दका द्वारा अनुवादित है। इसमें स्पष्ट कहा है कि योग यानि साधना उनकी सफल नहीं होती जो बिल्कुल कुछ नहीं खाते यानि व्रत रखते हैं।

''श्राद्ध-पिण्डदान गीता अनुसार कैसा है?''

आप श्राद्ध व पिण्डदान करते हो। गीता अध्याय 9 श्लोक 25 में स्पष्ट किया है कि भूत पूजने वाले भूतों को प्राप्त होंगे। श्राद्ध करना, पिण्डदान करना यह भूत पूजा है, यह व्यर्थ साधना है।

''श्राद्ध-पिण्डदान के प्रति रूची ऋषि का वेदमत''

मार्कण्डेय पुराण में ''रौच्य ऋषि के जन्म'' की कथा आती है। एक रुची ऋषि था। वह ब्रह्मचर्य का पालन करते हुए वेदों अनुसार साधना करता था। विवाह नहीं कराया था। रुची ऋषि के पिता, दादा, परदादा तथा तीसरे दादा सब पित्तर (भूत) योनि में भूखे-प्यासे भटक रहे थे। एक दिन उन चारों ने रुची ऋषि को दर्शन दिए तथा कहा कि बेटा! आप ने विवाह क्यों नहीं किया? विवाह करके हमारे श्राद्ध करना। रुची ऋषि ने कहा कि हे पितामहो! वेद में इस श्राद्ध आदि कर्म को अविद्या कहा है, मूर्खों का कार्य कहा है। फिर आप मुझे इस कर्म को करने को क्यों कह रहे हो?

पित्तरों ने कहा कि यह बात सत्य है कि श्राद्ध आदि कर्म को वेदों में अविद्या अर्थात् मूर्खों का कार्य ही कहा है। फिर उन पित्तरों ने वेदविरूद्ध ज्ञान बताकर रूची ऋषि को भ्रमित कर दिया क्योंकि मोह भी अज्ञान की जड़ है। मार्कण्डेय पुराण के प्रकरण से सिद्ध हुआ कि वेदों में तथा वेदों के ही संक्षिप्त रुप गीता में श्राद्ध-पिण्डोदक आदि भूत पूजा के कर्म को निषेध बताया है, नहीं करना चाहिए। उन मूर्ख ऋषियों ने अपने पुत्र को भी श्राद्ध करने के लिए विवश किया। उसने विवाह कराया, उससे रौच्य ऋषि का जन्म हुआ, बेटा भी पाप का भागी बना लिया। पितर बना दिया।

पेश है संक्षिप्त मार्कण्डेय पुराण के अध्याय ''रौच्य मनुकी उत्पत्ति-कथा'' से संबंधित प्रकरण की फोटोकॉपी :-

रौच्य मनुकी उत्पत्ति-कथा

मार्कण्डेयजी कहते हैं—ब्रह्मन्! पूर्वकालकी बात है, प्रजापति रुचि ममता और अहङ्कारसे रहित इस पृथ्वीपर विचरते थे। उन्हें किसीसे भय नहीं था। वे बहुत कम सोते थे। उन्होंने न तो अग्निकी स्थापना की थी और न अपने लिये घर ही बना रखा था। वे एक बार भोजन करते और बिना आश्रमके ही रहते थे। उन्हें सब प्रकारकी आसक्तियोंसे रहित एवं मुनिवृत्तिसे रहते देख उनके पितरोंने उनसे कहा।

पितर बोले—बेटा! विवाह स्वर्ग और अपवर्गका हेतु* होनेके कारण एक पुण्यमय कार्य है; उसे तुमने क्यों नहीं किया? गृहस्थ पुरुष समस्त देवताओं, पितरों, ऋषियों और अतिथियोंकी पूजा करके पुण्यमय लोकोंको प्राप्त करता है। वह 'स्वाहा' के उच्चारणसे देवताओंको, 'स्वधा' शब्दसे पितरोंको तथा अन्नदान (बलिवैश्वदेव) आदिसे भूत आदि प्राणियों एवं अतिथियोंको उनका भाग समर्पित करता है। बेटा! हम ऐसा मानते हैं कि गृहस्थ आश्रमको स्वीकार न करनेपर तुम्हें इस जीवनमें क्लेश-पर-क्लेश उठाना पड़ेगा तथा मृत्युके बाद और दूसरे जन्ममें भी क्लेश ही भोगने पड़ेंगे।

रुचिने कहा—पितृगण! परिग्रहमात्र ही अत्यन्त दु:ख एवं पापका कारण होता है तथा उससे मनुष्यकी अधोगति होती है, यही सोचकर मैंने पहले स्त्री-संग्रह नहीं किया। मन और इन्द्रियोंको नियन्त्रणमें रखकर जो यह आत्मसंयम किया जाता है, वह भी परिग्रह करनेपर मोक्षका साधक नहीं होता। ममतारूप कीचड़में सना हुआ होनेपर भी यह आत्मा जो परिग्रहशून्य चित्तरूपी जलसे

प्रतिदिन धोया जाता है, वह श्रेष्ठ प्रयत्न है। जितेन्द्रिय विद्वानोंको चाहिये कि वे अनेक जन्मोंद्वारा सञ्चित कर्मरूपी पङ्कमें सने हुए आत्माका सद्वासनारूपी जलसे प्रक्षालन करें।

पितर बोले—बेटा! जितेन्द्रिय होकर आत्माका प्रक्षालन करना उचित ही है; किन्तु तुम जिसपर चल रहे हो, वह मोक्षका मार्ग है। किन्तु फलेच्छारहित दान और शुभाशुभके उपभोगसे भी पूर्वकृत अशुभ कर्म दूर होता है। इसी प्रकार दयाभावसे प्रेरित होकर जो कर्म किया जाता है, वह बन्धनकारक नहीं होता। फल-कामनासे रहित कर्म भी बन्धनमें नहीं डालता। पूर्वजन्ममें किया हुआ मानवोंका शुभाशुभ कर्म सुख-दु:खमय भोगोंके रूपमें प्रतिदिन भोगनेपर ही क्षीण होता है। इस प्रकार विद्वान् पुरुष आत्माका प्रक्षालन करते और उसकी बन्धनोंसे रक्षा करते हैं। ऐसा करनेसे वह अविवेकके कारण पापरूपी कीचड़में नहीं फँसता।

रुचिने पूछा—पितामहो! वेदमें कर्ममार्गको अविद्या कहा गया है, फिर क्यों आपलोग मुझे उस मार्गमें लगाते हैं?

पितर बोले—यह सत्य है कि कर्मको अविद्या ही कहा गया है, इसमें तनिक भी मिथ्या नहीं है; फिर भी इतना तो निश्चित है कि उस विद्याकी प्राप्तिमें कर्म ही कारण है। विहित कर्मका पालन न करके जो अधम मनुष्य संयम करते हैं, वह संयम अन्तमें मोक्षकी प्राप्ति नहीं कराता; अपितु अधोगतिमें ले जानेवाला होता है। वत्स! तुम तो समझते हो कि मैं आत्माका प्रक्षालन करता हूँ;

किन्तु वास्तवमें तुम शास्त्रविहित कर्मोंके न करनेके कारण पापोंसे दग्ध हो रहे हो! कर्म अविद्या होनेपर भी विधिके पालनद्वारा शोधे हुए विषकी भाँति मनुष्योंका उपकार करनेवाला ही होता है। इसके विपरीत वह विद्या भी विधिकी अवहेलनासे निश्चय ही हमारे बन्धनका कारण बन जाती है। अत: वत्स! तुम विधिपूर्वक स्त्री-संग्रह करो। ऐसा न हो कि इस लोकका

प्रश्न 30 :- क्या गायत्री मंत्र ''ॐ भूर्भुवः स्वः तत्सवितुर्वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्'' **से पूर्ण मोक्ष संभव है?**

उत्तर :- जिसे गायत्री मन्त्र कहते हो, वह यजुर्वेद के अध्याय 36 का मन्त्र 3 है जिसके आगे ''ओम्'' अक्षर नहीं है। यदि ''ओम्'' अक्षर को इस वेद मन्त्र के साथ जोड़ा जाता है तो परमात्मा का अपमान है क्योंकि ओम् (ॐ) अक्षर तो ब्रह्म का जाप है। यजुर्वेद अध्याय 36 मन्त्र 3 में परम अक्षर ब्रह्म की महिमा है। यदि कोई अज्ञानी व्यक्ति पत्र तो लिख रहा है प्रधानमन्त्री को और लिख रहा है सेवा में 'मुख्यमन्त्री जी' तो वह प्रधानमन्त्री का अपमान कर रहा है। फिर बात रही इस मन्त्र यजुर्वेद के अध्याय 36 मन्त्र 3 को बार-बार जाप करने की, यह क्रिया मोक्षदायक नहीं है। मन्त्र का मूल पाठ इस प्रकार है :-

भूर्भुवः स्वः तत् सवितु वरेण्यं भर्गो देवस्य धीमहि धियो यो नः प्रचोदयात्

अनुवाद :- (भूः) स्वयंभू परमात्मा पथ्वी लोक को (भवः) गोलोक आदि भवनों को वचन से प्रकट करने वाला है (स्वः) स्वर्गलोक आदि सुख धाम हैं। (तत्) वह (सवितुः) उन सर्व का जनक परमात्मा है। (वरेणीयम) सर्व साधकों को वरण करने योग्य अर्थात् अच्छी आत्माओं के भक्ति योग्य है। (भर्गो) तेजोमय अर्थात् प्रकाशमान (देवस्य) परमात्मा का (धीमहि) उच्च विचार रखते हुए अर्थात् बड़ी समझ से (धियो यो नः प्रचोदयात्) जो बुद्धिमानों के समान विवेचन करता है, वह विवेकशील व्यक्ति मोक्ष का अधिकारी बनता है।

भावार्थ : परमात्मा स्वयंभू जो भूमि, गोलोक आदि लोक तथा स्वर्ग लोक है उन सर्व का सजनहार है। उस उज्जवल परमेश्वर की भक्ति श्रेष्ठ भक्तों को यह विचार रखते हुए करनी चाहिए कि जो पुरुषोत्तम (सर्व श्रेष्ठ परमात्मा) है, जो सर्व प्रभुओं से श्रेष्ठ है, उसकी भक्ति करें जो सुखधाम अर्थात् सर्वसुख का दाता है।

उपरोक्त मन्त्र का यह हिन्दी अनुवाद व भावार्थ है। इस की संस्कृत या हिन्दी अनुवाद को पढ़ते रहने से मोक्ष नहीं है क्योंकि यह तो परमात्मा की महिमा का एक अंश है अर्थात् हजारों वेद मन्त्रों में से यजुर्वेद अध्याय 36 का मंत्र सँख्या 3 केवल एक मन्त्र है। यदि कोई चारों वेदों को भी पढ़ता रहे तो भी मोक्ष नहीं। मोक्ष होगा वेदों में वर्णित ज्ञान के अनुसार भक्ति क्रिया करने से। उदाहरण :- विद्युत की महिमा है कि बिजली अंधेरे को उजाले में बदल देती है, बिजली ट्यूबवेल चलाती है जिससे फसल की सिंचाई होती है। बिजली ऑटा पीसती है, आदि-आदि बहुत से गुण बिजली के लिखे हैं। यदि कोई व्यक्ति प्रतिदिन बिजली के गुणों का पाठ करता रहे तो उसे बिजली का लाभ प्राप्त नहीं होगा। लाभ प्राप्त होगा बिजली का कनेक्शन लेने से। कनेक्शन कैसे प्राप्त हो सकता है? उस विधि को प्राप्त करके फिर बिजली के गुणों का लाभ प्राप्त हो सकता है। केवल बिजली की महिमा को गाने मात्र से नहीं। इसी प्रकार वेद मन्त्रों में अर्थात् श्रीमद् भगवत् गीता (जो चारों वेदों का सार है) में मोक्ष प्राप्ति के लिए जो ज्ञान कहा है, उसके अनुसार आचरण करने से मोक्ष लाभ अर्थात् परमेश्वर प्राप्ति होती है।

प्रश्न 31 :- (धर्मदास जी का) हे जिन्दा! मुझे तो यह भी ज्ञान नहीं है कि गीता में मोक्ष प्राप्ति का ज्ञान कौन-सा है? मैंनें गीता को पढ़ा है, समझा नहीं। हमारे धर्मगुरुओं ने जो भक्ति बताई, उसे श्रद्धा से करते आ रहे हैं। वर्षों से चला आ रहा भक्ति का शास्त्र विरुद्ध प्रचलन सर्वभक्तों को सत्य लग रहा है। क्या गीता में लिखी भक्ति विधि पर्याप्त है?

उत्तर (जिन्दा बाबा का) :- गीता में केवल ब्रह्म स्तर की भक्तिविधि लिखी है। पूर्ण मोक्ष के लिए परम अक्षर ब्रह्म की भक्ति करनी होगी। गीता में पूर्ण विधि नहीं है, केवल संकेत है। जैसे गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में कहा है कि ''सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की प्राप्ति के लिए ''ऊँ, तत्, सत्'' इस मन्त्र का निर्देश है। इसके स्मरण की विधि तीन प्रकार से है। इस मन्त्र में ऊँ तो क्षर पुरुष अर्थात् ब्रह्म का मन्त्र तो स्पष्ट है परन्तु ''पर ब्रह्म'' (अक्षर पुरुष) का मन्त्र ''तत्'' है जो सांकेतिक है, उपदेशी को तत्वदर्शी सन्त बताएगा। ''सत्'' यह मन्त्र पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर ब्रह्म) का है जो सांकेतिक है, इसको भी तत्वदर्शी सन्त उपदेशी को बताता है। तत्वदर्शी सन्त के पास पूर्ण मोक्ष मार्ग होता है। जो न वेदों में है, न गीता में तथा न पुराणों या अन्य उपनिषदों में है। तत्वज्ञान की सत्यता को प्रमाणित करने के लिए गीता तथा वेद सहयोगी हैं। जो भक्तिविधि वेद-गीता में है, वही तत्वज्ञान में भी है। सूक्ष्मवेद अर्थात् तत्वज्ञान में वेदों तथा गीता वाली भक्तिविधि तो है ही, इससे भिन्न पूर्ण मोक्ष वाली साधना भी है। उदाहरण के लिए दसवीं कक्षा का पाठ्यक्रम गलत नहीं है, परंतु अधूरा है। **B.A., M.A.** वाले पाठ्यक्रम में दसवीं वाला ज्ञान भी होता है, उससे आगे का भी होता है। यही दशा वेदों-गीता तथा सूक्ष्मवेद के ज्ञान में अंतर की जानें।

प्रश्न 32 :- (धर्मदास जी का) गीता तथा वेदों में यह कहाँ प्रमाण है कि पूर्ण मोक्ष मार्ग तत्वदर्शी सन्त के पास ही होता है, वेदों व गीता में नहीं है। हे प्रभु जिन्दा! मेरी शंका का समाधान कीजिए, आप का ज्ञान हृदय को छूता है, सत्य भी है परन्तु विश्वास तो प्रत्यक्ष प्रमाण देखकर ही होता है।

उत्तर :- (जिन्दा परमेश्वर जी का) गीता अध्याय 4 श्लोक 25 से 30 में गीता ज्ञान दाता ने बताया है कि हे अर्जुन! सर्व साधक अपनी साधना व भक्ति को पापनाश करने वाली अर्थात् मोक्षदायक जान कर ही करते हैं। यदि उनको यह निश्चय न हो कि तुम जो भक्ति कर रहे हो, यह शास्त्रानुकुल नहीं है तो वे साधना ही छोड़ देते। जैसे कई साधक देवताओं की पूजा रुपी यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान करके ही पूजा मानते हैं। अन्य ब्रह्म तक ही पूजा करते हैं। कई केवल अग्नि में घृत आदि डालकर अनुष्ठान करते हैं जिसको हवन कहते हैं। (गीता अध्याय 4 श्लोक 25)

गीता अध्याय 4 श्लोक 25 की फोटोकॉपी :-

दैवम्, एव, अपरे, यज्ञम्, योगिनः, पर्युपासते,
ब्रह्माग्नौ, अपरे, यज्ञम्, यज्ञेन, एव, उपजुह्वति॥ २५॥

अपरे	= दूसरे	**ब्रह्माग्नौ**	= परब्रह्म परमात्मारूप अग्निमें (अभेददर्शनरूप)
योगिनः	= योगीजन		
दैवम्	= देवताओंके पूजनरूप		
यज्ञम्	= यज्ञका	**यज्ञेन**	= यज्ञके द्वारा
एव	= ही	**एव**	= ही
पर्युपासते	= भलीभाँति अनुष्ठान किया करते हैं	**यज्ञम्**	= आत्मरूप यज्ञका
	और	**उपजुह्वति**	= हवन* किया करते हैं।
अपरे	= अन्य (योगीजन)		

❖ अन्य योगीजन अर्थात् भक्तजन आँख, कान, मुहँ बन्द करके क्रियाएं करते हैं। उसी में अपना मानव जीवन हवन अर्थात् समाप्त करते हैं। (गीता अध्याय 4 श्लोक 26)

गीता अध्याय 4 श्लोक 26 की फोटोकॉपी :-

श्रोत्रादीनि, इन्द्रियाणि, अन्ये, संयमाग्निषु, जुह्वति,
शब्दादीन्, विषयान्, अन्ये, इन्द्रियाग्निषु, जुह्वति ॥ २६ ॥

अन्ये	= अन्य (योगीजन)	**शब्दादीन्**	= शब्दादि
श्रोत्रादीनि	= श्रोत्र आदि	**विषयान्**	= समस्त विषयोंको
इन्द्रियाणि	= समस्त इन्द्रियोंको	**इन्द्रियाग्निषु**	= इन्द्रियरूप अग्नियोंमें
संयमाग्निषु	= संयमरूप अग्नियोंमें		
जुह्वति	= हवन किया करते हैं (और)	**जुह्वति**	= हवन किया करते हैं।
अन्ये	= दूसरे (योगीलोग)		

❖ अन्य योगीजन अर्थात् भक्तजन श्वांसों को आना-जाना ध्यान से देखकर भक्ति साधना करते हैं जिससे वे आत्मसंयम साधना रुपी अग्नि में अपना जीवन हवन अर्थात् मानव जीवन पूरा करते हैं, जिसे ज्ञान दीप मानते हैं अर्थात् अपनी साधना को श्रेष्ठ मानते हैं। (गीता अध्याय 4 श्लोक 27)

गीता अध्याय 4 श्लोक 27 की फोटोकॉपी :-

सर्वाणि, इन्द्रियकर्माणि, प्राणकर्माणि, च, अपरे,
आत्मसंयमयोगाग्नौ, जुह्वति, ज्ञानदीपिते ॥ २७ ॥

अपरे	= दूसरे (योगीजन)	**ज्ञानदीपिते**	= ज्ञानसे प्रकाशित
सर्वाणि, इन्द्रियकर्माणि	= इन्द्रियोंकी सम्पूर्ण क्रियाओंको	**आत्मसंयम-योगाग्नौ**	= आत्मसंयम-योगरूप अग्निमें
च	= और		
प्राणकर्माणि	= प्राणोंकी समस्त क्रियाओंको	**जुह्वति**	= हवन किया करते हैं* ।

❖ कुछ अन्य साधक द्रव्य अर्थात् धन से होने वाले यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान करते हैं जैसे भोजन भण्डारा करना, कम्बल-कपड़े बाँटना, धर्मशाला, प्याऊ बनवाना, यह यज्ञ करते हैं। कुछ तपस्या करते हैं, कुछ योगासन करते हैं। इसी को परमात्मा प्राप्ति की साधना मानते हैं। कितने ही साधक अहिंसा आदि तीक्ष्ण व्रत करते हैं। जैसे मुख पर पट्टी बाँधकर नंगे पैरों चलना, कई दिन उपवास रखना आदि-आदि। अन्य योगीजन अर्थात् साधक स्वाध्याय अर्थात् प्रतिदिन किसी वेद जैसे ग्रन्थ से कुछ मन्त्रों (श्लोकों) का पाठ करना, यह ज्ञान यज्ञ कहलाता है, करते रहते हैं। इन्हीं क्रियाओं को मोक्षदायक मानते हैं। (गीता अध्याय 4 श्लोक 28)

गीता अध्याय 4 श्लोक 28 की फोटोकॉपी :-

द्रव्ययज्ञाः, तपोयज्ञाः, योगयज्ञाः, तथा, अपरे,
स्वाध्यायज्ञानयज्ञाः, च, यतयः, संशितव्रताः ॥ २८ ॥

अपरे	= कई पुरुष	**योगयज्ञाः**	= योगरूप यज्ञ करनेवाले हैं
द्रव्ययज्ञाः	= द्रव्य-सम्बन्धी यज्ञ करनेवाले हैं, (कितने ही)	**च**	= और (कितने ही)
		संशितव्रताः	= अहिंसादि तीक्ष्ण व्रतोंसे युक्त
तपोयज्ञाः	= तपस्यारूप यज्ञ करनेवाले हैं	**यतयः**	= यत्नशील पुरुष
तथा	= तथा (दूसरे कितने ही)	**स्वाध्यायज्ञानयज्ञाः**	= स्वाध्यायरूप ज्ञानयज्ञ करनेवाले हैं।

❖ दूसरे योगीजन अर्थात् भक्तजन प्राण वायु (श्वांस) अपान वायु में पहुँचाने वाली क्रिया करते हैं। अन्य योगीजन इसके विपरीत अपान वायु को प्राण वायु में पहुँचाने वाली क्रिया करते हैं। कितने ही साधक अल्पाहारी रहते हैं। कुछ योग आदि क्रियाऐं करते हैं। जैसे प्राणायाम में लीन साधक पान-अपान की गति को रोककर श्वांस कम लेते हैं। इसी में अपना मानव जीवन हवन अर्थात् समर्पित कर देते हैं। ये सभी उपरोक्त (अध्याय 4 श्लोक 25 से 30 तक) साधक अपने-अपने यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों को करके मानते हैं कि हम पाप का नाश करने वाली साधना भक्ति कर रहे हैं। (गीता अध्याय 4 श्लोक 29-30)

गीता अध्याय 4 श्लोक 29-30 की फोटोकॉपी :-

अपाने, जुह्वति, प्राणम्, प्राणे, अपानम्, तथा, अपरे,
प्राणापानगती, रुद्ध्वा, प्राणायामपरायणाः ॥ २९ ॥
अपरे, नियताहाराः, प्राणान्, प्राणेषु, जुह्वति,
सर्वे, अपि, एते, यज्ञविदः, यज्ञक्षपितकल्मषाः ॥ ३० ॥

और—

अपरे	= दूसरे (कितने ही योगीजन)	**प्राणायामपरायणाः**	= प्राणायामपरायण पुरुष
अपाने	= अपानवायुमें	**प्राणापानगती**	= प्राण और अपानकी गतिको
प्राणम्	= प्राणवायुको	**रुद्ध्वा**	= रोककर
जुह्वति	= हवन करते हैं।	**प्राणान्**	= प्राणोंको
तथा	= वैसे ही (अन्य योगीजन)	**प्राणेषु**	= प्राणोंमें (ही)
प्राणे	= प्राणवायुमें	**जुह्वति**	= हवन किया करते हैं।
अपानम्	= अपानवायुको (हवन करते हैं तथा)	**एते**	= ये
		सर्वे, अपि	= सभी (साधक)
अपरे	= अन्य (कितने ही)	**यज्ञक्षपित-कल्मषाः**	= यज्ञोंद्वारा पापोंका नाश कर देनेवाले (और)
नियताहाराः	= नियमित आहार* करनेवाले	**यज्ञविदः**	= यज्ञोंको जाननेवाले हैं।

❖ यदि साधक की साधना शास्त्रानुकूल हो तो हे कुरुश्रेष्ठ अर्जुन! इस यज्ञ से बचे हुए अमत भोग को खाने वाले साधक सनातन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को प्राप्त होते हैं और यज्ञ अर्थात् शास्त्रानुकूल साधना न करने वाले पुरुष के लिए तो यह पथ्वीलोक भी सुखदायक नहीं होता, फिर परलोक कैसे सुखदायक हो सकता है अर्थात् उस शास्त्र विरूद्ध साधक को कोई लाभ नहीं होता। यही प्रमाण गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी है। (गीता अध्याय 4 श्लोक 31)

गीता अध्याय 4 श्लोक 31 की फोटोकॉपी :-

यज्ञशिष्टामृतभुजः, यान्ति, ब्रह्म, सनातनम्,
न, अयम्, लोकः, अस्ति, अयज्ञस्य, कुतः, अन्यः, कुरुसत्तम ॥ ३१ ॥

और—

कुरुसत्तम	= हे कुरुश्रेष्ठ अर्जुन!	**अयज्ञस्य**	= यज्ञ न करनेवाले पुरुषके लिये (तो)
यज्ञशिष्टामृतभुजः	= यज्ञसे बचे हुए अमृतका अनुभव करनेवाले (योगीजन)	**अयम्**	= यह
सनातनम्	= सनातन	**लोकः**	= मनुष्यलोक भी (सुखदायक)
ब्रह्म	= परब्रह्म परमात्माको	**न**	= नहीं
		अस्ति	= है, (फिर)
		अन्यः	= परलोक
यान्ति	= प्राप्त होते हैं (और)	**कुतः**	= कैसे (सुखदायक हो सकता है) ?

❖ **गीता ज्ञान दाता ने ऊपर के 25 से 30 तक श्लोकों में स्पष्ट किया है कि जो साधक जैसी साधना कर रहा है, उसे मोक्षदायक तथा सत्य मानकर कर रहा है। परन्तु गीता अध्याय 4 के ही श्लोक 32 में बताया कि ''यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों का यथार्थ ज्ञान (ब्रह्मणः मुखे) परम अक्षर ब्रह्म स्वयं अपने मुख कमल से बोलकर देता है। {वह सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की वाणी कही गई है। उसे तत्वज्ञान भी कहते हैं। उसी को पाँचवां वेद (सूक्ष्म वेद) भी कहते हैं।} उस तत्वज्ञान में भक्तिविधि विस्तार के साथ बताई गई है। उसको जानकर साधक सर्व पापों से मुक्त हो जाता है अर्थात् पूर्ण मोक्ष को प्राप्त हो जाता है।**

नोट : गीता अध्याय 4 श्लोक 32 के अनुवाद में सर्व अनुवादकों ने एक जैसी ही गलती कर रखी है। ''ब्रह्मणः'' शब्द का अर्थ वेद कर रखा है। ''ब्रह्मणः मुखे'' का अर्थ वेद की वाणी में'' किया है जो गलत है। उन्हीं अनुवादकों ने गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ''ब्रह्मणः'' का अर्थ सच्चिदानन्द घन ब्रह्म किया है जो उचित है। इसलिए गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में भी ''ब्रह्मणः'' का अर्थ सच्चिदानन्द घन ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म करना उचित है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 की फोटोकॉपी :-

एवम्, बहुविधाः, यज्ञाः, वितताः, ब्रह्मणः, मुखे,
कर्मजान्, विद्धि, तान्, सर्वान्, एवम्, ज्ञात्वा, विमोक्ष्यसे॥ ३२॥

एवम्	= इस प्रकार (और भी)	कर्मजान्	= मन, इन्द्रिय और शरीरकी क्रिया-द्वारा सम्पन्न होनेवाले
बहुविधाः	= बहुत तरहके	विद्धि	= जान,
यज्ञाः	= यज्ञ	एवम्	= इस प्रकार (तत्त्वसे)
ब्रह्मणः	= वेदकी		
मुखे	= वाणीमें		
वितताः	= विस्तारसे कहे गये हैं।	ज्ञात्वा	= जानकर (उनके अनुष्ठान-द्वारा तू कर्मबन्धनसे सर्वथा)
तान्	= उन		
सर्वान्	= सबको (तू)	विमोक्ष्यसे	= मुक्त हो जायगा।

❖ गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि उस ज्ञान को (जो परमात्मा अपने मुख कमल से बोलकर सुनाता है जो तत्वज्ञान है उसको) तू तत्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ। उनको दण्डवत प्रणाम करने से, कपट छोड़कर नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से तत्वदर्शी सन्त तुझे तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे।

गीता अध्याय 4 श्लोक 34 की फोटोकॉपी :-

तत्, विद्धि, प्रणिपातेन, परिप्रश्नेन, सेवया,
उपदेक्ष्यन्ति, ते, ज्ञानम्, ज्ञानिनः, तत्त्वदर्शिनः॥ ३४॥

तत्	= उस ज्ञानको (तू तत्त्वदर्शी ज्ञानियोंके पास जाकर)	परिप्रश्नेन	= सरलतापूर्वक प्रश्न करनेसे
		ते	= वे
विद्धि	= समझ, (उनको)	तत्त्वदर्शिनः	= परमात्मतत्त्व-को भली-भाँति जाननेवाले
प्रणिपातेन	= भलीभाँति दण्डवत्-प्रणाम करनेसे, (उनकी)	ज्ञानिनः	= ज्ञानी महात्मा (तुझे उस)
सेवया	= सेवा करनेसे और कपट छोड़कर	ज्ञानम्	= तत्त्वज्ञानका
		उपदेक्ष्यन्ति	= उपदेश करेंगे—

❖ इससे यह भी सिद्ध हुआ कि गीता वाला ज्ञान पूर्ण नहीं है, परन्तु गलत भी नहीं है। गीता ज्ञानदाता को भी पूर्ण मोक्षमार्ग का ज्ञान नहीं है क्योंकि तत्वज्ञान की जानकारी गीता ज्ञानदाता को नहीं है जो परमात्मा (परम अक्षर ब्रह्म) ने अपने मुख से बोला होता है। उसको तत्वदर्शी सन्तों से जानने के लिए कहा है।

❖ यही प्रमाण यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 में भी है। कहा है कि परम अक्षर ब्रह्म को कोई तो 'सम्भवात्' अर्थात् राम-कष्ण की तरह उत्पन्न होने वाला साकार कहते हैं। कोई 'असम्भवात्' अर्थात् परमात्मा उत्पन्न नहीं होता, वह निराकार है। परमेश्वर उत्पन्न होता है या नहीं उत्पन्न होता, वास्तव में कैसा है? यह ज्ञान 'धीराणाम्' तत्वदर्शी सन्त बताते हैं, उनसे सुनो।

प्रश्न 33 :- (धर्मदास जी का) हे प्रभु! हे जिन्दा! तत्वदर्शी सन्त की क्या पहचान है तथा प्रमाणित सद्ग्रन्थों में कहाँ प्रमाण है? आपका ज्ञान आत्मा के आर-पार हो रहा है। गीता का शब्दा-शब्द यथार्थ भावार्थ आप जी के मुख कमल से सुनकर युगों की प्यासी आत्मा कुछ तप्त हो रही है, गद्गद् हो रही है।

उत्तर :- (जिन्दा परमेश्वर जी का) परमेश्वर ने बताया कि पहले तो लक्षण सुन तत्वदर्शी सन्त अर्थात् पूर्ण ज्ञानी सत्गुरु के :-

गुरू के लक्षण चार बखाना, प्रथम वेद शास्त्र को ज्ञाना (ज्ञाता)।
दूजे हरि भक्ति मन कर्म बानी, तीसरे समदष्टि कर जानी।
चौथे वेद विधि सब कर्मा, यह चार गुरु गुण जानो मर्मा।

कबीर सागर के अध्याय ''जीव धर्म बोध'' के पष्ठ 1960 पर ये अमतवाणियां अंकित हैं।

भावार्थ:- जो तत्वदर्शी सन्त (पूर्ण सतगुरु) होगा उसमें चार मुख्य गुण होते हैं :-

1. वह वेदों तथा अन्य सभी ग्रन्थों का पूर्ण ज्ञानी होता है।

2. दूसरे वह परमात्मा की भक्ति मन-कर्म-वचन से स्वयं करता है, केवल वक्ता-वक्ता नहीं होता, उसकी करणी और कथनी में अन्तर नहीं होता।

3. वह सर्व अनुयाईयों को समान दष्टि से देखता है। ऊँच-नीच का भेद नहीं करता।

4. चौथे वह सर्व भक्तिकर्म वेदों के अनुसार करता तथा कराता है अर्थात् शास्त्रानुकूल भक्ति साधना करता तथा कराता है। यह ऊपर का प्रमाण तो सूक्ष्म वेद में है जो परमेश्वर ने अपने मुखकमल से बोला है। अब आप जी को श्रीमद्भगवत गीता में प्रमाण दिखाते हैं कि तत्वदर्शी सन्त की क्या पहचान बताई है?

श्रीमद्भागवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में स्पष्ट है:-

ऊर्धव मूलम् अधः शाखम् अश्वत्थम् प्राहुः अव्ययम्।
छन्दासि यस्य प्रणानि, यः तम् वेद सः वेदवित्।।

अनुवाद : ऊपर को मूल (जड़) वाला, नीचे को तीनों गुण रुपी शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रुपी पीपल का वक्ष जानो, इसे अविनाशी कहते हैं क्योंकि उत्पत्ति-प्रलय चक्र सदा चलता रहता है जिस कारण से इसे अविनाशी कहा है। इस संसार रुपी वक्ष के पत्ते आदि छन्द हैं अर्थात् भाग (Parts) हैं। (य तम् वेद) जो इस संसार रुपी वक्ष के सर्वभागों को तत्व से जानता है, (सः) वह (वेदवित्) वेद के तात्पर्य को जानने वाला है अर्थात् वह तत्वदर्शी सन्त है। जैसा कि गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में कहा है कि परम अक्षर ब्रह्म स्वयं पथ्वी पर प्रकट होकर अपने मुख कमल से तत्वज्ञान विस्तार से बोलते हैं। परमेश्वर ने अपनी वाणी में अर्थात् तत्वज्ञान में बताया है:-

कबीर, अक्षर पुरुष एक पेड़ है, क्षर पुरुष वाकि डार। तीनों देवा शाखा हैं, पात रुप संसार।।

भावार्थ :- जमीन से बाहर जो वक्ष का हिस्सा है, उसे तना कहते हैं। तना तो जानों अक्षर पुरुष, तने से कई मोटी डार निकलती हैं। उनमें से एक मोटी डार जानों क्षर पुरुष। उस डार से

तीन शाखा निकलती हैं, उनको जानों तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिव-शंकर जी) और इन शाखाओं को पत्ते लगते हैं, उन पत्तों को संसार जानो।

गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 में सांकेतिक विवरण है। तत्वज्ञान में विस्तार से कहा गया है। पहले गीता ज्ञान के आधार से ही जानते हैं।

गीता अध्याय 15 श्लोक 2 में कहते हैं कि संसार रुपी वृक्ष की तीनों गुण (रजगुण ब्रह्माजी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शंकर जी) रुपी शाखाएं है। ये ऊपर (स्वर्ग लोक में) तथा नीचे (पाताल लोक) में फैली हुई हैं।

नोट :- रजगुण ब्रह्मा, सत्गुण विष्णु तथा तमगुण शंकर हैं। देखें प्रमाण प्रश्न नं. 7 में। तीनों शाखाएं ऊपर-नीचे फैली हैं, का तात्पर्य है कि गीता का ज्ञान पृथ्वी लोक पर बोला जा रहा था। तीनों देवता की सत्ता तीन लोकों में है। 1. पृथ्वी लोक, 2. स्वर्ग लोक तथा 3. पाताल लोक। ये तीनों एक-एक विभाग के मन्त्री हैं। रजगुण विभाग के श्री ब्रह्मा जी, सतगुण विभाग के श्री विष्णु जी तथा तमगुण विभाग के श्री शिव जी।

गीता अध्याय 15 श्लोक 3 में कहा है कि हे अर्जुन! इस संसार रुपी वृक्ष का स्वरुप जैसे यहाँ (विचार काल में) अर्थात् तेरे और मेरे गीता के ज्ञान की चर्चा में नहीं पाया जाता अर्थात् मैं नहीं बता पाऊँगा क्योंकि इसके आदि और अन्त का मुझे अच्छी तरह ज्ञान नहीं है। इसलिए इस अतिदृढ़ मूल वाले अर्थात् जिस संसार रुपी वृक्ष की मूल है। (वह परमात्मा भी अविनाशी है तथा उनका स्थान सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अकह लोक, ये चार ऊपर के लोक भी अविनाशी हैं। इन चारों में एक ही परमात्मा भिन्न-भिन्न रुप बनाकर सिंहासन पर विराजमान हैं। इसलिए इसको ''सुदृढ़मूलम्'' अति दृढ़ मूल वाला कहा है।) इसे तत्वज्ञान रुपी शस्त्र से काटकर अर्थात् तत्वदर्शी सन्त से तत्वज्ञान समझकर।

फिर गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कहा है कि उसके पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद अर्थात् सत्यलोक की खोज करनी चाहिए, जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आते। जिस परमेश्वर से संसार रुपी वृक्ष की प्रवृत्ति विस्तार को प्राप्त हुई है अर्थात् जिस परमेश्वर ने सर्व संसार की रचना की है। उसी परमेश्वर की भक्ति को पहले तत्वदर्शी सन्त से समझो! गीता ज्ञान दाता अपनी भक्ति को भी मना कर रहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन प्रभु बताये हैं। श्लोक 16 में दो पुरूष कहे हैं। क्षर पुरुष, अक्षर पुरुष ये दोनों नाशवान हैं। श्लोक 17 में तीसरा परम अक्षर पुरुष है जो संसार रुपी वृक्ष का मूल (जड़) है। वह वास्तव में अविनाशी है। जड़ (मूल) से ही वृक्ष के सर्व भागों ''तना, डार-शाखाओं तथा पत्तों'' को आहार प्राप्त होता है। वह परम अक्षर पुरुष ही तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। उसी (मूल) मालिक की पूजा करनी चाहिए। इस विवरण में तत्वदर्शी सन्त की पहचान तथा गीता ज्ञान दाता की अल्पज्ञता अर्थात् तत्वज्ञानहीनता स्पष्ट है।

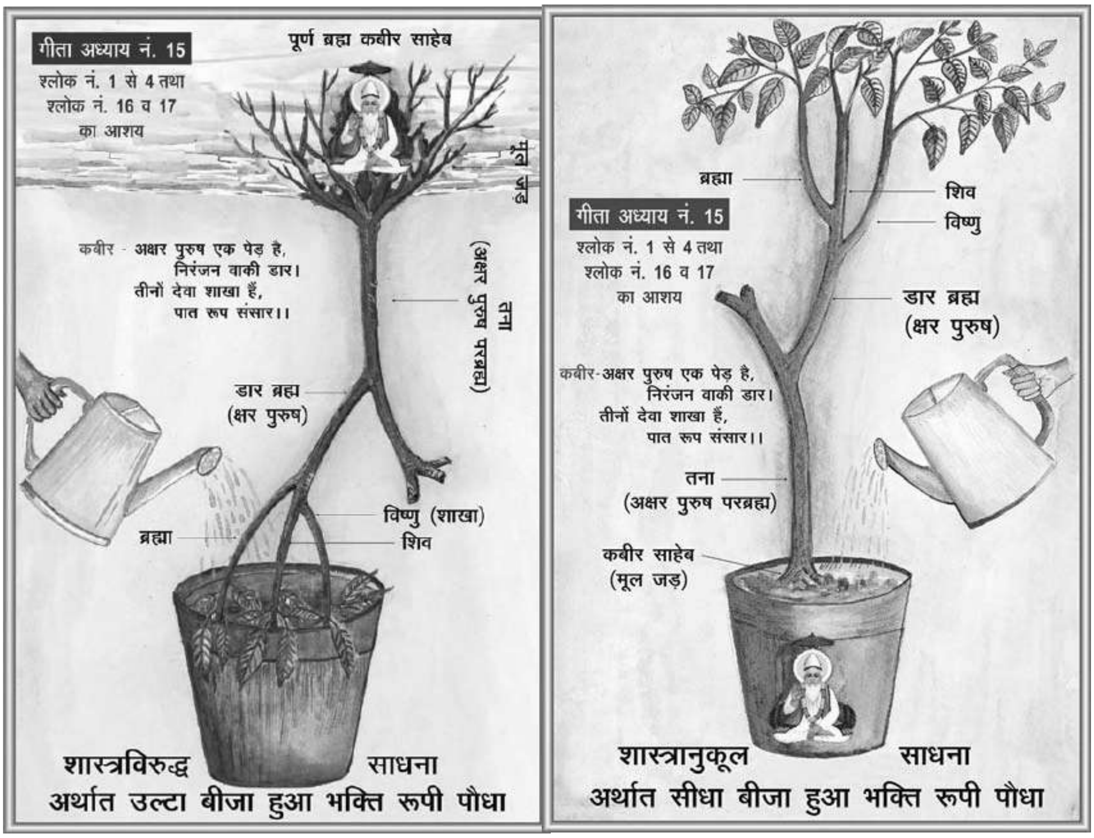

''जिन्दा बाबा का दूसरी बार अन्तर्ध्यान होना''

(धर्मदास जी ने कहा) :- हे जिन्दा! आप यह क्या कह रहे हो कि श्री विष्णु जी तीनों लोको में केवल एक विभाग के मन्त्री हैं। आप गलत कह रहे हो। श्री विष्णुजी तो अखिल ब्रह्माण्ड के स्वामी हैं। ये ही श्री ब्रह्मा रुप में उत्पत्ति करते हैं। विष्णु रुप होकर संसार का पालन करते हैं तथा शिव रुप होकर संहार करते हैं। ये तो कुल के मालिक हैं, यदि फिर से आपने श्री विष्णु जी को अपमानित किया तो ठीक बात नहीं रहेगी।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा :-

मूर्ख के समझावतें, ज्ञान गाँठि का जाय।
कोयला होत न उजला, भावें सौ मन साबुन लाय।।

इतना कहकर परमेश्वर जिन्दा रुपधारी अंतर्ध्यान हो गए। दूसरी बार परमेश्वर को खोने के पश्चात् धर्मदास बहुत उदास हो गए। भगवान विष्णु में इतनी अटूट आस्था थी कि आँखों प्रमाण देखकर भी झूठ को त्यागने को तैयार नहीं थे।

कबीर, जान बूझ साची तजै, करे झूठ से नेह।
ताकि संगति हे प्रभु, स्वपन में भी ना देह।।

कुछ देर के पश्चात् धर्मदास की बुद्धि से काल का साया हटा और अपनी गलती पर विचार

किया कि सब प्रमाण गीता से ही प्रत्यक्ष किए गए थे। जिन्दा बाबा ने अपनी ओर से तो कुछ नहीं कहा। मैं कितना अभागा हूँ कि मैंने अपने हठी व्यवहार से देव स्वरुप तत्वदर्शी सन्त को खो दिया। अब तो वे देव नहीं मिलेंगे। मेरा जीवन व्यर्थ जाएगा। यह विचार करके धर्मदास सिहर उठा अर्थात् भय से काँपने लगा। खाना भी कम खाने लगा, उदास रहने लगा तथा मन-मन में अर्जी लगाने लगा हे देव! हे जिन्दा बाबा! एक बार दर्शन दे दो। भविष्य में ऐसी गलती कभी नहीं करुँगा। मैं आपसे करबद्ध प्रार्थना करता हूँ। मुझ मूर्ख की औछी-मन्दी बातों पर ध्यान न दो। मुझे फिर मिलो गुसांई। आप का ज्ञान सत्य, आप सत्य, आप जी का एक-एक वचन अमृत है। कृपया दर्शन दो नहीं तो अधिक दिन मेरा जीवन नहीं रहेगा।

तीसरे दिन परमेश्वर कबीर जी एक दरिया के किनारे वृक्ष के नीचे बैठे थे। आसपास कुछ आवारा गायें भी उसी वृक्ष के नीचे बैठी जुगाली कर रही थीं। कुछ दरिया के किनारे घास चर रही थी। धर्मदास की दृष्टि दरिया के किनारे पिताम्बर पहने बैठे सन्त पर पड़ी, देखा आस-पास गायें चर रही है। ऐसा लगा जैसे साक्षात् भगवान कृष्ण अपने लोक से आकर बैठे हों। धर्मदास उत्सुकता से सन्त के पास गया तथा देखा यह तो कोई सामान्य सन्त है। फिर भी सोचा चरण स्पर्श करके फिर आगे बढूँगा। धर्मदास जी ने जब चरणों का स्पर्श किया, मस्तक चरणों पर रखा तो ऐसा लगा कि जैसे रुई को छुआ हो। फिर चरणों को हाथों से दबा-दबाकर देखा तो उनमें कहीं भी हड्डी नहीं थी। उपर चेहरे की ओर देखा तो वही बाबा जिन्दा उसी पहले वाली वेशभूषा में बैठा था। धर्मदास जी ने चरणों को दृढ़ करके पकड़ लिया कि कहीं फिर से न चले जाऐं और अपनी गलती की क्षमा याचना की। कहा कि हे जिन्दा! आप तो तत्वदर्शी सन्त हो। मैं एक भ्रमित जिज्ञासु हूँ। जब तक मेरी शंकाओं का समाधान नहीं होगा, तब तक मेरा अज्ञान नाश कैसे होगा? आप तो महाकृपालु हैं। मुझ किंकर पर दया करो। मेरा अज्ञान हटाओ प्रभु।

प्रश्न 34 (धर्मदास जी का) :- हे जिन्दा! यदि श्री विष्णु जी पूर्ण परमात्मा नहीं है तो कौन है पूर्ण परमात्मा, कृप्या गीता से प्रमाण देना?

उत्तर :- कृप्या पढ़ें प्रश्न नं. 15 का उत्तर जो जिन्दा रुपधारी परमेश्वर ने धर्मदास को सुनाया।

प्रश्न 35 :- धर्मदास जी ने पूछा कि क्या श्री विष्णु जी और शंकर जी की पूजा करनी चाहिए?

उत्तर :- (जिन्दा बाबा का) :- नहीं करनी चाहिए।

प्रश्न 36 (धर्मदास जी का) :- कृपया गीता से प्रमाणित कीजिए।

उत्तर :- कृपया पढ़ें प्रश्न नं. 17 का उत्तर। धर्मदास को प्रभु ने सुनाया, गीता शास्त्र से प्रत्यक्ष प्रमाण देखकर धर्मदास की आँखें खुली की खुली रह गई। जैसे किसी को सदमा लग गया हो। झूठ कह नहीं सकता, स्वीकार करने के लिए अभी वक्त लगेगा।

जिन्दा रुपधारी परमेश्वर ने धर्मदास को सम्बोधित करते हुए कहा कि हे वैष्णव महात्मा! कौन-सी दुनिया में चले गये, लौट आओ। मानो धर्मदास नींद से जागा हो। सावधान होकर कहा, कुछ नहीं-कुछ नहीं। कृप्या और ज्ञान सुनाओ ताकि मेरा भ्रम दूर हो सके। परमेश्वर कबीर जी ने सृष्टि की रचना धर्मदास जी को सुनाई, कृपया पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 389 पर।

सृष्टि रचना सुनकर धर्मदास जी को ऐसा लगा मानो पागल हो जाऊँगा क्योंकि जो ज्ञान आजतक हिन्दू धर्मगुरुओं, ऋषियों, महर्षियों-सन्तों से सुना था, वह निराधार तथा अप्रमाणित लग रहा था। जिन्दा बाबा हिन्दू सद्ग्रन्थों से ही प्रमाणित कर रहे थे। शंका का कोई स्थान नहीं था।

मन-मन में सोच रहा था कि कहीं मैं पागल तो नहीं हो जाऊँगा?

प्रश्न 37 :- (धर्मदास जी का) : हे जिन्दा! क्या हिन्दू धर्म के गुरुओं तथा ऋषियों को शास्त्रों का ज्ञान नहीं है?

उत्तर :- (जिन्दा महात्मा का) :- क्या यह बताने की भी आवश्यकता शेष है?

''धर्मदास जी की अन्य संतों से ज्ञान चर्चा''

प्रश्न 38 :- (धर्मदास जी का) धर्मदास जी ने मन में विचार किया कि यह कैसे हो सकता है कि हिन्दू धर्म के किसी सन्त, गुरु, महर्षि को सत्य अध्यात्म ज्ञान नहीं? यह कहकर धर्मदास जी के मन में आया कि किसी महामण्डलेश्वर से ज्ञान सुनना चाहिए। एक रमते फकीर के पास क्या मिलेगा? यह बात मन में सोच ही रहा था कि परमेश्वर जिन्दा जी ने धर्मदास जी के मन का दोष जानकर कहा कि आप अपने महामण्डलेश्वरों से ज्ञान प्राप्त करलो। यह कहकर परमेश्वर तीसरी बार अन्तर्ध्यान हो गए। धर्मदास जी ठगे से रह गए और अपने मन के दोष को जिन्दा महात्मा के मुखकमल से सुनकर बहुत शर्मसार हुए। जब प्रभु अन्तर्ध्यान हो गए तो बहुत व्याकुल हो गया। परन्तु धर्मदास जी को आशा थी कि हमारे महामण्डलेश्वरों के पास तत्वज्ञान अवश्य मिलेगा। यदि जिन्दा बाबा (मुसलमान) के ज्ञान को तत्वज्ञान मानकर साधना स्वीकार करना तो ऐसा लग रहा है जैसे धर्म परिवर्तन करना हो। यह समाज में निन्दा का कारण बनेगा। इसलिए अपने हिन्दू महात्माओं से तत्वज्ञान जानकर श्रेष्ठ शास्त्रानुकूल भक्ति करनी ही उचित रहेगी। इस बार धर्मदास जी को जिन्दा बाबा का अचानक चला जाना खटका नहीं क्योंकि उसकी गलतफहमी थी कि हिन्दू इतना बड़ा तथा पुरातन धर्म है, क्या कोई भी तत्वदर्शी सन्त नहीं मिलेगा? धर्मदास जी एक वैष्णव महामण्डलेश्वर श्री ज्ञानानंद जी के आश्रम में गया। उस समय श्री ज्ञानानन्द जी का बहुत बोलबाला था। वह स्वामी रामानन्द जी काशी वाले का शिष्य था। परन्तु उस समय स्वामी रामानन्द जी तो परमेश्वर कबीर जी का शिष्य/गुरु बन चुका था। वह अपने ज्ञान को अज्ञान मान चुका था। स्वामी रामानन्द जी ने अपने सर्वऋषि शिष्यों से बोल दिया था कि मेरे द्वारा बताया ज्ञान व्यर्थ है और यह साधना शास्त्रविरुद्ध है। आप सब परमेश्वर कबीर जी से दीक्षा ले लें। परन्तु जाति का अभिमान, शिष्यों में प्रतिष्ठा, ज्ञान के स्थान पर अज्ञान का भण्डार जीव को सत्य स्वीकार नहीं करने देता।

कबीर, राज तजना सहज है, सहज त्रिया का नेह।
मान बड़ाई ईर्ष्या, दुर्लभ तजना येह।।

धर्मदास जी ने श्री ज्ञानानंद जी से प्रश्न किया कि हे स्वामी जी! क्या भगवान विष्णु से भी ऊपर कोई प्रभु है? श्री ज्ञानानन्द जी ने उत्तर दिया कि श्री विष्णु स्वयं परम ब्रह्म परमात्मा है। इनसे ऊपर कौन हो सकता है? श्री कष्ण जी भी श्री विष्णु जी स्वयं ही थे। उन्होंने ही श्रीमद्भगवत गीता का ज्ञान दिया। आप को किसने भ्रमित कर दिया? धर्मदास जी ने पूछा कि गीता अध्याय 8 श्लोक 1 में अर्जुन ने पूछा कि तत् ब्रह्म क्या है? गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में भगवान ने कहा है कि वह ''परम अक्षर ब्रह्म'' है। यह तो भगवान कष्ण से अन्य प्रभु हुआ। ज्ञानानन्द स्वामी बोला, लगता है कि तेरे को उस काशी वाले जुलाहे का जादू चढ़ा हुआ है। चल-चल अपना काम कर। भगवान कष्ण से अन्य कोई प्रभु नहीं है। धर्मदास जी को पता चल गया कि इसके पास वह ज्ञान नहीं है जो जिन्दा बाबा ने प्रमाणों सहित बताया है। धर्मदास निराश होकर वहाँ से चल दिया। धर्मदास जी को यह

नहीं पता था कि काशी वाला जुलाहा वह बाबा जिन्दा ही है। फिर धर्मदास को पता चला कि एक मोहनगिरी नाम के महामण्डलेश्वर हैं, उनके पास जाकर भगवान की चर्चा करनी शुरु की। पहले एक रुपया दक्षिणा चढ़ाई जिस कारण से मोहनगिरी ने उनको निकट बैठाया और बताया कि भगवान शिव सर्व संष्टि के रचने वाले हैं। इनसे बढ़कर संसार में कोई प्रभु नहीं है। ''ओम् नमः शिवाय'' मन्त्र का जाप करो। धर्मदास जी प्रणाम करके चल पड़े। सोचा इनका कितना अच्छा नाम है, ज्ञान धेल्ले (एक पैसे) का नहीं। धर्मदास जी से किसी ने बताया कि एक बहुत बड़ा तपस्वी है। कई वर्षों से खड़ा तप कर रहा है। धर्मदास जी वहाँ गए, वह नाथ पंथ से जुड़ा था। भगवान शिव को समर्थ परमात्मा बताता था। तप करके हठयोग से परमात्मा की प्राप्ति मान रहा था। धर्मदास जी ने विवेक किया कि यदि इतनी घोर कठिन तपस्या से परमात्मा मिलेगा तो हमारे वश से बाहर की बात है। वहाँ से भी आगे चला। पता चला कि एक बहुत बड़ा विद्वान महात्मा काशी विद्यापीठ से पढ़कर आया है। वेदों का पूर्ण विद्वान है। धर्मदास जी ने उस महात्मा से पूछा परमात्मा कैसा है? उत्तर मिला-निराकार है। उस निराकार परमात्मा का कोई नाम है? धर्मदास ने पूछा। उत्तर विद्वान का :- उसका नाम ब्रह्म है। क्या परमात्मा को देखा जा सकता है, धर्मदास जी ने प्रश्न किया? उत्तर मिला परमात्मा निराकार है, उसको कैसे देख सकते हैं। केवल परमात्मा का प्रकाश देखा जा सकता है।

प्रश्नः- क्या श्री कंष्ण या विष्णु परमात्मा हैं? उत्तर था कि ये तो सर्गुण देवता हैं, परमात्मा निर्गुण है।

गीता और वेद के ज्ञान में क्या अन्तर है? धर्मदास ने प्रश्न किया। ब्राह्मण का उत्तर था कि गीता चारों वेदों का सारांश है। धर्मदास जी ने पूछा कि भक्ति मन्त्र कौन सा है? उत्तर ब्राह्मण का था कि गायत्री मन्त्र का जाप करो = ओम् भूर्भवस्वः तत् सवितुः वरेणियम भंगोदेवस्य धीमहि, धीयो यो नः प्रचोदयात्'' धर्मदास जी को जिन्दा बाबा ने बताया था कि इस मन्त्र से मोक्ष सम्भव नहीं क्योंकि गीता तथा वेदों में केवल ॐ (ओम्) नाम का जाप करना लिखा है। धर्मदास जी फिर आगे चला तो पता चला कि सन्त गुफा में रहता है। कई-कई दिन तक गुफा से नहीं निकलता है। उसके पास जाकर प्रश्न किया कि भगवान कैसे मिलता है? उत्तर मिला कि इन्द्रियों पर संयम रखो, इसी से परमात्मा मिल जाता है। नाम जाप से कुछ नहीं होता। खाण्ड (चीनी) कहने से मुँह मीठा नहीं होता। धर्मदास जी को सन्तोष नहीं हुआ। सब सन्तों से ज्ञान चर्चा करके धर्मदास जी को बहुत पश्चाताप् हुआ कि मेरे को उस जिन्दा बाबा पर विश्वास नहीं हुआ कि उसने कहा था किसी भी सन्त महामण्डलेश्वर के पास यथार्थ अध्यात्म ज्ञान नहीं है। किसी भी सन्त महात्मा का ज्ञान शास्त्र प्रमाणित नहीं है। कोई शास्त्र का आधार नहीं है, तब धर्मदास रोने लगा। अपनी अज्ञानता पर पश्चाताप करने लगा कि मैं कैसा कलमुँहा हूँ। मैनें ऊटपटांग यानि व्यर्थ के प्रश्न-उत्तर करके संत को खो दिया। मैं बुरी किस्मत वाला हूँ। मुझे उस परमात्मास्वरुप जिन्दा महात्मा पर विश्वास नहीं आया। अब वह अन्तर्यामी मुझे नहीं मिलेगा क्योंकि मैंने कई बार उनका अपमान कर दिया। अब क्या करुँ, न जीने को मन करता है, आत्महत्या पाप है। बुरी तरह रोने लगा। पछाड़ खाकर अचेत हो गया।

प्रश्न नं. 38 का उत्तर :- परमात्मा जिन्दा महात्मा के रुप में एक वंक्ष के नीचे बैठ गए। धर्मदास जी सचेत हुआ और हृदय से पुकार की कि हे जिन्दा! एक बार दर्शन दे दो। मैं टूट चुका हूँ। किसी के पास ज्ञान नहीं है। आप की सर्व बातें सत्य हैं। परमात्मा! एक बार मुझ अज्ञानी महामूर्ख को क्षमा

करो। आप जिन्दा बाबा ही नहीं परमात्मा हो। आप महाविद्वान हो। आपके ज्ञान का कोई सामना करने वाला नहीं है। मैं जिन्दगी में कभी आप पर अविश्वास नहीं करुँगा। ऐसे विचार कर आगे चला तो देखा एक वृक्ष के नीचे एक साधु बैठा है, कुछ व्यक्ति उसके पास बैठे हैं। धर्मदास जी ने सोचा कि मैं तो उन महामण्डलेश्वरों से मिलकर आया हूँ। जिनके पास कई सैंकड़ों भक्त दर्शनार्थ बैठे रहते हैं। इस छोटे साधु से क्या मिलना? परन्तु अपने आप मन में आया कि कुछ देर विश्राम करना है, यहीं कर लेता हूँ। फिर सोचा कि प्रश्न करता हूँ। पूछा:- हे महात्मा! जी परमात्मा कैसा है? साधु ने उत्तर दिया कि मैं ही परमात्मा हूँ। धर्मदास जी चुप हो गए, सोचा यह तो मजाक कर रहा है। यह तो सन्त भी नहीं है। धीरे-धीरे सर्व व्यक्ति चले गए। जब धर्मदास जी चलने लगे परमात्मा बोले कि हे महात्मा! क्या आपके मण्डलेश्वरों ने नहीं बताया कि परमात्मा कैसा है? धर्मदास जी ने आश्चर्य से देखा कि इस साधु को कैसे पता लगा कि मैं कहाँ-कहाँ भटका हूँ? उसी समय परमात्मा ने वही जिन्दा बाबा वाला रुप बना लिया। धर्मदास जी चरणों में गिरकर बिलख-बिलखकर रोने लगा तथा कहा कि हे भगवन! किसी के पास ज्ञान नहीं है। मुझ पापी अवगुण हारे को क्षमा करो महाराज! मैंने बड़ी भारी भूल की है। आपने सृष्टि रचना का ज्ञान जो बताया है, उसके सामने सर्व सन्त का ज्ञान ऐसा है जैसे सूरज के सामने दीपक, सब ऊवा-बाई बकते हैं। परमेश्वर ने धर्मदास जी से कहा कि आपने जिन वेदों के पूर्ण विद्वान से प्रश्न किया था कि ''परमात्मा कैसा है? उत्तर मिला कि परमात्मा निराकार है। आपने प्रश्न किया था कि क्या परमात्मा देखा जा सकता है? उस अज्ञानी का उत्तर था कि ''जब परमात्मा निराकार है तो उसे देखने का प्रश्न ही नहीं है। परमात्मा का प्रकाश देखा जा सकता है।''

❖ विचार करो धर्मदास! यह विचार तो ऐसे व्यक्ति के हैं जैसे किसी नेत्रहीन से कोई प्रश्न करे कि सूर्य कैसा है? उत्तर मिला कि सूर्य निराकार है। फिर प्रश्न किया कि क्या सूर्य को देखा जा सकता है? उत्तर मिले कि सूर्य को नहीं देखा जा सकता, सूर्य का प्रकाश देखा जाता है। उस नेत्रहीन से पूछें कि सूर्य बिना प्रकाश किसका देखा जा सकता है? इसी प्रकार अध्यात्म ज्ञान नेत्रहीन अर्थात् पूर्ण अज्ञानी सन्त ऐसी व्याख्या किया करते हैं कि परमात्मा तो निराकार है, उसका प्रकाश कैसे देखा जा सकता है? परमात्मा का ही तो प्रकाश होगा। धर्मदास जी ने कहा कि हे महात्मा जी! यह विचार तो मेरे दिमाग में भी नहीं आया। आप जी के दिव्य तर्क से मेरी आँखें खुल गई। जितने भी महामण्डलेश्वर मिले हैं, वे सर्व महाअज्ञानी मिले हैं। हे जिन्दा महात्मा जी! यदि मैं आपके ज्ञान को सुनने के पश्चात् यदि इन मूर्खों से नहीं मिलता तो मेरा भ्रम निवारण कभी नहीं होता, चाहे आप जी कितने ही प्रमाण दिखाते और बताते।

प्रश्न 39 (धर्मदास) :- हे जिन्दा! आप नाराज न होना। मेरे मन में एक शंका है कि क्या भगवान विष्णु जी की भक्ति अच्छी नहीं?

उत्तर (जिन्दा महात्मा जी का) :- हे धर्मदास! श्रीमद् भगवत् गीता अध्याय 2 श्लोक 46 में प्रमाण है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा हे अर्जुन! बहुत बड़े जलाश्य (झील) की प्राप्ति के पश्चात् छोटे जलाश्य में व्यक्ति का कितना प्रयोजन रह जाता है। इसी प्रकार पूर्ण ज्ञान और पूर्ण परमात्मा की भक्ति विधि व होने वाले लाभ का ज्ञान होने के पश्चात् अन्य ज्ञानों तथा छोटे भगवानों में उतनी ही आस्था रह जाती है जितनी बड़े जलाश्य की प्राप्ति के पश्चात् छोटे जलाश्य में रह जाती है। छोटे जलाश्य का जल अच्छा है, परन्तु पर्याप्त नहीं है। यदि एक वर्ष वर्षा न हो तो छोटे जलाश्य

का जल सूख जाता है तथा उस पर आश्रित व्यक्ति भी जल के अभाव से कष्ट उठाते हैं, त्राहि-त्राहि मच जाती है। परन्तु बड़े जलाश्य (झील) का जल यदि 10 वर्ष भी वर्षा न हो तो भी समाप्त नहीं होता। जिस व्यक्ति को वह बड़ा जलाश्य मिल जाएगा तो वह तुरन्त छोटे जलाश्य (जोहड़ = तालाब) को छोड़कर बड़े जलाश्य के किनारे जा बसेगा। जिस समय गीता ज्ञान सुनाया गया, उस समय सर्व व्यक्ति तालाबों के जल पर ही आश्रित थे। इसलिए यह उदाहरण दिया था, इसी प्रकार श्री विष्णु सतगुण की भक्ति भले ही आप अच्छी मानते हैं, परन्तु पूर्ण मोक्षदायक नहीं है। श्री विष्णु जी भी नाशवान हैं। इनका भी जन्म-मृत्यु होता है। फिर साधक अमर कैसे हो सकता है? इसलिए पूर्ण मोक्ष अर्थात् अमर होने के लिए अमर परमात्मा की ही भक्ति करनी पड़ेगी।

पेश है गीता अध्याय 2 श्लोक 46 की फोटोकॉपी :-

यावान्, अर्थः, उदपाने, सर्वतः, सम्प्लुतोदके,
तावान्, सर्वेषु, वेदेषु, ब्राह्मणस्य, विजानतः ॥ ४६ ॥

क्योंकि—

सर्वतः	= सब ओरसे	**(अस्ति)**	= रहता है,
सम्प्लुतोदके	= परिपूर्ण जलाशयके	**विजानतः**	= (ब्रह्मको) तत्त्वसे जाननेवाले
(प्राप्ते सति)	= प्राप्त हो जानेपर	**ब्राह्मणस्य**	= ब्राह्मणका
उदपाने	= छोटे जलाशयमें (मनुष्यका)	**सर्वेषु**	= समस्त
		वेदेषु	= वेदोंमें
यावान्	= जितना	**तावान्**	= उतना (ही प्रयोजन रह जाता है)।
अर्थः	= प्रयोजन		

प्रश्न 40 :- हे जिन्दा महात्मा जी! मैंने आप के ऊपर अविश्वास किया। मैं महापापी हूँ, मुझे क्षमा करना।

उत्तर (जिन्दा बाबा जी का) :- हे धर्मदास! मैंने ही आप के मन में यह प्रेरणा की थी। यदि आप उन अपने धर्मगुरुओं की तलाशी न लेते तो आप कभी मेरी बातों पर विश्वास नहीं करते। रह-रहकर तेरे मन को यही बात कचोटती रहती कि ऐसा नहीं हो सकता कि हिन्दू धर्म के किसी महर्षि मण्डलेश्वर व सन्त-महन्त को तत्वज्ञान नहीं। अब आप मेरी बातों पर विश्वास करोगे। विचार करो धर्मदास! जब गीता ज्ञान दाता गीता अध्याय 4 श्लोक 32 व 34 में कहता है कि जो ज्ञान परम अक्षर ब्रह्म (परमेश्वर) अपने मुख से सुनाता है, वह तत्वज्ञान है। (गीता अध्याय 4 श्लोक 32) उस ज्ञान को तू तत्वदर्शी सन्तों के पास जाकर समझ। (गीता अध्याय 4 श्लोक 34) इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान देने वाले परमात्मा को ही तत्वज्ञान नहीं तो गीता पाठकों व इन प्रभु के उपासकों को ज्ञान कैसे हो सकता है?

पेश है गीता अध्याय 4 श्लोक 32 की फोटोकॉपी :-

एवम्, बहुविधाः, यज्ञाः, वितताः, ब्रह्मणः, मुखे,
कर्मजान्, विद्धि, तान्, सर्वान्, एवम्, ज्ञात्वा, विमोक्ष्यसे॥ ३२॥

एवम्	= इस प्रकार (और भी)	**कर्मजान्**	= मन, इन्द्रिय और शरीरकी क्रिया-द्वारा सम्पन्न होनेवाले
बहुविधाः	= बहुत तरहके	**विद्धि**	= जान,
यज्ञाः	= यज्ञ	**एवम्**	= इस प्रकार (तत्त्वसे)
ब्रह्मणः	= वेदकी	**ज्ञात्वा**	= जानकर (उनके अनुष्ठान-द्वारा तू कर्मबन्धनसे सर्वथा)
मुखे	= वाणीमें		
वितताः	= विस्तारसे कहे गये हैं।		
तान्	= उन		
सर्वान्	= सबको (तू)	**विमोक्ष्यसे**	= मुक्त हो जायगा।

पेश है गीता अध्याय 4 श्लोक 34 की फोटोकॉपी :-

तत्, विद्धि, प्रणिपातेन, परिप्रश्नेन, सेवया,
उपदेक्ष्यन्ति, ते, ज्ञानम्, ज्ञानिनः, तत्त्वदर्शिनः ॥ ३४॥

तत्	= उस ज्ञानको (तू तत्त्वदर्शी ज्ञानियोंके पास जाकर)	**परिप्रश्नेन**	= सरलतापूर्वक प्रश्न करनेसे
		ते	= वे
विद्धि	= समझ, (उनको)	**तत्त्वदर्शिनः**	= परमात्मतत्त्व-को भली-भाँति जाननेवाले
प्रणिपातेन	= भलीभाँति दण्डवत्-प्रणाम करनेसे, (उनकी)	**ज्ञानिनः**	= ज्ञानी महात्मा (तुझे उस)
सेवया	= सेवा करनेसे और कपट छोड़कर	**ज्ञानम्**	= तत्त्वज्ञानका
		उपदेक्ष्यन्ति	= उपदेश करेंगे—

यह फोटोकॉपी गीता अध्याय 4 श्लोक 32 की है जो गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित है। इसमें 'ब्रह्मणः' का अर्थ वेद की (मुखे) का अर्थ वाणी किया है जो गलत है। 'ब्रह्मणः' का अर्थ इसी अनुवादक ने गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में सच्चिदानंद घन ब्रह्म किया है। यहाँ भी सच्चिदानंद घन किया जाना चाहिए। फिर सही अनुवाद बन जाता है।

गीता अध्याय 2 श्लोक 53 में कहा कि हे अर्जुन! भिन्न-भिन्न प्रकार से भ्रमित करने वाले वचनों से हटकर तेरी बुद्धि एक तत्वज्ञान पर स्थिर हो जाएगी, तब तो तू योग (भक्ति) को प्राप्त होगा। भावार्थ है कि तब तू भक्त बनेगा। इसलिए मैंने धर्मदास तेरे को उन सन्तों-मण्डलेश्वरों के पास जाने के लिए प्रेरित किया था। अब तू योग को प्राप्त होगा। भक्त बन सकेगा।

पेश है गीता अध्याय 2 श्लोक 53 की फोटोकॉपी :-

श्रुतिविप्रतिपन्ना, ते, यदा, स्थास्यति, निश्चला,
समाधौ, अचला, बुद्धिः, तदा, योगम्, अवाप्स्यसि ॥ ५३ ॥

और—

श्रुतिविप्रतिपन्ना	= भाँति-भाँतिके वचनोंको सुननेसे विचलित हुई	**अचला**	= स्थिर
		स्थास्यति	= ठहर जायगी,
ते	= तेरी	**तदा**	= तब (तू)
बुद्धिः	= बुद्धि	**योगम्**	= योगको
यदा	= जब	**अवाप्स्यसि**	= प्राप्त हो जायगा अर्थात् तेरा परमात्मासे नित्य संयोग हो जायगा।
समाधौ	= परमात्मामें		
निश्चला	= अचल (और)		

प्रश्न 41 (धर्मदास जी का) :- क्या पूर्ण मोक्ष के लिए भगवान विष्णु जी तथा भगवान शंकर जी की पूजा को छोड़ना पड़ेगा?

उत्तर (जिन्दा बाबा जी का) :- इन प्रभुओं को नहीं छोड़ना, इनकी पूजा छोड़नी होगी।

प्रश्न 42 (धर्मदास जी का) :- हे जिन्दा! मैं समझा नहीं। इन विष्णु और शंकर प्रभुओं को नहीं छोड़ना और पूजा छोड़नी पड़ेगी। मेरी संकीर्ण बुद्धि है। मैं महाअज्ञानी प्राणी हूँ। कृप्या विस्तार से बताने की कृपा करें।

उत्तर :- (जिन्दा महात्मा जी का) : हे धर्मदास जी! आप इनकी साधना शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण कर रहे हो। जिससे आपजी को लाभ नहीं मिल रहा। इन देवताओं से लाभ लेने के साधना के मन्त्र मेरे पास हैं। जैसे भैंसा है, उसको भैंसा-भैंसा करते रहो, वह आपकी ओर नहीं देखेगा। उसका एक विशेष मन्त्र हुर्र-हुर्र है। उसको सुनते ही वह तुरंत प्रभावित होता है और आवाज लगाने वाले की ओर खींचा चला आता है। इसी प्रकार इन सर्व आदरणीय देवताओं के निज मन्त्र हैं। जिनसे वे पूर्ण लाभ तथा तुरंत लाभ देते हैं। प्रिय पाठको! वही मन्त्र मेरे पास (संत रामपाल दास) के पास हैं जो परमेश्वर जी ने गुरू जी के माध्यम से मुझे दिए हैं, आओ और प्राप्त करो।

जैसा कि आपको बताया था (प्रश्न नं. 33 के उत्तर में वर्णन किया था) कि यह संसार एक वृक्ष जानो। परम अक्षर पुरुष इसकी जड़ें मानो, अक्षर पुरुष तना जानो, क्षर पुरुष मोटी डार तथा तीनों देवता (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी तथा तमगुण शिवजी) इस संसार रुपी वृक्ष की शाखाऐं जानों और पात रुप संसार।

यदि आप कहीं से आम का पौधा लेकर आए हो तो गढ़्ढ़ा खोदकर उसकी जड़ों को उस गढ़्ढ़े में मिट्टी में दबाओगे और जड़ों की सिंचाई करोगे। तब वह आम का पेड़ बनेगा और उस वृक्ष की शाखाओं को फल लगेंगे। इसलिए वृक्ष की शाखाओं को तोड़ा नहीं जा सकता। परन्तु इनको जड़ के स्थान पर गढ़्ढ़े में मिट्टी में दबाकर इनकी सिंचाई नहीं की जाती। ठीक इसी प्रकार संसार रुपी वृक्ष की जड़ अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को इष्ट रुप में प्रतिष्ठित करके पूजा करने से शास्त्रानुकूल साधना होती है जो परम लाभ देने वाली होती है। इस प्रकार किए गए भक्ति कर्मों का फल यही

तीनों देवता (संसार वक्ष की शाखाऐं) ही कर्मानुसार प्रदान करते हैं। इसलिए इनकी पूजा छोड़नी होती है। लेकिन इनको छोड़ा (तोड़ा) नहीं जा सकता। यही प्रमाण श्रीमद्भगवत् गीता अध्याय 3 श्लोक 8 से 15 तक में भी है। कहा है कि :-

❖ हे अर्जुन! तू शास्त्रविहित कर्म कर अर्थात् शास्त्रों में जैसे भक्ति करने को कहा है, वैसा भक्ति कार्य कर। यदि घर त्यागकर जंगलों में चला गया अर्थात् तू कर्म सन्यासी हो गया या एक स्थान पर बैठकर हठपूर्वक साधना करने लगेगा तो तेरा शरीर पोषण का निर्वाह भी नहीं होगा। इसलिए कर्म न करने की अपेक्षा कर्म करते-करते भक्ति कर्म करना श्रेष्ठ है। (गीता अध्याय 3 श्लोक 8)

पेश है गीता अध्याय 3 श्लोक 8 की फोटोकॉपी :-

नियतम्, कुरु, कर्म, त्वम्, कर्म, ज्यायः, हि, अकर्मणः,
शरीरयात्रा, अपि, च, ते, न, प्रसिद्ध्येत्, अकर्मणः ॥ ८ ॥

इसलिये—

त्वम्	= तू	**ज्यायः**	= श्रेष्ठ है
नियतम्	= शास्त्रविहित	**च**	= तथा
कर्म	= कर्तव्यकर्म	**अकर्मणः**	= कर्म न करनेसे
कुरु	= कर;	**ते**	= तेरा
हि	= क्योंकि	**शरीरयात्रा**	= शरीर-निर्वाह
अकर्मणः	= कर्म न करनेकी अपेक्षा	**अपि**	= भी
		न	= नहीं
कर्म	= कर्म करना	**प्रसिद्ध्येत्**	= सिद्ध होगा।

❖ जो साधक शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण करते हैं अर्थात् शास्त्रानुकूल भक्ति कर्मों के अतिरिक्त दूसरे कर्मों में लगा हुआ मनुष्य समुदाय कर्मों के बन्धन में बंधकर जन्म-मरण के चक्र में सदा रहता है। इसलिए हे कुन्तीपुत्र अर्जुन! शास्त्रविरुद्ध भक्ति कर्म जो कर रहा है, उससे आसक्ति रहित होकर शास्त्रानुकूल भक्ति कर्म कर। (गीता अध्याय 3 श्लोक 9)

पेश है गीता अध्याय 3 श्लोक 9 की फोटोकॉपी :-

यज्ञार्थात्, कर्मणः, अन्यत्र, लोकः, अयम्, कर्मबन्धनः,
तदर्थम्, कर्म, कौन्तेय, मुक्तसङ्गः, समाचर ॥ ९ ॥

यज्ञार्थात्	= यज्ञके निमित्त किये जानेवाले		(इसलिये)
		कौन्तेय	= हे अर्जुन! (तू)
कर्मणः	= कर्मोंसे अतिरिक्त	**मुक्तसङ्गः**	= आसक्तिसे रहित होकर
अन्यत्र	= दूसरे कर्मोंमें (लगा हुआ ही)	**तदर्थम्**	= उस यज्ञके निमित्त (ही भलीभाँति)
अयम्	= यह		
लोकः	= मनुष्य-समुदाय	**कर्म**	= कर्तव्यकर्म
कर्मबन्धनः	= कर्मोंसे बँधता है।	**समाचर**	= कर।

❖ संसार की रचना करके प्रजापति (कुल के मालिक) ने सर्व प्रथम मनुष्यों की रचना करके साथ-साथ यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों की जानकारी का ज्ञान देते हुए इनसे कहा था कि तुम लोग इस तरह बताए शास्त्रानुकूल कर्मों द्वारा वद्धि को प्राप्त होओ। इस प्रकार शास्त्रानुकूल की गई भक्ति तुम लोगों को इच्छित भोग प्राप्त कराने वाली हो। (गीता अध्याय 3 श्लोक 10)

पेश है गीता अध्याय 3 श्लोक 10 की फोटोकॉपी :-

सहयज्ञाः, प्रजाः, सृष्ट्वा, पुरा, उवाच, प्रजापतिः,
अनेन, प्रसविष्यध्वम्, एषः, वः, अस्तु, इष्टकामधुक् ॥ १० ॥

प्रजापतिः	= प्रजापति ब्रह्माने	**प्रसविष्यध्वम्**	= वृद्धिको प्राप्त होओ (और)
पुरा	= कल्पके आदिमें		
सहयज्ञाः	= यज्ञसहित	**एषः**	= यह यज्ञ
प्रजाः	= प्रजाओंको	**वः**	= तुमलोगोंको
सृष्ट्वा	= रचकर (उनसे)		
उवाच	= कहा (कि)	**इष्टकामधुक्**	= इच्छित भोग प्रदान करनेवाला
(यूयम्)	= तुमलोग		
अनेन	= इस यज्ञके द्वारा	**अस्तु**	= हो।

❖ इस प्रकार शास्त्रानुकूल भक्ति द्वारा अर्थात् संसार रुपी वक्ष की जड़ों (मूल अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म) की सिंचाई अर्थात् पूजा करके देवताओं अर्थात् संसार रुपी वक्ष की तीनों गुण रुपी शाखाओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिवजी) को उन्नत करो। वे देवता (संसार वक्ष की शाखा तीनों देवता) आपको कर्मानुसार फल देकर उन्नत करें। इस प्रकार एक-दूसरे से उन्नत करके परम कल्याण अर्थात् पूर्ण मोक्ष को प्राप्त हो जाओगे। (गीता अध्याय 3 श्लोक 11)

पेश है गीता अध्याय 3 श्लोक 11 की फोटोकॉपी :-

देवान्, भावयत, अनेन, ते, देवाः, भावयन्तु, वः,
परस्परम्, भावयन्तः, श्रेयः, परम्, अवाप्स्यथ ॥ ११ ॥

तथा तुमलोग—

अनेन	= इस यज्ञके द्वारा	**(एवम्)**	= इस प्रकार (निःस्वार्थभावसे)
देवान्	= देवताओंको		
भावयत	= उन्नत करो (और)	**परस्परम्**	= एक-दूसरेको
ते	= वे	**भावयन्तः**	= उन्नत करते हुए
देवाः	= देवता	**(यूयम्)**	= तुमलोग
वः	= तुमलोगोंको	**परम्**	= परम
		श्रेयः	= कल्याणको
भावयन्तु	= उन्नत करें।	**अवाप्स्यथ**	= प्राप्त हो जाओगे।

❖ शास्त्रविधि अनुसार किए गए भक्ति कर्मों अर्थात् यज्ञों द्वारा बढ़ाए हुए देवता अर्थात् संसार रुपी वक्ष की जड़ अर्थात् मूल मालिक (परम अक्षर ब्रह्म) को इष्ट रुप में प्रतिष्ठित करके भक्ति कर्म

से बढ़ी हुई शाखाएं (तीनों देवता) तुम लोगों को बिना माँगे ही कर्मानुसार इच्छित भोग निश्चय ही देते रहेंगे। जैसे आम के पौधे की जड़ की सिंचाई करने से पेड़ बनकर शाखाएं उन्नत हो गई। फिर उन शाखाओं को अपने आप फल लगेंगे। झड़-झड़कर गिरेंगे, व्यक्ति को जो कर्मानुसार धन प्राप्त होता है, वह उपरोक्त विधि से होता है। यदि कोई व्यक्ति उन देवताओं (शाखाओं) द्वारा दिए धन में से पुनः दान-पुण्य नहीं करता अर्थात् जो पुनः शास्त्रानुकूल साधना नहीं करता, केवल अपना ही पेट भरता है, स्वयं ही भोगता रहता है। वह तो परमात्मा का चोर ही है। (गीता अध्याय 3 श्लोक 12)

पेश है गीता अध्याय 3 श्लोक 12 की फोटोकॉपी :-

इष्टान्, भोगान्, हि, वः, देवाः, दास्यन्ते, यज्ञभाविताः,
तैः, दत्तान्, अप्रदाय, एभ्यः, यः, भुङ्क्ते, स्तेनः, एव, सः ॥ १२ ॥

यज्ञभाविताः	= यज्ञके द्वारा बढ़ाये हुए	**तैः**	= उन देवताओंके द्वारा
देवाः	= देवता	**दत्तान्**	= दिये हुए भोगोंको
वः	= तुमलोगोंको (बिना माँगे ही)	**यः**	= जो पुरुष
		एभ्यः	= इनको
इष्टान्	= इच्छित	**अप्रदाय**	= बिना दिये (स्वयम्)
भोगान्	= भोग		
हि	= निश्चय ही	**भुङ्क्ते**	= भोगता है,
		सः	= वह
दास्यन्ते	= देते रहेंगे। (इस प्रकार)	**स्तेनः**	= चोर
		एव	= ही है।

❖ शास्त्रानुकूल भक्ति की विधि में सर्वप्रथम परमात्मा को भोग लगाया जाता है। भण्डारा करना होता है। पहले परम अक्षर ब्रह्म को इष्ट रुप में पूजकर भोग लगाकर शेष भोजन को भक्तों में बाँटा जाता है। उस बचे हुए अन्न को सत्संग में उपस्थित अच्छी आत्माएं ही खाती हैं क्योंकि पुण्यात्माएं ही परमात्मा के लिए समय निकालकर धार्मिक अनुष्ठानों में शामिल होते हैं। इसलिए कहा है कि उस यज्ञ से बचे हुए अन्न को खाने वाले सन्तजन सब पापों से मुक्त हो जाते हैं। जो पापी लोग होते हैं, जो तत्वदर्शी सन्त के सत्संग में नहीं जाते, उनको ज्ञान नहीं होता। वे पापात्मा अपना शरीर पोषण करने के लिए ही भोजन पकाते हैं, वे तो पाप को ही खाते हैं क्योंकि भोजन खाने से पहले हम भक्त-सन्त सब परम अक्षर ब्रह्म को भोग लगाते हैं। जिस से सारा भोजन पवित्र प्रसाद बन जाता है, जो ऐसा नहीं करते, वे परमात्मा के चोर हैं। भगवान को भोग न लगा हुआ भोजन पाप का भोजन होता है। इसलिए कहा है जो धर्म-कर्म शास्त्रानुकूल नहीं करते, वे पाप के भागी होते हैं। (गीता अध्याय 3 श्लोक 13)

पेश है गीता अध्याय 3 श्लोक 13 की फोटोकॉपी :-

यज्ञशिष्टाशिनः, सन्तः, मुच्यन्ते, सर्वकिल्बिषैः,
भुञ्जते, ते, तु, अघम्, पापाः, ये, पचन्ति, आत्मकारणात्॥ १३॥

यज्ञशिष्टाशिनः	= यज्ञसे बचे हुए अन्नको खानेवाले	**आत्मकारणात्**	= अपना शरीर पोषण करनेके लिये ही
सन्तः	= श्रेष्ठ पुरुष	**पचन्ति**	= (अन्न) पकाते हैं,
सर्वकिल्बिषैः	= सब पापोंसे	**ते**	= वे
मुच्यन्ते	= मुक्त हो जाते हैं (और)	**तु**	= तो
ये	= जो	**अघम्**	= पापको (ही)
पापाः	= पापीलोग	**भुंजते**	= खाते हैं।

❖ सम्पूर्ण प्राणी अन्न से उत्पन्न होते हैं। अन्न वर्षा से होता है। वर्षा यज्ञ अर्थात् शास्त्रानुकूल धार्मिक अनुष्ठान से होती है। यज्ञ अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान शास्त्रानुकूल कर्मों से होते हैं। (गीता अध्याय 3 श्लोक 14)

❖ कर्म तो ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष से उत्पन्न हुए हैं क्योंकि जहाँ सर्व प्राणी सनातन परम धाम में रहते थे। वहाँ पर बिना कर्म किए सर्व सुख व पदार्थ उपलब्ध थे। यहाँ के सर्व प्राणी अपनी गलती से क्षर पुरुष के साथ आ गए। अब सबको कर्म का फल ही प्राप्त होता है। कर्म करके ही निर्वाह होता है। इसलिए कहा है कि कर्म को ब्रह्म (क्षर पुरुष) से उत्पन्न जान और ब्रह्म को अविनाशी परमात्मा से उत्पन्न जान।

पेश है गीता अध्याय 3 श्लोक 14-15 की फोटोकॉपी :-

अन्नात्, भवन्ति, भूतानि, पर्जन्यात्, अन्नसम्भवः,
यज्ञात्, भवति, पर्जन्यः, यज्ञः, कर्मसमुद्भवः॥ १४॥
कर्म, ब्रह्मोद्भवम्, विद्धि, ब्रह्म, अक्षरसमुद्भवम्,
तस्मात्, सर्वगतम्, ब्रह्म, नित्यम्, यज्ञे, प्रतिष्ठितम्॥ १५॥

क्योंकि—

भूतानि	= सम्पूर्ण प्राणी	**ब्रह्मोद्भवम्**	= वेदसे उत्पन्न (और)
अन्नात्	= अन्नसे	**ब्रह्म**	= वेदको
भवन्ति	= उत्पन्न होते हैं,	**अक्षरसमुद्भवम्**	= अविनाशी परमात्मासे उत्पन्न हुआ
अन्नसम्भवः	= अन्नकी उत्पत्ति	**विद्धि**	= जान।
पर्जन्यात्	= वृष्टिसे (होती है)	**तस्मात्**	= इससे (सिद्ध होता है कि)
पर्जन्यः	= वृष्टि	**सर्वगतम्**	= सर्वव्यापी
यज्ञात्	= यज्ञसे	**ब्रह्म**	= परम अक्षर परमात्मा
भवति	= होती है (और)	**नित्यम्**	= सदा ही
यज्ञः	= यज्ञ	**यज्ञे**	= यज्ञमें
कर्मसमुद्भवः	= विहित कर्मोंसे उत्पन्न होनेवाला है।	**प्रतिष्ठितम्**	= प्रतिष्ठित है।
कर्म	= कर्मसमुदायको (तू)		

यही प्रमाण अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक 1 मंत्र 3 में भी है ''ब्रह्म ब्रह्मणः उज्जभार'' यानि (ब्रह्मणः) सच्चिदानंद घन ब्रह्म = परम अक्षर पुरूष ने (ब्रह्म) ब्रह्म को (उज्जभार) उत्पन्न किया। (अधिक जानकारी के लिए पढ़ें सष्टि रचना इसी पुस्तक के पष्ठ नं. 389 पर।)

पेश है अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 3 की फोटोकॉपी :-

प्र यो जज्ञे विद्वानंस्य बन्धुर्विश्वां देवानां जनिमा विवक्ति ।

ब्रह्म ब्रह्मंण उज्जंभार मध्यान्नीचैरुच्चैः स्वधा अभि प्र तंस्थौ ॥३॥

भाषार्थः—(**यः विद्वान्**) जो विद्वान् परमेश्वर (**अस्य**) इस [जगत्] का (**बन्धुः**, बन्धन वा नियम करने वाला, अथवा, बन्धु हितकारी (**प्र**) अच्छे प्रकार (**जज्ञे**) प्रकट हुआ था, और जो (**देवानाम्**) भूमि, सूर्य आदि दिव्य पदार्थों वा महात्माओं के (**विश्वा = विश्वानि**) सब (**जनिमा**) जन्मों को (**विवक्ति**) बतलाता है। उसने (**ब्रह्मणः**) ब्रह्म [अपने परब्रह्म स्वरूप] के (**मध्यात्**) मध्य से (**ब्रह्म**) वेद को (**उज्जहार**, उभारा था, वही (**नीचैः**) नीचे और (**उच्चैः**) ऊंचे (**स्वधाः**, अनेक अमृतों वा अन्नों को (**अभि = अभिलक्ष्य**) सन्मुख करके (**प्र**) उत्तमता से (**तस्थौ**) स्थित हुआ था ॥३॥

यह फोटोकॉपी अथर्ववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 मंत्र 3 की है। इसमें स्पष्ट किया है कि (ब्रह्मणः) सचिदानंद घन ब्रह्म (परम अक्षर ब्रह्म) ने ब्रह्म को उत्पन्न किया। यही प्रमाण गीता अध्याय 3 श्लोक 15 में है। इस फोटोकॉपी में अनुवाद गलत किया है। ''ब्रह्म'' का अर्थ वेद किया है। ब्रह्म को ब्रह्म ही लिखा जाए। उज्जभार का अर्थ उत्पन्न करना (प्रकट करना) है। वेद के अनुवादक ने अड़ंगा कर रखा है देवानाम का। इस मंत्र का यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 3 :-

प्र यो जज्ञे विद्वानस्य बन्धुर्विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति।

ब्रह्म ब्रह्मण उज्जभार मध्यान्नीचैरुच्चैः स्वधा अभि प्र तस्थौ।।3।।

प्र—यः—जज्ञे—विद्वानस्य—बन्धुः—विश्वा—देवानाम्—जनिमा—विवक्ति—ब्रह्मः—ब्रह्मणः—उज्जभार—मध्यात्—निचैः—उच्चैः—स्वधा—अभिः—प्रतस्थौ

अनुवाद :— (प्र) सर्व प्रथम (देवानाम्) देवताओं व ब्रह्माण्डों की (जज्ञे) उत्पति के ज्ञान को (विद्वानस्य) जिज्ञासु भक्त का (यः) जो (बन्धुः) वास्तविक साथी अर्थात् पूर्ण परमात्मा ही अपने निज सेवक को (जनिमा) अपने द्वारा सजन किए हुए को (विवक्ति) स्वयं ही ठीक—ठीक विस्तार पूर्वक बताता है कि (ब्रह्मणः) पूर्ण परमात्मा ने (मध्यात्) अपने मध्य से अर्थात् शब्द शक्ति से (ब्रह्मः) ब्रह्म—क्षर पुरूष अर्थात् काल को (उज्जभार) उत्पन्न करके (विश्वा) सारे संसार को अर्थात् सर्व लोकों को (उच्चैः) ऊपर सत्यलोक आदि (निचैः) नीचे परब्रह्म व ब्रह्म के सर्व ब्रह्माण्ड (स्वधा) अपनी धारण करने वाली (अभिः) आकर्षण शक्ति से (प्र तस्थौ) दोनों को अच्छी प्रकार स्थित किया।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा अपने द्वारा रची सष्टि का ज्ञान तथा सर्व आत्माओं की उत्पत्ति का ज्ञान अपने निजी दास को स्वयं ही सही बताता है कि पूर्ण परमात्मा ने अपने मध्य अर्थात् अपने शरीर

से अपनी शब्द शक्ति के द्वारा ब्रह्म (क्षर पुरुष/काल) की उत्पत्ति की तथा सर्व ब्रह्माण्डों को ऊपर सतलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक आदि तथा नीचे परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्माण्डों को अपनी धारण करने वाली आकर्षण शक्ति से ठहराया हुआ है।

जैसे पूर्ण परमात्मा कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने अपने निजी सेवक अर्थात् सखा श्री धर्मदास जी, आदरणीय गरीबदास जी आदि को अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया। उपरोक्त वेद मंत्र भी यही समर्थन कर रहा है।

नोट : गीता अध्याय 3 के इस श्लोक नं. 14 में ''अक्षर'' शब्द का अर्थ अविनाशी परमात्मा ठीक है। परन्तु जहाँ क्षर पुरुष, अक्षर पुरुष तथा परम अक्षर पुरुष का वर्णन है, वहाँ अक्षर पुरुष व क्षर पुरुष दोनों नाशवान कहे हैं। वहाँ पर अक्षर का अर्थ वही ठीक है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में वर्णन है, यहाँ 'अक्षर' का अर्थ अविनाशी परमात्मा है क्योंकि सृष्टि रचना से स्पष्ट होता है कि ब्रह्म की उत्पत्ति सत्यपुरुष (अविनाशी परमात्मा) ने की थी। इससे सिद्ध हुआ कि (सर्वगतम् ब्रह्म) अर्थात् जिस परमात्मा की पहुँच सर्व ब्रह्माण्डों में है, जो सर्व का मालिक है, वह परमात्मा सदा ही यज्ञों अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों में प्रतिष्ठित है। भावार्थ है कि परम अक्षर ब्रह्म को इष्टदेव रुप में प्रतिष्ठित करके धार्मिक अनुष्ठान अर्थात् यज्ञ करने से शास्त्रविधि अनुसार कर्म करने से साधक को भक्ति लाभ मिलता है, जिससे मोक्ष प्राप्त होता है। देखें उल्टा रोपा गया संसार रुपी पौधे का चित्र इसी पुस्तक के पृष्ठ 261 पर।

देखें यह चित्र पृष्ठ 261 पर, इसमें पौधे की शाखाओं को गढ़्ढ़े में जमीन में लगाकर दिखाया गया है कि जो तीनों देवों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव) में से किसी की भी पूजा करता है, वह शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण कर रहा है जो गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में अनुचित तथा व्यर्थ बताया है। जिसने सर्वगतम् ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की पूजा नहीं की, उसको इष्ट रुप में नहीं पूजा, जिस कारण से उस साधक की साधना व्यर्थ है। शाखाओं को सींचने से पौधा नष्ट हो जाता है। अन्य देवताओं की पूजा करना गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15, 20-23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 23-24 में मना किया हुआ है।

''देखें यह चित्र'' इसी पुस्तक के पृष्ठ 261 पर सीधा लगाया गया पौधा जो शास्त्रविधि अनुसार साधना है, यही मोक्षदायक है। यही प्रमाण गीता ग्रन्थ में है।

इसलिए हे धर्मदास! श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिवजी को नहीं छोड़ना है। इनकी पूजा इष्ट रुप में करते हो, वह छोड़नी है। तभी भक्त का पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

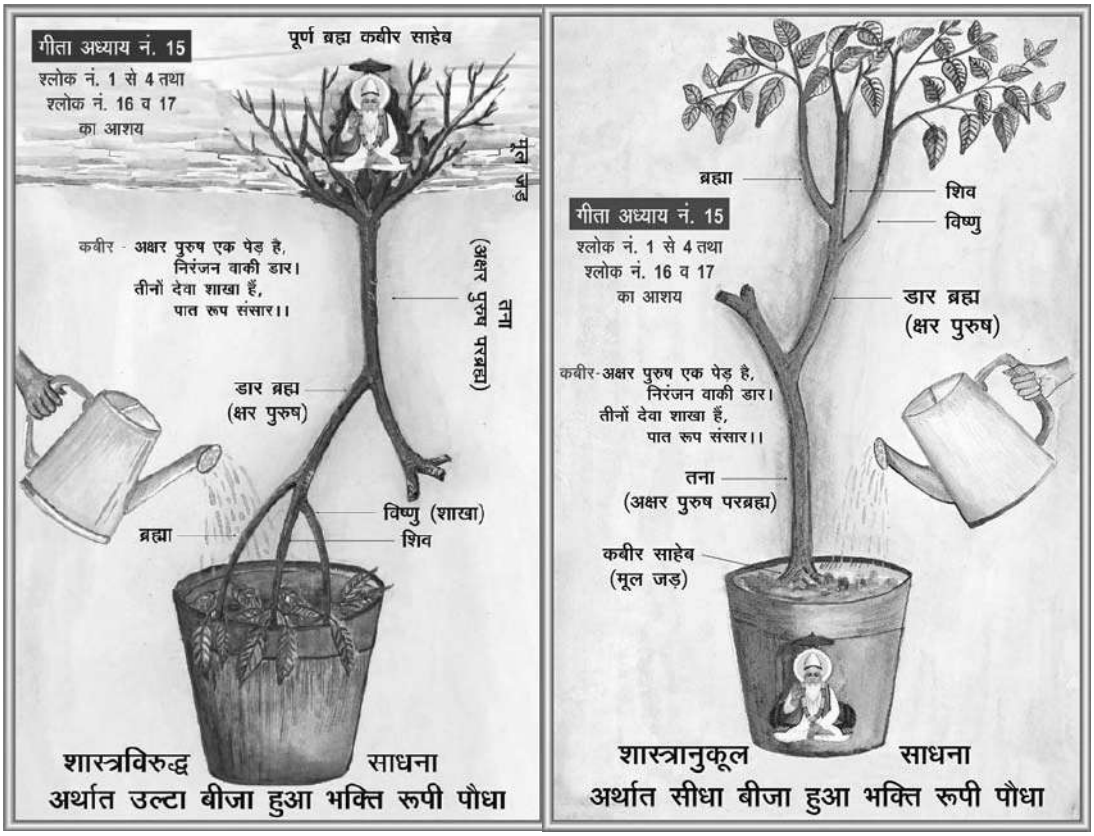

प्रश्न 43 :- (धर्मदास जी का): हे जिन्दा! आप जी ने तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिवजी) की भक्ति करने वालों की दशा तो श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15, 20 से 23 तथा अध्याय 9 श्लोक 23-24 में प्रत्यक्ष प्रमाणित कर दिया कि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) की भक्ति करने वाले राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझ (गीता ज्ञान दाता ब्रह्म) को भी नहीं भजते। अन्य देवताओं की भक्ति पूजा करने वालों का सुख समय (स्वर्ग समय) क्षणिक होता है। स्वर्ग की प्राप्ति करके शीघ्र ही पथ्वी पर जन्म धारण करते हैं। हे महात्मा जी! कपया कोई संसार में हुए बर्ताव से ऐसा प्रकरण सुनाइए जिससे आप जी की बताई बातों की सत्यता का प्रमाण मिले। तीनों देवताओं के पुजारी ऐसा बर्ताव करते हैं।

उत्तर :- (जिन्दा जगदीश का) :-

पहले पढ़ें गीता अध्याय 7 श्लोक 12-15 तथा 20-23 का यथार्थ अनुवाद :-

अध्याय 7 का श्लोक 12

ये चैव सात्त्विका भावा राजसास्तामसाश्च ये।
मत्त एवेति तान्विद्धि न त्वहं तेषु ते मयि।१२।

ये, च, एव, सात्त्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,

मत्तः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि।।12।।

अनुवाद : (च) और (एव) भी (ये) जो (सात्त्विकाः) सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति (भावाः) भाव हैं और (ये) जो (राजसाः) रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति (च) तथा (तामसाः) तमोगुण शिव से संहार हैं (तान्) उन सबको तू (मत्तः,एव) मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं (इति) ऐसा (विद्धि) जान (तु) परंतु वास्तव में (तेषु) उनमें (अहम्) मैं और (ते) वे (मयि) मुझमें (न) नहीं हैं।(12)

केवल हिन्दी : और भी जो सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति भाव हैं और जो रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति तथा तमोगुण शिव से संहार हैं उन सबको तू मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं ऐसा जान (तु) परंतु वास्तव में उनमें मैं और वे मुझमें नहीं हैं। (12)

अध्याय 7 का श्लोक 13

त्रिभिर्गुणमयैर्भावैरेभिः सर्वमिदं जगत्।

मोहितं नाभिजानाति मामेभ्यः परमव्ययम्। १३।

त्रिभिः, गुणमयैः, भावैः, एभिः, सर्वम्, इदम्, जगत्,

मोहितम्, न अभिजानाति, माम्, एभ्यः, परम्, अव्ययम्।।13।।

अनुवाद : (एभिः) इन (गुणमयैः) गुणों के कार्यरूप सात्विक श्री विष्णु जी के प्रभाव से, राजस श्री ब्रह्मा जी के प्रभाव से और तामस श्री शिवजी के प्रभाव से (त्रिभिः) तीनों प्रकार के (भावैः) भावों से (इदम्) यह (सर्वम्) सारा (जगत्) संसार - प्राणी समुदाय (माम्) मुझ काल के ही जाल में (मोहितम्) मोहित हो रहा है अर्थात् फंसा है (एभ्यः) इसलिए (परम् अव्ययम्) पूर्ण अविनाशी को (न) नहीं (अभिजानाति) जानता।(13)

केवल हिन्दी : इन गुणों के कार्य रूप सात्विक श्री विष्णु जी के प्रभाव से, राजस श्री ब्रह्मा जी के प्रभाव से और तामस श्री शिवजी के प्रभाव से तीनों प्रकार के भावों से यह सारा संसार - प्राणी समुदाय मुझ काल के ही जाल में मोहित हो रहा है अर्थात् फँसा है इसलिए पूर्ण अविनाशी को नहीं जानता।(13)

{परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी की महिमा सन्त गरीबदास जी ने कही है तथा काल का जाल समझाया है :- गरीब, ब्रह्मा विष्णु महेश, माया और धर्मराया(काल) कहिए। इन पाँचों मिल प्रपंच बनाया वाणी हमरी लहिए।।}

अध्याय 7 का श्लोक 14

दैवी ह्येषा गुणमयी मम माया दुरत्यया।

मामेव ये प्रपद्यन्ते मायामेतां तरन्ति ते। १४।

दैवी, हि, एषा, गुणमयी, मम, माया, दुरत्यया, माम्,

एव, ये, प्रपद्यन्ते, मायाम्, एताम्,तरन्ति,ते।।14।।

अनुवाद : (हि) क्योंकि (एषा) यह (दैवी) अलौकिक अर्थात् अति अद्भुत (गुणमयी) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव रूपी त्रिगुणमयी (मम) मेरी, (माया) माया (दुरत्यया) बड़ी दुस्तर है परंतु (ये) जो पुरुष केवल (माम्) मुझको (एव) ही निरन्तर (प्रपद्यन्ते) भजते हैं (ते) वे (एताम्) इस (मायाम्) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव रूपी माया का (तरन्ति) उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् तीनों गुणों रजगुण ब्रह्माजी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिवजी से ऊपर उठ कर काल ब्रह्म की साधना में लग जाते हैं।(14)

केवल हिन्दी : क्योंकि यह अलौकिक अर्थात् अति अद्भुत त्रिगुणमयी मेरी माया बड़ी दुस्तर है परंतु जो पुरुष केवल, मुझको ही निरन्तर भजते हैं वे इस माया का उल्लंघन कर जाते हैं अर्थात् तीनों गुणों रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी से ऊपर उठ जाते हैं।(14)

अध्याय 7 का श्लोक 15

न मां दुष्कृतिनो मूढाः प्रपद्यन्ते नराधमाः।
माययापहृतज्ञाना आसुरं भावमाश्रिताः।१५।

न, माम्, दुष्कृतिनः, मूढाः, प्रपद्यन्ते, नराधमाः,
मायया, अपहृतज्ञानाः, आसुरम्, भावम्, आश्रिताः।।15।।

अनुवाद : (मायया) रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी रूपी त्रिगुणमई माया की साधना से होने वाला क्षणिक लाभ पर ही आश्रित हैं अन्य साधना नहीं करना चाहते अर्थात् इसी त्रिगुणमई माया के द्वारा (अपहृतज्ञानाः) जिनका ज्ञान हरा जा चुका है जो मेरी अर्थात् ब्रह्म साधना भी नहीं करते, इन्हीं तीनों देवताओं तक सीमित रहते हैं ऐसे (आसुरम् भावम्) आसुर स्वभाव को (आश्रिताः) धारण किये हुए (नराधमाः) मनुष्यों में नीच (दुष्कृतिनः) दूषित कर्म करने वाले (मूढाः) मूर्ख (माम्) मुझको (न) नहीं (प्रपद्यन्ते) भजते अर्थात् वे तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) की साधना ही करते रहते हैं।(15)

केवल हिन्दी : माया के द्वारा अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु, तमगुण शिव जी रूपी त्रिगुणमई माया की साधना से होने वाला क्षणिक लाभ पर ही आश्रित हैं जिनका ज्ञान हरा जा चुका है जो मेरी अर्थात् ब्रह्म साधना भी नहीं करते, इन्हीं तीनों देवताओं तक सीमित रहते हैं। ऐसे आसुर स्वभाव को धारण किये हुए मनुष्यों में नीच, दूषित कर्म करने वाले मूर्ख मुझको भी नहीं भजते अर्थात् वे तीनों गुणों (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) की साधना ही करते रहते हैं।(15)

भावार्थ - गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 का भावार्थ है कि जो साधक स्वभाव वश तीनों गुणों रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी तक की साधना से मिलने वाले लाभ पर ही आश्रित रहकर इन्हीं तीनों प्रभुओं की भक्ति से जिन का ज्ञान हरा जा चुका है वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए मनुष्यों में नीच, शास्त्र विधि विरुद्ध भक्ति रूपी दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मुझ ब्रह्म को भी नहीं भजते गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 का भी इन्हीं से लगातार सम्बन्ध है।

अध्याय 7 का श्लोक 20

कामैस्तैस्तैर्हृतज्ञानाः प्रपद्यन्तेऽन्यदेवताः।
तं तं नियममास्थाय प्रकृत्या नियताः स्वया।२०।

कामैः, तैः, तैः, हृतज्ञानाः, प्रपद्यन्ते, अन्यदेवताः,
तम्, तम् नियमम्, आस्थाय, प्रकृत्या, नियताः, स्वया।।20।।

अनुवाद : (तैः,तैः) उन-उन (कामैः) भोगों की कामना द्वारा (हृतज्ञानाः) जिनका ज्ञान हरा जा चुका है वे लोग (स्वया) अपने (प्रकृत्या) स्वभाव से (नियताः) प्रेरित होकर (तम्-तम्) उस उस अज्ञान रूप अंधकार वाले (नियमम्) नियम के (आस्थाय) आश्रय से (अन्यदेवताः) अन्य देवताओं को (प्रपद्यन्ते) भजते हैं अर्थात् पूजते हैं।(20)

केवल हिन्दी : उन-उन भोगों की कामना द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है वे लोग अपने स्वभाव से प्रेरित होकर उस उस अज्ञान रूप अंधकार वाले नियम के आश्रय से अन्य देवताओं को

भजते हैं अर्थात् पूजते हैं। (20)

अध्याय 7 का श्लोक 21

यो यो यां यां तनुं भक्तः श्रद्धयार्चितुमिच्छति।
तस्य तस्याचलां श्रद्धां तामेव विदधाम्यहम्।२१।

यः, यः, याम्, याम्, तनुम्, भक्तः, श्रद्धया, अर्चितुम्, इच्छति,
तस्य, तस्य अचलाम्, श्रद्धाम्, ताम्, एव, विदधामि, अहम्।।21।।

अनुवाद : (यः, यः) जो-जो (भक्तः) भक्त (याम्, याम्) जिस-जिस (तनुम्) देवता के स्वरूप को (श्रद्धया) श्रद्धा से (अर्चितुम्) पूजना (इच्छति) चाहता है, (तस्य) उस (तस्य) उस भक्त की (श्रद्धाम्) श्रद्धा को (अहम्) मैं (ताम्, एव) उसी देवता के प्रति (अचलाम्) स्थिर (विदधामि) करता हूँ। (21)

केवल हिन्दी : जो-जो भक्त जिस-जिस देवता के स्वरूप को श्रद्धा से पूजना चाहता है, उस उस भक्त की श्रद्धा को मैं उसी देवता के प्रति स्थिर करता हूँ। (21)

अध्याय 7 का श्लोक 22

स तया श्रद्धया युक्तस्तस्याराधनमीहते।
लभते च ततः कामान्मयैव विहितान्हि तान्।२२।

सः, तया, श्रद्धया, युक्तः, तस्य, आराधनम्, ईहते,
लभते, च, ततः, कामान्, मया, एव, विहितान्, हि, तान्।।22।।

अनुवाद : (सः) वह भक्त (तया) उस (श्रद्धया) श्रद्धा से (युक्तः) युक्त होकर (तस्य) उस देवता का (आराधनम्) पूजन (ईहते) करता है (च) और (हि) क्योंकि (ततः) उस देवता से (मया) मेरे द्वारा (एव) ही (विहितान्) विधान किये हुए (तान्) उन (कामान्) इच्छित भोगों को (लभते) प्राप्त करता है।(22)

केवल हिन्दी अनुवाद : वह भक्त उस श्रद्धा से युक्त होकर उस देवता का पूजन करता है और क्योंकि उस देवता से मेरे द्वारा ही विधान किये हुए उन इच्छित भोगों को प्राप्त करता है। (22)

अध्याय 7 का श्लोक 23

अन्तवत्तु फलं तेषां तद्भवत्यल्पमेधसाम्।
देवान्देवयजो यान्ति मद्भक्ता यान्ति मामपि।२३।

अन्तवत्, तु, फलम्, तेषाम्, तत्, भवति, अल्पमेधसाम्,
देवान्, देवयजः, यान्ति, मद्भक्ताः, यान्ति, माम्, अपि।।23।।

अनुवाद : (तु) परंतु (तेषाम्) उन (अल्पमेधसाम्) अल्प बुद्धि वालों का (तत्) वह (फलम्) फल (अन्तवत्) नाशवान् (भवति) होता है (देवयजः) देवताओं को पूजने वाले (देवान्) देवताओं को (यान्ति) प्राप्त होते हैं और (मद्भक्ताः) मतावलम्बी (अपि) भी (माम्) मुझको (यान्ति) प्राप्त होते हैं।(23)

केवल हिन्दी : परंतु उन अल्प बुद्धिवालों का वह फल नाशवान होता है देवताओं को पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते है। और मतावलम्बी अर्थात् मेरे द्वारा बताए भक्ति मार्ग से भी मुझको प्राप्त होते हैं। (23)

भावार्थ :- गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 तक का भावार्थ है कि जो गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 में कहा है कि तीनों गुण(रजगुण श्री ब्रह्मा जी, सतगुण श्री विष्णु जी, तम् गुण श्री शिव जी) रूपी

माया द्वारा जिन का ज्ञान हरा जा चुका है अर्थात् जो तीनों देवताओं की साधना करते हैं वे राक्षस स्वभाव को धारण किए हुए, मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख, मुझ ब्रह्म की पूजा नहीं करते। इसी के सम्बन्ध में गीता अध्याय 7 श्लोक 20 से 23 में कहा है कि जिनका ज्ञान उपरोक्त तीनों देवताओं द्वारा हरा जा चुका है वे अपने स्वभाव वश उन्हीं देवताओं की पूजा मनोंकामना पूर्ण करने के उद्देश्य से करते हैं अर्थात् गीता ज्ञान दाता कह रहा है कि मेरे से अन्य देवताओं की पूजा करते है। जो भक्त जिस देवता की पूजा करता है उसकी श्रद्धा मैं ही, उस देवता के प्रतिदढ़ करता हूँ। उस देवताओं के पुजारी को भी मेरे द्वारा उस देवता को दी गई शक्ति से ही प्राप्त होता है। परन्तु उन मंद बुद्धि वालों अर्थात् मूर्खों का वह फल नाशवान है। देवताओं के पूजने वाले देवताओं को प्राप्त होते हैं। मेरे भक्त मुझे प्राप्त होते हैं। भावार्थ है कि जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव की पूजा या अन्य किसी देव की पूजा करते हैं उन देवताओं की पूजा का फल नाशवान है अर्थात् वह पूजा व्यर्थ है।

हिरण्यकशिपु के वध, रावण, भस्मासुर का वध तथा हरिद्वार में तीनों देवताओं के पुजारियों का युद्ध का वर्णन इसी पुस्तक के पष्ठ 189 पर है।

प्रश्न 44 (धर्मदास जी का) :- हे जिन्दा! मैंने एक महामण्डलेश्वर से प्रश्न किया था कि गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में भगवान कष्ण जी ने किस परमेश्वर की शरण में जाने के लिए कहा है? उस मण्डलेश्वर ने उत्तर दिया था कि भगवान श्री कष्ण से अतिरिक्त कोई भगवान ही नहीं। कष्ण जी ही स्वयं पूर्ण परमात्मा हैं, वे अपनी ही शरण आने के लिए कह रहे हैं, बस कहने का फेर है। हे जिन्दा जी! कप्या मुझ अज्ञानी का भ्रम निवारण करें।

उत्तर : (जिन्दा बाबा परमेश्वर का) :- हे धर्मदास!

ये माला डाल हुए हैं मुक्ता। षटदल उवा–बाई बकता।

आपके सर्व मण्डलेश्वर तथा शंकराचार्य अट-बट करके भोली जनता को भ्रमित कर रहे हैं। कह रहे हैं कि गीता ज्ञान दाता गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में अर्जुन को अपनी शरण में आने को कहता है, यह बिल्कुल गलत है क्योंकि गीता अध्याय 2 श्लोक 7 में अर्जुन ने कहा कि 'हे कष्ण! अब मेरी बुद्धि ठीक से काम नहीं कर रही है। मैं आप का शिष्य हूँ, आपकी शरण में हूँ। जो मेरे हित में हो, वह ज्ञान मुझे दीजिए। हे धर्मदास! अर्जुन तो पहले ही श्री कष्ण की शरण में था। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य 'परम अक्षर ब्रह्म' की शरण में जाने के लिए कहा है। गीता अध्याय 4 श्लोक 3 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि हे अर्जुन तू मेरा भक्त है। इसलिए यह गीता शास्त्र सुनाया है।

गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 12 में अपनी जानकारी दी है तथा अध्याय 13 में अपने से अन्य पूर्ण परमात्मा का अन्य प्रमाण गीता अध्याय 13 श्लोक 11 से 28, 30, 31, 34 में भी है।

❖ श्री मद्भगवत गीता अध्याय 13 श्लोक 1 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि शरीर को क्षेत्र कहते हैं जो इस क्षेत्र अर्थात् शरीर को जानता है, उसे "क्षेत्रज्ञ" कहा जाता है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 1)

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 1 की फोटोकॉपी :-

इदम्, शरीरम्, कौन्तेय, क्षेत्रम्, इति, अभिधीयते,
एतत्, यः, वेत्ति, तम्, प्राहुः, क्षेत्रज्ञः, इति, तद्विदः ॥ १ ॥

उसके पश्चात् श्रीकृष्णभगवान् बोले—

कौन्तेय	= हे अर्जुन!	**यः**	= जो
इदम्	= यह	**वेत्ति**	= जानता है,
शरीरम्	= शरीर	**तम्**	= उसको
क्षेत्रम्	= 'क्षेत्र'*	**क्षेत्रज्ञः**	= 'क्षेत्रज्ञ'
इति	= इस (नामसे)	**इति**	= इस (नामसे)
अभिधीयते	= कहा जाता है; (और)	**तद्विदः**	= उनके तत्त्वको जाननेवाले ज्ञानीजन
एतत्	= इसको	**प्राहुः**	= कहते हैं।

❖ <u>गीता अध्याय 13 श्लोक 2 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि :- मैं क्षेत्रज्ञ हूँ। क्षेत्र तथा क्षेत्रज्ञ दोनों को जानना ही तत्वज्ञान कहा जाता है, ऐसा मेरा मत है।</u> गीता अध्याय 13 श्लोक 10 में कहा है कि मेरी भक्ति अव्यभिचारिणी होनी चाहिए। जैसे अन्य देवताओं की साधना तो गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 तथा 20 से 23 में तथा अध्याय 9 श्लोक 23-24 में व्यर्थ कही हैं। केवल ब्रह्म की भक्ति करें। उसके विषय में यहाँ कहा है कि अन्य देवता में आसक्त न हों। भावार्थ है कि भक्ति व मुक्ति के लिए ज्ञान समझें, वक्ता बनने के लिए नहीं। इसके अतिरिक्त वक्ता बनने के लिए ज्ञान सुनना अज्ञान है। पतिव्रता स्त्री की तरह केवल मुझमें आस्था रखकर भक्ति करें। अन्य मनुष्यों में बैठकर बातें बनाने का स्वभाव नहीं होना चाहिए। एकान्त स्थान में रहकर भक्ति करें।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 2 की फोटोकॉपी :-

क्षेत्रज्ञम्, च, अपि, माम्, विद्धि, सर्वक्षेत्रेषु, भारत,
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः, ज्ञानम्, यत्, तत्, ज्ञानम्, मतम्, मम ॥ २ ॥

भारत	= हे अर्जुन! (तू)	**क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः**	= क्षेत्र-क्षेत्रज्ञका अर्थात् विकारसहित प्रकृतिका और पुरुषका
सर्वक्षेत्रेषु	= सब क्षेत्रोंमें		
क्षेत्रज्ञम्	= क्षेत्रज्ञ अर्थात् जीवात्मा	**यत्**	= जो
		ज्ञानम्	= तत्त्वसे जानना है[2]
अपि	= भी	**तत्**	= वह
माम्	= मुझे ही	**ज्ञानम्**	= ज्ञान है—
विद्धि	= जान[1]	**(इति)**	= ऐसा
		मम	= मेरा
च	= और	**मतम्**	= मत है।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 11 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि अध्यात्म ज्ञान में रूचि रखकर तत्व ज्ञान के लिए सद्ग्रन्थों को देखना तत्वज्ञान है, वह ज्ञान है तथा तत्वज्ञान की अपेक्षा कथा कहानियाँ सुनाना, सुनना, शास्त्रविधि विरूद्ध भक्ति करना यह सब अज्ञान है। तत्वज्ञान के लिए परमात्मा को जानना ही ज्ञान है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 11 की फोटोकॉपी :-

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वम्, तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्,
एतत्, ज्ञानम्, इति, प्रोक्तम्, अज्ञानम्, यत्, अतः, अन्यथा॥ ११॥

तथा—

अध्यात्मज्ञाननित्यत्वम्	= अध्यात्मज्ञानमें[2] नित्य स्थिति (और)	**ज्ञानम्**	= ज्ञान[3] है (और)
		यत्	= जो
		अतः	= इससे
तत्त्वज्ञानार्थदर्शनम्	= तत्त्वज्ञानके अर्थरूप परमात्माको ही देखना—	**अन्यथा**	= विपरीत है,
		अज्ञानम्	= वह अज्ञान है*,
		इति	= ऐसा
एतत्	= यह सब	**प्रोक्तम्**	= कहा है।

❖ <u>गीता अध्याय 13 श्लोक 12 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से "परम ब्रह्म" यानि श्रेष्ठ परमात्मा का ज्ञान कराया है।</u> कहा है कि जो परमात्मा (ज्ञेयम्) जानने योग्य है, जिसको जानकर (अमतम् अश्नुते) अमरत्व प्राप्त होता है अर्थात् पूर्ण मोक्ष का अमत जैसा आनन्द भोगने को मिलता है। उसको भली-भाँति कहूँगा। (तत्) वह दूसरा (ब्रह्म) परमात्मा यानि परम अक्षर ब्रह्म न तो सत् कहा जाता है और न असत् अर्थात् गीता ज्ञान दाता ने अध्याय 4 श्लोक 32, 34 में कहा है कि जो तत्वज्ञान है, उसमें परमात्मा का पूर्ण ज्ञान है, वह तत्वज्ञान परमात्मा अपने मुख कमल से स्वयं उच्चारण करके बोलता है। उस तत्वज्ञान को तत्वदर्शी सन्त जानते हैं, उनको दण्डवत् प्रणाम करने से, नम्रतापूर्वक प्रश्न करने से वे परमात्म तत्व को भली-भाँति जानने वाले तत्वदर्शी सन्त तुझे तत्वज्ञान का उपदेश करेंगे। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता को परमात्मा का पूर्ण ज्ञान नहीं है। इसलिए कह रहा है कि वह दूसरा परमात्मा जो गीता ज्ञान दाता से भिन्न है। वह न सत् है, न ही असत्। यहाँ पर पर+ब्रह्म का अर्थ सात संख ब्रह्माण्ड वाले परब्रह्म अर्थात् गीता अध्याय 15 श्लोक 16 वाले अक्षर पुरूष से नहीं है क्योंकि काल लोक (जो 21 ब्रह्माण्डों का क्षेत्र है) में अक्षर पुरूष जिसे परब्रह्म कहा है, की विशेष भूमिका नहीं है। यहाँ काल लोक में काल तथा दयाल की भूमिका है। इसलिए यहाँ (पर माने दूसरा और ब्रह्म माने परमात्मा) ब्रह्म से अन्य परमात्मा (पूर्ण ब्रह्म) का वर्णन है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 12 की फोटोकॉपी :-

ज्ञेयम्, यत्, तत्, प्रवक्ष्यामि, यत्, ज्ञात्वा, अमृतम्, अश्नुते,
अनादिमत्, परम्, ब्रह्म, न, सत्, तत्, न, असत्, उच्यते॥ १२॥

और हे अर्जुन!—

यत्	= जो	**तत्**	= वह
ज्ञेयम्	= जाननेयोग्य है (तथा)	**अनादिमत्**	= अनादिवाला
		परम्	= परम
यत्	= जिसको	**ब्रह्म**	= ब्रह्म
ज्ञात्वा	= जानकर (मनुष्य)	**न**	= न
अमृतम्	= परमानन्दको	**सत्**	= सत् (ही)
अश्नुते	= प्राप्त होता है,		
तत्	= उसको	**उच्यते**	= कहा जाता है,
प्रवक्ष्यामि	= भलीभाँति कहूँगा।	**न**	= न
		असत्	= असत् (ही)।

भावार्थ :- गीता अध्याय 13 श्लोक 12 में गीता ज्ञान दाता कह रहा है कि जो मेरे से दूसरा ब्रह्म अर्थात् प्रभु है वह अनादि वाला है। अनादि का अर्थ है जिसका कभी आदि अर्थात् शुरूवात न हो, कभी जन्म न हुआ हो। गीता ज्ञान दाता क्षर पुरूष है, इसे "ब्रह्म" तथा काल व काल ब्रह्म भी कहा जाता है। इसने गीता अध्याय 2 श्लोक 12, गीता अध्याय 4 श्लोक 5, 9, गीता अध्याय 10 श्लोक 2 में स्वयं स्वीकारा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं, तू नहीं जानता, मैं जानता हूँ। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञानदाता अनादि वाला "ब्रह्म" अर्थात् प्रभु नहीं है। इससे यह सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञानदाता ने अध्याय 13 के श्लोक 12 में अपने से अन्य अविनाशी परमात्मा की महिमा कही है। (अध्याय 13 श्लोक 12)

❖ गीता ज्ञान दाता ब्रह्म है, यह एक हजार (संहस्र) हाथ-पैर वाला है। इसका संहस्र कमल है अर्थात् हजार पँखुड़ियों वाला कमल है। गीता अध्याय 11 श्लोक 46 में अर्जुन ने कहा है कि हे संहस्राबाहु! (हजार हाथों वाले) आप चतुर्भुज रूप में आइए। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता केवल हजार भुजाओं वाला है। इसलिए गीता अध्याय 13 श्लोक 13 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य सब और हाथ-पैर वाले, सब और नेत्र सिर और मुख वाले और सब और कान वाले परमात्मा की महिमा कही है। कहा है कि वह परमात्मा संसार में सबको व्याप्त करके अर्थात् अपनी शक्ति से सब रोके हुए स्वयं सत्यलोक (शाश्वत स्थानम् तिष्ठति) में बैठा है। स्पष्ट हुआ कि गीता ज्ञान दाता से अन्य समर्थ परमात्मा है, वही सब संसार का संचालन, पालन करता है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 13)

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 13 की फोटोकॉपी :-

सर्वत:पाणिपादम्, तत्, सर्वतोऽक्षिशिरोमुखम्,
सर्वत:श्रुतिमत्, लोके, सर्वम्, आवृत्य, तिष्ठति ॥ १३ ॥

परंतु—

तत्	= वह	सर्वत:श्रुतिमत्	= सब ओर कानवाला है।
सर्वत:पाणिपादम्	= सब ओर हाथ-पैरवाला,	(यत:)	= क्योंकि (वह)
		लोके	= संसारमें
सर्वतोऽक्षि-शिरोमुखम्	= सब ओर नेत्र, सिर और मुखवाला (तथा)	सर्वम्	= सबको
		आवृत्य	= व्याप्त करके
		तिष्ठति	= स्थित है*।

❖ गीता के अध्याय 13 श्लोक 14 श्लोक में भी स्पष्ट है कि गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमात्मा का ज्ञान कराया है। कहा है :- सम्पूर्ण इन्द्रियों के विषयों को जानने वाला अर्थात्ा अन्तर्यामी है। सब इन्द्रियों से रहित है अर्थात् परमात्मा की इन्द्रियाँ हम मानव तथा अन्य प्राणियों जैसी विकारग्रस्त नहीं है। वह परमात्मा आसक्ति रहित है। {वह इस काल लोक (इक्कीस ब्रह्माण्डों) की किसी वस्तु-पदार्थ में आसक्ति नहीं रखता क्योंकि उस परमेश्वर का सत्यलोक इस काल के क्षेत्र से असख्यों गुणा उत्तम है। इसलिए वह परमात्मा आसक्ति रहित कहा है।} वही सबका धारण-पोषण करने वाला है। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी है। कहा है कि ''पुरूषोत्तम तो श्लोक 16 में बताए क्षर पुरुष तथा अक्षर पुरुष से अन्य ही है जो परमात्मा कहा जाता है। जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सब का धारण-पोषण करता है। वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है।'' वह परमात्मा निर्गुण है, परंतु सगुण होकर ही अपना महत्व दिखाता है। उदाहरण के लिए :- जैसे आम का पेड़ आम के बीज (गुठली) में निर्गुण अवस्था में होता है। उस बीज को जब बीजा जाता है, तब वह पौधा फिर पेड़ रूप में सगुण होकर अपना महत्व प्रकट करता है। परन्तु परमात्मा सत्यलोक में सगुण रूप में बैठा है। परमात्मा ने अपने वचन शक्ति से सर्व सष्टि रचकर विधान बनाकर छोड़ दिया। उस परमात्मा के विधान अनुसार सर्व प्राणी तथा नक्षत्र बनते-बिगड़ते रहते हैं, जीव कर्मानुसार जन्मते-मरते रहते हैं। परमात्मा को कोई टैंशन नहीं, परन्तु जब परमात्मा पथ्वी पर प्रकट होता है, उस समय सर्व गुणों को भोगता है। जैसे आम के वक्ष को तो निर्गुण से सर्गुण होने में बहुत समय लगता है। परन्तु परमात्मा के लिए समय सीमा नहीं है। वे तो क्षण में निर्गुण, अगले क्षण में सर्गुण हो सकते हैं। जैसे क्षण में सत्यलोक चले जाते हैं तो हमारे लिए निर्गुण हो गए। हम उनके गुणों का लाभ प्राप्त नहीं कर सकते। क्षण में पथ्वी पर प्रकट हो जाते हैं तो वे सगुण हो गए। हमारे को आशीर्वाद देकर अपने गुणों का लाभ देते हैं। इस प्रकार निर्गुण-सगुण कहा है। इससे भी सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता से अन्य कोई सबका धारण-पोषण करने वाला परमात्मा है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 14 की फोटोकॉपी :-

सर्वेन्द्रियगुणाभासम्, सर्वेन्द्रियविवर्जितम्,
असक्तम्, सर्वभृत्, च, एव, निर्गुणम्, गुणभोक्तृ, च॥ १४॥

और वह—

सर्वेन्द्रियगुणाभासम्	= सम्पूर्ण इन्द्रियोंके विषयोंको जाननेवाला है, (परंतु वास्तवमें)	**असक्तम्**	= आसक्तिरहित (होनेपर)
		एव	= भी
		सर्वभृत्	= सबका धारण-पोषण करनेवाला
सर्वेन्द्रियविवर्जितम्	= सब इन्द्रियोंसे रहित है	**च**	= और
		निर्गुणम्	= निर्गुण होनेपर (भी)
च	= तथा	**गुणभोक्तृ**	= गुणोंको भोगनेवाला है।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 15-16 में भी यही प्रमाण है। गीता ज्ञानदाता ने कहा है कि जैसे सूर्य दूर स्थान पर स्थित होते हुए भी यहाँ पथ्वी पर अपना प्रभाव बनाए है। उसी प्रकार परमात्मा सत्यलोक में स्थित होकर भी सर्व ब्रह्माण्डों पर अपनी शक्ति का प्रभाव बनाए हुए है। सर्व चर-अचर भूतों (प्राणियों तथा तत्वों) के बाहर-भीतर है। इसी प्रकार सूक्ष्म होने से हम उसको चर्मदष्टि से देख नहीं पाते। इसलिए अविज्ञय अर्थात् हमारे ज्ञान से परे है तथा वही परमात्मा हमारे समीप में तथा दूर भी वही स्थित है। परमात्मा तो दूर सत्यलोक (शाश्वत स्थान) में है, उसकी शक्ति का प्रभाव प्रत्येक के साथ है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 15)

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 15 की फोटोकॉपी :-

बहिः, अन्तः, च, भूतानाम्, अचरम्, चरम्, एव, च,
सूक्ष्मत्वात्, तत्, अविज्ञेयम्, दूरस्थम्, च, अन्तिके, च, तत्॥ १५॥

तथा वह—

भूतानाम्	= चराचर सब भूतोंके	**सूक्ष्मत्वात्**	= सूक्ष्म होनेसे
बहिः, अन्तः	= बाहर-भीतर (परिपूर्ण है)	**अविज्ञेयम्**	= अविज्ञेय है[1]
		च	= तथा
च	= और	**अन्तिके**	= अति समीपमें[2]
चरम्, अचरम्	= चर-अचररूप	**च**	= और
एव	= भी (वही है;)	**दूरस्थम्**	= दूरमें भी स्थित[3]
च	= और		
तत्	= वह	**तत्**	= वही है।

❖ जैसे सूर्य दूर स्थित है, परन्तु पथ्वी के ऊपर प्रत्येक प्राणी को अपने साथ दिखाई देता है। जैसे एक स्थान पर कई घड़े जल के भरे रखे हैं तो सूर्य प्रत्येक में दिखाई देता है, टुकड़ों में नहीं दिखता। इसी प्रकार परमात्मा प्रत्येक प्राणी को देखता है तथा साधक को दिव्य दष्टि से दिखाई देता है। परमात्मा सूर्य के समान स्वप्रकाशित तथा ऐसे ही एक स्थान पर स्थित है। गीता अध्याय 8 श्लोक 3, 8-10 में भी यही प्रमाण है। वह परमात्मा जानने योग्य है। भावार्थ है कि गीता ज्ञान दाता

ने कहा है कि मेरे से अन्य परमात्मा का ज्ञान होना चाहिए, वह जानने योग्य है। वही परमात्मा अपने विधानानुसार सर्व का धारण-पोषण, उत्पत्ति तथा मृत्यु करता है। वास्तव में "ब्रह्मा" (सब का उत्पत्तिकर्ता) वही है। वास्तव में विष्णु (सबका धारण-पोषण करने वाला) वही है, वास्तव में शंकर (संहार करने वाला) वही है। अन्य ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर तो केवल एक ब्रह्माण्ड के कर्ता-धरता हैं। परन्तु वह परमात्मा तो सर्व ब्रह्माण्डों का ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर रूप में अकेला ही है। जैसे भारत वर्ष में केन्द्र का भी गृहमन्त्री होता है तथा राज्यों में भी गृहमन्त्री होते हैं। देश के प्रधानमंत्री जी अपने पास अन्य विभाग भी रख लेते हैं। उस समय प्रधानमंत्री जी गृहमंत्री आदि-आदि भी होते हैं और प्रधानमंत्री भी होते हैं।

इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य समर्थ परमात्मा की महिमा बताई है। गीता ज्ञान दाता से अन्य कोई पूर्ण परमात्मा है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 16)

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 16 की फोटोकॉपी :-

अविभक्तम्, च, भूतेषु, विभक्तम्, इव, च, स्थितम्,
भूतभर्तृ, च, तत्, ज्ञेयम्, ग्रसिष्णु, प्रभविष्णु, च ॥ १६ ॥

तथा वह परमात्मा—

अविभक्तम्	= विभागरहित एक रूपसे आकाशके सदृश परिपूर्ण होनेपर	**ज्ञेयम्**	= जाननेयोग्य परमात्मा
च	= भी	**भूतभर्तृ**	= विष्णुरूपसे भूतोंको धारण–पोषण करनेवाला
भूतेषु	= चराचर सम्पूर्ण भूतोंमें	**च**	= और
विभक्तम्, इव	= विभक्त–सा	**ग्रसिष्णु**	= रुद्ररूपसे संहार करनेवाला
स्थितम्	= स्थित[१] (प्रतीत होता है);	**च**	= तथा
च	= तथा	**प्रभविष्णु**	= ब्रह्मारूपसे सबको उत्पन्न करनेवाला है।
तत्	= वह		

गीता अध्याय 13 श्लोक 17 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमात्मा की महिमा कही है जो इस प्रकार है :-

❖ वह दूसरा परमात्मा (परम् ब्रह्म) यानि काल ब्रह्म से दूसरा परम अक्षर ब्रह्म सब ज्योतियों की भी ज्योति है अर्थात् सर्व प्रकाश स्रोत है, उसी अन्य समर्थ परमात्मा की शक्ति से सब प्रकाशमान हैं। और उस परमात्मा का प्रकाश सर्व से अधिक है। वह परमात्मा माया से अति परे कहा जाता है। वास्तव में निरंजन वही है। जो गीता ज्ञान दाता है, यह माया सहित "ज्योति निरंजन" कहा जाता है। वह परमात्मा ज्ञान का भण्डार है, वह जानने योग्य है, वह (ज्ञानगम्यम्) तत्व ज्ञान द्वारा प्राप्त होने योग्य है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 17 की फोटोकॉपी :-

ज्योतिषाम्, अपि, तत्, ज्योतिः, तमसः, परम्, उच्यते,
ज्ञानम्, ज्ञेयम्, ज्ञानगम्यम्, हृदि, सर्वस्य, विष्ठितम्॥ १७॥

और—

तत्	= वह परब्रह्म	**ज्ञेयम्**	= जाननेके योग्य (एवं)
ज्योतिषाम्	= ज्योतियोंका	**ज्ञानगम्यम्**	= तत्त्वज्ञानसे प्राप्त करनेयोग्य है (और)
अपि	= भी	**सर्वस्य**	= सबके
ज्योतिः	= ज्योति[2] (एवं)	**हृदि**	= हृदयमें
तमसः	= मायासे	**विष्ठितम्**	= विशेषरूपसे स्थित है।
परम्	= अत्यन्त परे		
उच्यते	= कहा जाता है। (वह परमात्मा)		
ज्ञानम्	= बोधस्वरूप,		

इस गीता अध्याय 13 श्लोक 17 में मूल पाठ में "ज्ञानम् ज्ञेयम् ज्ञान गम्यम्" लिखा है जिसका भावार्थ है कि (ज्ञानम्) जो ज्ञान परमात्मा स्वयं पथ्वी पर प्रकट होकर तत्वज्ञान अपने मुख कमल से बोलता है। इसलिए वह ज्ञान रूप है अर्थात् ज्ञान का भण्डार है। वह परमात्मा (ज्ञेयम् ज्ञानग्यम्) उसी तत्वज्ञान से जानने योग्य तथा उसी तत्वज्ञान से प्राप्त करने योग्य है। वह परमात्मा सर्व प्राणियों के हृदय में स्थित है। जैसे सूर्य दूर स्थान पर होते हुए भी प्रत्येक घड़े के जल में दिखाई देता है। वास्तव में वह उन घड़ों में नहीं हैं। परंतु घड़ों के ऊपर अपना प्रभाव रखता है, उष्णता देता है। सूक्ष्म वेद में कहा है कि :-

ब्रह्मा विष्णु शिव राई झूमकरा। नहीं सब बाजी के खम्ब सुनों राई झूमकरा।
वह सर्व ठाम सब ठौर है राई झूमकरा। सकल लोक भरपूर सुनो राई झूमकरा।।

यही प्रमाण गीता अध्याय 18 श्लोक 61 में भी है कहा है कि हे अर्जुन! शरीर रूप यन्त्र में आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को अन्तर्यामी परमेश्वर अपनी माया अर्थात् अपनी शक्ति से उनके कर्मानुसार भ्रमण कराता है अर्थात् संस्कारों के अनुसार अच्छी-बुरी योनियों में घूमाता है। वही सर्व शक्तिमान परमात्मा सर्व प्राणियों के हृदय में स्थित है अर्थात् विराजमान है। इसी प्रकार परमेश्वर की महिमा गीता अध्याय 13 श्लोक 17 में कही है। इससे सिद्ध हुआ कि गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य पूर्ण परमात्मा की महिमा कही है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 17)

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 18 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि इस प्रकार क्षेत्र अर्थात् शरीर, (ज्ञानम्) तत्व ज्ञान और ज्ञेयम् अर्थात् जानने योग्य परमात्मा की महिमा मैंने संक्षेप में कही है। मेरा भक्त पहले मुझे ही सर्वेस्वा जानकर मुझ पर आश्रित था। वह इस (विज्ञाय) तत्वज्ञान के आधार से मेरे भाव अर्थात् मेरी शक्ति से परिचित होकर तथा उस समर्थ की शक्ति से परिचित होकर (उप पद्यते) उसके उपरान्त भक्ति करके उसी भाव को प्राप्त होता है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 18)

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 18 की फोटोकॉपी :-

इति, क्षेत्रम्, तथा, ज्ञानम्, ज्ञेयम्, च, उक्तम्, समासतः,
मद्भक्तः, एतत्, विज्ञाय, मद्भावाय, उपपद्यते ॥ १८ ॥

हे अर्जुन!—

इति	= इस प्रकार	**समासतः**	= संक्षेपसे
क्षेत्रम्	= क्षेत्र[१]	**उक्तम्**	= कहा गया।
तथा	= तथा	**मद्भक्तः**	= मेरा भक्त
ज्ञानम्	= ज्ञान[२]	**एतत्**	= इसको
च	= और	**विज्ञाय**	= तत्त्वसे जानकर
ज्ञेयम्	= जानने योग्य परमात्माका स्वरूप[३]	**मद्भावाय**	= मेरे स्वरूपको
		उपपद्यते	= प्राप्त होता है।

❖ इसी प्रकार गीता अध्याय 13 श्लोक 19 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य पुरूष अर्थात् परमात्मा की महिमा कही है। कहा है कि प्रकति और पुरूष दोनों ही अनादि हैं। यहाँ पर प्रकति से तात्पर्य सत्यलोक की प्रकति से है। जिसको पराशक्ति, परानन्दनी, महान प्रकति कहा जाता है। पुरूष का अर्थ पूर्ण परमात्मा है, ये दोनों अनादि हैं। इस प्रकति का भावार्थ दुर्गा स्त्री रूप की तरह स्त्री रूप प्रकति से नहीं है। जैसे सूर्य है तो उसकी प्रकति उष्णता भी साथ ही है। इसी प्रकार सत्यपुरूष तथा उसकी प्रकति अर्थात् शक्ति दोनों अनादि हैं।

इस प्रकार विकार तथा तीनों गुण जिस से उत्पन्न हुए हैं, वह अन्य प्रकति है, उससे उत्पन्न हुए हैं, ऐसा जान। गीता अध्याय 7 श्लोक 4-5 में दो प्रकति कही हैं, एक जड़ और दूसरी चेतन दुर्गा देवी। यहाँ पर दूसरी प्रकति दुर्गा कही है। (गीता अध्याय 13 श्लोक 19)

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 19 की फोटोकॉपी :-

प्रकृतिम्, पुरुषम्, च, एव, विद्धि, अनादी, उभौ, अपि,
विकारान्, च, गुणान्, च, एव, विद्धि, प्रकृतिसम्भवान् ॥ १९ ॥

और हे अर्जुन!—

प्रकृतिम्	= प्रकृति	**विकारान्**	= राग-द्वेषादि विकारोंको
च	= और		
पुरुषम्	= पुरुष—	**च**	= तथा
उभौ	= इन दोनोंको	**गुणान्**	= त्रिगुणात्मक सम्पूर्ण पदार्थोंको
एव	= ही (तू)	**अपि**	= भी
अनादी	= अनादि	**प्रकृतिसम्भवान्, एव**	= प्रकृतिसे ही उत्पन्न
विद्धि	= जान		
च	= और	**विद्धि**	= जान।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 20 में भी अन्य (पुरूषः) परमात्मा का वर्णन है। गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित गीता के इस श्लोक के अनुवाद में "पुरूषः" का अर्थ जीवात्मा किया जो गलत है। वास्तव में यहाँ पुरूष का अर्थ परमात्मा है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 20 की फोटोकॉपी :-

कार्यकरणकर्तृत्वे, हेतुः, प्रकृतिः, उच्यते,
पुरुषः, सुखदुःखानाम्, भोक्तृत्वे, हेतुः, उच्यते॥ २०॥

क्योंकि—

कार्यकरणकर्तृत्वे	= कार्य और करणको* उत्पन्न करनेमें	पुरुषः	= जीवात्मा
		सुखदुःखानाम्	= सुख-दुःखोंके
		भोक्तृत्वे	= भोक्तापनमें अर्थात् भोगनेमें
हेतुः	= हेतु		
प्रकृतिः	= प्रकृति	हेतुः	= हेतु
उच्यते	= कही जाती है (और)	उच्यते	= कहा जाता है।

पढ़ें यथार्थ अनुवाद गीता अध्याय 13 श्लोक 20 का :-
अध्याय 13 का श्लोक 20

कार्यकरणकर्तृत्वे हेतुः प्रकृतिरुच्यते।
पुरुषः सुखदुःखानां भोक्तृत्वे हेतुरुच्यते। २०।

कार्यकरणकर्तत्वे, हेतुः, प्रकृतिः, उच्यते।
पुरुषः सुखदुःखानाम्, भोक्तृत्वे, हेतुः, उच्यते।।20।।

अनुवाद : (कार्यकरणकर्तत्वे) कार्य और करण को उत्पन्न करने में (हेतुः) हेतु (प्रकृतिः) प्रकृति (उच्यते) कही जाती है और (पुरुषः) सतपुरुष (सुखदुःखानाम्) सुख-दुःखों के (भोक्तृत्वे) जीवात्मा को भोग भोगवाने के कारण भोगने में (हेतुः) हेतु (उच्यते) कहा जाता है। गीता अध्याय 18 श्लोक 61 में कहा है कि परमेश्वर सर्व प्राणियों को यन्त्र की तरह कर्मानुसार भ्रमण कराता हुआ सर्व प्राणियों के हृदय में स्थित है। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि पूर्ण परमात्मा तो गीता ज्ञान दाता से अन्य है। वही अविनाशी परमात्मा तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है।(20)

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 21 में भी अन्य (पुरुषः) पूर्ण परमात्मा का वर्णन है। इसके अनुवाद में गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित में "पुरूषः" का अर्थ पुरुष ही किया है, यह ठीक है। पुरूषः का अर्थ परमात्मा होता है। प्रकरणवश पुरुषः का अर्थ मनुष्य भी किया जाता है क्योंकि परमात्मा ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुरूप बनाया है।

इसलिए कहा जाता है कि :-

नर नारायण रूप है, तू ना समझ देहि।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 21 की फोटोकॉपी :-

पुरुषः, प्रकृतिस्थः, हि, भुङ्क्ते, प्रकृतिजान्, गुणान्,
कारणम्, गुणसङ्गः, अस्य, सदसद्योनिजन्मसु ॥ २१ ॥

परंतु—

प्रकृतिस्थः	= प्रकृतिमें[1] स्थित	**गुणसङ्गः**	= गुणोंका संग (ही)
हि	= ही	**अस्य**	= इस जीवात्माके
पुरुषः	= पुरुष		
प्रकृतिजान्	= प्रकृतिसे उत्पन्न	**सदसद्योनिजन्मसु**	= अच्छी-बुरी योनियोंमें जन्म लेनेका
गुणान्	= त्रिगुणात्मक पदार्थोंको		
भुङ्क्ते	= भोगता है (और इन)	**कारणम्**	= कारण है[2]।

''चौरासी लाख प्रकार के जीवों से मानव देह उत्तम है''

गीता अध्याय 13 श्लोक 22 में भी गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमात्मा का प्रत्यक्ष प्रमाण बताया है। गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित गीता में इस श्लोक का अर्थ बिल्कुल गलत किया है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 22 की फोटोकॉपी :-

उपद्रष्टा, अनुमन्ता, च, भर्ता, भोक्ता, महेश्वरः,
परमात्मा, इति, च, अपि, उक्तः, देहे, अस्मिन्, पुरुषः, परः ॥ २२ ॥

अस्मिन्	= इस	**भर्ता**	= सबका धारण-पोषण करनेवाला होनेसे भर्ता,
देहे(स्थितः) अपि	= देहमें स्थित		
पुरुषः	= यह आत्मा (वास्तवमें)	**भोक्ता**	= जीवरूपसे भोक्ता,
परः (एव)	= परमात्मा[3] ही है। (वही)	**महेश्वरः**	= ब्रह्मा आदिका भी स्वामी होनेसे महेश्वर
उपद्रष्टा	= साक्षी होनेसे उपद्रष्टा	**च**	= और
च	= और	**परमात्मा**	= शुद्ध सच्चिदानन्दघन होनेसे परमात्मा—
अनुमन्ता	= यथार्थ सम्मति देनेवाला होनेसे अनुमन्ता,	**इति**	= ऐसा
		उक्तः	= कहा गया है।

❖ यथार्थ अनुवाद :- जैसे पूर्व के श्लोकों में वर्णन आया है कि परमात्मा प्रत्येक जीव के साथ ऐसे रहता है, जैसे सूर्य प्रत्येक घड़े के जल में स्थित दिखाई देता है। उस जल को अपनी उष्णता दे रहा है। इसी प्रकार परमात्मा प्रत्येक जीव के हृदय कमल में ऐसे विद्यमान है जैसे सौर ऊर्जा सयन्त्र जहाँ भी लगा है तो वह सूर्य से उष्णता प्राप्त करके ऊर्जा संग्रह करता है। इसी प्रकार प्रत्येक जीव के साथ परमात्मा रहता है। इसलिए इस श्लोक (गीता अध्याय 13 श्लोक 22) में कहा है कि वह परमात्मा सब प्रभुओं का भी स्वामी होने से "महेश्वर", सब का धारण-पोषण करने से "भर्ता", सत्यलोक में बैठा प्रत्येक प्राणी की प्रत्येक गतिविधि को देखने वाला होने से "उपदष्टा", जीव परमात्मा की शक्ति से सर्व कार्य करता है। जीव परमात्मा का अंश है। (रामायण में भी कहा है,

ईश्वर अंश जीव अविनाशी) जिस कारण से जीव जो कुछ भी अपने किए कर्म का सुख, दुःख भोगता है तो अपने अंश के सुख-दुःख का परमात्मा को भी अहसास होता है। सूक्ष्म वेद में लिखा है :-

"कबीर कह मेरे जीव को दुःख ना दिजो कोय।
भक्त दुःखाऐ मैं दुःखी मेरा आपा भी दुःखी होय।।"

गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में भी कहा है कि जो शास्त्रविरूद्ध घोर तप को तपते हैं। वे परमात्मा को क्रश करने वाले (घोर कष्ट देने वाले) अज्ञानी घोर नरक में गिरते हैं यानि परमात्मा भी दुःख को महसूस करता है।

इसलिए "भोक्ता" कहलाता है। प्रत्येक प्राणी को गुप्त रूप से उचित राय देता है, जिस कारण से परमात्मा "अनुमन्ता" कहलाता है। (परमात्मा शब्द का संधि विच्छेद = परम+आत्मा = श्रेष्ठ आत्मा = परमात्मा।) यदि कोई दुःख का भोग भी देता है, सुख का भोग भी देता है। जैसे कर्म करेगा जीव वैसे अवश्य भोगेगा तो वह "परमात्मा" नहीं कहा जा सकता, वह श्रेष्ठ आत्मा नहीं होता। जैसे इस काल (ब्रह्म के) लोक में विधान है कि जैसा कर्म करोगे, वैसा फल आपको भगवान अवश्य देगा। तो यह प्रभु (स्वामी)तो है, परन्तु ''परम आत्मा'' नहीं है। इस मानव शरीर में (परः) दूसरा (पुरूषः) परमात्मा जो जीव के साथ अभिन्न रूप से रहता है, जैसे सूर्य प्रत्येक को अपनी ऊर्जा देता है, उसी प्रकार यह दूसरा परमात्मा उपरोक्त महिमा वाला है। जैसे सौर ऊर्जा से जो बल्ब जगता है, उसमें सूर्य होता है यानि सूर्य की ऊर्जा कार्य करती है। इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा की भूमिका समझें।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 23 में भी अन्य (पुरूषम्) परमात्मा बताया है। कहा है कि जो सन्त उपरोक्त प्रकार से (पुरूषम्) परमात्मा, प्रकति, तथा गुणों सहित जानता है, वह सन्त-साधक सब प्रकार से परमात्मा में लीन (वर्तमान) रहता हुआ पुनर्जन्म को प्राप्त नहीं होता अर्थात् उसका पूर्ण मोक्ष हो जाता है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 23 की फोटोकॉपी :-

यः, एवम्, वेत्ति, पुरुषम्, प्रकृतिम्, च, गुणैः, सह,
सर्वथा, वर्तमानः, अपि, न, सः, भूयः, अभिजायते ॥ २३ ॥

एवम्	= इस प्रकार	**सः**	= वह
पुरुषम्	= पुरुषको	**सर्वथा**	= सब प्रकारसे
च	= और	**वर्तमानः**	= कर्तव्य कर्म करता हुआ
गुणैः	= गुणोंके		
सह	= सहित	**अपि**	= भी
प्रकृतिम्	= प्रकृतिको	**भूयः**	= फिर
यः	= जो मनुष्य	**न**	= नहीं
वेत्ति	= तत्त्वसे जानता है*,	**अभिजायते**	= जन्मता।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 24 भी अन्य परमात्मा का वर्णन है जो गीता ज्ञान दाता से अन्य है। कहा है कि जो परमात्मा सूर्य के सदश जीवात्मा के साथ अभेद रूप से रहता है। उसको साधक ध्यान द्वारा दिव्य दष्टि से हृदय में देखते हैं जैसे बिजली को टैस्टर द्वारा देख लेते हैं, अन्य साधक ज्ञान सुनकर विश्वास करके परमात्मा का स्वरूप स्वीकार कर लेते हैं। अन्य भक्तजन (कर्मयोगेन) परमात्मा के कर्मों अर्थात् लीलाओं को देखकर परमात्मा का अस्तित्व जान लेते हैं। जैसे संसार में

लगभग 7 अरब जनसँख्या है। किसी का भी चेहरा (face) एक-दूसरे से नहीं मिलता। (कवि ने कहा है :- कई अरब बनाए बन्दे आँख, नाक, हाथ लगाए, एक-दूसरे के नाल कोई भी रलदे नहीं रलाए) इससे भी सिद्ध होता है कि कोई सर्वज्ञ शक्ति है, उसे "परमात्मा" कहा जाता है। कुछ भक्तजन परमात्मा के इस प्रकार के कार्य देखकर परमात्मा को मानते हैं।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 24 की फोटोकॉपी :-

ध्यानेन, आत्मनि, पश्यन्ति, केचित्, आत्मानम्, आत्मना,
अन्ये, साङ्ख्येन, योगेन, कर्मयोगेन, च, अपरे॥ २४॥

हे अर्जुन! उस परमपुरुष—

आत्मानम्	= परमात्माको	**अन्ये**	= अन्य कितने ही
केचित्	= कितने ही मनुष्य तो	**साङ्ख्येन योगेन**	= ज्ञानयोग[२]के द्वारा
आत्मना	= शुद्ध हुई सूक्ष्म बुद्धिसे	**च**	= और
		अपरे	= दूसरे (कितने ही)
ध्यानेन	= ध्यानके द्वारा[१]	**कर्मयोगेन**	= कर्मयोगके द्वारा[३]
आत्मनि	= हृदयमें	**(पश्यन्ति)**	= देखते हैं अर्थात् प्राप्त करते हैं।
पश्यन्ति	= देखते हैं,		

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 25 में कहा है कि जो शिक्षित नहीं और जो न ध्यान करते हैं, न ज्ञान को समझ पाते हैं और न वे परमात्मा की संरचना से परमात्मा को समझ पाते हैं। वे अन्य शिक्षित, विद्वान व्यक्तियों से परमात्मा की महिमा सुनकर मान लेते हैं कि जब यह शिक्षित और ज्ञानी व्यक्ति कह रहा है तो परमात्मा है। फिर वे उपासना करने लग जाते हैं। वे उसे सुनने के कारण परमात्मा के अस्तित्व को मानकर उपासना करने के कारण इस मतलोक (मत्यु संसार) से पार हो जाते हैं।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 25 की फोटोकॉपी :-

अन्ये, तु, एवम्, अजानन्तः, श्रुत्वा, अन्येभ्यः, उपासते,
ते, अपि, च, अतितरन्ति, एव, मृत्युम्, श्रुतिपरायणाः॥ २५॥

तु	= परंतु	**उपासते**	= उपासना करते हैं[४]
अन्ये	= इनसे दूसरे अर्थात् जो मन्द बुद्धिवाले पुरुष हैं, वे	**च**	= और
		ते	= वे
एवम्	= इस प्रकार	**श्रुतिपरायणाः**	= श्रवणपरायण पुरुष
अजानन्तः	= न जानते हुए	**अपि**	= भी
अन्येभ्यः	= दूसरोंसे अर्थात् तत्त्वके जाननेवाले पुरुषोंसे	**मृत्युम्**	= मृत्युरूप संसारसागरको
श्रुत्वा	= सुनकर ही (तदनुसार)	**अतितरन्ति, एव**	= निःसन्देह तर जाते हैं।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 26 में तो इतना ही कहा है कि सर्व प्राणी क्षेत्र अर्थात् दुर्गा के शरीर तथा क्षेत्रज्ञ अर्थात् गीता ज्ञान दाता क्षर ब्रह्म के संयोग से उत्पन्न होते हैं। ध्यान रहे गीता ज्ञान दाता ने गीता के इसी अध्याय 13 के श्लोक 1 में कहा है कि "क्षेत्र" तो शरीर को कहते हैं तथा जो शरीर

के विषय में जानता है, उसे "क्षेत्रज्ञ" कहते हैं। गीता अध्याय 13 श्लोक 2 में कहा है कि क्षेत्रज्ञ मुझे जान यानि गीता ज्ञान दाता क्षेत्रज्ञ हुआ। इस काल लोक (इक्कीस ब्रह्माण्डों के क्षेत्र में) में जितने प्राणी उत्पन्न होते हैं, वे दुर्गा जी तथा काल भगवान के संयोग से होते हैं अर्थात् नर-मादा से काल प्रेरणा से काल सष्टि उत्पन्न होती है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 26 की फोटोकॉपी :-

यावत्, सञ्जायते, किञ्चित्, सत्त्वम्, स्थावरजङ्गमम्,
क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्, तत्, विद्धि, भरतर्षभ॥ २६॥

भरतर्षभ	= हे अर्जुन!	**तत्**	= उन सबको (तू)
यावत्	= यावन्मात्र	**क्षेत्रक्षेत्रज्ञसंयोगात्**	= क्षेत्र और क्षेत्रज्ञके संयोगसे ही (उत्पन्न)
किञ्चित्	= जितने भी		
स्थावरजङ्गमम्	= स्थावरजंगम		
सत्त्वम्	= प्राणी		
सञ्जायते	= उत्पन्न होते हैं,	**विद्धि**	= जान।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 27 में अन्य परमेश्वर स्पष्ट है जो गीता ज्ञान दाता से अन्य है। (भिन्न है) :- जैसे पूर्व के श्लोकों में प्रमाण सहित बताया गया है कि परमेश्वर प्रत्येक प्राणी के शरीर में हृदय में ऐसे बैठा दिखाई देता है जैसे सूर्य जल से भरे घड़ों में दिखाई देता है। इसी प्रकार इस श्लोक 27 में कहा है कि परमेश्वर हृदय में बैठा है। जब प्राणी का शरीर नष्ट हो जाता है तो भी परमेश्वर नष्ट नहीं होता। जैसे कोई घड़ा फूट गया, उसका जल पथ्वी पर बिखर गया और पथ्वी में समा गया तो भी सूर्य तो यथावत् है। इसलिए परमेश्वर अविनाशी है जो सन्त परमात्मा को इस दष्टिकोण से देखता है, वह सही जानता है, वह तत्वज्ञानी सन्त है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 27 की फोटोकॉपी :-

समम्, सर्वेषु, भूतेषु, तिष्ठन्तम्, परमेश्वरम्,
विनश्यत्सु, अविनश्यन्तम्, यः, पश्यति, सः, पश्यति॥ २७॥

इस प्रकार जानकर—

यः	= जो पुरुष	**अविनश्यन्तम्**	= नाशरहित (और)
विनश्यत्सु	= नष्ट होते हुए	**समम्**	= समभावसे
सर्वेषु	= सब	**तिष्ठन्तम्**	= स्थित
भूतेषु	= चराचर भूतोंमें	**पश्यति**	= देखता है,
परमेश्वरम्	= परमेश्वरको	**सः**	= वही (यथार्थ)
		पश्यति	= देखता है।

इस श्लोक (गीता अध्याय 13 श्लोक 27) में परमेश्वर शब्द लिखा है। जिससे भी गीता ज्ञान दाता से अन्य परमात्मा का बोध होता है। आओ जानें :-

"परमेश्वर" का सन्दिछेद = परम+ईश्वर

व्याख्या :– "ईश" का अर्थ है स्वामी, प्रभु, मालिक। "वर" का अर्थ है श्रेष्ठ, पति

1. ईश् तो गीता ज्ञान दाता "क्षर पुरुष" अर्थात् क्षर ब्रह्म है जो केवल इक्कीस ब्रह्माण्डों का प्रभु है।

2. ईश्वर = ईश् अर्थात् क्षर पुरूष से श्रेष्ठ प्रभु। वह केवल 7 शंख ब्रह्माण्डों का प्रभु है। इसे अक्षर पुरूष तथा परब्रह्म भी कहा जाता है।

3. परमेश्वर = ईश्वर अर्थात् अक्षर पुरूष से परम अर्थात् श्रेष्ठ है, जो असँख्य ब्रह्माण्डों का प्रभु है, उसे परम अक्षर ब्रह्म भी कहा जाता है। (गीता अध्याय 8 श्लोक 3 में प्रमाण है) गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में तीन पुरूषों का वर्णन है। क्षर पुरुष - यह गीता ज्ञान दाता ईश् है तथा अक्षर पुरूष = यह ईश्वर है तथा गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि (उत्तम पुरूषः) पुरूषोत्तम अर्थात् वास्तव में सर्व श्रेष्ठ प्रभु तो ऊपर के श्लोक (गीता अध्याय 15 श्लोक 16) में कहे दोनों (क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष) से भिन्न है, उसी को वास्तव में "परमात्मा" कहा जाता है। वही तीनों लोकों (क्षर पुरूष के 21 ब्रह्माण्डों का क्षेत्र काल लोक कहा जाता है तथा अक्षर पुरूष के 7 शंख ब्रह्माण्डों के क्षेत्र को परब्रह्म का लोक कहा जाता है और ऊपर चार लोकों (सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अकह लोक) का क्षेत्र अमर लोक परमेश्वर का लोक कहा जाता है। इस प्रकार तीन लोकों का यहाँ पर वर्णन है। इन तीनों लोकों में प्रवेश करके सब का धारण-पोषण करता है। वह वास्तव में अविनाशी परमेश्वर है। गीता अध्याय 13 श्लोक 27 में "परमेश्वर" शब्द है जो गीता ज्ञान दाता से भिन्न सर्व शक्तिमान, सर्व का पालन कर्ता का बोधक है।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 28 में भी गीता ज्ञान दाता से अन्य प्रभु का प्रमाण है। इस श्लोक में "ईश्वर" शब्द परमेश्वर का बोधक है, जैसे ईश् का अर्थ स्वामी, वर का अर्थ श्रेष्ठ। वास्तव में सब का "ईश" स्वामी तो परम अक्षर ब्रह्म है। वही श्रेष्ठ ईश है, इसलिए "ईश्वर" शब्द प्रकरणवश पूर्ण परमात्मा का बोधक है। यदि अन्य "ईश" नकली स्वामी नहीं होते तो ईश्वर तथा परमेश्वर शब्दों की आवश्यकता नहीं होती। इसलिए इस श्लोक में "ईश्वर" शब्द सत्य पुरुष का बोध जानें।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 28 की फोटोकॉपी :-

समम्, पश्यन्, हि, सर्वत्र, समवस्थितम्, ईश्वरम्,
न, हिनस्ति, आत्मना, आत्मानम्, ततः, याति, पराम्, गतिम्॥ २८॥

हि	= { क्योंकि (जो पुरुष)	**आत्मना**	= अपने द्वारा
		आत्मानम्	= अपनेको
सर्वत्र	= सबमें	**न हिनस्ति**	= नष्ट नहीं करता[१],
समवस्थितम्	= समभावसे स्थित	**ततः**	= इससे (वह)
ईश्वरम्	= परमेश्वरको	**पराम्**	= परम
समम्	= समान	**गतिम्**	= गतिको
पश्यन्	= देखता हुआ	**याति**	= प्राप्त होता है।

गीता अध्याय 13 श्लोक 28 का भावार्थ है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जो साधक सब प्रकार से परमेश्वर को समभाव में देखता हुआ (आत्मानम्) अपनी आत्मा को (आत्मना) अपनी अज्ञान आत्मा द्वारा नष्ट नहीं करता अर्थात् वह परमात्मा को सही समझकर उसकी साधना करके (ततः) उससे (पराम् = परा) दूसरी (गतिम्) गति अर्थात् मोक्ष को (याति) प्राप्त होता है अर्थात् वह साधक गीता ज्ञान दाता वाली परमगति (जो गीता अध्याय 8 श्लोक 13 में कही है) से अन्य गति (जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में कही है, उसे) को प्राप्त होता है।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 30 में स्पष्ट है कि गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमात्मा की

महिमा बताई है। इस श्लोक में भी गीता अध्याय 18 श्लोक 66 वाला ''एक'' शब्द है जिसका अर्थ ''उस एक परमात्मा'' किया है। इसलिए गीता अध्याय 18 श्लोक 66 में ''एकम् शरणं व्रज'' कहा है, उसका अर्थ भी ''उस एक परमात्मा की शरण में जा'' सही अर्थ है। कहा है कि जो सन्त सर्व प्रणियों की स्थिति भिन्न-भिन्न होते हुए भी एक परमात्मा सर्वशक्तिमान के अन्तर्गत मानता है तो वह समझो ''सच्चिदानन्द घन ब्रह्म'' अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को प्राप्त हो गया है, वह सत्य भक्ति करके उस परमेश्वर को प्राप्त हो जाता है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 30 की फोटोकॉपी :-

यदा, भूतपृथग्भावम्, एकस्थम्, अनुपश्यति,
ततः, एव, च, विस्तारम्, ब्रह्म, सम्पद्यते तदा॥ ३०॥

और—

यदा	= जिस क्षण (यह पुरुष)	एव	= ही
भूतपृथग्भावम्	= भूतोंके पृथक्-पृथक् भावको	विस्तारम्	= सम्पूर्ण भूतोंका विस्तार
एकस्थम्	= एक परमात्मामें ही स्थित	अनुपश्यति	= देखता है,
च	= तथा	तदा	= उसी क्षण (वह)
ततः	= उस परमात्मासे	ब्रह्म	= सच्चिदानन्दघन ब्रह्मको
		सम्पद्यते	= प्राप्त हो जाता है।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 31 में भी गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य "परमात्मा" के विषय में कहा है। इस श्लोक में "परमात्मा" शब्द है जिसकी स्पष्ट परिभाषा गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में बताई है। कहा है कि जो उत्तम पुरूष अर्थात् सर्वश्रेष्ठ प्रभु है। वह तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण-पोषण करता है। वह वास्तव अविनाशी परमेश्वर है। उसी को "परमात्मा" कहा जाता है। वह क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष से अन्य है।

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 31 की फोटोकॉपी :-

अनादित्वात्, निर्गुणत्वात्, परमात्मा, अयम्, अव्ययः,
शरीरस्थः, अपि, कौन्तेय, न, करोति, न, लिप्यते॥ ३१॥

कौन्तेय	= हे अर्जुन!	शरीरस्थः	= शरीरमें स्थित होनेपर
अनादित्वात्	= अनादि होनेसे (और)	अपि	= भी (वास्तवमें)
निर्गुणत्वात्	= निर्गुण होनेसे	न	= न (तो)
अयम्	= यह	करोति	= कुछ करता है और
अव्ययः	= अविनाशी	न	= न
परमात्मा	= परमात्मा	लिप्यते	= लिप्त ही होता है।

इस श्लोक (गीता अध्याय 13 श्लोक 31) में भी यही स्पष्ट किया है कि वह परमात्मा अनादि होने से, निर्गुण होने से प्रत्येक प्राणी के शरीर में (सूर्य जैसे घड़े में) स्थित होने पर भी न तो कुछ

करता है क्योंकि सब कार्य परमात्मा की शक्ति करती है, (जैसे घड़े के जल में सूर्य दिखाई देता है उससे जल गर्म हो रहा है। वह सूर्य करता नहीं दिखाई देता, उसकी उष्णता कर रही है। सूर्य कुछ नहीं करता दिखता) और न परमात्मा उस शरीर में लिप्त होता है, जैसे सूर्य घड़े के जल में लिप्त नहीं होता।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 32 में भी यही प्रमाण है।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 33 में आत्मा और शरीर की स्थिति बताई है।

❖ गीता अध्याय 13 श्लोक 34 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य परमेश्वर की जानकारी दी है। कहा है कि इस प्रकार क्षेत्र (शरीर) तथा क्षेत्रज्ञ (गीता ज्ञान दाता) के भेद को तथा कर्म करते-करते भक्ति करके काल की प्रकृति अर्थात् काल जाल से मुक्त जो साधक ज्ञान नेत्रों द्वारा जानकर तत्वदर्शी सन्त की खोज करके सत्य शास्त्रानुकूल साधना करके तत्वज्ञान को समझकर उस परम् अर्थात् दूसरे परमब्रह्म परमात्मा को प्राप्त होते हैं।

<u>उपरोक्त विवरण से स्पष्ट हुआ कि गीता ज्ञान दाता से अन्य पूर्ण परमात्मा है जिसकी भक्ति की साधना करके साधक उस पूर्ण मोक्ष को प्राप्त हो जाता है जो गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में वर्णित है कि तत्वज्ञान की प्राप्ति के पश्चात् परमेश्वर के उस परमपद को खोजना चाहिए जहाँ जाने के पश्चात् साधक फिर लौटकर संसार में कभी नहीं आता।</u>

पेश है गीता अध्याय 13 श्लोक 34 की फोटोकॉपी :-

क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः, एवम्, अन्तरम्, ज्ञानचक्षुषा,
भूतप्रकृतिमोक्षम्, च, ये, विदुः, यान्ति, ते, परम्॥ ३४॥

एवम्	= इस प्रकार	**ये**	= जो पुरुष
क्षेत्रक्षेत्रज्ञयोः	= क्षेत्र और क्षेत्रज्ञके	**ज्ञानचक्षुषा**	= ज्ञान-नेत्रोंद्वारा
अन्तरम्	= भेदको*	**विदुः**	= तत्त्वसे जानते हैं,
च	= तथा	**ते**	= वे महात्माजन
भूतप्रकृतिमोक्षम्	= कार्यसहित प्रकृतिसे मुक्त होनेको	**परम्**	= परम ब्रह्म परमात्माको
		यान्ति	= प्राप्त होते हैं।

❖ <u>सारांश :- पूर्वोक्त प्रमाणों से तथा इस गीता अध्याय 13 के उपरोक्त प्रमाणों से स्पष्ट हुआ कि गीता ज्ञान दाता से अन्य परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण परमात्मा है। जिसकी शरण में जाने के लिए गीता ज्ञान दाता ने गीता अध्याय 2 श्लोक 17 में तथा गीता अध्याय 18 श्लोक 46, 61, 62, 66 में कहा है। वही पूर्ण मोक्षदायक है, वही पूजा करने योग्य है, वही सबका रचनहार है, वही सबका पालनहार, धारण करने वाला सर्व सुखदायक है। उसको "परमात्मा" कहा जाता है।</u>

पेश है गीता अध्याय 2 श्लोक 17 की फोटोकॉपी :-

अविनाशि, तु, तत्, विद्धि, येन्, सर्वम्, इदम्, ततम्,
विनाशम्, अव्ययस्य, अस्य, न, कश्चित्, कर्तुम्, अर्हति॥ १७॥

इस न्यायके अनुसार—

अविनाशि	= नाशरहित	**ततम्**	= व्याप्त है।
तु	= तो (तू)	**अस्य**	= इस
तत्	= उसको	**अव्ययस्य**	= अविनाशीका
विद्धि	= जान,	**विनाशम्**	= विनाश
येन	= जिससे	**कर्तुम्**	= करनेमें
इदम्	= यह		
सर्वम्	= सम्पूर्ण जगत् (दृश्यवर्ग)	**कश्चित्**	= कोई भी
		न, अर्हति	= समर्थ नहीं है।

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 46, 61-62 तथा 66 की फोटोकॉपियाँ :-

(गीता अध्याय 18 श्लोक 46 की फोटोकॉपी)

यतः, प्रवृत्तिः, भूतानाम्, येन्, सर्वम्, इदम्, ततम्,
स्वकर्मणा, तम्, अभ्यर्च्य, सिद्धिं, विन्दति, मानवः॥ ४६॥

यतः	= जिस परमेश्वरसे	**तम्**	= उस परमेश्वरकी
भूतानाम्	= सम्पूर्ण प्राणियोंकी	**स्वकर्मणा**	= अपने स्वाभाविक कर्मोंद्वारा
प्रवृत्तिः	= उत्पत्ति हुई है (और)		
येन	= जिससे	**अभ्यर्च्य**	= पूजा करके[२]
इदम्	= यह	**मानवः**	= मनुष्य
सर्वम्	= समस्त (जगत्)	**सिद्धिम्**	= परम सिद्धिको
ततम्	= व्याप्त है*,	**विन्दति**	= प्राप्त हो जाता है।

(गीता अध्याय 18 श्लोक 61 की फोटोकॉपी)

ईश्वरः, सर्वभूतानाम्, हृद्देशे, अर्जुन, तिष्ठति,
भ्रामयन्, सर्वभूतानि, यन्त्रारूढानि, मायया॥ ६१॥

क्योंकि—

अर्जुन	= हे अर्जुन!		(उनके कर्मोंके अनुसार)
यन्त्रारूढानि	= शरीररूप यन्त्रमें आरूढ़ हुए	**भ्रामयन्**	= भ्रमण कराता हुआ
सर्वभूतानि	= सम्पूर्ण प्राणियोंको	**सर्वभूतानाम्**	= सब प्राणियोंके
ईश्वरः	= अन्तर्यामी परमेश्वर	**हृद्देशे**	= हृदयमें
मायया	= अपनी मायासे	**तिष्ठति**	= स्थित है।

(गीता अध्याय 18 श्लोक 62 की फोटोकॉपी)

तम्, एव, शरणम्, गच्छ, सर्वभावेन, भारत,
तत्प्रसादात्, पराम्, शान्तिम्, स्थानम्, प्राप्स्यसि, शाश्वतम् ॥ ६२ ॥

इसलिये—

भारत	= हे भारत! (तू)	**तत्प्रसादात्**	= उस परमात्माकी कृपासे (ही तू)
सर्वभावेन	= सब प्रकारसे		
तम्	= उस परमेश्वरकी	**पराम्**	= परम
एव	= ही	**शान्तिम्**	= शान्तिको (तथा)
		शाश्वतम्	= सनातन
शरणम्	= शरणमें*	**स्थानम्**	= परम धामको
गच्छ	= जा।	**प्राप्स्यसि**	= प्राप्त होगा।

(गीता अध्याय 18 श्लोक 66 की फोटोकॉपी)

सर्वधर्मान्, परित्यज्य, माम्, एकम्, शरणम्, व्रज,
अहम्, त्वा, सर्वपापेभ्यः, मोक्षयिष्यामि, मा, शुचः ॥ ६६ ॥

इसलिये—

सर्वधर्मान्	= सम्पूर्ण धर्मोंको अर्थात् सम्पूर्ण कर्तव्यकर्मोंको (मुझमें)	**शरणम्**	= शरणमें[१]
		व्रज	= आ जा।
		अहम्	= मैं
परित्यज्य	= त्यागकर (तू केवल)	**त्वा**	= तुझे
एकम्	= एक	**सर्वपापेभ्यः**	= सम्पूर्ण पापोंसे
माम्	= मुझ सर्वशक्तिमान् सर्वाधार परमेश्वरकी ही	**मोक्षयिष्यामि**	= मुक्त कर दूँगा, (तू)
		मा, शुचः	= शोक मत कर।

पेश है गीता अध्याय 18 श्लोक 66 का यथार्थ अनुवाद :-

अन्य अनुवादकों ने इस श्लोक का सरलार्थ गलत किया है। ''व्रज'' शब्द का अर्थ 'जाना' है, उन्होंने 'आना' किया है।

पेश है यथार्थ अनुवाद गीता अध्याय 18 श्लोक 66 का :-

अध्याय 18 का श्लोक 66

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः। ६६।

सर्वधर्मान्, परित्यज्य, माम्, एकम्, शरणम्, व्रज,
अहम्, त्वा, सर्वपापेभ्यः, मोक्षयिष्यामि, मा, शुचः।।66।।

यथार्थ अनुवाद : गीता अध्याय 18 श्लोक 62 में जिस परमेश्वर की शरण में जाने को कहा है इस श्लोक 66 में भी उसी के विषय में कहा है कि मेरे स्तर की (सर्वधर्मान्) सम्पूर्ण धार्मिक पूजाओं को (माम्) मुझ में (परित्यज्य) त्यागकर तू केवल (एकम्) एक उस अद्वितीय अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म की

(शरणम्) शरण में (व्रज) जा। (अहम्) मैं (त्वा) तुझे (सर्वपापेभ्यः) सम्पूर्ण पापों से (मोक्षयिष्यामि) छुड़वा दूँगा तू (मा,शुचः) शोक मत कर।(66)

विशेष :- अन्य गीता अनुवाद कर्ताओं ने ''व्रज्'' शब्द का अर्थ आना किया है जो अनुचित है ''व्रज्'' शब्द का अर्थ जाना, चला जाना आदि होता है। गीता अध्याय 13 श्लोक 30 में भी ''एकम्'' का अर्थ इस प्रकार किया है ''जिस समय साधक प्राणियों के पथक-पथक भाव को (एकस्थम्) एक परमात्मा में स्थित तथा उस परमात्मा से ही सम्पूर्ण भूतों का विस्तार देखता है। उसी क्षण सच्चिदानंद घन ब्रह्म यानि परमेश्वर को प्राप्त हो जाता है'' यानि वह उस परमेश्वर को जानकर उसकी पूजा करके मोक्ष प्राप्त करता है।

भावार्थ :- गीता अध्याय 18 श्लोक 63 का भावार्थ है कि गीता ज्ञान दाता ब्रह्म कह रहा है कि हे अर्जुन! यह गीता वाला अति गोपनीय ज्ञान मैंने तुझे कह दिया। फिर अध्याय 18 श्लोक 64 में गीता ज्ञानदाता एक और सम्पूर्ण गोपनीयों से भी गोपनीय वचन कहता है कि वह परमेश्वर जिसके विषय में अध्याय 18 श्लोक 62 में कहा है वह परमेश्वर मेरा (गीता ज्ञान दाता का) ईष्ट देव अर्थात् पूज्य देव है यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 4 में भी कहा है कि मैं भी उस परमेश्वर की शरण हूँ। इससे सिद्ध है कि गीता ज्ञान दाता प्रभु से कोई अन्य सर्वश्रेष्ठ परमेश्वर है वही पूजा के योग्य है। यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 17 में भी है गीता ज्ञान दाता प्रभु कहता है कि अध्याय 15 श्लोक 16 में वर्णित क्षर पुरूष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरूष (परब्रह्म) से भी श्रेष्ठ परमेश्वर तो उपरोक्त दोनों से अन्य ही है वही वास्तव में परमात्मा कहलाता है। वह वास्तव में अविनाशी है। उसी की शरण में जाने के लिए कहा है।

प्रश्न 45 :- (धर्मदास जी का) :- गीता अध्याय 4 श्लोक 6 में गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं अजन्मा और अविनाशी रुप होते हुए भी समस्त प्राणियों का ईश्वर होते हुए भी अपनी योग माया से प्रकट होता हूँ। इस में श्री कष्ण जी अपने आप को समस्त प्राणियों का अविनाशी ईश्वर कह रहे हैं, अपने को अजन्मा भी कहा है।

उत्तर :- (जिन्दा परमेश्वर जी का) : हे धर्मदास जी! गीता का ज्ञान काल ब्रह्म ने श्री कष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके कहा है। श्री कष्ण जी की कोई भूमिका नहीं है। गीता ज्ञान देने वाला काल ब्रह्म है। गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि जितने प्राणी मेरे 21 ब्रह्माण्डों में मेरे अन्तर्गत हैं। मैं उनका श्रेष्ठ प्रभु (ईश्वर) हूँ। यही प्रमाण गीता अध्याय 15 श्लोक 18 में भी है कि गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मैं लोक वेद (सुनी-सुनाई बातें) के आधार से अपने 21 ब्रह्माण्डों वाले लोक में पुरुषोत्तम प्रसिद्ध हूँ क्योंकि मैं शरीरधारी प्राणियों से तथा अविनाशी जीवात्मा से भी श्रेष्ठ हूँ जो मेरे अन्तर्गत मेरे इक्कीश ब्रह्माण्डों में हैं। वास्तव में पुरुषोत्तम तो कोई अन्य ही है जिसका वर्णन गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में बताया गया है।

❖ गीता के अध्याय 4 श्लोक 6 में यह कहा है कि मैं (अजः) अजन्मा अर्थात् मैं तुम्हारी तरह जन्म नहीं लेता, मैं लीला से प्रकट होता हूँ। जैसे गीता अध्याय 10 में विराट रुप दिखाया था, फिर अध्याय 10 श्लोक 2 में स्पष्ट किया है कि मेरी उत्पत्ति होती है। गीता अध्याय 4 श्लोक 6 में कहा है कि (अव्ययात्मा) मेरी आत्मा अमर है। फिर कहा है कि (आत्ममायया) अपनी लीला से (सम्भवामि) उत्पन्न होता हूँ। यहाँ पर उत्पन्न होने की बात है क्योंकि यह काल ब्रह्म, अक्षर पुरुष के एक युग के उपरान्त मरता है। फिर उस समय एक ब्रह्माण्ड का विनाश हो जाता है (देखें प्रश्न 9 का उत्तर) फिर दूसरे ब्रह्माण्ड में सर्व जीवात्माएं चली जाती हैं। काल ब्रह्म की आत्मा भी चली जाती है। वहाँ

इसको पुनः युवा शरीर प्राप्त होता है। इसी प्रकार देवी दुर्गा की मृत्यु होती है। फिर काल ब्रह्म के साथ ही इसको भी युवा शरीर प्राप्त होता है। यह परम अक्षर ब्रह्म (सत्य पुरूष) का विधान है। तो फिर उस नए ब्रह्माण्ड में दोनों पति-पत्नी रुप में नए रजगुण युक्त ब्रह्मा, सतगुण युक्त विष्णु तथा तमगुण युक्त शिव को उत्पन्न करते हैं। फिर उस ब्रह्माण्ड में सृष्टि क्रम प्रारम्भ होता है। इस प्रकार इस काल ब्रह्म की मृत्यु तथा लीला से जन्म होता है। गीता अध्याय 4 श्लोक 9 में भी स्पष्ट है जिसमें गीता ज्ञान दाता ने कहा है कि मेरे जन्म तर्था कर्म अलौकिक हैं। वास्तव में यह नाशवान है। आत्मा सर्व प्राणियों की भी अमर है। हे धर्मदास! आपके महामण्डलेश्वरों आचार्यों तथा शंकराचार्यों को अध्यात्मिक ज्ञान बिल्कुल नहीं है। इसलिए अनमोल ग्रन्थों को ठीक से न समझकर लोकवेद (दन्तकथा) सुनाते हैं। आप देखें इस गीता अध्याय 4 श्लोक 5 में स्वयं कह रहा है कि हे अर्जुन! तेरे और मेरे बहुत जन्म हो चुके हैं। उन सबको मैं जानता हूँ, तू नहीं जानता। इसका अभिप्राय ऊपर स्पष्ट कर दिया है। सम्भवात् का अर्थ उत्पन्न होना है।

प्रमाण :- यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 में भी कहा है कि कोई तो परमात्मा को (सम्भवात्) जन्म लेने वाला राम व कृष्ण की तरह मानता है, कोई (असम्भवात्) उत्पन्न न होने वाला निराकार मानता है अर्थात् तत्वदर्शी सन्त जो सत्यज्ञान बताते हैं, उनसे सुनो। वे बताएंगे कि परमात्मा उत्पन्न होता है या नहीं। वास्तव में परमात्मा स्वयंभू है। वह कभी नहीं जन्मा है और न जन्मेगा। मृत्यु का तो प्रश्न ही नहीं। दूसरी ओर गीता ज्ञान दाता स्वयं कह रहा है कि मैं जन्मता और मरता हूँ, अविनाशी नहीं हूँ। अविनाशी तो ''परम अक्षर ब्रह्म'' है।

पेश है गीता अध्याय 15 श्लोक 18 की फोटोकॉपी :-

यस्मात्, क्षरम्, अतीतः, अहम्, अक्षरात्, अपि, च, उत्तमः,
अतः, अस्मि, लोके, वेदे, च, प्रथितः, पुरुषोत्तमः ॥ १८ ॥

यस्मात्	= क्योंकि	**उत्तमः**	= उत्तम हूँ,
अहम्	= मैं	**अतः**	= इसलिये
क्षरम्	= नाशवान् जड़वर्ग क्षेत्रसे (तो सर्वथा)	**लोके**	= लोकमें
		च	= और
अतीतः	= अतीत हूँ	**वेदे**	= वेदमें (भी)
च	= और		
अक्षरात्	= अविनाशी जीवात्मासे	**पुरुषोत्तमः**	= पुरुषोत्तम नामसे
		प्रथितः	= प्रसिद्ध
अपि	= भी	**अस्मि**	= हूँ।

पढ़ें गीता अध्याय 15 श्लोक 18 का यथार्थ अनुवाद :-

अध्याय 15 का श्लोक 18

यस्मात्क्षरमतीतोऽहमक्षरादपि चोत्तमः।
अतोऽस्मि लोके वेदे च प्रथितः पुरुषोत्तमः। १८।

यस्मात्, क्षरम्, अतीतः, अहम्, अक्षरात्, अपि, च, उत्तमः,
अतः, अस्मि, लोके, वेदे, च, प्रथितः, पुरुषोत्तमः।।18।।

अनुवाद : (यस्मात्) क्योंकि (अहम्) मैं मेरे काल लोक के इक्कीस ब्रह्मण्डों के क्षेत्र में मेरे आधीन (क्षरम्) नाशवान स्थूल शरीर में विराजमान प्राणियों से तो सर्वथा (अतीतः) श्रेष्ठ हूँ (च) और (अक्षरात्) अविनाशी जीवात्मा से (अपि) भी (उत्तमः) उत्तम हूँ (च) और (अतः) इसलिए (लोके वेदे) लोक वेद में अर्थात् कहे सुने ज्ञान के आधार से वेद में (पुरुषोत्तमः) श्रेष्ठ भगवान (प्रथितः) प्रसिद्ध (अस्मि) हूँ पवित्र गीता बोलने वाला ब्रह्म-क्षर पुरुष कह रहा है कि मैं तो लोक वेद में अर्थात् सुने-सुनाए ज्ञान के आधार पर केवल मेरे इक्कीस ब्रह्मण्ड़ों में ही श्रेष्ठ प्रभु प्रसिद्ध हूँ। वास्तव में पुरूषोत्तम यानि पूर्ण परमात्मा तो कोई और ही है। जिसका विवरण इसी अध्याय के श्लोक 17 में पूर्ण रूप से दिया है।(18)

कबीर परमात्मा ने उदाहरणार्थ कहा है :-

पीछे लागा जाऊं था लोक वेद के साथ, रस्ते में सतगुरू मिले दीपक दीन्हा हाथ।

भावार्थ है :-- कबीर प्रभु ने कहा है कि जब तक साधक को पूर्ण सन्त नहीं मिलता तब तक लोक वेद अर्थात् कहे सुने ज्ञान के आधार से साधना करता है उस आधार से कोई विष्णु जी को पूर्ण प्रभु परमात्मा कहता है कि क्षर पुरूष अर्थात् ब्रह्म को पूर्ण ब्रह्म कहता है। परन्तु तत्वज्ञान से पता चलता है कि पूर्ण परमात्मा तो कबीर जी है।

प्रश्न 50 :- (जिन्दा बाबा परमेश्वर जी का) : आप जी ने कहा है कि हम शुद्र को निकट भी नहीं बैठने देते, शुद्ध रहते हैं। इससे भक्ति में क्या हानि होती है?

उत्तर :- (धर्मदास जी का) :- शुद्र के छू लेने से भक्त अपवित्र हो जाता है, परमात्मा रुष्ट हो जाता है, आत्मग्लानि हो जाती है। मैं ऊँची जाति के वैश्य हूँ।

''कथनी और करनी में अंतर''

प्रश्न 46 (धर्मदास जी का) :- हे जिन्दा! यह तो सत्य ही है कि शुद्र से दूरी बनाए रखने से भक्त की पवित्रता बनी रहती है। क्या आप नहीं मानते?

उत्तर (बाबा जिन्दा का) :- यह शिक्षा किसने दी? धर्मदास जी ने कहा हमारे धर्मगुरु बताते हैं, आचार्य, शंकराचार्य तथा ब्राह्मण बताते हैं। परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास को बताया (उस समय तक धर्मदास जी को ज्ञान नहीं था कि आपसे वार्ता करने वाला ही कबीर जुलाहा है) कि कबीर जुलाहा एक बार स्वामी रामानन्द पंडित जी के साथ तोताद्रिक नामक स्थान पर सत्संग-भण्डारे में गया। वह स्वामी रामानन्द जी का शिष्य है। सत्संग में मुख्य पण्डित आचार्यों ने सत्संग में बताया कि भगवान राम ने शुद्र भीलनी के झूठे बेर खाए। भगवान तो समदशी थे। वे तो प्रेम से प्रसन्न होते हैं। भक्त को ऊँचे-नीचे का अन्तर नहीं देखना चाहिए, श्रद्धा देखी जाती है। लक्ष्मण ने सबरी को शुद्र जानकर ग्लानि करके बेर नहीं खाये, फैंक दिए, बाद में वे बेर संजीवन बूटी बने। रावण के साथ युद्ध में लक्ष्मण मुर्छित हो गया। तब हनुमान जी द्रोणागिरी पर्वत को उठाकर लाए जिस पर संजीवन बूटी उन झूठे बेरों से उगी थी। उस बूटी को खाने से लक्ष्मण सचेत हुआ, जीवन रक्षा हुई। शबरी की भगवान के प्रति ऐसी श्रद्धा थी।। किसी की श्रद्धा को ठेस नहीं पहुँचानी चाहिए। सत्संग के तुरन्त बाद लंगर (भोजन-भण्डारा) शुरु हुआ। पण्डितों ने पहले ही योजना बना रखी थी कि स्वामी रामानन्द ब्राह्मण के साथ शुद्र जुलाहा कबीर आया है। वह स्वामी रामानन्द का शिष्य है।

रामानन्द जी के साथ खाना खाएगा। हम ब्राह्मणों का अपमान होगा। इसलिए दो स्थानों पर लंगर शुरु कर दिया। जो पण्डितों के लिए भण्डार था। उसमें खाना खाने के लिए एक शर्त रखी कि जो पण्डितों वाले भण्डारे में खाना खाएगा, उसको वेदों के चार मन्त्र सुनाने होंगे। जो मन्त्र नहीं सुना पाएगा, वह सामान्य भण्डारे में भोजन खाएगा। उनको पता था कि कबीर जुलाहा काशी वाला तो अशिक्षित है। उसको वेद मन्त्र कहाँ से याद हो सकते हैं? सब पण्डित जी चार-चार वेद मन्त्र सुना-सुनाकर पण्डितों वाले भोजन-भण्डारे में प्रवेश कर रहे थे। पंक्ति लगी थी। उसी पंक्ति में कबीर जुलाहा (धाणक) भी खड़ा था। वेद मन्त्र सुनाने की कबीर जी की बारी आई। थोड़ी दूरी पर एक भैंसा (झोटा) घास चर रहा था। कबीर जी ने भैंसे को पुकारा। कहा कि हे भैंसे पंडित! कपया यहाँ आइएगा। भैंसा दौड़ा-दौड़ा आया। कबीर जी के पास आकर खड़ा हो गया। कबीर जी ने भैंसे की कमर पर हाथ रखा और कहा कि हे विद्वान भैंसे! वेद के चार मन्त्र सुना। भैंसे ने (1) यजुर्वेद अध्याय 5 का मन्त्र 32 सुनाया जिसका भावार्थ भी बताया कि जो परम शान्तिदायक (उसिग असि), जो पाप नाश कर सकता है (अंघारि), जो बन्धनों का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ है = बम्भारी, वह ''कविरसि'' कबीर है। स्वर्ज्योति = स्वयं प्रकाशित अर्थात् तेजोमय शरीर वाला ''ऋतधामा'' = सत्यलोक वाला अर्थात् वह सत्यलोक में निवास करता है। ''सम्राटसि'' = सब भगवानों का भी भगवान अर्थात् सर्व शक्तिमान सम्राट यानि महाराजा है। वह (कविर्देव) कबीर परमेश्वर है।

प्रमाण :- यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 32 :-

उशिगसि कविरङ्घारिरसि बम्भारिरवस्यूरसि दुवस्वाञ्छुन्ध्यूरसि मार्जालीयः। सम्राडसि कृशानुः परिषद्योऽसि पवमानो नभोऽसि प्रतक्वा मृष्टोऽसि हव्यसूदनऽऋतधामासि स्वर्ज्योतिः ॥३२॥

पदार्थः—हे जगदीश्वर! जिस कारण आप (**उशिक्**) कान्तिमान् (**असि**) हैं (**अंघारिः**) खोटे चलन वाले जीवों के शत्रु वा (**कविः**) क्रान्तप्रज्ञ (**असि**) हैं (**बम्भारिः**) बन्धन के शत्रु वा तारादि तन्तुओं के विस्तार करने वाले (**असि**) हैं (**दुवस्वान्**) प्रशंसनीय सेवायुक्त स्वयं (**शुन्ध्यूः**) शुद्ध (**असि**) हैं (**मार्जालीयः**) सब को शोधने वाले (**सम्राट्**) और अच्छे प्रकार प्रकाशमान (**असि**) हैं (**कृशानुः**) पदार्थों को अति सूक्ष्म (**पवमानः**) पवित्र और (**परिषद्यः**) सभा में कल्याण करने वाले (**असि**) हैं जैसे (**प्रतक्वा**) हर्षित और (**नभः**) दूसरे के पदार्थ हर लेने वालों को मारने वाले (**असि**) हैं (**हव्यसूदनः**) जैसे होम के द्रव्य को यथायोग्य व्यवहार में लाने वाले और (**मृष्टः**) सुख दुःख को सहन करने और कराने वाले (**असि**) हैं जैसे (**स्वर्ज्योतिः**) अन्तरिक्ष को प्रकाश करने वाले और (**ऋतधामा**) सत्यधाम युक्त (**असि**) हैं वैसे ही उक्त गुणों से प्रसिद्ध आप सब मनुष्यों को उपासना करने योग्य हैं, ऐसा हम लोग जानते हैं ॥३२॥

❖ विशेष :- इस यजुर्वेद के अध्याय 5 मंत्र 32 में बताया है कि जो परमेश्वर (उशिक् असि) परम शांतिदायक है, वह (अंघारिः) पाप का शत्रु यानि पाप काटने वाला (बम्भारिः) बंधनों का शत्रु यानि

बंदी छोड़ (कविरसि) कविर्देव है। कबीर परमेश्वर है जो सम्राट के समान सिंहासन पर विराजमान है। (पवमानः नभः असि) आकाश की तरह निर्लेप निर्मल है। स्वप्रकाशित (ऋतधामा) सत्यलोक में रहने वाला है। वह परम अक्षर ब्रह्म कबीर है।

(2) ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 26 सुनाया। जिसका भावार्थ है कि परमात्मा ऊपर के लोक से गति (प्रस्थान) करके आता है, नेक आत्माओं को मिलता है। भक्ति करने वालों के संकट समाप्त करता है। वह कर्विदेव (कबीर परमेश्वर) है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 86 मन्त्र 26-27)

इन्दुः पुनानो अति गाहते मृधो विश्वानि कृण्वन्त्सुपथानि यज्यवे ।
गाः कृण्वानो निर्णिजं हर्यतः कविरत्यो न क्रीळन्परि वारमर्षति ॥२६॥

पदार्थः—(यज्यवे) यज्ञ करने वाले यजमानों के लिये परमात्मा (विश्वानि सुपथानि) सब रास्तों को (कृण्वन्) सुगम करता हुआ (मृधः) उनके विघ्नों को (अतिगाहते) मर्द्दन करता है। और (पुनानः) उनको पवित्र करता हुआ और (निर्निजं) अपने रूप को (गाः कृण्वानः) सरल करता हुआ (हर्य्यतः) वह कान्तिमय परमात्मा (कविः) सर्वज्ञ (अत्यो न) विद्युत् के समान (क्रीळन्) क्रीड़ा करता हुआ (वारं)वरणीय पुरुष को (पर्य्यर्षति) प्राप्त होता है ॥२६॥

❖ विवेचन :- यह फोटोकापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 26 की है जो आर्यसमाज के आचार्यों व महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा अनुवादित है जिसमें स्पष्ट है कि यज्ञ करने वाले अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान करने वाले यजमानों अर्थात् भक्तों के लिए परमात्मा, सब रास्तों को सुगम करता हुआ अर्थात् जीवन रूपी सफर के मार्ग को दुःखों रहित करके सुगम बनाता हुआ। उनके विघ्नों अर्थात् संकटों का मर्दन करता है अर्थात् समाप्त करता है। भक्तों को पवित्र अर्थात् पाप रहित, विकार रहित करता है। जैसा की अगले मन्त्र 27 में कहा है कि ''जो परमात्मा द्यूलोक अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है, वहाँ पर परमात्मा के शरीर का प्रकाश बहुत अधिक है।'' उदाहरण के लिए परमात्मा के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्य तथा इतने ही चन्द्रमाओं के मिले-जुले प्रकाश से भी अधिक है। यदि वह परमात्मा उसी प्रकाश युक्त शरीर से पृथ्वी पर प्रकट हो जाए तो हमारी चर्म दृष्टि उन्हें देख नहीं सकती। जैसे उल्लु पक्षी दिन में सूर्य के प्रकाश के कारण कुछ भी नहीं देख पाता है। यही दशा मनुष्यों की हो जाए। इसलिए वह परमात्मा अपने रूप अर्थात् शरीर के प्रकाश को सरल करता हुआ उस स्थान से जहाँ परमात्मा ऊपर रहता है, वहाँ से गति करके बिजली के समान क्रीड़ा अर्थात् लीला करता हुआ चलकर आता है, श्रेष्ठ पुरूषों को मिलता है। यह भी स्पष्ट है कि आप कविः अर्थात् कविर्देव हैं। हम उन्हें कबीर साहेब कहते हैं।

असश्चतः शतधारा अभिश्रियो हरिं नवन्तेऽव ता उदन्युवः।
क्षिपो मृजन्ति परि गोभिरावृतं तृतीये पृष्ठे अधि रोचने दिवः ॥२७॥

पदार्थः—(उदन्युवः) प्रेम की (ताः) वे (शतधाराः) सैंकड़ों धाराए (असश्चतः) जो नानारूपों में (अभिश्रियः) स्थिति को लाभ कर रही हैं। वे (हरिं) परमात्मा को (अवनवन्ते) प्राप्त होती हैं। (गोभिरावृतं) प्रकाशपुञ्ज परमात्मा को (क्षिपः) बुद्धिवृत्तियां (मृजन्ति) विषय करती हैं। जो परमात्मा (दिवस्तृतीये पृष्ठे) द्युलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है और (रोचने) प्रकाशस्वरूप है उसको बुद्धिवृत्तियाँ प्रकाशित करती हैं ॥२७॥

❖ विवेचन :- यह फोटोकापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 के मन्त्र 27 की है। इसमें स्पष्ट है कि ''परमात्मा द्यूलोक अर्थात् अमर लोक के तीसरे पष्ठ अर्थात् भाग पर विराजमान है। सत्यलोक अर्थात् शाश्वत् स्थान के तीन भाग हैं। एक भाग में वन-पहाड़-झरने, बाग-बगीचे आदि हैं। यह बाह्य भाग है अर्थात् बाहरी भाग है। (जैसे भारत की राजधानी दिल्ली भी तीन भागों में बँटी है। बाहरी दिल्ली जिसमें गाँव खेत-खलिहान और नहरें हैं, दूसरा बाजार बना है। तीसरा संसद भवन तथा कार्यालय हैं।)

इसके पश्चात् द्यूलोक में बस्तियाँ हैं। सपरिवार मोक्ष प्राप्त हंसात्माऐं रहती हैं। (पथ्वी पर जैसे भक्त को भक्तात्मा कहते हैं, इसी प्रकार सत्यलोक में हंसात्मा कहलाते हैं।) (3) तीसरे भाग में सर्वोपरि परमात्मा का सिंहासन है। उसके आस-पास केवल नर आत्माऐं रहती हैं, वहाँ स्त्री-पुरूष का जोड़ा नहीं है। वे यदि अपना परिवार चाहते हैं तो शब्द (वचन) से केवल पुत्र उत्पन्न कर लेते हैं। इस प्रकार शाश्वत् स्थान अर्थात् सत्यलोक तीन भागों में परमात्मा ने बाँट रखा है। वहाँ यानि सत्यलोक में प्रत्येक स्थान पर रहने वालों में वद्धावस्था नहीं है, वहाँ मत्यु नहीं है।

इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है कि जो जरा अर्थात् वद्ध अवस्था तथा मरण अर्थात् मत्यु से छूटने का प्रयत्न करते हैं, वे तत् ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को जानते हैं। सत्यलोक में सत्यपुरूष रहता है, वहाँ पर जरा-मरण नहीं है, बच्चे युवा होकर सदा युवा रहते हैं।

(3) ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17 सुनाया जिसका भावार्थ है कि (''कविः'' = कविर) कबीर परमात्मा स्वयं पथ्वी पर प्रकट होकर तत्वज्ञान प्रचार करता है। कविर्वाणी (कबीर वाणी) कहलाती है। सत्य आध्यात्मिक ज्ञान (तत्वज्ञान) को कबीर परमात्मा लोकोक्तियों, दोहों, शब्दों, चौपाइयों व कविताओं के रुप में पदों में कबीर वाणी द्वारा बोलकर सुनाता है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 96 मन्त्र 16 से 17)

स्वायुधः सोतृभिः पूयमानोऽभ्यर्ष गुह्यं चारु नाम ।
अभि वाजं सप्तिरिव श्रवस्याभि वायुमभि गा देव सोम ॥१६॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (**गुह्यम्**) सर्वोपरि रहस्य (**चारु**) श्रेष्ठ (**नाम**) जो तुम्हारी संज्ञा है । (**अभ्यर्ष**) उसका ज्ञान करायें । आप (**सोतृभिः, पूयमानः**) उपासक लोगों से स्तूयमान हैं । (**स्वायुधः**) स्वाभाविक शक्ति से युक्त हैं और (**सप्तिरिव**) विद्युत् के समान (**श्रवस्याभि**) ऐश्वर्य के सम्मुख प्राप्त कराइये और (**वायुमभि**) हमको प्राणों की विद्या का वेत्ता बनाइये । (**देव**) हे सर्वशक्ति-सम्पन्न परमेश्वर ! हमको (**गाः**) इन्द्रियों के (**अभिगमय**) नियमन का ज्ञाता बनाइये ॥१६॥

शिशुं जज्ञानं हर्यतं मृजन्ति शुम्भन्ति वह्निं मरुतो गणेन ।
कविर्गीर्भिः काव्येना कविः सन्त्सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ॥१७॥

पदार्थः—(**शिशुम्**) "श्यति सूक्ष्मं करोति प्रलयकाले जगदिति शिशुः परमात्मा" उस परमात्मा को (**जज्ञानम्**) जो सदा प्रकट है, (**हर्यतः**) जो अत्यन्त कमनीय है, उसको उपासक लोग (**मृजन्ति**) बुद्धिविषय करते हैं और (**शुंभन्ति**) उसकी स्तुति द्वारा उसके गुणों का वर्णन करते हैं और (**मरुतः**) विद्वान् लोग (**वह्निम्**) उस गतिशील परमात्मा का (**गणेन**) गुणों के गणों द्वारा वर्णन करते हैं और (**कविः**) कवि लोग (**गीर्भिः**) वाणी द्वारा और (**काव्येन**) कवित्व से उसकी स्तुति करते हैं । (**सोमः**) सोमस्वरूप (**पवित्रम्**) पवित्र वह परमात्मा कारणावस्था में अतिसूक्ष्म प्रकृति को (**रेभन्, सन्**) गर्जता हुआ (**अत्येति**) अतिक्रमण करता है ॥१७॥

❖ ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 के मंत्र 16 में कहा है कि हे परमात्मन्! आप अपने श्रेष्ठ गुप्त नाम का ज्ञान कराऐं। उस नाम को मंत्र 17 में बताया है कि वह कविः यानि कविर्देव है।

मंत्र 17 की केवल हिन्दी :- (शिशुम् जज्ञानम् हर्यन्तम्) परमेश्वर जान-बूझकर तत्वज्ञान बताने के उद्देश्य से शिशु रूप में प्रकट होता है, उनके ज्ञान को सुनकर (मरूतो गणेन) भक्तों का बहुत बड़ा समूह उस परमात्मा का अनुयाई बन जाता है। (मंजन्ति शुम्यन्ति वहिन्)

वह ज्ञान बुद्धिजीवी लोगों को समझ आता है, वे उस परमेश्वर की स्तुति भक्ति तत्वज्ञान के आधार से करते हैं, वह भक्ति (वहिन्) शीघ्र लाभ देने वाली होती है। वह परमात्मा अपने तत्वज्ञान को (काव्येना) कवित्व से अर्थात् कवियों की तरह दोहों, शब्दों, लोकोक्तियों, चौपाईयों द्वारा (कविर् गीर्भिः) कविर् वाणी द्वारा अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (पवित्रम् अतिरेभन्) शुद्ध ज्ञान को उच्चे स्वर में गर्ज-गर्जकर बोलते हैं। वह (कविः) कवि की तरह आचरण करने वाला कविर्देव (सन्त्) सन्त रूप में प्रकट (सोम) अमर परमात्मा होता है।(ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17)

विशेष :- इस मन्त्र के मूल पाठ में दो बार "कविः" शब्द है, आर्य समाज के अनुवादकर्ताओं

ने एक (कविः) का अर्थ ही नहीं किया है।

(4) ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 भी सुनाया। जिसका भावार्थ है कि परमात्मा कवियों की तरह आचरण करता हुआ पथ्वी पर एक स्थान से दूसरे स्थान जाता है। भैंसा फिर बोलता है कि भोले पंडितो जो मेरे पास इस पंक्ति में जो मेरे ऊपर हाथ रखे खड़ा है, यह वही परमात्मा कबीर है जिसे लोग ''कवि'' कहकर पुकारते हैं। इन्हीं की कपा से मैं आज मनुष्यों की तरह वेद मन्त्र सुना रहा हूँ।

कबीर परमेश्वर जी ने कहा है कि भैंसा पंडित आप पंडितो वाले लंगर में प्रवेश करके भोजन ग्रहण करें। मैं तो शुद्र हूँ, अशिक्षित हूँ। इसलिए आम जनता के लिए लगे लंगर में भोजन करने जाता हूँ।

उसी समय सर्व पंडित जो भैंसे को वेदमन्त्र बोलते देखकर एकत्रित हो गए थे। कबीर जी के चरणों में गिर गए तथा अपनी भूल की क्षमा याचना की। परमेश्वर कबीर जी ने कहा :-

करनी तज कथनी कथैं, अज्ञानी दिन रात।
कुकर ज्यों भौंकत फिरें सुनी सुनाई बात।।

सत्संग में तो कह रहे थे कि भगवान रामचन्द्र जी ने शुद्र जाति की शबरी (भीलनी) के झूठे बेर रुचि-रुचि खाए, कोई छुआछूत नहीं की और स्वयं को तुम परमात्मा से भी उत्तम मानते हो। कहते हो, करते नहीं। एक-दूसरे से सुनी-सुनाई बात कुत्ते की तरह भौंकते रहते हो। सर्व उपस्थित पंडितों सहित हजारों की सँख्या में कबीर जुलाहे के शिष्य बने, दीक्षा ली। शास्त्रविरुद्ध भक्ति त्यागकर, शास्त्रविधि अनुसार भक्ति शुरु की, आत्म कल्याण कराया।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 94 मन्त्र 1)

अधि यदस्मिन्वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूर्ये न विशः।
अपो वृणानः पवते कवीयन्व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म ।।१।।

पदार्थः—(सूर्य्ये) सूर्य के विषय में (न) जैसे (विशः) रश्मियां प्रकाशित करती हैं। उसी प्रकार (धियः) मनुष्यों की बुद्धियां (स्पर्धन्ते) अपनी-अपनी उत्कट शक्ति से विषय करती हैं। (अस्मिन् अधि) जिस परमात्मा में (वाजिनीव) सर्वोपरि बलों के समान (शुभः) शुभ बल है वह परमात्मा (अपोवृणानः) कर्मों का अध्यक्ष होता हुआ (पवते) सबको पवित्र करता हैं। (कवीयन्) कवियों की तरह आचरण करता हुआ (पशुवर्धनाय) सर्वद्रष्टृत्व पद के लिए (व्रजं, न) इन्द्रियों के अधिकरण मन के समान 'व्रजन्ति इन्द्रियाणि यस्मिन् तद्व्रजम्' (मन्म) जो अधिकरणरूप है वही श्रेय का धाम है ।।१।।

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 का अनुवाद भी आर्यसमाज के विद्वानों द्वारा किया गया है। पुस्तक विस्तार को ध्यान में रखते हुए उन्हीं के अनुवाद से अपना मत सिद्ध करते हैं। जैसे पूर्व में लिखे वेदमन्त्रों में बताया गया है कि परमात्मा अपने मुख कमल से वाणी उच्चारण करके तत्वज्ञान बोलता है, लोकोक्तियों के माध्यम से, कवित्व से दोहों, शब्दों, साखियों, चौपाईयों के द्वारा वाणी बोलने से प्रसिद्ध कवियों में से भी एक कवि की उपाधि प्राप्त करता है। उसका नाम

कविर्देव अर्थात् कबीर साहेब है।

इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 में भी यही स्पष्ट है कि जो सर्वशक्तिमान परमेश्वर है, वह (कवियन् व्रजम् न) कवियों की तरह आचरण करता हुआ पृथ्वी पर विचरण करता है।

हे धर्मदास! यही बात आप कह रहे हो कि हम शुद्र को पास भी नहीं बैठने देते। धर्मदास बहुत शर्मसार हुआ। परन्तु परमात्मा की शिक्षा को अपने ऊपर व्यंग्य समझकर खीझ गया तथा कहा कि हे जिन्दा! आप की जली-भूनी बातें अच्छी नहीं लगती। आप को बोलने की सभ्यता नहीं है। कहते हो कि कुत्ते की तरह सुनी-सुनाई बातें तुम सब भौंकते फिरते हो। यह कहकर धर्मदास जी ने मुँह बना लिया। नाराजगी जाहिर की। परमात्मा जिन्दा रुप में अन्तर्ध्यान हो गए। चौथी बार अर्न्तधान हो गए तो धर्मदास का जीना मुश्किल हो गया। पछाड़ खा-खा कर रोने लगा। उस दिन फिर वृंदावन में धर्मदास से परमात्मा की वार्ता हुई थी। (इस प्रकार परमेश्वर कबीर जी कुल मिलाकर छः बार अन्तर्ध्यान हुए, तब धर्मदास की अक्ल ठिकाने आई) वृन्दावन मथुरा से चलकर धर्मदास रोता हुआ अपने गांव बांधवगढ़ की ओर वापिस चल पड़ा। धर्मदास जी ने छः महीनों का कार्यक्रम तीर्थों पर भ्रमण का बना रखा था। वह 15 दिन में ही वापिस घर आ गया। गरीब दास जी ने अपनी अमृतवाणी में कहा है :-

तहां वहां रोवत है धर्मनी नागर, कहां गए मेरे सुख के सागर।
अति वियोग हुआ हम सेती, जैसे निर्धन की लुट जाय खेती।
हम तो जाने तुम देह स्वरुपा, हमरी बुद्धि अन्ध गहर कूपा।
कल्प करे और मन में रोवै, दशों दिशा कूं वो मघ जोहै।
बेग मिलो करहूं अपघाता, मैं ना जीवूं सुनो विधाता।

जब धर्मदास जी बाँधवगढ़ पहुँचा, उस समय बहुत रो रहा था। घर में प्रवेश करके मुँह के बल गिरकर फूट-फूटकर रोने लगा। उसकी पत्नी का नाम आमिनी देवी था। अपने पति को रोते देखकर तथा समय से पूर्व वापिस लौटा देखकर मन-मन में विचार किया कि लगता है भक्तजी को किसी ने लूट लिया है। धन न रहने के कारण वापिस लौट आया है। धर्मदास जी के पास बैठकर अपने हाथों आँसू पौंछती हुई बोली - क्यों कच्चा मन कर रहे हो। कोई बात नहीं, किसी ने आपकी यात्रा का धन लूट लिया। आपके पास धन की कमी थोड़े है और ले जाना। अपनी तीर्थ यात्रा पूरी करके आना। मैं मना थोड़े करुँगी। कुछ देर बाद दृढ़ मन करके धर्मदास जी ने कहा कि आमिनी देवी यदि रुपये पैसे वाला धन लुट गया होता तो मैं और ले जाता। मेरा ऐसा धन लुट गया है जो शायद अब नहीं मिलेगा। वह मैंने अपने हाथों अपनी मूर्खता से गँवाया है। जिन्दा महात्मा से हुई सर्वज्ञान चर्चा तथा जिन्दा बाबा से सुनी सृष्टि रचना आमिनी देवी को सुनाया। सर्वज्ञान प्रमाणों सहित देखकर आमिनी ने कहा कि सेठ जी आप तो निपुण व्यापारी थे, कभी घाटे का सौदा नहीं करते थे। इतना प्रमाणित ज्ञान फिर भी आप नहीं माने, साधु को तो नाराज होना ही था। कितनी बार आप को मिले- बच्चे की तरह समझाया, आपने उस दाता को क्यों ठुकराया? धर्मदास ने कहा आमिनी! जीवन में पहली बार हानि का सौदा किया है। यह हानि अब पूर्ति नहीं हो पावेगी। वह धन नहीं मिला तो मैं जीवित नहीं रह पाऊँगा।

''धर्मदास जी को सतलोक में ले जाना''

छः महीने तक परमेश्वर जिन्दा नहीं आए। धर्मदास रो-रो अकुलाए, खाना नाममात्र रह गया। दिन में कई-कई बार घण्टों रोना। शरीर सूखकर काँटा हो गया। एक दिन धर्मदास जी से आमिनी देवी ने पूछा कि हे स्वामी! आपकी यह हालत मुझ से देखी नहीं जा रही है। आप विश्वास रखो, जब पहले कितनी बार आए हैं तो अबकी बार भी आऐंगे। धर्मदास ने कहा कि इतना समय पहले कभी नहीं लगाया। लगता है मुझ पापी से बहुत नाराज हो गए हैं, बात भी नाराजगी की है। मैं महामूर्ख हूँ आमिनी देवी! अब मुझे उनकी कीमत का पता चला है। भोले-भाले नजर आते हैं, वे परमात्मा के विशेष कृपा पात्र हैं। इतना ज्ञान देखा न सुना। आमिनी ने पूछा कि उन्होंने बताया हो कि वे कैसे-कैसे मिलते हैं, कहाँ-कहाँ जाते हैं? धर्मदास जी ने कहा कि वे कह रहे थे कि मैं वहाँ अवश्य जाता हूँ जहाँ पर धर्म-भण्डारे (लंगर) होते हैं। वहाँ लोगों को ज्ञान समझाता हूँ। आमिनी देवी ने कहा कि आप भण्डारा कर दो। हो सकता है कि जिन्दा बाबा आ जाए। धर्मदास जी बोले कि मैं तो तीन दिन का भण्डारा करूँगा। आमिनी देवी पहले तो कंजूसी करती थी। धर्मदास तीन दिन का भण्डारा कहता था तो वह एक दिन पर अड़ जाती थी। परन्तु उस दिन आमिनी ने तुरन्त हाँ कर दी कि कोई बात नहीं आप तीन दिन का भण्डारा करो। धर्मदास जी ने दूर-दूर तक तीन दिन के भोजन-भण्डारे का संदेश भिजवा दिया। साधुओं का निमन्त्रण भिजवा दिया। निश्चित दिन को भण्डारा प्रारम्भ हो गया। दो दिन बीत गए। साधु-महात्मा आए, ज्ञान चर्चा होती रही। परन्तु जो ज्ञान जिन्दा बाबा ने बताया था। उसका उत्तर किसी के पास नहीं पाया। धर्मदास जी जान-बूझकर साधुओं से प्रश्न करते थे कि क्या ब्रह्मा, विष्णु, शिव का भी जन्म होता है। उत्तर वही घिसा-पिटा मिलता कि इनके कोई माता-पिता नहीं हैं। इससे धर्मदास को स्पष्ट हो जाता कि वह जिन्दा महात्मा नहीं आया है। वेश बदलकर आता तो भी ज्ञान तो सही बताता। तीसरे दिन भी दो पहर तक में जिन्दा बाबा नहीं आए। धर्मदास जी ने दृढ़ निश्चय करके कहा कि यदि आज जिन्दा बाबा नहीं आए तो मैं आत्महत्या करूँगा, ऐसे जीवन से मरना भला। परमात्मा तो अन्तर्यामी हैं। जान गए कि आज भक्त पक्का मरेगा। उसी समय कुछ दूरी पर कंदब का पेड़ था। उसके नीचे उसी जिन्दा वाली वेशभूषा में बैठे धर्मदास को दिखाई दिए। धर्मदास दौड़कर गया, ध्यानपूर्वक देखा, जिन्दा महात्मा के गले से लग गया। अपनी गलती की क्षमा माँगी। कभी ऐसी गलती न करने का बार-बार वचन किया। तब परमात्मा धर्मदास के घर में गए। आमिनी तथा धर्मदास दोनों ने बहुत सेवा की, दोनों ने दीक्षा ली। परमात्मा ने जिन्दा रुप में उनको प्रथम मन्त्र की दीक्षा दी। कुछ दिन परमेश्वर उनके बाग में रहे। फिर एक दिन धर्मदास ने ऐसी ही गलती कर दी, परमात्मा अचानक गायब हो गए। धर्मदास जी ने अपनी गलती को घना (बहुत) महसूस किया। खाना-पीना त्याग दिया, प्रतिज्ञा कर ली कि जब तक दर्शन नहीं दोगे, पीना-खाना बन्द। धर्मदास शरीर से बहुत दुर्बल हो गए। उठा-बैठा भी नहीं जाता था। छठे दिन परमात्मा आए। धर्मदास को अपने हाथों उठाकर गले से लगाया। अपने हाथों खाना खिलाया। धर्मदास ने पहले चरण धोकर चरणामृत लिया। फिर ज्ञान चर्चा शुरु हुई। धर्मदास जी ने पूछा कि आप जी को इतना ज्ञान कैसे हुआ?

परमेश्वर जी ने कहा कि मुझे सतगुरु मिले हैं। वे काशी शहर में रहते हैं। उनका नाम कबीर है। वे तो स्वयं परमेश्वर हैं। सतगुरु का रुप बनाकर लीला कर रहे हैं, जुलाहे का कार्य करते हैं।

उन्होंने मुझे सतलोक दिखाया, वह लोक सबसे न्यारा है। वहाँ जो सुख है, वह स्वर्ग में भी नहीं है। सदाबहार फलदार वक्ष, सुन्दर बाग, दूध की नदियाँ बहती हैं। सुन्दर नर-नारी रहते हैं। वे कभी वद्ध नहीं होते। कभी मत्यु नहीं होती। जो सतगुरु से तत्वज्ञान सुनकर सत्यनाम की प्राप्ति करके भक्ति करता है, वह उस परमधाम को प्राप्त करता है। इसी का वर्णन गीता अध्याय 15 श्लोक 4 में भी है। धर्मदास जी ने हठ करके कहा कि हे महाराज! मुझे वह अमर लोक दिखाने की कपा करें ताकि मेरा विश्वास दढ़ हो। परमेश्वर जी ने कहा कि आप भक्ति करो। जब शरीर त्यागकर जाएगा तो उस लोक को प्राप्त करेगा। धर्मदास जी के अधिक आग्रह करने पर परमेश्वर जिन्दा ने कहा कि चलो आपको सत्यलोक ले चलता हूँ। धर्मदास की आत्मा को निकालकर ऊपर सत्यलोक में ले गए। परमेश्वर के दरबार के द्वार पर एक सन्त्री खड़ा था। जिन्दा बाबा के रुप में खड़े परमेश्वर ने द्वारपाल से कहा कि धर्मदास को परमेश्वर के दर्शन कराकर लाओ। द्वारपाल ने एक अन्य हंस (सतलोक में भक्त को हंस कहते हैं) से कहा कि धर्मदास को परमेश्वर के सिंहासन के पास ले जाओ, सत्यपुरुष के दर्शन कराकर लाओ। वहाँ पर बहुत सारे हंस (भक्त) तथा हंसनी (नारी-भक्तमति) इकट्ठे होकर नाचते-गाते धर्मदास जी को सम्मान के साथ लेकर चले। सब हंसों तथा नारियों ने गले में सुन्दर मालाएं पहन रखी थी। उनके शरीर का प्रकाश 16 सूर्यों के समान था। जब धर्मदास जी ने तख्त (सिंहासन) पर बैठे सत्य पुरुष जी को देखा तो वही स्वरुप था जो धरती पर जिन्दा बाबा के रुप में था। परन्तु यहाँ पर परमेश्वर के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा करोड़ चन्द्रमा के प्रकाश से भी कहीं अधिक था। जिन्दा रूप में नीचे से गए परमात्मा तख्त पर विराजमान अपने ही दूसरे स्वरूप पर चँवर करने लगा। धर्मदास ने सोचा कि जिन्दा तो इस परमेश्वर का सेवक होगा। परन्तु सूरत मिलती-जुलती है। कुछ देर में तख्त पर बैठा परमात्मा खड़ा हुआ तथा जिन्दा सिंहासन पर बैठ गया। तेजोमय शरीर वाले प्रभु जिन्दा के शरीर में समा गया। धर्मदास शर्म के मारे पानी-पानी हो गया। अपने आपको कोसने लगा कि मैं कैसा दुष्ट हूँ। मैंने परमेश्वर को कितना दुःखी किया, कितना अपमानित किया। मुझे वहाँ विश्वास नहीं हुआ। जब दर्शन कराकर सतलोक के भक्त वापिस लाए। तीन दिन तक परमात्मा के सत्यलोक में रहा। उधर से धर्मदास को तीन दिन से अचेत देखकर घर, गाँव तथा रिश्तेदार व मित्र बान्धवगढ़ में धर्मदास जी के घर पर इकट्ठे हो गए। कोई झाड़-फूँक करा रहा था। कोई वैध से उपचार करा रहा था, परन्तु सब उपाय व्यर्थ हो चुके थे। किसी को आशा नहीं रही थी कि धर्मदास जिन्दा हो जाएगा। तीसरे दिन परमात्मा ने उसकी आत्मा को शरीर में प्रवेश कर दिया। धर्मदास जी को उस बाग से उठाकर घर ले गए थे। जहाँ से परमात्मा उसको सत्यलोक लेकर गए थे। धर्मदास सचेत हो गया था। धर्मदास जी सचेत होते ही उस बाग में उसी स्थान पर गए तो वही परमात्मा जिन्दा बाबा के रुप में बैठे थे। धर्मदास जी चरणों में गिर गए और कहने लगे हे प्रभु! मुझ अज्ञानी को क्षमा करो प्रभु!:-

"अवगुण मेरे बाप जी, बख्सो गरीब निवाज। जो मैं पूत कुपुत हूँ, बहुर पिता को लाज।।"

मुझे विश्वास नहीं हो रहा था कि आप परमात्मा हैं, आप परम अक्षर ब्रह्म हैं। कभी-कभी आत्मा तो कहती थी कि पूर्ण ब्रह्म के बिना ऐसा ज्ञान पथ्वी पर कौन सुना सकता है, परन्तु मन तुरन्त विपरीत विचार खड़े कर देता था। हे सत्य पुरुष! आपने अपने शरीर की वह शोभा जो सत्यलोक में है, यहाँ क्यों प्रकट नहीं कर रखी?

परमेश्वर जी ने कहा कि धर्मदास! यदि मैं उसी प्रकाशयुक्त शरीर से इस काल लोक में आ

जाऊँ तो क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन भी इसी को कहते हैं) व्याकुल हो जाए। मैं अपना सर्व कार्य गुप्त करता हूँ। यह मुझे एक सिद्धी वाला सन्त मानता है। लेकिन इसको यह नहीं मालूम कि मैं कहाँ से आया हूँ? कौन हूँ? परमेश्वर ने धर्मदास से प्रश्न किया कि आपको कैसा लगा मेरा देश? धर्मदास बोले कि हे परमेश्वर इस संसार में अब मन नहीं लग रहा। उस पवित्र स्थान के सामने तो यह काल का सम्पूर्ण लोक (21 ब्रह्माण्डों का क्षेत्र) नरक के समान लग रहा है। जन्म-मरण यहाँ का अटल विधान है। चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के जीवन भोगना भी अनिवार्य है। प्रत्येक प्राणी इसी आशा को लेकर जीवित है कि अभी नहीं मरुंगा परन्तु फिर भी कभी भी मृत्यु को प्राप्त हो जाता है। प्रत्येक प्राणी एक-दूसरे से कपट से बातें करता है। लेकिन आप के सत्यलोक में सब व्यक्ति प्यार से बातें करते हैं। निष्कपट व्यवहार करते हैं। मैंने तीनों दिन यही जाँच की थी। यदि धर्मदास जी अपने घर पर उपस्थित स्वजनों को न देखते जो उस के अचेत होने के साक्षी थे तो समझते कि कोई स्वप्न देखा होगा। परन्तु अब दृढ़ निश्चय हो गया था।

(उपरोक्त वर्णन पवित्र कबीर सागर अध्याय ''ज्ञान प्रकाश'' पृष्ठ 57-58 पर, ''मोहम्मद बोध'' पृष्ठ 20-21 पर, दश मुकामी रेखता ''ज्ञान स्थिति बोध'' पृष्ठ 83 पर, ''अमर मूल'' पृष्ठ 202 पर।)

पेश है कबीर सागर के अध्याय ''ज्ञान प्रकाश'' के पृष्ठ 57-58 की फोटोकॉपी :-

बोधसागर ५९७ (५७)

जम्बूद्वीप कलिके कडिहारा । धर्मनि बाहु जीव होयँ पारा ॥
धर्मनि बाँह जिय पहुँचे आयी । देहु दान जेहि आरति लायी ॥
शब्द मानि पुनि मस्तक नाया । पुरुष दरशके बात जनाया ॥

धर्मदास वचन

हो प्रभु चिन्तागण करु मोरा । पुरुष दरश देउ करों निहोरा ॥

सतगुरु वचन

धर्मदास यह हठ का करहू । मानहुँ शब्द शीश पर धरहू ॥
हमरे गहे पुरुष पहँ जैहा । विना गहे उहां जान न पैहा ॥
हमसों पुरुष सो ऐसी अहई । जल तरंगजल अन्तर रहई ॥
जिमिरवि औ रवि तेजप्रकाशा ।तिमिमाहिपुरुषअन्तरधर्मदासा॥
हमरी सुरति गहो चितलायी । तबहीं पुरुष पद दर्शन पायी ॥
शिष्य हृदय प्रतीति अस आनै। गुरु औ पुरुष भिन्न नहिं जानै॥
जो लौं चित्त असरीति न आवै। तौ लौं जिवनहिं लोकसिधावै॥
धर्मदास चित बहुत सकाने । चरण टेकि बहु विनती ठाने ॥

धर्मदास वचन

हो प्रभु सत्य कहौं तोहिपाहीं । तुम्हते कछु दुचिताई नाहीं ॥
मोरे तुमहिं पुरुष हो स्वामी । यमते छोड़ावहु अन्तर्यामी ॥
हो प्रभु बरणेउँ लोककी शोभा । ताते आहि मारममलोभा ॥
तव लीला बहुतै हम देखा । पुरुषदरशविनु रहै हिय रेखा ॥
जौ किंकर पर होहु दयाला । तौछिन महँहायगत उरसाला॥

सतगुरु वचन

धर्मनि जौ ऐसो चित कीन्हा । तनुतजि चलौ लोकप्रबीना ॥
राखेउ तन गौने लै हंसा । तहँ पहुँचे जहँ काले संसा ॥
लवन एक महँ पहुँचे जाई । अविगति लीला लखै को भाई॥
शोभालोक देखि सुख माना । उदितअसंख्य शशिऔभाना॥

(५८) ५९८ ज्ञानप्रकाश

जितदेखिये जगमगझलकाहीं । देखत छकित भये हियमाहीं ॥
द्वारपाल हंस जो रहिया । ता महँ एकहंसहिं असकहिया॥
एहि संसहिं तुम्हजाहु लिवाई । पुरुष दरश दे आनहुँ भाई ॥
चले लिवाय पुरुष पहँ जबहीं । झझकि हंस बहु आये तबहीं ॥
करत कोलाहल मंगल चारा । शोभा अद्भुत अंग अपारा ॥
हंसन शोभा कहाँ बताऊँ ।कछुक प्रभाव सो वरणि सुनाऊँ ॥
रतनमाल ग्रिव शोभित हंसा ।औरमणिमालकिमिकरौंप्रशंसा॥
जगमग देह हंसन करहीं । अमर चीर बहु शोभा धरहीं ॥
उडुराख चिकुर शोभाछबि आछे। रविकाकरतार रोम छबिकाछे॥
हंसन्हभालशोभाकिमि कहऊँ । षोडस चन्द्रभाल छबि लहऊँ ॥
हंस कान्ति प्रतिरोम प्रकाशा । हीरामणी उदित रोमासा ॥
कोटिकविधुहंसन छबिमोहा । देह प्राण शोभा अमी गिरोहा॥
षोडश रवि हँसन छबि मोहा । देह प्राण शुभ अमृत सोहा ॥
कञ्चनकलशजडितमणि लोना । रतन थार आरतिमहिसोना ॥
हंस मगन शब्द मुख उचारा । क्रीडाविनोद रतन मणियारा ॥
सुरति हंस कहँ आगे लीन्हा । नृत करत चले हंस प्रवीणा ॥
सुरति हंस अघानि अघाने । पुरुष सकल देखत हरषाने ॥
सिंघासन छबि देखत मनमोहा । अद्भुत अमित कलातन सोहा॥
पुरुष राम एक कला अनन्ता । वरणत कोउ न पावै अन्ता ॥
एक रोम रवि शशि कोटीशा । नखकोटिन्हविधुमलिनरवीशा॥
पुरुष प्रकाश सतलोक अँजोरा । तहां न पहुँच निरञ्जन चोरा ॥
पुरुष कबीर देखा एक भाई । धर्मदास पुनि रहे लजाई ॥
पुरुष दरश करि आयेउ तहँवा । प्रथम कबीर बैठे रहे जहँवा॥
इहां कबीर बैठे पुनि देखा । कला पुरुष तन अचरजपेखा॥
का अजगुत कीन्हेऊँ भाई । उहां मोहिं प्रतीति न आई ॥

पेश है कबीर सागर के अध्याय ''मुहम्मद बोध'' के पंष्ठ 20-21 की फोटोकॉपी :-

होता है। और तमोगुण की शुद्धता से उत्पन्न हुए शौर्य्य (धीरता) रूप बुराकपर सवार होकर गुरुकी शिक्षा द्वारा यह ज्ञान की भूमिकाओंको पूर्ण करता हुआ यथार्थ पद को प्राप्त होता है। और यथार्थ पदको प्राप्त होकर जीवन मुक्त अवस्था से अन्य जीवों को उपदेश देकर काल जालसे छुडाता है।

इस मुहम्मद बोध ग्रन्थ के यथार्थ आशय को पारखी आत्मविद् गुरु अधिकार प्रति अनेक रूपकों में समझाते हैं और इसको आध्यात्मिकही अर्थ से ग्रहण करने के लिये दश मुकामी रेखताका भी प्रमाण है। सो यहां दशमुकामी रेखता लिख देता हूँ।

दशमुकामी रेखता

चला जब लोकको शाक सब त्यागिया हंसको रूप सतगुरु वनायी। भृग ज्यों कीटको पलटि भृङ्गै किया आप समरङ्ग दै ले उड़ायी। छोडि नासूत मलकूतको पहुंचिया विष्णुकी ठाकुरी दीख जायी। इंद्र कुबेर जहाँ रंभको नृत्य है देव तेतीस कोटि रहायी ॥ १ ॥ छोडि वैकुंठको हंस आगे चला शुन्यमें ज्योति जगमग गायी। ज्योति परकाशमें निरखि निस्तत्त्वको आप निर्भय हुआ भय मिटायी। अलख निर्गुण जेहि वेद स्तुति करै तिनहूं देव को हैं पिताई। भगवान तिनके परे श्वेत मूरति धरे भागको आन तिनको रहायी ॥ २ ॥ चार मुक्काम पर खंड सोरह कहै अंडको छोर ह्यां ते रहायी। अंडके परे स्थान अचिंत को निरखिया हंस जब उहां जायी। सहस औ द्वादशै रूह है सङ्गमें करत कल्लोल अनहद बजायी तासुके बदनकी कौन महिमा कहौं भासती देह अति नूर छायी ॥ ३ ॥ महल कंचन बने मणिक तामें जडे बैठ तहँ कलश अखंड छाजै। अचिंतके

परे स्थान सोहंका हंस छत्तीस तहँवा बिराजै। नूरका महल और नूरकी भूमि है तहां आनन्द सो द्वन्द्व भाजै। करत कल्लोल बहु भांतिसे संग यक हंस सोहंगके समाजै ॥ ४ ॥ हंस जब जात षट चक्रको वेधिके सातमुक्काममें नजर फेरा। सोहंगके परे सुरति इच्छा कही सहसवामन जहँ हंस हेरा। रूपकी राशिते रूप उनको बना नहीं उपमा इन्दु जौनिवेरा। सुरतिसे भेटिकै शब्दको टेकि चढ़ि देखि मुक्काम अंकूर केरा ॥ ५ ॥ शून्यके बीचमें बिमल बैकुण्ठ जहाँ सहज अस्थान है गैब केरा। नवो मुक्काम यह हंस जब पहुंचिया पलक बिलंब ह्वां कियो डेरा। तहाँसे डोरि मकरतार ज्यों लागिया ताहि चढि हंस गो दै दरेरा ॥ भये आनन्दसे फंद सब छोडिया पहुंचिया जहाँ सत्य-लोक मेरा ॥ ६ ॥ हंसिनी हंस सब गाय बजायकै साजिकै कलश वहि लेन आये। युगन युग बीछुरे मिले तुम आइकै प्रेम करि अङ्गसो अँग लाये। पुरुषने दर्श जब दीन्हिया हंसको तपनी बहु जनमकी तब नशाये। पलटिकै रूप जब एकसे कीन्हिया मनहुं तब भानु षोडश उगाये ॥ ७ ॥ पुहुपके द्वीप पीयूष भोजन करै शब्दकी देह जब हंस पायी पुहुपके सेहरा हंस औ हंसिनी सच्चिदानन्द शिर छत्रछायी। दिपैं बहु दामिनी दमक बहु भांति की जहाँ घन शब्दको घमंड लायी। लगे जहाँ वरषने गरज घन घोरिकै उठत तहँ शब्द धुनि अति सोहायी ॥ ८ ॥ सुन सोह हंस तहँ यूत्थके यूत्थ है एकही नूर यक रङ्ग रागै। करत बिहार मन भामिनी मुक्तिमें कर्म औ भर्म सब दूरि भागै। रङ्क और भूप कोइ परखि आवै नहीं करत कल्लोल बहु भाँति पागे। काम औ क्रोध मद लोभ अभिमान सब छाँड़ि पाखण्ड सत शब्द लागे ॥ ९ ॥ पुरुषके बदनकी कौन महिमा कहौं

पेश है कबीर सागर के अध्याय ''अमर मूल'' के पृष्ठ 202 की फोटोकॉपी :-

(२०२) 1066 अमरमूल

कवन रूप जो पुरुष रहहीं, कवन सुख हंसा करे।
कामिनी किहि रूप राजै, तहां सुख विस्तार हो॥

सोरठा-सो मोहे प्रगट सुनाव, दया करौ निज दास कहँ।
बार बार बलि जांव, अब जिन मोहि छिपावहू॥

सतगुरु वचन–चौपाई

कहैं कबीर सुनहु धर्मदासू। सत्तलोक को कहों प्रकासू॥
है सतलोकहि अम्मर काया। एक रूप सबही त्रय माया॥
षोडश भान हंस की कांती। अमर चीर पहिरे बहु भांती॥
शोभा पुरुष कही नहिं जाई। कोटिन रवि इक रोम लजाई॥
अमर लोक अमर है काया। अमर पुरुष जहां आप रहाया॥
अमर पुरुष का पावै भेदा। कहै कबीर सों हंस अछेदा॥
सत्तलोक सत शब्द पसारा। सत्त नाम है हंस अधारा॥
अमृत फल के भोजन करहीं। युगन २ की क्षुभ्या हरहीं॥
पीवत सुधा भर्म मिट जाई। जन्म २ की तृषा बुझाई॥
कामिनी रूप वरन उजियारा। चार भान की ज्योति पसारी॥
शोभा बहुतक प्राण पियारी। प्रेम भाव सब हंस निहारी॥
अनहित बचन बोल नहिं बानी। प्रेम भाव अमृत रसरानी॥
शोभा बहुत जहां मन भावन। हंस कामिनी रंग बढ़ावन॥
अमृत नाम हृदयमें लावे। प्रेम भाव पुरुषहि मन भावे॥
आशा बस मन कोऊ नाहीं। भयो प्रकाश शब्दके माहीं॥
बूझे संत ज्ञानी जो होई। सतगुरु शब्द हृदय समाई॥
है निहशब्द शब्द सौं कहेऊ। ज्ञानी सोई जो वह पद लहेऊ॥
धर्मदास मैं तोहि सुझावा। सार शब्दका भेद बतावा॥
सार शब्द का पावै भेदा। कहैं कबीर सो हंस अछेदा॥

''क्या गुरू बदल सकते हैं?''

धर्मदास ने प्रश्न किया :-

प्रश्न 47 (धर्मदास जी का) :- हे प्रभु क्या गुरु बदल सकते हैं? सुना है सन्तों से कि गुरु नहीं बदलना चाहिए। गुरु एक, ज्ञान अनेक।

उत्तर (सत्यपुरुष का) :- जब तक गुरु मिले नहीं साचा, तब तक गुरु करो दस पाँचा।

कबीर झूठे गुरु के पक्ष को, तजत न लागै वार।
द्वार न पावै मोक्ष का, रह वार का वार।।

भावार्थ : जब तक सच्चा गुरु (सतगुरु) न मिले, तब तक गुरु बदलते रहना चाहिए। चाहे कितने ही गुरु क्यों न बनाने पड़ें और बदलने पड़ें। झूठे गुरु को तुरन्त त्याग देना।

कबीर, डूबै थे पर उभरे, गुरु के ज्ञान चमक।
बेड़ा देखा जरजरा, उतर चले फड़क।।

भावार्थ : जिस समय मुझे सत्य गुरु मिले, उनके ज्ञान के प्रकाश से पता चला कि हमारा ज्ञान और समाधान (साधना) गलत है तो ऐसे गुरु बदल दिया जैसे किसी डर से पशु फड़क कर बहुत

तेज दौड़ता है और जैसे रात्रि में सफर कर रहे यात्रियों को सुबह प्रकाश में पता चले कि जिस नौका में हम सवार हैं, उसमें पानी प्रवेश कर रहा है और साथ में सुरक्षित और साबुत नौका खड़ी है तो समझदार यात्री जिसने कोई नशा न कर रखा हो, वह तुरंत फूटी नौका को त्यागकर साबुत (Leak Proof) नौका में बैठ जाता है। मैंने जब काशी में कबीर जी सच्चे गुरु का यह ज्ञान सुना जो आपको सुनाया है तो जाति, धर्म को नहीं देखा। उसी समय सत्यगुरु की शरण में चला गया और दीक्षा मन्त्र लेकर भक्ति कर रहा हूँ। सतगुरु ने मुझे दीक्षा देने का आदेश दे रखा है। हे धर्मदास! विचार कीजिए यदि एक वैध से रोगी स्वस्थ नहीं होता तो क्या अन्य डॉक्टर के पास नहीं जाता?

धर्मदास ने कहा कि जाता है, जाना भी चाहिए, जीवन रक्षा करनी चाहिए। परमेश्वर ने कहा कि इसी प्रकार मनुष्य जन्म जीव कल्याण के लिए मिलता है। जीव को जन्म-मरण का दीर्घ रोग लगा है। यह सत्यनाम तथा सारनाम बिना समाप्त नहीं हो सकता। दोनों मंत्र काशी में सतगुरु कबीर रहते हैं, उनसे मिलते हैं, पृथ्वी पर और किसी के पास नहीं हैं। आप काशी में जाकर दीक्षा लेना, आपका कल्याण हो जाएगा क्योंकि सत्यगुरु के बिना मेरा वह सत्यलोक प्राप्त नहीं हो सकता।

धर्मदास जी ने कहा कि आप स्वयं सत्य पुरूष हैं। अब मैं धोखा नहीं खा सकता। आप अपने को छुपाए हुए हैं। हे प्रभु! मैंने गुरु रुपदास जी से दीक्षा ले रखी है। मैं पहले उनसे गुरु बदलने की आज्ञा लूँगा, यदि वे कहेंगे तो मैं गुरु बदलूंगा परन्तु धर्मदास की मूर्खता की हद देखकर परमेश्वर छठी बार अन्तर्ध्यान हो गए। धर्मदास जी फिर व्याकुल हो गए। पहले रुपदास जी के पास गए जो श्री कृष्ण अर्थात् श्री विष्णु जी के पुजारी थे। जो वैष्णव पंथ से जुड़े थे।

धर्मदास जी ने सन्त रुपदास जी से सर्व घटना बताई तथा गुरु बदलने की आज्ञा चाही। सन्त रुपदास जी अच्छी आत्मा के इन्सान थे। उन्होंने कहा बेटा धर्मदास! जो ज्ञान आपने सुना है जिस जिन्दा बाबा से, यह ज्ञान भगवान ही बता सकता है। मेरी तो आयु अधिक हो गई है। मैं तो इस मार्ग को त्याग नहीं सकता। आप की इच्छा है तो आप उस महात्मा से दीक्षा ले सकते हो।

तब धर्मदास जी काशी में गए, वहाँ पर कबीर जुलाहे की झोंपड़ी का पता किया। वहाँ कपड़ा बुनने का कार्य करते कबीर परमेश्वर को देखकर आश्चर्य का ठिकाना नहीं रहा। खुशी भी अपार हुई कि सतगुरु तथा परमेश्वर यही है। तब उनसे दीक्षा ली और अपना कल्याण कराया। कबीर परमेश्वर जी ने धर्मदास जी को फिर दो अक्षर (जिस में एक ओम् ॐ मन्त्र है तथा दूसरा तत् जो सांकेतिक है) का सत्यनाम दिया। फिर सारनाम देकर सतलोक का वासी किया।

''कबीर सृजनकर्ता है, पेश हैं छः गवाह''

❖ कलयुग में परमात्मा अन्य निम्न अच्छी आत्माओं (दृढ़ भक्तों) को मिले :-

प्रश्न :- इस बात का कहाँ प्रमाण है कि कबीर जी जुलाहा (काशी-भारत वाले) ही समर्थ परमेश्वर है जिसने सब रचना की है।

उत्तर :- पहले यह सिद्ध करता हूँ कि काशी (बनारस) शहर में जो कबीर नामक जुलाहा रहा करता था, वह सब सृष्टि का रचने वाला परम अक्षर ब्रह्म है। इसके लिए अनेकों चश्मदीद गवाह (Eye Witness) हैं जिन्होंने उस समर्थ परमेश्वर को ऊपर (तख्त) सिंहासन पर बैठे देखा तथा बताया कि जो कबीर काशी शहर (भारत देश) में जुलाहे की भूमिका किया करता, वही समर्थ परमेश्वर है।

➤ <u>गवाह नं. 1 :- संत गरीबदास जी गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर, प्रांत-हरियाणा (देश-भारत) :-</u> संत गरीबदास जी दस वर्ष के बालक अपने खेतों में गाँव के अन्य ग्वालों के साथ प्रतिदिन की तरह गाय चराने गए हुए थे। विक्रमी संवत् 1774 (सन् 1717) फाल्गुन महीने की शुदी (चांदनी) द्वादशी को दिन के लगभग दस बजे ग्वाले तथा बालक गरीबदास जी एक जांडी के वृक्ष के नीचे छाया में बैठकर भोजन खा रहे थे। परमेश्वर जी जिंदा बाबा (अल-खिज्र) के वेश में ऊपर आसमान वाले तख्त (सिंहासन) से चलकर कुछ दूरी पर धरती के ऊपर उतरे तथा ग्वालों के पास गए। वह जांडी का पेड़ गाँव-कबलाना से गाँव-छुड़ानी को जाने वाले कच्चे रास्ते पर था तथा कबलाना की सीमा के सटे संत गरीबदास जी के खेत में था। {संत गरीबदास के पिता जी के पास गाँव में एक हजार तीन सौ पचहत्तर (1375) एकड़ जमीन थी। उसी जमीन पर चरागाह बना रखी थी जिसमें गाँव छुड़ानी के अन्य निर्धन व्यक्ति भी अपनी गायों को चराने के लिए ले जाया करते थे।} बाबा जिंदा यानि साधु को देखकर बड़ी आयु के ग्वालों (पालियों) में से एक ने कहा कि बाबा जी भोजन खाओ। साधु ने कहा, ''भोजन तो मैं अपने डेरे से खाकर आया हूँ।'' कई ग्वाले एक साथ बोले, ''यदि भोजन नहीं खाते तो दूध पी लो।'' परमेश्वर ने कहा कि दूध पिला दो, परंतु दूध उसका पिलाओ जिसको कभी बच्चा उत्पन्न न हुआ हो यानि कंवारी गाय का। पालियों ने उसे मजाक समझा।

बालक गरीबदास जी उठे तथा एक अपनी प्रिय बछिया को लाए और बोले, हे बाबा जी! यह कंवारी गाय दूध कैसे दे सकती है? तब बाबा जी ने कहा कि यह दूध देगी, तुम स्वच्छ बर्तन लेकर इसके थनों के नीचे रखो। संत गरीबदास जी ने एक मिट्टी का बर्तन (छोटा घड़ा 3-4 किलोग्राम की क्षमता का) लिया और उसे हाथों से पकड़कर बछिया के थनों के नीचे करके बैठ गया। बाबा जिंदा (अल-खिज्र) ने गाय की बछड़ी की पीठ के ऊपर हाथ से थपकी मारी। उसी समय थन लंबे व कुछ मोटे हो गए तथा दूध निकलने लगा। जब वह तीन-चार किलोग्राम का बर्तन भर गया तो थनों से दूध आना बंद हो गया। बालक गरीबदास जी ने वह दूध से भरा बर्तन बाबा जी को दे दिया तथा कहा कि यह तो आपकी दया से मिला है, पी लो। बाबा जिंदा ने उस बर्तन को मुख लगाकर कुछ दूध पीया। शेष उन पालियों की ओर किया कि पी लो, यह प्रसाद है। अन्य ग्वाले उठकर चल दिए। कहने लगे कि यह दूध जादू-जंत्र करके कंवारी बछड़ी से निकाला है। हमारे को कोई भूत-प्रेत की बाधा हो जाएगी। यह कोई सेवड़ा (भूत-प्रेत निकालने वाला) लगता है। कंवारी गाय का दूध पाप का दूध है। यह बाबा पता नहीं किस छोटी जाति का है। इसका झूठा दूध हम नहीं पीएँगे।

बालक गरीबदास जी ने बाबा से बर्तन लिया और पालियों के देखते-देखते उसमें से कुछ दूध पीया। वे बड़ी आयु के ग्वाले बालक को दूध न पीने के लिए कहते रहे। बालक नहीं माना। सब दूर चले गए। बाबा जिंदा तथा बालक गरीबदास जी रह गए। तब कुछ ज्ञान सुनाया। बालक ने सतलोक और समर्थ परमात्मा (जो ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी से भी शक्तिशाली जो बाबा ने बताया था) आँखों देखने की इच्छा की। जिंदा बाबा बालक गरीबदास के जीव को शरीर से निकालकर आसमान में ले गया। ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी के लोक दिखाए। स्वर्ग तथा नरक दिखाए। ब्रह्मलोक काल ब्रह्म का दिखाया। फिर और ऊपर अपने अमरलोक में ले गए। जो बाबा जिंदा बालक के साथ गया था, वह ऊपर बने (तख्त) सिंहासन के ऊपर बैठ गया। उस समय परमात्मा रूप बन गए। परमात्मा के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्यों के प्रकाश से भी अधिक था। अमरलोक प्रकाशित था। बालक गरीबदास जी का भी अन्य शरीर बन गया

जिसका प्रकाश सोलह सूर्यों के समान था। अमरलोक के सब भक्त/भक्तमति (हँस/हँसनी) अपने परमेश्वर को दंडवत् करने लगे। जय हो कबीर सतपुरूष की बुलाने लगे। सबने कहा कि ये अनंत करोड़ ब्रह्मंड का संजनहार समर्थ परमेश्वर है। इसका नाम कबीर है। फिर परमात्मा ने सब ज्ञान अपने नबी गरीबदास जी की आत्मा में डाल दिया। सारा सतलोक तथा नीचे के सब लोक दिखाकर बालक की आत्मा को शरीर में प्रवेश करा दिया। उस समय बालक गरीबदास जी के शरीर को अंतिम संस्कार के लिए चिता (लकड़ियों के ढ़ेर) पर रखा था। अग्नि लगाने ही वाले थे, उसी समय गरीबदास जी उठ लिए। गाँव में खुशी की लहर दौड़ गई। संत गरीबदास जी को उसी जिंदा बाबा वेशधारी परमेश्वर जी ने दीक्षा दी। संत गरीबदास जी ने आँखों देखा तथा परमेश्वर के मुख कमल से सुना सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान दोहों, चौपाईयों, शब्दों के रूप में बोला जो एक दादू जी के पंथ से दीक्षित गोपाल दास नाम के महात्मा जी ने लिखा। लेखन कार्य में लगभग छः महीने लगे।

संत गरीबदास जी ने बताया :-

गरीब, हम सुल्तानी नानक तारे, दादू कूं उपदेश दिया।
जाति जुलाहा भेद ना पाया, काशी मांही कबीर हुआ।।

अर्थात् संत गरीबदास जी ने बताया है कि हम सब (मैं गरीबदास, सुल्तान इब्राहिम इब्न अधम, सिख धर्म प्रवर्तक नानक जी तथा संत दादू जी) को उस कबीर सतगुरू परमेश्वर ने पार किया जो काशी शहर में जुलाहे जाति में हुआ है। फिर कहा है कि :-

गरीब, अनंत कोटि ब्रह्मंड का, एक रति नहीं भार।
सतगुरू पुरूष कबीर हैं, कुल के संजनहार।।

अर्थात् सर्व ब्रह्मंडों के उत्पत्तिकर्ता यानि सारी कायनात के संजनकर्ता मेरे सतगुरू तथा परमेश्वर कबीर जी हैं। उन्होंने सब लोकों, तारागण तथा सब नक्षत्रों (सूर्य, चाँद, ग्रहों) को बनाकर अपनी शक्ति से रोका हुआ है जिसे विज्ञान की भाषा में गुरूत्वाकर्षण शक्ति कहते हैं। उस संजनहार कबीर के ऊपर इस सारी रचना (अनंत करोड़ ब्रह्मंडों) का कोई भार नहीं है। जैसे वैज्ञानिक ने वायुयान (Airplane) बनाकर उड़ा लिया। स्वयं भी उसमें सवार हो गया। जिस प्रकार उस वायुयान का वैज्ञानिक के ऊपर कोई भार नहीं है, उल्टा उसके ऊपर सवार है। इसी प्रकार कबीर कादर अल्लाह सब लोकों की रचना करके उनके ऊपर सवार है तथा सारे जीव सवार कर रखे हैं। इससे सिद्ध हुआ कि अल-खिज्र ही अल कबीर है।

➢ गवाह नं. 2 (संत दादू दास जी) :- संत दादू दास जी ग्यारह वर्ष के बालक थे। तब गाँव के बाहर जंगल में दादू जी को अल्लाह कबीर एक जिंदा बाबा के वेश में मिला। उनको भी सतलोक लेकर गए। आत्मा को निकालकर ऊपर अपने सतलोक में ले गए। दादू जी तीन दिन-रात अचेत रहे। ऊपर अपना तख्त (सिंहासन) दिखाया। अपना परिचय करवाया कि मैं पूर्ण ब्रह्म (परमेश्वर) हूँ। सारी संष्टि मैंने रची है। सब ब्रह्मंडों की सैर करवाकर तीसरे दिन आत्मा शरीर में प्रवेश कर दी। संत दादू दास जी सचेत हो गए। तब लोगों ने पूछा कि आपको क्या हो गया था? दादू जी ने बताया कि मेरे को एक बाबा के वेश में अल्लाह कबीर मिले थे और मुझे दीक्षा दी। ऊपर आसमानों पर लेकर गए थे। दादू जी के साथ उस समय कुछ अन्य हमउम्र बच्चे भी थे। उन्होंने भी बताया था कि एक बाबा ने जंत्र-मंत्र का जल बनाकर स्वयं पीया तथा पान के पत्ते को कटोरे रूप में बनाकर उसमें अपना झूठा पानी दादू को पिलाया था। फिर बाबा दिखाई नहीं दिया। दादू बालक बेहोश हो

गया। संत गरीबदास जी ने अपनी वाणी में परमेश्वर कबीर जी से प्राप्त ज्ञान को इस प्रकार बताया है कि :-

गरीब, दादू कूँ सतगुरू मिले, देई पान का पीक।
बूढ़ा बाबा जिसे कहें, यह दादू की नहीं सीख।।

अर्थात् संत दादू जी को सतगुरू रूप में कबीर अल्लाह मिले थे जो एक जिंदा बाबा के वेश में थे। उन्होंने दादू जी को पान के पत्ते के ऊपर अपने मुख से निकाला जल डालकर दीक्षा के समय पिलाया था। जो व्यक्ति यह कहते हैं कि दादू को वृद्ध बाबा मिला था जो जंत्र-तंत्र विद्या को जानने वाला था, यह दादू ने नहीं बताया। दादू जी ने उसके विषय में जो बताया है, वह इस प्रकार है जो दादू जी के द्वारा बोली वाणी से बने दादू ग्रंथ में लिखा है। वाणी :-

जिन मोकूं निज नाम दिया, सोई सतगुरू हमार। दादू दूसरा कोई नहीं, कबीर सिरजनहार।।
दादू नाम कबीर का, सुनकर कांपे काल। नाम भरोसै जो चले, होवे ना बांका बाल।।
केहरी नाम कबीर है, विषम काल गजराज। दादू भजन प्रताप से, भागे सुनत आवाज।।

अर्थात् दादू जी ने कहा है कि मेरे को जिसने (निजनाम) यथार्थ भक्ति का मंत्र दिया, वह मेरा सतगुरू है। उसका नाम कबीर है। यही कबीर सारी कायनात (सृष्टि) का (सृजनहार) उत्पत्तिकर्ता है।

❖ संत दादू जी ने कहा है कि ''कबीर'' नाम सुनते ही ज्योति निरंजन (काल) कांपने लग जाता है। कबीर नाम इतना शक्तिशाली है। जो भक्त कबीर जी के बताए नाम पर पूर्ण विश्वास करके जीवन यात्रा करता है तो काल ब्रह्म उसका कुछ भी बिगाड़ नहीं कर सकता।

❖ संत दादू जी ने कबीर अल्लाह की समर्थता एक उदाहरण के माध्यम से बताई है कि काल भी बहुत ताकतवर है, परंतु कबीर अल्लाह के सामने वह भी कमजोर पड़ जाता है। काल (गजराज) हाथियों के राजा के समान बलवान है। कबीर जी का भक्ति करने को दिया नाम भी बहुत शक्तिशाली है। वह केहरी यानि बब्बर शेर (Biggest Lion) के समान ताकतवर है। उस नाम का जाप (भजन) करने से उस नाम रूपी केहरी की शक्ति के आगे काल टिक नहीं पाता यानि नाम की सूक्ष्म (गाज) दहाड़ सुनकर काल रूप गजराज भाग जाता है। संत दादू दास जी ने स्पष्ट कर दिया है कि कबीर ही सारी सृष्टि (कायनात) का उत्पन्न करने वाला परमेश्वर है।

➢ <u>गवाह नं. 3 {संत धर्मदास जी बांधवगढ़ (मध्य प्रदेश, भारत) वाले}</u> :- धर्मदास जी का हिन्दू धर्म में जन्म होने के कारण हिन्दू धर्मगुरूओं द्वारा बताए अधूरे ज्ञान के आधार से साधना किया करते थे। उसी को करते हुए तीर्थ भ्रमण करते हुए मथुरा (श्री कृष्ण की नगरी) में गए हुए थे। पत्थर व पीतल की देवी-देवताओं (श्री विष्णु, श्री शंकर आदि) की मूर्तियों को थैले में डालकर साथ लिए हुए था। सुबह तीर्थ में (उस तालाब में श्री कृष्ण स्नान किया करते थे, उसमें) स्नान करके मूर्तियों की पूजा करने लगा। उस समय कबीर अल्लाह भारत देश के काशी शहर में जुलाहे की भूमिका करने संसार में प्रकट थे। धर्मदास जी ने मूर्तियों की उपासना के पश्चात् श्रीमद्भगवत गीता का पाठ किया। खुदा कबीर धर्मदास जी की सब क्रियाओं को ध्यान से देख व सुन रहा था। धर्मदास जी अपनी दैनिक भक्ति की क्रियाओं से फारिक हुआ। तब परमेश्वर कबीर जी ने उससे ज्ञान चर्चा की। ज्ञान चर्चा का दौर कई दिनों तक चला। धर्मदास जी को भी अल्लाह कबीर जी अपने सतलोक में बने तख्त के पास लेकर गए। धर्मदास जी तीन दिन तक बेहोश रहे। ऊपर के सब लोक दिखाए।

अपना सतलोक दिखाया। सम्पूर्ण अध्यात्म ज्ञान समझाकर पुनः शरीर में प्रवेश कर दिया। उसके पश्चात् संत धर्मदास जी ने अपनी पहले वाली इबादत त्याग दी तथा अपने नबी स्वयं बनकर आए अल्लाह कबीर द्वारा बताई सच्ची इबादत की और पूर्ण मोक्ष प्राप्त किया। धर्मदास जी ने अल्लाह कबीर की महिमा में अनेकों वाणी बोलीः-

आज मोहे दर्शन दियो जी कबीर।।
अमरलोक से चलकर आए, काटन जम की जंजीर।
हिन्दू के तुम देव कहाए मुसलमान के पीर।।
दोनों दीन का झगड़ा छिड़ गया, टोहा ना पाया शरीर।।
धर्मदास की अर्ज गुंसाई, खेवा लंघाइयो परले तीर।।

अर्थात् धर्मदास जी ने सतलोक देखने के बाद माना कि काशी वाला जुलाहा कबीर सारी कायनात को उत्पन्न करने वाला कादर अल्लाह है। उनकी महिमा विस्तार के साथ बताई जो आँखों देखी थी।

➢ गवाह नं. 4 (संत मलूक दास जी) :- संत मलूक दास जी को भी कबीर जी सतलोक लेकर गए। सब व्यवस्था दिखाकर वापिस शरीर में छोड़ा था। पहले मलूक दास जी श्री कृष्ण तथा श्री रामचन्द्र (श्री विष्णु जी) के परम भक्त थे। उसके पश्चात् पहले वाली पूजा त्यागकर कबीर जी द्वारा बताई भक्ति की। मोक्ष प्राप्त किया। संत मलूक दास जी ने कहा :-

जपो रे मन साहेब नाम कबीर, जपो रे मन परमेश्वर नाम कबीर।।
एक समय गुरू बंसी बजाई, कालंद्री के तीर। सुर नर मुनिजन थकत भये, रूक गया जमना नीर।
अमृत भोजन म्हारे सतगुरू जीमें, शब्द दूध की खीर। दास मलूक सलूक कहत है, खोजो खसम कबीर।।

अर्थात् संत मलूक दास जी ने स्पष्ट किया है कि परमात्मा कबीर जी का नाम जपा करो। उस (खसम) सर्व के मालिक कबीर जी की खोज करो, उसे पहचानो। सत्य साधना करके सतलोक में कबीर खुदा के पास जाओ। जैसे श्री कृष्ण के विषय में बताया जाता है कि वे बांसुरी मधुर बजाते थे। उसको सुनकर गोपियाँ व गायें खींची चली आती थी। मलूक दास ने बताया है कि एक समय मेरे सतगुरू कबीर जी ने (कालंद्री) जमना दरिया के किनारे बांसुरी बजाई थी जिसको सुनकर स्वर्ग लोक के देवता, ऋषिजन तथा आस-पास के गाँव के व्यक्ति खींचे चले आए थे। और क्या बताऊँ! जमना दरिया का जल भी रूक गया था। मेरे सतगुरू शब्द की खीर खाते हैं यानि अमृत भोजन के साथ-साथ अमर आनंद भी भोगते हैं। संत मलूक दास जी ने आँखों देखा बताया कि कबीर पूर्ण ब्रह्म (कादर अल्लाह) है।

➢ गवाह नं. 5 :- संत नानक देव जी को सुल्तानपुर शहर के पास बह रही बेई नदी पर मिले जहाँ गुरू द्वारा ''सच्चखण्ड साहेब'' यादगार रूप में बना है :-

''नानक जी का संक्षिप्त यथार्थ परिचय''

आदरणीय श्री नानक साहेब जी प्रभु कबीर(धाणक) जुलाहा के साक्षी :- श्री नानक देव का जन्म विक्रमी संवत् 1526 (सन् 1469) कार्तिक शुक्ल पूर्णिमा को हिन्दू परिवार में श्री कालु राम मेहत्ता (खत्री) के घर माता श्रीमती तृप्ता देवी की पवित्र कोख (गर्भ) से पश्चिमी पाकिस्तान के जिला लाहौर के तलवंडी नामक गाँव में हुआ। इस स्थान को अब ''ननकाना साहब'' कहते हैं।

इन्होंने फारसी, पंजाबी, संस्कृत भाषा पढ़ी हुई थी। श्रीमद् भगवत गीता जी को श्री बृजलाल पांडे से पढ़ा करते थे। श्री नानक देव जी के श्री चन्द तथा लखमी चन्द दो लड़के थे।

श्री नानक जी चौदह वर्ष की आयु में अपनी बहन नानकी की ससुराल शहर सुल्तानपुर लोधी में चले गए थे। अपने बहनोई श्री जयराम जी की कृपा से सुल्तानपुर के नवाब के यहाँ मोदी खाने की नौकरी किया करते थे। प्रभु में असीम प्रेम था क्योंकि यह पुण्यात्मा युगों-युगों से पवित्र भक्ति ब्रह्म भगवान(काल) की करते हुए आ रहे थे। सत्ययुग में यही नानक जी राजा अम्ब्रीष थे तथा ब्रह्म भक्ति विष्णु जी को ईष्ट मानकर किया करते थे। दुर्वासा जैसे महान तपस्वी भी इनके दरबार में हार मानकर क्षमा याचना करके गए थे।

त्रेता युग में श्री नानक जी ही राजा जनक विदेही बने। जो सीता जी के पिता कहलाए। एक सुखदेव ऋषि जो महर्षि वेदव्यास के पुत्र थे जो अपनी सिद्धि से आकाश में उड़ जाते थे। परन्तु गुरु से उपदेश नहीं ले रखा था। जब सुखदेव विष्णुलोक के स्वर्ग में गए तो गुरु न होने के कारण वापिस आना पड़ा। विष्णु जी के आदेश से राजा जनक को गुरु बनाया तब स्वर्ग में स्थान प्राप्त हुआ। फिर कलियुग में यही राजा जनक की आत्मा एक हिन्दू परिवार में श्री कालुराम महत्ता (खत्री) के घर उत्पन्न हुए तथा श्री नानक नाम रखा गया।

''नानक जी तथा परमेश्वर कबीर जी की ज्ञान चर्चा''

बाबा नानक देव जी प्रातःकाल प्रतिदिन सुल्तानपुर लोधी के पास बह रही बेई दरिया में स्नान करने जाया करते थे तथा घण्टों प्रभु चिन्तन में बैठे रहते थे।

एक दिन परमेश्वर कबीर जी जिन्दा फकीर के वेश में बेई दरिया पर मिले तथा नानक जी के साथ दरिया में गोता लगाया। कबीर साहेब जी श्री नानक जी की पुण्यात्मा को सत्यलोक ले गए। सचखण्ड में श्री नानक जी ने देखा कि एक असीम तेजोमय मानव सदृश शरीर युक्त प्रभु तख्त पर बैठे थे। अपने ही दूसरे स्वरूप पर कबीर साहेब जिन्दा महात्मा के रूप में चंवर करने लगे। तब श्री नानक जी ने सोचा कि अकाल मूर्त तो यह रब है जो गद्दी पर बैठा है। कबीर तो यहाँ का सेवक होगा। उसी समय जिन्दा रूप में परमेश्वर कबीर साहेब उस गद्दी पर विराजमान हो गए तथा जो तेजोमय शरीर युक्त प्रभु का दूसरा रूप था वह खड़ा होकर तख्त पर बैठे जिन्दा वाले रूप पर चंवर करने लगा। फिर वह तेजोमय रूप नीचे से गये जिन्दा (कबीर) रूप में समा गया तथा गद्दी पर अकेले कबीर परमेश्वर जिन्दा रूप में बैठे थे और चंवर अपने आप ढुरने लगा।

तब नानक जी ने कहा कि वाहे गुरु, सत्यनाम से प्राप्ति तेरी। इस प्रक्रिया में तीन दिन लग गए। नानक जी की आत्मा को साहेब कबीर जी ने वापिस शरीर में प्रवेश कर दिया। तीसरे दिन श्री नानक जी होश में आए।

उधर श्री जयराम जी ने (जो श्री नानक जी का बहनोई था) श्री नानक जी को दरिया में डूबा जान कर दूर तक गोताखोरों से तथा जाल डलवा कर खोज करवाई। परन्तु कोशिश निष्फल रही और मान लिया कि श्री नानक जी दरिया के अथाह वेग में बह कर मिट्टी के नीचे दब गए। तीसरे दिन जब नानक जी उसी नदी के किनारे सुबह-सुबह दिखाई दिए तो बहुत व्यक्ति एकत्रित हो गए, बहन नानकी तथा बहनोई श्री जयराम भी दौड़े गए, खुशी का ठिकाना नहीं रहा तथा घर ले आए।

श्री नानक जी अपनी नौकरी पर चले गए। मोदी खाने का दरवाजा खोल दिया तथा कहा

जिसको जितना चाहिए, ले जाओ। तेरा-तेरा कहकर पूरा खजाना लुटा कर शमशान घाट पर बैठ गए। जब नवाब को पता चला कि श्री नानक खजाना समाप्त करके शमशान घाट पर बैठा है। तब नवाब ने श्री जयराम की उपस्थिति में खजाने का हिसाब करवाया तो सात सौ साठ रूपये श्री नानक जी के अधिक मिले। नवाब ने क्षमा याचना की तथा कहा कि नानक जी आप सात सौ साठ रूपये जो आपके सरकार की ओर अधिक हैं ले लो तथा फिर नौकरी पर आ जाओ। तब श्री नानक जी ने कहा कि अब सच्ची सरकार की नौकरी करूँगा। उस पूर्ण परमात्मा के आदेशानुसार अपना जीवन सफल करूँगा। वह पूर्ण परमात्मा है जो मुझे बेई नदी पर मिला था।

नवाब ने पूछा वह पूर्ण परमात्मा कहाँ रहता है तथा यह आदेश आपको कब हुआ?

श्री नानक जी ने कहा वह सच्चखण्ड में रहता है। बेई नदी के किनारे से मुझे स्वयं आकर वही पूर्ण परमात्मा सचखण्ड (सत्यलोक) लेकर गया था। वह इस पथ्वी पर भी आकार में आया हुआ है। उसकी खोज करके अपना आत्म कल्याण करवाऊँगा। उस दिन के बाद श्री नानक जी घर त्याग कर पूर्ण परमात्मा की खोज पथ्वी पर करने के लिए चल पड़े। प्रथम उदासी में बनारस गए।

श्री नानक जी सतनाम तथा वाहिगुरु की रटना लगाते हुए बनारस पहुँचे। इसीलिए अब पवित्र सिक्ख समाज के श्रद्धालु केवल सत्यनाम श्री वाहिगुरु कहते रहते हैं। सत्यनाम क्या है तथा वाहिगुरु कौन है? यह मालूम नहीं है। जबकि सत्यनाम(सच्चानाम) गुरु ग्रन्थ साहेब में लिखा है, जो अन्य मंत्र है।

जैसा कि कबीर साहेब ने बताया था कि मैं बनारस (काशी) में रहता हूँ। धाणक (जुलाहे) का कार्य करता हूँ। मेरे गुरु जी काशी में सर्व प्रसिद्ध पंडित रामानन्द जी हैं। इस बात को आधार रखकर श्री नानक जी ने संसार से उदास होकर पहली उदासी यात्रा बनारस (काशी) के लिए प्रारम्भ की (प्रमाण के लिए देखें ''जीवन दस गुरु साहिब'' (लेखक :- सोढ़ी तेजा सिंह जी, प्रकाशक=चतर सिंघ, जीवन सिंघ) पष्ठ न. 50 पर।)।

परमेश्वर कबीर साहेब जी स्वामी रामानन्द जी के आश्रम में प्रतिदिन जाया करते थे। जिस दिन श्री नानक जी ने काशी पहुँचना था उससे पहले दिन कबीर साहेब ने अपने पूज्य गुरुदेव रामानन्द जी से कहा कि स्वामी जी कल मैं आश्रम में नहीं आ पाऊँगा। क्योंकि कपड़ा बुनने का कार्य अधिक है। कल सारा दिन लगा कर कार्य निपटा कर फिर आपके दर्शन करने आऊँगा।

काशी (बनारस) में जाकर श्री नानक जी ने पूछा कोई रामानन्द जी महाराज है। सबने कहा वे आज के दिन सर्व ज्ञान सम्पन्न ऋषि हैं। उनका आश्रम पंचगंगा घाट के पास है। श्री नानक जी ने श्री रामानन्द जी से वार्ता की तथा सच्चखण्ड का वर्णन शुरू किया। तब श्री रामानन्द स्वामी ने कहा यह पहले मुझे किसी शास्त्र में नहीं मिला परन्तु अब मैं आँखों देख चुका हूँ, क्योंकि वही परमेश्वर स्वयं कबीर नाम से आया हुआ है तथा मर्यादा बनाए रखने के लिए मुझे गुरु कहता है परन्तु मेरे लिए प्राण प्रिय प्रभु है। पूर्ण विवरण चाहिए तो मेरे व्यवहारिक शिष्य परन्तु वास्तविक गुरु कबीर से पूछो, वही आपकी शंका का निवारण कर सकता है।

श्री नानक जी ने पूछा कि कहाँ हैं कबीर साहेब जी? मुझे शीघ्र मिलवा दो। तब श्री रामानन्द जी ने एक सेवक को श्री नानक जी के साथ कबीर साहेब जी की झोपड़ी पर भेजा। उस सेवक से भी सच्चखण्ड के विषय में वार्ता करते हुए श्री नानक जी चले तो उस कबीर साहेब के सेवक ने भी सच्चखण्ड व सष्टि रचना जो परमेश्वर कबीर साहेब जी से सुन रखी थी सुनाई। तब श्री

नानक जी ने आश्चर्य हुआ कि मेरे से तो कबीर साहेब के चाकर (सेवक) भी अधिक ज्ञान रखते हैं। इसीलिए गुरुग्रन्थ साहेब पष्ठ 721 पर अपनी अमतवाणी महला 1 में श्री नानक जी ने कहा है कि :-

"हक्का कबीर करीम तू, बेएब परवरदीगार।
नानक बुगोयद जनु तुरा, तेरे चाकरां पाखाक।।"

जिसका भावार्थ है कि हे कबीर परमेश्वर जी मैं नानक कह रहा हूँ कि मेरा उद्धार हो गया, मैं तो आपके सेवकों के चरणों की धूर तुल्य हूँ।

गुरू ग्रन्थ साहेब के पष्ठ 731 पर कहा है कि :-

नीच जाति प्रदेशी मेरा, खिन आवै तिल जावै।
जाकि संगत नानक रहेंदा, क्यूंकर मौंडा पावै।।

जब नानक जी ने देखा यह धाणक (जुलाहा) वही परमेश्वर है जिसके दर्शन सत्यलोक (सच्चखण्ड) में किए तथा बेई नदी पर हुए थे। वहाँ यह जिन्दा महात्मा के वेश में थे यहाँ धाणक (जुलाहे) के वेश में हैं। यह स्थान अनुसार अपना वेश बदल लेते हैं परन्तु स्वरूप (चेहरा) तो वही है। वही मोहिनी सूरत जो सच्चखण्ड में भी विराजमान था। वही करतार आज धाणक रूप में बैठा है। श्री नानक जी की खुशी का ठिकाना नहीं रहा। आँखों में आँसू भर गए।

तब श्री नानक जी अपने सच्चे स्वामी अकाल मूर्ति को पाकर चरणों में गिरकर सत्यनाम (सच्चानाम) प्राप्त किया। तब शान्ति पाई तथा अपने प्रभु की महिमा देश विदेश में गाई।

पहले श्री नानकदेव जी एक ओंकार(ओम) मन्त्र का जाप करते थे तथा उसी को सत मान कर कहा करते थे एक ओंकार। उन्हें बेई नदी पर कबीर साहेब ने दर्शन दे कर सतलोक(सच्चखण्ड) दिखाया तथा अपने सतपुरुष रूप को दिखाया। जब सतनाम का जाप दिया तब नानक जी की काल लोक से मुक्ति हुई। नानक जी ने कहा कि :

इसी का प्रमाण गुरु ग्रन्थ साहिब के राग ''सिरी'' महला 1 पष्ठ नं. 24 पर शब्द नं. 29

शब्द – एक सुआन दुई सुआनी नाल, भलके भौंकही सदा बिआल
कुड़ छुरा मुठा मुरदार, धाणक रूप रहा करतार।।1।।
मै पति की पंदि न करनी की कार। उह बिगड़ै रूप रहा बिकराल।।
तेरा एक नाम तारे संसार, मैं ऐहो आस एहो आधार।
मुख निंदा आखा दिन रात, पर घर जोही नीच मनाति।।
काम क्रोध तन वसह चंडाल, धाणक रूप रहा करतार।।2।।
फाही सुरत मलूकी वेस, उह ठगवाड़ा ठगी देस।।
खरा सिआणां बहुता भार, धाणक रूप रहा करतार।।3।।
मैं कीता न जाता हरामखोर, उह किआ मुह देसा दुष्ट चोर।
नानक नीच कह बिचार, धाणक रूप रहा करतार।।4।।

इसमें स्पष्ट लिखा है कि एक(मन रूपी) कुत्ता तथा इसके साथ दो (आशा-तष्णा रूपी) कुतिया अनावश्यक भौंकती(उमंग उठती) रहती हैं तथा सदा नई-नई आशाएँ उत्पन्न(ब्याती हैं) होती हैं। इनको मारने का तरीका(जो सत्यनाम तथा तत्त्व ज्ञान बिना) झूठा(कुड़) साधन(मुठ मुरदार) था। मुझे धाणक के रूप में हक्का कबीर (सत कबीर) परमात्मा मिला। उन्होंने मुझे वास्तविक उपासना बताई।

नानक जी ने कहा कि उस परमेश्वर(कबीर साहेब) की साधना बिना न तो पति(साख) रहनी थी और न ही कोई अच्छी करनी(भक्ति की कमाई) बन रही थी। जिससे काल का भयंकर रूप जो अब महसूस हुआ है उससे केवल कबीर साहेब तेरा एक(सत्यनाम) नाम पूर्ण संसार को पार(काल लोक से निकाल सकता है) कर सकता है। मुझे(नानक जी कहते हैं) भी एही एक तेरे नाम की आशा है व यही नाम मेरा आधार है। पहले अनजाने में बहुत निंदा भी की होगी क्योंकि काम क्रोध इस तन में चंडाल रहते हैं।

मुझे धाणक(जुलाहे का कार्य करने वाले कबीर साहेब) रूपी भगवान ने आकर सतमार्ग बताया तथा काल से छुटवाया। जिसकी सुरति(स्वरूप) बहुत प्यारी है मन को फंसाने वाली अर्थात् मन मोहिनी है तथा सुन्दर वेश-भूषा में(जिन्दा रूप में) मुझे मिले उसको कोई नहीं पहचान सकता। जिसने काल को भी ठग लिया अर्थात् दिखाई देता है धाणक(जुलाहा) फिर बन गया जिन्दा। काल भगवान भी भ्रम में पड़ गया भगवान(पूर्णब्रह्म) नहीं हो सकता। इसी प्रकार परमेश्वर कबीर साहेब अपना वास्तविक अस्तित्व छुपा कर एक सेवक बन कर आते हैं। काल या आम व्यक्ति पहचान नहीं सकता। इसलिए नानक जी ने उसे प्यार में ठगवाड़ा कहा है और साथ में कहा है कि वह धाणक(जुलाहा कबीर) बहुत समझदार है। दिखाई देता है कुछ परन्तु है बहुत महिमा(बहुता भार) वाला जो धाणक जुलाहा रूप में स्वयं परमात्मा पूर्ण ब्रह्म(सतपुरुष) आया है। प्रत्येक जीव को आधीनी समझाने के लिए अपनी भूल को स्वीकार करते हुए कि मैंने(नानक जी ने) पूर्णब्रह्म के साथ बहस(वाद-विवाद) की तथा उन्होनें (कबीर साहेब ने) अपने आपको भी (एक लीला करके) सेवक रूप में दर्शन दे कर तथा(नानक जी को) मुझको स्वामी नाम से सम्बोधित किया। इसलिए उनकी महानता तथा अपनी नादानी का पश्चाताप करते हुए श्री नानक जी ने कहा कि मैं(नानक जी) कुछ करने कराने योग्य नहीं था। फिर भी अपनी साधना को उत्तम मान कर भगवान से सम्मुख हुआ(ज्ञान संवाद किया)। मेरे जैसा नीच दुष्ट, हरामखोर कौन हो सकता है जो अपने मालिक पूर्ण परमात्मा धाणक रूप(जुलाहा रूप में आए करतार कबीर साहेब) को नहीं पहचान पाया? श्री नानक जी कहते हैं कि यह सब मैं पूर्ण सोच समझ से कह रहा हूँ कि परमात्मा यही धाणक (जुलाहा कबीर) रूप में है।

भावार्थ :- श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि यह फाँसने वाली अर्थात् मनमोहिनी शक्ल सूरत में तथा जिस देश में जाता है वैसा ही वेश बना लेता है, जैसे जिंदा महात्मा रूप में बेई नदी पर मिले, सतलोक में पूर्ण परमात्मा वाले वेश में तथा यहाँ उत्तर प्रदेश में धाणक(जुलाहे) रूप में स्वयं करतार (पूर्ण प्रभु) विराजमान है। आपसी वार्ता के दौरान हुई नोंक-झोंक को याद करके क्षमा याचना करते हुए अधिक भाव से कह रहे हैं कि मैं अपने सत्भाव से कह रहा हूँ कि यही धाणक(जुलाहे) रूप में सत्पुरुष अर्थात् अकाल मूर्त ही है।

दूसरा प्रमाण :- नीचे प्रमाण है जिसमें कबीर परमेश्वर का नाम स्पष्ट लिखा है। श्री गु.ग्र.पष्ठ नं. 721 राग तिलंग महला पहला में है।

और अधिक प्रमाण के लिए प्रस्तुत है ''राग तिलंग महला 1'' पंजाबी गुरु ग्रन्थ साहेब पष्ठ नं. 721 :-

यक अर्ज गुफतम पेश तो दर गोश कुन करतार। **हक्का कबीर** करीम तू बेएब परवरदिगार।।
दूनियाँ मुकामे फानी तहकीक दिलदानी। मम सर मुई अजराईल गिरफ्त दिल हेच न दानी।।
जन पिसर पदर बिरादराँ कस नेस्त दस्तं गीर। आखिर बयफ्तम कस नदारद चूँ शब्द तकबीर।।

शबरोज गशतम दरहवा करदेम बदी ख्याल। गाहे न नेकी कार करदम मम ई चिनी अहवाल।।
बदबख्त हम चु बखील गाफिल बेनजर बेबाक। नानक बुगोयद जनु तुरा तेरे चाकरा पाखाक।।

सरलार्थ :-- (कुन करतार) हे शब्द स्वरूपी कर्ता अर्थात् शब्द से सर्व संष्टि के रचनहार (गोश) निर्गुणी संत रूप में आए (करीम) दयालु (हक्का कबीर) सत कबीर (तू) आप (बेएब परवरदिगार) निर्विकार परमेश्वर हैं। (पेश तोदर) आपके समक्ष अर्थात् आपके द्वार पर (तहकीक) पूरी तरह जान कर (यक अर्ज गुफतम) एक हृदय से विशेष प्रार्थना है कि (दिलदानी) हे महबूब (दुनियां मुकामे) यह संसार रुपी ठिकाना (फानी) नाशवान है (मम सर मूई) जीव के शरीर त्यागने के पश्चात् (अजराईल) अजराईल नामक फरिश्ता यमदूत (गिरफ्त दिल हेच न दानी) बेरहमी के साथ पकड़ कर ले जाता है। उस समय (कस) कोई (दर्स्तं गीर) साथी (जन) व्यक्ति जैसे (पिसर) बेटा (पदर) पिता (बिरादरं) भाई चारा (नेर्स्तं) साथ नहीं देता। (आखिर बेफ्तम) अन्त में सर्व उपाय (तकबीर) फर्ज अर्थात् (कस) कोई क्रिया काम नहीं आती (नदारद चूं शब्द) तथा आवाज भी बंद हो जाती है (शबरोज) प्रतिदिन (गशतम) गसत की तरह न रूकने वाली (दर हवा) चलती हुई वायु की तरह (बदी ख्याल) बुरे विचार (करदेम) करते रहते हैं (नेकी कार करदम) शुभ कर्म करने का (मम ई चिनी) मुझे कोई (अहवाल) जरीया अर्थात् साधन (गाहे न) नहीं मिला (बदबख्त) ऐसे बुरे समय में (हम चु) हमारे जैसे (बखील) नादान (गाफील) ला परवाह (बेनजर बेबाक) भक्ति और भगवान का वास्तविक ज्ञान न होने के कारण ज्ञान नेत्र हीन था तथा ऊवा-बाई का ज्ञान कहता था। (नानक बुगोयद) नानक जी कह रहे हैं कि हे कबीर परमेश्वर आपकी कंपा से (तेरे चाकरां पाखाक) आपके सेवकों के चरणों की धूर डूबता हुआ (जनु तुरा) बंदा पार हो गया।

केवल हिन्दी अनुवाद :- हे शब्द स्वरूपी राम अर्थात् शब्द से सर्व संष्टि रचनहार दयालु ''सतकबीर'' आप निर्विकार परमात्मा हैं। आपके समक्ष एक हृदय से विनती है कि यह पूरी तरह जान लिया है हे महबूब यह संसार रूपी ठिकाना नाशवान है। हे दाता! इस जीव के मरने पर अजराईल नामक यम दूत बेरहमी से पकड़ कर ले जाता है कोई साथी जन जैसे बेटा पिता भाईचारा साथ नहीं देता। अन्त में सभी उपाय और फर्ज कोई क्रिया काम नहीं आता। प्रतिदिन गश्त की तरह न रूकने वाली चलती हुई वायु की तरह बुरे विचार करते रहते हैं। शुभ कर्म करने का मुझे कोई जरीया या साधन नहीं मिला। ऐसे बुरे समय कलियुग में हमारे जैसे नादान लापरवाह, सत मार्ग का ज्ञान न होने से ज्ञान नेत्र हीन था तथा लोकवेद के आधार से अनाप-सनाप ज्ञान कहता रहता था। नानक जी कहते हैं कि मैं आपके सेवकों के चरणों की धूर डूबता हुआ बन्दा नानक पार हो गया।

भावार्थ - श्री गुरु नानक साहेब जी कह रहे हैं कि हे हक्का कबीर (सत् कबीर)! आप निर्विकार दयालु परमेश्वर हो। आप से मेरी एक अर्ज है कि मैं तो सत्यज्ञान वाली नजर रहित तथा आपके सत्यज्ञान के सामने तो निरूत्तर अर्थात् जुबान रहित हो गया हूँ। हे कुल मालिक! मैं तो आपके दासों के चरणों की धूल हूँ, मुझे शरण में रखना।

इसके पश्चात् जब श्री नानक जी को पूर्ण विश्वास हो गया कि पूर्ण परमात्मा तो गीता ज्ञान दाता प्रभु से अन्य ही है। वही पूजा के योग्य है। पूर्ण परमात्मा की भक्ति तथा ज्ञान के विषय में गीता ज्ञान दाता प्रभु भी अनभिज्ञ है। परमेश्वर स्वयं ही तत्त्वदर्शी संत रूप से प्रकट होकर तत्त्वज्ञान को जन-जन को सुनाता है। जिस ज्ञान को वेद भी नहीं जानते वह तत्त्वज्ञान केवल पूर्ण परमेश्वर (सतपुरुष) ही स्वयं आकर ज्ञान करवाता है।

फिर प्रमाण है ''राग बसंत महला पहला'' पौड़ी नं. 3 आदि ग्रन्थ(पंजाबी) पृष्ठ नं. 1188

नानक हवमों शब्द जलाईया, सतगुरु साचे दरस दिखाईया।।

इस वाणी से भी अति स्पष्ट है कि नानक जी कह रहे हैं कि सत्यनाम (सत्यशब्द) से विकार-अहम्(अभिमान) जल गया तथा मुझे सच्चे सतगुरु ने दर्शन दिए अर्थात् मेरे गुरुदेव के दर्शन हुए। स्पष्ट है कि नानक जी को कोई सतगुरु आकार रूप में अवश्य मिला था। वह ऊपर तथा नीचे पूर्ण प्रमाणित है। स्वयं कबीर साहेब पूर्ण परमात्मा(अकाल मूर्त) स्वयं सच्चखण्ड से तथा दूसरे रूप में काशी बनारस से आकर प्रत्यक्ष दर्शन देकर सच्चखण्ड (सत्यलोक) भ्रमण करवा के सच्चा नाम उपदेश काशी (बनारस) में प्रदान किया।

आदरणीय गरीबदास जी महाराज {गाँव-छुड़ानी, जिला-झज्जर(हरियाणा)} को भी परमेश्वर कबीर जिन्दा महात्मा के रूप में जंगल में मिले थे। इसी प्रकार सतलोक दिखा कर वापिस छोड़ा था। परमेश्वर ने बताया कि मैंने ही श्री नानक जी तथा श्री दादू जी को पार किया था। जब श्री नानक जी ने पूर्ण परमात्मा को सतलोक में भी देखा तथा फिर बनारस (काशी) में जुलाहे का कार्य करते देखा तब उमंग में भरकर कहा था ''वाहेगुरु सत्यनाम'' वाहेगुरु-वाहेगुरु तथा इसी उपरोक्त वाक्य का उच्चारण करते हुए काशी से वापिस आए। जिसको श्री नानक जी के अनुयाईयों ने जाप मंत्र रूप में जाप करना शुरु कर दिया कि यह पवित्र मंत्र श्री नानक जी के मुख कमल से निकला था, परन्तु वास्तविकता को न समझ सके। अब उनसे कौन छुटाए, इस नाम के जाप को जो सही नहीं है। क्योंकि वास्तविक मंत्र को बोलकर नहीं सुनाया जाता। उसका सांकेतिक मंत्र 'सत्यनाम' है तथा वाहे गुरु कबीर परमेश्वर को कहा है।

इसी का प्रमाण संत गरीबदास साहेब ने अपने सद्ग्रन्थ साहेब में फुटकर साखी का अंग पृष्ठ न. 386 पर दिया है :-

गरीब, झांखी देख कबीर की, नानक कीती वाह। वाह सिक्खों के गल पड़ी, कौन छुटावै ताह।।

गरीब, हम सुलतानी नानक तारे, दादू कुं उपदेश दिया।
जाति जुलाहा भेद ना पाया, कांशी माहे कबीर हुआ।।

प्रमाण के लिए ''जीवन दस गुरु साहिबान'' पृष्ठ न. 42 से 44 तक
(लेखक - सोढी तेजा सिंघ जी) - (प्रकाशक - चतर सिंघ जीवन सिंघ)

बेई नदी में प्रवेश

"जीवन दस गुरु साहेब से ज्यों का त्यों सहाभार"

गुरु जी प्रत्येक प्रातः बेई नदी में जो कि शहर सुलतानपुर के पास ही बहती है, स्नान करने के लिए जाते थे। एक दिन जब आपने पानी में डुबकी लगाई तो फिर बाहर न आए। कुछ समय ऊपरान्त आप जी के सेवक ने, जो कपड़े पकड़ कर नदी के किनारे बैठा था, घर जाकर जै राम जी को खबर सुनाई कि नानक जी डूब गए हैं तो जै राम जी तैराकों को साथ लेकर नदी पर गए। आप जी को बहुत ढूंढा किन्तु आप नहीं मिले। बहुत देखने के पश्चात् सब लोग अपने घर चले गए।

भाई जैराम जी के घर बहुत चिन्ता और दुःख प्रकट किया जा रहा था कि तीसरे दिन सवेरे ही एक स्नान करने वाले भक्त ने घर आकर बहिन जी को बताया कि आपका भाई नदी के किनारे बैठा है। यह सुनकर भाईआ जैराम जी बेई की तरफ दौड़ पड़े और जब जब पता चलता गया और बहुत से लोग भी

वहाँ पहुँच गए। जब इस तरह आपके चारों तरफ लोगों की भीड़ लग गई आप जी चुपचाप अपनी दुकान पहुँच गए। आप जी के साथ स्त्री और पुरूषों की भीड़ दुकान पर आने लगी। लोगों की भीड़ देख कर गुरु जी ने मोदीखाने का दरवाजा खोल दिया और कहा जिसको जिस चीज की जरूरत है वह उसे ले जाए। मोदीखाना लुटाने के पश्चात् गुरु जी फकीरी चोला पहन कर शमशानघाट में जा बैठे। मोदीखाना लुटाने और गुरु जी के चले जाने की खबर जब नवाब को लगी तो उसने मुंशी द्वारा मोदीखाने की किताबों का हिसाब जैराम को बुलाकर पड़ताल करवाया। हिसाब देखने के पश्चात् मुंशी ने बताया कि गुरु जी के सात सौ साठ रूपये सरकार की तरफ अधिक हैं। इस बात को सुनकर नवाब बहुत खुश हुआ। उसने गुरु जी को बुलाकर कहा कि उदास न हो। अपना फालतू पैसा और मेरे पास से ले कर मोदीखाने का काम जारी रखें। पर गुरु जी ने कहा अब हमने यह काम नहीं करना हमें कुछ और काम करने का भगवान् की तरफ से आदेश हुआ है। नवाब ने पूछा क्या आदेश हुआ है ? तब गुरु जी ने मूल–मंत्र उच्चारण किया।

1 ओंकार सतिनामु करता पुरखु निरभउ निरवैरू
अकाल मूरति अजूनी सब गुरप्रसादि।

नवाब ने पूछा कि यह आदेश आपके भगवान् ने कब दिया ? गुरु जी ने बताया कि जब हम बेई में स्नान करने गए थे तो वहाँ से हम सच्चखण्ड अपने स्वामी के पास चले गए थे वहाँ हमें आदेश हुआ कि नानक जी यह मंत्र आप जपो और बाकियों को जपा कर कलयुग के लोगों को पार लगाओ। इसलिए अब हमें अपने मालिक के इस हुक्म की पालना करनी है। इस सन्दर्भ को भाई गुरदास जी वार 1 पउड़ी 24 में लिखते हैं–

बाबा पैधा सचखण्ड नउनिधि नाम गरीबी पाई।।

अर्थात्–बाबा नानक जी सचखण्ड गए। वहाँ आप को नौनिधियों का खजाना नाम और निर्भयता प्राप्त हुई। यहाँ बेई किनारे जहाँ गुरु जी बेई से बाहर निकल कर प्रकट हुए थे, गुरु द्वारा संत घाट अथवा गुरुद्वारा बेर साहिब, बहुत सुन्दर बना हुआ है। इस स्थान पर ही गुरु जी प्रातः स्नान करके कुछ समय के लिए भगवान् की तरफ ध्यान करके बैठते थे।

जीवन दस गुरु साहेब नामक पुस्तक से लेख समाप्त

''भाई बाले वाली जन्म साखी में अद्भुत प्रमाण''

भाई बाले वाली ''जन्म साखी'' एक मान्य ग्रन्थ है जो गुरु ग्रन्थ की तरह ही सत्यज्ञान का प्रतीक माना जाता है जिसके ज्ञान को सिक्ख समाज परम सत्य मानता है क्योंकि यह जन्म साखी भाई बाला जी द्वारा आँखों देखा कानों सुना ज्ञान है जो श्री नानक देव साहेब जी ने बोला था तथा बाला जी ने बताया तथा दूसरे गुरू श्री अंगद जी ने लिखा था। जन्म साखी के पृष्ठ 299-300 पर ''साखी कूना पर्वत की चली'' में ''गोष्टि सिद्धां नाल होई'' है। इसमें प्रकरण है कि श्री गुरू नानक जी कूना पर्वत पर गए। उनके साथ भाई बाला जी तथा मर्दाना जी थे। कूना पर्वत की गुफा में कुछ सिद्ध पुरूष नाथ पंथ के रहते थे। उनके साथ ज्ञान गोष्ठी में श्री नानक जी ने प्रश्न के उत्तर में कहा था कि "ऐकंकार हमारा नाबं अपने गुरू की बलि जाऊँ।" **(मर्दाने ने पूछा कि हे गुरू जी! क्या आपका भी कोई गुरू जी है?) तब नानक जी ने कहा कि हे मर्दाना! मेरा इतना बड़ा गुरू है जो बिना करतार की कृपा के अपनी दृष्टि में नहीं आता।**

इससे आगे ''साखी और चली'' मीना पर्वत चले गए। तब मर्दाने ने पूछा कि हे गुरू जी! हम

तो आपके साथ ही रहे हैं। आप जी को वह गुरू जी कब मिला था? गुरू नानक जी ने उत्तर दिया कि उस समय तक तुम मेरे पास नहीं आए थे। जब हम मिलने गए थे। तब मर्दाने ने कहा कि जी! कब मिलने गए थे? तब श्री नानक जी ने कहा कि जब सुल्तानपुर में बेई नदी में डुबकी लगाई थी। तब तीन दिन उसी के साथ रहे थे। हे मर्दाना! भाई बाला जानता है। हे मर्दाना! ऐसा गुरू है जिसकी सत्ता संपूर्ण संसार में आश्रय दे रही है। उसको जिन्दा बाबा कहते हैं। हे मर्दाना! जिन्दा उसी को कहते हैं जो काल के आधीन न आवै। अपितु काल उसके आधीन है।

श्री नानक जी का गुरू था, अन्य प्रमाण :-

''साखी कंधार देश की चली'' जन्म साखी के पृष्ठ 470-471 पर :-

एक मुगल पठान ने पूछा कि आपका गुरू कौन है? श्री नानक जी ने उत्तर दिया कि जिन्दा पीर है। वह परमेश्वर ही गुरू रूप में आया था। उसका शिष्य सारा जहाँ है। फिर ''साखी रूकनदीन काजी के साथ होई'' जन्म साखी के पृष्ठ 183 पर कुछ वाणी इस प्रकार हैं :-

नानके आखे रूकनदीन सच्चा सुणहू जवाब। खालक आदम सिरजिया आलम बड़ा कबीर।
कायम दायम कुदरती सिर पिरां दे पीर। सजदे करे खुदाई नू आलम बड़ड़ा कबीर।।

भावार्थ :- श्री नानक जी ने कहा है कि रूकनदीन काजी! जिस खुदा ने आदम जी की उत्पत्ति की है। वह बड़ा परमात्मा कबीर है। वह ही पृथ्वी पर सतगुरू की भूमिका करता है। वह सिर पीरां दे पीर यानि सब गुरूओं का सिरताज है। सब से उत्तम ज्ञान रखता है। वह कायम यानि श्रेष्ठ दायम यानि समर्थ परमात्मा (कुदरती) है। मुसलमान अल्लाह कबीर कहते हैं। कबीर का अर्थ बड़ा करके बड़ा अल्लाह अर्थ करते हैं। श्री नानक जी ने यह भी स्पष्ट कर दिया है कि वह बड़ा आलम कबीर है। मुसलमान जिसे अल्लाह कबीर कहते हैं यानि बड़ा अल्लाह कहते हैं। जन्म साखी में कबीर तथा बड़ा दोनों शब्द लिखे हैं जिससे कबीर का अर्थ कबीर ही रहेगा तथा बड़ा शब्द भी रहेगा। इसलिए स्पष्ट हुआ कि बड़ा परमात्मा कबीर है। वह बड़ा आलम कबीर है जो धाणक रूप में काशी में लीला करके गया है जिसका प्रमाण श्री गुरु ग्रन्थ साहिब जी के पृष्ठ 24, 721, 731 पर पूर्व में लिख दिया है। उसमें स्पष्ट है तथा कबीर सागर पवित्र ग्रन्थ भी भाई बाला जी ने जैसे प्रत्यक्ष सुना लिखा है, ऐसे ही धनी धर्मदास जी ने परमेश्वर कबीर जी से सुना ज्ञान लिखा है।

"पवित्र कबीर सागर में प्रमाण"

❖ विशेष विचार :- पूरे गुरु ग्रन्थ साहेब में कहीं प्रमाण नहीं है कि श्री नानक जी, परमेश्वर कबीर जी के गुरु जी थे। जैसे गुरु ग्रन्थ साहेब आदरणीय तथा प्रमाणित है, ऐसे ही पवित्र कबीर सागर भी आदरणीय तथा प्रमाणित सद्ग्रन्थ है तथा श्री गुरुग्रन्थ साहेब से पहले का है। इसीलिए तो सैंकड़ों वाणी 'कबीर सागर' सद्ग्रन्थ से गुरु ग्रन्थ साहिब में ली गई हैं।

पवित्र कबीर सागर में विस्तृत विवरण है नानक जी तथा परमेश्वर कबीर साहेब जी की वार्ता का तथा श्री नानक जी के पूज्य गुरुदेव कबीर परमेश्वर जी थे। कृपया निम्न पढ़ें।

विशेष प्रमाण के लिए कबीर सागर (स्वसमबेदबोध) पृष्ठ न. 158 से 159 से सहाभार :-

नानकशाह कीन्हा तप भारी। सब विधि भये ज्ञान अधिकारी।।
भक्ति भाव ताको समिझाया। ता पर सतगुरु कीनो दाया।।

जिंदा रूप धरयो तब भाई। हम पंजाब देश चलि आई।।
अनहद बानी कियौ पुकारा। सुनि कै नानक दरश निहारा।।
सुनि के अमर लोक की बानी। जानि परा निज समरथ ज्ञानी।।

नानक वचन

आवा पुरूष महागुरु ज्ञानी। अमरलोकी सुनी न बानी।।
अर्ज सुनो प्रभु जिंदा स्वामी। कहँ अमरलोक रहा निजधामी।।
काहु न कही अमर निजबानी। धन्य कबीर परमगुरु ज्ञानी।।
कोई न पावै तुमरो भेदा। खोज थके ब्रह्मा चहुँ वेदा।।

जिन्दा वचन

नानक तुम बहुतै तप कीना। निरंकार बहुते दिन चीन्हा।।
निरंकारते पुरूष निनारा। अजर द्वीप ताकी टकसारा।।
पुरूष बिछोह भयौ तव(त्व) जबते। काल कठिन मग रोंक्यौ तबते।।
इत तव(त्व) सरिस भक्त नहिं होई। क्यों कि परमपुरूष न भेटेंउ कोई।।
जबते हमते बिछुरे भाई। साठि हजार जन्म भक्त तुम पाई।।
धरि धरि जन्म भक्ति भलकीना। फिर काल चक्र निरंजन दीना।।
गहु मम शब्द तो उतरो पारा। बिन सत शब्द लहै यम द्वारा।।
तुम बड़ भक्त भवसागर आवा। और जीवकी कौन चलावा।।
निरंकार सब सृष्टि भुलावा। तुम करि भक्तिलौटि क्यों आवा।।

नानक वचन

धन्य पुरूष तुम यह पद भाखी। यह पद हमसे गुप्त कह राखी।।
जबलों हम तुमको नहिं पावा। अगम अपार भर्म फैलावा।।
कहो गोसाँई हमते ज्ञाना। परमपुरूष हम तुमको जाना।।
धनि जिंदा प्रभु पुरूष पुराना। बिरले जन तुमको पहिचाना।।

जिन्दा वचन

भये दयाल पुरूष गुरु ज्ञानी। दियो पान परवाना बानी।।
भली भई तुम हमको पावा। सकलो पंथ काल को ध्यावा।।
तुम इतने अब भये निनारा। फेरि जन्म ना होय तुम्हारा।।
भली सुरति तुम हमको चीन्हा। अमर मंत्र हम तुमको दीन्हा।।
स्वसमवेद हम कहि निज बानी। परमपुरूष गति तुम्हैं बखानी।।

नानक वचन

धन्य पुरूष ज्ञानी करतारा। जीवकाज प्रकटे संसारा।।
धनि (धन्य) करता तुम बंदी छोरा। ज्ञान तुम्हार महाबल जोरा।।
दिया नाम दान किया उबारा। नानक अमरलोक पग धारा।।

भावार्थ :- परम पूज्य कबीर प्रभु एक जिन्दा महात्मा का रूप बना कर श्री नानक जी से मिलने पंजाब में गए तब श्री नानक साहेब जी से वार्ता हुई। तब परमेश्वर कबीर जी ने कहा कि आप जैसी पुण्यात्मा जन्म-मत्यु का कष्ट भोग रहे हो फिर आम जीव का कहाँ ठिकाना है? जिस निरंकार को

आप प्रभु मान कर पूज रहे हो पूर्ण परमात्मा तो इससे भी भिन्न है। वह मैं ही हूँ। जब से आप मेरे से बिछुड़े हो साठ हजार जन्म तो अच्छे-2 उच्च पद भी प्राप्त कर चुके हो (जैसे सतयुग में यही पवित्र आत्मा राजा अम्ब्रीष तथा त्रेतायुग में राजा जनक(जो सीता जी के पिता जी थे) हुए तथा कलियुग में श्री नानक साहेब जी हुए।) फिर भी जन्म मत्यु के चक्र में ही हो। मैं आपको सतशब्द अर्थात् सच्चा नाम जाप मन्त्र बताऊँगा उससे आप अमर हो जाओगे। श्री नानक साहेब जी ने प्रभु कबीर से कहा कि आप बन्दी छोड़ भगवान हो, आपको कोई बिरला सौभाग्यशाली व्यक्ति ही पहचान सकता है।

कबीर सागर के अध्याय ''अगम निगम बोध'' में पष्ठ नं. 44 पर शब्द है :-

।।नानक वचन।।

।।शब्द।।

वाह वाह कबीर गुरु पूरा है।
पूरे गुरु की मैं बलि जावाँ जाका सकल जहूरा है।।
अधर दुलिच परे है गुरुनके शिव ब्रह्मा जह शूरा है।।
श्वेत ध्वजा फहरात गुरुनकी बाजत अनहद तूरा है।।
पूर्ण कबीर सकल घट दरशै हरदम हाल हजूरा है।।
नाम कबीर जपै बड़भागी नानक चरण को धूरा है।।

❖ विशेष विवेचन :- बाबा नानक जी ने उस कबीर जुलाहे (धाणक) काशी वाले को सत्यलोक (सच्चखण्ड) में आँखों देखा तथा फिर काशी में धाणक (जुलाहे) का कार्य करते हुए तथा बताया कि वही धाणक रूप (जुलाहा) सत्यलोक में सत्यपुरुष रूप में भी रहता है तथा यहाँ भी वही है।

आदरणीय श्री नानक साहेब जी का आविर्भाव सन् 1469 तथा सतलोक वास सन् 1539 ''पवित्र पुस्तक जीवनी दस गुरु साहिबान''। आदरणीय कबीर साहेब जी धाणक रूप में मतमण्डल में सन् 1398 में सशरीर प्रकट हुए तथा सशरीर सतलोक गमन सन् 1518 में ''पवित्र कबीर सागर''। दोनों महापुरुष 49 वर्ष तक समकालीन रहे। श्री गुरु नानक साहेब जी का जन्म पवित्र हिन्दू धर्म में हुआ। प्रभु प्राप्ति के बाद कहा कि ''न कोई हिन्दू न मुसलमाना'' अर्थात् अज्ञानतावश दो धर्म बना बैठे। सर्व एक परमात्मा सतपुरुष के बच्चे हैं। श्री नानक देव जी ने कोई धर्म नहीं बनाया, बल्कि धर्म की बनावटी जंजीरों से मानव को मुक्त किया तथा शिष्य परम्परा चलाई। जैसे गुरुदेव से नाम दीक्षा लेने वाले भक्तों को शिष्य बोला जाता है, उन्हें पंजाबी भाषा में सिक्ख कहने लगे। जैसे आज इस दास के लाखों शिष्य हैं, परन्तु यह धर्म नहीं है। सर्व पवित्र धर्मों की पुण्यात्माएँ आत्म कल्याण करवा रही हैं। यदि आने वाले समय में कोई धर्म बना बैठे तो वह दुर्भाग्य ही होगा। भेदभाव तथा संघर्ष की नई दीवार ही बनेगी, परन्तु लाभ कुछ नहीं होगा।

गवाह नं 6 :- संत घीसा दास जी गाँव-खेखड़ा जिला-बागपत, उत्तर प्रदेश (भारत) :- इनको छः वर्ष की आयु में कबीर परमेश्वर जी मिले थे। पूरा गाँव खेखड़ा गवाह है। संत घीसा जी ने बताया कि मैंने परमेश्वर कबीर जी के साथ ऊपर सतलोक में जाकर देखा था। जो काशी में जुलाहे का कार्य करता था, वह पूर्ण परमात्मा है। सारी सष्टि का सजनकर्ता है। असंख्य ब्रह्मण्डों का मालिक है।

पुस्तक विस्तार को मध्यनजर रखते हुए अधिक विस्तार नहीं कर रहा हूँ, अधिक जानकारी के लिए www.jagatgururampalji.org से खोलकर अधिक ज्ञान ग्रहण कर सकते हैं।

वेदों का ज्ञान कबीर जी पर खरा उतरता है :-

हिन्दू धर्म के व्यक्ति चारों वेदों (ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद तथा अथर्ववेद) के ज्ञान को सत्य मानते हैं। वेदों में परमेश्वर की महिमा बताई है। परमेश्वर की पहचान भी बताई है। बताया है कि सष्टि की उत्पत्ति करने वाला परमेश्वर साकार यानि नराकार है। आसमान में बने लोक (सतलोक = ऋतधाम) में निवास करता है। वहाँ से सशरीर चलकर पथ्वी आदि लोक-लोकान्तरों में आता है। सतलोक में परमेश्वर के शरीर का तेज असंख्यों सूर्यों के तेज (प्रकाश) से भी अधिक है। यदि उसी तेजोमय शरीर में यहाँ आए तो सबकी आँखें बंद हो जाएँ। कोई भी नहीं देख सकेगा। इसलिए परमेश्वर अपने शरीर को सरल करके यानि हल्के तेज का करके पथ्वी आदि लोकों में आता है। अच्छी आत्माओं को मिलता है। उनको यथार्थ अध्यात्म ज्ञान बताता है। सत्य भक्ति के नामों का आविष्कार करता है। अपने मुख से वाणी बोलकर मानव को भक्ति की प्रेरणा करता है। ये सब लीला कबीर जी ने की थी। वेद भी प्रमाणित करते हैं कि कबीर जी परमेश्वर हैं।

वेदों से जानते हैं परम अक्षर ब्रह्म कौन है?

यहाँ पर वेदों के मंत्रों की कुछ फोटोकॉपी लगाई हैं जिनका अनुवाद आर्य समाज के आचार्यों, शास्त्रियों ने किया है। कुछ ठीक, कुछ गलत है। परंतु सत्य फिर भी स्पष्ट है।

वेद मंत्रों में कहा है कि सष्टि का उत्पत्तिकर्ता ''परम अक्षर ब्रह्म'' यानि ''सत्यपुरूष'' आकाश में बने सनातन परम धाम यानि सत्यलोक में निवास करता है। एक सिंहासन पर विराजमान है। उसके सिर के ऊपर मुकट तथा छत्र लगे हैं। परमेश्वर देखने में राजा के समान है। परमेश्वर वहाँ से चलकर नीचे के लोक में पथ्वी आदि पर चलकर (गति करके) आता है। अच्छी आत्माओं को मिलता है। उनको यथार्थ अध्यात्म ज्ञान बताता है। अपने मुख से वाणी बोल-बोलकर भक्ति करने की प्रेरणा करता है। साधना के सत्य नामों का आविष्कार करता है। प्रत्येक युग में एक बार ऐसी लीला करते हुए शिशु रूप धारण करके कमल के फूल पर निवास करता है। वहाँ से बाल परमेश्वर को निःसंतान दम्पति उठा ले जाते हैं। बाल भगवान की परवरिश कंवारी गायों द्वारा होती है। बड़ा होकर तत्त्वज्ञान का प्रचार करता है। अपने मुख से वाणी उच्चारण करता है। दोहों, चौपाईयों, शब्दों के माध्यम से अपनी जानकारी की वाणी उच्चारण करता है जिसको (कविर्गिर्भीः) कबीर वाणी कहा जाता है तथा इसी कारण से प्रसिद्ध कवि की भी पदवी प्राप्त करता है यानि उसको कवि कहा जाता है। जिस पर वेदों में कहे लक्षण खरे उतरते हैं। वही सष्टि का उत्पत्ति कर्ता तथा सबका धारण-पोषण कर्ता है। अन्य नहीं हो सकता। ये लक्षण केवल कबीर जुलाहे (काशी वाले) पर खरे उतरते हैं। इसलिए परम अक्षर ब्रह्म कबीर जी हैं। इन वेद मंत्रों के बाद चारों युगों में परमेश्वर कबीर जी का लीला करने आने का संक्षिप्त वर्णन है। उसे पढ़कर जान जाओगे कि वेदों में कबीर परमेश्वर जी का वर्णन है। कबीर परमेश्वर जी ने भी कहा है :-

बेद मेरा भेद है, मैं ना बेदन के मांही। जौन बेद से मैं मिलूं, बेद जानते नांही।।

अर्थात् कबीर जी ने स्पष्ट किया है कि चारों वेद मेरी महिमा बताते हैं। परंतु इन वेदों में मेरी प्राप्ति की भक्ति विधि नहीं क्योंकि काल ब्रह्म ने वह यथार्थ भक्ति के मंत्र निकाल दिए थे। मेरी प्राप्ति का ज्ञान जिस सूक्ष्म वेद में है, उसका ज्ञान वेदों में अंकित नहीं है।

कृपया पढ़ें वेद मंत्रों की फोटोकॉपी तथा दास (रामपाल दास) के द्वारा किया गया विश्लेषण, इनके बाद परमेश्वर कबीर जी का चारों युगों में सतलोक सिंहासन से गति करके आने का प्रकरण।

(देखें फोटोकापी वेदमन्त्रों की)

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 86 मन्त्र 26-27)

इन्दुः पुनानो अति गाहते मृधो विश्वानि कृण्वन्त्सुपथानि यज्यवे ।
गाः कृण्वानो निर्णिजं हर्यतः कविरत्यो न क्रीळन्परि वारमर्षति ।।२६।।

पदार्थः—(यज्यवे) यज्ञ करने वाले यजमानों के लिये परमात्मा (विश्वानि सुपथानि) सब रास्तों को (कृण्वन्) सुगम करता हुआ (मृधः) उनके विघ्नों को (अतिगाहते) मर्द्दन करता है। और (पुनानः) उनको पवित्र करता हुआ और (निर्निजं) अपने रूप को (गाः कृण्वानः) सरल करता हुआ (हर्य्यतः) वह कान्तिमय परमात्मा (कविः) सर्वज्ञ (अत्यो न) विद्युत् के समान (क्रीळन्) क्रीड़ा करता हुआ (वारं) वरणीय पुरुष को (पर्य्यर्षति) प्राप्त होता है ।।२६।।

❖ विवेचन :- यह फोटोकापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 मन्त्र 26 की है जो आर्यसमाज के आचार्यों व महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा अनुवादित है जिसमें स्पष्ट है कि यज्ञ करने वाले अर्थात् धार्मिक अनुष्ठान करने वाले यजमानों अर्थात् भक्तों के लिए परमात्मा, सब रास्तों को सुगम करता हुआ अर्थात् जीवन रूपी सफर के मार्ग को दुःखों रहित करके सुगम बनाता हुआ। उनके विघ्नों अर्थात् संकटों का मर्दन करता है अर्थात् समाप्त करता है। भक्तों को पवित्र अर्थात् पाप रहित, विकार रहित करता है। जैसा की अगले मन्त्र 27 में कहा है कि ''जो परमात्मा द्यूलोक अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है, वहाँ पर परमात्मा के शरीर का प्रकाश बहुत अधिक है।''

उदाहरण के लिए परमात्मा के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्य तथा इतने ही चन्द्रमाओं के मिले-जुले प्रकाश से भी अधिक है। यदि वह परमात्मा उसी प्रकाश युक्त शरीर से पृथ्वी पर प्रकट हो जाए तो हमारी चर्म दृष्टि उन्हें देख नहीं सकती। जैसे उल्लु पक्षी दिन में सूर्य के प्रकाश के कारण कुछ भी नहीं देख पाता है। यही दशा मनुष्यों की हो जाए। इसलिए वह परमात्मा अपने रूप अर्थात् शरीर के प्रकाश को सरल करता हुआ उस स्थान से जहाँ परमात्मा ऊपर रहता है, वहाँ से गति करके बिजली के समान क्रीड़ा अर्थात् लीला करता हुआ चलकर आता है, श्रेष्ठ पुरूषों को मिलता है।

यह भी स्पष्ट है कि आप कविः अर्थात् कविर्देव हैं। हम उन्हें कबीर साहेब कहते हैं।

असश्चतः शतधारा अभिश्रियो हरिं नवन्तेऽव ता उदन्युवः ।
क्षिपो मृजन्ति परि गोभिरावृतं तृतीये पृष्ठे अधि रोचने दिवः ॥२७॥

पदार्थः—(उदन्युवः) प्रेम की (ताः) वे (शतधाराः) सैंकड़ों धाराए (असश्चतः) जो नानारूपों में (अभिश्रियः) स्थिति को लाभ कर रही हैं । वे (हरिं) परमात्मा को (अवनवन्ते) प्राप्त होती हैं । (गोभिरावृतं) प्रकाशपुञ्ज परमात्मा को (क्षिपः) बुद्धिवृत्तियां (मृजन्ति) विषय करती हैं । जो परमात्मा (दिवस्तृतीये पृष्ठे) द्युलोक के तीसरे पृष्ठ पर विराजमान है और (रोचने) प्रकाशस्वरूप है उसको बुद्धिवृत्तियाँ प्रकाशित करती हैं ॥२७॥

❖ विवेचन :- यह फोटोकापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 के मन्त्र 27 की है। इसमें स्पष्ट है कि ''परमात्मा द्यूलोक अर्थात् अमर लोक के तीसरे पष्ठ अर्थात् भाग पर विराजमान है। सत्यलोक अर्थात् शाश्वत् स्थान के तीन भाग हैं। एक भाग में वन-पहाड़-झरने, बाग-बगीचे आदि हैं। यह बाह्य भाग है अर्थात् बाहरी भाग है। (जैसे भारत की राजधानी दिल्ली भी तीन भागों में बँटी है। बाहरी दिल्ली जिसमें गाँव खेत-खलिहान और नहरें हैं, दूसरा बाजार बना है। तीसरा संसद भवन तथा कार्यालय हैं।)

इसके पश्चात् द्यूलोक में बस्तियाँ हैं। सपरिवार मोक्ष प्राप्त हंसात्माऐं रहती हैं। (पथ्वी पर जैसे भक्त को भक्तात्मा कहते हैं, इसी प्रकार सत्यलोक में हंसात्मा कहलाते हैं।) (3) तीसरे भाग में सर्वोपरि परमात्मा का सिंहासन है। उसके आस-पास केवल नर आत्माऐं रहती हैं, वहाँ स्त्री-पुरुष का जोड़ा नहीं है। वे यदि अपना परिवार चाहते हैं तो शब्द (वचन) से केवल पुत्र उत्पन्न कर लेते हैं।

इस प्रकार शाश्वत् स्थान अर्थात् सत्यलोक तीन भागों में परमात्मा ने बाँट रखा है। वहाँ यानि सत्यलोक में प्रत्येक स्थान पर रहने वालों में वद्धावस्था नहीं है, वहाँ मत्यु नहीं है। इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 29 में कहा है कि जो जरा अर्थात् वद्ध अवस्था तथा मरण अर्थात् मत्यु से छूटने का प्रयत्न करते हैं, वे तत् ब्रह्म अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म को जानते हैं। सत्यलोक में सत्यपुरूष रहता है, वहाँ पर जरा-मरण नहीं है, बच्चे युवा होकर सदा युवा रहते हैं।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 82 मन्त्र 1-2)

असावि सोमो अरुषो वृषा हरी राजेव दस्मो अभि गा अचिक्रदत् ।
पुनानो वारं पर्येत्यव्ययं श्येनो न योनिं घृतवन्तमासदम् ॥१॥

पदार्थः—(सोमः) जो सर्वोत्पादक प्रभु(अरुषः) प्रकाशस्वरूप (वृषा) सद्गुणों की वृष्टि करने वाला (हरिः) पापों के हरण करने वाला है, वह (राजेव) राजा के समान (दस्मः) दर्शनीय है। और वह (गाः) पृथिव्यादि लोक-लोकान्तरों के चारों ओर (अभि अचिक्रदत्) शब्दायमान हो रहा है। वह (वारं) वरणीय पुरुष को जो (अव्ययं) दृढ़भक्त है उसको (पुनानः) पवित्र करता हुआ (पर्य्येति) प्राप्त होता है। (न) जिस प्रकार (श्येनः) विद्युत् (घृतवन्तं) स्नेहवाले (आसदं) स्थानों को (योनिं) आधार बनाकर प्राप्त होता है। इसी प्रकार उक्त गुण वाले परमात्मा ने (असावि) इस ब्रह्माण्ड को उत्पन्न किया ॥१॥

कविर्वेधस्या पर्येषि माहिनमत्यो न मृष्टो अभि वाजमर्षसि ।
अपसेधन्दुरिता सोम मृळय घृतं वसानः परि यासि निर्णिजम् ॥२॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (**वेधस्या**) उपदेश करने की इच्छा से आप (**माहिनं**) महापुरुषों को (**पर्येषि**) प्राप्त होते हो । और आप (**अत्यः**) अत्यन्त गतिशील पदार्थ के (**न**) समान (**अभिवाजं**) हमारे आध्यात्मिक यज्ञ को (**अभ्यर्षसि**) प्राप्त होते हैं । आप (**कविः**) सर्वज्ञ हैं (**मृष्टः**) शुद्ध स्वरूप हैं (**दुरिता**) हमारे पापों को (**अपसेधन्**) दूर करके (**सोम**) हे सोम ! (**मृळय**) आप हमको सुख दें । और (**घृतं वसानः**) प्रेम-भाव को उत्पन्न करते हुए (**निर्निजं**) पवित्रता को (**परियासि**) उत्पन्न करें ॥२॥

❖ **विवेचन :- ऊपर ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 1-2 की फोटोकापी हैं, यह अनुवाद महर्षि दयानन्द जी के दिशा-निर्देश से उन्हीं के चेलों ने किया है और सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली से प्रकाशित है।**

इनमें स्पष्ट है कि :- मन्त्र 1 में कहा है ''सर्व की उत्पत्ति करने वाला परमात्मा तेजोमय शरीर युक्त है, पापों को नाश करने वाला और सुखों की वर्षा करने वाला अर्थात् सुखों की झड़ी लगाने वाला है, वह ऊपर सत्यलोक में सिंहासन पर बैठा है जो देखने में राजा के समान है।

यही प्रमाण सूक्ष्मवेद में है कि :-

अर्श कुर्श पर सफेद गुमट है, जहाँ परमेश्वर का डेरा।
श्वेत छत्र सिर मुकुट विराजे, देखत न उस चेहरे नूं।।

यही प्रमाण बाईबल ग्रन्थ तथा कुर्आन् शरीफ में है कि परमात्मा ने छः दिन में सष्टि रची और सातवें दिन ऊपर आकाश में तख्त अर्थात् सिंहासन पर जा विराजा। (बाईबल के उत्पत्ति ग्रन्थ 2/26-30 तथा कुर्आन् शरीफ की सुर्त ''फुर्कानि 25 आयत 52 से 59 में है।)

वह परमात्मा अपने अमर धाम से चलकर पथ्वी पर शब्द वाणी से ज्ञान सुनाता है। वह वर्णीय अर्थात् आदरणीय श्रेष्ठ व्यक्तियों को प्राप्त होता है, उनको मिलता है। {जैसे 1. सन्त धर्मदास जी बांधवगढ(मध्य प्रदेश वाले को मिले) 2. सन्त मलूक दास जी को मिले, 3. सन्त दादू दास जी को आमेर (राजस्थान) में मिले 4. सन्त नानक देव जी को मिले 5. सन्त गरीब दास जी गाँव छुड़ानी जिला झज्जर हरियाणा वाले को मिले 6. सन्त घीसा दास जी गाँव खेखड़ा जिला बागपत (उत्तर प्रदेश) वाले को मिले 7. सन्त जम्भेश्वर जी (बिश्नोई धर्म के प्रवर्तक) को गाँव समराथल राजस्थान वाले को मिले}

वह परमात्मा अच्छी आत्माओं को मिलते हैं। जो परमात्मा के दढ़ भक्त होते हैं, उन पर परमात्मा का विशेष आकर्षण होता है। उदाहरण भी बताया है कि जैसे विद्युत अर्थात् आकाशीय बिजली स्नेह वाले स्थानों को आधार बनाकर गिरती है। जैसे कांसी धातु पर बिजली गिरती है, पहले कांसी धातु के कटोरे, गिलास-थाली, बेले आदि-आदि होते थे। वर्षा के समय तुरन्त उठाकर घर के अन्दर रखा करते थे। वद्ध कहते थे कि कांसी के बर्तन पर बिजली अमूमन गिरती है, इसी प्रकार परमात्मा अपने प्रिय भक्तों पर आकर्षित होकर मिलते हैं।

मन्त्र नं. 2 में तो यह भी स्पष्ट किया है कि परमात्मा उन अच्छी आत्माओं को उपदेश करने

की इच्छा से स्वयं महापुरूषों को मिलते हैं। उपदेश का भावार्थ है कि परमात्मा तत्वज्ञान बताकर उनको दीक्षा भी देते हैं। उनके सतगुरू भी स्वयं परमात्मा होते हैं। यह भी स्पष्ट किया है कि परमात्मा अत्यन्त गतिशील पदार्थ अर्थात् बिजली के समान तीव्रगामी होकर हमारे धार्मिक अनुष्ठानों में आप पहुँचते हैं। आप जी ने पीछे पढ़ा कि सन्त धर्मदास को परमात्मा ने यही कहा था कि मैं वहाँ पर अवश्य जाता हूँ जहाँ धार्मिक अनुष्ठान होते हैं क्योंकि मेरी अनुपस्थिति में काल कुछ भी उपद्रव कर देता है। जिससे साधकों की आस्था परमात्मा से छूट जाती है। मेरे रहते वह ऐसी गड़बड़ नहीं कर सकता। इसीलिए गीता अध्याय 3 श्लोक 15 में कहा है कि वह अविनाशी परमात्मा जिसने ब्रह्म को भी उत्पन्न किया, सदा ही यज्ञों में प्रतिष्ठित है अर्थात् धार्मिक अनुष्ठानों में उसी को इष्ट रूप में मानकर आरती स्तुति करनी चाहिए।

इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 82 मन्त्र 2 में यह भी स्पष्ट किया है कि आप (कविर्वेधस्य) कविर्देव है जो सर्व को उपदेश देने की इच्छा से आते हो, आप पवित्र परमात्मा हैं। हमारे पापों को छुड़वाकर अर्थात् नाश करके हे अमर परमात्मा! आप हम को सुःख दें और (द्युतम् वसानः निर्निजम् परियसि) हम आप की सन्तान हैं। हमारे प्रति वह वात्सल्य वाला प्रेम भाव उत्पन्न करते हुए उसी (निर्निजम्) सुन्दर रूप को (परियासि) उत्पन्न करें अर्थात् हमारे को अपने बच्चे जानकर जैसे पहले और जब चाहें तब आप अपनी प्यारी आत्माओं को प्रकट होकर मिलते हैं, उसी तरह हमें भी दर्शन दें।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 96 मन्त्र 16 से 20)

स्वायुधः सोतृभिः पूयमानोऽभ्यर्ष गुह्यं चारु नाम।
अभि वाजं सप्तिरिव श्रवस्याभि वायुमभि गा देव सोम ॥१६॥

पदार्थः—हे परमात्मन् ! (गुह्यम्) सर्वोपरि रहस्य (चारु) श्रेष्ठ (नाम) जो तुम्हारी संज्ञा है। (अभ्यर्ष) उसका ज्ञान करायें। आप (सोतृभिः, पूयमानः) उपासक लोगों से स्तूयमान हैं। (स्वायुधः) स्वाभाविक शक्ति से युक्त हैं और (सप्तिरिव) विद्युत् के समान (श्रवस्याभि) ऐश्वर्य के सम्मुख प्राप्त कराइये और (वायुमभि) हमको प्राणों की विद्या का वेत्ता बनाइये। (देव) हे सर्वशक्ति-सम्पन्न परमेश्वर ! हमको (गाः) इन्द्रियों के (अभिगमय) नियमन का ज्ञाता बनाइये ॥१६॥

शिशुं जज्ञानं हर्यतं मृजन्ति शुम्भन्ति वह्निं मरुतो गणेन।
कविर्गीर्भिः काव्येना कविः सन्त्सोमः पवित्रमत्येति रेभन् ।१७॥

पदार्थः—(शिशुम्) "श्यति सूक्ष्मं करोति प्रलयकाले जगदिति शिशुः परमात्मा" उस परमात्मा को (जज्ञानम्) जो सदा प्रकट है, (हर्यतः) जो अत्यन्त कमनीय है, उसको उपासक लोग (मृजन्ति) बुद्धिविषय करते हैं और (शुंभन्ति) उसकी स्तुति द्वारा उसके गुणों का वर्णन करते हैं और (मरुतः) विद्वान् लोग (वह्निम्) उस गतिशील परमात्मा का (गणेन) गुणों के गणों द्वारा वर्णन करते हैं और (कविः) कवि लोग (गीर्भिः) वाणी द्वारा और (काव्येन) कवित्व से उसकी स्तुति करते हैं। (सोमः) सोमस्वरूप (पवित्रम्) पवित्र वह परमात्मा कारणावस्था में अतिसूक्ष्म प्रकृति को (रेभन्, सन्) गर्जता हुआ (अत्येति) अतिक्रमण करता है ॥१७॥

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 के मंत्र 16 में कहा है कि हे परमात्मन्! आप अपने श्रेष्ठ गुप्त नाम का ज्ञान कराऐं। उस नाम को मंत्र 17 में बताया है कि वह कविः यानि कविर्देव है।

मंत्र 17 की केवल हिन्दी :- (शिशुम् जज्ञानम् हर्यन्तम्) परमेश्वर जान-बूझकर तत्वज्ञान बताने के उद्देश्य से शिशु रूप में प्रकट होता है, उनके ज्ञान को सुनकर (मरूतो गणेन) भक्तों का बहुत बड़ा समूह उस परमात्मा का अनुयाई बन जाता है। (मंजन्ति शुम्यन्ति वहिन्)

वह ज्ञान बुद्धिजीवी लोगों को समझ आता है, वे उस परमेश्वर की स्तुति भक्ति तत्वज्ञान के आधार से करते हैं, वह भक्ति (वहिन्) शीघ्र लाभ देने वाली होती है। वह परमात्मा अपने तत्वज्ञान को (काव्येना) कवित्व से अर्थात् कवियों की तरह दोहों, शब्दों, लोकोक्तियों, चौपाईयों द्वारा (कविर् गीर्भिः) कविर् वाणी द्वारा अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (पवित्रम् अतिरेभन्) शुद्ध ज्ञान को उच्चे स्वर में गर्ज-गर्जकर बोलते हैं। वह (कविः) कवि की तरह आचरण करने वाला कविर्देव (सन्त्) सन्त रूप में प्रकट (सोम) अमर परमात्मा होता है। (ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17)

❖ विशेष :- इस मन्त्र के मूल पाठ में दो बार ''कविः'' शब्द है, आर्य समाज के अनुवादकर्ताओं ने एक (कविः) का अर्थ ही नहीं किया है।

ऋषिमना य ऋषिकृत्स्वर्षाः सहस्रणीथः पदवीः कवीनाम् ।
तृतीयं धाम महिषः सिषासन्त्सोमो विराजमनु राजति ष्टुप् ।।१८।।

पदार्थः—(सोमः) सोमस्वरूप परमात्मा (सिसासन्) पालन की इच्छा करता हुआ (महिषः) जो महान् है वह परमात्मा (तृतीयं, धाम) देवयान और पितृयान इन दोनों से पृथक तीसरा जो मुक्तिधाम है । उसमें (विराजम्) विराजमान जो ज्ञानयोगी है उसको (अनुराजति) प्रकाश करने वाला है और (स्तुप) स्तूयमान है । (कवीनाम्, पदवीः) जो क्रान्तदर्शियों की पदवी अर्थात् मुख्य स्थान है और (सहस्रनीथः) अनन्त प्रकार से स्तवनीय है, (ऋषिमनाः) सर्वज्ञान के साधनरूप मनवाला वह परमात्मा (यः) जो (ऋषिकृत) सब ज्ञानों का प्रदाता (स्वर्षाः) सूर्यादिकों को प्रकाशक है । वह जिज्ञासु के लिए उपासनीय है ।।१८।।

❖ विवेचन :- यह ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 18 की फोटोकापी है जिसका अनुवाद महर्षि दयानन्द जी के अनुयाईयों ने किया है। सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली द्वारा अनुवादित है। इस पर विवेचन करते हैं। इसके अनुवाद में भी बहुत-सी गलतियाँ हैं जो आर्यसमाज के आचार्यों ने की है। हम संस्कृत भी समझ सकते हैं, विवेचन करता हूँ तथा यथार्थ अनुवाद व भावार्थ स्पष्ट करता हूँ। मन्त्र 17 में कहा है कि ऋषि या सन्त रूप में प्रकट होकर परमात्मा अमृतवाणी अपने मुख कमल से बोलता है और उस ज्ञान को समझकर अनेकों अनुयाईयों का समूह बन जाता है। (य) जो वाणी परमात्मा तत्वज्ञान की सुनाता है, वे (ऋषिकृत्) ऋषि रूप में प्रकट परमात्मा कृत (सहंस्रणीयः) हजारों वाणियाँ अर्थात् कबीर वाणियाँ (ऋषिमना) ऋषि स्वभाव वाले भक्तों के लिए (स्वर्षाः) आनन्ददायक होती हैं। (कविनाम पदवीः) कवित्व से दोहों, चौपाईयों में वाणी बोलने के कारण वह परमात्मा प्रसिद्ध कवियों में से एक कवि की भी पदवी प्राप्त करता है। वह (सोम) अमर परमात्मा (सिषासन्) सर्व की पालन की इच्छा करता हुआ प्रथम स्थिति में (महिषः) बड़ी पृथ्वी अर्थात् ऊपर

के लोकों में (तृतीयम् धाम) तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर (अनुराजति) तेजोमय शरीर युक्त (स्तुप) गुम्बज में (विराजम्) विराजमान है, वहाँ बैठा है।

यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में है कि परमात्मा सर्व लोकों के ऊपर के लोक में विराजमान है, (तिष्ठन्ति) बैठा है।

चमूषच्छ्येनः शकुनो विभृत्वा गोविन्दुर्द्रप्स आयुधानि बिभ्रत्।
अपामूर्मिं सचमानः समुद्रं तुरीयं धाम महिषो विवक्ति ॥१९॥

पदार्थः—(**अपामूर्मिम्**) प्रकृति की सूक्ष्म से सूक्ष्म शक्तियों के साथ (**सचमानः**) जो संगत है और (**समुद्रम्**) "सम्यक् द्रवन्ति भूतानि यस्मात् स समुद्रः" जिससे सब भूतों की उत्पत्ति, स्थिति और प्रलय होता है। वह (**तुरीयम्**) चौथा (**धाम**) परमपद परमात्मा है। उसको (**महिषः**) मह्यते इति महिषः महिष इति महन्नामसु पठितम् नि० ३—१३। महापुरुष उक्त तुरीय परमात्मा का (**विवक्ति**) वर्णन करता है। वह परमात्मा (**चमूसत्**) जो प्रत्येक बल में स्थित है (**श्येनः**) सर्वोपरि प्रशंसनीय है और (**शकुनः**) सर्वशक्तिमान् है। (**गोविन्दुः**) यजमानों को तृप्त करके जो (**द्रप्सः**) शीघ्रगति वाला है (**आयुधानि, बिभ्रत्**) अनन्त शक्तियों को धारण करता हुआ इस सम्पूर्ण संसार का उत्पादक है ॥१९॥

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 19 का भी आर्य समाज के विद्वानों ने अनुवाद किया है। इसमें भी बहुत सारी गलतियाँ है। पुस्तक विस्तार के कारण केवल अपने मतलब की जानकारी प्राप्त करते हैं।

इस मन्त्र में चौथे धाम का वर्णन है जो आप जी सृष्टि रचना में पढ़ेंगे, उससे पूर्ण जानकारी होगी पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 389 पर।

परमात्मा ने ऊपर के चार लोक अजर-अमर रचे हैं। 1. अनामी लोक जो सबसे ऊपर है। 2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सत्यलोक।

हम पृथ्वी लोक पर हैं, यहाँ से ऊपर के लोकों की गिनती करेंगे तो 1. सत्यलोक 2. अलख लोक 3. अगम लोक तथा 4. अनामी लोक गिना जाता है। उस चौथे धाम में बैठकर परमात्मा ने सर्व ब्रह्माण्डों व लोकों की रचना की। शेष रचना सत्यलोक में बैठकर की थी। आर्य समाज के अनुवादकों ने तुरिया परमात्मा अर्थात् चौथे परमात्मा का वर्णन किया है। यह चौथा धाम है। उसमें मूल पाठ मन्त्र 19 का भावार्थ है कि तत्वदर्शी सन्त चौथे धाम तथा चौथे परमात्मा का (विवक्ति) भिन्न-भिन्न वर्णन करता है। पाठक जन कृपया पढ़ें सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 389 पर जिससे आप जी को ज्ञान होगा कि लेखक (संत रामपाल दास) ही वह तत्वदर्शी संत है जो तत्वज्ञान से परिचित है।

मर्यो न शुभ्रस्तन्वं मृजानोऽत्यो न सृत्वा सनये धनानाम् ।
वृषेव यूथा परि कोशमर्षन्कनिक्रदच्चम्वोऽरा विवेश ॥२०॥

पदार्थः—वह परमात्मा (**यूथा, वृषेव**) जिस प्रकार एक संघ को उसका सेनापति प्राप्त होता है, इसी प्रकार (**कोशम्**) इस ब्रह्माण्डरूपी कोश को (**अर्षन्**) प्राप्त होकर (**कनिक्रदत्**) उच्च स्वर से गर्जता हुआ (**चम्वोः**) इस ब्रह्माण्ड रूपी विस्तृत प्रकृति-खण्ड में (**पर्याविवेश**) भली-भांति प्रविष्ट होता है और (**न**) जैसे कि (**मर्यः**) मनुष्य (**शुभ्रस्तन्वं, मृजानः**) शुभ्र शरीर को धारण करता हुआ (**अत्योन**) अत्यन्त गतिशील पदार्थों के समान (**सनये**) प्राप्ति के लिए (**सृत्वा**) गतिशील होता हुआ (**धनानाम्**) धनों के लिए कटिबद्ध होता है; इसी प्रकार प्रकृति-रूपी ऐश्वर्य को धारण करने के लिए परमात्मा सदैव उद्यत है ॥२०॥

❖ **विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 का यथार्थ ज्ञान जानते हैं :-**

इस मन्त्र का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा किया गया है, इनका दृष्टिकोण यह रहा है कि परमात्मा निराकार है क्योंकि महर्षि दयानन्द जी ने यह बात दृढ़ की है कि परमात्मा निराकार है। इसलिए अनुवादक ने सीधे मन्त्र का अनुवाद घुमा-फिराकर किया है।

जैसे मूल पाठ में लिखा है :-

मर्य न शुभ्रः तन्वा मृजानः अत्यः न सृत्वा सनये धनानाम्।
वृर्षेव यूथा परि कोशम अर्षन् कनिक्रदत् चम्वोः आविवेश।।

अनुवाद :- जैसे (मर्यः न) मनुष्य सुन्दर वस्त्र धारण करता है, ऐसे परमात्मा मनुष्य के समान (शुभ्रः तन्व) सुन्दर शरीर (मृजानः) धारण करके (अत्यः) अत्यन्त गति से चलता हुआ (सनये धनानाम्) भक्ति धन के धनियों अर्थात् पुण्यात्माओं को प्राप्ति के लिए आता है। (यूथा वृषेव) जैसे एक समुदाय को उसका सेनापति प्राप्त होता है, ऐसे वह परमात्मा संत व ऋषि रूप में प्रकट होता है तो उसके बहुत सँख्या में अनुयाई बन जाते हैं और परमात्मा उनका गुरू रूप में मुखिया होता है। वह परमात्मा (परि कोशम्) प्रथम ब्रह्माण्ड में (अर्षन्) प्राप्त होकर अर्थात् आकर (कनिक्रदत्) ऊँचे स्वर में सत्यज्ञान उच्चारण करता हुआ (चम्वोः) पृथ्वी खण्ड में (अविवेश) प्रविष्ट होता है।

भावार्थ :- जैसे पूर्व में वेद मन्त्रों में कहा है कि परमात्मा ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके अपने रूप को अर्थात् शरीर के तेज को सरल करके पृथ्वी पर आता है। इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 में उसी की पुष्टि की है। कहा है कि जैसे मनुष्य वस्त्र धारण करता है, ऐसे अन्य शरीर धारण करके परमात्मा मानव रूप में पृथ्वी पर आता है और (धनानाम्) दृढ़ भक्तों (अच्छी पुण्यात्माओं) को प्राप्त होता है, उनको वाणी उच्चारण करके तत्वज्ञान सुनाता है।

❖ **विवेचन :- ये ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 से 20 की फोटोकापियाँ हैं, जिनका हिन्दी अनुवाद महर्षि दयानन्द सरस्वती आर्यसमाज प्रवर्तक के दिशा-निर्देश से उनके आर्यसमाजी चेलों ने किया है। यह अनुवाद कुछ-कुछ ठीक है, अधिक गलत है। पहले अधिक ठीक या कुछ-कुछ गलत था जो मेरे द्वारा शुद्ध करके विवेचन में लिख दिया है।**

अब अधिक गलत को शुद्ध करके लिखता हूँ।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 में कहा है कि :-

हे परमात्मा! आपका जो गुप्त वास्तविक (चारू) श्रेष्ठ (नाम) नाम है, उसका ज्ञान कराऐं। प्रिय पाठको! जैसे भारत के राजा को प्रधानमन्त्री कहते हैं, यह उनकी पदवी का प्रतीक है। उनका वास्तविक नाम कोई अन्य ही होता है। जैसे पहले प्रधानमन्त्री जी पंडित जवाहर लाल नेहरू जी थे। ''जवाहरलाल'' उनका वास्तविक नाम है। इस मंत्र 16 में कहा है कि हे परमात्मा! आपका जो वास्तविक नाम है वह (सोतमिः) उपासना करने का (स्व आयुधः) स्वचालित शस्त्र के समान (पूयमानः) अज्ञान रूपी गन्द को नाश करके पापनाशक है। आप अपने उस सत्य मन्त्र का हमें ज्ञान कराऐं। (देव सोम) हे अमर परमेश्वर! आपका वह मन्त्र श्वांसों द्वारा नाक आदि (गाः) इन्द्रियों से (वासुम् अभि) श्वांस-उश्वांस से जपने से (सप्तिरिव = सप्तिः इव) विद्युत् जैसी गति से अर्थात् शीघ्रता से (अभिवाजं) भक्ति धन से परिपूर्ण करके (श्रवस्यामी) ऐश्वर्य को तथा मोक्ष को प्राप्त कराईये।

प्रिय पाठकों से निवेदन है कि इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 16 के अनुवाद में बहुत-सी गलतियाँ थी जो शुद्ध कर दी हैं। प्रमाण के लिए मूल पाठ मे ''अभिवाजं'' शब्द है इसका अनुवाद नहीं किया गया है। इसके स्थान पर ''अभिगमय'' शब्द का अर्थ जोड़ा है जो मूल पाठ में नहीं है।

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17 के अनुवाद में भी बहुत गलतियाँ हैं जो आर्यसमाजियों द्वारा अनुवादित है। अब शुद्ध करके लिखता हूँ:-

जैसा कि पूर्वोक्त ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 86 तथा 82 के मन्त्रों में प्रमाण है कि परमात्मा अपने शाश्वत् स्थान से जो द्यूलोक के तीसरे स्थान पर विराजमान है, वहाँ से चलकर पथ्वी पर जान-बूझकर किसी खास उद्देश्य से प्रकट होता है। परमात्मा सर्व ब्रह्माण्डों में बसे प्राणियों की परवरिश तीन स्थिति में करते हैं। 1. परमात्मा ऊपर सत्यलोक अर्थात् अविनाशी धाम में सिंहासन (तख्त) पर बैठकर सर्व ब्रह्माण्डों का संचालन करते हैं। 2. जब चाहें साधु सन्त के रूप में अपने शरीर का तेज सरल करके अच्छी आत्माओं को मिलते हैं। 3. प्रत्येक युग में किसी जलाशय में खिले कमल के फूल पर नवजात शिशु का रूप बनाकर प्रकट होते हैं, वहाँ से निःसन्तान दम्पति अपने घर ले जाते हैं। बचपन से ही वह परमात्मा अपना वास्तविक भक्ति ज्ञान जिसे तत्वज्ञान भी कहते हैं, चौपाइयों, दोहों, साखियों व कविताओं के रूप में सुनाते हैं। जैसे सन् 1398 वि.सं. 1455 में परमात्मा अपने निज स्थान से चलकर भारत वर्ष के काशी शहर के बाहर लहरतारा नामक जलाशय में कमल के फूल पर शिशु रूप धारकर प्रकट हुए थे। वहाँ से नीरू-नीमा जुलाहा दम्पति अपने घर ले गए थे। धीरे-धीरे परमात्मा बड़े हुए। कबीर वाणी बोलकर ज्ञान सुनाया था।

प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 में है जो आर्य समाज के आचार्यों द्वारा अनुवादित है। उसमें भी कुछ गलती है, अधिक नहीं।

कपया पढ़ें यह ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 की फोटोकापी :-

अभी३ममघ्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् ।
सोममिन्द्राय पातवे ॥९॥

पदार्थः—(इमं) उस (सोमं) सौम्यस्वभाव वाले श्रद्धालु पुरुष को (शिशुं) कुमारावस्था में ही (अभि) सब प्रकार से (अघ्न्याः) अहिंसनीय (धेनवः) गौवें (श्रीणन्ति) तृप्त करती हैं (इन्द्राय) ऐश्वर्य्य की (पातवे) वृद्धि के लिये । (उत) अथवा उक्त श्रद्धालु पुरुष को अहिंसनीय वाणियें ऐश्वर्य्य की प्राप्ति के लिये संस्कृत करती हैं ॥९॥

❖ विवेचन :- यह फोटो कापी ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 की है इसमें स्पष्ट है कि (सोम) अमर परमात्मा जब शिशु रूप में प्रकट होता है तो उसकी परवरिश की लीला कुंवारी गायों (अभि अध्न्या धेनुवः) द्वारा होती है। यही प्रमाण कबीर सागर के अध्याय ''ज्ञान प्रकाश'' में है कि जिस परमेश्वर कबीर जी को नीरू-नीमा अपने घर ले गए। तब शिशु रूपधारी परमात्मा ने न अन्न खाया, न दूध पीया। फिर स्वामी रामानन्द जी के बताने पर एक कुंवारी गाय अर्थात् एक बछिया नीरू लाया, उसने तत्काल दूध दिया। उस कुंवारी गाय के दूध से परमेश्वर की परवरिश की लीला हुई थी। कबीर सागर लगभग 600 (छः सौ) वर्ष पहले का लिखा हुआ है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मन्त्र 9 के अनुवाद में कुछ गलती की है। जैसे (अभिअध्न्या) का अर्थ अहिंसनीय कर दिया जो गलत है। हरियाणा प्रान्त के जिला रोहतक में गाँव धनाना में लेखक का जन्म हुआ जो वर्तमान में जिला सोनीपत में है। इस क्षेत्र में जिस गाय ने गर्भ धारण न किया हो तो कहते हैं कि यह धनाई नहीं है, यह बिना धनाई है। यह अपभ्रंस शब्द है। एक गाय के लिए ''अध्नि'' शब्द है। बहुवचन के लिए ''अध्न्या'' शब्द है। ''अध्न्या'' का अर्थ है बिना धनाई गौवें तथा अभिध्न्या का अर्थ है पूर्ण रूप से बिना धनायी अर्थात् कुंवारी गायें अर्थात् बछियाँ।

अब ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17 का शुद्ध अनुवाद करता हूँ :-

केवल हिन्दी :- (शिशुम् जज्ञानम् हर्यन्तम्) परमेश्वर जान-बूझकर तत्वज्ञान बताने के उद्देश्य से शिशु रूप में प्रकट होता है, उनके ज्ञान को सुनकर (मरूतो गणेन) भक्तों का बहुत बड़ा समूह उस परमात्मा का अनुयाई बन जाता है। (मजन्ति शुम्यन्ति वहिन्)

वह ज्ञान बुद्धिजीवी लोगों को समझ आता है। वे उस परमेश्वर की स्तुति-भक्ति तत्वज्ञान के आधार से करते हैं, वह भक्ति (वहिन्) शीघ्र लाभ देने वाली होती है। वे परमात्मा अपने तत्वज्ञान को (काव्येना) कवित्व से अर्थात् कवियों की तरह दोहों, शब्दों, लोकोक्तियों, चौपाईयों द्वारा (कविर् गीर्भिः) कविर् वाणी द्वारा अर्थात् कबीर वाणी द्वारा (पवित्रम् अतिरेभन्) शुद्ध ज्ञान को ऊँचे स्वर में गर्ज-गर्जकर बोलते हैं। वह (कविः) कवि की तरह आचरण करने वाला कविर्देव (सन्त्) सन्त रूप में प्रकट (सोम) अमर परमात्मा होता है। (ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 17)

विशेष :- इस मन्त्र के मूल पाठ में दो बार ''कविः'' शब्द है, आर्य समाज के अनुवादकर्ताओं ने एक (कविः) का अर्थ ही नहीं किया है।

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 18 पर विवेचन करते हैं। इसके अनुवाद में भी

बहुत-सी गलतियाँ है। हम संस्कृत भी समझ सकते हैं। विवेचन करता हूँ तथा यथार्थ अनुवाद व भावार्थ स्पष्ट करता हूँ। मन्त्र 17 में कहा कि ऋषि या सन्त रूप में प्रकट होकर परमात्मा अमृतवाणी अपने मुख कमल से बोलता है और उस ज्ञान को समझकर अनेकों अनुयाईयों का समूह बन जाता है। (य) जो वाणी परमात्मा तत्वज्ञान की सुनाता है। वे (ऋषिकृत्) ऋषि रूप में प्रकट परमात्मा कृत (सहंस्रणीथः) हजारों वाणियाँ अर्थात् कबीर वाणियाँ (ऋषिमना) ऋषि स्वभाव वाले भक्तों के लिए (स्वर्षाः) आनन्ददायक होती हैं। (कविनाम पदवीः) कवित्व से दोहों, चौपाईयों में वाणी बोलने के कारण वह परमात्मा कवियों में से एक प्रसिद्ध कवि की पदवी भी प्राप्त करता है। वह (सोम) अमर परमात्मा (सिषासन्) सर्व की पालन की इच्छा करता हुआ प्रथम स्थिति में (महिषः) बड़ी पृथ्वी अर्थात् ऊपर के लोकों में (तृतीयम् धाम) तीसरे धाम अर्थात् सत्यलोक के तीसरे पृष्ठ पर (अनुराजति) तेजोमय शरीर युक्त (स्तुप) गुम्बज में (विराजम्) विराजमान है, वहाँ बैठा है। यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 में है कि परमात्मा सर्व लोकों के ऊपर के लोक में विराजमान है, (तिष्ठन्ति) बैठा है।

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 19 का भी आर्यसमाज के विद्वानों ने अनुवाद किया है। इसमें भी बहुत सारी गलतियाँ हैं। पुस्तक विस्तार के कारण केवल अपने मतलब की जानकारी प्राप्त करते हैं।

इस मन्त्र में चौथे धाम का वर्णन है। आप जी सृष्टि रचना में पढ़ेंगे, उससे पूर्ण जानकारी होगी। पढ़ें इसी पुस्तक के पृष्ठ 389 पर।

परमात्मा ने ऊपर के चार लोक अजर-अमर रचे हैं। 1. अनामी लोक जो सबसे ऊपर है 2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सत्य लोक।

हम पृथ्वी लोक पर हैं, यहाँ से ऊपर के लोकों की गिनती करेंगे तो 1. सत्यलोक 2. अलख लोक 3. अगम लोक तथा चौथा अनामी लोक उस चौथे धाम में बैठकर परमात्मा ने सर्व ब्रह्माण्डों व लोकों की रचना की। शेष रचना सत्यलोक में बैठकर की थी। आर्यसमाज के अनुवादकों ने तुरिया परमात्मा अर्थात् चौथे परमात्मा का वर्णन किया है। यह चौथा धाम है। उसमें मूल पाठ मन्त्र 19 का भावार्थ है कि तत्वदर्शी सन्त चौथे धाम तथा चौथे परमात्मा का (विवक्ति) भिन्न-भिन्न वर्णन करता है। पाठकजन कृपया पढ़ें सृष्टि रचना इसी पुस्तक के पृष्ठ 389 पर जिससे आप जी को ज्ञान होगा कि लेखक (संत रामपाल दास) ही वह तत्वदर्शी संत है जो तत्वज्ञान से परिचित है।

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 का यथार्थ जानते हैं :-

इस मन्त्र का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों द्वारा किया गया है। इनका दृष्टिकोण यह रहा है कि परमात्मा निराकार है क्योंकि महर्षि दयानन्द जी ने यह बात दृढ़ की है कि परमात्मा निराकार है। इसलिए अनुवादक ने सीधे मन्त्र का अनुवाद घुमा-फिराकर किया है। जैसे मंत्र 20 के मूल पाठ में लिखा है :-

मर्य न शुभ्रः तन्वा मृजानः अत्यः न सृत्वा सनये धनानाम्।
वृषेव यूथा परि कोशम अर्षन् कनिक्रदत् चम्वोः आविवेश।।

अनुवाद :- (मर्यः) मनुष्य (न) जैसे सुन्दर वस्त्र धारण करता है, ऐसे परमात्मा (शुभ्रः तन्व) सुन्दर शरीर (मृजानः) धारण करके (अत्यः) अत्यन्त गति से (सृत्वा) चलता हुआ (धनानाम्) भक्ति धन के धनियों अर्थात् पुण्यात्माओं को (सनये) प्राप्ति के लिए आता है (यूथा वृषेव) जैसे एक समुदाय

को उसका सेनापति प्राप्त होता है। ऐसे वह परमात्मा संत व ऋषि रूप में प्रकट होता है तो उसके बहुत सँख्या में अनुयाई बन जाते हैं और परमात्मा उनका गुरू रूप में मुखिया होता है। वह परमात्मा (परि कोशम्) प्रथम ब्रह्माण्ड में (अर्षन्) प्राप्त होकर अर्थात् आकर (कनिक्रदत्) ऊँचे स्वर में सत्यज्ञान उच्चारण करता हुआ (चम्वौ) पंथ्वी खण्ड में (अविवेश) प्रविष्ट होता है।

भावार्थ :- जैसे पूर्व में वेद मन्त्रों में कहा है कि परमात्मा ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके पंथ्वी पर आता है, अपने रूप को अर्थात् शरीर के तेज को सरल करके आता है। इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मन्त्र 20 में उसी की पुष्टि की है। कहा है कि परमात्मा ऐसे अन्य शरीर धारण करके पंथ्वी पर आता है। जैसे मनुष्य वस्त्र धारण करता है और (धनानाम्) दंढ़ भक्तों (अच्छी पुण्यात्माओं) को प्राप्त होता है, उनको वाणी उच्चारण करके तत्वज्ञान सुनाता है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 95 मन्त्र 2)

हरिः सृजानः पथ्यामृतस्येयर्ति वाचमरितेव नावम्।
देवो देवानां गुह्यानि नामाविष्कृणोति बर्हिषि प्रवाचे ॥२॥

पदार्थः—(हरिः) वह पूर्वोक्त परमात्मा (सृजानः) साक्षात्कार को प्राप्त हुआ (**ऋतस्य पथ्यां**) वाक् द्वारा मुक्ति मार्ग की (**इर्यति**) प्रेरणा करता है। (**अरितेव नावम्**) जैसा कि नौका के पार लगाने के समय में नाविक प्रेरणा करता है और (**देवानां देवः**) सब देवों का देव (**गुह्यानि**) गुप्त (**नामाविष्कृणोति**) संज्ञाओं को प्रकट करता है (**बर्हिषि प्रवाचे**) वाणीरूप यज्ञ के लिए ॥२॥

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 95 मन्त्र 2 का अनुवाद महर्षि दयानन्द के चेलों ने किया है जो बहुत ठीक किया है।

इसका भावार्थ है कि पूर्वोक्त परमात्मा अर्थात् जिस परमात्मा के विषय में पहले वाले मन्त्रों में ऊपर कहा गया है, वह (संजानः) अपना शरीर धारण करके (ऋतस्य पथ्यां) सत्यभक्ति का मार्ग अर्थात् यथार्थ आध्यात्मिक ज्ञान अपनी अमंतमयी वाक् अर्थात् वाणी द्वारा मुक्ति मार्ग की प्रेरणा करता है।

वह मन्त्र ऐसा है जैसे (अरितेव नावम्) नाविक नौका में बैठाकर पार कर देता है, ऐसे ही परमात्मा सत्यभक्ति मार्ग रूपी नौका के द्वारा साधक को संसार रूपी दरिया के पार करता है। वह (देवानाम् देवः) सब देवों का देव अर्थात् सब प्रभुओं का प्रभु परमेश्वर (बर्हिषि प्रवाचे) वाणी रूपी ज्ञान यज्ञ के लिए (गुह्यानि) गुप्त (नामा आविष्कंणोति) नामों का अविष्कार करता है अर्थात् जैसे गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में ''ऊँ तत् सत्'' में तत् तथा सत् ये गुप्त मन्त्र हैं जो उसी परमेश्वर ने मुझे (संत रामपाल दास) को बताऐ हैं। उनसे ही पूर्ण मोक्ष सम्भव है।

सूक्ष्म वेद में परमेश्वर ने कहा है कि :-

''सोहं'' शब्द हम जग में लाए, सारशब्द हम गुप्त छिपाए।

भावार्थ :- परमेश्वर ने स्वयं ''सोहं'' शब्द भक्ति के लिए बताया है। यह सोहं मन्त्र किसी भी प्राचीन ग्रन्थ (वेद, गीता, कुर्आन, पुराण तथा बाईबल) में नहीं है। फिर सूक्ष्म वेद में कहा है कि :-

सोहं ऊपर और है, सत्य सुकंत एक नाम।
सब हंसो का जहाँ बास है, बस्ती है बिन ठाम।।

भावार्थ :- ''सोहं'' नाम तो परमात्मा ने प्रकट कर दिया, आविष्कार कर दिया परन्तु सार शब्द को गुप्त रखा था। अब मुझे (लेखक संत रामपाल को) बताया है जो साधकों को दीक्षा के समय बताया जाता है। इसका गीता अध्याय 17 श्लोक 23 में कहे ''ॐ तत् सत्'' से सम्बन्ध है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 94 मन्त्र 1)

अधि यदस्मिन्वाजिनीव शुभः स्पर्धन्ते धियः सूर्ये न विशः ।
अपो वृणानः पवते कवीयन्व्रजं न पशुवर्धनाय मन्म ॥१॥

पदार्थः—(सूर्य्ये) सूर्य के विषय में (न) जैसे (विशः) रश्मियां प्रकाशित करती हैं। उसी प्रकार (धियः) मनुष्यों की बुद्धियां (स्पर्धन्ते) अपनी-अपनी उत्कट शक्ति से विषय करती हैं। (अस्मिन् अधि) जिस परमात्मा में (वाजिनीव) सर्वोपरि बलों के समान (शुभः) शुभ बल है वह परमात्मा (अपोवृणानः) कर्मों का अध्यक्ष होता हुआ (पवते) सबको पवित्र करता हैं। (कवीयन्) कवियों की तरह आचरण करता हुआ (पशुवर्धनाय) सर्वद्रष्टृत्व पद के लिए (व्रजं, न) इन्द्रियों के अधिकरण मन के समान 'व्रजन्ति इन्द्रियाणि यस्मिन् तद्व्रजम्' (मन्म) जो अधिकरणरूप है वही श्रेय का धाम है ॥१॥

❖ विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 का अनुवाद भी आर्यसमाज के विद्वानों द्वारा किया गया है। पुस्तक विस्तार को ध्यान में रखते हुए उन्हीं के अनुवाद से अपना मत सिद्ध करते हैं। जैसे पूर्व में लिखे वेदमन्त्रों में बताया गया है कि परमात्मा अपने मुख कमल से वाणी उच्चारण करके तत्वज्ञान बोलता है, लोकोक्तियों के माध्यम से, कवित्व से दोहों, शब्दों, साखियों, चौपाईयों के द्वारा वाणी बोलने से प्रसिद्ध कवियों में से भी एक कवि की उपाधि प्राप्त करता है। उसका नाम कविर्देव अर्थात् कबीर साहेब है।

इस ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 94 मन्त्र 1 में भी यही स्पष्ट है कि जो सर्वशक्तिमान परमेश्वर है, वह (कवियन् व्रजम् न) कवियों की तरह आचरण करता हुआ पृथ्वी पर विचरण करता है।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 20 मन्त्र 1)

प्र कविर्देववीतयेऽव्यो वारेभिरर्षति ।
साह्वान्विश्वा अभि स्पृधः ॥१॥

पदार्थः—वह परमात्मा (कविः) मेधावी है और (अव्यः) सबका रक्षक है (देववीतये) विद्वानों की तृप्ति के लिये (अर्षति) ज्ञान देता है (साह्वान्) सहनशील है (विश्वाः, स्पृधः) सम्पूर्ण दुष्टों को संग्रामों में (अभि) तिरस्कृत करता है ॥१॥

विवेचन :- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 20 मन्त्र 1 का अनुवाद भी आर्यसमाज के विद्वानों ने किया है। इसका अनुवाद ठीक कम गलत अधिक है। इसमें मूल पाठ में लिखा है :-

'प्र कविर्देव वीतये अव्यः वारेभिः अर्षति साह्वान् बिश्वाः अभि स्पंस्धः

सरलार्थ :- (प्र) वेद ज्ञान दाता से जो दूसरा (कविर्देव) कविर्देव कबीर परमेश्वर है, वह

विद्वानों अर्थात् जिज्ञासुओं को, (वीतये) ज्ञान धन की तप्ति के लिए (वारेभिः) श्रेष्ठ आत्माओं को (अर्षति) ज्ञान देता है। वह (अव्यः) अविनाशी है, रक्षक है, (साह्वान्) सहनशील (विश्वाः) तत्वज्ञान हीन सर्व दुष्टों को (स्पधः) अध्यात्म ज्ञान की कपा स्पर्धा अर्थात् ज्ञान गोष्ठी रूपी वाक् युद्ध में (अभि) पूर्ण रूप से तिरस्कत करता है, उनको फिट्टे मुँह कर देता है।

विशेष :- (क) इस मन्त्र के अनुवाद में आप फोटोकापी में देखेंगे तो पता चलेगा कि कई शब्दों के अर्थ आर्य विद्वानों ने छोड़ रखे हैं जैसे = ''प्र'' ''वारेभिः'' जिस कारण से वेदों का यथार्थ भाव सामने नहीं आ सका।

(ख) मेरे अनुवाद से स्पष्ट है कि वह परमात्मा अच्छी आत्माओं (दढ़ भक्तों) को ज्ञान देता है, उसका नाम भी लिखा है :- ''कविर्देव''। हम कबीर परमेश्वर कहते हैं।

(प्रमाण ऋग्वेद मण्डल नं. 9 सुक्त 54 मन्त्र 3)

अयं विश्वानि तिष्ठति पुनानो भुवनोपरि ।
सोमो देवो न सूर्यः ॥३॥

पदार्थः—(सूर्यः, न) सूर्य के समान जगत्प्रेरक (अयम्) यह परमात्मा (सोमः, देवः) सौम्य स्वभाव वाला और जगत्प्रकाशक है और (विश्वानि, पुनानः) सब लोकों को पवित्र करता हुआ (भुवनोपरि, तिष्ठति) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व भाग में भी वर्तमान है ॥३॥

विवेचनः- ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 54 मन्त्र 3 की फोटोकापी में आप देखें, इसका अनुवाद आर्यसमाज के विद्वानों ने किया है। उनके अनुवाद में भी स्पष्ट है कि वह परमात्मा (भूवनोपरि) सम्पूर्ण ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) विराजमान है, ऊपर बैठा हैः-

इसका यथार्थ अनुवाद इस प्रकार है :-

(अयं) यह (सोमः देव) अमर परमेश्वर (सूर्यः) सूर्य के (न) समान (विश्वानि) सर्व को (पुनानः) पवित्र करता हुआ (भूवनोपरि) सर्व ब्रह्माण्डों के ऊर्ध्व अर्थात् ऊपर (तिष्ठति) बैठा है।

भावार्थ :- जैसे सूर्य ऊपर है और अपना प्रकाश तथा उष्णता से सर्व को लाभ दे रहा है। इसी प्रकार यह अमर परमेश्वर जिसका ऊपर के मन्त्रों में वर्णन किया है। सर्व ब्रह्माण्डों के ऊपर बैठकर अपनी निराकार शक्ति से सर्व प्राणियों को लाभ दे रहा है तथा सर्व ब्रह्माण्डों का संचालन कर रहा है।

तर्क :- महर्षि दयानन्द का अर्थात् आर्यसमाजियों का मत है कि परमात्मा किसी एक स्थान पर किसी लोक विशेष में नहीं रहता।

प्रमाण :- सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास (Chapter) नं. 7 पष्ठ 148 पर (आर्य साहित्य प्रचार ट्रस्ट 427 गली मन्दिर वाली नया बांस दिल्ली-78वां संस्करण)

किसी ने प्रश्न कियाः- ईश्वर व्यापक है वा किसी देश विशेष में रहता है?

उत्तर (महर्षि दयानन्द जी का) :- व्यापक है क्योंकि जो एक देश में रहता तो सर्व अन्तर्यामी, सर्वज्ञ, सर्वनियन्ता, सब का सष्टा, सब का धर्ता और प्रलयकर्ता नहीं हो सकता। अप्राप्त देश में कर्ता की क्रिया का होना असम्भव है। (सत्यार्थ प्रकाश से लेख समाप्त)

महर्षि दयानन्द जी नहीं मानते थे कि परमात्मा किसी देश अर्थात् स्थान विशेष पर रहता है। महर्षि दयानन्द जी वेद ज्ञान को सत्य ज्ञान मानते थे।

आप जी ने अनेकों वेदमन्त्रों में अपनी आँखों पढ़ा कि परमेश्वर ऊपर एक स्थान पर रहता है। वहाँ से गति करके यहाँ भी प्रकट होता है। महर्षि दयानन्द तथा आर्यसमाजी परमात्मा को निराकार मानते हैं।

प्रमाण :- सत्यार्थ प्रकाश के समुल्लास नं. 9 पष्ठ 176, समुल्लास 7 पष्ठ 149 समुल्लास 11 पष्ठ 251 पर कहा है कि परमात्मा निराकार है।

प्रिय पाठकों ने अनेकों वेदमंत्रों में पढ़ा कि परमात्मा साकार है, वह मनुष्य जैसा है। ऊपर के लोक में रहता है, वहाँ से गति करके चलकर आता है, पथ्वी पर प्रकट होता है। अच्छी आत्माओं को जो दढ़ भक्त होते हैं, उनको मिलता है। उनको तत्वज्ञान अपने मुख कमल से बोलकर सुनाता है, कवियों की तरह आचरण करता है। पथ्वी पर विचरण करके परमात्मा अपना अध्यात्म ज्ञान ऊँचे स्वर में उच्चारण करके सुनाता है।

गीता अध्याय 4 श्लोक 32 में भी यही प्रमाण है।

प्रिय पाठको! आप स्वंय निर्णय करें किसको कितना अध्यात्म ज्ञान था। विशेष आश्चर्य यह है कि वेद मन्त्रों का अनुवाद भी महर्षि दयानन्द जी तथा उनके चेलों आर्यसमाजियों ने किया हुआ है। जिसमें उनके मत का विरोध है।

➢ निवेदन :- वेद मन्त्रों की फोटोकापियाँ लगाने का उद्देश्य यह है कि यदि मैं (लेखक) अनुवाद करके पुस्तक में लगाता तो अन्य व्यक्ति यह कह देते कि संत रामपाल को संस्कत भाषा का ज्ञान नहीं है। इसलिए इनके अनुवाद पर विश्वास नहीं किया जा सकता। अब यह शंका उत्पन्न नहीं हो सकती। अब तो यह दढ़ता आएगी कि संत रामपाल दास ने जो वेद मन्त्रों का अनुवाद किया है, वह यथार्थ है।

''यथार्थ कबीर प्राकाट्य प्रकरण'' (कबीर साहेब चारों युगों में आते हैं)

गरीब, सतगुरु पुरुष कबीर हैं, चारों युग प्रवान। झूठे गुरुवा मर गए, हो गए भूत मसान।।

"सतयुग में कविर्देव (कबीर साहेब) का सत्सुकत नाम से प्राकाट्य"

तत्त्वज्ञान के अभाव से श्रद्धालु शंका व्यक्त करते हैं कि जुलाहे रूप में कबीर जी तो वि. सं. 1455 (सन् 1398) में काशी में हुए थे। वेदों में कविर्देव यही काशी वाला जुलाहा (धाणक) कैसे पूर्ण परमात्मा हो सकता है?

इस विषय में दास (सन्त रामपाल दास) की प्रार्थना है कि यही पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) वेदों के ज्ञान से भी पूर्व सतलोक में विद्यमान थे तथा अपना वास्तविक ज्ञान (तत्त्वज्ञान) देने के लिए चारों युगों में भी स्वयं प्रकट हुए हैं। सतयुग में सतसुकत नाम से, त्रेतायुग में मुनिन्द्र नाम से, द्वापर युग में करूणामय नाम से तथा कलयुग में वास्तविक कविर्देव (कबीर प्रभु) नाम से प्रकट हुए हैं।

{कबीर जी ने कहा है कि मैं चारों युगों में आया हूँ :-

सत्ययुग में 'सत सुकत' कह टेरा, त्रेता नाम मुनिन्द्र मेरा।
द्वापर में करूणामय कहाया, कलयुग नाम कबीर धराया।।}

इसके अतिरिक्त अन्य रूप धारण करके कभी भी प्रकट होकर अपनी लीला करके अन्तर्ध्यान हो जाते हैं। उस समय लीला करने आए परमेश्वर को प्रभु चाहने वाले श्रद्धालु नहीं पहचान सके, क्योंकि सर्व महर्षियों व संत कहलाने वालों ने प्रभु को निराकार बताया है। वास्तव में परमात्मा आकार में है। मनुष्य सदृश शरीर युक्त हैं। परंतु परमेश्वर का शरीर नाड़ियों के योग से बना पांच तत्त्व का नहीं है। एक नूर तत्त्व से बना है। पूर्ण परमात्मा जब चाहे यहाँ प्रकट हो जाते हैं वे कभी मां से जन्म नहीं लेते क्योंकि वे सर्व के उत्पत्ति कर्त्ता हैं। धर्मदास जी के प्रश्न का उत्तर देते हुए कबीर परमेश्वर जी ने बताया कि हे धर्मदास! मैं चारों युगों में आता हूँ। जब चाहूँ, उसी क्षण सतलोक से आ जाता हूँ। अन्य रूप में वहाँ भी रहता हूँ। जब मैं ब्रह्मा से मिला, उसको तत्त्वज्ञान में सृष्टि रचना का ज्ञान करवाया तो वह प्रभावित हुआ तथा कहा कि आपका ज्ञान अद्वितीय है। प्रथम मन्त्र प्राप्त किया। ब्रह्मा तथा सावित्री को मैंने ओम् मन्त्र दिया। यह देखने के लिए कि यह कितना विश्वास करता है? इसके पश्चात् मैं श्री विष्णु के पास विष्णु लोक गया उससे भी ज्ञान चर्चा की तथा विष्णु भी मेरा शिष्य हुआ। उसको तथा लक्ष्मी को हरियं मन्त्र प्रथम मन्त्र रूप में दिया गया। यह देखने के लिए कि यह काल ब्रह्म के द्वारा डगमग तो नहीं हो जाएगा? इसके पश्चात् शिव के पास शंकर लोक में गया उसको तथा पार्वती को सोहं नाम दिया। यह देखने के लिए कहीं ये भी काल ब्रह्म द्वारा फिर तो भ्रमित नहीं कर दिए जाऐंगे। उसके पश्चात् अन्य ऋषियों मनु आदि से ज्ञान चर्चा की परन्तु मनु आदि ऋषियों ने काल प्रभाव के कारण मेरे ज्ञान पर विश्वास नहीं किया। मेरे को उल्टा ज्ञान देने वाला ''वामदेव'' उर्फ नाम से पुकारने लगे जबकि पृथ्वी पर मेरा नाम सत्ययुग में ''सत्यसुकृत'' था।

कुछ दिनों पश्चात् मैं फिर से ब्रह्मा के पास गया। ब्रह्मा से ज्ञान चर्चा करनी चाही तो ब्रह्मा जी ने अरूचि दिखाई। क्योंकि जब काल ब्रह्म ने देखा कि मेरे ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा को तत्वज्ञान से परिचित किया जा रहा है। उसने सोचा यदि मेरा पुत्र तत्त्वज्ञान से परिचित हो गया तो मेरे से घृणा करेगा तथा जीव उत्पत्ति नहीं हो पाएगी। मेरा उदर कैसे भरेगा? क्योंकि काल ब्रह्म को एक लाख मानव शरीरधारी जीवों को प्रतिदिन खाने का शाप लगा है। इसलिए काल ब्रह्म ने अपने ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा की बुद्धि को परिवर्तित कर दिया। ब्रह्मा के मन में विचार भर दिए कि काल ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ही पूज्य है। वह निराकार है। इससे भिन्न कोई अन्य परमात्मा नहीं हैं। जो तुझे ज्ञान दिया जा रहा है वह मिथ्या है। यह अग्नि ऋषि जो तेरे पास आया था वह अज्ञानी है। इसकी बातों में नहीं आना है। हे धर्मदास! ब्रह्मा ने काल ब्रह्म के प्रभाव से प्रभावित होकर मेरे ज्ञान को ग्रहण नहीं किया तथा कहा हे ऋषिवर! जो ज्ञान आप बता रहे हो यह अप्रमाणित है। इसलिए विश्वास के योग्य नहीं है। वेदों में केवल एक परमात्मा की पूजा का विधान है। उसका केवल एक ओं (ॐ) ही जाप करने का है। मुझे पूर्ण ज्ञान है मुझे आप का ज्ञान अस्वीकार्य है।

हे धर्मदास! मैंने बहुत कोशिश की ब्रह्मा को समझाने की तथा बताया कि वेद ज्ञान दाता ब्रह्म किसी अन्य पूर्ण ब्रह्म के विषय में कह रहा है। उसकी प्राप्ति के लिए तथा उसके विषय में तत्त्व से जानने के लिए किसी तत्त्वदर्शी सन्त (धीराणाम्) की खोज करो फिर उनसे वह तत्त्वज्ञान सुनों।

प्रमाणः- यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10 व 13 में स्पष्ट वर्णन है तथा गीता अध्याय 4 श्लोक 34 में भी स्पष्ट कहा है। प्रमाणों को देख कर भी काल ब्रह्म के अति प्रभाव के कारण ब्रह्मा ने मेरे विचारों में रूचि नहीं ली। मैंने जान लिया कि ब्रह्मा को काल ने भ्रमित कर दिया है। इसलिए विष्णु जी ने भी अरूचि की तो मैं वहाँ से शिव शंकर के पास गया। यही स्थिति शिव की देख कर मैं नीचे पृथ्वी लोक में आया।

वर्तमान में चल रही चतुर्युगी के प्रथम सत्ययुग में मैंने (परमेश्वर कबीर जी ने) एक सरोवर में

कमल के फूल पर शिशु रूप धारण किया। एक ब्राह्मण दम्पति निःसन्तान था। वह विद्याधर नामक ब्राह्मण अपनी पत्नी दीपिका के साथ अपनी ससुराल से आ रहा था। उनकी आधी आयु बीत चुकी थी। कोई संतान नहीं थी। दीपिका को अपने पिता के घर पर कुछ औरतों ने हमदर्दी जताते हुए कई बार कहा था कि संतान बिना स्त्री का कोई सम्मान नहीं करता। एक संतान तो होनी ही चाहिए। इन बातों को याद करके दीपिका रो रही थी तथा सुबकी लेकर अपने ईष्ट शिव जी से संतान की प्रार्थना कर रही थी। विचार कर रही थी कि व्द्धावस्था में हमारी ऊँगली पकड़ने वाला भी नहीं है। वह समय कैसे बीतेगा? इतने में एक सरोवर दिखाई दिया। प्यास लगी थी। वे सरोवर पर विश्राम हेतु रूके। वहाँ एक नवजात् शिशु को कमल के फूल पर प्राप्त करके अति प्रसन्न हुए। उसे परमेश्वर शिव की कपा से प्राप्त जान कर घर ले आए। एक अन्य ब्राह्मण से नाम रखवाया उसने मेरा नाम सत्सुकत रखा। मेरी प्रेरणा से कंवारी गायों ने दूध देना प्रारम्भ किया। उनके दूध से मेरी परवरिश लीला हुई। गुरूकुल में शिक्षा की लीला की। ऋषि जी जो वेद मन्त्र भूल जाते तो मैं खड़ा होकर पूरा करता। ऋषि जी वेद मन्त्रों का गलत अर्थ करते मैं विरोध करता। इस कारण से मुझे गुरूकुल से निकाल दिया। पथ्वी पर घूम कर मैंने बहुत से ऋषियों से ज्ञान चर्चा की परन्तु शास्त्रविरूद्ध ज्ञान पर आधारित होने के कारण किसी भी ऋषि-महर्षि ने ज्ञान सुनने की चेष्टा ही नहीं की। महर्षि मनु से भी मेरी वेद ज्ञान पर भी चर्चा हुई। महर्षि मनु ने ब्रह्मा जी से ही ज्ञान ग्रहण किया था। महर्षि मनु जी ने मुझे उल्टा ज्ञान देने वाला बताया तथा मेरा उपनाम वाम देव रख दिया। मैंने महर्षि मनु व अन्य ऋषियों से यहाँ तक कहा कि वह पूर्ण परमात्मा मैं ही हूँ। उन्होंने मेरा उपहास किया तथा कहा आप यहाँ है तो आपका सतलोक तो आपके बिना सुनसान पड़ा होगा वहाँ सतलोक में जाने का क्या लाभ? वहाँ गये प्राणी तो अनाथ हैं। मैंने कहा मैं ऊपर भी विराजमान हूँ। तब मनु जी सहित सर्व ऋषियों ने ठहाका लगा कर कहा फिर तो आपका नाम वामदेव उचित है। वामदेव का अर्थ है कि दो स्थानों पर निवास करने वाला, भी है। वाम अक्षर दो का बोधक है। इस प्रकार उन ज्ञानहीन व्यक्तियों ने मेरे तत्त्वज्ञान को ग्रहण नहीं किया। (वामदेव का प्रमाण शिवपुराण पष्ठ 606-607 कैलाश संहिता प्रथम अध्याय में है।) बहुत से प्रयत्न करने पर कुछ पुण्यात्माओं ने मेरा उपदेश ग्रहण किया। मैंने स्वस्म वेद (कविगिरः=कविर्वाणी) की रचना की जिसकी काल द्वारा प्रेरित ज्ञानहीन ऋषियों ने बहुत निन्दा की तथा जनता से इसे न पढ़ने का आग्रह किया। सतयुग के प्राणी मुझे केवल एक अच्छा कवि ही मानते थे। इस कारण से सतयुग में बहुत ही कम जीवों ने मेरी शरण् ग्रहण की। ब्राह्मण विद्याधर वाली आत्मा त्रेता युग में वेदविज्ञ ऋषि हुए तथा कलयुग में ऋषि रामानन्द हुए तथा दीपिका वाली आत्मा त्रेता में सूर्या हुई तथा कलयुग में कमाली हुई।

संत गरीबदास जी ने अपने प्रभु तथा गुरू कबीर जी की महिमा का वर्णन करने में कमाल कर रखा है। सच्चाई से परिपूर्ण है। कहा है कि पूर्ण प्रभु कबीर जी (कविर्देव) सतयुग में सतसुकत नाम से स्वयं प्रकट हुए थे। उस समय गरुड़ जी, श्री ब्रह्मा जी श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी आदि को सतज्ञान समझाया था।

आदि अंत हमरै नाहीं, मध्य मिलावा मूला। ब्रह्मा को ज्ञान सुनाइया, धर पिण्डा अस्थूल।।
श्वेत भूमि को हम गए, जहाँ विष्णु विश्वम्भर नाथ। हरियम् हीरा नाम देय, अष्ट कमल दल स्वांति।।
हम बैरागी ब्रह्म पद, सन्यासी महादेव। सोहं नाम दिया शंकर कूं, करे हमारी सेव।।

इस प्रकार सतयुग में परमेश्वर कविर्देव जी जो सतसुकत नाम से आए थे उस समय के ऋषियों व साधकों को वास्तविक ज्ञान समझाया करते थे। परन्तु ऋषियों ने स्वीकार नहीं किया। सतसुकत जी

के स्थान पर परमेश्वर को ''वामदेव'' कहने लगे।

इसी लिए यजुर्वेद अध्याय 12 मंत्र 4 में विवरण है कि यजुर्वेद के वास्तविक ज्ञान को वामदेव ऋषि ने सही जाना तथा अन्य को समझाया।

सुपर्णोऽसि गरुत्माँस्त्रिवृत्ते शिरो गायत्रं चक्षुर्बृहद्रथन्तरे पक्षौ ।
स्तोमऽआत्मा छन्दाᳬंस्यङ्गानि यजूᳬंषि नाम । साम ते तनूर्वामदेव्यं
यज्ञायज्ञियं पुच्छं धिष्ण्याः शफाः । सुपर्णोऽसि गरुत्मान्दिवं गच्छ
स्वः पत ॥४॥

पदार्थः—हे विद्वन् ! जिस कारण (**ते**) आपका (**त्रिवृत्**) तीन कर्म्म, उपासना और ज्ञानों से युक्त (**शिरः**) दुःखों का जिस से नाश हो (**गायत्रम्**) गायत्री छन्द से कहे विज्ञानरूप अर्थ (**चक्षुः**) नेत्र (**बृहद्रथन्तरे**) बड़े २ रथों के सहाय से दुःखों को छुड़ाने वाले (**पक्षौ**) इधर उधर के अवयव (**स्तोमः**) स्तुति के योग्य ऋग्वेद (**आत्मा**) अपना स्वरूप (**छन्दांसि**) उष्णिक् आदि छन्द (**अंगानि**) कान आदि अंग, (**यजूंषि**) यजुर्वेद के मन्त्र (**नाम**) नाम (**यज्ञायज्ञियम्**) ग्रहण करने और छोड़ने योग्य व्यवहारों के योग्य (**वामदेव्यम्**) वामदेव ऋषि ने जाने वा पढ़ाये (**साम**) तीसरे सामवेद (**ते**) आपका (**तनूः**) शरीर है इससे आप (**गरुत्मान्**) महात्मा (**सुपर्णः**) सुन्दर सम्पूर्ण लक्षणों से युक्त (**असि**) हैं। जिस से (**धिष्ण्याः**) शब्द करने के हेतुओं में साधु (**शफा**) खुर तथा (**पुच्छम्**) बढ़ी पूँछ के समान अन्त्य का अवयव है उस के समान जो (**गरुत्मान्**) प्रशंसित शब्दोच्चारण से युक्त (**सुपर्णः**) सुन्दर उड़ने वाले (**असि**) है उस पक्षी के समान आप (**दिवम्**) सुन्दर विज्ञान को (**गच्छ**) प्राप्त हूजिये और (**स्वः**) सुख को (**पत**) ग्रहण कीजिये ॥४॥

यह यजुर्वेद अध्याय 12 मंत्र 4 की फोटोकॉपी है जिसका अनुवाद महर्षि दयानन्द सरस्वती जी ने किया है तथा सार्वदेशिक आर्य प्रतिनिधि सभा दिल्ली द्वारा छपाया गया है। इसमें स्पष्ट है कि वेदों के ज्ञान को वामदेव ऋषि ने ठीक से समझा तथा अन्य को समझाया।

पवित्र वेदों के ज्ञान को समझने के लिए कपया विचार करें :-

''वेदों में कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर का प्रमाण''

(पवित्र वेदों में प्रवेश से पहले)

प्रभु जानकारी के लिए पवित्र चारों वेद प्रमाणित शास्त्र हैं। पवित्र वेदों की रचना उस समय हुई थी जब कोई अन्य धर्म नहीं था। इसलिए पवित्र वेदवाणी किसी धर्म से सम्बन्धित नहीं है, केवल आत्म कल्याण के लिए है। इनको जानने के लिए निम्न व्याख्या बहुत ध्यान तथा विवेक के साथ पढ़नी तथा विचारनी होगी।

प्रभु की विस्तत तथा सत्य महिमा वेद बताते हैं। (अन्य शास्त्र''श्री गीता जी व चारों वेदों तथा पूर्वोक्त प्रभु प्राप्त महान संतों तथा स्वयं कबीर साहेब(कविर्देव) जी की अपनी पूर्ण परमात्मा की अमत वाणी के अतिरिक्त'' अन्य किसी ऋषि साधक की अपनी उपलब्धि है। जैसे छः शास्त्र ग्यारह उपनिषद् तथा सत्यार्थ प्रकाश आदि। यदि ये वेदों की कसौटी में खरे नहीं उतरते हैं तो यह सम्पूर्ण

ज्ञान नहीं है।)

पवित्र वेद तथा गीता जी स्वयं काल प्रभु(ब्रह्म) दत्त हैं। जिन में भक्ति विधि तथा उपलब्धि दोनों सही तौर पर वर्णित हैं। इनके अतिरिक्त जो पूजा विधि तथा अनुभव हैं वह अधूरा समझें। यदि इन्हीं के अनुसार कोई साधक अनुभव बताए तो सत्य जानें। क्योंकि कोई भी प्राणी प्रभु से अधिक नहीं जान सकता।

वेदों के ज्ञान से पूर्वोक्त महात्माओं का विवरण सही मिलता है। इससे सिद्ध हुआ कि वे सर्व महात्मा पूर्ण थे। पूर्ण परमात्मा का साक्षात्कार हुआ है तथा बताया है वह परमात्मा कबीर साहेब(कविर् देव) है।

वही ज्ञान चारों पवित्र वेद तथा पवित्र गीता जी भी बताते हैं।

कलियुगी ऋषियों ने वेदों का टीका (भाषा भाष्य) ऐसे कर दिया जैसे कहीं दूध की महिमा कही गई हो और जिसने कभी जीवन में दूध देखा ही न हो और वह अनुवाद कर रहा हो, वह ऐसे करता है :-

पोष्टिकाहार असि। पेय पदार्थ असि। श्वेदसि।
अमृत उपमा सर्वा मनुषानाम पेय्याम् सः दूग्धः असिः।

(पौष्टिकाहार असि)=कोई शरीर पुष्ट कर ने वाला आहार है (पेय पदार्थ) पीने का तरल पदार्थ (असि) है। (श्वेत्) सफेद (असि) है। (अमृत उपमा) अमृत सदृश है (सर्व) सब (मनुषानाम्) मनुष्यों के (पेय्याम्) पीने योग्य (सः) वह (दूग्धः) पौष्टिक तरल (असि) है।

भावार्थ किया :- कोई सफेद पीने का तरल पदार्थ है जो अमृत समान है, बहुत पौष्टिक है, सब मनुष्यों के पीने योग्य है, वह स्वयं तरल है। फिर कोई पूछे कि वह तरल पदार्थ कहाँ है? उत्तर मिले वह तो निराकार है। प्राप्त नहीं हो सकता। यहाँ पर दूग्धः को तरल पदार्थ लिख दिया जाए तो उस वस्तु ''दूध'' को कैसे पाया व जाना जाए जिसकी उपमा ऊपर की है? यहाँ पर (दूग्धः) को दूध लिखना था जिससे पता चले कि वह पौष्टिक आहार दूध है। फिर व्यक्ति दूध नाम से उसे प्राप्त कर सकता है।

विचार :- यदि कोई कहे दुग्धः को दूध कैसे लिख दिया? यह तो वाद-विवाद का प्रत्यक्ष प्रमाण ही हो सकता है। जैसे दुग्ध का दूध अर्थ गलत नहीं है। भाषा भिन्न होने से हिन्दी में दूध तथा क्षेत्रीय भाषा में दूधू लिखना भी संस्कृत भाषा में लिखे दुग्ध का ही बोध है। जैसे पलवल शहर के आसपास के ग्रामीण परवर कहते हैं। यदि कोई कहे कि परवर को पलवल कैसे सिद्ध कर दिया, मैं नहीं मानता। यह तो व्यर्थ का वाद विवाद है। ठीक इसी प्रकार कोई कहे कि कविर्देव को कबीर परमेश्वर कैसे सिद्ध कर दिया यह तो व्यर्थ का वाद-विवाद ही है। जैसे ''यजुर्वेद'' है यह एक धार्मिक पवित्र पुस्तक है जिसमें प्रभु की यज्ञिय स्तुतियों की ऋचाऐं लिखी हैं तथा प्रभु कैसा है? कैसे पाया जाता है? सब विस्तृत वर्णन है।

अब पवित्र यजुर्वेद की महिमा कहें कि प्रभु की यज्ञीय स्तुतियों की ऋचाओं का भण्डार है। बहुत अच्छी विधि वर्णित है। एक अनमोल जानकारी है और यह लिखें नहीं कि वह ''यजुर्वेद'' है अपितु यजुर्वेद का अर्थ लिख दें कि यज्ञीय स्तुतियों का ज्ञान है। तो उस वस्तु(पवित्र पुस्तक) को कैसे पाया जा सके? उसके लिए लिखना होगा कि वह पवित्र पुस्तक ''यजुर्वेद'' है जिसमें यज्ञीय ऋचाऐं हैं।

अब यजुर्वेद की सन्धिच्छेद करके लिखें। यजुर्+वेद, भी वही पवित्र पुस्तक यजुर्वेद का ही बोध है। यजुः+वेद भी वही पवित्र पुस्तक यजुर्वेद का ही बोध है। जिसमें यज्ञीय स्तुति की ऋचाऐं हैं। उस धार्मिक पुस्तक को यजुर्वेद कहते हैं। ठीक इसी प्रकार चारों पवित्र वेदों में लिखा है कि वह कविर्देव(कबीर परमेश्वर) है। जो सर्व शक्तिमान, जगत्पिता, सर्व संष्टि रचनहार, कुल मालिक तथा पाप विनाशक व काल की कारागार से छुटवाने वाला अर्थात् बंदी छोड़ है।

इसको कविर्+देव लिखें तो भी कबीर परमेश्वर का बोध है। कविः+देव लिखें तो भी कबीर परमेश्वर अर्थात् कविर् प्रभु का ही बोध है।

इसलिए कविर्देव उसी कबीर साहेब का ही बोध करवाता है :- सर्व शक्तिमान, अजर-अमर, सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार कुल मालिक है क्योंकि पूर्वोक्त प्रभु प्राप्त सन्तों ने अपनी-अपनी मातभाषा में 'कविर्' को 'कबीर' बोला है तथा 'वेद' को 'बेद' बोला है। इसलिए 'व' और 'ब' के अंतर हो जाने पर भी पवित्र शास्त्र वेद का ही बोध है।

विचार :- जैसे कोई अंग्रेजी भाषा में लिखें कि **God (Kavir) Kaveer is all mighty** इसका हिन्दी अनुवाद करके लिखें कविर या कवीर परमेश्वर सर्व शक्तिमान है।

अब अंग्रेजी भाषा में तो हलन्त (्) की व्यवस्था ही नहीं है। फिर मात्र भाषा में इसी को कबीर कहने तथा लिखने लगे।

यही परमात्मा कविर्देव(कबीर परमेश्वर) तीन युगों में नामान्तर करके आते हैं जिनमें इनके नाम रहते हैं - सतयुग में सत सुकत, त्रेतायुग में मुनिन्द्र, द्वापरयुग में करुणामय तथा कलयुग में कबीर देव (कविर्देव)। वास्तविक नाम उस पूर्ण ब्रह्म का कविर् देव ही है। जो संष्टि रचना से पहले भी अनामी लोक में विद्यमान थे। इन्हीं के उपमात्मक नाम सतपुरुष, अकाल मूर्त, पूर्ण ब्रह्म, अलख पुरुष, अगम पुरुष, परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं। उसी परमात्मा को चारों पवित्र वेदों में ''कविरमितौजा'', ''कविरघांरि'', ''कविरग्नि'' तथा ''कविर्देव'', कहा है तथा सर्वशक्तिमान, सर्व संष्टि रचनहार बताया है। पवित्र कुरान शरीफ में सुरत फुर्कानी नं. 25 आयत नं. 19,21,52,58,59 में भी प्रमाण है।

कई एक का विरोध है कि जो शब्द कविर्देव' है इसको सन्धिच्छेद करने से कविः+देवः बन जाता है यह कबिर् परमेश्वर या कबीर साहेब कैसे सिद्ध किया? व को ब तथा छोटी इ (ि) की मात्रा को बड़ी ई (ी) की मात्रा करना बेसमझी है।

विचार :- एक ग्रामीण लड़के की सरकारी नौकरी लगी। जिसका नाम कर्मवीर पुत्र श्री धर्मवीर सरकारी कागजों में तथा करमबिर पुत्र श्री धरमबिर पुत्र परताप गाँव के चौकीदार की डायरी में जन्म के समय का लिखा था। सरकार की तरफ से नौकरी लगने के बाद जाँच पड़ताल कराई जाती है। एक सरकारी कर्मचारी जाँच के लिए आया। उसने पूछा कर्मवीर पुत्र श्री धर्मवीर का मकान कौन-सा है, उसकी अमूक विभाग में नौकरी लगी है। गाँव में कर्मवीर को कर्मा तथा उसके पिता जी को धर्मा तथा दादा जी को प्रता आदि उर्फ नामों से जानते थे। व्यक्तियों ने कहा इस नाम का लड़का इस गाँव में नहीं है। काफी पूछताछ के बाद एक लड़का जो कर्मवीर का सहपाठी था, उसने बताया यह कर्मा की नौकरी के बारे में है। तब उस बच्चे ने बताया यही कर्मबीर उर्फ कर्मा तथा धर्मबीर उर्फ धर्मा ही है। फिर उस कर्मचारी को शंका उत्पन्न हुई कि कर्मबीर नहीं कर्मवीर है। उसने कहा चौकीदार की डायरी लाओ, उसमें भी लिखा था - ''करमबिर पुत्र धरमबिर पुत्र परताप'' पूरा ''र''

''व'' के स्थान पर ''ब'' तथा छोटी ''ि'' की मात्रा लगी थी। तो भी वही बच्चा कर्मवीर ही सिद्ध हुआ, क्योंकि गाँव के नम्बरदारों तथा प्रधानों ने भी गवाही दी कि बेशक मात्रा छोटी बड़ी या ''र'' आधा या पूरा है, लड़का सही इसी गाँव का है। सरकारी कर्मचारी ने कहा नम्बरदार अपने हाथ से लिख दे। नम्बरदार ने लिख दिया मैं करमविर पूतर धरमविर को जानता हूँ जो इस गाम का बासी है और हस्ताक्षर कर दिए। बेशक नम्बरदार ने विर में छोटी ई(ि) की मात्रा का तथा करम में बड़े ''र'' का प्रयोग किया है, परन्तु हस्ताक्षर करने वाला गाँव का गणमान्य व्यक्ति है। किसी को कोई आपत्ति नहीं हो सकती, क्योंकि नाम की स्पेलिंग गलत नहीं होती।

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा का नाम सरकारी दस्तावेज(वेदों) में कविर्देव है, परन्तु गाँव(पथ्वी) पर अपनी-2 मात भाषा में कबीर, कबिर, कबीरा, कबीरन् आदि नामों से जाना जाता है। इसी को नम्बरदारों(आँखों देखा विवरण अपनी पवित्र वाणी में ठोक कर गवाही देते हुए आदरणीय पूर्वोक्त सन्तों) ने कविर्देव को हक्का कबीर, सत् कबीर, कबीरा, कबीरन्, खबीरा, खबीरन् आदि लिख कर हस्ताक्षर कर रखे हैं।

वर्तमान (सन् 2006)से लगभग 600 वर्ष पूर्व जब परमात्मा कबीर जी (कविर्देव जी) स्वयं प्रकट हुए थे उस समय सर्व सद्ग्रन्थों का वास्तविक ज्ञान लोकोक्तियों (दोहों, चोपाईयों, शब्दों अर्थात् कविताओं) के माध्यम से साधारण भाषा में जन साधारण को बताया था। उस तत्त्व ज्ञान को उस समय के संस्कत भाषा व हिन्दी भाषा के ज्ञाताओं ने यह कह कर ठुकरा दिया कि कबीर जी तो अशिक्षित है। इस के द्वारा कहा गया ज्ञान व उस में उपयोग की गई भाषा व्याकरण दष्टिकोण से ठीक नहीं है। जैसे कबीर जी ने कहा है :-

कबीर बेद मेरा भेद है, मैं ना बेदों माहीं।
जौण बेद से मैं मिलु ये बेद जानते नाहीं।।

भावार्थ :- परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी ने कहा है कि जो चार वेद है ये मेरे विषय में ही ज्ञान बता रहे हैं परन्तु इन चारों वेदों में वर्णित विधि द्वारा मैं (पूर्ण ब्रह्म) प्राप्त नहीं हो सकता। जिस वेद (स्वसम अर्थात् सूक्ष्म वेद) में मेरी प्राप्ति का ज्ञान है। उस को चारों वेदों के ज्ञाता नहीं जानते। इस वचन को सुनकर। उस समय के आचार्यजन कहते थे कि कबीर जी को भाषा का ज्ञान नहीं है। देखो वेद का बेद कहा है। नहीं का नाहीं कहा है। ऐसे व्यक्ति को शास्त्रों का क्या ज्ञान हो सकता है? इसलिए कबीर जी मिथ्या भाषण करते हैं। इस की बातों पर विश्वास नहीं करना। स्वामी दयानन्द जी ने सत्यार्थ प्रकाश समुल्लास ग्यारह पष्ठ 306 पर कबीर जी के विषय में यही कहा है। वर्तमान में मुझ दास (संत रामपाल दास) के विषय में विज्ञापनों में लिखे लेख पर आर्य समाज के आचार्यों ने यही आपत्ति व्यक्त की थी कि रामपाल को हिन्दी भाषा भी सही नहीं लिखनी आती व को ब लिखता है छोटी-बड़ी मात्राओं को गलत लिखता है। कोमा व हलन्त भी नहीं लगाता। इसका ज्ञान कैसे सही माना जाए।

विचार :- किसी लड़के का विवाह एक सुन्दर सुशील युवती से हो गया। उसने साधारण वस्त्र पहने थे। मेकअप (हार, सिंगार) नहीं कर रखा था। उस के विषय में कोई कहे कि ''यह भी कोई विवाह है। वधु ने मेकअप (हार, सिंगार-आभूषण आदि नहीं पहने) नहीं किया है। विचार करें विवाह का अर्थ है पुरूष को पत्नी प्राप्ति। यदि मेकअप (श्रंगार) नहीं कर रखा तो वांच्छित वस्तु प्राप्त है। यदि श्रंगार कर रखा है लड़की ने तो भी बुरा नहीं किया, परन्तु एक श्रंगार के अभाव से विवाह को

ही नकार देना कौन सी बुद्धिमता है। ठीक इसी प्रकार परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ तथा संत रामपाल दास जी महाराज द्वारा दिया तत्त्व ज्ञान है। वास्तविक ज्ञान प्राप्त है। यदि भाषा में श्रंगार का अभाव अर्थात् मात्राओं व हलन्तों की कमी है तो विद्वान पुरुष कृप्या ठीक करके पढ़ें।

इस तरह इस उलझी हुई ज्ञानगुत्थी को सुलझाया जाएगा। इसमें भाषा तथा व्याकरण की भूमिका क्या है?

स्वामी दयानन्द सरस्वती जी ने अपने द्वारा रचे पवित्र उपनिषद् ''सत्यार्थ प्रकाश'' के सातवें समुलास में (पृष्ठ नं. 217, 212 अजमेर से प्रकाशित तथा पृष्ठ संख्या 173 दीनानगर दयानन्द मठ पंजाब से प्रकाशित) लिखा है, उसका भावार्थ है कि ब्रह्म ने वेद वाणी चार ऋषियों में जीवस्थ रूप से बोले। जैसे लग रहा था कि ऋषि वेद बोल रहे थे, परन्तु ब्रह्म बोल रहा था तथा ऋषियों का मुख प्रयोग कर रहा था। (''जीवस्थ रूप'' का भावार्थ है जैसे ऋषियों के अन्दर कोई और जीव स्थापित होकर बोल रहा हो) बाद में उन ऋषियों को कुछ मालूम नहीं कि क्या बोला, क्या लिखा?

(जैसे कोई प्रेतात्मा किसी के शरीर में प्रवेश करके बोलती है। उस समय लग रहा होता है कि शरीर वाला जीव ही बोल रहा है, परन्तु प्रेत के निकल जाने के बाद उस शरीर वाले जीव को कुछ मालूम नहीं होता, मैंने क्या बोला था)।

इसी प्रकार बाद में ऋषियों ने वेद भाषा को जानने के लिए व्याकरण निघटु आदि की रचना की। जो स्वामी दयानन्द जी के शब्दों में सत्यार्थ प्रकाश तीसरे समुल्लास (पृष्ठ नं. 80, अजमेर से प्रकाशित तथा पृष्ठ संख्या 64 दीनानगर पंजाब से प्रकाशित) में पवित्र चारों वेद ईश्वर कृत होने से निभ्रात हैं, वेदों का प्रमाण वेद ही हैं। चारों ब्राह्मण, व्याकरण, निघटु आदि ऋषियों कृत होने से त्रुटि युक्त हो सकते हैं। उपरोक्त विचार स्वामी दयानन्द जी के हैं।

विचार करें वेद पढ़ने वाले ऋषियों के अपने विचारों से रचे उपनिषद् एक दूसरे के विपरीत व्याख्या कर रहे हैं। इसलिए वेद ज्ञान को तत्त्वज्ञान से ही समझा जा सकता है। तत्त्वज्ञान (स्वसम वेद) पूर्ण ब्रह्म कविर्देव ने स्वयं आकर बताया है तथा चारों वेदों का ज्ञान ब्रह्म द्वारा बताया गया है और वेदों को बोलने वाला ब्रह्म स्वयं पवित्र यजुर्वेद अध्याय नं. 40 मन्त्र नं. 10 में कह रहा है कि उस पूर्ण ब्रह्म को कोई तो (सम्भवात्) जन्म लेकर प्रकट होने वाला अर्थात् आकार में(आहुः) कहता है तथा कोई (असम्भवात्) जन्म न लेने वाला अर्थात् व निराकार(आहुः) कहते हैं। परन्तु इसका वास्तविक ज्ञान तो(धीराणाम्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्त्वदर्शी संतजन (विचचक्षिरे) पूर्ण निर्णायक भिन्न भिन्न बताते हैं (शुश्रुम्) उसको ध्यानपूर्वक सुनो। इससे स्वसिद्ध है कि वेद बोलने वाला ब्रह्म भी स्वयं कह रहा है कि उस पूर्ण ब्रह्म के बारे में मैं भी पूर्ण ज्ञान नहीं रखता। उसको तो कोई तत्त्वदर्शी संत ही बता सकता है। इसी प्रकार इसी अध्याय के मन्त्र नं. 13 में कहा है कि कोई तो (विद्याया) अक्षर ज्ञानी एक भाषा के जानने वाले को ही विद्वान कहते हैं, दूसरे (अविद्याया) निरक्षर को अज्ञानी कहते हैं, यह जानकारी भी (धीराणाम्) तत्त्वदर्शी संतजन ही (विचचक्षिरे) विस्तृत व्याख्या ब्यान करते हैं (तत्) उस तत्त्वज्ञान को उन्हीं से (शुश्रुम्) ध्यानपूर्वक सुनो अर्थात् वही तत्त्वदर्शी संत ही बताएगा कि विद्वान अर्थात् ज्ञानी कौन है तथा अज्ञानी अर्थात् अविद्वान कौन है।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों को विवेचन करके सद्भावना पूर्वक पुनर्विचार करें तथा व को ब तथा छोटी बड़ी मात्राओं की शुद्धि-अशुद्धि से ही ज्ञानी व अज्ञानी की पहचान नहीं होती, वह तो तत्त्वज्ञान से ही होती है।

(कविर् देव) = कबीर परमेश्वर के विषय में 'व' को 'ब' कैसे सिद्ध किया है? छोटी इ(ि) की मात्रा बड़ी ई(ी) की मात्रा कैसे सिद्ध हो सकती है? इस वाद-विवाद में न पड़कर तत्त्वज्ञान को समझना है।

जैसे यजुर्वेद है, यह एक पवित्र पुस्तक है। इसके विषय में कहीं संस्कत भाषा में विवरण किया हो जहां यजुः या यजुम् आदि शब्द लिखें हो तो भी पवित्र पुस्तक यजुर्वेद का ही बोध समझा जाता है। इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा का वास्तविक नाम कविर्देव है। इसी को भिन्न-भिन्न भाषा में कबीर साहेब, कबीर परमेश्वर कहने लगे। कई श्रद्धालु शंका व्यक्त करते हैं कि कविर् को कबीर कैसे सिद्ध कर दिया। व्याकरण दष्टिकोण से कविः का अर्थ सर्वज्ञ होता है। दास की प्रार्थना है कि प्रत्येक शब्द का कोई न कोई अर्थ तो बनता ही है। रही बात व्याकरण की। भाषा प्रथम बनी क्योंकि वेद वाणी प्रभु द्वारा कही है, तथा व्याकरण बाद में ऋषियों द्वारा बनाई है। यह त्रुटियुक्त हो सकती है। वेद के अनुवाद (भाषा-भाष्य) में व्याकरण व्यतय है अर्थात् असंगत तथा विरोध भाव है। क्योंकि वेद वाणी मंत्रों द्वारा पदों में है। जैसे पलवल शहर के आस-पास के व्यक्ति पलवल को परवर बोलते हैं। यदि कोई कहे कि पलवल को कैसे परवर सिद्ध कर दिया। यही कविर् को कबीर कैसे सिद्ध कर दिया कहना मात्र है। जैसे क्षेत्रीय भाषा में पलवल शहर को परवर कहते हैं। इसी प्रकार कविर् को कबीर बोलते हैं, प्रभु वही है। महर्षि दयानन्द जी ने ''सत्यार्थ प्रकाश'' समुल्लास 4 पष्ठ 100 पर (दयानन्द मठ दीनानगर पंजाब से प्रकाशित पर) ''देवकामा''का अर्थ देवर की कामना करने किया है देव को पूरा '' र '' लिख कर देवर किया है। कविर् को कविर फिर भाषा भिन्न कबीर लिखने व बोलने में कोई आपत्ति या व्याकरण की त्रुटि नहीं है। पूर्ण परमात्मा कविर्देव है, यह प्रमाण यजुर्वेद अध्याय 29 मंत्र 25 तथा सामवेद संख्या 1400 में भी है जो निम्न है :-

यजुर्वेद के अध्याय नं. 29 के श्लोक नं. 25 **(संत रामपाल दास द्वारा भाषा-भाष्य) :-**

समिद्धो•अद्य मनुषो दुरोणे देवो देवान्यजसि जातवेदः।
आ च वह मित्रमहश्चिकित्वान्त्वं दूतः कविरसि प्रचेताः।।25।।

समिद्धः—अद्य—मनुषः—दुरोणे—देवः—देवान्—यज्—असि—जातवेदः— आ— च—वह—मित्रमहः—चिकित्वान्—त्वम्—दूतः—कविर्—असि—प्रचेताः

अनुवाद :— (अद्य) आज अर्थात् वर्तमान में (दुरोणे) शरीर रूप महल में दुराचार पूर्वक (मनुषः) झूठी पूजा में लीन मननशील व्यक्तियों को (समिद्धः) लगाई हुई आग अर्थात् शास्त्र विधि रहित वर्तमान पूजा जो हानिकारक होती है, उसके स्थान पर (देवान्) देवताओं के (देवः) देवता (जातवेदः) पूर्ण परमात्मा सतपुरूष की वास्तविक (यज्) पूजा (असि) है। (आ) दयालु (मित्रमहः) जीव का वास्तविक साथी पूर्ण परमात्मा ही अपने (चिकित्वान्) स्वस्थ ज्ञान अर्थात यथार्थ भक्ति को (दूतः) संदेशवाहक रूप में (वह) लेकर आने वाला (च) तथा (प्रचेताः) बोध कराने वाला (त्वम्) आप (कविरसि) कविर्देव है अर्थात् कबीर परमेश्वर हैं।

भावार्थ - जिस समय पूर्ण परमात्मा प्रकट होता है उस समय सर्व ऋषि व सन्त जन शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण अर्थात् पूजा द्वारा सर्व भक्त समाज को मार्ग दर्शन कर रहे होते हैं। तब अपने तत्त्वज्ञान अर्थात् स्वस्थ ज्ञान का संदेशवाहक बन कर स्वयं ही कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु ही आता है।

संख्या नं. 1400 सामवेद उतार्चिक अध्याय नं. 12 खण्ड नं. 3 श्लोक नं. 5

(संत रामपाल दास द्वारा भाषा-भाष्य):-

भद्रा वस्त्रा समन्या३वसानो महान् कविर्निवचनानि शंसन्।
आ वच्यस्व चम्वोः पूयमानो विचक्षणो जागविर्देववीतौ।।5।।

भद्रा—वस्त्रा—समन्या—वसानः—महान्—कविर्—निवचनानि—शंसन्— आवच्यस्व—चम्वोः—पूयमानः—विचक्षणः— जागविः—देव—वीतौ

अनुवाद :— (सम् अन्या) अपने शरीर जैसा अन्य (भद्रा वस्त्रा) सुन्दर चोला यानि शरीर (वसानः) धारण करके (महान् कविर्) समर्थ कविर्देव यानि कबीर परमेश्वर (निवचनानि शंसन्) अपने मुख कमल से वाणी बोलकर यथार्थ अध्यात्म ज्ञान बताता है, यथार्थ वर्णन करता है। जिस कारण से (देव) परमेश्वर की (वितौ) भक्ति के लाभ को (जागविः) जागत यानि प्रकाशित करता है। (विचक्षणः) कथित विद्वान सत्य साधना के स्थान पर (आ वच्यस्व) अपने वचनों से (पूयमानः) आन—उपासना रूपी मवाद (चम्वोः) आचमन करा रखा होता है यानि गलत ज्ञान बता रखा होता है।

भावार्थ :- जैसे यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र एक में कहा है कि 'अग्नेः तनुः असि = परमेश्वर सशरीर है। विष्णवे त्वा सोमस्य तनुः असि = उस अमर प्रभु का पालन पोषण करने के लिए अन्य शरीर है जो अतिथि रूप में कुछ दिन संसार में आता है। तत्त्व ज्ञान से अज्ञान निंद्रा में सोए प्रभु प्रेमियों को जगाता है। वही प्रमाण इस मंत्र में है कि कुछ समय के लिए पूर्ण परमात्मा कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु अपना रूप बदलकर सामान्य व्यक्ति जैसा रूप बनाकर पथ्वी मण्डल पर प्रकट होता है तथा कविर्निवचनानि शंसन् अर्थात् कविर्वाणी बोलता है। जिसके माध्यम से तत्त्वज्ञान को जगाता है तथा उस समय महर्षि कहलाने वाले चतुर प्राणी मिथ्याज्ञान के आधार पर शास्त्र विधि अनुसार सत्य साधना रूपी अमत के स्थान पर शास्त्र विधि रहित पूजा रूपी मवाद को श्रद्धा के साथ आचमन अर्थात् पूजा करा रहे होते हैं। उस समय पूर्ण परमात्मा स्वयं प्रकट होकर तत्त्वज्ञान द्वारा शास्त्र विधि अनुसार साधना का ज्ञान प्रदान करता है।

पवित्र ऋग्वेद के निम्न मंत्रों में भी पहचान बताई है कि जब वह पूर्ण परमात्मा कुछ समय संसार में लीला करने आता है तो शिशु रूप धारण करता है। उस पूर्ण परमात्मा की परवरिश (अध्न्य धेनवः) कंवारी गाय द्वारा होती है। फिर लीलावत् बड़ा होता है तो अपने पाने व सतलोक जाने अर्थात् पूर्ण मोक्ष मार्ग का तत्त्वज्ञान (कविर्गिभिः) कबीर बाणी द्वारा कविताओं द्वारा बोलता है, जिस कारण से प्रसिद्ध कवि कहलाता है, परन्तु वह स्वयं कविर्देव पूर्ण परमात्मा ही होता है जो तीसरे मुक्ति धाम सतलोक में रहता है।

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9 तथा सूक्त 96 मंत्र 17 से 20 :-

ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9

अभी इमं अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम्। सोममिन्द्राय पातवे।।9।।

अभी इमम्—अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् सोमम् इन्द्राय पातवे।

अनुवाद : —(उत) विशेष कर (इमम्) इस (शिशुम्) बालक रूप में प्रकट (सोमम्) पूर्ण परमात्मा अमर प्रभु की (इन्द्राय) सुख सुविधाओं द्वारा अर्थात् खाने—पीने द्वारा जो शरीर वद्धि को प्राप्त होता है उसे (पातवे) वद्धि के लिए (अभी) पूर्ण तरह (अध्न्या धेनवः) जो गाय, सांड द्वारा कभी भी परेशान न की गई हो अर्थात् कंवारी गाय द्वारा (श्रीणन्ति) परवरिश की जाती है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा अमर पुरुष जब लीला करता हुआ बालक रूप धारण करके स्वयं प्रकट होता है उस समय कंवारी गाय अपने आप दूध देती है जिससे उस पूर्ण प्रभु की परवरिश होती है।

''त्रेतायुग में कबीर परमेश्वर जी का प्रकट होना''

प्रश्न :- धर्मदास जी ने पूछा हे बन्दी छोड़ आप त्रेता युग में मुनिन्द्र ऋषि के नाम से अवतरित हुए थे। क्प्या उस युग में किन-2 पुण्यात्माओं ने आप की शरण ग्रहण की?

उत्तरः- हे धर्मदास! त्रेता युग में मैं मुनिन्द्र ऋषि के नाम से प्रकट हुआ। त्रेता युग में भी मैं एक शिशु रूप धारण करके कमल के फूल पर प्रकट हुआ था। एक वेदविज्ञ नामक ऋषि तथा सूर्या नामक उसकी साधवी पत्नी थी। वे प्रतिदिन सरोवर पर स्नान करने जाते थे। उनकी आयु आधी से अधिक हो चुकी थी। वह निःसन्तान दम्पति मुझे अपने साथ ले गए तथा सन्तान रूप में पालन किया। प्रत्येक युग में जिस समय मैं एक पूरे जीवन रहने की लीला करने आता हूँ। मेरी परवरिश कंवारी गायों से होती है। बाल्यकाल से ही मैं तत्त्वज्ञान की वाणी उच्चारण करता हूँ। जिस कारण से मुझे प्रसिद्ध कवि की उपाधि प्राप्त होती है। परन्तु ज्ञानहीन ऋषियों द्वारा भ्रमित जनता मुझे न पहचान कर एक कवि की उपाधि प्रदान कर देती है। केवल मुझ से परिचित श्रद्धालु ही मुझे समझ पाते हैं तथा वे अपना कल्याण करवा लेते हैं। त्रेता युग में कविर्देव का ऋषि मुनिन्द्र नाम से प्राकाट्य'' लेखक के शब्दों में निम्न पढ़ें :-

"त्रेतायुग में कविर्देव (कबीर परमेश्वर) का मुनिन्द्र नाम से प्राकाट्य"

"नल तथा नील को शरण में लेना"

त्रेतायुग में स्वयंभु कविर्देव(कबीर परमेश्वर) रूपान्तर करके मुनिन्द्र ऋषि के नाम से आए हुए थे। एक दिन अनल अर्थात् नल तथा अनील अर्थात् नील ने मुनिन्द्र साहेब का सत्संग सुना। दोनों भक्त आपस में मौसी के पुत्र थे। माता-पिता का देहान्त हो चुका था। नल तथा नील दोनों शारीरिक व मानसिक रोग से अत्यधिक पीड़ित थे। सर्व ऋषियों व सन्तों से कष्ट निवारण की प्रार्थना कर चुके थे। सर्व ऋषियों व सन्तों ने बताया था कि यह आप का प्रारब्ध का पाप कर्म का दण्ड है, यह आपको भोगना ही पड़ेगा। इसका कोई समाधान नहीं है। दोनों दोस्त जीवन से निराश होकर मत्यु की प्रतीक्षा कर रहे थे।

सत्संग के उपरांत ज्यों ही दोनों ने परमेश्वर कविर्देव (कबीर परमेश्वर) उर्फ मुनिन्द्र ऋषि जी के चरण छुए तथा परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने सिर पर हाथ रखा तो दोनों का असाध्य रोग छू मन्त्र हो गया अर्थात् दोनों नल तथा नील स्वस्थ हो गए। इस अद्भभुत चमत्कार को देख कर प्रभु के चरणों में गिर कर घण्टों रोते रहे तथा कहा आज हमें प्रभु मिल गया। जिसकी हमें वर्षो से खोज थी उससे प्रभावित होकर ऋषि मुनिन्द्र जी से नाम (दीक्षा) ले लिया मुनिन्द्र साहेब जी के साथ ही सेवा में रहने लगे। पहले ऋषियों व संतों का समागम पानी की व्यवस्था देख कर नदी के किनारे होता था। नल और नील दोनों बहुत प्रभु प्रेमी तथा भोली आत्माएँ थी। परमात्मा में श्रद्धा बहुत हो गई थी। सेवा बहुत किया करते थे। समागमों में रोगी व वद्ध व विकलांग भक्तजन आते तो उनके कपड़े धोते तथा बर्तन साफ करते। उनके लोटे और गिलास साफ कर देते थे। परंतु थे भोले से दिमाग के। कपड़े धोने लग जाते तो सत्संग में जो प्रभु की कथा सुनी होती उसकी चर्चा करने लग जाते। दोनों भक्त प्रभु चर्चा में बहुत मस्त हो जाते और वस्तुएँ दरिया के जल में कब डूब जाती उनको पता भी नहीं चलता। किसी की चार वस्तु ले कर जाते तो दो वस्तु वापिस ला कर देते थे। भक्तजन कहते कि भाई आप सेवा तो बहुत करते हो, परंतु हमारा

तो बहुत काम बिगाड़ देते हो। अब ये खोई हुई वस्तुएँ हम कहाँ से ले कर आयें? आप हमारी सेवा ही करनी छोड़ दो। हम अपनी सेवा आप ही कर लेंगे। नल तथा नील रोने लग जाते थे कि हमारी सेवा न छीनों। अब की बार नहीं खोएँगे। परन्तु फिर वही काम करते। प्रभु की चर्चा में लग जाते और वस्तुएँ डूब जाती। भक्तजनों ने मुनिन्द्र जी से प्रार्थना की कि कप्या आप नल तथा नील को समझाओ। ये न तो मानते हैं और कहते हैं तो रोने लग जाते हैं। हमारी तो आधी भी वस्तुएँ वापिस नहीं लाते। बर्तन व वस्त्र धोते समय वे दोनों भगवान की चर्चा में मस्त हो जाते हैं और वस्तुएँ डूब जाती हैं। मुनिन्द्र साहेब ने एक दो बार नल-नील को समझाया। वे रोने लग जाते थे कि साहेब हमारी ये सेवा न छीनों। सतगुरु मुनिन्द्र साहेब ने आशीर्वाद देते हुए कहा बेटा नल तथा नील खूब सेवा करो, आज के बाद आपके हाथ से कोई भी वस्तु चाहे पत्थर या लोहा भी क्यों न हो जल में नहीं डूबेगी।

''समुन्द्र पर रामचन्द्र के पुल के लिए पत्थर तैराना''

एक समय की बात है कि सीता जी को रावण उठा कर ले गया। भगवान राम को पता भी नहीं कि सीता जी को कौन उठा ले गया? श्री रामचन्द्र जी इधर उधर खोज करते हैं। हनुमान जी ने खोज करके बताया कि सीता माता लंकापति रावण की कैद में है। पता लगने के बाद भगवान राम ने रावण के पास शान्ति दूत भेजे तथा प्रार्थना की कि सीता लौटा दे। परन्तु रावण नहीं माना। युद्ध की तैयारी हुई। तब समस्या यह आई कि समुद्र से सेना कैसे पार करें?

भगवान श्री रामचन्द्र ने तीन दिन तक घुटनों पानी में खड़ा होकर हाथ जोड़कर समुद्र से प्रार्थना की कि रास्ता दे। परन्तु समुद्र टस से मस न हुआ। जब समुद्र नहीं माना तब श्री राम ने उसे अग्नि बाण से जलाना चाहा। भयभीत समुद्र एक ब्राह्मण का रूप बनाकर सामने आया और कहा कि भगवन् सबकी अपनी-अपनी मर्यादाएँ हैं। मुझे जलाओ मत। मेरे अंदर न जाने कितने जीव-जंतु वसे हैं। अगर आप मुझे जला भी दोगे तो भी आप मुझे पार नहीं कर सकते, क्योंकि यहाँ पर बहुत गहरा गड्डा बन जायेगा, जिसको आप कभी भी पार नहीं कर सकते।

समुद्र ने कहा भगवन ऐसा काम करो कि सर्प भी मर जाए और लाठी भी न टूटे। मेरी मर्यादा भी रह जाए और आपका पुल भी बन जाए। तब भगवान श्री राम ने समुद्र से पूछा कि वह क्या है? ब्राह्मण रूप में खड़े समुद्र ने कहा कि आपकी सेना में नल और नील नाम के दो सैनिक हैं। उनके पास उनके गुरुदेव से प्राप्त एक ऐसी शक्ति है कि उनके हाथ से पत्थर भी तैर जाते हैं। हर वस्तु चाहे वह लोहे की हो, तैर जाती है। श्री रामचन्द्र ने नल तथा नील को बुलाया और उनसे पूछा कि क्या आपके पास कोई ऐसी शक्ति है? तो नल तथा नील ने कहा कि हाँ जी, हमारे हाथ से पत्थर भी नहीं डूबेंगे। तो श्रीराम ने कहा कि परीक्षण करवाओ।

उन नादानों(नल-नील) ने सोचा कि आज सब के सामने तुम्हारी बहुत महिमा होगी। उस दिन उन्होंने अपने गुरुदेव मुनिन्द्र जी (कबीर परमेश्वर जी) को यह सोचकर याद नहीं किया कि अगर हम उनको याद करेंगे तो कहीं श्रीराम ये न सोच लें कि इनके पास शक्ति नहीं है, यह तो कहीं और से मांगते हैं। उन्होंने पत्थर उठाकर समुद्र के जल में डाला तो वह पत्थर डूब गया। नल तथा नील ने बहुत कोशिश की, परन्तु उनसे पत्थर नहीं तैरे। तब भगवान राम ने समुद्र की ओर देखा मानो कहना चाह रहे हों कि आप तो झूठ बोल रहे थे। इनमें तो कोई शक्ति नहीं है। समुद्र ने कहा कि नल-नील आज तुमने अपने गुरुदेव को याद नहीं किया। कप्या अपने गुरुदेव को याद करो। वे दोनों समझ गए कि आज तो

हमने गलती कर दी। उन्होंने सतगुरु मुनिन्द्र साहेब जी को याद किया। सतगुरु मुनिन्द्र (कबीर परमेश्वर) वहाँ पर पहुँच गए। भगवान रामचन्द्र जी ने कहा कि हे ऋषिवर! मेरा दुर्भाग्य है कि आपके सेवकों से पत्थर नहीं तैर रहे हैं। मुनिन्द्र साहेब ने कहा कि अब इनके हाथ से कभी तैरेंगे भी नहीं, क्योंकि इनको अभिमान हो गया है। सतगुरु की वाणी प्रमाण करती है कि:-

गरीब, जैसे माता गर्भ को, राखे जतन बनाय। ठेस लगे तो क्षीण होवे, तेरी ऐसे भक्ति जाय।

उस दिन के बाद नल तथा नील की वह शक्ति समाप्त हो गई। श्री रामचन्द्र जी ने परमेश्वर मुनिन्द्र साहेब जी से कहा कि हे ऋषिवर! मुझ पर बहुत आपत्ति पड़ी हुई है। दया करो किसी प्रकार सेना परले पार हो जाए। जब आप अपने सेवकों को शक्ति दे सकते हो तो प्रभु! मुझ पर भी कुछ रजा करो। मुनिन्द्र साहेब जी ने कहा कि यह जो सामने वाला पहाड़ है, मैंने उसके चारों तरफ एक रेखा खींच दी है। इसके बीच-बीच के पत्थर उठा लाओ, वे नहीं डूबेंगे। श्री राम ने परीक्षण के लिए पत्थर मंगवाया। उसको पानी पर रखा तो वह तैरने लग गया। नल तथा नील कारीगर(शिल्पकार) भी थे। हनुमान जी प्रतिदिन भगवान याद किया करते थे। उसने अपनी दैनिक क्रिया भी करते रहने के लिए राम राम भी लिखता रहा और पहाड़ के पहाड़ उठा कर ले आता था। नल नील उनको जोड़-तोड़ कर पुल में लगा देते थे। इस प्रकार पुल बना था। धर्मदास जी कहते हैं :-

रहे नल नील जतन कर हार, तब सतगुरू से करी पुकार।
जा सत रेखा लिखी अपार, सिन्धु पर शिला तिराने वाले।
धन–धन सतगुरु सत कबीर, भक्त की पीर मिटाने वाले।

कोई कहता था कि हनुमान जी ने पत्थर पर राम का नाम लिख दिया था इसलिए पत्थर तैर गये। कोई कहता था कि नल-नील ने पुल बनाया था। कोई कहता था कि श्रीराम ने पुल बनाया था। परन्तु यह सतकथा ऐसे है, जो ऊपर लिखी है।

(सत कबीर की साखी - पष्ठ 179 से 182 तक)

-: पीव पिछान को अंग :-

कबीर– तीन देव को सब कोई ध्यावै, चौथे देव का मरम न पावै।
चौथा छाड़ पंचम को ध्यावै, कहै कबीर सो हम पर आवै।।3।।

कबीर– ओंकार निश्चय भया, यह कर्ता मत जान।
साचा शब्द कबीर का, परदे मांही पहचान।।5।।

कबीर– राम कृष्ण अवतार हैं, इनका नांही संसार।
जिन साहेब संसार किया, सो किन्हूं न जन्म्या नार।।17।।

कबीर – चार भुजा के भजन में, भूलि परे सब संत।
कबिरा सुमिरो तासु को, जाके भुजा अनंत।।23।।

कबीर – समुद्र पाट लंका गये, सीता को भरतार।
ताहि अगस्त मुनि पीय गयो, इनमें को करतार।।26।।

कबीर – गिरवर धारयो कृष्ण जी, द्रोणागिरि हनुमंत।
शेष नाग सब सृष्टि सहारी, इनमें को भगवंत।।27।।

कबीर – काटे बंधन विपति में, कठिन किया संग्राम।
चिन्हों रे नर प्राणियां, गरुड बड़ो की राम।।28।।

कबीर – कह कबीर चित चेतहूं, शब्द करौ निरूवार।
श्रीरामहि कर्ता कहत हैं, भूलि परयो संसार।।29।।
कबीर – जिन राम कृष्ण व निरंजन कियो, सो तो करता न्यार।
अंधा ज्ञान न बूझई, कहै कबीर विचार।।30।।

"कबीर परमेश्वर द्वारा विभीषण तथा मंदोदरी को शरण में लेना"

परमेश्वर मुनिन्द्र जी अनल अर्थात् नल तथा अनील अर्थात् नील को शरण में लेने के उपरान्त श्री लंका में गए। वहाँ पर एक परम भक्त विचित्र चन्द्रविजय जी का सोलह सदस्यों का परिवार रहता था। वे भाट जाति में उत्पन्न पुण्यकर्मी प्राणी थे। परमेश्वर मुनिन्द्र(कविर्देव) जी का उपदेश सुन कर पूरे परिवार ने नाम दान प्राप्त किया। परम भक्त विचित्र चन्द्रविजय जी की पत्नी भक्तमति कर्मवती लंका के राजा रावण की रानी मन्दोदरी के पास नौकरी(सेवा) करती थी। रानी मंदोदरी को हँसी-मजाक अच्छे-मंदे चुटकुले सुना कर उसका मनोरंजन कराती थी। भक्त चन्द्रविजय, राजा रावण के पास दरबार में नौकरी(सेवा) करता था। राजा की बड़ाई के गाने सुना कर उसे प्रसन्न करता था। भक्त विचित्र चन्द्रविजय की पत्नी भक्तमति कर्मवती परमेश्वर से उपदेश प्राप्त करने के उपरान्त रानी मंदोदरी को प्रभु चर्चा जो सष्टि रचना अपने सतगुरुदेव मुनिन्द्र जी से सुनी थी प्रतिदिन सुनाने लगी।

भक्तमति मंदोदरी रानी को अति आनन्द आने लगा। कई-कई घण्टों तक प्रभु की सत कथा को भक्तमति कर्मवती सुनाती रहती तथा मंदोदरी की आँखों से आँसू बहते रहते। एक दिन रानी मंदोदरी ने कर्मवती से पूछा आपने यह ज्ञान किससे सुना? आप तो बहुत अनाप-शनाप बातें किया करती थी। इतना बदलाव परमात्मा तुल्य संत बिना नहीं हो सकता। तब कर्मवती ने बताया कि हमने एक परम संत से अभी-अभी उपदेश लिया है। रानी मंदोदरी ने संत के दर्शन की अभिलाषा व्यक्त करते हुए कहा, आप के गुरु अब की बार आयें तो उन्हें हमारे घर बुला कर लाना। अपनी मालकिन का आदेश प्राप्त करके शीश झुकाकर सत्कार पूर्वक कहा कि जो आप की आज्ञा, आप की नौकरानी वही करेगी। मेरी एक विनती है, कहते हैं कि संत को आदेशपूर्वक नहीं बुलाना चाहिए। स्वयं जा कर दर्शन करना श्रेयकर होता है और जैसे आप की आज्ञा वैसा ही होगा। महारानी मंदोदरी ने कहा कि अब के आपके गुरुदेव जी आयें तो मुझे बताना मैं स्वयं उनके पास जाकर दर्शन करूंगी। परमेश्वर ने फिर श्री लंका में कपा की। मंदोदरी रानी ने उपदेश प्राप्त किया। कुछ समय उपरान्त अपने प्रिय देवर भक्त विभीषण जी को उपदेश दिलाया। भक्तमति मंदोदरी उपदेश प्राप्त करके अहर्निश प्रभु स्मरण में लीन रहने लगी। अपने पति रावण को भी सतगुरु मुनिन्द्र जी से उपदेश प्राप्त करने की कई बार प्रार्थना की परन्तु रावण नहीं माना तथा कहा करता था कि मैंने परम शक्ति महेश्वर मत्युंजय शिव जी की भक्ति की है। इसके तुल्य कोई शक्ति नहीं है। आपको किसी ने बहका लिया है।

कुछ ही समय उपरान्त वनवास प्राप्त श्री सीता जी का अपहरण करके रावण ने अपने नौ लखा बाग में कैद कर लिया। भक्तमति मंदोदरी के बार-बार प्रार्थना करने से भी रावण ने माता सीता जी को वापिस छोड़ कर आना स्वीकार नहीं किया। तब भक्तमति मंदोदरी जी ने अपने गुरुदेव मुनिन्द्र जी से कहा महाराज जी, मेरे पति ने किसी की औरत का अपहरण कर लिया है। मुझ से

सहन नहीं हो रहा है। वह उसे वापिस छोड़ कर आना किसी कीमत पर भी स्वीकार नहीं कर रहा है। आप दया करो मेरे प्रभु। आज तक जीवन में मैंने ऐसा दुःख नहीं देखा था।

परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने कहा कि बेटी मंदोदरी यह औरत कोई साधारण स्त्री नहीं है। श्री विष्णु जी को शापवश पथ्वी पर आना पड़ा है, वे अयोध्या के राजा दशरथ के पुत्र रामचन्द्र नाम से जन्में हैं। इनको 14 वर्ष का वनवास प्राप्त है तथा लक्ष्मी जी स्वयं सीता रूप में इनकी पत्नी रूप में वनवास में श्री राम के साथ थी। उसे रावण एक साधु वेश बना कर धोखा देकर उठा लाया है। यह स्वयं लक्ष्मी ही सीता जी है। इसे शीघ्र वापिस करके क्षमा याचना करके अपने जीवन की भिक्षा याचना रावण करें तो इसी में इसका शुभ है।

भक्तमति मंदोदरी के अनेकों बार प्रार्थना करने से रावण नहीं माना तथा कहा कि वे दो मसखरे जंगल में घूमने वाले मेरा क्या बिगाड़ सकते हैं। मेरे पास अनीगनत सेना है। मेरे एक लाख पुत्र तथा सवा लाख नाती हैं। मेरे पुत्र मेघनाद ने स्वर्ग राज इन्द्र को पराजित कर उसकी पुत्री से विवाह कर रखा है। तेतीस करोड़ देवताओं को हमने कैद कर रखा है। तू मुझे उन दो बेसहारा बन में बिचर रहे बनवासियों को भगवान बता कर डराना चाहती है। इस स्त्री को वापिस नहीं करूँगा। मंदोदरी ने भक्ति मार्ग का ज्ञान जो अपने पूज्य गुरुदेव से सुना था, रावण को बहुत समझाया। विभीषण ने भी अपने बड़े भाई को समझाया। रावण ने अपने भाई विभीषण को पीटा तथा कहा कि तू ज्यादा श्री रामचन्द्र का पक्षपात कर रहा है, उसी के पास चला जा।

एक दिन भक्तमति मंदोदरी ने अपने पूज्य गुरुदेव से प्रार्थना की कि हे गुरुदेव मेरा सुहाग उजड़ रहा है। एक बार आप भी मेरे पति को समझा दो। यदि वह आप की बात को नहीं मानेगा तो मुझे विधवा होने का दुःख नहीं होगा।

अपनी बचन की बेटी मंदोदरी की प्रार्थना स्वीकार करके राजा रावण के दरबार के समक्ष खड़े होकर परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने द्वारपालों से राजा रावण से मिलने की प्रार्थना की। द्वारपालों ने कहा ऋषि जी इस समय हमारे राजा जी अपना दरबार लगाए हुए हैं। इस समय अन्दर का संदेश बाहर आ सकता है, बाहर का संदेश अन्दर नहीं जा सकता। हम विवश हैं। तब पूर्ण प्रभु अंतर्ध्यान हुए तथा राजा रावण के दरबार में प्रकट हो गए। रावण की दष्टि ऋषि पर गई तो गरज कर पूछा कि इस ऋषि को मेरी आज्ञा बिना किसने अन्दर आने दिया है उन द्वारपालों को लाकर मेरे सामने कत्ल कर दो। तब परमेश्वर ने कहा राजन् आप के द्वारपालों ने स्पष्ट मना किया था। उन्हें पता नहीं कि मैं कैसे अन्दर आ गया। रावण ने पूछा कि तू अन्दर कैसे आया? तब पूर्ण प्रभु मुनिन्द्र वेश में अदश होकर पुनर् प्रकट हो गए तथा कहा कि मैं ऐसे आ गया। रावण ने पूछा कि आने का कारण बताओ। तब प्रभु ने कहा कि आप योद्धा हो कर एक अबला का अपहरण कर लाए हो। यह आप की शान व शूरवीरता के विपरीत है। सीता कोई साधारण औरत नहीं है यह स्वयं लक्ष्मी जी का अवतार है। श्री रामचन्द्र जी जो इसके पति हैं वे स्वयं विष्णु हैं। इसे वापिस करके अपने जीवन की भिक्षा माँगो। इसी में आप का श्रेय है। इतना सुन कर तमोगुण (भगवान शिव) का उपासक रावण क्रोधित होकर नंगी तलवार लेकर सिंहासन से दहाड़ता हुआ कूदा तथा उस नादान प्राणी ने तलवार के अंधाधुँध सत्तर वार ऋषि जी को मारने के लिए किए। परमेश्वर मुनिन्द्र जी ने एक झाडू की सींक हाथ में पकड़ी हुई थी। उसको ढाल की तरह आगे कर दिया। रावण के सत्तर वार उस नाजुक सींक पर लगे। ऐसे आवाज हुई जैसे लोहे के खम्बे (पीलर) पर तलवार लग रही हो। सींक टस से मस नहीं

हुई। रावण को पसीने आ गए। फिर भी अपने अहंकारवश नहीं माना। यह तो जान लिया कि यह कोई साधारण ऋषि नहीं है। रावण ने अभिमान वश कहा कि मैंने आप की एक भी बात नहीं सुननी, आप जा सकते हैं। परमेश्वर अंतर्ध्यान हो गए तथा मंदोदरी को सर्व वतान्त सुनाकर प्रस्थान किया। रानी मंदोदरी ने कहा गुरुदेव अब मुझे विधवा होने में कोई कष्ट नहीं होगा।

श्री रामचन्द्र व रावण का युद्ध हुआ। रावण का वध हुआ। जिस लंका के राज्य को रावण ने तमोगुण भगवान शिव की कठिन साधना करके, दस बार शीश न्यौछावर करके प्राप्त किया था। वह क्षणिक सुख भी रावण का चला गया तथा नरक का भागी हुआ। इसके विपरीत पूर्ण परमात्मा के सतनाम साधक विभीषण को बिना कठिन साधना किए पूर्ण प्रभु की सत्य साधना व कपा से लंकादेश का राज्य भी प्राप्त हुआ। हजारों वर्षों तक विभीषण ने लंका का राज्य का सुख भोगा तथा प्रभु कपा से राज्य में पूर्ण शान्ति रही। सभी राक्षस वति के व्यक्ति विनाश को प्राप्त हो चुके थे। भक्तमति मंदोदरी तथा भक्त विभीषण तथा परम भक्त चन्द्रविजय जी के परिवार के पूरे सोलह सदस्य तथा अन्य जिन्होंने पूर्ण परमेश्वर का उपदेश प्राप्त करके आजीवन मर्यादावत् सतभक्ति की वे सर्व साधक यहाँ पथ्वी पर भी सुखी रहे तथा अन्त समय में परमेश्वर के विमान में बैठ कर सतलोक (शाश्वतम् स्थानम्) में चले गए। इसीलिए पवित्र गीता अध्याय 7 मंत्र 12 से 15 में कहा है कि तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की साधना से मिलने वाली क्षणिक सुविधाओं के द्वारा जिनका ज्ञान हरा जा चुका है, वे राक्षस स्वभाव वाले, मनुष्यों में नीच, दुष्कर्म करने वाले मूर्ख मुझ (काल-ब्रह्म) को भी नहीं भजते।

फिर गीता अध्याय 7 मंत्र 18 में गीता बोलने वाला (काल-ब्रह्म) प्रभु कह रहा है कि कोई एक उदार आत्मा मेरी (ब्रह्म की) ही साधना करता है क्योंकि उनको तत्त्वदर्शी संत नही मिला। वे भी नेक आत्माऐं मेरी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ (गतिम्) गति में आश्रित रह गए। वे भी पूर्ण मुक्त नहीं हैं। इसलिए पवित्र गीता अध्याय 18 मंत्र 62 में कहा है कि हे अर्जुन तू सर्व भाव से उस परमेश्वर (पूर्ण परमात्मा अर्थात् तत् ब्रह्म) की शरण में जा। उसकी कपा से ही तू परम शान्ति तथा सतलोक अर्थात् सनातन परम धाम को प्राप्त होगा।

इसलिए पुण्यात्माओं से निवेदन है कि आज इस दासन् के भी दास (रामपाल दास) के पास पूर्ण परमात्मा प्राप्ति की वास्तविक विधि प्राप्त है। निःशुल्क उपदेश लेकर लाभ उठाऐं।

प्रश्नः- धर्मदास जी ने प्रश्न किया हे प्रभु कुछ श्रद्धालु श्री हनुमान जी की पूजा करते हैं। यह शास्त्रविरूद्ध है या अनुकूल।

उत्तरः- कबीर देव ने कहा हे धर्मदास! अर्जुन को काल ब्रह्म ने श्रीमदभगवत् गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में कहा है कि हे अर्जुन! जो व्यक्ति शास्त्रविधि को त्याग कर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण (पूजा) करता है। वह न सिद्धि को प्राप्त होता है न परमगति को न सुख को ही (गीता अ. 16/मं.23) इस से तेरे लिए कर्तव्य अर्थात् करने योग्य भक्ति कर्म तथा अकर्त्तव्य अर्थात् न करने योग्य जो त्यागने योग्य कर्म हैं उनकी व्यवस्था में शास्त्र में लिखा उल्लेख ही प्रमाण है। ऐसा जानकर तू शास्त्रविधि से नियत भक्ति कर्म अर्थात् साधना ही करने योग्य है। (गीता अ.16/ श्लोक 24)

हे धर्मदास जी! गीता अध्याय 7 श्लोक 12 से 15 व 20 से 23 तथा गीता अध्याय 9 श्लोक 20 से 23 तथा 25 में गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म ने तीनों देवताओं (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) की पूजा करना भी व्यर्थ कहा है, भूतों की पूजा, पितरों की पूजा व अन्य सर्व देवताओं की पूजा

को भी अविधिपूर्वक (शास्त्रविधि विरूद्ध) बताया है। हनुमान तो रामभक्त थे। वे स्वयं भी भक्ति करते थे तथा अन्य को भी राम की भक्ति करने को ही कहते थे। यदि कोई भक्त दूसरे भक्त की पूजा करता है। वह शास्त्रविधि विरूद्ध होने से व्यर्थ है। त्रेता युग में मैंने हनुमान को भी शरण में लिया था।

''पूर्ण परमात्मा कबीर जी का द्वापर युग में प्रकट होना''

प्रश्नः- हे परमेश्वर! अपने दास धर्मदास पर कृपा करके द्वापर युग में प्रकट होने की कथा सुनाऐं जिस से तत्त्वज्ञान प्राप्त हो?

उत्तरः- कबीर परमेश्वर (कबिर्देव) ने कहा हे धर्मदास! द्वापर युग में भी मैं रामनगर नामक नगरी में एक सरोवर में कमल के फूल पर शिशु रूप में प्रकट हुआ। एक निःसन्तान वाल्मिकी (कालू तथा गोदावरी) दम्पति अपने घर ले गया। एक ऋषि से मेरा नामकरण करवाया। उसने भगवान विष्णु की कृपा से प्राप्त होने के आधार से मेरा नाम करूणामय रखा। मैंने 25 दिन तक कोई आहार नहीं किया मेरी पालक माता अति दुःखी हुई। पिता जी भी कई साधु सन्तों के पास गए मेरे ऊपर झाड़-फूंक भी कराई। वे विष्णु के पुजारी थे। उनको अति दुःखी देखकर मैंने विष्णु को प्रेरणा दी। विष्णु भगवान एक ऋषि रूप में वहाँ आए तथा पिता कालू से कुशल मंगल पूछा। पिता कालू तथा माता गोदावरी (कलयुग में सम्मन तथा नेकी रूप में दिल्ली में जन्मे थे) ने अपना दुःख ऋषि जी को बताया कि हमें वृद्ध अवस्था में एक पुत्र रत्न भगवान विष्णु की कृपा से सरोवर में कमल के फूल पर प्राप्त हुआ है। यह बच्चा 25 दिन से भूखा है कुछ भी नहीं खाया है। अब इसका अन्त निकट है। परमात्मा विष्णु ने हमें अपार खुशी प्रदान की है। अब उसे छीन रहे हैं। हम प्रार्थना करते हैं कि हे विष्णु भगवान यह खिलौना दे कर मत छीनों। हम अपराधियों से ऐसा क्या अपराध हो गया? इस बच्चे में हमारा इतना मोह हो गया है कि यदि इसकी मृत्यु हो गई तो हम दोनों उसी सरोवर में डूब कर मरेंगे जहाँ पर यह बालक रत्न हमें मिला था।

हे धर्मदास! ऋषि रूप में उपस्थित विष्णु भगवान ने मेरी ओर देखा। मैं पालने में झूल रहा था। मेरे अति स्वस्थ शरीर को देखकर विष्णु भगवान आश्चर्य चकित हुए तथा बोले हे कालू भक्त! यह बच्चा तो पूर्ण रूप से स्वस्थ है। आप कह रहे हो यह कुछ भी आहार नहीं करता। यह बालक तो ऐसा स्वस्थ है जैसे एक सेर दूध प्रतिदिन पीता हो। यह नहीं मरने वाला। इतना कह कर विष्णु मेरे पास आया। मैंने विष्णु से बात की तथा कहा हे विष्णु भगवान! आप मेरे माता पिता से कहो एक कुँवारी गाय लाऐं उस गाय को आप आशीर्वाद देना व कंवारी गाय दूध देने लगेगी उस गाय का दूध मैं पीऊंगा। मेरे द्वारा अपना परिचय जान कर विष्णु भगवान समझ गए यह कोई सिद्ध आत्मा है जिसने मुझे पहचान लिया है। मुझे ऋषि के साथ बातें करते हुए मेरे पालक माता-पिता हैरान रह गए। अन्दर ही अन्दर खुशी की लहर दौड़ गई। ऋषि ने कहा कालू एक कुंवारी गाय लाओ। वह दूध देगी उस दूध को यह होनहार बच्चा पीएगा। कालू पिता तुरन्त एक गाय ले आया। भगवान विष्णु ने मेरी प्रार्थना पर उस कुंवारी गाय की कमर पर हाथ रख दिया। उसी समय उस गाय की बछिया के थनों से दूध की धार बहने लगी तथा वह तीन सेर का पात्र भरने के पश्चात् रूक गई। वह दूध मैंने पीया।

मेरी तथा विष्णु जी की वार्ता की भाषा को कालू व गोदावरी समझ नही सके। वे मुझ पच्चीस दिन के बालक को बोलते देखकर उस ऋषि रूप विष्णु का ही चमत्कार मान रहे थे तथा कुंवारी गाय द्वारा दूध देना भी उस ऋषि की कृपा जानकर दोनों ऋषि के चरणों में लिपट गए। मेरी पालक माता ने मुझे पालने से उठाया तथा उस ऋषि रूप में विराजमान विष्णु के चरणों में डाला। मैं जमीन पर नहीं गिरा।

माता के हाथों से निकल कर जमीन से चार फुट ऊपर हवा में पालने की तरह स्थित हो गया। जब गोदावरी ने मुझे ऋषि के चरणों की ओर किया भगवान विष्णु तीन कदम पीछे हट गए तथा बोले माई! यह बालक परम शक्ति युक्त है, बड़ा होकर जनता का उपकार करेगा। इतना कह कर ऋषि रूप धारी विष्णु अपने लोक को चल दिए। मैं पुनः पालने में विराजमान हो गया।

उस वाल्मीकि दम्पति (कालू तथा गोदावरी) ने मेरा हवा में स्थित होना भी ऋषि का ही करिश्मा जाना इस कारण से मुझे कोई अवतारी पुरूष नहीं समझ सके मैं भी यही चाहता था, कि ये मुझे एक साधारण बालक ही समझें जिससे इनकी वद्ध अवस्था का समय मेरे लालन पालन में बीत जाए। मैं शिशु काल में ही तत्त्वज्ञान की वाणी उच्चारण करने लगा। उस नगरी में अकाल गिर गया। मेरे माता पिता मुझे लेकर बनारस (काशी) आए तथा वहाँ रहने लगे। कलयुग में कालू का जन्म सम्मन रूप में तथा गोदावरी का जन्म नेकी रूप में दिल्ली में हुआ जो कबीर जी की शरण में आए। उनका एक पुत्र सेऊ (शिव) भी परमात्मा की शरण में आया था।

काशी नगर में एक सुदर्शन नाम का वाल्मिीकि जाति का पुण्यात्मा मेरी वाणी सुनकर बहुत प्रभावित हुआ। मैंने सुदर्शन भक्त को सष्टि रचना सुनाई। सुदर्शन मेरी हम उमर था। उस समय मेरी लीलामय आयु 12 वर्ष थी। जब काशी के विद्वानों से ज्ञान चर्चा होती थी, सुदर्शन भी मेरे साथ जाता था। एक दिन सुदर्शन ने कहा हे करूणामय! आप जो ज्ञान सुनाते हो इसका समर्थन कोई भी ऋषि नहीं करता। आप के ज्ञान पर कैसे विश्वास हो? हे करूणामय! आप ऐसी कपा करो जिससे मेरा भ्रम दूर हो जाए। हे धर्मदास मैंने उस प्यासी आत्मा सुदर्शन को सत्यलोक के दर्शन कराए आप की तरह उसको भी तीन दिन तक ऊपर के सर्व लोकों में ले गया। सुदर्शन का पंच भौतिक शरीर अचेत हो गया। सुदर्शन भी अपने माता-पिता का इकलौता पुत्र था। अपने इकलौते पुत्र को मत तुल्य देखकर उसके माता-पिता विलाप करने लगे तथा हमारे घर आकर मेरे मात-पिता से झगड़ा करने लगे। कहा कि तुम्हारे करूण ने हमारे बच्चे को जादू-जन्त्र कर दिया। वह सेवड़ा है। हमारा पुत्र मर गया तो हम आप के विरूद्ध राजा को शिकायत करेगें। मेरे माता-पिता ने मेरे से उन्ही के सामने पूछा हे करूण ! सच बता तूने क्या कर दिया उस सुदर्शन को। मैंने कहा वह सतलोक देखना चाहता था। इसलिए उसे सतलोक दर्शन के लिए भेजा है। शीघ्र ही लौट आएगा। कई वैद्य बुलाएं कई झाड़-फूँक करने वाले बुलाए कोई लाभ नहीं हुआ। तीसरे दिन सुदर्शन के मात-पिता रोते हुए मेरे पास आए बोले बेटा करूण! हमारे पुत्र को ठीक कर दे हम तेरे आगे हाथ जोड़ते हैं। मैंने कहा माई तुम्हारा पुत्र नहीं मरेगा।

मेरे (परमेश्वर कबीर साहेब) को अपने साथ अपने घर ले गए। मेरे माता-पिता भी साथ गए आस-पास के व्यक्ति भी वहाँ उपस्थित थे। मैंने सुदर्शन के शीश को पकड़ कर हिलाया तथा कहा हे सुदर्शन! वापिस आ जा तेरे माता-पिता बहुत व्याकुल हैं। इतना कहते ही सुदर्शन ने आँखें खोली चारों ओर देखा, अपने सिर की ओर मुझे नहीं देख सका। उठ-बैठकर बोला परमेश्वर करूणामय कहाँ हैं? रोने लगा-कहाँ गए परमेश्वर करूणामय। उपस्थित व्यक्तियों ने पूछा, क्या करूण को ढूँढ़ रहा है? देख यह बैठा तेरे पीछे। मुझे देखते ही चरणों में शीश रख कर विलाप करने लगा तथा रोता हुआ बोला हे काशी के रहने वालों। यह पूर्ण परमात्मा है। यह सर्व सष्टि रचनहार अपने शहर में विराजमान है। आप इसे नहीं पहचान सके। यह मेरे साथ ऊपर के लोक में गया। ऊपर के लोक में यह पूर्ण परमात्मा के रूप में एक सफेद गुबन्द में विराजमान है। यही दोनों रूपों में लीला कर रहा है। सर्व व्यक्ति कहने लगे इस कालू के पुत्र ने भीखू के पुत्र पर जादू जन्त्र किया है। जिस कारण से इसका दिमाग चल गया है। इस

करूण को ही परमात्मा कह रहा है। भला हो भगवान का भीखू का बेटा जीवित हो गया नहीं तो बेचारों का कोई और बूढ़ापे का सहारा भी नहीं था। यह कह कर सर्व अपने-2 घर चले गए।

भीखू तथा उसकी पत्नी सुखी (सुखवन्ती) अपने पुत्र को जीवित देखकर अति प्रसन्न हुए भगवान विष्णु का प्रसाद बनाया पूरे मौहल्ले (कॉलोनी) में प्रसाद बांटा। सुदर्शन ने मुझसे उपदेश लिया। अपने माता-पिता भीखू तथा सुखी को भी मेरे से उपदेश लेने को कहा। दोनों ने बहुत विरोध किया तथा कहा यह कालू का पुत्र पूर्ण परमात्मा नहीं है बेटा! इसने तेरे ऊपर जादू-जन्त्र करके मूर्ख बनाया हुआ है। भगवान विष्णु से बड़ा कोई नहीं है। सुदर्शन ने मुझ से कहा हे प्रभु! कृप्या मुझे अपनी शरण में रखना। मेरे माता-पिता का कोई दोष नहीं है सर्व मानव समाज इसी ज्ञान पर अटका है। जिस पर आपकी कृपा होगी केवल वही आप को जान व मान सकता है। इस काल-ब्रह्म ने तो पूरे विश्व (ब्रह्मा-विष्णु-शिव सहित) को भ्रमित किया हुआ है। हे धर्मदास! सुदर्शन भक्त ने काल के जाल को समझ कर सच्चे मन से मेरी भक्ति की तथा मेरा साक्षी बना कि पूर्ण परमात्मा कोई अन्य है जो ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव से भिन्न तथा अधिक शक्तिशाली है। हे धर्मदास! पाण्डवों की अश्वमेघ यज्ञ को जिस सुदर्शन द्वारा सम्पूर्ण की गई आप सुनते हो यह वही सुदर्शन वाल्मीकि मेरा शिष्य था। द्वापर युग में मैं 404 वर्ष तक करूणामय शरीर में लीला करता रहा तथा सशरीर सतलोक चला गया।

प्रश्नः- धर्मदास ने प्रश्न किया हे प्रभु आपकी कृपा द्वापर युग में और किस पुण्यात्मा पर हुई?

उत्तरः- कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने कहा द्वापर युग में एक चन्द्रविजय नामक राजा की रानी इन्द्रमती को पार किया तथा राजा चन्द्रविजय पर भी कृपा की। परमेश्वर कबीर जी द्वारा बताई ''रानी इन्द्रमती को पार करने वाली कथा'' लेखक (संत रामपाल दास जी महाराज) के शब्दों में :-

"द्वापर युग में इन्द्रमती को शरण में लेना"

द्वापरयुग में चन्द्रविजय नाम का एक राजा था। उसकी पत्नी इन्द्रमती बहुत ही धार्मिक प्रवृति की औरत थी। संत-महात्माओं का बहुत आदर किया करती थी। उसने एक गुरुदेव भी बना रखा था। उनके गुरुदेव ने बताया था कि बेटी साधु-संतों की सेवा करनी चाहिए। संतों को भोजन खिलाने से बहुत लाभ होता है। एकादशी का व्रत, मन्त्र के जाप आदि साधनायें जो गुरुदेव ने बताई थी। उस भगवत् भक्ति में रानी बहुत दृढ़ता से लगी हुई थी। गुरुदेव ने बताया था कि संतों को भोजन खिलाया करेगी तो तू आगे भी रानी बन जाएगी और तुझे स्वर्ग प्राप्ति होगी। रानी ने सोचा कि प्रतिदिन एक संत को भोजन अवश्य खिलाया करूँगी। उसने यह प्रतिज्ञा मन में ठान ली कि मैं खाना बाद में खाया करूँगी, पहले संत को खिलाया करूँगी। इससे मुझे याद बनी रहेगी, कहीं मुझे भूल न पड़ जाये। रानी प्रतिदिन पहले एक संत को भोजन खिलाती फिर स्वयं खाती। वर्षों तक ये क्रम चलता रहा।

एक समय हरिद्वार में कुम्भ के मेले का संयोग हुआ। जितने भी त्रिगुण माया के उपासक संत थे सभी गंगा में स्नान के लिए (प्रभी लेने के लिए) प्रस्थान कर गये। इस कारण से कई दिन रानी को भोजन कराने के लिए कोई संत नहीं मिला। रानी इन्द्रमती ने स्वयं भी भोजन नहीं किया। चौथे दिन अपनी बांदी से कहा कि बांदी देख ले कोई संत मिल जाए तो, नहीं तो आज तेरी मालकिन जीवित नहीं रहेगी। चाहे मेरे प्राण निकल जाएँ परन्तु मैं खाना नहीं खाऊँगी। वह दीन दयाल कबीर परमेश्वर अपने पूर्व वाले भक्त को शरण में लेने के लिए न जाने क्या कारण बना देता है ? बांदी ने ऊपर अटारी पर चढ़कर देखा कि सामने से सफेद कपड़े पहने एक संत आ रहा था। द्वापर युग में परमेश्वर कबीर

करूणामय नाम से आये थे। बांदी नीचे आई और रानी से कहा कि एक व्यक्ति है जो साधु जैसा नजर आता है। रानी ने कहा कि जल्दी से बुला ला। बांदी महल से बाहर गई तथा प्रार्थना की कि साहेब आपको हमारी रानी ने याद किया है। करूणामय साहेब ने कहा कि रानी ने मुझे क्यों याद किया है, मेरा और रानी का क्या सम्बन्ध? नौकरानी ने सारी बात बताई।

करूणामय (कबीर) साहेब ने कहा कि रानी को आवश्यकता पड़े तो यहाँ आ जाए, मैं यहाँ खड़ा हूँ। तू बांदी और वह रानी। मैं वहाँ जाऊँ और यदि वह कह दे कि तुझे किसने बुलाया था या उसका राजा ही कुछ कह दे बेटी संतों का अनादर बहुत पापदायक होता है। बांदी फिर वापिस आई और रानी से सब वार्ता कह सुनाई। तब रानी ने कहा कि बांदी मेरा हाथ पकड़ और चल। जाते ही रानी ने दण्डवत् प्रणाम करके प्रार्थना की कि हे परवरदिगार! चाहती तो ये हूँ कि आपको कंधे पर बैठा लूं। करूणामय साहेब ने कहा बेटी! मैं यही देखना चाहता था कि तेरे में कोई श्रद्धा भी है या वैसे ही भूखी मर रही है। रानी ने अपने हाथों खाना बनाया। करूणामय रूप में आए कविर्देव ने कहा कि मैं खाना नहीं खाता। मेरा शरीर खाना खाने का नहीं है। तो रानी ने कहा कि मैं भी खाना नहीं खाऊँगी। करूणामय साहेब जी ने कहा कि ठीक है बेटी लाओ खाना खाते हैं, क्योंकि समर्थ उसी को कहते हैं जो, जो चाहे, सो करे। करूणामय साहेब ने खाना खा लिया, फिर रानी से पूछा कि जो यह तू साधना कर रही है यह तेरे को किसने बताई है? रानी ने कहा कि मेरे गुरुदेव ने आदेश दिया है? कबीर साहेब ने पूछा क्या आदेश दिया है तेरे गुरुदेव ने? इन्द्रमती ने कहा कि विष्णु-महेश की पूजा, एकादशी का व्रत, तीर्थ भ्रमण, देवी पूजा, श्राद्ध निकालना, मन्दिर में जाना, संतों की सेवा करना। करूणामय (कबीर) साहेब ने कहा कि जो साधना तेरे गुरुदेव ने दी है तेरे को जन्म और मत्यु तथा स्वर्ग-नरक व चौरासी लाख योनियों के कष्ट से मुक्ति प्रदान नहीं करा सकती। रानी ने कहा कि महाराज जी जितने भी संत हैं, अपनी-अपनी प्रभुता आप ही बनाने आते हैं। मेरे गुरुदेव के बारे में कुछ नहीं कहोगे। मैं चाहे मुक्त होऊँ या न होऊँ।

करूणामय (कबीर) साहेब ने सोचा कि इस भोले जीव को कैसे समझाऐं? इन्होंने जो पूंछ पकड़ ली उसको छोड़ नहीं सकते, मर सकते हैं। करूणामय साहेब ने कहा कि बेटी वैसे तो तेरी इच्छा है, मैं निंदा नहीं कर रहा। क्या मैंने आपके गुरुदेव को गाली दी है या कोई बुरा कहा है? मैं तो भक्तिमार्ग बता रहा हूँ कि यह भक्ति शास्त्र विरूद्ध है। तुझे पार नहीं होने देगी और न ही तेरा कोई आने वाला कर्म दण्ड कटेगा और सुन ले आज से तीसरे दिन तेरी मत्यु हो जाएगी। न तेरा गुरु बचा सकेगा और न तेरी यह नकली साधना बचा सकेगी। (जब मरने की बारी आती है फिर जीव को डर लगता है। वैसे तो नहीं मानता) रानी ने सोचा कि संत झूठ नहीं बोलते। कहीं ऐसा न हो कि मैं तीसरे दिन ही मर जाऊँ। इस डर से करूणामय साहेब से पूछा कि साहेब क्या मेरी जान बच सकती है? कबीर साहेब (करूणामय) ने कहा कि बच सकती है। अगर तू मेरे से उपदेश लेगी, मेरी शिष्या बनेगी, पिछली पूजाएँ त्यागेगी, तब तेरी जान बचेगी। इन्द्रमती ने कहा मैंने सुना है कि गुरुदेव नहीं बदलना चाहिए, पाप लगता है।

कबीर साहेब (करूणामय) ने कहा कि नहीं पुत्री यह भी तेरा भ्रम है। एक वैद्य (डाक्टर) से औषधि न लगे तो क्या दूसरे से नहीं लेते? एक पाँचवीं कक्षा का अध्यापक होता है। फिर एक उच्च कक्षा का अध्यापक होता है। बेटी अगली कक्षा में जाना होगा। क्या सारी उम्र पाँचवीं कक्षा में ही लगी रहेगी ? इसको छोड़ना पड़ेगा। तू अब आगे की पढ़ाई पढ़, मैं पढ़ाने आया हूँ। वैसे तो नहीं मानती परन्तु मत्यु दिखने लगी कि संत कह रहा है तो कहीं बात न बिगड़ जाए। ऐसा विचार करके इन्द्रमती ने कहा कि जैसे आप कहोगे मैं वैसे ही करूँगी। करूणामय (कबीर) साहेब ने उपदेश दिया। कहा कि तीसरे दिन

मेरे रूप में काल आयेगा, तू उससे बोलना मत। जो मैंने नाम दिया है दो मिनट तक इसका जाप करना। दो मिनट के बाद उसको देखना है। उसके बाद सत्कार करना है। वैसे तो गुरुदेव आए तो अति शीघ्र चरणों में गिर जाना चाहिए। ये मेरा केवल इस बार आदेश है। रानी ने कहा ठीक है जी।

रानी को तो चिंता बनी हुई थी। श्रद्धा से जाप कर रही थी। (कबीर साहेब) करूणामय साहेब का रूप बना कर गुरुदेव रूप में काल आया, आवाज लगाई इन्द्रमती, इन्द्रमती। उसको तो पहले ही डर था, स्मरण करती रही। काल की तरफ नहीं देखा। दो मिनट के बाद जब देखा तो काल का स्वरूप बदल गया। काल का ज्यों का त्यों चेहरा दिखाई देने लगा। करूणामय साहेब का स्वरूप नहीं रहा। जब काल ने देखा कि तेरा तो स्वरूप बदल गया। वह जान गया कि इसके पास कोई शक्ति युक्त मंत्र है। यह कहकर चला गया कि तुझे फिर देखूँगा। अब तो बच गई। रानी बहुत खुश हुई, फूली नहीं समाई। कभी अपनी बांदियों को कहने लगी कि मेरी मत्यु होनी थी, मेरे गुरुदेव ने मुझे बचा दिया। राजा के पास गई तथा कहा कि आज मेरी मत्यु होनी थी, मेरे गुरुदेव ने रक्षा कर दी। मुझे लेने के लिए काल आया था। राजा ने कहा कि तू ऐसे ही ड्रामें करती रहती है, काल आता तो क्या तुझे छोड़ जाता? ये संत वैसे बहका देते हैं। अब इस बात को वह कैसे माने? खुशी-खुशी में रानी लेट गई। कुछ देर के बाद सर्प बनकर काल फिर आया और रानी को डस लिया। ज्यों ही सर्प ने डसा रानी को पता चल गया। रानी जोर से चिल्लाई। मुझे साँप ने डंस लिया। नौकर भागे। देखते ही देखते एक मोरी (पानी निकलने का छोटा छिद्र) में से वह सर्प घर से बाहर निकल गया। अपने गुरुदेव को पुकार कर रानी बेहोश हो गई।

करूणामय (कबीर) साहेब वहाँ प्रकट हो गए। लोगों को दिखाने के लिए मंत्र बोला और (वे तो बिना मंत्र भी जीवित कर सकते हैं, किसी जंत्र-मंत्र की आवश्यकता नहीं) इन्द्रमती को जीवित कर दिया। रानी ने बड़ा शुक्र मनाया कि हे बंदी छोड़ ! यदि आज आपकी शरण में नहीं होती तो मेरी मत्यु हो जाती। साहेब ने कहा कि इन्द्रमती इस काल को मैं तेरे घर में घुसने भी नहीं देता और यह तेरे ऊपर यह हमला भी नहीं करता। परन्तु तुझे विश्वास नहीं होता। तू यह सोचती कि मेरे ऊपर कोई आपत्ति नहीं आनी थी। गुरुजी ने मुझे बहका कर नाम दे दिया। इसलिए तेरे को थोड़ा-सा झटका दिखाया है, नहीं तो बेटी तेरे को विश्वास नहीं होता।

धर्मदास यहाँ घना अंधेरा, बिन परचय (शक्ति प्रदर्शन) जीव जम का चेरा।।

कबीर साहेब (करूणामय) ने कहा कि अब जब मैं चाहूँगा, तब तेरी मत्यु होगी। गरीबदास जी कहते हैं कि :-

गरीब, काल डरै करतार से, जय जय जय जगदीश। जौरा जौरी झाड़ती, पग रज डारे शीश।।

यह काल, कबीर परमेश्वर से डरता है और यह मौत कबीर साहेब के जूते झाड़ती है अर्थात् नौकर तुल्य है। फिर उस धूल को अपने सिर पर लगाती है कि आप जिसको मारने का आदेश दोगे उसके पास जाऊँगी, नहीं मैं नहीं जाऊँगी।

गरीब, काल जो पीसै पीसना, जौरा है पनिहार । ये दो असल मजूर हैं, मेरे साहेब के दरबार।।

यह काल जो यहाँ का 21 ब्रह्मण्ड का भगवान (ब्रह्म) है जो ब्रह्मा, विष्णु, महेश का पिता है। ये तो मेरे कबीर साहेब का आटा पीसता है अर्थात पक्का नौकर है और जौरा (मौत) मेरे कबीर साहेब का पानी भरती है अर्थात् एक विशेष नौकरानी है। यह दो असल मजूर मेरे साहेब के दरबार में हैं।

कुछ दिनों के बाद करूणामय (कबीर जी) साहेब फिर आए। रानी इन्द्रमती को सतनाम प्रदान किया। फिर कुछ समय के उपरान्त करूणामय साहेब ने रानी इन्द्रमती की अति श्रद्धा देखकर सारनाम

दिया। परम पद की उपलब्धि करवाई। परमेश्वर करूणामय रूप से रानी के घर दर्शन देने जाते रहते थे तो इन्द्रमती प्रार्थना किया करती थी कि मेरे पति राजा को समझाओ मालिक, यह भी मान जाये। आपके चरणों में आ जाये तो मेरा जीवन सफल हो जाये। चन्द्रविजय से कबीर साहेब ने प्रार्थना की कि चन्द्रविजय आप भी नाम लो, यह दो दिन का राज और ठाठ है। फिर चौरासी लाख योनियों में प्राणी चला जाएगा। चन्द्रविजय ने कहा कि भगवन मैं तो नाम लूं नहीं और आपकी शिष्या को मना करूँ नहीं, चाहे सारे खजाने को ही दान करो, चाहे किसी प्रकार का सत्संग करवाओ, मैं मना नहीं करूँगा। कबीर साहेब (करूणामय) ने पूछा आप नाम क्यों नहीं लोगे? चन्द्रविजय राजा ने कहा कि मैंने तो बड़े-बड़े राजाओं की पार्टियों में जाना पड़ता है। करूणामय (कबीर साहेब) ने कहा कि पार्टियों में जाने में नाम क्या बाधा करेगा? सभा में जाओ, वहाँ काजू खाओ, दूध पी लो, शरबत (जूस) पी लो, शराब मत प्रयोग करो। शराब पीना महापाप है। परन्तु राजा नहीं माना।

रानी की प्रार्थना पर करूणामय (कबीर) साहेब ने राजा को फिर समझाया कि नाम के बिना ये जीवन ऐसे ही व्यर्थ हो जायेगा। आप नाम ले लो। राजा ने फिर कहा कि गुरू जी मुझे नाम के लिए मत कहना। आपकी शिष्या को मैं मना नहीं करूँगा। चाहे कितना दान करे, कितना सत्संग करवाए। साहेब ने कहा कि बेटी इस दो दिन के झूठे सुख को देखकर इसकी बुद्धि भ्रष्ट हो चुकी है। तू प्रभु के चरणों में लगी रह। अपना आत्मकल्याण करवा। मत्यु के उपरान्त कोई किसी का पति नहीं, कोई किसी की पत्नी नहीं। दो दिन का सम्बन्ध है। अपना कर्म बना बेटी। जब इन्द्रमती 80 वर्ष की वद्धा हुई (कहाँ 40 साल की उम्र में मर जाना था)। जब शरीर भी हिलने लगा, तब करूणामय साहेब बोले अब बोल इन्द्रमती क्या चाहती है? चलना चाहती है सतलोक? इन्द्रमती ने कहा कि प्रभु तैयार हूँ, बिल्कुल तैयार हूँ दाता! करूणामय साहेब ने कहा कि तेरी पोते या पोती या किसी अन्य सदस्य में कोई ममता तो नहीं है? रानी ने कहा बिल्कुल नहीं साहेब। आपने ज्ञान ही ऐसा निर्मल दे दिया। इस गंदे लोक की क्या इच्छा करूँ ? कबीर साहेब (करूणामय) जी ने कहा कि चल बेटी। रानी प्राण त्याग गई।

परमेश्वर कबीर जी (करूणामय) रानी इन्द्रमती की आत्मा को ऊपर ले गए। इसी ब्रह्मण्ड में एक मानसरोवर है। उस मान सरोवर में इस आत्मा को स्नान कराना होता है। इन्द्रमती को वहाँ पर कुछ समय तक रखा। करूणामय रूप में कबीर परमेश्वर जी ने रानी से पूछा की तेरी कुछ इच्छा तो नहीं यदि इच्छा रही तो दुबारा जन्म लेना पड़ेगा। यदि मन में सन्तान व सम्पत्ति या पति, पत्नी आदि की इच्छा थोड़ी सी भी रह गई तो आत्मा सतलोक नहीं जा सकती। इन्द्रमती ने कहा साहेब आप तो अंतर्यामी हो, कोई इच्छा नहीं है। आपके चरणों की इच्छा है। लेकिन एक मन में शंका बनी हुई है कि मेरा जो पति था, उसने मुझे किसी भी धार्मिक कर्म के लिए कभी मना नहीं किया। नहीं तो आजकल के पति अपनी पत्नियों को बाधा कर देते हैं। यदि वह मुझे मना कर देता तो मैं आपके चरणों में नहीं लग पाती। मेरा कल्याण नहीं होता। उसका इस शुभ कर्म में सहयोग का कुछ लाभ मिलता हो तो कभी उस पर भी दया करना दाता। करूणामय जी ने देखा कि यह नादान इसके पीछे फिर अटक गई। साहेब बोले ठीक है बेटी, अभी तू दो चार वर्ष यहाँ रह।

अब दो वर्ष के बाद राजा भी मरने लगा। क्योंकि नाम ले नहीं रखा था। यम के दूत आए। राजा चौक में चक्कर खाकर गिर गया। यम के दूतों ने उसकी गर्दन को दबाया। राजा की टट्टी और पेशाब निकल गया। करूणायम (कबीर) परमेश्वर ने रानी को कहा कि देख तेरे राजा की क्या हालत हो रही है? वहाँ से कबीर परमेश्वर दिखा रहे हैं। तब रानी ने कहा कि देख लो दाता यदि उसका भक्ति में

सहयोग का कोई फल बनता हो तो दया कर लो। रानी को फिर भी थोड़ी-सी ममता बनी थी। परमेश्वर कबीर (करूणामय) ने सोचा की यह फिर काल जाल में फँसेगी। यह सोचकर मानसरोवर से वहाँ गए जहाँ राजा चन्द्रविजय अपने महल में अचेत पड़ा था। यमदूत उसके प्राण निकाल रहे थे। कबीर परमेश्वर जी के आते ही यमदूत ऐसे आकाश में उड़ गए जैसे मुर्दे से गिद्ध उड़ जाते हैं। चन्द्रविजय होश में आ गया। सामने करूणामय रूप में परमेश्वर कबीर जी खड़े थे। केवल चन्द्रविजय को दिखाई दे रहे थे, किसी अन्य को दिखाई नहीं दे रहे थे। चन्द्रविजय चरणों में गिर कर याचना करने लगा मुझे क्षमा कर दो दाता, मेरी जान बचाओ। क्योंकि उसने देखा कि तेरी जान जाने वाली है। (जब इस जीव की आँख खुलती है कि अब तो बात बिगड़ गई) राजा चन्द्र विजय गिड़गिड़ाता हुआ बोला मुझे क्षमा कर दो दाता, मेरी जान बचा लो मालिक। कबीर परमेश्वर ने कहा राजा आज भी वही बात है, उस दिन भी वही बात थी, नाम लेना होगा। राजा ने कहा मैं नाम ले लूँगा जी, अभी ले लूँगा नाम। कबीर परमेश्वर ने नाम उपदेश दिया तथा कहा कि अब मैं तुझे दो वर्ष की आयु दूँगा, यदि इसमें एक स्वांस भी खाली चला गया तो फिर कर्मदण्ड रह जाएगा।

कबीर, जीवन तो थोड़ा भला, जै सत सुमरण हो। लाख वर्ष का जीवना, लेखे धरे ना को।।

शुभ कर्म में सहयोग दिया हुआ पिछला कर्म और साथ में श्रद्धा से दो वर्ष के स्मरण से तथा तीनों नाम प्रदान करके कबीर साहेब चन्द्रविजय को भी पार कर ले गये। बोलो सतगुरु देव की जय ''जय बन्दी छोड़।''

प्रश्नः- धर्मदास जी ने कहा हे कबीर परमेश्वर! हमारे को तो ब्राह्मणों (विद्वानों) ने यही बताया था कि पाण्डवों की अश्वमेघ यज्ञ को श्री कष्ण भक्त सुदर्शन सुपच ने सफल की थी तथा भगवान कष्ण जी ने गीता में कहा है कि अर्जुन! युद्ध कर तुझे कोई पाप नहीं लगेगा। ये सर्व योद्धा मेरे द्वारा पहले से मार दिए गए हैं। तू निमित्त मात्र बन जा। यदि तू युद्ध में मारा गया तो स्वर्ग जाएगा, यदि युद्ध में जीत गया तो पथ्वी के राज्य का सुख भोगेगा।

उत्तरः- कबीर परमेश्वर ने कहा धर्मदास! सुदर्शन सुपच श्री कष्ण भक्त नहीं था वह पूर्ण ब्रह्म का उपासक था। सुन पाण्डवों के यज्ञ के सम्पूर्ण होने की कथा। कप्या निम्न पढ़ें पाठक जन परमेश्वर कबीर जी द्वारा बताया पाण्डव यज्ञ का प्रकरण जो धर्मदास जी ने स्वसम वेद के पद्य भाग में लिखा है (लेखक के शब्दों में निम्नः-)

।। पाण्डवों की यज्ञ में सुपच सुदर्शन द्वारा शंख बजाना।।

जैसा कि सर्व विदित है कि महाभारत के युद्ध में अर्जुन ने युद्ध करने से मना कर दिया था तथा शस्त्र त्याग कर युद्ध के मैदान में दोनों सेनाओं के बीच में खड़े रथ के पिछले हिस्से में आंखों से आँसू बहाता हुआ बैठ गया था। तब भगवान कष्ण के अन्दर प्रवेश काल शक्ति (ब्रह्म) अर्जुन को युद्ध करने की राय देने लगा था। तब अर्जुन ने कहा था कि भगवान यह घोर पाप मैं नहीं करूंगा। इससे अच्छा तो भिक्षा का अन्न भी खा कर गुजारा कर लेंगे। तब भगवान काल श्री कष्ण जी के शरीर में प्रवेश करके बोला था कि अर्जुन युद्ध कर। तुझे कोई पाप नहीं लगेगा। देखें गीता जी के अध्याय 11 के श्लोक 33, अध्याय 2 के श्लोक 37, 38 में।

महाभारत में लेख (प्रकरण) आता है कि कष्ण जी के कहने से अर्जुन ने युद्ध करना स्वीकार कर लिया। घमासान युद्ध हुआ। करोड़ों व्यक्ति व सर्व कौरव युद्ध में मारे गए और पाण्डव विजयी हुए। तब

पाण्डव प्रमुख युधिष्ठिर को राज्य सिंहासन पर बैठाने के लिए स्वयं भगवान कष्ण ने कहा तो युधिष्ठिर ने यह कहते हुए गद्दी पर बैठने से मना कर दिया कि मैं ऐसे पाप युक्त राज्य को नहीं करूंगा। जिसमें करोड़ों व्यक्ति मारे गए थे। उनकी पत्नियाँ विधवा हो गई, करोड़ों बच्चे अनाथ हो गए, अभी तक उनके आँसू भी नहीं सूखे हैं। किसी प्रकार भी बात बनती न देख कर श्री कष्ण जी ने कहा कि आप भीष्म जी से राय लो। क्योंकि जब व्यक्ति स्वयं फैसला लेने में असफल रहे तब किसी स्वजन से विचार कर लेना चाहिए। युधिष्ठिर ने यह बात स्वीकार कर ली। तब श्री कष्ण जी युधिष्ठिर को साथ ले कर वहाँ पहुँचे जहाँ पर श्री भीष्म शर (तीरों की) शैय्या (चारपाई) पर अंतिम स्वांस गिन रहे थे, वहाँ जा कर श्री कष्ण जी ने भीष्म से कहा कि युधिष्ठिर राज्य गद्दी पर बैठने से मना कर रहे हैं। कपा आप इन्हें राजनीति की शिक्षा दें।

भीष्म जी ने बहुत समझाया परंतु युधिष्ठिर अपने उद्देश्य से विचलित नहीं हुआ। यही कहता रहा कि इस पाप से युक्त रूधिर से सने राज्य को भोग कर मैं नरक प्राप्ति नहीं चाहूँगा। श्री कष्ण जी ने कहा कि आप एक धर्म यज्ञ करो। जिससे आपको युद्ध में हुई हत्याओं का पाप नहीं लगेगा। इस बात पर युधिष्ठिर सहमत हो गया और एक धर्म यज्ञ की। फिर राज गद्दी पर बैठ गया। हस्तिनापुर का राजा बन गया।

प्रमाण सुखसागर के पहले स्कन्ध के आठवें तथा नौवें अध्याय से सहाभार पष्ठ नं. 48 से 53)

कुछ वर्षो पर्यन्त युधिष्ठिर को भयानक स्वपन आने शुरु हो गए। जैसे बहुत सी औरतें रोती-बिलखती हुई अपनी चूड़ियाँ तोड़ रहीं हैं तथा उनके मासूम बच्चे अपनी माँ के पास खड़े कुछ बैठे पिता-पिता कह कर रो रहे हैं मानों कह रहे हो हे राजन्! हमें भी मरवा दे, भेज दे हमारे पिता के पास। कई बार बिना शीश के धड़ दिखाई देते है। किसी की गर्दन कहीं पड़ी है, धड़ कहीं पड़ा है, हा-हा कार मची हुई है। युधिष्ठिर की नींद उचट जाती, घबरा कर बिस्तर पर बैठ कर हाँफने लग जाता। सारी-2 रात बैठ कर या महल में घूम कर व्यतीत करता है। एक दिन द्रौपदी ने बड़े पति की यह दशा देखी परेशानी का कारण पूछा तो युधिष्ठिर कुछ नहीं- कुछ नहीं कह कर टाल गए। जब द्रौपदी ने कई रात्रियों में युधिष्ठिर की यह दुर्दशा देखी तो एक दिन चारों (अर्जुन, भीम, नकुल, सहदेव) को बताया कि आपका बड़ा भाई बहुत परेशान है। कारण पूछो। तब चारों भाईयों ने बड़े भईया से प्रार्थना करके पूछा कि कप्या परेशानी का कारण बताओ। ज्यादा आग्रह करने पर अपनी सर्व कहानी सुनाई। पाँचों भाई इस परेशानी का कारण जानने के लिए भगवान श्रीकष्णजी के पास गए तथा बताया कि बड़े भईया युधिष्ठिर जी को भयानक स्वपन आ रहे हैं। जिनके कारण उनकी रात्रि की नींद व दिन का चैन व भूख समाप्त हो गई। कप्या कारण व समाधान बताएँ। सारी बात सुनकर श्री कष्ण जी बोले युद्ध में किए हुए पाप परेशान कर रहे हैं। इन पापों का निवारण यज्ञ से होता है।

गीता जी के अध्याय 3 के श्लोक 13 का हिन्दी अनुवाद : यज्ञ में प्रतिष्ठित ईष्ट (पूर्ण परमात्मा) को भोग लगाने के बाद बने प्रसाद को खाने वाले श्रेष्ठ पुरुष सब पापों से मुक्त हो जाते हैं जो पापी लोग अपना शरीर पोषण करने के लिये ही अन्न पकाते हैं वे तो पाप को ही खाते हैं अर्थात् यज्ञ करके सर्व पापों से मुक्त हो जाते हैं। और कोई चारा न देख कर पाण्डवों ने श्री कष्ण जी की सलाह स्वीकार कर ली। यज्ञ की तैयारी की गई। सर्व पथ्वी के मानव, ऋषि, सिद्ध, साधु व स्वर्ग लोक के देव भी आमन्त्रित करने को, श्री कष्ण जी ने कहा कि जितने अधिक व्यक्ति भोजन पाएंगें उतना ही अधिक पुण्य होगा। परंतु संतों व भक्तों से विशेष लाभ होता है उनमें भी कोई परम शक्ति युक्त संत होगा वह पूर्ण लाभ दे

सकता है तथा यज्ञ पूर्ण होने का साक्षी एक पांच मुख वाला (पंचजन्य) शंख एक सुसज्जित ऊँचे आसन पर रख दिया जाएगा तथा जब इस यज्ञ में कोई परम शक्ति युक्त संत भोजन खाएगा तो यह शंख स्वयं आवाज करेगा। इतनी गूँज होगी की पूरी पथ्वी पर तथा स्वर्ग लोक तक आवाज सुनाई देगी।

यज्ञ की तैयारी हुई। निश्चित दिन को सर्व आदरणीय आमन्त्रित भक्तगण, अठासी हजार ऋषि, तेतीस करोड़ देवता, नौ नाथ, चौरासी सिद्ध, ब्रह्मा, विष्णु, शिव आदि पहुँच गए। यज्ञ कार्य शुरु हुआ। बाद में सब ने यज्ञ का बचा प्रसाद (भण्डारा) सर्व उपस्थित महानुभावों व भक्तों तथा जनसाधारण को बरताया (खिलाया)। स्वयं भगवान कष्ण जी ने भी भोजन खा लिया। परंतु शंख नहीं बजा। शंख नहीं बजा तो यज्ञ सम्पूर्ण नहीं हुई। उस समय युधिष्ठिर ने श्री कष्ण जी से पूछा - हे मधुसूदन! शंख नहीं बजा। सर्व महापुरुषों व आगन्तुकों ने भोजन पा लिया। कारण क्या है? श्री कष्ण जी ने कहा कि इनमें कोई पूर्ण सन्त (सतनाम व सारनाम उपासक) नहीं है। तब युधिष्ठिर को बड़ा आश्चर्य हुआ कि इतने महा मण्डलेश्वर जिसमें वशिष्ठ मुनि, मार्कण्डेय, लोमष ऋषि, नौ नाथ (गोरखनाथ जैसे), चौरासी सिद्ध आदि-2 व स्वयं भगवान श्री कष्ण जी ने भी भोजन खा लिया। परंतु शंख नहीं बजा। इस पर कष्ण जी ने कहा ये सर्व मान बड़ाई के भूखे हैं। परमात्मा चाहने वाला कोई नहीं तथा अपनी मनमुखी साधना करके सिद्धि दिखा कर दुनियाँ को आकर्षित करते हैं। भोले लोग इनकी वाह-2 करते हैं तथा इनके इर्द-गिर्द मण्डराते हैं। ये स्वयं भी पशु जूनी में जाएंगे तथा अपने अनुयाईयों को नरक ले जाएंगे।

गरीब, साहिब के दरबार में, गाहक कोटि अनन्त। चार चीज चाहै हैं, रिद्धि सिद्धि मान महंत।।
गरीब, ब्रह्म रन्द्र के घाट को, खोलत है कोई एक। द्वारे से फिर जाते हैं, ऐसे बहुत अनेक।।
गरीब, बीजक की बातां कहैं, बीजक नाहीं हाथ। पृथ्वी डोबन उतरे, कह–कह मीठी बात।।
गरीब, बीजक की बातां कहैं, बीजक नाहीं पास। ओरों को प्रमोदही, अपन चले निरास।।

।।प्रमाण के लिए गीता जी के कुछ श्लोक।।

अध्याय 9 का श्लोक 20

त्रैविद्याः, माम्, सोमपाः, पूतपापाः, पूतपापाः, यज्ञैः, इष्टवा, स्वर्गतिम्, प्रार्थयन्ते,
ते, पुण्यम्, आसाद्य, सुरेन्द्रलोकम्, अश्नन्ति, दिव्यान्, दिवि, देवभोगान्।।20।।

अनुवाद : (त्रैविद्याः) तीनों वेदों में विधान (सोमपाः) सोमरस को पीने वाले (पूतपापाः) पाप रहित पुरुष (माम्) मुझको (यज्ञैः) यज्ञोंके द्वारा (इष्टवा) पूज्य देव के रूप में पूज कर (स्वर्गतिम्) स्वर्ग की प्राप्ति (प्रार्थयन्ते) चाहते हैं (ते) वे पुरुष (पुण्यम्) अपने पुण्यों के फलरूप (सुरेन्द्रलोकम्) स्वर्ग लोक को (आसाद्य) प्राप्त होकर (दिवि) स्वर्ग में (दिव्यान्) दिव्य (देवभोगान्) देवताओं के भोगों को (अश्नन्ति) भोगते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : तीनों वेदों में विधान सोम रस को पीने वाले पाप रहित पुरुष मुझको यज्ञों के द्वारा पूज्य देव के रूप में पूज कर स्वर्ग की प्राप्ति चाहते हैं। वे पुरुष अपने पुण्यों के फलरूप स्वर्ग लोक को प्राप्त होकर स्वर्ग में दिव्य देवताओं के भोगों को भोगते हैं।

अध्याय 9 का श्लोक 21

ते, तम्, भुक्त्वा, स्वर्गलोकम्, विशालम्, क्षीणे, पुण्ये, मर्त्यलोकम्, विशन्ति,
एवम्, त्रयीधर्मम्, अनुप्रपन्नाः, गतागतम्, कामकामाः, लभन्ते।।21।।

अनुवाद : (ते) वे (तम्) उस (विशालम्) विशाल (स्वर्गलोकम्) स्वर्गलोकको (भुक्त्वा) भोगकर (पुण्ये) पुण्य (क्षीणे) क्षीण होनेपर (मर्त्यलोकम्) मृत्युलोकको (विशन्ति) प्राप्त होते हैं। (एवम्) इस प्रकार

(त्रयीधर्मम्) तीनों वेदों में कहे हुए पूजा कर्मों का (अनुप्रपन्नाः) आश्रय लेने वाले और (कामकामाः) भोगों की कामनावस (गतागतम्) बार–बार आवागमन को (लभन्ते) प्राप्त होते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : वे उस विशाल स्वर्ग लोक को भोगकर पुण्य क्षीण होने पर मत्युलोक को प्राप्त होते हैं। इस प्रकार तीनों वेदों में कहे हुए पूजा कर्मों का आश्रय लेने वाले और भोगों की कामनावश बार-बार आवागमन को प्राप्त होते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 17

आत्सम्भाविताः, स्तब्धाः, धनमानमदान्विताः, यजन्ते, नामयज्ञैः, ते, दम्भेन, अविधिपूर्वकम्।।17।।

अनुवाद : (ते) वे (आत्मसम्भाविताः) अपने आपको ही श्रेष्ठ मानने वाले (स्तब्धाः) घमण्डी पुरुष (धनमानमदान्विताः) धन और मान के मद से युक्त होकर (नामयज्ञैः) केवल नाममात्र के यज्ञों द्वारा (दम्भेन) पाखण्ड से (अविधिपूर्वकम्) शास्त्रविधि रहित पूजन करते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : वे अपने आपको ही श्रेष्ठ मानने वाले घमण्डी पुरुष धन और मान के मद से युक्त होकर केवल नाममात्र के यज्ञों द्वारा पाखण्ड से शास्त्रविधि रहित पूजन करते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 18

अहंकारम्, बलम्, दर्पम्, कामम्, क्रोधम्, च, संश्रिताः,
माम्, आत्मपरदेहेषु, प्रद्विषन्तः, अभ्यसूयकाः।।18।।

अनुवाद : (अहंकारम्) अहंकार (बलम्) बल (दर्पम्) घमण्ड (कामम्) कामना और (क्रोधम्) क्रोधादि के (संश्रिताः) परायण (च) और (अभ्यसूयकाः) दूसरों की निन्दा करने वाले पुरुष (आत्मपरदेहेषु) प्रत्येक शरीर में परमात्मा आत्मा सहित तथा (माम्) मुझसे (प्रद्विषन्तः) द्वेष करने वाले होते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : अहंकार बल घमण्ड कामना और क्रोधादि के परायण और दूसरों की निन्दा करने वाले पुरुष प्रत्येक शरीर में परमात्मा आत्मा सहित तथा मुझसे द्वेष करने वाले होते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 19

तान् अहम्, द्विषतः, क्रूरान्, संसारेषु, नराधमान्,
क्षिपामि, अजस्त्रम्, अशुभान्, आसुरीषु, एव, योनिषु।।19।।

अनुवाद : (तान्) उन (द्विषतः) द्वेष करने वाले (अशुभान्) पापाचारी और (क्रूरान्) क्रूरकर्मी (नराधमान्) नराधमों को (अहम्) मैं (संसारेषु) संसार में (अजस्त्रम्) बार–बार (आसुरीषु) आसुरी (योनिषु) योनियों में (एव) ही (क्षिपामि) डालता हूँ।

केवल हिन्दी अनुवाद : उन द्वेष करने वाले पापाचारी और क्रूरकर्मी नराधमों को मैं संसार में बार-बार आसुरी योनियों में ही डालता हूँ।

अध्याय 16 का श्लोक 20

आसुरीम्, योनिम्, आपन्नाः, मूढाः, जन्मनि, जन्मनि,
माम् अप्राप्य, एव, कौन्तेय, ततः, यान्ति, अधमाम्, गतिम्।।20।।

अनुवाद : (कौन्तेय) हे अर्जुन! (मूढाः) वे मूर्ख (माम्) मुझको (अप्राप्य) न प्राप्त होकर (एव) ही (जन्मनि) जन्म (जन्मनि) जन्म में (आसुरीम्) आसुरी (योनिम्) योनि को (आपन्नाः) प्राप्त होते हैं फिर (ततः) उससे भी (अधमाम्) अति नीच (गतिम्) गति को (यान्ति) प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरकों में पड़ते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद : हे अर्जुन! वे मूर्ख मुझको न प्राप्त होकर ही जन्म जन्म में आसुरी योनि को प्राप्त होते हैं फिर उससे भी अति नीच गति को प्राप्त होते हैं अर्थात् घोर नरकों में पड़ते हैं।

अध्याय 16 का श्लोक 23

यः, शास्त्रविधिम्, उत्सृज्य, वर्तते, कामकारतः,
न, सः, सिद्धिम्, अवाप्नोति, न, सुखम्, न, पराम्, गतिम्।।23।।

अनुवाद : (यः) जो पुरुष (शास्त्रविधिम्) शास्त्र विधि को (उत्सृज्य) त्यागकर (कामकारतः) अपनी इच्छा से मनमाना (वर्तते) आचरण करता है (सः) वह (न) न (सिद्धिम्) सिद्धि को (अवाप्नोति) प्राप्त होता है (न) न (पराम्) परम (गतिम्) गति को और (न) न (सुखम्) सुख को ही।

केवल हिन्दी अनुवाद : जो पुरुष शास्त्रविधि को त्यागकर अपनी इच्छा से मनमाना आचरण करता है, वह न सिद्धि को प्राप्त होता है, न परम गति को और न सुख को ही।

''शेष कथा''

श्री कष्ण भगवान ने अपनी शक्ति से युधिष्ठिर को उन सर्व महा मण्डलेश्वरों के आगे होने वाले जन्म दिखाए जिसमें किसी ने कैंचवे का, किसी ने भेड़-बकरी, भैंस व शेर आदि के रूप धारण किए थे।

यह सब देख कर युधिष्ठिर ने कहा - हे भगवन! फिर तो पथ्वी संत रहित हो गई है।। भगवान कष्ण जी ने कहा जब पथ्वी संत रहित हो जाएगी तो यहाँ आग लग जाएगी। सर्व जीव-जन्तु आपस में लड़ मरेंगे। यह तो पूरे संत की शक्ति से सन्तुलन बना रहता है। समय-समय पर मैं (भगवान विष्णु) पथ्वी पर आ कर राक्षस वत्ति के लोगों को समाप्त करता हूँ जिससे संत सुखी हो जाते है। जिस प्रकार जमींदार अपनी फसल से हानि पहुँचने वाले अन्य पौधों को जो झाड़-खरपतवार आदि को काट-काट कर बाहर डाल देता है तब वह फसल स्वतन्त्रता पूर्वक फलती-फूलती है। यानी ये संत उस फसल में सिचांई का सुख प्रदान करते हैं। पूर्ण संत सबको समान सुख देते हैं। जिस प्रकार वर्षा व सिंचाई का जल दोनों प्रकार के पौधों (फसल व खरपतवार) का पोषण करते हैं। उनमें सर्व जीव के प्रति दया भाव होता है। अब मैं आपको पूर्ण संत के दर्शन करवाता हूँ। एक महात्मा काशी में रहते हैं। उसको बुलवाना है। तब युधिष्ठिर ने कहा कि उस ओर संतों को आमन्त्रित करने का कार्य भीमसेन को सौंपा था। पूछते हैं कि वह उन महात्मा तक पहुँचा या नहीं। भीमसेन को बुलाकर पूछा तो उसने बताया कि मैं उस से मिला था। उनका नाम स्वपच सुदर्शन है। बाल्मीकि जाति में गहस्थी संत हैं। एक झौंपड़ी में रहता है। उन्होंने यज्ञ में आने से मना कर दिया। इस पर श्री कष्ण जी ने कहा कि संत मना नहीं किया करते। सर्व वार्ता जो उनके साथ हुई है वह बताओ।

तब भीम सेन ने आगे बताया कि मैंने उनको आमन्त्रित करते हुए कहा कि हे संत परवर ! हमारी यज्ञ में आने का कष्ट करना। उनको पूरा पता बताया। उसी समय वे (सुदर्शन संत जी) कहने लगे भीम सैन आप के पाप के अन्न को खाने से संतों को दोष लगेगा। करोड़ों सैनिकों की हत्या करके आपने तो घोर पाप कर रखा है। आज आप राज्य का आनन्द ले रहे हो। युद्ध में वीरगति को प्राप्त सैनिकों की विधवा पत्नी व अनाथ बच्चे रह-रह कर अपने पति व पिता को याद करके फूट-फूट कर घंटों रोते हैं। बच्चे अपनी माँ से लिपट कर पूछ रहे हैं - माँ, पापा छुट्टी नहीं आए? कब आएंगे? हमारे लिए नए वस्त्र लाएंगे। दूसरी लड़की कहती है कि मेरे लिए नई साड़ी लाएंगे। बड़ी होने पर जब मेरी शादी होगी तब मैं उसे बाँधकर ससुराल जाऊँगी। वह लड़का (जो दस वर्ष की आयु का है) कहता है कि मैं अब की बार पापा (पिता जी) से कहूँगा कि आप नौकरी पर मत जाना। मेरी माँ तथा भाई-बहन आपके बिना बहुत दुःख पाते हैं। माँ तो सारा दिन-रात आपकी याद करके जब देखो एकांत स्थान पर रो रही होती है। या

तो हम सबको अपने पास बुला लो या आप हमारे पास रहो। छोड़ दो नौकरी को। मैं जवान हो गया हूँ। आपकी जगह मैं फौज में जा कर देश सेवा करूँगा। आप अपने परिवार में रहो। आने दो पिता जी को, बिल्कुल नहीं जाने दूँगा। (उन बच्चों को दुःखी होने से बचाने के लिए उनकी माँ ने उन्हें यह नहीं बताया कि आपके पिता जी युद्ध में मर चुके हैं क्योंकि उस समय वे बच्चे अपने मामा के घर गए हुए थे। केवल छोटा बच्चा जो डेढ़ वर्ष की आयु का था वही घर पर था। अन्य बच्चों को जान बूझ कर नहीं बुलाया था।)

इस प्रकार उन मासूम बच्चों की आपसी वार्ता से दुःखी होकर उनकी माता का हृदय पति की याद के दुःख से भर आया। उसे हल्का करने के लिए (रोने के लिए) दूसरे कमरे में जा कर फूट-फूट कर रोने लगी। तब सारे बच्चे माँ के ऊपर गिरकर रोने लगे। सम्बन्धियों ने आकर शांत करवाया। कहा कि बच्चों को स्पष्ट बताओ कि आपके पिता जी युद्ध में वीरगति को प्राप्त हो गए। जब बच्चों को पता चला कि हमारे पापा (पिता जी) अब कभी नहीं आएंगे तब उस स्वार्थी राजा को कोसने लगे जिसने अपने भाई बटवारे के लिए दुनियाँ के लालों का खून पी लिया। यह कोई देश रक्षा की लड़ाई भी नहीं थी जिसमें हम संतोष कर लेते कि देश के हित में प्राण त्याग दिए हैं। इस खूनी राजा ने अपने ऐशो-आराम के लिए खून की नदी बहा दी। अब उस पर मौज कर रहा है। आगे संत सुदर्शन (सुपच) बता रहे हैं कि भीम ऐसे-2 करोड़ों प्राणी युद्ध की पीड़ा से पीड़ित हैं। उनकी हाय आपको चैन नहीं लेने देगी चाहे करोड़ यज्ञ करो। ऐसे दुष्ट अन्न को कौन खाए ? यदि मुझे बुलाना चाहते हो तो मुझे पहले किए हुए सौ (100) यज्ञों का फल देने का संकल्प करो अर्थात् एक सौ यज्ञों का फल मुझे दो तब मैं आपके भोजन पाऊँ।

सुदर्शन जी के मुख से इस बात को सुन कर भीम ने बताया कि मैं बोला आप तो कमाल के व्यक्ति हो, सौ यज्ञों का फल मांग रहे हो। यह हमारी दूसरी यज्ञ है। आपको सौ का फल कैसे दें? इससे अच्छा तो आप मत आना। आपके बिना कौन सी यज्ञ सम्पूर्ण नहीं होगी। जब स्वयं भगवान कृष्ण जी हमारे साथ हैं। तो तेरे न आने से क्या यज्ञ पूर्ण नहीं होगा। सर्व वार्ता सुन कर श्री कृष्ण जी ने कहा भीम संतों के साथ ऐसा आपत्तिजनक व्यवहार नहीं करना चाहिए। सात समुद्रों का अंत पाया जा सकता है परंतु सतगुरु (कबीर साहेब) के संत का पार नहीं पा सकते। उस महात्मा सुदर्शन वाल्मीकि के एक बाल के समान तीन लोक भी नहीं हैं। मेरे साथ चलो, उस परमपिता परमात्मा के प्यारे हंस को लाने के लिए। तब पाँचों पाण्डव व श्री कृष्ण भगवान स्वपच सुदर्शन की झोंपड़ी की ओर रथ में बैठकर चले। एक योजन अर्थात् 12 किलोमीटर पहले रथ से उतरकर नंगे पैरों चले तथा रथ को खाली लेकर रथवान पीछे-पीछे चला।

उस समय स्वयं कबीर साहेब सुदर्शन सुपच का रूप बना कर झोपड़ी में बैठ गए व सुदर्शन को अपनी गुप्त प्रेरणा से मन में संकल्प उठा कर कहीं दूर के संत या भक्त से मिलने भेज दिया जिसमें आने व जाने में कई रोज लगने थे। तब सुदर्शन के रूप में सतगुरु की चमक व शक्ति देख कर सर्व पाण्डव बहुत प्रभावित हुए। स्वयं श्रीकृष्णजी ने लम्बी दण्डवत् प्रणाम की। तब देखा देखी सर्व पाण्डवों ने भी ऐसा ही किया। कृष्ण जी की तरफ नजर करके सुपच सुदर्शन ने आदर पूर्वक कहा कि - हे त्रिभुवननाथ! आज इस दीन के द्वार पर कैसे? मेरा अहोभाग्य है कि आज दीनानाथ विश्वम्भरनाथ मुझ तुच्छ को दर्शन देने स्वयं चल कर आए हैं। सबको आदर पूर्वक बैठा दिया तथा आने का कारण पूछा। उस समय श्री कृष्ण जी ने कहा कि हे जानी-जान! आप सर्व गति (स्थिति) से परिचित हैं। पाण्डवों ने यज्ञ की है। वह आपके बिना सम्पूर्ण नहीं हो रही है। कृपा इन्हें कृतार्थ करें। उसी समय वहां उपस्थित भीम की ओर संकेत करते हुए सुदर्शन रूप धारी परमेश्वर जी ने कहा कि यह वीर मेरे पास आया था

तथा अपनी मजबूरी से इसे अवगत करवाया था। उस समय श्री कष्ण जी ने कहा कि - हे पूर्णब्रह्म! आपने स्वयं अपनी वाणी में कहा है कि -

''संत मिलन को चालिए, तज माया अभिमान। जो–जो पग आगे धरै, सो–सो यज्ञ समान।।''

आज पांचों पाण्डव राजा हैं तथा मैं स्वयं द्वारिकाधीश आपके दरबार में राजा होते हुए भी नंगे पैरों उपस्थित हूँ। अभिमान का नामों निशान भी नहीं है तथा स्वयं भीम ने भी खड़ा हो कर उस दिन कहे हुए अपशब्दों की चरणों में पड़ कर क्षमा याचना की। श्री कष्ण जी ने कहा हे नाथ! आज यहाँ आपके दर्शनार्थ आए आपके छः सेवकों के कदमों के यज्ञ समान फल को स्वीकार करते हुए सौ आप रखो तथा शेष हम भिक्षुकों को दान दीजिए ताकि हमारा भी कल्याण हो। इतना आधीन भाव सर्व उपस्थित जनों में देख कर जगतगुरु साहेब करूणामय सुदर्शन रूप में अति प्रसन्न हुए।

कबीर, साधू भूखा भाव का, धन का भूखा नाहिं।
जो कोई धन का भूखा, वो तो साधू नाहिं।।

उठ कर उनके साथ चल पड़े। जब सुदर्शन जी यज्ञशाला में पहुँचे तो चारों ओर एक से एक ऊँचे सुसज्जित आसनों पर विराजमान महा मण्डलेश्वर सुदर्शन जी के रूप व वेश (दोहरी धोती घुटनों से थोड़ी नीचे तक, छोटी-2 दाड़ी, सिर के बिखरे केश न बड़े न छोटे, टूटी-फूटी जूती। मैले से कपड़े, तेजोमय शरीर) को देखकर अपने मन में सोच रहे हैं कि ऐसे अपवित्र व्यक्ति से शंख सात जन्म भी नहीं बज सकता है। यह तो हमारे सामने ऐसे है जैसे सूर्य के सामने दीपक। श्रीकष्ण जी ने स्वयं उस महात्मा का आसन अपने हाथों लगाया (बिछाया) क्योंकि श्री कष्ण जी श्रेष्ठ आत्मा हैं। फिर द्रोपदी से कहा कि हे बहन! सुदर्शन महात्मा जी आए हैं, भोजन तैयार करो। बहुत पहुँचे हुए संत हैं। द्रोपदी देख रही है कि संत लक्षण तो एक भी नहीं दिखाई देते हैं। यह तो एक दरिद्र गहस्थी व्यक्ति है। न तो वस्त्र भगवां, न गले में माला, न तिलक, न सिर पर बड़ी जटा, न मुण्ड ही मुण्डवा रखा और न ही कोई चिमटा, झोली, कमण्डल लिए हुए था। श्री कष्ण जी के कहते ही स्वादिष्ट भोजन कई प्रकार का बनाकर एक सुन्दर थाल (चांदी का) में परोस कर सुदर्शन जी के सामने रख कर द्रोपदी ने मन में विचार किया कि आज तो यह भक्त भोजन को खाएगा तो ऊँगली चाटता रह जाएगा। जिन्दगी में ऐसा भोजन कभी नहीं खाया होगा।

सुदर्शन जी ने नाना प्रकार के भोजन को थाली में इक्ट्ठा किया तथा खिचड़ी सी बनाई। उस समय द्रौपदी ने देखा कि इसने तो सारा भोजन (खीर, खांड, हलुवा, सब्जी, दही, दही-बड़े आदि) घोल कर एक कर लिया। तब मन में दुर्भावना पूर्वक विचार किया कि इस मूर्ख हब्शी ने तो खाना खाने का भी ज्ञान नहीं। यह काहे का संत? कैसा शंख बजाएगा। (क्योंकि खाना बनाने वाली स्त्री की यह भावना होती है कि मैं ऐसा स्वादिष्ट भोजन बनाऊँ कि खाने वाला मेरे भोजन की प्रशंसा कई जगह करे)। प्रत्येक बहन की यही आशा होती है।

{वह बेचारी एक घंटे तक धुएँ से आँखें खराब करे और मेरे जैसा कह दे कि नमक तो है ही नहीं, तब उसका मन बहुत दुःखी होता है। इसलिए संत जैसा मिल जाए उसे खा कर सराहना ही करते हैं। यदि कोई न खा सके तो नमक कह कर 'संत' नहीं मांगता। संतों ने नमक का नाम राम–रस रखा हुआ है। कोई ज्यादा नमक खाने का अभ्यस्त हो तो कहेगा कि भईया– रामरस लाना। घर वालों को पता ही न चले कि क्या मांग रहा है? क्योंकि सतसंग में सेवा में अन्य सेवक ही होते हैं। न ही भोजन बनाने वालों को दुःख हो। एक समय एक नया भक्त किसी सतसंग में पहली बार गया। उसमें किसी ने कहा कि भक्त जी

रामरस लाना। दूसरे ने भी कहा कि रामरस लाना तथा थोड़ा रामरस अपनी हथेली पर रखवा लिया। उस नए भक्त ने खाना खा लिया था। परंतु पंक्ति में बैठा अन्य भक्तों के भोजन पाने का इंतजार कर रहा था कि इकट्ठे ही उठेंगे। यह भी एक औपचारिकता सतसंग में होती है। उसने सोचा रामरस कोई खास मीठा खाद्य पदार्थ होगा। यह सोच कर कहा मुझे भी रामरस देना। तब सेवक ने थोड़ा सा रामरस (नमक) उसके हाथ पर रख दिया। तब वह नया भक्त बोला – ये के कान कै लाना है, चौखा सा (ज्यादा) रखदे। तब उस सेवक ने दो तीन चमच्च रख दिया। उस नए भक्त ने उस बारीक नमक को कोई खास मीठा खाद्य प्रसाद समझ कर फांका मारा। तब चुपचाप उठा तथा बाहर जा कर कुल्ला किया। फिर किसी भक्त से पूछा रामरस किसे कहते हैं? तब उस भक्त ने बताया कि नमक को रामरस कहते हैं। तब वह नया भक्त कहने लगा कि मैं भी सोच रहा था कि कहें तो रामरस परंतु है बहुत खारा। फिर विचार आया कि हो सकता है नए भक्तों पर परमात्मा प्रसन्न नहीं हुए हों। इसलिए खारा लगता हो। मैं एक बार फिर कोशिश करता, अच्छा हुआ जो मैंने आपसे स्पष्ट कर लिया। फिर उसे बताया गया कि नमक को रामरस किस लिए कहते हैं ?}

सुपच सुदर्शन जी ने थाली वाले मिले हुए उस सारे भोजन को पाँच ग्रास बना कर खा लिया। पाँच बार शंख ने आवाज की। उसके पश्चात् शंख ने आवाज नहीं की।

व्यंजन छतीसों परोसिया जहाँ द्रौपदी रानी। बिन आदर सतकार के, कही शंख न बानी।।
पंच गिरासी वाल्मीकि, पंचै बर बोले। आगे शंख पंचायन, कपाट न खोले।।
बोले कृष्ण महाबली, त्रिभुवन के साजा। बाल्मिक प्रसाद से, कण कण क्यों न बाजा।।
द्रोपदी सेती कृष्ण देव, जब ऐसे भाखा। बाल्मिक के चरणों की, तेरे न अभिलाषा।।
प्रेम पंचायन भूख है, अन्न जग का खाजा। ऊँच नीच द्रोपदी कहा, शंख कण कण यूँ नहीं बाजा।।
बाल्मिक के चरणों की, लई द्रोपदी धारा। शंख पंचायन बाजीया, कण–कण झनकारा।।

युधिष्ठर जी श्री कष्ण जी के पास आए तथा कहा हे भगवन्! आप की कपा से शंख ने आवाज की है हमारा कार्य पूर्ण हुआ। श्री कष्ण जी ने सोचा कि इन महात्मा सुदर्शन के भोजन खा लेने से भी शंख अखण्ड क्यों नहीं बजा? फिर अपनी दिव्य दष्टि से देखा ? तो पाया कि द्रोपदी के मन में दोष है जिस कारण से शंख ने अखण्ड आवाज नहीं की केवल पांच बार आवाज करके मौन हो गया है। श्री कष्ण जी ने कहा युधिष्ठर यह शंख बहुत देर तक बजना चाहिए तब यज्ञ पूर्ण होगी। युधिष्ठर ने कहा भगवन्! अब कौन संत शेष है जिसे लाना होगा। श्री कष्ण जी ने कहा युधिष्ठर इस सुदर्शन संत से बढ़कर कोई भी सत्यभक्ति युक्त संत नहीं है। इसके एक बाल समान तीनों लोक भी नहीं हैं। अपने घर में ही दोष है उसे शुद्ध करते हैं। श्री कष्ण जी ने द्रौपदी से कहा - द्रौपदी, भोजन सब प्राणी अपने-2 घर पर रूखा-सूखा खा कर ही सोते हैं। आपने बढ़िया भोजन बना कर अपने मन में अभिमान पैदा कर लिया। बिना आदर सत्कार के किया हुआ धार्मिक अनुष्ठान (यज्ञ, हवन, पाठ) सफल नहीं होता। आपने इस साधारण से व्यक्ति को क्या समझ रखा है? यह पूर्णब्रह्म हैं। इसके एक बाल के समान तीनों लोक भी नहीं हैं। आपने अपने मन में इस महापुरुष के बारे में गलत विचार किए हैं उनसे आपका अन्तःकरण मैला (मलिन) हो गया है। इनके भोजन ग्रहण कर लेने से तो यह शंख की स्वर्ग तक आवाज जाती तथा सारा ब्रह्मण्ड गूंज उठता। यह केवल पांच बार बोला है। इसलिए कि आपका भ्रम दूर हो जाए क्योंकि और किसी ऋषि के भोजन पाने से तो यह टस से मस भी नहीं हुआ। आप अपना मन साफ करके इन्हें पूर्ण परमात्मा समझकर इनके चरणों को धो कर पीओ, ताकी तेरे हृदय का मैल (पाप) साफ हो जाए।

उसी समय द्रौपदी ने अपनी गलती को स्वीकार करते हुए संत से क्षमा याचना की और सुपच सुदर्शन के चरण अपने हाथों धो कर चरणामत बनाया। रज भरे (धूलि युक्त) जल को पीने लगी। जब आधा पी लिया तब भगवान कष्ण जी ने कहा द्रौपदी कुछ अमत मुझे भी दे दो ताकि मेरा भी कल्याण हो। यह कह कर कष्ण जी ने द्रौपदी से आधा बचा हुआ चरणामत पीया। उसी समय वही पंचायन शंख इतने जोरदार आवाज से बजा कि स्वर्ग तक ध्वनि सुनि। तब पाण्डवों की वह यज्ञ सफल हुई।

प्रमाण के लिए अमत वाणी(पारख का अंग)

गरीब, सुपच शंक सब करत हैं, नीच जाति बिश चूक। पौहमी बिगसी स्वर्ग सब, खिले जो पर्वत रूंख।।
गरीब, करि द्रौपदी दिलमंजना, सुपच चरण पी धोय। बाजे शंख सर्व कला, रहे अवाजं गोय।।
गरीब, द्रौपदी चरणामृत लिये, सुपच शंक नहीं कीन। बाज्या शंख अखंड धुनि, गण गंधर्व ल्यौलीन।।
गरीब, फिर पंडौं की यज्ञ में, शंख पचायन टेर। द्वादश कोटि पंडित जहां, पड़ी सभन की मेर।।
गरीब, करी कृष्ण भगवान कूं, चरणामृत स्यौं प्रीत। शंख पंचायन जब बज्या, लिया द्रोपदी सीत।।
गरीब, द्वादश कोटि पंडित जहां, और ब्रह्मा विष्णु महेश। चरण लिये जगदीश कूं, जिस कूं रटता शेष।।
गरीब, वाल्मीकि के बाल समि, नाहीं तीनौं लोक। सुर नर मुनि जन कृष्ण सुधि, पंडौं पाई पोष।।
गरीब, वाल्मीकि बैंकुठ परि, स्वर्ग लगाई लात। शंख पचायन घुरत हैं, गण गंर्धव ऋषि मात।।
गरीब, स्वर्ग लोक के देवता, किन्हैं न पूरया नाद। सुपच सिंहासन बैठतैं, बाज्या अगम अगाध।।
गरीब, पंडित द्वादश कोटि थे, सहिदे से सुर बीन। संहस अठासी देव में, कोई न पद में लीन।
गरीब, बाज्या शंख स्वर्ग सुन्या, चौदह भवन उचार। तेतीसौं तत्त न लह्या, किन्हैं न पाया पार।।

।। अचला का अंग।।

गरीब, पांचौं पंडौं संग हैं, छठ्ठे कृष्ण मुरारि। चलिये हमरी यज्ञ में, समर्थ सिरजनहार।।97।।
गरीब, सहंस अठासी ऋषि जहां, देवा तेतीस कोटि। शंख न बाज्या तास तैं, रहे चरण में लोटि।।98।।
गरीब, सुपच रूप धरि आईया, सतगुरु पुरुष कबीर। तीन लोक की मेदनी, सुर नर मुनिजन भीर।।99।।
गरीब, पंडित द्वादश कोटि हैं, और चौरासी सिद्ध। शंख न बाज्या तास तैं, पिये मान का मध।।100।।
गरीब, पंडौं यज्ञ अश्वमेघ में, सतगुरु किया पियान। पांचौं पंडौं संग चलैं, और छठा भगवान।।101।।
गरीब, सुपच रूप धरि आईया, सब देवन का देव। कृष्णचन्द्र पग धोईया, करी तास की सेव।।102।।
गरीब, सुपच रूप को देखि करि, द्रौपदी मानी शंक। जानि गये जगदीश गुरु, बाजत नाहीं शंख।।103।।
गरीब, छप्पन भोग संजोग करि, कीनें पांच गिरास। द्रौपदी के दिल दुई हैं, नाहीं दृढ़ विश्वास।।104।।
गरीब, पांचौं पंडौं यज्ञ करी, कल्पवृक्ष की छांहिं। द्रौपदी दिल बंक हैं, कण कण बाज्या नांहि।।105।।
गरीब, छप्पन भोग न भोगिया, कीन्हें पंच गिरास। खड़ी द्रौपदी उनमुनी, हरदम घालत श्वास।।107।।
गरीब, बोलै कृष्ण महाबली, क्यूं बाज्या नहीं शंख। जानराय जगदीश गुरु, काढत है मन बंक।।108।।
गरीब, द्रौपदी दिल कूं साफ करि, चरण कमल ल्यौ लाय। वाल्मीकि के बाल सम, त्रिलोकी नहीं पाय।।109।।
गरीब, चरण कमल कूं धोय करि, ले द्रौपदी प्रसाद। अंतर सीना साफ होय, जरैं सकल अपराध।।110।।
गरीब, बाज्या शंख सुभान गति, कण कण भई अवाज। स्वर्ग लोक बानी सुनी, त्रिलोकी में गाज।।111।।
गरीब, पंडौं यज्ञ अश्वमेघ में, आये नजर निहाल। जम राजा की बंधि में, खल हल परया कमाल।।113।।

''अन्य वाणी सतग्रन्थ से''

तेतीस कोटि यज्ञ में आए सहंस अठासी सारे। द्वादश कोटि वेद के वक्ता, सुपच का शंख बज्या रे।।

''अर्जुन सहित पाण्डवों को युद्ध में की गई हिंसा के पाप लगे''

परमेश्वर कबीर जी ने धर्मदास जी को बताया कि उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि पाण्डवों को युद्ध की हत्याओं का पाप लगा। आगे सुन और सुनाता हूँ :-

दुर्वासा ऋषि के शाप वश यादव कुल आपस में लड़कर प्रभास क्षेत्र में यमुना नदी के किनारे नष्ट हो गया। श्री कष्ण जी भगवान को एक शिकारी ने पैर में विषाक्त तीर मार कर घायल कर दिया था। उस समय श्री कष्ण जी ने उस शिकारी को बताया कि आप त्रेता युग में सुग्रीव के बड़े भाई बाली थे तथा मैं रामचन्द्र था। आप को मैंने धोखा करके वक्ष की ओट लेकर मारा था। आज आपने वह बदला (प्रतिशोध) चुकाया है। पाँचों पाण्डवों को पता चला कि यादव आपस में लड़ मरे हैं वे द्वारिका पहुँचे। वहाँ गए जहाँ पर श्री कष्ण जी तीर से घायल तड़फ रहे थे। पाँचों पाण्डवों के धार्मिक गुरू श्री कष्ण जी थे। श्री कष्ण जी ने पाण्डवों से कहा! आप मेरे अतिप्रिय हो। मेरा अन्त समय आ चुका है। मैं कुछ ही समय का मेहमान हूँ। मैं आपको अन्तिम उपदेश देना चाहता हूँ कप्या ध्यान पूर्वक सुनों। यह कह कर श्री कष्ण जी ने कहा (1) आप द्वारिका की स्त्रियों को इन्द्रप्रस्थ ले जाना। यहाँ कोई नर यादव शेष नहीं बचा है (2) आप अति शीघ्र राज्य त्याग कर हिमालय चले जाओ वहाँ अपने शरीर के नष्ट होने तक तपस्या करते रहो। इस प्रकार हिमालय की बर्फ में गल कर नष्ट हो जाओ। युधिष्ठर ने पूछा हे भगवन्! हे गुरूदेव श्री कष्ण! क्या हम हिमालय में गल कर मरने का कारण जान सकते हैं? यदि आप उचित समझें तो बताने की कपा करें। श्री कष्ण ने कहा युधिष्ठर! आप ने युद्ध में जो प्राणियों की हिंसा करके पाप किया है। उस पाप का प्रायश्चित् करने के लिए ऐसा करना अनिवार्य है। इस प्रकार तपस्या करके प्राण त्यागने से आप के महाभारत युद्ध में किए पाप नष्ट हो जाएँगे।

कबीर जी बोले हे धर्मदास! श्री कष्ण जी के श्री मुख से उपरोक्त वचन सुन कर अर्जुन आश्चर्य में पड़ गया। सोचने लगा श्री कष्ण जी आज फिर कह रहे हैं कि युद्ध में किए पाप नष्ट इस विधि से होगें। अर्जुन अपने आपको नहीं रोक सका। उसने श्री कष्ण जी से कहा हे भगवन्! क्या मैं आप से अपनी शंका का समाधान करा सकता हूँ। वैसे तो गुरूदेव! यह मेरी गुस्ताखी है, क्षमा करना क्योंकि आप ऐसी स्थिति में हैं कि आप से ऐसी-वैसी बातें करना उचित नहीं जान पड़ता। यदि प्रभु! मेरी शंका का समाधान नहीं हुआ तो यह शंका रूपी कांटा आयु पर्यन्त खटकता रहेगा। मैं चैन से जी नहीं सकूंगा। श्री कुष्ण ने कहा हे अर्जून! तू जो पूछना चाहता है निःसंकोच होकर पूछ। मैं अन्तिम स्वांस गिन रहा हूँ जो कहूंगा सत्य कहूंगा। अर्जुन बोला हे श्री कष्ण! आपने श्री मद्भगवत् गीता का ज्ञान देते समय कहा था कि अर्जुन! तू युद्ध कर तुझे युद्ध में मारे जाने वालों का पाप नहीं लगेगा तू केवल निमित्त मात्र बन जा ये सर्व योद्धा मेरे द्वारा पहले ही मारे जा चुके हैं (प्रमाण गीता अध्याय 11 श्लोक 32-33) आपने यह भी कहा कि अर्जुन युद्ध में मारा गया तो स्वर्ग को चला जाएगा, यदि युद्ध जीत गया तो पथ्वी के राज्य का सुख भोगेगा। तेरे दोनों हाथों में लड्डू हैं। (प्रमाण श्री मदभगवत् गीता अध्याय 2 श्लोक 37) तू युद्ध के लिए खड़ा हो जो जय-पराजय की चिन्ता छोड़कर युद्ध कर इस प्रकार तू पाप को प्राप्त नहीं होगा (गीता अध्याय 2 श्लोक 38)

जिस समय बड़े भईया को बुरे-2 स्वपन आने लगे हम आप के पास कष्ट निवारण के लिए विधि जानने गए तो आपने बताया कि जो युद्ध में बन्धुघात अर्थात् अपने नातियों (राजाओं, सैनिकों, चाचा, भतीजा आदि) की हत्या का पाप दुःखी कर रहा है। मैं (अर्जुन) उस समय भी आश्चर्य में पड़ गया था

कि भगवन् गीता ज्ञान में कह रहे थे कि तुम्हें कोई पाप नहीं लगेगा युद्ध करो। आज कह रहे है कि युद्ध में की गई हिंसा का पाप दुःखी कर रहा है। आपने पाप नाश होने का समाधान बताया ''अश्वमेघ यज्ञ'' करना जिसमें करोड़ों रूपये का खर्च हुआ। उस समय मैं अपने मन को मार कर यह सोच कर चुप रहा कि यदि मैं आप (श्री कष्ण जी) से वाद-विवाद करूँगा कि आप तो कह रहे थे तुम्हें युद्ध में होने वाली हत्याओं का कोई पाप नहीं लगेगा। आज कह रहे हो तुम्हें महाभारत युद्ध में की हत्याओं का पाप दुःख दे रहा है। कहाँ गया आप का वह गीता वाला ज्ञान। किसलिए हमारे साथ धोखा किया, गुरू होकर विश्वासघात किया। तो बड़े भईया (युधिष्ठर जी) यह न सोच लें कि मेरी चिकित्सा में धन लगना है। इस कारण अर्जुन वाद-विवाद कर रहा है। यह (अर्जुन) मेरे कष्ट निवारण में होने वाले खर्च के कारण विवाद कर रहा है यह नहीं चाहता कि मैं (युधिष्ठर) कष्ट मुक्त हो जाऊं। अर्जुन को भाई के जीवन से धन अधिक प्रिय है। उपरोक्त विचारों को ध्यान में रखकर मैंने सोचा था कि यदि युधिष्ठर भईया को थोड़ा सा भी यह आभास हो गया कि अर्जुन! इस दष्टि कोण से विवाद कर रहा है तो भईया! अपना समाधान नहीं कराएगा। आजीवन कष्ट को गले लगाए रहेगा। हे कष्ण! आप के कहे अनुसार हमने यज्ञ किया। आज फिर आप कह रहे हो कि तुम्हें युद्ध की हत्याओं का पाप लगा है उसे नष्ट करने के लिए शीघ्र राज्य त्याग कर हिमालय में तपस्या करके गल मरो। आपने हमारे साथ यह विश्वास घात किसलिए किया? यदि आप जैसे सम्बन्धी व गुरू हों तो शत्रुओं की आवश्यकता ही नहीं। हे कष्ण हमारे हाथ में तो एक भी लड्डू नहीं रहा न तो युद्ध में मर कर स्वर्ग गए न पथ्वी के राज्य का सुख भोग सके। क्योंकि आप कह रहे हो कि राज्य त्याग कर हिमालय में गल मरो।

आँसू टपकाते हुए अर्जुन के मुख से उपरोक्त वचन सुनकर युधिष्ठर बोला, अर्जुन! जिस परिस्थिति में भगवान है। इस समय ये शब्द बोलना शोभा नहीं देता। श्री कष्ण जी बोले हे अर्जुन! सुन मैं आप को सत्य-2 बताता हूँ। गीता के ज्ञान में मैंने क्या कहा था मुझे कुछ भी ज्ञान नहीं। यह जो कुछ भी हुआ है यह होना था इसे टालना मेरे वश नहीं था। कोई अन्य शक्ति है जो आप और हम को कठपुतली की तरह नचा रही है। वह तेरे वश न मेरे वश। परन्तु जो मैं आपको हिमालय में तपस्या करके शरीर अन्त करने की राय दे रहा हूँ। यह आप को लाभदायक है। आप मेरे इस वचन का पालन अवश्य करना। यह कह कर श्री कष्ण जी शरीर त्याग गए। जहाँ पर उनका अन्तिम संस्कार किया गया। उस स्थान पर यादगार रूप में श्री कष्ण जी के नाम पर द्वारिका में द्वारिकाधीश मन्दिर बना है।

श्री कष्ण ने पाण्डवों से कहा था कि मेरे शरीर का संस्कार करके राख तथा अधजली अस्थियों को एक काष्ठ के संदूक (Box) में डालकर उसको पूरी तरह से बंद करके यमुना में प्रवाह कर देना। पाण्डवों ने वैसा ही किया। वह संदूक बहता हुआ समुद्र में उस स्थान पर चला गया जिस स्थान पर उड़ीसा प्रान्त में जगन्नाथ का मंदिर बना है। एक समय उड़ीसा का राजा इन्द्रदमन था जो श्री कष्ण जी का परम भक्त था। स्वपन में श्री कष्ण जी ने बताया कि एक काष्ठ के संदूक में मेरे कष्ण वाले शरीर की अस्थियाँ हैं। उस स्थान पर वह संदूक बहकर आ चुका है। उसी स्थान पर उनको जमीन में दबाकर एक मंदिर बनवा दें। राजा ने स्वपन अपनी धार्मिक पत्नी तथा मंत्रियों के साथ साझा किया और उस स्थान पर गए तो वास्तव में एक लकड़ी का संदूक मिला। उसको जमीन में दबाकर जगन्नाथ नाम से मंदिर बनवाया। संपूर्ण जानकारी पढ़ें इसी पुस्तक ''कबीर बड़ा या कष्ण'' में पष्ठ 389 पर।

धर्मदास जी को परमेश्वर कबीर जी ने बताया। हे धर्मदास! सर्व (छप्पन करोड़) यादव का जो आपस में लड़कर मर गए थे, अन्तिम संस्कार करके अर्जुन को द्वारिका में छोड़ कर चारों भाई इन्द्रप्रस्थ

चले गए। अकेला अर्जुन द्वारिका की स्त्रियों तथा श्री कष्ण जी की गोपियों को लेकर आ रहे थे। रास्ते में जंगली लोगों ने अर्जुन को पकड़ कर पीटा। अर्जुन के पास अपना गांडीव धनुष भी था जिस से महाभारत का युद्ध जीता था। परन्तु उस समय अर्जुन से वही धनुष नहीं चला। अपने आप को शक्तिहीन जानकर अर्जुन कायरों की तरह सब देखता रहा। वे जंगली व्यक्ति स्त्रियों के गहने लूट ले गए तथा कुछ स्त्रियों को भी अपने साथ ले गए। शेष स्त्रियों को साथ लेकर अर्जुन ने इन्द्रप्रस्थ को प्रस्थान किया तथा मन में विचार किया कि श्री कष्ण जी महाधोखेबाज (विश्वासघाती) था। जिस समय मेरे से युद्ध कराना था तो शक्ति प्रदान कर दी। उसी धनुष से मैंने लाखों व्यक्तियों को मौत के घाट उतार दिया। आज मेरा बल छीन लिया, मैं कायरों की तरह पिटता रहा मेरे से वही धनुष नहीं चला। कबीर परमेश्वर जी ने बताया धर्मदास! श्री कष्ण जी छलिया नहीं था। वह सर्व कपट काल ब्रह्म ने किया है जो ब्रह्मा-विष्णु व शिव का पिता है। जिसके समक्ष श्री विष्णु (कष्ण) तथा श्री शिव आदि की कुछ पेश नहीं चलती।

उपरोक्त कथा सुनकर धर्मदास जी ने प्रश्न किया :- धर्मदास ने कहा हे परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी! आप ने तो मेरी आँखे खोल दी हे प्रभु! हिमालय में तपस्या कर युधिष्ठर का तो केवल एक पैर का पंजा ही बर्फ से नष्ट हुआ तथा अन्य के शरीर गल गए थे। सुना है वे सर्व पापमुक्त होकर स्वर्ग चले गए?

उत्तरः- परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे धर्मदास! हिमालय में जो तप पाण्डवों ने किया वह शास्त्र विधि त्याग कर मनमाना आचरण (पूजा) होने के कारण व्यर्थ प्रयत्न था। (प्रमाण-गीता अध्याय 16 श्लोक 23 तथा गीता अध्याय 17 श्लोक 5-6 में कहा है कि जो मनुष्य शास्त्रविधि से रहित केवल कल्पित घोर तप को तपते हैं वे शरीरस्थ परमात्मा को कश करने वाले हैं उन अज्ञानियों को नष्ट हुए जान।) क्योंकि जैसी तपस्या पाण्डवों ने की वह गीता जी व वेदों में वर्णित नहीं है अपितु ऐसे शरीर को पीड़ा देकर साधना करना व्यर्थ बताया है। यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 15 में कहा है ओम् (ॐ) नाम का जाप कार्य करते-2 कर, विशेष कसक के साथ कर मनुष्य जन्म का मुख्य कर्त्तव्य जान के कर। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 श्लोक 7 व 13 में कहा है कि मेरा तो केवल ॐ नाम है इस का जाप अन्तिम सांस तक करने से लाभ होता है इसलिए अर्जुन! तू युद्ध भी कर तथा स्मरण (भक्ति जाप) भी कर अतः हे धर्मदास ! जैसी तपस्या पाण्डवों ने की वह व्यर्थ सिद्ध हुई।

गीता अध्याय 3 श्लोक 6 से 8 में कहा है कि जो मूढ़ बुद्धि मनुष्य समस्त कर्म इन्द्रयों को रोककर अर्थात् हठ योग द्वारा एक स्थान पर बैठ कर या खड़ा होकर साधना करता है। वह मन से इन्द्रियों का चिन्तन करता रहता है। जैसे सर्दी लगी तो शरीर की चिन्ता, सर्दी का चिन्तन, भूख लगी तो भूख का चिन्तन आदि होता रहता है। वह हठ से तप करने वाला मिथ्याचारी अर्थात् दम्भी कहा जाता है। कार्य न करने अर्थात् एक स्थान पर बैठ या खड़ा होकर साधना करने की अपेक्षा कर्म करना तथा भक्ति भी करना श्रेष्ठ है। यदि कर्म नहीं करेगा तो तेरा शरीर निर्वाह भी नहीं सिद्ध होगा।

विशेष विचार :- श्री मद्भगवत गीता में ज्ञान दो प्रकार का है। एक तो वेदों वाला तथा दूसरा काल ब्रह्म द्वारा सुनाया लोक वेद वाला। यह ज्ञान (गीता अध्याय 3 श्लोक 6 से 8 वाला ज्ञान) वेदों वाला ज्ञान ब्रह्म काल ने बताया है। श्री कष्ण जी द्वारा भी काल ब्रह्म ने पाण्डवों को लोक वेद सुनाया जिस से तप हो जाता है। तप से फिर कभी राजा बन जाता है कुछ सिद्धियाँ प्राप्त हो जाती हैं। मोक्ष नहीं होता तथा न पाप ही नष्ट होते हैं।

हे धर्मदास! पाँचों पाण्डवों ने विचार करके अभिमन्यु के पुत्र परीक्षित को राज तिलक कर दिया। द्रोपदी, कुन्ती (अर्जुन, भीम व युधिष्ठर की माता) तथा पाँचों पाण्डव श्री कृष्ण जी के आदेशानुसार हिमालय पर्वत पर जाकर तप करने लगे कुछ ही दिनों में आहार अभाव से उनके शरीर समाप्त हो गए। केवल युधिष्ठर का शरीर शेष रहा। उसके पैर का एक पंजा बर्फ में गल पाया था। युधिष्ठर ने देखा कि उस के परिजन मर चुके है। उनके शरीर की आत्माऐं निकल चुकी हैं सूक्ष्म शरीर युक्त आकाश को जाने लगी। तब युधिष्ठर ने भी अपना शरीर त्याग दिया तथा सूक्ष्म शरीर युक्त युधिष्ठर कर्मों के संस्कार वश अपने पिता धर्मराज के लोक में गया। धर्मराज ने अपने पुत्र को बहुत प्यार किया तथा उसको रहने का मकान बताया। कुछ समय पश्चात् काल ब्रह्म ने युधिष्ठर में प्रेरणा की। उसे अपने भाईयों व पत्नी द्रोपदी तथा माता कुन्ती की याद सताने लगी। युधिष्ठर ने अपने पिता धर्मराज से कहा हे धर्मराज! मुझे मेरे परिजनों से मिलाईए मुझे उनकी बहुत याद सता रही है। धर्मराज ने कहा युधिष्ठर! वह तेरा परिवार नहीं था। तेरा परिवार तो यह है। तू मेरा पुत्र है। अर्जुन-स्वर्ग के राजा इन्द्र का पुत्र है, भीम-पवन देव का पुत्र है, नकुल-नासत्य का पुत्र है तथा सहदेव-दस्र का पुत्र है। {नासत्य तथा दस्र ये दोनों अश्वनी कुमार हैं जो अश्व रूप धारी सूर्य देव तथा अश्वी (घोड़ी) रूप धारी सूर्य की पत्नी संज्ञा के सम्भोग से उत्पन्न हुए थे। सूर्य को घोड़े रूप में न पहचान कर सूर्य पत्नी जो घोड़ी रूप धार कर जंगल में तप कर रही थी अपने धर्म की रक्षा के लिए घोड़ा रूपधारी सूर्य को पृष्ठ भाग (पीछे) की ओर नहीं जाने दिया वह उस घोड़े से अभिमुख रही। कामवासना वश घोड़ा रूपधारी सूर्य घोड़ी रूपधारी अपनी पत्नी (विश्वकर्मा की पुत्री) के मुख की ओर चढ़कर सम्भोग करने के कारण वीर्य का कुछ अंश घोड़ी रूपधारी सूर्य की पत्नी के पेट में मुख द्वारा प्रवेश कर गया जिससे दो लड़कों (नासत्य तथा दस्र) का जन्म घोड़ी रूपी सूर्य पत्नी के मुख से हुआ जिस कारण ये दोनों बच्चे अश्विनी कुमार कहलाए। यह पुराण कथा है।}

धर्मराज ने अपने पुत्र युधिष्ठर को बताया कि आप सब का वहाँ पृथ्वी लोक में इतना ही संयोग था। वह समाप्त हो चुका है। वे सर्व युद्ध में किए पाप कर्मों तथा अन्य जीवन में किए पाप कर्मों का फल भोगने के लिए नरक में डाल रखे हैं। आप के पुण्य अधिक है इसलिए आप नरक में नहीं डाल रखे हैं। अतः आप उन से नहीं मिल सकते काल ब्रह्म कि प्रबल प्रेरणा वश होकर युधिष्ठर ने उन सर्व (भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रोपदी तथा कुन्ती) को मिलने का हठ किया। धर्मराज ने एक यमदूत से कहा आप युधिष्ठर को इसके परिवार से मिला कर शीघ्र लौटा लाना। यमदूत युधिष्ठर को लेकर नरक में प्रवेश हुआ। वहाँ पर आत्माऐं हा-हाकार मचा रहे थे, कह रहे थे, हे युधिष्ठर हमें नरक से निकलवा दो। मैं अर्जुन हूँ ,कोई कह रहा था, मैं भीम हूँ, मैं नकुल, मैं सहदेव हूँ, मैं कुन्ती, मैं द्रोपदी हूँ। इतने में यमदूत ने कहा हे युधिष्ठर अब आप लौट चलिए। युधिष्ठर ने कहा मैं भी अपने परिवार जनों के साथ यहीं नरक में ही रहूँगा। तब धर्मराज ने आवाज लगाई युधिष्ठर यहाँ आओ मैं तेरे को एक युक्ति बताता हूँ। यह आवाज सुन कर युधिष्ठर अपने पिता धर्मराज के पास लौट आया।

धर्मराज ने युधिष्ठर को समझाया कि बेटा आपने एक झूठ बोला था कि अश्वथामा मर गया फिर दबी आवाज में कहा था पता नहीं मनुष्य था या हाथी। जबकि आप को पता था कि हाथी मरा है। उस झूठ बोलने के पाप का कर्मदण्ड देने के लिए आप को कुछ समय इसी बहाने नरक में रखना पड़ा नहीं तो वह युक्ति मैं पहले ही आप को बता देता। युधिष्ठर ने कहा कृप्या आप वह विधि बताईए जिस से मेरे परिजन नरक से निकल सकें। धर्मराज ने कहा उनको एक शर्त पर नरक से निकाला जा सकता है कि आप अपने कुछ पुण्य उनको संकल्प कर दो। युधिष्ठर ने कहा मुझे स्वीकार है। यह कह कर युधिष्ठर

अपने आधे पुण्य उन छः के निमित्त संकल्प कर दिए। वे छःओं नरक से बाहर आकर धर्मराज के पास जहाँ युधिष्ठर खड़ा था उपस्थित हो गए। उसी समय इन्द्र देव आया अपने पुत्र अर्जुन को साथ लेकर चला गया, पवन देवता आया अपने पुत्र भीम को साथ लेकर चला गया। इसी प्रकार अश्विनी कुमार (नासत्य, दस्र) आए नकुल व सहदेव को लेकर चले गए। कुन्ती स्वर्ग में चली गई तथा देखते-2 द्रोपदी ने दुर्गा रूप धारण किया तथा आकाश को उड़ चली कुछ ही समय में सर्व की आँखों से ओझल हो गई। वहाँ अकेला युधिष्ठर अपने पिता धर्मराज के पास रह गया। परमेश्वर कबीर जी ने अपने शिष्य धर्मदास जी को उपरोक्त कथा सुनाई तत्पश्चात् इस सर्व काल के जाल को समझाया।

कबीर परमेश्वर जी ने बताया हे धर्मदास! काल ब्रह्मकी प्रेरणा से इक्कीस ब्रह्मण्डों के प्राणी कर्म करते हैं। जैसा आपने सुना युधिष्ठर पुत्र धर्मराज, अर्जुन पुत्र इन्द्र, भीम पुत्र पवन देव, नकुल पुत्र नासत्य तथा सहदेव पुत्र दस्र थे। द्रोपदी शापवश दुर्गा की अवतार थी जो अपना कर्म भोगने आई थी तथा कुन्ती भी दुर्गा लोक की पुण्यात्मा थी। ये सर्व काल प्रेरणा से पथ्वी पर एक फिल्म (चलचित्र) बनाने गए थे। जैसे एक करोड़पति का पुत्र किसी फिल्म में रिक्शा चालक का अभिनय करता है। फिल्म निर्माण के पश्चात् अपनी 20 लाख की कार गाड़ी में बैठ कर आनन्द करता है। भोले-भाले सिनेमा दर्शक उसे रिक्शा चालक मान कर उस पर दया करते हैं। उसके बनावटी अभिनय को देखने के लिए अपना बहुमूल्य समय तथा धन नष्ट करते हैं। ठीक इसी प्रकार उपरोक्त पात्रों (युधिष्ठर, भीम, अर्जुन, नकुल, सहदेव, द्रोपदी तथा कुन्ती) द्वारा बनाई फिल्म महाभारत के इतिहास को पढ़-2 कर पथ्वी लोक के प्राणी अपना समय व्यर्थ करते हैं। तत्त्वज्ञान को न सुनकर मानव शरीर को व्यर्थ कर जाते हैं। काल ब्रह्म यही चाहता है कि मेरे अन्तर्गत जितने भी जीव हैं। वे तत्त्वज्ञान से अपरिचित रहे तथा मेरी प्रेरणा से मेरे द्वारा भेजे गुरूओं द्वारा शास्त्रविधि विरुद्ध साधना प्राप्त करके जन्म-मत्यु के चक्र में पड़े रहे। काल ब्रह्म की प्रेरणा से तत्त्वज्ञान हीन सन्तजन व ऋषिजन कुछ वेद ज्ञान अधिक लोक वेद के आधार से ही सत्संग वचन श्रद्धालुओं को सुनाते हैं। जिस कारण से साधक पूर्ण मोक्ष प्राप्त न करके काल के जाल में ही रह जाते हैं।

हे धर्मदास! मैं पूर्ण परमात्मा की आज्ञा लेकर तत्त्वज्ञान बताने काल लोक में कलयुग में आया हूँ।

''क्या पाण्डव सदा स्वर्ग में ही रहेंगे?''

धर्मदास जी ने बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी के चरण पकड़ कर कहा हे परमेश्वर! आप स्वयं सत्यपुरूष हो धर्मदास जी ने अति विनम्र होकर आधीन भाव से प्रश्न किया।

प्रश्नः- हे बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी! क्या पाण्डव अब सदा स्वर्ग में ही रहेगें?

उत्तरः- नहीं धर्मदास! जो पुण्य युधिष्ठर ने उनको प्रदान किए हैं। उन पुण्यों का तथा स्वयं किए यज्ञ आदि धार्मिक अनुष्ठानों का पुण्य जब स्वर्ग में समाप्त हो जाएगा तब सर्व पुनः नरक में डाले जाऐंगे। युद्ध में किए पाप कर्म तथा उस जीवन में किए पाप कर्म तथा संचित पाप कर्मों के फल को भोगने के लिए नरक में अवश्य गिरना होगा। युधिष्ठर भी अपने आधे पुण्य दान करके पुण्यहीन हो गया है। वह भी शेष पुण्यों को स्वर्ग में समाप्त करके संचित पाप कर्मों के आधार से अवश्य नरक में डाला जाएगा भले ही पाप कर्म कम होने के कारण नरक समय थोड़ा ही भोगना पड़े परन्तु नरक में अवश्य जाना पड़ेगा। जैसे युधिष्ठर ने अश्वथामा मरने की झूठ बोली थी उसका भी पाप कर्मदण्ड भोगने के लिए नरक में कुछ समय के लिए उसी समय ही जाना पड़ा।

इसी प्रकार पूर्व जन्मों के संचित पाप कर्मों का दण्ड नरक में भोगना पड़ेगा। पश्चात् पृथ्वी पर सर्व को अन्य प्राणियों की योनियों में भी जाना होगा। यह काल ब्रह्म का अटल विधान है। परन्तु हे धर्मदास! जो साधक पूर्ण परमात्मा की भक्ति पूर्ण गुरू से उपदेश प्राप्त करके आजीवन मर्यादा में रह कर करता है उसके सर्व पाप कर्म ऐसे नष्ट हो जाते है जैसे सुखे घास के बहुत बड़े ढेर को अग्नि की छोटी सी चिंगारी जला कर भस्म कर देती है। उसकी राख को हवा उड़ा कर इधर-उधर कर देती है ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा की भक्ति का सत्यनाम मन्त्र रूपी अग्नि घास के ढेर रूपी पाप कर्मों को भस्म कर देता है।

कबीर, जब ही सत्यनाम हृदय धरा, भयो पाप का नाश।
मानो चिंगारी अग्नि की, पड़ी पुराने घास।।

''क्या द्रोपदी भी नरक जाएगी तथा अन्य प्राणियों के शरीर धारण करेगी?''

प्रश्न :- हे सद्गुरू! क्या द्रोपदी भी पुनः नरक व अन्य योनियों में जाएगी (धर्मदास जी ने परमेश्वर कबीर जी से प्रश्न किया)?

उत्तर :- हाँ धर्मदास! द्रोपदी, दुर्गा का अंश है। अंश का अर्थ है कि दुर्गा के शब्द से शरीर धारण करने वाली आत्मा, द्रोपदी, दुर्गा से अन्य आत्मा है परन्तु जो कष्ट द्रोपदी को होता है उसका प्रभाव दुर्गा को भी होता है। जैसे किसी की बेटी दुःखी होती है तो माता अत्यधिक दुःखी होती है। इस प्रकार द्रोपदी अब दुर्गा लोक में विशेष स्थान पर है। पुण्य समाप्त होने पर फिर नरक तथा अन्य प्राणियों के शरीर अवश्य धारण करेगी। यही दशा कुन्ती वाली आत्मा की होगी।

''कबीर परमेश्वर जी का कलयुग में अवतरण''

लेखक (अनुवादक) के शब्दों में :- बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी ने द्वापर युग में अपने प्रिय शिष्य सुदर्शन वाल्मीकि जी को शरण में लिया था। भक्त सुदर्शन जी के माता-पिता ने परमेश्वर कबीर जी के ज्ञान को स्वीकार नहीं किया था जिनके नाम थे पिता जी का नाम ''भीखू राम'' तथा माता जी का नाम ''सुखवन्ती''। जिस समय दोनों (माता तथा पिता) शरीर त्याग गए तो भक्त सुदर्शन जी अत्यन्त व्याकुल रहने लगे। भक्ति भी कम करते थे। अन्तर्यामी करूणामय जी (द्वापर युग में कबीर परमेश्वर करूणामय नाम से लीला कर रहे थे) ने अपने भक्त के मन की बात जान कर पूछा हे भक्त सुदर्शन! आप को कौन सी चिन्ता सता रही है। क्या माता-पिता का वियोग सता रहा है? या कोई अन्य पारिवारिक परेशानी है ? मुझे बताईए।

भक्त सुदर्शन जी ने कहा हे बन्दी छोड़! हे अन्तर्यामी! आप सर्वज्ञ हैं आप बाहर-भीतर की सर्व स्थिति से परिचित है। हे प्रभु! मुझे मेरे माता-पिता के निधन का दुःख नहीं है क्योंकि वे बहुत वृद्ध हो चुके थे। आप ने बताया है कि यह पाँच तत्त्व का पुतला एक दिन नष्ट होना है। मुझे चिन्ता सता रही है कि मेरे माता-पिता अत्यन्त पुण्यात्मा, दयालु तथा धर्मात्मा थे। उन्होंने अपनी भक्ति लोकवेद अनुसार की थी। जो शास्त्रविधि के विरूद्ध थी। जिस कारण से उनका मानव जीवन व्यर्थ गया। अब पता नहीं किस प्राणी की योनी में कष्ट उठा रहे होंगे? आप से नम्र निवेदन आप का दास करता है कि कभी मेरे माता-पिता मानव शरीर प्राप्त करें तो उन्हें अपनी शरण में लेना परमेश्वर तथा उन्हें भी भवसागर से (काल ब्रह्म के लोक से) पार करना मेरे दाता ! मुझे यही चिन्ता सता रही है। परमेश्वर कबीर जी ने

सोचा कि यह भोला भक्त सुदर्शन माता-पिता के मोह में फंस कर काल जाल में ही रहेगा। काल ब्रह्म ने मोह रूपी पाश बहुत दृढ़ बना रखा है। यह विचार कर परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे भक्त सुदर्शन ! आप चिन्ता मत करो मैं आप के माता-पिता को अवश्य शरण में लूंगा तथा पार करके ही दम लूंगा। आप सत्य लोक जाओ। यह चिन्ता छोड़ो। परमेश्वर कबीर जी के आश्वासन के पश्चात् भक्त सुदर्शन जी सत्य साधना करके सत्यलोक को गया। पूर्ण मोक्ष प्राप्त किया।

''भक्त सुदर्शन के माता-पिता वाले जीवों के कलयुग के अन्य मानव जन्मों की जानकारी''

प्रथम बार कुलपति ब्राह्मण (पिता) तथा महेश्वरी (माता) रूप में जन्में। दोनों का विवाह हुआ। संतान नहीं हुई। एक दिन महेश्वरी जी सूर्य की उपासना करते हुए हाथ फैलाकर पुत्र माँग रही थी। उसी समय कबीर परमेश्वर जी उसके हाथों में बालक रूप बनाकर प्रकट हो गए। सूर्य का पारितोष (तोहफा) जानकर बालक को घर ले गई। वे बहुत निर्धन थे। उनको प्रतिदिन एक तोला सोना परमात्मा के बिछौने के नीचे मिलने लगा। यह भी उन्होंने सूर्यदेव की कृपा माना। पाँच वर्ष की आयु का होने पर उनको भक्ति बताई, परंतु बालक जानकर उनको परमात्मा की एक बात पर भी विश्वास नहीं हुआ। उस जन्म में उन्होंने परमात्मा को नहीं पहचाना। जिस कारण से परमेश्वर कबीर जी बालक रूप अंतर्ध्यान हो गए। दोनों पति-पत्नी पुत्र मोह में व्याकुल हुए। परमात्मा की सेवा के फलस्वरूप उनको अगला जन्म भी मानव का मिला। चन्दवारा शहर में पुरूष का नाम चंदन तथा स्त्री का नाम उद्धा था। ब्राह्मण कुल में जन्म हुआ। दोनों निःसंतान थे। एक दिन उद्धा सरोवर पर स्नान करने गई। वहाँ कबीर परमेश्वर जी कमल के फूल पर शिशु रूप धारण करके विराजमान हुए। उद्धा बालक कबीर जी को उठाकर घर ले गई। लोकलाज के कारण चन्दन ने पत्नी से कहा कि इस बालक को जहाँ से लाई थी, वहीं छोड़कर आ। कुल के लोग मजाक करेंगे। दोनों पति-पत्नी परमात्मा को लेकर जल में डालने चले तो परमात्मा उनके हाथों से गायब हो गए। दोनों बहुत व्याकुल हुए। परमात्मा का पारितोष न लेने के भय से सारी आयु रोते रहे। अगला जन्म भी मानव का हुआ। कथा इस प्रकार है :-

भक्त सुदर्शन वाल्मीकि के माता-पिता वाले जीवों को कलयुग में तीसरा भी मानव शरीर प्राप्त हुआ। भारत वर्ष के काशी शहर में सुदर्शन के पिता वाले जीव ने एक ब्राह्मण के घर जन्म लिया तथा गौरीशंकर नाम रखा गया तथा सुदर्शन जी की माता वाले जीव ने भी एक ब्राह्मण के घर कन्या रूप में जन्म लिया तथा सरस्वती नाम रखा। युवा होने पर दोनों का विवाह हुआ। गौरी शंकर ब्राह्मण भगवान शिव का उपासक था तथा शिव पुराण की कथा करके भगवान शिव की महिमा का गुणगान किया करता। गौरीशंकर निर्लोभी था। कथा करने से जो धन प्राप्त होता था उसे धर्म में ही लगाया करता था। जो व्यक्ति कथा कराते थे तथा सुनते थे सर्व गौरी शंकर ब्राह्मण के त्याग की प्रसंशा करते थे।

जिस कारण से पूरी काशी में गौरी शंकर की प्रसिद्धि हो रही थी। अन्य स्वार्थी ब्राह्मणों का कथा करके धन इकत्रित करने का धंधा बन्द हो गया। इस कारण से वे ब्राह्मण उस गौरीशंकर ब्राह्मण से ईर्ष्या रखते थे। इस बात का पता मुसलमानों को लगा कि एक गौरीशंकर ब्राह्मण काशी में हिन्दू धर्म के प्रचार को जोर-शोर से कर रहा है। इसको किस तरह बन्द करें। मुसलमानों को पता चला कि काशी के सर्व ब्राह्मण गौरीशंकर से ईर्ष्या रखते हैं। इस बात का लाभ मुसलमानों ने उठाया। गौरीशंकर व सरस्वती के घर के अन्दर अपना पानी छिड़क दिया। अपना झूठा पानी उनके मुख पर लगा दिया। कपड़ों पर भी छिड़क दिया तथा आवाज लगा दी कि गौरीशंकर तथा सरस्वती मुसलमान बन गए हैं।

पुरूष का नाम नूरअली उर्फ नीरू तथा स्त्री का नाम नियामत उर्फ नीमा रखा। अन्य स्वार्थी ब्राह्मणों को पता चला तो उनका दाव लग गया। उन्होंने तुरन्त ही ब्राह्मणों की पंचायत बुलाई तथा फैसला कर दिया कि गौरीशंकर तथा सरस्वती मुसलमान बन गए हैं अब इनका ब्राह्मण समाज से कोई नाता नहीं रहा है। इनका गंगा में स्नान करने, मन्दिर में जाने तथा हिन्दू ग्रन्थों को पढ़ने पर प्रतिबन्ध लगा दिया गया है।

गौरीशंकर (नीरू) जी कुछ दिन तो बहुत परेशान रहे। जो कथा करके धन आता था उसी से घर का निर्वाह चलता था। उसके बन्द होने से रोटी के भी लाले पड़ गए। नीरू ने विचार करके अपने निर्वाह के लिए कपड़ा बुनने का कार्य प्रारम्भ किया। जिस कारण से जुलाहा कहलाया। कपड़ा बुनने से जो मजदूरी मिलती थी उसे अपना तथा अपनी पत्नी का पेट पालता था। जिस समय धन अधिक आ जाता तो उसको धर्म में लगा देता था। विवाह को कई वर्ष बीत गए थे। उनको कोई सन्तान नहीं हुई। दोनों पति-पत्नी ने बच्चे होने के लिए बहुत अनुष्ठान किए। साधु सन्तों का आशीर्वाद भी लिया परन्तु कोई सन्तान नहीं हुई। हिन्दुओं द्वारा उन दोनों का गंगा नदी में स्नान करना बन्द कर दिया गया था। उनके निवास स्थान से लगभग चार कि.मी. दूर एक लहर तारा नामक सरोवर था जिस में गंगा नदी का ही जल लहरों के द्वारा नीची पटरी के ऊपर से उछल कर आता था। इसलिए उस सरोवर का नाम लहरतारा पड़ा। उस तालाब में बड़े-2 कमल के फूल उगे हुए थे। मुसलमानों ने गौरीशंकर का नाम नूर अल्ली रखा जो उर्फ नाम से नीरू कहलाया तथा पत्नी का नाम नियामत रखा जो उर्फ नाम से नीमा कहलाई। नीरू-नीमा भले ही मुसलमान बन गए थे परन्तु अपने हृदय से साधना भगवान शंकर जी की ही करते थे तथा प्रतिदिन सवेरे सूर्योदय से पूर्व लहरतारा तालाब में स्नान करने जाते थे।

''नीरू-नीमा को कबीर परमात्मा की लहरतारा सरोवर में प्राप्ति''

ज्येष्ठ मास की शुक्ल पूर्णमासी विक्रमी संवत् 1455 (सन् 1398) सोमवार को भी ब्रह्म मुहूर्त (ब्रह्म मुहूर्त का समय सूर्योदय से लगभग डेढ़ घण्टा पहले होता है) में स्नान करने के लिए जा रहे थे। नीमा रास्ते में भगवान शंकर से प्रार्थना कर रही थी कि हे दीनानाथ! आप अपने दासों को भी एक बच्चा-बालक दे दो आप के घर में क्या कमी है प्रभु ! हमारा भी जीवन सफल हो जाएगा। दुनिया के व्यंग्य सुन-2 कर आत्मा दुःखी हो जाती है। मुझ पापिन से ऐसी कौन सी गलती किस जन्म में हुई है जिस कारण मुझे बच्चे का मुख देखने को तरसना पड़ रहा है। हमारे पापों को क्षमा करो प्रभु! हमें भी एक बालक दे दो।

यह कह कर नीमा फूट-2 कर रोने लगी तब नीरू ने धैर्य दिलाते हुए कहा हे नीमा! हमारे भाग्य में सन्तान नहीं है यदि भाग्य में सन्तान होती तो प्रभु शिव अवश्य प्रदान कर देते। आप रो-2 कर आँखे खराब कर लोगी। बालक भाग्य में है नहीं जो वद्ध अवस्था में ऊंगली पकड़ लेता। आप मत रोओ आप का बार-2 रोना मेरे से देखा नहीं जाता। यह कह कर नीरू की आँखे भी भर आई। इसी तरह प्रभु की चर्चा व बालक प्राप्ति की याचना करते हुए उसी लहरतारा तालाब पर पहुँच गए। प्रथम नीमा ने प्रवेश किया, पश्चात् नीरू ने स्नान करने को तालाब में प्रवेश किया। सुबह का अंधेरा शीघ्र ही उजाले में बदल जाता है। जिस समय नीमा ने स्नान किया था उस समय तक तो अंधेरा था। जब कपड़े बदल कर पुनः तालाब पर उस कपड़े को धोने के लिए गई, जिसे पहन कर स्नान किया था, उस समय नीरू तालाब में प्रवेश करके गोते लगा-2 कर मल मल कर स्नान कर रहा था।

नीमा की दष्टि एक कमल के फूल पर पड़ी जिस पर कोई वस्तु हिल रही थी। प्रथम नीमा ने

जाना कोई सर्प है जो कमल के फूल पर बैठा अपने फन को उठा कर हिला रहा है। उसने सोचा कहीं यह सर्प मेरे पति को न डस ले नीमा ने उसको ध्यानपूर्वक देखा वह सर्प नहीं है कोई बालक था। जिसने एक पैर अपने मुख में ले रखा था तथा दूसरे को हिला रहा था। नीमा ने अपने पति से ऊँची आवाज में कहा देखियो जी! एक छोटा बच्चा कमल के फूल पर लेटा है। वह जल में डूब न जाए। नीरू स्नान करते-2 उस की ओर न देख कर बोला नीमा! बच्चों की चाह ने तुझे पागल बना दिया है। अब तुझे जल में भी बच्चे दिखाई देने लगे हैं। नीमा ने अधिक तेज आवाज में कहा मैं सच कह रही हूँ, देखो सचमुच एक बच्चा कमल के फूल पर, वह रहा, देखो! देखो--- नीमा की आवाज में परिवर्तन व अधिक कसक देखकर नीरू ने उस ओर देखा जिस ओर नीमा हाथ से संकेत कर रही थी। कमल के फूल पर नवजात शिशु को देखकर नीरू ने आव देखा न ताव झपट कर कमल के फूल सहित बच्चा उठाकर अपनी पत्नी को दे दिया।

नीमा ने परमेश्वर कबीर जी को सीने से लगाया, मुख चूमा, पुत्रवत् प्यार किया जिस परमेश्वर की खोज में ऋषि-मुनियों ने जीवन भर शास्त्रविधि विरूद्ध साधना की उन्हें नहीं मिला। वही परमेश्वर भक्तमति नीमा की गोद में खेल रहा था। जिस शान्तिदायक परमेश्वर को आन्नद की प्राप्ति के लिए प्राप्त करने की इच्छा से साधना की जाती है वही परमेश्वर नीमा के हाथों में सीने से लगा हुआ था। उस समय जो शीतलता व आनन्द का अनुभव भक्तमति नीमा को हो रहा होगा उस की कल्पना ही की जा सकती है। नीरू स्नान करके जल से बाहर आया। नीरू ने सोचा यदि हम इस बच्चे को नगर में ले जाऐंगे तो शहर वासी हम पर शक करेंगे सोचेंगे कि ये किसी के बच्चे को चुरा कर लाए हैं। कहीं हमें नगर से निकाल दें। इस डर से नीरू ने अपनी पत्नी से कहा नीमा! इस बच्चे को यहीं छोड़ दे इसी में अपना हित है। नीमा बोली हे पति देव ! यह भगवान शंकर का दिया खिलौना है। इस बच्चे ने पता नहीं मुझ पर क्या जादू कर दिया है कि मेरा मन इस बच्चे के वश हो गया है। मैं इस बच्चे को नहीं त्याग सकती। नीरू ने नीमा को अपने मन की बात से अवगत करवाया। बताया कि यह बच्चा नगर वासी हम से छीन लेगें, पूछेंगे कहाँ से लाए हो? हम कहेंगे लहरतारा तालाब में कमल के फूल पर मिला है। हमारी बात पर कोई भी विश्वास नहीं करेगा। हो सकता है वे हमें नगर से भी निकाल दें। तब नीमा ने कहा मैं इस बालक के साथ देश निकाला भी स्वीकार कर लूँगी। परन्तु इस बच्चे को नहीं त्याग सकती। मैं अपनी मत्यु को भी स्वीकार कर लूँगी। परन्तु इस बच्चे से भिन्न नहीं रह सकूँगी।

नीमा का हठ देख कर नीरू को क्रोध आ गया तथा अपने हाथ को थप्पड़ मारने की स्थिति में उठा कर आँखों में आँसू भरकर करूणाभरी आवाज में बोला नीमा मैंने आज तक तेरी किसी भी बात को नहीं ठुकरवाया। यह जान कर कि हमारे कोई बच्चा नहीं है मैंने तुझे पति तथा पिता दोनों का प्यार दिया है। तू मेरे नम्र स्वभाव का अनुचित लाभ उठा रही है। आज मेरी स्थिति को न समझ कर अपने हठी स्वभाव से मुझे कष्ट दे रही है। विवाहित जीवन में नीरू ने प्रथम बार अपनी पत्नी की ओर थप्पड़ मारने के लिए हाथ उठाया था तथा कहा कि या तो इस बच्चे को यहीं रख दे वरना आज मैं तेरी बहुत पिटाई करूँगा।

उसी समय नीमा के सीने से चिपके बालक रूपधारी परमेश्वर बोले हे नीरू! आप मुझे अपने घर ले चलो आप पर कोई आपत्ति नहीं आएगी। मैं सतलोक से चलकर तुम्हारे हित के लिए यहाँ आया हूँ। नवजात शिशु के मुख से उपरोक्त वचन सुनकर नीरू (नूर अल्ली) डर गया कहीं यह कोई देव या पितर या कोई सिद्ध पुरूष न हो और मुझे शाप न दे दे। इस डर से नीरू कुछ नहीं बोला घर की ओर चल पड़ा। पीछे-2 उसकी पत्नी परमेश्वर को प्यार करती हुई चल पड़ी।

''कबीर जी के सशरीर सत्यलोक से आने का साक्षी''

प्रतिदिन की तरह ज्येष्ठ मास की पूर्णमासी विक्रमी संवत् 1455 (1398ई.) सोमवार को भी एक अष्टानन्द नामक ऋषि, जो स्वामी रामानन्द ऋषि जी के शिष्य थे काशी शहर से बाहर बने लहरतारा तालाब के स्वच्छ जल में स्नान करने के लिए प्रतिदिन की तरह गए। ब्रह्म मुहूर्त का समय था (ब्रह्म मुहूर्त का समय सूर्योदय से लगभग डेढ़ घण्टा पूर्व का होता है) ऋषि अष्टानन्द जी ने लहरतारा तालाब में स्नान किया। वे प्रतिदिन वहीं बैठ कर कुछ समय अपनी पाठ पूजा किया करते थे। ऋषि अष्टानन्द जी ध्यान मग्न होने की चेष्टा कर ही रहे थे उसी समय आकाश से एक प्रकाश पुंज नीचे की ओर आता दिखाई दिया। वह इतना तेज प्रकाश था उसे ऋषि जी की चर्म दृष्टि सहन नहीं कर सकी। जिस प्रकार आँखें सूर्य की रोशनी को सहन नहीं कर पाती। सूर्य के प्रकाश को देखने के पश्चात् आँखे बन्द करने पर सूर्य का आकार दिखाई देता है उसमें प्रकाश अधिक नहीं होता।

इसी प्रकार प्रथम बार परमेश्वर के प्रकाश को देखने से ऋषि जी की आँखे बन्द हो गई बन्द आँखों में शिशु को देख कर फिर से आँखे खोली। ऋषि अष्टानन्द जी ने देखा कि वह प्रकाश लहरतारा तालाब पर उतर गया। जिससे पूरा सरोवर प्रकाश मान हो गया तथा देखते ही देखते वह प्रकाश जलाशय के एक कोने में सिमट गया। ऋषि अष्टानन्द जी ने सोचा यह कैसा दृश्य मैंने देखा? यह मेरी भक्ति की उपलब्धि है या मेरा दृष्टिदोष है? इस के विषय में गुरूदेव, स्वामी रामानन्द जी से पूछूँगा। यह विचार करके ऋषि अष्टानन्द जी अपनी शेष साधना को छोड़ कर अपने पूज्य गुरूदेव के पास गए। स्वामी रामानन्द जी को सर्व घटनाक्रम बताकर पूछा हे गुरूदेव! यह मेरी भक्ति की उपलब्धि है या मेरी भ्रमणा है? मैंने प्रकाश आकाश से नीचे की ओर आते देखा जिसे मेरी आँखे सहन नहीं कर सकी। आँखे बन्द हुई तो नवजात शिशु दिखाई दिया। पुनः आँखें खोली तो उस प्रकाश से पूरा जलाशय ही जगमगा गया, पश्चात् वह प्रकाश उस तालाब के एक कोने में सिमट गया। मैं आप से कारण जानने की इच्छा से अपनी साधना बीच में ही छोड़ कर आया हूँ। कृप्या मेरी शंका का समाधान कीजिए।

ऋषि रामानन्द स्वामी जी ने अपने शिष्य अष्टानन्द से कहा हे ब्राह्मण! यह न तो तेरी भक्ति की उपलब्धि है न आप का दृष्टिदोष ही है। इस प्रकार की घटनाऐं उस समय होती हैं। जिस समय ऊपर के लोकों से कोई देव पृथ्वी पर अवतार धारण करने के लिए आते हैं। वह किसी स्त्री के गर्भ में निवास करता है। फिर बालक रूप धारण करके नर लीला करके अपना अपेक्षित कार्य पूर्ण करता है। कोई देव ऊपर के लोकों से आया है। वह काशी नगर में किसी के घर जन्म लेकर अपना प्रारब्ध पूरा करेगा। उपरोक्त वचनों द्वारा ऋषि रामानन्द स्वामी जी ने अपने शिष्य अष्टानन्द की शंका का समाधान किया। उन ऋषियों की यही धारणा थी की सर्व अवतार गण माता के गर्भ से ही जन्म लेते हैं।

बालक को लेकर नीरू तथा नीमा अपने घर जुलाहा मोहल्ला (कॉलोनी) में आए। जिस भी नर व नारी ने नवजात शिशु रूप में परमेश्वर कबीर जी को देखा वह देखता ही रह गया। परमेश्वर का शरीर अति सुन्दर था। आँख जैसे कमल का फूल हो, घुँघराले बाल, लम्बे हाथ। लम्बी-2 अँगुलियाँ शरीर से मानो नूर झलक रहा हो। पूरी काशी नगरी में ऐसा अद्भुत बालक नहीं था। जो भी देखता वहीं अन्य को बताता कि नूर अली को एक बालक तालाब पर मिला है आज ही उत्पन्न हुआ शिशु है। डर के मारे लोक लाज के कारण किसी विधवा ने डाला होगा। बालक को देखने के पश्चात् उसके चेहरे से दृष्टि हटाने को दिल नहीं करता, आत्मा अपने आप खिंची जाती है। पता नहीं बालक के मुख पर कैसा जादू

है? पूरी काशी परमेश्वर के बालक रूप को देखने को उमड़ पड़ी। स्त्री-पुरूष झुण्ड के झुण्ड बना कर मंगल गान गाते हुए, नीरू के घर बच्चे को देखने को आए।

बच्चे (कबीर परमेश्वर) को देखकर कोई कह रहा था, यह बालक तो कोई देवता का अवतार है, कोई कह रहा था। यह तो साक्षात् विष्णु जी ही आए लगते हैं। कोई कह रहा था यह भगवान शिव ही अपनी काशी नगरी को कर्त्तार्थ करने को उत्पन्न हुए हैं। कोई कह रहा था। यह तो किन्नर का अवतार है, कोई कह रहा था। यह पितर नगरी से आया है। यह सर्व वार्ता सुनकर नीमा अप्रसन्न हो कर कहती थी कि मेरे बच्चे के विषय में कुछ मत कहो। हे अल्लाह ! मेरे बच्चे की इनकी नजर से रक्षा करना। तुमने कभी बच्चा देखा भी है कि नहीं। ऐसे समूह के समूह मेरे बालक को देखने आ रहे हो। आने वाले स्त्री-पुरूष बोले हे नीमा। हमने बालक तो बहुत देखे हैं परन्तु आप के बालक जैसा नहीं देखा। इसीलिए हम इसे देखने आए हैं। ऊपर अपने-2 लोकों से श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिवजी भी झांक कर देखने लगे। काशी के वासियों के मुख से अपने में से (श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा शिव में से) एक यह बालक होने की बात सुनकर बोले कि यह बालक तो किसी अन्य लोक से आया है। इस के मूल स्थान से हम भी अपरिचित हैं परन्तु है बहुत शक्ति युक्त कोई सिद्ध पुरूष है।

''शिशु कबीर परमेश्वर का नामांकन''

नीरू (नूर अल्ली) तथा नीमा पहले हिन्दू ब्राह्मण-ब्राह्मणी थे। इस कारण लालच वश ब्राह्मण लड़के का नाम रखने आए। उसी समय काजी मुसलमान अपनी पुस्तक कुर्आन शरीफ को लेकर लड़के का नाम रखने के लिए आ गए। उस समय दिल्ली में मुगल बादशाहों का शासन था जो पूरे भारतवर्ष पर शासन करते थे। जिस कारण हिन्दू समाज मुसलमानों से दबता था। काजियों ने कहा लड़के का नाम करण हम मुसलमान विधि से करेंगे अब ये मुसलमान हो चुके हैं। यह कहकर काजियों में मुख्य काजी ने कुर्आन शरीफ पुस्तक को कहीं से खोला। उस पष्ठ पर प्रथम पंक्ति में प्रथम नाम ''कबीरन्'' लिखा था। काजियों ने सोचा ''कबीर'' नाम का अर्थ बड़ा होता है। इस छोटे जाति (जुलाहे अर्थात् धाणक) के बालक का नाम कबीर रखना शोभा नहीं देगा। यह तो उच्च घरानों के बच्चों के नाम रखने योग्य है। शिशु रूपधारी परमेश्वर काजियों के मन के दोष को जानते थे। काजियों ने पुनः पवित्र कुरान शरीफ को नाम रखने के उद्देश्य से खोला। उन दोनों पष्ठों पर कबीर-कबीर-कबीर अखर लिखे थे अन्य लेख नहीं था। काजियोंने फिर कुर्आन शरीफ को खोला उन पष्ठों पर भी कबीर-कबीर-कबीर अक्षर ही लिखा था। काजियों ने पूरी कुर्आन का निरीक्षण किया तो उनके द्वारा लाई गई कुर्आन शरीफ में सर्व अक्षर कबीर-कबीर-कबीर-कबीर हो गए काजी बोले इस बालक ने कोई जादू मन्त्र करके हमारी कुर्आन शरीफ को ही बदल डाला। तब कबीर परमेश्वर शिशु रूप में बोले हे काशी के काजियों। मैं कबीर अल्ला अर्थात् अल्लाहुअकबर, हूँ। मेरा नाम ''कबीर'' ही रखो। काजियों ने अपने साथ लाई कुरान को वहीं पटक दिया तथा चले गए। बोले इस बच्चे में कोई प्रेत आत्मा बोलती है।

''शिशु कबीर देव द्वारा कुँवारी गाय का दूध पीना''

बालक कबीर को दूध पिलाने की कोशिश नीमा ने की तो परमेश्वर ने मुख बन्द कर लिया। सर्व प्रयत्न करने पर भी नीमा तथा नीरू बालक को दूध पिलाने में असफल रहे। 25 दिन जब बालक को निराहार बीत गए तो माता-पिता अति चिन्तित हो गए। 24 दिन से नीमा तो रो-2 कर विलाप कर रही

थी। सोच रही थी यह बच्चा कुछ भी नहीं खा रहा है। यह मरेगा, मेरे बेटे को किसी की नजर लगी है। 24 दिन से लगातार नजर उतारने की विधि भिन्न भिन्न-2 स्त्री-पुरूषों द्वारा बताई प्रयोग करके थक गई। कोई लाभ नहीं हुआ। आज पच्चीसवाँ दिन उदय हुआ। माता नीमा रात्रि भर जागती रही तथा रोती रही कि पता नहीं यह बच्चा कब मर जाएगा। मैं भी साथ ही फाँसी पर लटक जाऊँगी। मैं इस बच्चे के बिना जीवित नहीं रह सकती बालक कबीर का शरीर पूर्ण रूप से स्वस्थ था तथा ऐसे लग रहा था जैसे बच्चा प्रतिदिन एक किलो ग्राम (एक सेर) दूध पीता हो। परन्तु नीमा को डर था कि बिना कुछ खाए पीए यह बालक जीवित रह ही नहीं सकता। यह कभी भी मत्यु को प्राप्त हो सकता है। यह सोच कर फूट-2 कर रो रही थी। भगवान शंकर के साथ-साथ निराकार प्रभु की भी उपासना तथा उससे की गई प्रार्थना जब व्यर्थ रही तो अति व्याकुल होकर रोने लगी।

भगवान शिव, एक ब्राह्मण (ऋषि) का रूप बना कर नीरू की झोंपड़ी के सामने खड़े हुए तथा नीमा से रोने का कारण जानना चाहा। नीमा रोती रही हिचकियाँ लेती रही। सन्त रूप में खड़े भगवान शिव जी के अति आग्रह करने पर नीमा रोती-2 कहने लगी हे ब्राह्मण ! मेरे दुःख से परिचित होकर आप भी दुःखी हो जाओगे। फकीर वेशधारी शिव भगवान बोले हे माई! कहते है अपने मन का दुःख दूसरे के समक्ष कहने से मन हल्का हो जाता है। हो सकता है आप के कष्ट को निवारण करने की विधि भी प्राप्त हो जाए। आँखों में आँसू जिव्हा लड़खड़ाते हुए गहरे साँस लेते हुए नीमा ने बताया हे महात्मा जी! हम निःसन्तान थे। पच्चीस दिन पूर्व हम दोनों प्रतिदिन की तरह काशी में लहरतारा तालाब पर स्नान करने जा रहे थे। उस दिन ज्येष्ठ मास की शुक्ल पूर्णमासी की सुबह थी। रास्ते में मैंने अपने इष्ट भगवान शंकर से पुत्र प्राप्ति की हृदय से प्रार्थना की थी मेरी पुकार सुनकर दीनदयाल भगवान शंकर जी ने उसी दिन एक बालक लहरतारा तालाब में कमल के फूल पर हमें दिया। बच्चे को प्राप्त करके हमारे हर्ष का कोई ठिकाना नहीं रहा। यह हर्ष अधिक समय तक नहीं रहा। इस बच्चे ने दूध नहीं पीया। सर्व प्रयत्न करके हम थक चुके हैं। आज इस बच्चे को पच्चीसवां दिन है कुछ भी आहार नहीं किया है। यह बालक मरेगा। इसके साथ ही मैं आत्महत्या करूँगी। मैं इसकी मत्यु की प्रतिक्षा कर रही हूँ। सर्व रात्रि बैठ कर तथा रो-2 व्यतीत की है। मैं भगवान शंकर से प्रार्थना कर रही हूँ कि हे भगवन्! इससे अच्छा तो यह बालक न देते। अब इस बच्चे में इतनी ममता हो गई है कि मैं इसके बिना जीवित नहीं रह सकूंगी।

नीमा के मुख से सर्वकथा सुनकर साधु रूपधारी भगवान शंकर ने कहा। आप का बालक मुझे दिखाईए। नीमा ने बालक को पालने से उठाकर ऋषि के समक्ष प्रस्तुत किया। दोनों प्रभुओं की आपस में दष्टि मिली। भगवान शंकर जी ने शिशु कबीर जी को अपने हाथों में ग्रहण किया तथा मस्तिष्क की रेखाऐं व हस्त रेखाऐं देख कर बोले नीमा! आप के बेटे की लम्बी आयु है यह मरने वाला नहीं है। देख कितना स्वस्थ है। कमल जैसा चेहरा खिला है। नीमा ने कहा हे विप्रवर! बनावटी सांत्वना से मुझे सन्तोष होने वाला नहीं है। बच्चा दूध पीएगा तो मुझे सुख की साँस आएगी। पच्चीस दिन के बालक का रूप धारण किए परमेश्वर कबीर जी ने भगवान शिव जी से कहा हे भगवन्! आप इन्हें कहो एक कुँवारी गाय लाऐं। आप उस कंवारी गाय पर अपना आशीर्वाद भरा हस्त रखना, वह दूध देना प्रारम्भ कर देगी। मैं उस कुँवारी गाय का दूध पीऊँगा। वह गाय आजीवन बिना ब्याए (अर्थात् कुँवारी रह कर ही) दूध दिया करेगी उस दूध से मेरी परवरिश होगी। परमेश्वर कबीर जी तथा भगवान शंकर (शिव) जी की सात बार चर्चा हुई।

शिवजी ने नीमा से कहा आप का पति कहाँ है? नीमा ने अपने पति को पुकारा वह भीगी आँखों से

उपस्थित हुआ तथा ब्राह्मण को प्रणाम किया। ब्राह्मण ने कहा नीरू! आप एक कुँवारी गाय लाओ। वह दूध देवेगी। उस दूध को यह बालक पीएगा। नीरू कुँवारी गाय ले आया तथा साथ में कुम्हार के घर से एक ताजा छोटा घड़ा (चार कि.ग्रा. क्षमता का मिट्टी का पात्र) भी ले आया। परमेश्वर कबीर जी के आदेशानुसार विप्ररूपधारी शिव जी ने उस कंवारी गाय की पीठ पर हाथ मारा जैसे थपकी लगाते हैं। गऊ माता के थन लम्बे-2 हो गए तथा थनों से दूध की धार बह चली। नीरू को पहले ही वह पात्र थनों के नीचे रखने का आदेश दे रखा था। दूध का पात्र भरते ही थनों से दूध निकलना बन्द हो गया। वह दूध शिशु रूपधारी कबीर परमेश्वर जी ने पीया। नीरू नीमा ने ब्राह्मण रूपधारी भगवान शिव के चरण लिए तथा कहा आप तो साक्षात् भगवान शिव के रूप हो। आपको भगवान शिव ने ही हमारी पुकार सुनकर भेजा है। हम निर्धन व्यक्ति आपको क्या दक्षिणा दे सकते हैं? हे विप्र! 24 दिनों से हमने कोई कपड़ा भी नहीं बुना है। विप्र रूपधारी भगवान शंकर बोले! साधु भूखा भाव का, धन का भूखा नाहीं। जो है भूखा धन का, वह तो साधु नाहीं। यह कहकर विप्र रूपधारी शिवजी ने वहाँ से प्रस्थान किया।

विशेष वर्णन अध्याय ''ज्ञान सागर'' के पृष्ठ 74 तथा ''स्वसमबेद बोध'' के पृष्ठ 134 पर भी है जो इस प्रकार है :-

''कबीर सागर के ज्ञान सागर के पृष्ठ 74 पर''

सुत काशी को ले चले, लोग देखन तहाँ आय। अन्न–पानी भक्ष नहीं, जुलहा शोक जनाय।।
तब जुलहा मन कीन तिवाना, रामानन्द सो कहा उत्पाना।।
मैं सुत पायो बड़ा गुणवन्ता। कारण कौण भखै नहीं सन्ता।
रामानन्द ध्यान तब धारा। जुलहा से तब बचन उच्चारा।।।
पूर्व जन्म तैं ब्राह्मण जाती। हरि सेवा किन्ही भलि भांति।।
कुछ सेवा तुम हरि की चुका। तातैं भयों जुलहा का रूपा।।
प्रति प्रभु कह तोरी मान लीन्हा। तातें उद्यान में सुत तोंह दिन्हा।।

नीरू वचन

हे प्रभु जस किन्हो तस पायो। आरत हो तव दर्शन आयो।।
सो कहिए उपाय गुसाई। बालक क्षुदावन्त कुछ खाई।।

रामानन्द वचन

रामानन्द अस युक्ति विचारा। तव सुत कोई ज्ञानी अवतारा।।
बछिया जाही बैल नहीं लागा। सो लाई ठाढ़ करो तेही आगै।।
साखी = दूध चलै तेहि थन तें, दूधहि धरो छिपाई।
क्षूदावन्त जब होवै, तबहि दियो पिलाई।।

चौपाई

जुलहा एक बछिया लै आवा। चल्यो दूत (दूध) कोई मर्म न पावा।।
चल्यो दूध, जुलहा हरषाना। राखो छिपाई काहु नहीं जाना।।।
पीवत दूध बाल कबीरा। खेलत संतों संग जो मत धीरा।।

ज्ञान सागर पृष्ठ 73 पर चौपाई

''भगवान शंकर तथा कबीर बालक की चर्चा''

{नोटः- यह प्रकरण अधूरा लिखा है। फिर भी समझने के लिए मेरे ऊपर कृपा है परमेश्वर कबीर

जी की। पहले यह वाणी पढ़ें जो ज्ञान सागर के पृष्ठ 73 पर लिखी है, फिर अन्त में सारज्ञान यह दास (रामपाल दास) बताएगा।}

चौपाई

घर नहीं रहो पुरूष (नीरू) और नारी (नीमा)। मैं शिव सों अस वचन उचारी।।
आन के बार बदत हो योग। आपन नार करत हो भोग।।

नोटः- जो वाणी कोष्ठक { } में लिखी हैं, वे वाणी ज्ञान सागर में नहीं लिखी गई हैं जो पुरातन कबीर ग्रन्थ से ली हैं।

{ऐसा भ्रम जाल फलाया। परम पुरूष का नाम मिटाया।}
काशी मरे तो जन्म न होई। {स्वर्ग में बास तास का सोई}
{ मगहर मरे सो गधा जन्म पावा, काशी मरे तो मोक्ष करावा}
और पुन तुम सब जग ठग राखा। काशी मरे हो अमर तुम भाखा
जब शंकर होय तव काला, {ब्रह्मण्ड इक्कीस हो बेहाला}
{तुम मरो और जन्म उठाओ, ओरेन को कैसे अमर कराओ}
{सुनों शंकर एक बात हमारी, एक मंगाओ धेनु कंवारी}
{साथ कोरा घट मंगवाओ। बछिया के पीठ हाथ फिराओ}
{दूध चलैगा थनतै भाई, रूक जाएगा बर्तन भर जाई}
{सुनो बात देवी के पूता। हम आए जग जगावन सूता}
{पूर्ण पुरूष का ज्ञान बताऊँ। दिव्य मन्त्र दे अमर लोक पहुँचाऊँ}
{तब तक नीरू जुलहा आया। रामानन्द ने जो समझाया}
{रामानन्द की बात लागी खारी। दूध देवेगी गाय कंवारी}
{जब शंकर पंडित रूप में बोले, कंवारी धनु लाओ तौले}
{साथ कोरा घड़ा भी लाना, तास में धेनु दूधा भराना}
{तब जुलहा बछिया अरू बर्तन लाया, शंकर गाय पीठ हाथ लगाया}
{दूध दिया बछिया कंवारी। पीया कबीर बालक लीला धारी}
{नीरू नीमा बहुते हर्षाई। पंडित शिव की स्तुति गाई}
{कह शंकर यह बालक नाही। इनकी महिमा कही न जाई}
{मस्तक रेख देख मैं बोलूं। इनकी सम तुल काहे को तोलूं}
{ऐस नछत्र देखा नाहीं, घूम लिया मैं सब ठाहीं।}
{इतना कहा तब शंकर देवा, कबीर कहे बस कर भेवा}
{मेरा मर्म न जाने कोई। चाहे ज्योति निरंजन होई}
{हम है अमर पुरूष अवतारा, भवसैं जीव ऊतारूं पारा}
{इतना सुन चले शंकर देवा, शिश चरण धर की नीरू नीमा सेवा}
हे स्वामी मम भिक्षा लीजै, सब अपराध क्षमा (हमरे) किजै
{कह शंकर हम नहीं पंडित भिखारी, हम है शंकर त्रिपुरारी।}
{साधु संत को भोजन कराना, तुमरे घर आए रहमाना}
{ज्ञान सुन शंकर लजा आई, अद्भुत ज्ञान सुन सिर चक्राई।}

{ऐसा निर्मल ज्ञान अनोखा, सचमुच हमार है नहीं मोखा}

❖ **कबीर सागर अध्याय ''स्वसम वेद बोध'' पृष्ठ 132 से 134 तक परमेश्वर कबीर जी की प्रकट होने वाली वाणी है, परंतु इसमें भी कुछ गड़बड़ कर रखी है। कहा कि जुलाहा नीरू अपनी पत्नी का गौना (यानि विवाह के बाद प्रथम बार अपनी पत्नी को उसके घर से लाना को गौना अर्थात् मुकलावा कहते हैं।) यह गलत है। जिस समय परमात्मा कबीर जी नीरू को मिले, उस समय उनकी आयु लगभग 50 वर्ष थी। विचार करें गौने से आते समय कोई बालक मिल जाए तो कोई अपने घर नहीं रखता। वह पहले गाँव तथा सरकार को बताता है। फिर उसको किसी निःसंतान को दिया जाता है यदि कोई लेना चाहे तो। नहीं तो राजा उसको बाल ग्रह में रखता है या अनाथालय में छोड़ते हैं। नीमा ने तो बच्चे को छोड़ना ही नहीं चाहा था। फिर भी जो सच्चाई वह है ही, हमने परमात्मा पाना है। उसको कैसे पाया जाता है, वह विधि सत्य है तो मोक्ष सम्भव है, ज्ञान इसलिए आवश्यक है कि विश्वास बने कि परमात्मा कौन है, कहाँ प्रमाण है? वह चेष्टा की जा रही है। अब केवल ''बालक कबीर जी ने कंवारी गाय का दूध पीया था, वे वाणी लिखता हूँ''।**

स्वसम वेद बोध पृष्ठ 134 से

पंडित निज निज भौन सिधारा। बिन भोजन बीते बहु बारा (दिन)।।
बालक रूप तासु (नीरू) ग्रह रहेता। खान पान नाहीं कुछ गहते।
जोलाहा तब मन में दुःख पाई। भोजन करो कबीर गोसांई।।
जोलाहा जोलाही दुखित निहारी। तब हम तिन तें बचन उचारी।।
कोरी (कंवारी) एक बछिया ले आवो। कोरा भाण्डा एक मंगाओ।।
तत छन जोलाहा चलि जाई। गऊ की बछिया कोरी (कंवारी) ल्याई।।
कोरा भाण्डा एक गहाई (ले आई)। भांडा बछिया शिघ्र (दोनों) आई।।
दोऊ कबीर के समुख आना। बछिया दिशा दृष्टि निज ताना।।
बछिया हेठ सो भाण्डा धरेऊ। ताके थनहि दूधते भरेऊ।
दूध हमारे आगे धरही, यहि विधि खान–पान नित करही।।

1. ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 1 मंत्र 9

अभी इमं अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम्। सोममिन्द्राय पातवे।।9।।
अभी इमम्–अध्न्या उत श्रीणन्ति धेनवः शिशुम् सोमम् इन्द्राय पातवे।

(उत) विशेष कर (इमम्) इस (शिशुम्) बालक रूप में प्रकट (सोमम्) पूर्ण परमात्मा अमर प्रभु की (इन्द्राय) सुखदायक सुविधा के लिए जो आवश्यक पदार्थ शरीर की (पातवे) वृद्धि के लिए चाहिए वह पूर्ति (अभी) पूर्ण तरह (अध्न्या धेनवः) जो गाय, सांड द्वारा कभी भी परेशान न की गई हों अर्थात् कुँवारी गायों द्वारा (श्रीणन्ति) परवरिश की जाती है।

भावार्थ - पूर्ण परमात्मा अमर पुरुष जब लीला करता हुआ बालक रूप धारण करके स्वयं प्रकट होता है सुख-सुविधा के लिए जो आवश्यक पदार्थ शरीर वृद्धि के लिए चाहिए वह पूर्ति कुँवारी गायों द्वारा की जाती है अर्थात् उस समय (अध्नि धेनु) कुँवारी गाय अपने आप दूध देती है जिससे उस पूर्ण प्रभु की परवरिश होती है।

''नीरू को धन की प्राप्ति''

बालक की प्राप्ति से पूर्व दोनों जने (पति-पत्नी) मिलकर कपड़ा बुनते थे। 25 दिन बच्चे की चिन्ता में कपड़ा बुनने का कोई कार्य न कर सके। जिस कारण से कुछ कर्ज नीरू को हो गया। कर्ज मांगने वाले भी उसी पच्चीसवें दिन आ गए तथा बुरी भली कह कर चले गए। कुछ दिन तक कर्ज न चुकाने पर यातना देने की धमकी सेठ ने दे डाली। दोनों पति -पत्नी अति चिन्तित हो गए। अपने बुरे कर्मों को कोसने लगे। एक चिन्ता का समाधान होता है, दूसरी तैयार हो जाती है। माता-पिता को चिन्तित देख बालक बोला हे माता-पिता! आप चिन्ता न करो। आपको प्रतिदिन एक सोने की मोहर (दस ग्राम स्वर्ण) पालने के बिछौने के नीचे मिलेगी। आप अपना कर्ज उतार कर अपना तथा गऊ का खर्च निकाल कर शेष बचे धन को धर्म कर्म में लगाना। उस दिन के पश्चात् दस ग्राम स्वर्ण प्रतिदिन नीरू के घर परमेश्वर कबीर जी की कृपा से मिलने लगा। यह क्रिया एक वर्ष तक चलती रही।

परमेश्वर कबीर जी ने मुहर (सोने का सिक्का) मिलने वाली लीला को गुप्त रखने को कहा था एक दिन नीमा की प्रिय सखी उसी समय नीरू के घर पर आई जिस समय वह कबीर जी को जगाने का प्रयत्न कर रही थी। नीमा की सखी ने वह स्वर्ण मुहर देख ली तथा बोली इतना सोना आपके पास कैसे आया। नीमा ने अपनी प्रिय सखी से सर्व गुप्त भेद कह सुनाया कि हमें तो एक वर्ष से यह मुहर प्रतिदिन प्राप्त हो रही है। हमारे घर पर भाग्यशाली लड़का कबीर जब से आया है। हम तो आनन्द से रहते हैं। अगले दिन ही सोना मिलना बंद हो गया। नीरू तथा नीमा दोनों मिलकर कपड़ा बुनकर अपने परिवार का पालन पोषण करने लगे। बड़ा होकर बालक कबीर भी पिता के काम में हाथ बटाने लगा। थोड़े ही समय में अधिक बुनाई करने लगा।

''ऋषि रामानन्द, सेऊ, सम्मन तथा नेकी व कमाली के पूर्व जन्मों का ज्ञान''

ऋषि रामानन्द जी का जीव सत्ययुग में विद्याधर ब्राह्मण था जिसे परमेश्वर सत्य सुकृत नाम से मिले थे। त्रेता युग में वह वेदविज्ञ नामक ऋषि था जिसको परमेश्वर मुनिन्द्र नाम से शिशु रूप में प्राप्त हुए थे तथा कमाली वाली आत्मा सत्य युग में विद्याधर की पत्नी दीपिका थी। त्रेता युग में सूर्या नाम की वेदविज्ञ ऋषि की पत्नी थी। उस समय इन्होनें परमेश्वर को पुत्रवत् पाला तथा प्यार किया था। उसी पुण्य के कारण ये आत्माऐं परमात्मा को चाहने वाली थी। कलयुग में भी इनका परमेश्वर के प्रति अटूट विश्वास था। ऋषि रामानन्द व कमाली वाली आत्माऐं ही सत्ययुग में ब्राह्मण विद्याधर तथा ब्राह्मणी दीपीका वाली आत्माऐं थी जिन्हें ससुराल से आते समय कबीर परमेश्वर एक तालाब में कमल के फूल पर शिशु रूप में मिले थे। यही आत्माऐं त्रेता युग में (वेदविज्ञ तथा सूर्या) ऋषि दम्पति थे। जिन्हें परमेश्वर शिशु रूप में प्राप्त हुए थे। सम्मन तथा नेकी वाली आत्माऐं द्वापर युग में कालू वाल्मीकि तथा उसकी पत्नी गोदावरी थी। जिन्होंने द्वापर युग में परमेश्वर कबीर जी का शिशु रूप में लालन-पालन किया था। उसी पुण्य के फल स्वरूप परमेश्वर ने उन्हें अपनी शरण में लिया था। सेऊ (शिव) वाली आत्मा द्वापर में ही एक गंगेश्वर नामक ब्राह्मण का पुत्र गणेश था। जिसने अपने पिता के घोर विरोध के पश्चात् भी मेरे उपदेश को नहीं त्यागा था तथा गंगेश्वर ब्राह्मण वाली आत्मा कलयुग में शेख तकी बना। वह द्वापर युग से ही परमेश्वर का विरोधी था। गंगेश्वर वाली आत्मा शेख तकी को काल ब्रह्म ने फिर से प्रेरित किया। जिस कारण से शेख तकी (गंगेश्वर) परमेश्वर कबीर जी का शत्रु बना। भक्त श्री कालू

तथा गोदावरी का गणेश माता-पिता तुल्य सम्मान करता था। रो-2 कर कहता था काश आज मेरा जन्म आप (वाल्मीकि) के घर होता। मेरे (पालक) माता-पिता (कालू तथा गोदावरी) भी गणेश से पुत्रवत् प्यार करते थे। उनका मोह भी उस बालक में अत्यधिक हो गया था। इसी कारण से वे फिर से उसी गणेश वाली आत्मा अर्थात् सेऊ के माता-पिता (नेकी तथा सम्मन) बने। सम्मन की आत्मा ही नौशेरवाँ शहर में नौशेरखाँ राजा बना। फिर बलख बुखारे का बादशाह अब्राहिम अधम सुलतान हुआ तब उसको पुनः भक्ति पर लगाया।

''शिशु कबीर की सुन्नत करने का असफल प्रयत्न''

शिशु रूपधारी कबीर देव की सुन्नत करने का समय आया तो पूरा जन समूह सम्बन्धियों का इकट्ठा हो गया। नाई जब शिशु कबीर जी के लिंग को सुन्नत करने के लिए कैंची लेकर गया तो परमेश्वर ने अपने लिंग के साथ एक लिंग और बना लिया। फिर उस सुन्नत करने को तैयार व्यक्ति की आँखों के सामने तीन लिंग और बढ़ते दिखाए कुल पाँच लिंग एक बालक के देखकर वह सुन्नत करने वाला आश्चर्य में पड़ गया। तब कबीर जी शिशु रूप में बोले भईया एक ही लिंग की सुन्नत करने का विधान है ना मुसलमान धर्म में। बोल शेष चार की सुन्नत कहाँ करानी है? जल्दी बोल! शिशु को ऐसे बोलते सुनकर तथा पाँच लिंग बालक के देख कर नाई ने अन्य उपस्थित व्यक्तियों को बुलाकर वह अद्भुत दृश्य दिखाया।

सर्व उपस्थित जन समूह यह देखकर अचम्भित हो गया। आपस में चर्चा करने लगे यह अल्लाह का कैसा कमाल है एक बच्चे को पाँच पुरूष लिंग। यह देखकर बिना सुन्नत किए ही चला गया। बच्चे के पाँच लिंग होने की बात जब नीरू व नीमा को पता चला तो कहने लगे आप क्या कह रहे हो। यह नहीं हो सकता। दोनों बालक के पास गए तो शिशु को केवल एक ही पुरूष लिंग था पाँच नहीं थे। तब उन दोनों ने उन उपस्थित व्यक्तियों से कहा आप क्या कह रहे थे देखो कहाँ हैं बच्चे के पाँच लिंग केवल एक ही है। उपस्थित सर्व व्यक्तियों ने पहले आँखों देखे थे पांच पुरूष लिंग तथा उस समय केवल एक ही लिंग (पेशाब इन्द्री) को देखकर आश्चर्य चकित हो गए। तब शिशु रूप धारी परमेश्वर बोले है भोले लोगो! आप लड़के का लिंग किसलिए काटते हो? क्या लड़के को बनाने में अल्लाह (परमेश्वर) से चूक रह गई जिसे आप ठीक करते हो। क्या आप परमेश्वर से भी बढ़कर हो? यदि आप लड़के के लिंग की चमड़ी आगे से काट कर (सुन्नत करके) उसे मुसलमान बनाते हो तो लड़की को मुसलमान कैसे बनाओगे। यदि मुसलमान धर्म के व्यक्ति अन्य धर्मों के व्यक्तियों से भिन्न होते तो परमात्मा ही सुन्नत करके लड़के को जन्म देता। हे भोले इन्सानों! परमेश्वर के सर्व प्राणी हैं। कोई वर्तमान में मुसलमान समुदाय में जन्मा है तो वह मृत्यु उपरान्त हिन्दू या ईसाई धर्म में भी जन्म ले सकता है। इसी प्रकार अन्य धर्मों में जन्में व्यक्ति भी मुसलमान धर्म व अन्य धर्म में जन्म लेते हैं। ये धर्म की दिवारे खड़ी करके आपसी भाई चारा नष्ट मत करो। यह सर्व काल ब्रह्म की चाल है। कलयुग से पहले अन्य धर्म नहीं थे। केवल एक मानव धर्म (मानवता धर्म) ही था। अब कलयुग में काल ब्रह्म ने भिन्न-2 धर्मों में बांट कर मानव की शान्ति समाप्त कर दी है। सुन्नत के समय उपस्थित व्यक्ति बालक मुख से सद्उपदेश सुनकर सर्व दंग रह गए। माता-नीमा ने बालक के मुख पर कपड़ा ढक दिया तथा बोली घना मत बोल। काजी सुन लेंगे तो तुझे मार डालेंगे वो बेरहम हैं बेटा। परमेश्वर कबीर जी माता के हृदय के कष्ट से परिचित होकर सोने का बहाना बना कर खराटे भरने लगे। तब नीमा ने सुख की सांस ली तथा अपने

सर्व सम्बन्धियों से प्रार्थना की आप किसी को मत बताना कि कबीर ने कुछ बोला है। कहीं मुझे बेटे से हाथ धोने पड़ें। छः महीने की आयु में परमेश्वर पैरों चलने लगे।

''ऋषि रामानन्द का उद्धार करना''
''ऋषि रामानन्द स्वामी को गुरु बना कर शरण में लेना''

स्वामी रामानन्द जी अपने समय के सुप्रसिद्ध विद्वान कहे जाते थे। वे द्राविड़ से काशी नगर में वेद व गीता ज्ञान के प्रचार हेतु आए थे। उस समय काशी में अधिकतर ब्राह्मण शास्त्रविरूद्ध भक्तिविधि के आधार से जनता को दिशा भ्रष्ट कर रहे थे। भूत-प्रेतों के झाड़े जन्त्र करके वे काशी शहर के ब्राह्मण अपना स्वार्थ सिद्ध कर रहे थे। स्वामी रामानन्द जी ने काशी शहर में वेद ज्ञान व गीता जी तथा पुराणों के ज्ञान को अधिक महत्त्व दिया तथा वह भूत-प्रेत उतारने वाली पूजा का अन्त किया अपने ज्ञान के प्रचार के लिए चौदह सौ ऋषि बना रखे थे। {स्वामी रामानन्द जी ने कबीर परमेश्वर जी की शरण में आने के पश्चात् चौरासी शिष्य और बनाए थे जिनमें रविदास जी नीरू-नीमा, गीगनौर (राजस्थान) के राजा पीपा ठाकुर आदि थे कुल शिष्यों की संख्या चौदह सौ चौरासी कही जाती है } वे चौदह सौ ऋषि विष्णु पुराण, शिव पुराण तथा देवी पुराण आदि मुख्य-2 पुराणों की कथा करते थे। प्रतिदिन बावन (52) सभाऐं ऋषि जन किया करते थे। काशी के क्षेत्र विभाजित करके मुख्य वक्ताओं को प्रवचन करने को स्वामी रामानन्द जी ने कह रखा था। स्वयं भी उन सभाओं में प्रवचन करने जाते थे। स्वामी रामानन्द जी का बोल बाला आस-पास के क्षेत्र में भी था। सर्व जनता कहती थी कि वर्तमान में महर्षि रामानन्द स्वामी तुल्य विद्वान वेदों व गीता जी तथा पुराणों का सार ज्ञाता पथ्वी पर नहीं है। परमेश्वर कबीर जी ने अपने स्वभाव अनुसार अर्थात् नियमानुसार रामानन्द स्वामी को शरण में लेना था। कबीर जी ने सन्त गरीबदास जी को अपना सिद्धान्त बताया है जो सन्त गरीबदास जी (बारहवें पंथ प्रवर्तक, छुड़ानी धाम, हरियाणा वाले) ने अपनी वाणी में लिखा हैः-

गरीब जो हमरी शरण है, उसका हूँ मैं दास। गेल–गेल लाग्या फिरूं जब तक धरती आकाश।।
गोता मारूं स्वर्ग में जा पैठू पाताल। गरीबदास ढूढत फिरूं अपने हीरे माणिक लाल।
हरदम संगी बिछुड़त नाहीं है महबूब सल्लौना वो। एक पलक में साहेब मेरा फिरता चौदह भवना वो।
ज्यों बच्छा गऊ की नजर में यूं साई कूँ सन्त। भक्तों के पीछे फिरै भक्त वच्छल भगवन्त।
कबीर कमाई आपनी कबहूँ न निष्फल जायें। सात समुन्दर आढे पड़ैं मिले अगाऊ आय।।

सतयुग में विद्याधर नामक ब्राह्मण के रूप में तथा त्रेतायुग में वेदविज्ञ ऋषि के रूप में जन्में स्वामी रामानन्द जी वाले जीव ने परमेश्वर कबीर जी को बालक रूप में प्राप्त किया था। भक्तमति कमाली वाला जीव उस समय दीपिका नाम की विद्याधर ब्राह्मण की पत्नी थी। वही दीपिका वाली आत्मा वेदविज्ञ ब्राह्मण की पत्नी सूर्या थी। जो कलयुग में कमाली बनी। यही दोनों आत्माऐं त्रेता युग में ऋषि दम्पति (वेदविज्ञ तथा सूर्या) था। उस समय भी परमेश्वर कबीर बन्दी छोड़ जी शिशु रूप में इन्हें मिले थे। इस के पश्चात् भी इन दोनों जीवों को अनेकों जन्म व स्वर्ग प्राप्ति भी हुई थी। वही आत्माऐं कलयुग में परमेश्वर कबीर जी के समकालीन हुई थी। पूर्व जन्म के सन्त सेवा के पुण्य अनुसार परमेश्वर कबीर जी ने उन पुण्यात्माओं को शरण में लेने के लिए लीला की।

स्वामी रामानन्द जी की आयु 104 वर्ष थी उस समय कबीर देव जी के लीलामय शरीर की आयु 5 (पाँच) वर्ष थी। स्वामी रामानन्द जी महाराज का आश्रम गंगा दरिया के आधा किलो मीटर दूर स्थित

था। स्वामी रामानन्द जी प्रतिदिन सूर्योदय से पूर्व गंगा नदी के तट पर बने पंचगंगा घाट पर स्नान करने जाते थे। पाँच वर्षीय कबीर देव ने अढ़ाई (दो वर्ष छः महीने) वर्ष के बच्चे का रूप धारण किया तथा पंच गंगा घाट की पौड़ियों (सीढ़ियों) में लेट गए। स्वामी रामानन्द जी प्रतिदिन की भांति स्नान करने गंगा दरिया के घाट पर गए। अंधेरा होने के कारण स्वामी रामानन्द जी बालक कबीर देव को नहीं देख सके। स्वामी रामानन्द जी के पैर की खड़ाऊ (लकड़ी का जूता) सीढ़ियों में लेटे बालक कबीर देव के सिर में लगी। बालक कबीर देव लीला करते हुए रोने लगे जैसे बच्चा रोता है। स्वामी रामानन्द जी को ज्ञान हुआ कि उनका पैर किसी बच्चे को लगा है जिस कारण से बच्चा पीड़ा से रोने लगा है। स्वामी जी बालक को उठाने तथा चुप करने के लिए शीघ्रता से झुके तो उनके गले की माला (एक रूद्राक्ष की कण्ठी माला) बालक कबीर देव के गले में डल गई। जिसे स्वामी रामानन्द जी नहीं देख सके। स्वामी रामानन्द जी ने बच्चे को प्यार से कहा बेटा राम-राम बोल राम नाम से सर्व कष्ट दूर हो जाता है। ऐसा कह कर बच्चे के सिर को सहलाया। आशीर्वाद देते हुए सिर पर हाथ रखा। बालक कबीर परमेश्वर अपना उद्देश्य पूरा होने पर चुप होकर पौड़ियों पर बैठ गए तथा एक शब्द गाया और चल पड़े :-

(यह शब्द अगम निगम बोध के पृष्ठ 34 पर लिखा है।)

गुरू रामानंद जी समझ पकड़ियो मोरी बाहीं।। जो बालक रून झुनियां खेलत सो बालक हम नाहीं।।
हम तो लेना सत का सौद हम ना पाखण्ड पूजा चाहीं।। बांह पकड़ो तो दृढ़ का पकड़ बहुर छुट न जाई।।
जो माता से जन्मा वह नहीं इष्ट हमारा।। राम—कृष्ण मरै विष्णु साथै जामण हारा।।
तीन गुण हैं तीनों देवता, निरंजन चौथा कहिए। अविनाशी प्रभु इस सब से न्यारा, मोकूं वह चाहिए।।
पांच तत्त्व की देह ना मेरी, ना कोई माता जाया। जीव उदारन तुम को तारन, सीधा जग में आया।।
राम—राम और ओम् नाम यह सब काल कमाई। सतनाम दो मोरे सतगुरू तब काल जाल छुटाई।।
सतनाम बिन जन्में—मरें परम शान्ति नाहीं। सनातन धाम मिले न कबहु, भावें कोटि समाधि लाई।।
सार शब्द सरजीवन कहिए, सब मन्त्रन का सरदारा। कह कबीर सुनो गुरू जी या विधि उतरें पारा।।

स्वामी रामानन्द जी ने विचार किया कि वह बच्चा रात्रि में रास्ता भूल जाने के कारण यहाँ आकर सो गया होगा। इसे अपने आश्रम में ले जाऊँगा। वहाँ से इसे इनके घर भिजवा दूँगा। ऐसा विचार करके स्नान करने लगे। परमेश्वर कबीर जी वहाँ से अन्तर्ध्यान हुए तथा अपनी झोंपड़ी में सो गए। कबीर परमेश्वर ने इस प्रकार स्वामी रामानन्द जी को गुरु धारण किया।

''ऋषि विवेकानन्द जी से ज्ञान चर्चा''

स्वामी रामानन्द जी का एक शिष्य ऋषि विवेकानन्द जी बहुत ही अच्छे प्रवचन कर्त्ता रूप में प्रसिद्ध था। ऋषि विवेकानन्द जी को काशी शहर के एक क्षेत्र का उपदेशक नियुक्त किया हुआ था। उस क्षेत्र के व्यक्ति ऋषि विवेकानन्द जी के धारा प्रवाह प्रवचनों को सुनकर उनकी प्रसंशा किये बिना नहीं रहते थे। उसकी कालोनी में बहुत प्रतिष्ठा बनी थी। प्रतिदिन की तरह ऋषि विवेकानन्द जी विष्णु पुराण से कथा सुना रहे थे। कह रहे थे, भगवान विष्णु सर्वेश्वर हैं, अविनाशी, अजन्मा हैं। सर्व सृष्टि रचनहार तथा पालन हार हैं। इनके कोई जन्मदाता माता-पिता नहीं है। ये स्वयंभू हैं। ये ही त्रेतायुग में अयोध्या के राजा दशरथ जी के घर माता कौशल्या देवी की पवित्र कोख से उत्पन्न हुए थे तथा श्री रामचन्द्र नाम से प्रसिद्ध हुए। समुद्र पर सेतु बनाया, जल पर पत्थर तैराए। लंकापति रावण का वध किया। श्री विष्णु भगवान ही ने द्वापर युग में श्री कृष्णचन्द्र भगवान का अवतार धार कर वासुदेव जी के

रूप में माता देवकी के गर्भ से जन्म लिया तथा कंस, केशि,शिशुपाल, जरासंध आदि दुष्टों का संहार किया। पाँच वर्षीय बालक कबीर देव जी भी उस ऋषि विवेकानन्द जी का प्रवचन सुन रहे थे तथा सैंकड़ों की संख्या में अन्य श्रोता गण भी उपस्थित थे। ऋषि विवेकानन्द जी ने अपने प्रवचनों को विराम दिया तथा उपस्थित श्रोताओं से कहा यदि किसी को कोई प्रश्न करना है तो वह निःसंकोच अपनी शंका का समाधान करा सकता है।

बालक कबीर परमेश्वर खड़े हुए तथा ऋषि विवेकानन्द जी से करबद्ध होकर प्रार्थना कि हे ऋषि जी ! आपने भगवान विष्णु जी के विषय में बताया कि ये अजन्मा हैं, अविनाशी है। इनके कोई माता-पिता नहीं हैं। एक दिन एक ब्राह्मण श्री शिव पुराण के रूद्र संहिता अध्याय 6,7 को पढ़ कर श्रोताओं को सुना रहे थे, यह दास भी उस सत्संग में उपस्थित था। शिव पुराण में लिखा है कि निराकार परमात्मा आकार में आया वह सदाशिव, काल रूपी ब्रह्म कहलाया। उसने अपने अन्दर से एक स्त्री प्रकट की जो प्रकति देवी, अष्टांगी, त्रिदेव जननी, शिवा आदि नामों से जानी जाती है। काल रूपी ब्रह्म ने एक काशी नामक सुन्दर स्थान बनाया वहाँ दोनों शिव तथा शिवा अर्थात् काल रूपी ब्रह्म तथा दुर्गा पति-पत्नी रूप में निवास करने लगे। कुछ समय पश्चात् दोनों के सम्भोग से एक लड़का उत्पन्न हुआ। उसका नाम विष्णु रखा। इसी प्रकार दोनों के रमण करने से एक पुत्र उत्पन्न हुआ उसका नाम ब्रह्मा रखा तथा कमल के फूल पर डाल कर अचेत कर दिया। फिर अध्याय 9 के अन्त में लिखा है कि ''ब्रह्मा रजगुण है, विष्णु सतगुण है तथा शंकर तमगुण है परन्तु सदा शिव इनसे भिन्न है वह गुणातीत है। यहाँ पर सदाशिव के अतिरिक्त तीन देव श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिवजी भी है। इससे सिद्ध हुआ कि इन त्रिदेवों की जननी दुर्गा अर्थात् प्रकति देवी है तथा पिता काल ब्रह्म है। इन तीनों प्रभुओं विष्णु आदि का जन्म हुआ है इनके माता-पिता भी है।

एक दिन मैंने एक ब्राह्मण द्वारा श्री देवी पुराण के तीसरे स्कंद में अध्याय 4-5 में सुना था कि जिसमें भगवान विष्णु ने कहा है ''इन प्रकति देवी अर्थात् दुर्गा को मैंने पहले भी देखा था मुझे अपने बचपन की याद आई है। मैं एक वट वक्ष के नीचे पालने में लेटा हुआ था। यह मुझे पालने में झूला रही थी। उस समय में बालक रूप में था। प्रकति देवी के निकट जाकर तीनों देव (त्रिदेव) श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिवजी करबद्ध होकर खड़े हो गए। भगवान विष्णु ने देवी की स्तुति की ''तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह संसार तुम ही से उद्भाषित हो रहा है। हमारा अविर्भाव अर्थात् जन्म तथा तिरोभाव अर्थात् मत्यु होती है। हम अविनाशी नहीं है। तुम अविनाशी हो। प्रकति देवी हो। भगवान शंकर बोले, हे माता! यदि आप ही के गर्भ से भगवान विष्णु तथा भगवान ब्रह्मा का जन्म हुआ है तो क्या मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर आपका पुत्र नहीं हुआ? अर्थात् मुझे भी जन्म देने वाली तुम ही हो।

हे ऋषि विवेकानन्द जी! आप कह रहे हो कि पुराणों में लिखा है कि भगवान विष्णु के तो कोई माता-पिता नहीं। ये अविनाशी हैं। इन पुराणों का ज्ञान दाता एक श्री ब्रह्मा जी हैं तथा लेखक भी एक ही श्री व्यास जी हैं। जबकि पुराणों में तो भगवान विष्णु नाशवान लिखे हैं। इनके माता-पिता का नाम भी लिखा है। क्यों जनता को भ्रमित कर रहे हो।

कबीर, बेद पढे पर भेद ना जाने, बाचें पुराण अठारा। जड़ को अंधा पान खिलावें, भूले सिर्जन हारा।।

कबीर परमेश्वर जी के मुख कमल से उपरोक्त पुराणों में लिखा उल्लेख सुनकर ऋषि विवेकानन्द अति क्रोधित हो गया तथा उपस्थित श्रोताओं से बोले यह बालक झूठ बोल रहा है। पुराणों में ऐसा नहीं लिखा है। उपस्थित श्रोताओं ने भी सहमति व्यक्त की कि हे ऋषि जी आप सत्य कह रहे हो

यह बालक क्या जाने पुराणों के गूढ़ रहस्य को? आप विद्वान पुरूष परम विवेकशील हो। आप इस बच्चे की बातों पर ध्यान न दो। ऋषि विवेकानन्द जी ने पुराणों को उसी समय देखा जिसमें सर्व विवरण विद्यमान था। परन्तु मान हानि के भय से अपने झूठे व्यक्तव्य पर ही दृढ़ रहते हुए कहा हे बालक तेरा क्या नाम है? तू किस जाति में जन्मा है। तूने तिलक लगाया है। क्या तूने कोई गुरु धारण किया है? शीघ्र बताइए।

कबीर परमेश्वर जी ने बोलने से पहले ही श्रोता बोले हे ऋषि जी! इसका नाम कबीर है, यह नीरू जुलाहे का पुत्र है। कबीर जी बोले ऋषि जी मेरा यही परिचय है जो श्रोताओं ने आपको बताया। मैंने गुरु धारण कर रखा है। ऋषि विवेकानन्द जी ने पूछा क्या नाम है तेरे गुरुदेव का? परमेश्वर कबीर जी ने कहा मेरे पूज्य गुरुदेव वही हैं जो आपके गुरुदेव हैं। उनका नाम है पंडित रामानन्द स्वामी। जुलाहे के बालक कबीर परमेश्वर जी के मुख कमल से स्वामी रामानन्द जी को अपना गुरु जी बताने से ऋषि विवेकानन्द जी ने ज्ञान चर्चा का विषय बदल कर परमेश्वर कबीर जी को बहुत बुरा-भला कहा तथा श्रोताओं को भड़काने व वास्तविक विषय भूलाने के उद्देश्य से कहा देखो रे भाईयो! यह कितना झूठा बालक है। यह मेरे पूज्य गुरुदेव श्री 1008 स्वामी रामानन्द जी को अपना गुरु जी कह रहा है। मेरे गुरु जी तो इन अछूतों के दर्शन भी नहीं करते। शुद्रों का अंग भी नहीं छूते। अभी जाता हूँ गुरु जी को बताता हूँ। भाई श्रोताओ! आप सर्व कल स्वामी जी के आश्रम पर आना सुबह-2। इस झूठे की कितनी पिटाई स्वामी रामानन्द जी करेगें? इसने हमारे गुरुदेव का नाम मिट्टी में मिलाया है। सर्व श्रोता बोले यह बालक मूर्ख, झूठा, गंवार है आप विद्वान हो। कबीर जी ने कहाः-

निरंजन धन तेरा दरबार–निरंजन धन तेरा दरबार। जहां पर तनिक ना न्याय विचार। (टेक)
वैश्या ओढे मल–मल खासा गल मोतियों का हार। पतिव्रता को मिले न खादी सूखा निरस आहार।।
पाखण्डी की पूजा जग में सन्त को कहे लबार। अज्ञानी को परम विवेकी, ज्ञानी को मूढ गंवार।।
कह कबीर सुनो भाई साधो सब उल्टा व्यवहार। सच्चों को तो झूठ बतावें, इन झूठों का एतबार।।

बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर जी अपने घर चले गए। वह ऋषि विवेकानन्द अपने गुरु रामानन्द स्वामी जी के आश्रम में गया तथा सर्व घटना की जानकारी बताई। हे स्वामी जी! एक छोटी जाति का जुलाहे का लड़का कबीर अपने आप को बड़ा विद्वान् सिद्ध करने के लिए भगवान् विष्णु जी को नाशवान बताता है। हे ऋषि जी! उसने तो हम ब्रह्मणों का घर से निकलना भी दूभर कर दिया है। हमारी नाक काट डाली अर्थात् हमें महा शर्मिन्दा (लज्जित) होना पड़ रहा है। उसने कल भरी सभा में कहा है कि पंड़ित रामानन्द स्वामी मेरे गुरु जी हैं। मैंने उनसे दिक्षा ले रखी है। उस कबीर ने तिलक भी लगा रखा था जैसा हम वैष्णव सन्त लगाते है। अपने शिष्य विवेकानन्द की बात सुनकर स्वामी रामानन्द जी बहुत क्रोधित होकर बोले हे विवेकानन्द कल सुबह उसे मेरे सामने उपस्थित करो। देखना सर्व के समक्ष उसकी झूठ का पर्दाफाश करूँगा।

''कबीर जी द्वारा स्वामी रामानन्द के मन की बात बताना''

दूसरे दिन विवेकानन्द ऋषि अपने साथ नौ व्यक्तियों को लेकर जुलाहा कॉलोनी में नीरू के मकान के विषय में पूछने लगा कि नीरू का मकान कौन सा है? कालोनी के एक व्यक्ति को उनके आव-भाव से लगा कि ये कोई अप्रिय घटना करने के उद्देश्य से आए हैं। उसने शीघ्रता से नीरू को जाकर बताया कि कुछ ब्राह्मण आपके घर आ रहे हैं। उनकी नीयत झगड़ा करने की है। नीमा भी वहीं

खड़ी उस व्यक्ति की बातें सुन रही थी उसी समय वे ब्राह्मण गली में नीरू के मकान की ओर आते दिखाई दिए। नीमा समझ गई कि अवश्य कबीर ने इन ब्राह्मणों से ज्ञान चर्चा की है। वे ईर्ष्यालु व्यक्ति मेरे बेटे को मार डालेगें। इतना विचार करके सोए हुए बालक कबीर को जगाया तथा अपनी झोंपड़ी के पीछे ले गई वहाँ लेटा कर रजाई डाल दी तथा कहा बेटा बोलना नहीं है। कुछ व्यक्ति झगड़ा करने के उद्देश्य से अपने घर आ रहे हैं। नीमा अपने घर के द्वार पर गली में खड़ी हो गई। तब तक वे ब्राह्मण घर के निकट आ चुके थे। उन्होंने पूछा क्या नीरू का घर यही है ? नीमा ने उत्तर दिया हाँ ऋषि जी! यही है कहो कैसे आना हुआ। ऋषि विवेकानन्द बोला कहाँ है तुम्हारा शरारती बच्चा कबीर? कल उसने भरी सभा में मेरे गुरुदेव का अपमान किया है। आज उस की पिटाई गुरु जी सर्व के समक्ष करेंगे। इसको सबक सिखाऐंगे। नीमा बोली मेरा बेटा निर्दोष है वह किसी का अपमान नहीं कर सकता। आप मेरे बेटे से ईर्ष्या रखते हो। कभी कोई ब्राह्मण उलहाने (शिकायत) लेकर आता है कभी कोई तो कभी कोई आता है। आप मेरे बेटे की जान के शत्रु क्यों बने हो? लौट जाइए।

सर्व ब्राह्मण बलपूर्वक नीरू की झोंपड़ी में प्रवेश करके कपड़ों को उठा-2 कर बालक को खोजने लगे। चारपाइयों को भी उल्ट कर पटक दिया। जोर-2 से ऊंची आवाज में बोलने लगे। मात-पिता को दुःखी जानकर बालक रूपधारी कबीर परमेश्वर जी रजाई से निकल कर खड़े हो गए तथा कहा ऋषि जी मैं झोपड़ी के पीछे छुपा हूँ। बच्चे की आवाज सुनकर सर्व ब्राह्मण पीछे गए। वहाँ खड़े कबीर जी को पकड़ कर अपने साथ ले जाने लगे। नीमा तथा नीरू ने विरोध किया। नीमा ने बालक कबीर जी को सीने से लगाकर कहा मेरे बच्चे को मत ले जाओ। मत ले जाओ----- ऐसे कह कर रोने लगी। निर्दयों ने नीमा को धक्का मार कर जमीन पर गिरा दिया। नीमा फिर उठ कर पीछे दौड़ी तथा बालक कबीर जी का हाथ उनसे छुटवाने का प्रयत्न किया। एक व्यक्ति ने ऐसा थप्पड़ मारा नीमा के मुख व नाक से रक्त टपकने लगा। नीमा रोती हुई गली में अचेत हो गई। नीरू ने भी बच्चे को छुड़वाने की कोशिश की तो उसे भी पीट-2 कर मंत सम कर दिया। कॉलोनी वाले उठाकर उनके घर ले गए। बहुत समय पश्चात् दोनों सचेत हुए। बच्चे के वियोग में रो-2 कर दोनों का बुरा हाल था। नीरू चोट के कारण चल-फिरने में असमर्थ जमीन पर गिर कर विलाप कर रहा था। कभी चुप होकर भयभीत हुआ गली की ओर देख रहा था। मन में सोच रहा था कि कहीं वे लौट कर ना आ जाऐं तथा मुझे जान से न मार डालें। फिर बच्चे को याद करके विलाप करने लगता। मेरे बेटे को मत मारो-मत मारो इसने क्या बिगाड़ा है तुम्हारा। ऐसे पागल जैसी स्थिति नीरू की हो गई थी। नीमा होश में आती थी फिर अपने बच्चे के साथ हो रहे अत्याचार की कल्पना कर बेहोश (अचेत) हो जाती थी। मोहल्ले (कॉलोनी) के स्त्री पुरूष उनकी दशा देखकर अति दुःखी थे।

प्रातःकाल का समय था। स्वामी रामानन्द जी गंगा नदी पर स्नान करके लौटे ही थे। अपनी कुटिया (Hut) में बैठे थे। जब उन्हें पता चला कि उस बालक कबीर को पकड़ कर ऋषि विवेकानन्द जी की टीम ला रही है तो स्वामी रामानन्द जी ने अपनी कुटिया के द्वार पर कपड़े का पर्दा लगा लिया। यह दिखाने के लिए कि मैं पवित्र जाति का ब्राह्मण हूँ तथा शुद्रों को दीक्षा देना तो दूर की बात है, सुबह-2 तो दर्शन भी नहीं करता।

ऋषि विवेकानन्द जी ने बालक कबीर देव जी को कुटिया के समक्ष खड़ा करके कहा हे गुरुदेव। यह रहा वह झूठा बच्चा कबीर जुलाहा। उस समय ऋषि विवेकानन्द जी ने अपने प्रचार क्षेत्र के व्यक्तियों को विशेष कर बुला रखा था। यह दिखाने के लिए कि यह कबीर झूठ बोलता है। स्वामी

रामानन्द जी कहेंगे मैंने इसको कभी दीक्षा नहीं दी। जिससे सर्व उपस्थित व्यक्तियों को यह बात जचेगी कि कबीर पुराणों के विषय में भी झूठ बोल रहा था जिन के बारे में कबीर जी ने लिखा बताया था कि श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्मा जी नाशवान हैं। इनका जन्म होता है तथा मत्यु भी होती है तथा इनकी माता का नाम प्रकति देवी (दुर्गा) है तथा पिता का नाम सदाशिव अर्थात् काल ब्रह्म है। जिन हाथों से कबीर परमेश्वर को पकड़ कर लाए थे। उन सर्व व्यक्तियों ने अपने हाथ मिट्टी से रगड़-रगड़ कर धोए तथा सर्व उपस्थित व्यक्तियों के समक्ष बाल्टी में जल भर कर स्नान किया सर्व वस्त्र जो शरीर पर पहन रखे थे वे भी कूट-2 कर धोए।

स्वामी रामानन्द जी ने अपनी कुटिया के द्वार पर खड़े पाँच वर्षीय बालक कबीर से ऊँची आवाज में प्रश्न किया। हे बालक ! आपका क्या नाम है? कौन जाति में जन्म है? आपका भक्ति पंथ (मार्ग) कौन है? उस समय लगभग हजार की संख्या में दर्शक उपस्थित थे। बालक कबीर जी ने भी आधीनता से ऊँची आवाज में उत्तर दिया :-

जाति मेरी जगत्गुरु, परमेश्वर है पंथ। गरीबदास लिखित पढे, मेरा नाम निरंजन कंत।।
हे स्वामी संष्टा मैं संष्टि मेरे तीर। दास गरीब अधर बसूँ अविगत सत् कबीर।
गोता मारूं स्वर्ग में जा पैठूं पाताल। गरीब दास ढूंढत फिरू हीरे माणिक लाल।

भावार्थ :- कबीर जी ने कहा हे स्वामी रामानन्द जी! परमेश्वर के घर कोई जाति नहीं है। आप विद्वान पुरूष होते हुए वर्ण भेद को महत्त्व दे रहे हो। मेरी जाति व नाम तथा भक्ति पंथ जानना चाहते हो तो सुनों। मेरा नाम वही कविर्देव है जो वेदों में लिखा है जिसे आप जी पढ़ते हो। मैं वह निरंजन (माया रहित) कंत (सर्व का पति) अर्थात् सबका स्वामी हूँ। मैं ही सर्व संष्टि रचनहार (संष्टा) हूँ। यह संष्टि मेरे ही आश्रित (तीर यानि किनारे) है। मैं ऊपर सतलोक में निवास करता हूँ। मैं वह अमर अव्यक्त (अविगत सत्) कबीर हूँ। जिसका वर्णन गीता अध्याय 8 श्लोक सं.20 से 22 में है। हे स्वामी जी गीता अध्याय 7 श्लोक 24 में गीता ज्ञान दाता अर्थात् काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) अपने विषय में बताता है कि! यह मूर्ख मनुष्य समुदाय मुझ अव्यक्त को कष्ण रूप में व्यक्ति मान रहे हैं। मैं सबके समक्ष प्रकट नहीं होता। यह मनुष्य समुदाय मेरे इस अश्रेष्ठ अटल नियम से अपरिचित हैं (24) गीता अ. 7 श्लोक 25 में कहा है कि मैं (गीता ज्ञान दाता) अपनी योगमाया (सिद्धिशक्ति) से छिपा हुआ अपने वास्तविक रूप में सबके समक्ष प्रत्यक्ष नहीं होता। यह अज्ञानी जन समुदाय मुझ कष्ण व राम आदि की तरह माता से जन्म न लेने वाले प्रभु को तथा अविनाशी (जो अन्य अव्यक्त परमेश्वर है) को नहीं जानते।

हे स्वामी रामानन्द जी गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25 में गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म (क्षर पुरूष) ने अपने को अव्यक्त कहा है यह प्रथम अव्यक्त प्रभु हुआ। अब सुनो दूसरे तथा तीसरे अव्यक्त प्रभुओं के विषय में। गीता अध्याय 8 श्लोक 18-19 में गीता ज्ञान दाता ने अपने से अन्य अव्यक्त परमात्मा का वर्णन किया है कहा है :- यह सर्व चराचर प्राणी दिन के समय अव्यक्त परमात्मा से उत्पन्न होते है रात्रि के समय उसी में लीन हो जाते हैं। यह जानकारी काल ब्रह्म ने अपने से अन्य अव्यक्त प्रभु (परब्रह्म) अर्थात् अक्षर ब्रह्म के विषय में दी है। यह दूसरा अव्यक्त (अविगत) प्रभु हुआ तीसरे अव्यक्त (अविगत) परमात्मा अर्थात् परम अक्षर ब्रह्म के विषय में गीता अध्याय 8 श्लोक 20 से 22 में कहा है कि जिस अव्यक्त प्रभु का गीता अध्याय 8 श्लोक 18-19 में वर्णन किया है वह पूर्ण प्रभु नहीं है। वह भी वास्तव में अविनाशी प्रभु नहीं है। परन्तु उस अव्यक्त (जिसका विवरण उपरोक्त श्लोक 18-19 में है) से भी अति परे दूसरा जो सनातन अव्यक्त भाव है वह परम दिव्य परमेश्वर सब भूतों (प्राणियों) के नष्ट होने पर भी नष्ट नहीं

होता। वह अक्षर अव्यक्त अविनाशी अविगत अर्थात् वास्तव में अविनाशी अव्यक्त प्रभु इस नाम से कहा गया है। उसी अक्षर अव्यक्त की प्राप्ति को परमगति कहते हैं। जिस दिव्य परम परमात्मा को प्राप्त होकर साधक वापस लौट कर इस संसार में नहीं आते (इसी का विवरण गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा श्लोक 16-17 में भी है) वह धाम अर्थात् जिस लोक (धाम) में वह अविनाशी (अव्यक्त) परमात्मा रहता है वह धाम (स्थान) मेरे वाले लोक (ब्रह्मलोक) से श्रेष्ठ है। हे पार्थ! जिस अविनाशी परमात्मा के अन्तर्गत सर्व प्राणी हैं। जिस सच्चिदानन्द घन परमात्मा से यह समस्त जगत परिपूर्ण है, वह सनातन अव्यक्त परमेश्वर तो अनन्य भक्ति से प्राप्त होने योग्य है (गीता अ. 8/मं.20,21,22) हे स्वामी रामानन्द जी मैं वही तीसरी श्रेणी वाला अविगत (अव्यक्त) सत् (सनातन अविनाशी भाव वाला परमेश्वर) कबीर हूँ। जिसे वेदों में कविर्देव कहा है वही कबीर देव मैं कहलाता हूँ।

हे स्वामी रामानन्द जी! सर्व सष्टि को रचने वाला (सष्टा) मैं ही हूँ। मैं ही आत्मा का आधार जगतगुरु जगत् पिता, बन्धु तथा जो सत्य साधना करके सत्यलोक जा चुके हैं उनको सत्यलोक पहुँचाने वाला मैं ही हूँ। काल ब्रह्म की तरह धोखा न देने वाले स्वभाव वाला कबीर देव (कर्विदेव) मैं ही हूँ। जिसका प्रमाण अर्थववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 मन्त्र 7 में लिखा है।

काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 7

योऽथर्वाणं पित्तरं देवबन्धुं बहस्पतिं नमसाव च गच्छात्।
त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान्।।7।।

यः अथर्वाणम् पित्तरम् देवबन्धुम् बहस्पतिम् नमसा अव च गच्छात् त्वम् विश्वेषाम् जनिता यथा सः कविर्देवः न दभायत् स्वधावान्

अनुवाद :– (यः) जो (अथर्वाणम्) अचल अर्थात् अविनाशी (पित्तरम्) जगत पिता (देव बन्धुम्) भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार (बहस्पतिम्) बड़ा स्वामी अर्थात् परमेश्वर व जगत्गुरु (च) तथा (नमसाव) विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को सुरक्षा के साथ (गच्छात्) सतलोक गए हुओं को यानि जो मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं, उनको सतलोक ले जाने वाला (विश्वेषाम्) सर्व ब्रह्मण्डों की (जनिता) रचना करने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त (न दभायत्) काल की तरह धोखा न देने वाले (स्वधावान्) स्वभाव अर्थात् गुणों वाला (यथा) ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही (सः) वह (त्वम्) आप (कविर्देवः/ कविर्देवः) कविर्देव है अर्थात् भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं।

केवल हिन्दी अनुवाद :- जो अचल अर्थात् अविनाशी जगत पिता भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार बड़ा स्वामी अर्थात् परमेश्वर व जगत्गुरु तथा विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को सुरक्षा के साथ सतलोक गए हुओं को यानि जो मोक्ष प्राप्त कर चुके हैं, उनको सतलोक ले जाने वाला सर्व ब्रह्मण्डों की रचना करने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त काल की तरह धोखा न देने वाले स्वभाव अर्थात् गुणों वाला ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही वह आप कविर्देव है अर्थात् भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं।

भावार्थ :- इस मंत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया कि उस परमेश्वर का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है, जिसने सर्व रचना की है।

जो परमेश्वर अचल अर्थात् वास्तव में अविनाशी (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी प्रमाण है) जगत् गुरु, परमेश्वर आत्माधार, जो पूर्ण मुक्त होकर सत्यलोक गए हैं यानि जो मोक्ष प्राप्त कर

चुके हैं, उनको सतलोक ले जाने वाला, सर्व ब्रह्मण्डों का रचनहार, काल (ब्रह्म) की तरह धोखा न देने वाला ज्यों का त्यों वह स्वयं कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है। यही परमेश्वर सर्व ब्रह्मण्डों व प्राणियों को अपनी शब्द शक्ति से उत्पन्न करने के कारण (जनिता) माता भी कहलाता है तथा (पित्तरम्) पिता तथा (बन्धु) भाई भी वास्तव में यही है तथा (देव) परमेश्वर भी यही है। इसलिए इसी कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की स्तुति किया करते हैं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च द्रविणंम त्वमेव, त्वमेव सर्वं मम् देव देव। इसी परमेश्वर की महिमा का पवित्र ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 24 में विस्तृत विवरण है।

पाँच वर्षीय बालक के मुख से वेदो व गीता जी के गूढ़ रहस्य को सुनकर ऋषि रामानन्द जी आश्चर्य चकित रह गए तथा क्रोधित होकर अपशब्द कहने लगे। वाणी:-

रामानंद अधिकार सुनि, जुलहा अक जगदीश। दास गरीब बिलंब ना, ताहि नवावत शीश।।407।।
रामानंद कूं गुरु कहै, तनसैं नहीं मिलात। दास गरीब दर्शन भये, पैडे लगी जुं लात।।408।।
पंथ चलत ठोकर लगी, रामनाम कहि दीन। दास गरीब कसर नहीं, सीख लई प्रबीन।।409।।
आडा पड़दा लाय करि, रामानंद बूझंत। दास गरीब कुलंग छबि, अधर डांक कूदंत।।410।।
कौन जाति कुल पंथ है, कौन तुम्हारा नाम। दास गरीब अधीन गति, बोलत है बलि जांव।।411।।
जाति हमारी जगतगुरु, परमेश्वर पद पंथ। दास गरीब लिखति परै, नाम निंरजन कंत।।412।।
रे बालक सुन दुर्बद्धि, घट मठ तन आकार। दास गरीब दरद लग्या, हो बोले सिरजनहार।।413।।
तुम मोमन के पालवा, जुलहै के घर बास। दास गरीब अज्ञान गति, एता दृढ़ विश्वास।।414।।
मान बड़ाई छाड़ि करि, बोलौ बालक बैंन। दास गरीब अधम मुखी, एता तुम घट फैंन।।415।।
तर्क तलूसैं बोलतै, रामानंद सुर ज्ञान। दास गरीब कुजाति है, आखर नीच निदान।।423।।

परमेश्वर कबीर जी (कविर्देव) ने प्रेमपूर्वक उत्तर दिया -

महके बदन खुलास कर, सुनि स्वामी प्रबीन। दास गरीब मनी मरै, मैं आजिज आधीन।।428।।
मैं अविगत गति सैं परै, च्यारि बेद सैं दूर। दास गरीब दशौं दिशा, सकल सिंध भरपूर।।429।।
सकल सिंध भरपूर हूँ, खालिक हमरा नाम। दासगरीब अजाति हूँ, तैं जो कह्या बलि जांव।।430।।
जाति पाति मेरे नहीं, नहीं बस्ती नहीं गाम। दासगरीब अनिन गति, नहीं हमारै चाम।।431।।
नाद बिंद मेरे नहीं, नहीं गुदा नहीं गात। दासगरीब शब्द सजा, नहीं किसी का साथ।।432।।
सब संगी बिछरू नहीं, आदि अंत बहु जांहि। दासगरीब सकल वंसु, बाहर भीतर माँहि।।433।।
ए स्वामी सृष्टा मैं, सृष्टि हमारै तीर। दास गरीब अधर बसूं, अविगत सत्य कबीर।।434।।
पौहमी धरणि आकाश में, मैं व्यापक सब ठौर। दास गरीब न दूसरा, हम समतुल नहीं और।।436।।
हम दासन के दास हैं, करता पुरुष करीम। दासगरीब अवधूत हम, हम ब्रह्मचारी सीम।।439।।
सुनि रामानंद राम हम, मैं बावन नरसिंह। दास गरीब कली कली, हमहीं से कृष्ण अभंग।।440।।
हमहीं से इंद्र कुबेर हैं, ब्रह्मा बिष्णु महेश। दास गरीब धर्म ध्वजा, धरणि रसातल शेष।।447।।
सुनि स्वामी सती भाखहूँ, झूठ न हमरै रिंच। दास गरीब हम रूप बिन, और सकल प्रपंच।।453।।
गोता लाऊं स्वर्ग सैं, फिरि पैठूं पाताल। गरीबदास ढूंढत फिरूं, हीरे माणिक लाल।।476।।
इस दरिया कंकर बहुत, लाल कहीं कहीं ठाव। गरीबदास माणिक चुगैं, हम मुरजीवा नांव।।477।।
मुरजीवा माणिक चुगैं, कंकर पत्थर डारि। दास गरीब डोरी अगम, उतरो शब्द अधार।।478।।

स्वामी रामानन्द जी ने कहा:- अरे कुजात! अर्थात् शुद्र! छोटा मुंह बड़ी बात, तू अपने आपको परमात्मा कहता है। तेरा शरीर हाड़-मांस व रक्त निर्मित है। तू अपने आपको अविनाशी परमात्मा कहता है। तेरा जुलाहे के घर जन्म है फिर भी अपने आपको अजन्मा अविनाशी कहता है तू कपटी बालक है। परमेश्वर कबीर जी ने कहा:-

ना मैं जन्मु ना मरूँ, ज्यों मैं आऊँ त्यों जाऊँ। गरीबदास सतगुरु भेद से लखो हमारा ढांव।।
सुन रामानन्द राम मैं, मुझसे ही बावन नसिंह। दास गरीब युग–2 हम से ही हुए कष्ण अभंग।।

भावार्थ:- कबीर जी ने उत्तर दिया हे रामानन्द जी, मैं न तो जन्म लेता हूँ ? न मत्यु को प्राप्त होता हूँ। मैं चौरासी लाख प्राणियों के शरीरों में आने (जन्म लेने) व जाने (मत्यु होने) के चक्र से भी रहित हूँ। मेरी विशेष जानकारी किसी तत्त्वदर्शी सन्त (सतगुरु) के ज्ञान को सुनकर प्राप्त करो। गीता अध्याय 4 श्लोक 34 तथा यजुर्वेद अध्याय 40 मन्त्र 10-13 में वेद ज्ञान दाता स्वयं कह रहा है कि उस पूर्ण परमात्मा के तत्व (वास्तविक) ज्ञान से मैं अपरिचित हूँ। उस तत्त्वज्ञान को तत्त्वदर्शी सन्तों से सुनों उन्हें दण्डवत् प्रणाम करो, अति विनम्र भाव से परमात्मा के पूर्ण मोक्ष मार्ग के विषय में ज्ञान प्राप्त करो, जैसी भक्ति विधि से तत्त्वदष्टा सन्त बताऐं वैसे साधना करो। गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में लिखा है कि श्लोक 16 में जिन दो पुरूषों (भगवानों) 1. क्षर पुरुष अर्थात् काल ब्रह्म तथा 2. अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म का उल्लेख है, वास्तव में अविनाशी परमेश्वर तथा सर्व का पालन पोषण व धारण करने वाला परमात्मा तो उन उपरोक्त दोनों से अन्य ही है। हे स्वामी रामानन्द जी! वह उत्तम पुरूष अर्थात् सर्व श्रेष्ठ प्रभु मैं ही हूँ।

इस बात को सुनकर स्वामी रामानन्द जी बहुत क्षुब्ध हो गए तथा कहा कि रे बालक! तू निम्न जाति का और छोटा मुँह बड़ी बात कर रहा है। तू अपने आप भगवान बन बैठा। बुरी गालियाँ भी दी। कबीर साहेब बोले कि गुरुदेव! आप मेरे गुरुजी हैं। आप मुझे गाली दे रहे हो तो भी मुझे आनन्द आ रहा है। लेकिन मैं जो आपको कह रहा हूँ, मैं ज्यों का त्यों पूर्णब्रह्म ही हूँ, इसमें कोई संशय नहीं है। इस बात को सुनकर रामानन्द जी ने कहा कि ठहर जा तेरी तो लम्बी कहानी बनेगी, तू ऐसे नहीं मानेगा। मैं पहले अपनी पूजा कर लेता हूँ। रामानन्द जी ने कहा कि इसको बैठाओ। मैं पहले अपनी कुछ क्रिया रहती है वह कर लेता हूँ, बाद में इससे निपटूंगा।

स्वामी रामानन्द जी क्या क्रिया करते थे?

भगवान विष्णु जी की एक काल्पनिक मूर्ति बनाते थे। सामने मूर्ति दिखाई देने लग जाती थी (जैसे कर्मकाण्ड करते हैं, भगवान की मूर्ति के पहले वाले सारे कपड़े उतार कर, उनको जल से स्नान करवा कर, फिर स्वच्छ कपड़े भगवान ठाकुर को पहना कर गले में माला डालकर, तिलक लगा कर मुकुट रख देते हैं।) रामानन्द जी कल्पना कर रहे थे। कल्पना करके भगवान की काल्पनिक मूर्ति बनाई। श्रद्धा से जैसे नंगे पैरों जाकर आप ही गंगा जल लाए हों, ऐसी अपनी भावना बना कर ठाकुर जी की मूर्ति के कपड़े उतारे, फिर स्नान करवाया तथा नए वस्त्र पहना दिए। तिलक लगा दिया, मुकुट रख दिया और माला (कण्ठी) डालनी भूल गए। कण्ठी न डाले तो पूजा अधूरी और मुकुट रख दिया तो उस दिन मुकुट उतारा नहीं जा सकता। उस दिन मुकुट उतार दे तो पूजा खण्डित। स्वामी रामानन्द जी अपने आपको कोस रहे हैं कि इतना जीवन हो गया मेरा कभी, भी ऐसी गलती जिन्दगी में नहीं हुई थी। प्रभु आज मुझ पापी से क्या गलती हुई है? यदि मुकुट उतारूँ तो पूजा खण्डित। उसने सोचा कि मुकुट के ऊपर से कण्ठी (माला) डाल कर देखता हूँ (कल्पना से कर रहे हैं कोई सामने मूर्ति नहीं है और पर्दा

लगा है कबीर साहेब दूसरी ओर बैठे हैं)। मुकुट में माला फँस गई है आगे नहीं जा रही थी। जैसे स्वपन देख रहे हों। रामानन्द जी ने सोचा अब क्या करूं? हे भगवन्! आज तो मेरा सारा दिन ही व्यर्थ गया। आज की मेरी भक्ति कमाई व्यर्थ गई (क्योंकि जिसको परमात्मा की कसक होती है उसका एक नित्य नियम भी रह जाए तो उसको दर्द बहुत होता है। जैसे इंसान की जेब कट जाए और फिर बहुत पश्चाताप करता है। प्रभु के सच्चे भक्तों को इतनी लगन होती है।) इतने में बालक रूपधारी कबीर परमेश्वर जी ने कहा कि स्वामी जी माला की घुण्डी खोलो और माला गले में डाल दो। फिर गाँठ लगा दो, मुकुट उतारना नहीं पड़ेगा। रामानन्द जी काहे का मुकुट उतारे था, काहे की गाँठ खोले था। कुटिया के सामने लगा पर्दा भी स्वामी रामानन्द जी ने अपने हाथ से फेंक दिया और ब्राह्मण समाज के सामने उस कबीर परमेश्वर को सीने से लगा लिया। रामानन्द जी ने कहा कि हे भगवन् ! आपका तो इतना कोमल शरीर है जैसे रूई हो। आपके शरीर की तुलना में मेरा तो पत्थर जैसा शरीर है। एक तरफ तो प्रभु खड़े हैं और एक तरफ जाति व धर्म की दीवार है। प्रभु चाहने वाली पुण्यात्माऐं धर्म की बनावटी दीवार को तोड़ना श्रेयकर समझते हैं। वैसा ही स्वामी रामानन्द जी ने किया। सामने पूर्ण परमात्मा को पा कर न जाति देखी न धर्म देखा, न छूआ-छात, केवल आत्म कल्याण देखा। इसे ब्राह्मण कहते हैं।

बोलत रामानंद जी, हम घर बड़ा सुकाल। गरीबदास पूजा करैं, मुकुट फही जदि माल।।
सेवा करौं संभाल करि, सुनि स्वामी सुर ज्ञान। गरीबदास शिर मुकुट धरि,माला अटकी जान।।
स्वामी घुंडी खोलि करि, फिरि माला गल डार। गरीबदास इस भजन कूं, जानत है करतार।।
ड्योढी पड़दा दूरि करि, लीया कंठ लगाय। गरीबदास गुजरी बौहत, बदनैं बदन मिलाय।।
मनकी पूजा तुम लखी, मुकुट माल परबेश। गरीबदास गति को लखै, कौन वरण क्या भेष।।
यह तौ तुम शिक्षा दई, मानि लई मनमोर। गरीबदास कोमल पुरूष, हमरा बदन कठोर।।

''कबीर देव द्वारा ऋषि रामानन्द के आश्रम में दो रूप धारण करना''

स्वामी रामानन्द जी ने परमेश्वर कबीर जी से कहा कि ''आपने झूठ क्यों बोला?'' कबीर परमेश्वर जी बोले! कैसा झूठ स्वामी जी? स्वामी रामानन्द जी ने कहा कि आप कह रहे थे कि आपने मेरे से नाम ले रखा है। आपने मेरे से उपदेश कब लिया? बालक रूपधारी कबीर परमेश्वर जी बोले एक समय आप स्नान करने के लिए पँचगंगा घाट पर गए थे। मैं वहाँ लेटा हुआ था। आपके पैरों की खड़ाऊँ मेरे सिर में लगी थी! आपने कहा था कि बेटा राम नाम बोलो। रामानन्द जी बोले-हाँ, अब कुछ याद आया। परन्तु वह तो बहुत छोटा बच्चा था (क्योंकि उस समय पाँच वर्ष की आयु के बच्चे बहुत बड़े हो जाया करते थे तथा पाँच वर्ष के बच्चे के शरीर तथा ढ़ाई वर्ष के बच्चे के शरीर में दुगुना अन्तर हो जाता है)। **कबीर परमेश्वर जी ने कहा स्वामी जी देखो, मैं ऐसा था। स्वामी रामानन्द जी के सामने भी खड़े हैं और एक ढाई वर्षीय बच्चे का दूसरा रूप बना कर किसी सेवक की वहाँ पर चारपाई बिछी थी उसके ऊपर विराजमान हो गए।**

रामानन्द जी ने छः बार तो इधर देखा और छः बार उधर देखा। फिर आँखें मलमल कर देखा कि कहीं तेरी आँखें धोखा तो नहीं खा रही हैं। इस प्रकार देख ही रहे थे कि इतने में कबीर परमेश्वर जी का छोटे वाला रूप हवा में उड़ा और कबीर परमेश्वर जी के बड़े पाँच वर्ष वाले स्वरूप में समा गया। पाँच वर्ष वाले स्वरूप में कबीर परमेश्वर जी रह गए।

रामानन्द जी बोले कि मेरा संशय मिट गया कि आप ही पूर्ण ब्रह्म हो। हे परमेश्वर! आपको कैसे पहचान सकते हैं। आप किस जाति में उत्पन्न तथा कैसी वेश भूषा में खड़े हो। हम नादान प्राणी आप के साथ वाद-विवाद करके दोषी हो गए, क्षमा करना परमेश्वर कविर्देव, मैं आपका अनजान बच्चा हूँ। रामानन्द जी ने फिर अपनी अन्य शंकाओं का निवारण करवाया।

शंका :- हे कविर्देव! मैं राम-राम कोई मन्त्र शिष्यों को जाप करने को नहीं देता। यदि आपने मुझसे दीक्षा ली है तो वह मन्त्र बताईए जो मैं शिष्य को जाप करने को देता हूँ।

उत्तर कबीर देव का :- हे स्वामी जी! आप ओम् नाम जाप करने को देते हो तथा ओ३म् भगवते वासुदेवाय नमः का जाप तथा विष्णु स्त्रोत की आवर्ती की भी आज्ञा देते हो।

शंका :- आपने जो मन्त्र बताया यह तो सही है। एक शंका और है उसका भी निवारण कीजिए। मैं जिसे शिष्य बनाता हूँ उसे एक चिन्ह देता हूँ। वह आपके पास नहीं है।

उत्तर :- बन्दी छोड़ कबीर देव बोले हे गुरुदेव! आप तुलसी की लकड़ी के एक मणके की कण्ठी (माला) गले में पहनने के लिए देते हो। यह देखो गुरु जी उसी दिन आपने अपनी कण्ठी गले से निकाल कर मेरे गले में पहनाई थी। यह कहते हुए कविर्देव ने अपने कुर्ते के नीचे गले में पहनी वही कण्ठी (माला) सार्वजनिक कर दी। रामानन्द जी समझ गए यह कोई साधारण बच्चा नहीं है। यह प्रभु का भेजा हुआ कोई तत्त्वदर्शी आत्मा है। इस से ज्ञान चर्चा करनी चाहिए। चर्चा के विषय को आगे बढ़ाते हुए स्वामी रामानन्द जी बोले हे बालक कबीर! आप अपने आपको परमेश्वर कहते हो परमात्मा ऐसा अर्थात् मनुष्य जैसा थोड़े ही है।

हे कबीर जी! उस स्थान (परम धाम) को यदि एक बार दिखा दे तो मन शान्त हो जाएगा। मैं वर्षों से ध्यान योग अर्थात् हठयोग करता हूँ। मैं समाधिस्थ होकर आकाश में बहुत ऊपर तक सैर कर आता हूँ। परमेश्वर कबीर जी ने कहा है स्वामी जी! आप समाधिस्थ होइए।

स्वामी रामानन्द जी का हठयोग ध्यान (मैडिटेशन) करना नित्य का अभ्यास था तुरन्त ही समाधिस्थ हो गए। समाधि दशा में स्वामी जी की सूरति (ध्यान) त्रिवेणी तक जाती थी। त्रिवेणी पर तीन रास्ते हो जाते हैं। बाँया रास्ता धर्मराज के लोक तथा ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जी के लोकों तथा स्वर्ग लोक आदि को जाता है। दायाँ रास्ता अठासी हजार खेड़ों (नगरियों) की ओर जाता है। सामने वाला रास्ता ब्रह्म लोक को जाता है। वह ब्रह्मरंद्र भी कहा जाता है। स्वामी रामानन्द जी कई जन्मों से साधना करते हुए आ रहे थे। इस कारण से इनका ध्यान तुरन्त लग जाता था। बालक रूपधारी परमेश्वर कबीर जी स्वामी रामानन्द जी को ध्यान में आगे मिले तथा वहाँ का सर्व भेद रामानन्द जी को बताया। हे स्वामी जी! आप की भक्ति साधना कई जन्मों की संचित है। जिस समय आप शरीर त्याग कर जाओगे इस बाऐं रास्ते से जाओगे इस रास्ते में स्वचालित द्वार (एटोमैटिक खुलने वाले गेट) लगे है। जिस साधक की जिस भी लोक की साधना होती है। वह धर्मराय के पास जाकर अपना लेखा (Account) करवाकर इसी रास्ते से आगे चलता है। उसी लोक का द्वार अपने आप खुल जाता है। वह द्वार तुरन्त बन्द हो जाता है। वह प्राणी पुनः उस रास्ते से लौट नहीं सकता। उस लोक में समय पूरा होने के पश्चात् पुनः उसी मार्ग से धर्मराज के पास आकर अन्य जीवन प्राप्त करता है।

धर्मराय का लोक भी उसी बाई और जाने वाले रास्ते में सर्व प्रथम है। उस धर्मराज के लोक में प्रत्येक की भक्ति अनुसार स्थान तय होता है। आप (स्वामी रामानन्द) जी की भक्ति का आधार विष्णु जी का लोक है। आप अपने पुण्यों को इस लोक में समाप्त करके पुनः पृथ्वी लोक पर शरीर धारण

करोगे। यह हरहट के कूएं जैसा चक्र आपकी साधना से कभी समाप्त नहीं होगा। यह जन्म मत्यु का चक्र तो केवल मेरे द्वारा बताए तत्त्वज्ञान द्वारा ही समाप्त होना सम्भव है। परमेश्वर कबीर जी ने फिर कहा हे स्वामी जी! जो सामने वाला द्वार है यह ब्रह्मरन्द्र है। यह वेदों में लिखे किसी भी मन्त्र जाप से नहीं खुलता यह तो मेरे द्वारा बताए सत्यनाम (जो दो मन्त्र का होता है एक ॐ मन्त्र तथा दूसरा तत् यह तत् सांकेतिक है वास्तविक नाम मन्त्र तो उपदेश लेने वाले को बताया जाएगा) के जाप से खुलता है। ऐसा कह कर परमेश्वर कबीर जी ने सत्यनाम (दो मन्त्रों के नाम) का जाप किया। तुरन्त ही सामने वाला द्वार (ब्रह्मरन्द्र) खुल गया। परमेश्वर कबीर जी अपने साथ स्वामी रामानन्द जी की आत्मा को लेकर उस ब्रह्मरन्द्र में प्रवेश कर गए। पश्चात् वह द्वार तुरन्त बन्द हो गया। उस द्वार से निकल कर लम्बा रास्ता तय किया ब्रह्मलोक में गए आगे फिर तीन रास्ते हैं। बाई ओर एक रास्ता महास्वर्ग में जाता है। उस महास्वर्ग में नकली (Duplicate) सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी लोकों की रचना काल ब्रह्म ने अपनी पत्नी दुर्गा से करा रखी है। प्राणियों को धोखा देने के लिए। उन सर्व नकली लोकों को दिखा कर वापस आए। दाई और सप्तपुरी, ध्रुव लोक आदि हैं। सामने वाला द्वार वहाँ जाता है जहाँ पर गीता ज्ञान दाता काल ब्रह्म अपनी योग माया से छुपा रहता है। वहाँ तीन स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान क्षेत्र है। जिसमें काल ब्रह्म तथा दुर्गा (प्रकति) देवी पति-पत्नी रूप में साकार रूप में रहते हैं। उस समय जिस पुत्र का जन्म होता है वह रजोगुण युक्त होता है। उसका नाम ब्रह्मा रख देता है उस बालक को युवा होने तक अचेत रखकर परवरिश करते हैं। युवा होने पर काल ब्रह्म स्वयं विष्णु रूप धारण करके अपनी नाभी से कमल का फूल प्रकट करता है। उस कमल के फूल पर युवा अवस्था प्राप्त होने पर ब्रह्मा जी को रख कर सचेत कर देता है। इसी प्रकार एक सतोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें दोनों (दुर्गा व काल ब्रह्म) पति-पत्नी रूप में रह कर अन्य पुत्र सतोगुण प्रधान उत्पन्न करते हैं। उसका नाम विष्णु रखते हैं। उसे भी युवा होने तक अचेत रखते हैं। शेष शय्या पर सचेत करते हैं। अन्य शेषनाग ब्रह्म ही अपनी शक्ति से उत्पन्न करता है। इसी प्रकार एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उस में वे दोनों (दुर्गा तथा काल ब्रह्म) पति-पत्नी व्यवहार से तमोगुण प्रधान पुत्र उत्पन्न करते हैं। उसका नाम शिव रखते हैं। उसे भी युवा अवस्था प्राप्त होने तक अचेत रखते हैं। युवा होने पर तीनों को सचेत करके इनका विवाह, प्रकति (दुर्गा) द्वारा उत्पन्न तीनों लड़कियों से करते हैं। इस प्रकार यह काल ब्रह्म अपना सष्टि चक्र चलाता है।

परमेश्वर कबीर जी ने स्वामी रामानन्द जी को वह रास्ता दिखाया तथा इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में फिर तीन रास्ते है बाई ओर फिर नकली सतलोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी लोक की रचना की हुई है। दाई ओर बारह भक्तों का निवास स्थान बनाया है, जिनको अपना ज्ञान प्रचारक बनाकर जनता को शास्त्रविरूद्ध ज्ञान पर आधारित करवाता है। सामने वाला द्वार तप्त शिला की ओर जाता है। जहाँ पर यह काल ब्रह्म एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सुक्ष्म शरीरों को तपाकर उनसे मैल निकाल कर खाता है। उस काल ब्रह्म के उस लोक के ऊपर एक द्वार है जो परब्रह्म (अक्षर पुरूष) के सात शंख ब्रह्मण्डों में खुलता है। परब्रह्म के ब्रह्मण्डों के अन्तिम सिरे पर एक द्वार है जो सत्यपुरूष (परम अक्षर ब्रह्म) के लोक सत्यलोक की भंवर गुफा में खुलता है। फिर आगे सत्यलोक है जो वास्तविक सत्यलोक है। सत्यलोक में पूर्ण परमात्मा कबीर जी अन्य तेजोमय मानव सदश शरीर में एक गुबन्द (गुम्मज) में एक ऊँचे सिंहासन पर विराजमान हैं। वहाँ सत्यलोक की सर्व वस्तुऐं तथा सत्यलोक वासी सफेद प्रकाश युक्त हैं। सत्यपुरूष के शरीर का प्रकाश अत्यधिक सफेद है। सत्यपुरूष के एक रोम

(शरीर के बाल) का प्रकाश एक लाख सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के मिलेजुले प्रकाश से भी अधिक है।

परमेश्वर कबीर जी स्वामी रामानन्द जी की आत्मा को साथ लेकर सत्यलोक में गए। वहाँ सर्व आत्माओं का भी मानव सदृश शरीर है। उनके शरीर का भी सफेद प्रकाश है। परन्तु सत्यलोक निवासियों के शरीर का प्रकाश सोलह सूर्यों के प्रकाश के समान है। बालक रूपधारी कविर्देव ने अपने ही अन्य स्वरूप पर चंवर किया। जो स्वरूप अत्यधिक तेजोमय था तथा सिंहासन पर एक सफेद गुबन्द में विराज मान था। स्वामी रामानन्द जी ने सोचा कि पूर्ण परमात्मा तो यह है जो तेजोमय शरीर युक्त है। यह बाल रूपधारी आत्मा कबीर यहाँ का अनुचर अर्थात् सेवक होगा। स्वामी रामानन्द जी ने इतना विचार ही किया था। उसी समय सिंहासन पर विराजमान तेजोमय शरीर युक्त परमात्मा सिंहासन त्यागकर खड़ा हो गया तथा बालक कबीर जी को सिंहासन पर बैठने के लिए प्रार्थना की नीचे से रामानन्द जी के साथ गया बालक कबीर जी उस सिंहासन पर विराजमान हो गए तथा वह तेजोमय शरीर धारी प्रभु बालक के सिर पर श्रद्धा से चंवर करने लगा। रामानन्द जी ने सोचा यह परमात्मा इस बच्चे पर चंवर करने लगा। यह बालक यहां का नौकर (सेवक) नहीं हो सकता। इतने में तेजोमय शरीर वाला परमात्मा उस बालक कबीर जी के शरीर में समा गया। बालक कबीर जी का शरीर उसी प्रकार उतने ही प्रकाश युक्त हो गया जितना पहले सिंहासन पर बैठे पुरूष (परमेश्वर) का था।

इतनी लीला करके स्वामी रामानन्द जी की आत्मा को वापस शरीर में भेज दिया। महर्षि रामानन्द जी ने आँखे खोल कर देखा तो बालक रूपधारी परमेश्वर कबीर जी को सामने भी बैठा पाया। महर्षि रामानन्द जी को पूर्ण विश्वास हो गया कि यह बालक कबीर जी ही परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् वासुदेव (कुल का मालिक) है। दोनों स्थानों (ऊपर सत्यलोक में तथा नीचे पृथ्वी लोक में) पर स्वयं ही लीला कर रहा है। यही परम दिव्य पुरूष अर्थात् आदि पुरूष है। सत्यलोक में जहाँ पर यह परमात्मा मूल रूप में निवास करता है वह सनातन परमधाम है। परमेश्वर कबीर जी ने इसी प्रकार सन्त गरीबदास जी महाराज छुड़ानी (हरयाणा) वाले को सर्व ब्रह्मण्डों को प्रत्यक्ष दिखाया था। उनका ज्ञान योग खोल दिया था तथा परमेश्वर ने गरीबदास जी महाराज को स्वामी रामानन्द जी के विषय में बताया था कि किस प्रकार मैंने स्वामी जी को शरण में लिया था। महाराज गरीबदास जी ने अपनी अमृतवाणी में उल्लेख किया है।

तहाँ वहाँ चित चक्रित भया, देखि फजल दरबार। गरीबदास सिजदा किया, हम पाये दीदार।।
बोलत रामानन्द जी सुन कबिर करतार। गरीबदास सब रूप में तुमही बोलनहार।।
दोहु ठोर है एक तू, भया एक से दोय। गरीबदास हम कारणें उतरे हो मग जोय।।
तुम साहेब तुम सन्त हो तुम सतगुरु तुम हंस। गरीबदास तुम रूप बिन और न दूजा अंस।।
तुम स्वामी मैं बाल बुद्धि भर्म कर्म किये नाश। गरीबदास निज ब्रह्म तुम, हमरै दृढ विश्वास।।
सुन बे सुन से तुम परे, ऊरै से हमरे तीर। गरीबदास सरबंग में, अविगत पुरूष कबीर।।
कोटि–2 सिजदा किए, कोटि–2 प्रणाम। गरीबदास अनहद अधर, हम परसे तुम धाम।।
बोले रामानन्द जी, सुनों कबीर सुभान। गरीबदास मुक्ता भये, उधरे पिण्ड अरू प्राण।।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ :- सत्यलोक में तथा काशी नगर में पृथ्वी पर दोनों स्थानों पर परमात्मा कबीर जी को देख कर स्वामी रामानन्द जी ने कहा है कबीर परमात्मा आप दोनों स्थानों पर लीला कर रहे हो। आप ही निज ब्रह्म अर्थात् गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में कहा है कि उत्तम पुरूष अर्थात् वास्तविक परमेश्वर तो क्षर पुरुष (काल ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) से अन्य ही है। वही परमात्मा

कहा जाता है। जो तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका धारण पोषण करता है वह परम अक्षर ब्रह्म आप ही हैं। आप ही की शक्ति से सर्व प्राणी गति कर रहे हैं। मैंने आप का वह सनातन परम धाम आँखों देखा है तथा वास्तविक अनहद धुन तो ऊपर सत्यलोक में है। ऐसा कह कर स्वामी रामानन्द जी ने कबीर परमेश्वर के चरणों में कोटि-2 प्रणाम किया तथा कहा आप परमेश्वर हो, आप ही सतगुरु तथा आप ही तत्त्वदर्शी सन्त हो आप ही हंस अर्थात् नीर-क्षीर को भिन्न-2 करने वाले सच्चे भक्त के गुणों युक्त हो। कबीर भक्त नाम से यहाँ पर प्रसिद्ध हो वास्तव में आप परमात्मा हो। मैं आपका भक्त आप मेरे गुरु जी।

परमेश्वर कबीर जी ने कहा हे स्वामी जी ! गुरु जी तो आप ही रहो। मैं आपका शिष्य हूँ। यह गुरु परम्परा बनाए रखने के लिए अति आवश्यक है। यदि आप मेरे गुरु जी रूप में नहीं रहोगे तो भविष्य में सन्त व भक्त कहा करेंगे कि गुरु बनाने की कोई अवश्यकता नहीं है। सीधा ही परमात्मा से ही सम्पर्क करो। ''कबीर'' ने भी गुरु नहीं बनाया था।

हे स्वामी जी! काल प्रेरित व्यक्ति ऐसी-2 बातें बना कर श्रद्धालुओं को भक्ति की दिशा से भ्रष्ट किया करेंगे तथा काल के जाल में फाँसे रखेंगे। इसलिए संसार की दृष्टि में आप मेरे गुरु जी की भूमिका कीजिये तथा वास्तव में जो साधना की विधि मैं बताऊँ आप वैसे भक्ति कीजिए। स्वामी रामानन्द जी ने कबीर परमेश्वर जी की बात को स्वीकार किया। कबीर परमेश्वर जी एक रूप में स्वामी रामानन्द जी को तत्त्वज्ञान सुना रहे थे तथा अन्य रूप धारण करके कुछ ही समय उपरान्त अपने घर पर आ गए। क्योंकि वहाँ नीरू तथा नीमा अति चिन्तित थे। बच्चे को सकुशल घर लौट आने पर नीरू तथा नीमा ने परमेश्वर का शुक्रिया किया। अपने बच्चे कबीर को सीने से लगा कर नीमा रोने लगी तथा बच्चे को अपने पति नीरू के पास ले गई। नीरू ने भी बच्चे कबीर से प्यार किया। नीरू ने पूछा बेटा! आपको उन ब्राह्मणों ने मारा तो नहीं? कबीर जी बोले नहीं पिता जी! स्वामी रामानन्द जी बहुत अच्छे हैं। मैंने उनको गुरु बना लिया है। उन्होंने मुझको सर्व ब्राह्मण समाज के समक्ष सीने से लगा कर कहा यह मेरा शिष्य है। आज से मैं सर्व हिन्दू समाज के सर्व जातियों के व्यक्तियों को शिष्य बनाया करूँगा। माता-पिता (नीरू तथा नीमा) अति प्रसन्न हुए तथा घर के कार्य में व्यस्त हो गए।

स्वामी रामानन्द जी ने कहा हे कबीर जी! हम सर्व की बुद्धि पर पत्थर पड़े थे आपने ही अज्ञान रूपी पत्थरों को हटाया है। बड़े पुण्यकर्मों से आपका दर्शन सुलभ हुआ है।

(यह शब्द अगम निगम बोध के पृष्ठ 38 पर लिखा है।)

मेरा नाम कबीरा हूँ जगत गुरू जाहिरा।(टेक)

तीन लोक में यश है मेरा, त्रिकुटी है अस्थाना। पाँच–तीन हम ही ने किन्हें, जातें रचा जिहाना।।
गगन मण्डल में बासा मेरा, नौवें कमल प्रमाना। ब्रह्म बीज हम ही से आया, बनी जो मूर्ति नाना।।
संखो लहर मेहर की उपजैं, बाजै अनहद बाजा। गुप्त भेद वाही को देंगे, शरण हमरी आजा।।
भव बंधन से लेऊँ छुड़ाई, निर्मल करूं शरीरा। सुर नर मुनि कोई भेद न पावै, पावै संत गंभीरा।।
बेद–कतेब में भेद ना पूरा, काल जाल जंजाला। कह कबीर सुनो गुरू रामानन्द, अमर ज्ञान उजाला।।

अब विश्व की उत्पत्ति (सृष्टि रचना) का ज्ञान कराता हूँ जो स्वयं परमेश्वर ने अपने द्वारा रचे जगत का ज्ञान बताया है। आगे पढ़ें अध्याय 3 में।

(अध्याय नं. 3)

संक्षिप्त सष्टि रचना

सबसे पहले सतपुरुष अकेले थे, कोई रचना नहीं थी। सर्वप्रथम परमेश्वर जी ने चार अविनाशी लोक की रचना वचन (शब्द) से की।

1. अनामी लोक जिसको अकह लोक भी कहते हैं।

2. अगम लोक 3. अलख लोक 4. सतलोक।

फिर परमात्मा ने चारों लोकों में चार रुप धारण किए। चार उपमात्मक नामों से प्रत्येक लोक में प्रसिद्ध हुए।

1. अनामी लोक में अनामी पुरुष या अकह पुरुष।

2. अगम लोक में अगम पुरुष।

3. अलख लोक में अलख पुरुष।

4. सतलोक में सतपुरुष उपमात्मक नाम रखे।

फिर चारों लोकों में परमात्मा ने वचन से ही एक-एक सिंहासन (तख्त) बनाया। प्रत्येक सिंहासन पर सम्राट के समान मुकुट आदि धारण करके विराजमान हो गए। फिर सतलोक में परमेश्वर ने अन्य रचना की। एक शब्द (वचन) से 16 द्वीपों तथा एक मानसरोवर की रचना की। पुनः 16 वचन से 16 पुत्रों की उत्पत्ति की। उनमें मुख्य भूमिका अचिन्त, तेज, सहजदास, जोगजीत, कूर्म, इच्छा, धैर्य और ज्ञानी की रही है।

अपने पुत्रों को सबक सिखाने के लिए कि समर्थ के बिना कोई कार्य सफल नहीं हो सकता। जिसका काम उसी को साजे और करे तो मूर्ख बाजे।

सतपुरुष ने अपने पुत्र अचिन्त से कहा कि आप अन्य रचना सतलोक में करें। मैंने कुछ शक्ति तेरे को प्रदान कर दी है। अचिन्त ने अपने वचन से अक्षर पुरुष की उत्पत्ति की। अक्षर पुरुष युवा उत्पन्न हुआ। मानसरोवर में स्नान करने गया, उसी जल पर तैरने लगा। कुछ देर में निंद्रा आ गई। सरोवर में गहरा नीचे चला गया। (सतलोक में अमर शरीर है, वहाँ पर शरीर श्वांसों पर निर्भर नहीं है।) बहुत समय तक अक्षर पुरुष जल से बाहर नहीं आया। अचिन्त आगे सष्टि नहीं कर सका, तब सतपुरुष (परम अक्षर पुरुष) ने मानसरोवर पर जाकर कुछ जल अपनी चुल्लु (हाथ) में लिया। उसका एक विशाल अण्डा वचन से बनाया तथा एक आत्मा वचन से उत्पन्न करके अण्डे में प्रवेश की और अण्डे को जल में छोड़ दिया। जल में अण्डा नीचे जाने लगा तो उसकी गड़गड़ाहट के शोर से अक्षर पुरुष की निंद्रा भंग हो गई। अक्षर पुरुष ने क्रोध से देखा कि किसने मुझे जगा दिया। क्रोध उस अण्डे पर गिरा तो अण्डा फूट गया। उसमें से एक युवा तेजोमय व्यक्ति निकला। उसका नाम क्षर पुरुष रखा। (आगे चलकर यही काल कहलाया) सतपुरुष ने दोनों से कहा कि आप जल से बाहर आओ। अक्षर पुरुष तुम निंद्रा में थे, तेरे को नींद से उठाने के लिए यह सब किया है। अक्षर पुरुष और क्षर पुरुष से सतपुरुष ने कहा कि आप दोनों अचिंत के लोक में रहो।

कुछ समय के पश्चात् (क्षर पुरुष जिसे ज्योति निरंजन काल भी कहते हैं) ने मन में विचार किया कि हम तीन तो एक लोक में रह रहे हैं। मेरे अन्य भाई एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। यह विचार कर

उसने अलग द्वीप प्राप्त करने के लिए तप प्रारम्भ किया। इससे पहले सतपुरुष जी ने अपने पुत्र अचिन्त से कहा कि आप सृष्टि रचना नहीं कर सकते। मैंने तुम्हें यह शिक्षा देने के लिए ही आप से कहा कि अन्य रचना कर। परन्तु अचिन्त आप तो अक्षर पुरुष को भी नहीं उठा सके। अब आगे कोई भी यह कोशिश न करना। सर्व रचना मैं अपनी शब्द शक्ति से रचूँगा।

सतपुरुष जी ने सतलोक में असँख्यों लोक रचे तथा प्रत्येक में अपने वचन (शब्द) से अन्य आत्माओं की उत्पत्ति की। ये सब लोक सतपुरुष के सिंहासन के इर्द-गिर्द थे। इनमें केवल नर हंस (सतलोक में मनुष्यों को हंस कहते हैं) ही रहते हैं और उनको परमेश्वर ने शक्ति दे रखी है कि वे अपना परिवार (नर हंस) वचन से उत्पन्न कर सकते है। वे केवल दो पुत्र ही उत्पन्न कर सकते हैं।

क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) ने तप करना शुरु किया। उसने 70 युग तक तप किया। सत्पुरुष जी ने क्षर पुरुष से पूछा कि आप तप किसलिए कर रहे हो? क्षर पुरुष ने कहा कि यह स्थान मेरे लिए कम है। मुझे अलग स्थान चाहिए। परमेश्वर (सतपुरुष) जी ने उसे 70 युग के तप के प्रतिफल में 21 ब्रह्माण्ड दे दिए जो सतलोक के बाहरी क्षेत्र में थे जैसे 21 प्लॉट मिल गए हों। ज्योति निरंजन (क्षर पुरुष) ने विचार किया कि इन ब्रह्माण्डों में कुछ रचना भी होनी चहिए। उसके लिए, फिर 70 युग तक तप किया। फिर सतपुरुष जी ने पूछा कि अब क्या चाहता है? क्षर पुरुष ने कहा कि सृष्टि रचना की सामग्री देने की कृपा करें। सतपुरुष जी ने उसको पाँच तत्व (जल, पृथ्वी, अग्नि, वायु तथा आकाश) तथा तीन गुण (रजगुण, सतगुण तथा तमगुण) दे दिये तथा कहा कि इनसे अपनी रचना कर।

क्षर पुरूष ने तीसरी बार फिर तप प्रारम्भ किया। जब 64 (चौंसठ) युग तप करते हो गए तो सत्य पुरूष जी ने पूछा कि आप और क्या चाहते हैं? क्षर पुरूष (ज्योति निरंजन) ने कहा कि मुझे कुछ आत्मा दे दो। मेरा अकेले का दिल नहीं लग रहा। क्षर पुरूष को आत्मा ऐसे मिली, आगे पढ़ें:-

''हम काल के लोक में कैसे आए ?''

जिस समय क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) एक पैर पर खड़ा होकर तप कर रहा था। तब हम सभी आत्माऐं इस क्षर पुरुष पर आकर्षित हो गए। जैसे जवान बच्चे अभिनेता व अभिनेत्री पर आसक्त हो जाते हैं। लेना एक न देने दो। व्यर्थ में चाहने लग जाते हैं। वे अपनी कमाई करने के लिए नाचते-कूदते हैं। युवा-बच्चे उन्हें देखकर अपना धन नष्ट करते हैं। ठीक इसी प्रकार हम अपने परमपिता सतपुरुष को छोड़कर काल पुरुष (क्षर पुरुष) को हृदय से चाहने लग गए थे। जो परमेश्वर हमें सर्व सुख सुविधा दे रहा था। उससे मुँह मोड़कर इस नकली ड्रामा करने वाले काल ब्रह्म को चाहने लगे। सत पुरुष जी ने बीच-बीच में बहुत बार आकाशवाणी की कि बच्चो तुम इस काल की क्रिया को मत देखो, मस्त रहो। हम ऊपर से तो सावधान हो गए, परन्तु अन्दर से चाहते रहे। परमेश्वर तो अन्तर्यामी है। इन्होंने जान लिया कि ये यहाँ रखने के योग्य नहीं रहे। काल पुरुष (क्षर पुरुष = ज्योति निरंजन) ने जब दो बार तप करके फल प्राप्त कर लिया तब उसने सोचा कि अब कुछ जीवात्मा भी मेरे साथ रहनी चाहिए। मेरा अकेले का दिल नहीं लगेगा। इसलिए जीवात्मा प्राप्ति के लिए तप करना शुरु किया। 64 युग तक तप करने के पश्चात् परमेश्वर जी ने पूछा कि ज्योति निरंजन अब किसलिए तप कर रहा है? क्षर पुरुष ने कहा कि कुछ आत्माएं प्रदान करो, मेरा अकेले का दिल नहीं लगता। सतपुरुष ने कहा कि तेरे तप के बदले में और ब्रह्माण्ड दे सकता हूं, परन्तु

अपनी आत्माएं नहीं दूँगा। ये मेरे शरीर से उत्पन्न हुई हैं। हाँ, यदि वे स्वयं जाना चाहते हैं तो वह जा सकते हैं। युवा कविर् (समर्थ कबीर) के वचन सुनकर ज्योति निरंजन हमारे पास आया। हम सभी हंस आत्मा पहले से ही उस पर आसक्त थे। हम उसे चारों तरफ से घेरकर खड़े हो गए। ज्योति निरंजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्माण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार के रमणीय स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सभी हंसों ने जो आज 21 ब्रह्माण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं। यदि पिता जी आज्ञा दें, तब क्षर पुरूष(काल), पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूँगा। क्षर पुरूष तथा परम अक्षर पुरूष (कविर्मितौजा) दोनों हम सभी हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंसात्मा ब्रह्म के साथ जाना चाहता हैं, हाथ ऊपर करके स्वीकृति दें। अपने पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्पश्चात् एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल(ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्माण्डों में फँसी हैं) हम सभी आत्माओं ने स्वीकृति दे दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है, मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके पास भेज दूँगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्माण्डों में चला गया। उस समय तक यह इक्कीस ब्रह्माण्ड सतलोक में ही थे।

तत्पश्चात् पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा सर्व आत्माओं को (जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी) उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि माया/प्रकृति देवी/दुर्गा) पड़ा तथा सत्यपुरूष ने कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है। जितने जीव ब्रह्म कहे आप उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कर्विदेव (कबीर साहेब) ने अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकृति को क्षर पुरूष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सब आत्माओं को प्रवेश कर दिया है, जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी। इसको वचन शक्ति प्रदान की है, आप जितने जीव चाहोगे प्रकृति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कहकर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया।

युवा होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकृति देवी के साथ अभद्र गतिविधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा शुरू मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह योग महापाप का कारण बनेगा। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकृति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (भग) प्रकृति को लगा दी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देखकर सूक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्ण ब्रह्म कविर् देव से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कर्विदेव(कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा

ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मृत्यु होते रहेंगे। इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरूष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्रणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा। आप दोनों को इक्कीस ब्रह्माण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इक्कीस ब्रह्माण्ड विमान की तरह चल पड़े। सहज दास के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह शंख कोस (एक कोस लगभग 3 कि.मी. का होता है) की दूरी पर आकर रूक गए।

विशेष विवरण :- अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सतपुरूष, अकालपुरूष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/पुरुष आदि। यह पूर्णब्रह्म असंख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरुष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरुष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है जो केवल इक्कीस ब्रह्माण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सृष्टि के एक ब्रह्माण्ड का परिचय दिया जाएगा जिसमें तीन और नाम आपके पढ़ने में आयेंगे:- ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

<u>ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद</u> - एक ब्रह्माण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्म (क्षर पुरूष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकृति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है, वह एक ब्रह्माण्ड में केवल तीन लोकों (पृथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकिय ब्रह्मा कहा है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप में रहता है, उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकिय ब्रह्मा कहा है। इसी ब्रह्म (काल) को सदाशिव, महाशिव, महाविष्णु भी कहा है।

श्री विष्णु पुराण में प्रमाण :- चतुर्थ अंश अध्याय 1 पृष्ठ 230-231 पर श्री ब्रह्मा जी ने कहा:- जिस अजन्मा सर्वमय विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते। (श्लोक 83)

जो मेरा रूप धारण कर संसार की रचना करता है, स्थिति के समय जो पुरूष रूप है तथा जो रूद्र रूप से विश्व का ग्रास कर जाता है, अनन्त रूप से सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है।(श्लोक 86)

(देखें एक ब्रह्माण्ड का लघु चित्र)

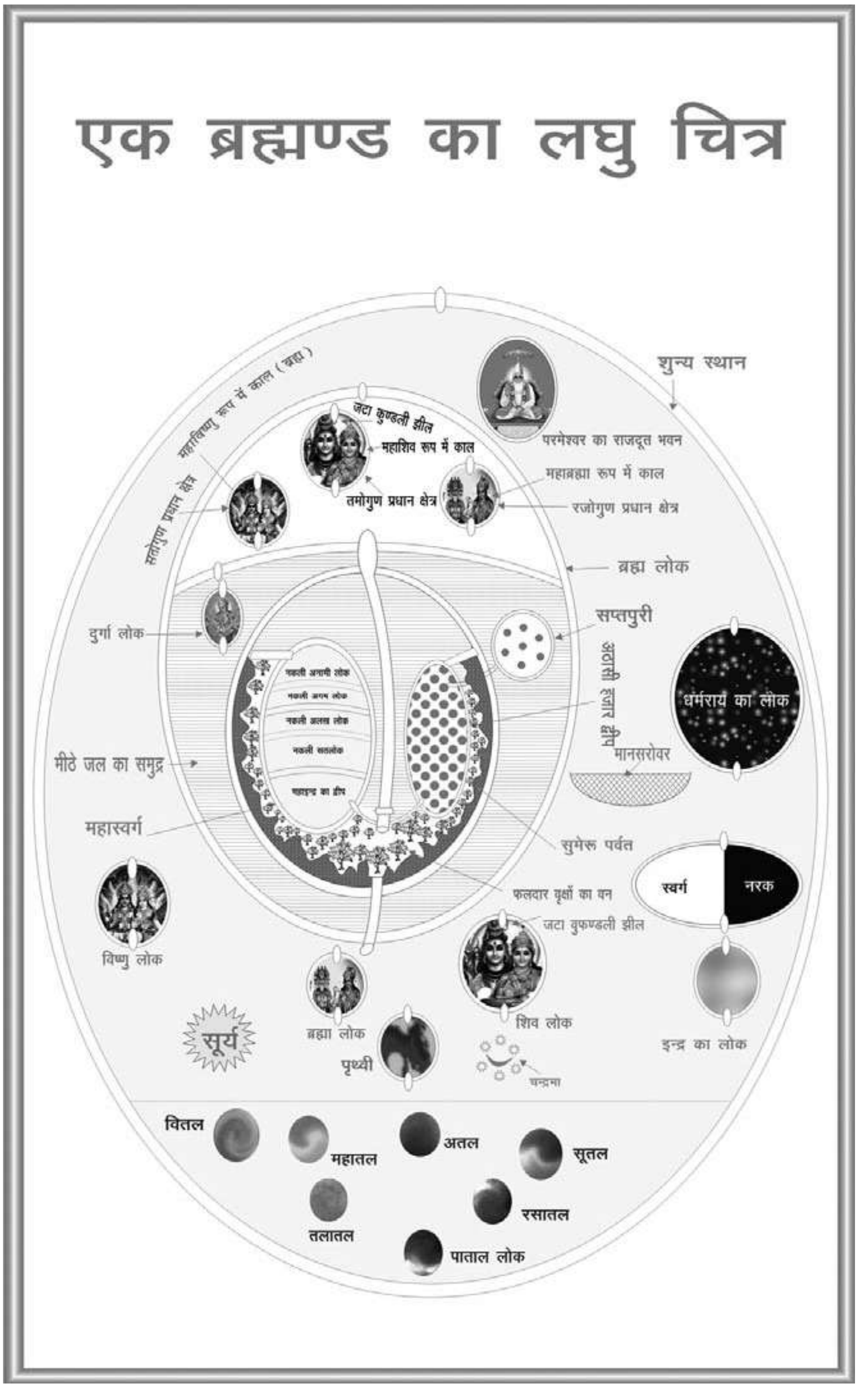

"श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति"

काल(ब्रह्म) ने प्रकृति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगाड़ेगा? मनमानी करूँगा। प्रकृति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो क्योंकि उसी पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आपकी (ब्रह्म) की अण्डे से उत्पत्ति हुई तथा बाद मे मेरी उत्पत्ति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ। मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए। इन पवित्र नातों में बिगाड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी आप कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी, मिल गई। मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मैं मनमानी करूँगा। यह कहकर काल पुरूष (क्षर पुरूष) ने प्रकृति के साथ जबरदस्ती शादी की तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त विष्णु जी तथा तमगुण युक्त शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की। जवान होने तक तीनों पुत्रों को दुर्गा के द्वारा अचेत करवा देता है, फिर युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत करके इकट्ठे कर देता है। तत्पश्चात् प्रकृति (दुर्गा) ने इन तीनों का विवाह कर दिया जाता है। काल ब्रह्म के आदेश से प्रकृति देवी ने तीनों एक ब्रह्माण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पृथ्वी लोक, तथा पाताल लोक) में एक-एक विभाग के मंत्री पद को संभालता है। एक ब्रह्माण्ड में एक ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है, वह स्वतः ही रजोगुणी बन जाता है। दूसरा स्थान सतोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरूष स्वयं महाविष्णु रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रखकर जो पुत्र उत्पन्न करता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सतोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र उत्पन्न होता है, उसका नाम शिव रख देते हैं तथा तमोगुण युक्त कर देते हैं। (प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, विध्वेश्वर संहिता के पृष्ठ 24-26 पर जिसमें ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र तथा महेश्वर से अन्य सदाशिव है तथा रूद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7,9 पृष्ठ नं०. 100 से, 105 तथा 110 पर अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित तथा पवित्र श्रीमद् देवी महापुराण तीसरा स्कन्ध पृष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रेस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवाद कर्ता है श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी) फिर इन्हीं को धोखे में रखकर काल ब्रह्म अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रखकर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार (क्योंकि काल पुरूष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकालकर खाना होता है, उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में एक तप्तशिला है जो स्वतः गर्म रहती है, उस पर गर्म करके मैल पिघलाकर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर प्रदान करता है) श्री शिव जी द्वारा करवाता है।

जैसे किसी मकान में तीन कमरे बने हों। एक कमरे में अश्लील चित्र लगे हों। उस कमरे में जाते ही मन में वैसे ही मलीन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कमरे में साधु-सन्तों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार, प्रभु का चिंतन ही बना रहता है। तीसरे कमरे में देशभक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म(काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना की हुई है।

(देखें ब्रह्म लोक का लघु चित्र व ज्योति निंरजन (काल) ब्रह्म, के लोक 21 ब्रह्माण्ड का लघु चित्र इसी पुस्तक के पृष्ठ 396 व 397 पर)

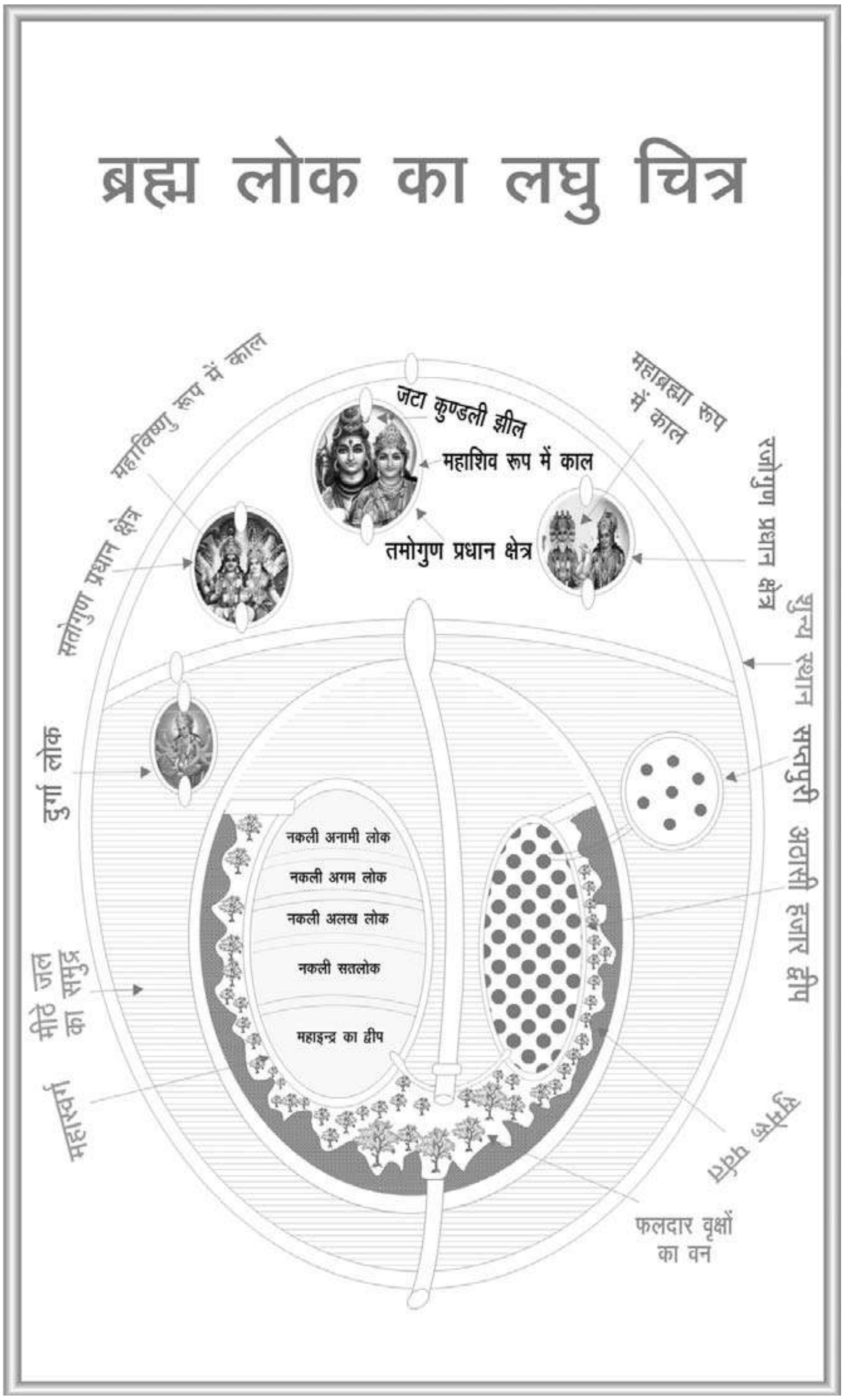
ब्रह्म लोक का लघु चित्र
महाविष्णु रूप में काल
जटा कुण्डली झील
महाशिव रूप में काल
महाब्रह्मा रूप में काल
रजोगुण प्रधान क्षेत्र
तमोगुण प्रधान क्षेत्र
सतोगुण प्रधान क्षेत्र
शुन्य स्थान
सप्तपुरी
अठासी हजार द्वीप
दुर्गा लोक
मीठे जल का समुद्र
महास्वर्ग
नकली अनामी लोक
नकली अगम लोक
नकली अलख लोक
नकली सतलोक
महाइन्द्र का द्वीप
सुमेरु पर्वत
फलदार वृक्षों का वन

ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र

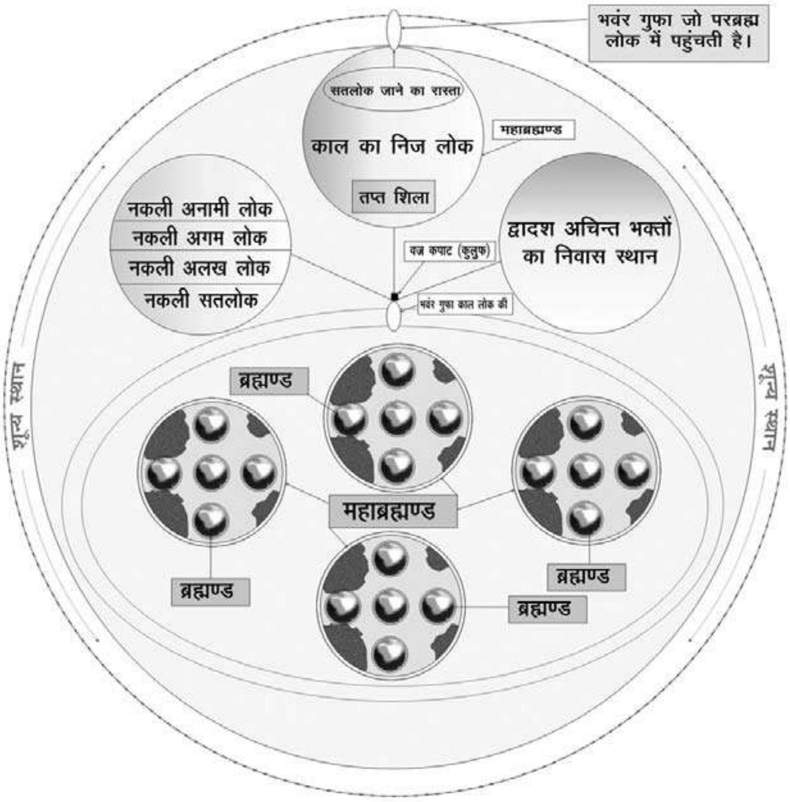

''सम्पूर्ण सृष्टि रचना''

(सूक्ष्मवेद से निष्कर्ष रूप सृष्टि रचना का वर्णन)

प्रभु प्रेमी आत्माऐं प्रथम बार निम्न सृष्टि की रचना को पढेंगे तो ऐसे लगेगा जैसे दन्त कथा हो, परन्तु सर्व पवित्र सद्ग्रन्थों के प्रमाणों को पढ़कर दाँतों तले उँगली दबाऐंगे कि यह वास्तविक अमृत ज्ञान कहाँ छुपा था? कृप्या धैर्य के साथ पढ़ते पढ़ें तथा इस अमृत ज्ञान को सुरक्षित रखें। आप की एक सौ एक पीढ़ी तक काम आएगा। पवित्रात्माऐं कृप्या सत्यनारायण (अविनाशी प्रभु/सतपुरुष) द्वारा रची सृष्टि रचना का वास्तविक ज्ञान पढ़ें।

1. पूर्ण ब्रह्म :- इस सृष्टि रचना में सतपुरुष-सतलोक का स्वामी (प्रभु), अलख पुरुष-अलख लोक का स्वामी (प्रभु), अगम पुरुष-अगम लोक का स्वामी (प्रभु) तथा अनामी पुरुष-अनामी अकह लोक का स्वामी (प्रभु) तो एक ही पूर्ण ब्रह्म है, जो वास्तव में अविनाशी प्रभु है जो भिन्न-२ रूप धारण करके अपने चारों लोकों में रहता है। जिसके अन्तर्गत असंख्य ब्रह्माण्ड आते हैं।

2. परब्रह्म :- यह केवल सात संख ब्रह्माण्ड का स्वामी (प्रभु) है। यह अक्षर पुरुष भी कहलाता है। परन्तु यह तथा इसके ब्रह्माण्ड भी वास्तव में अविनाशी नहीं है।

3. ब्रह्म :- यह केवल इक्कीस ब्रह्माण्ड का स्वामी (प्रभु) है। इसे क्षर पुरुष, ज्योति निरंजन, काल आदि उपमा से जाना जाता है। यह तथा इसके सर्व ब्रह्माण्ड नाशवान हैं।

(उपरोक्त तीनों पुरूषों (प्रभुओं) का प्रमाण पवित्र श्री मद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी है।)

4. ब्रह्मा :- ब्रह्मा इसी ब्रह्म का ज्येष्ठ पुत्र है, विष्णु मध्य वाला पुत्र है तथा शिव अंतिम तीसरा पुत्र है। ये तीनों ब्रह्म के पुत्र केवल एक ब्रह्माण्ड में एक विभाग (गुण) के स्वामी (प्रभु) हैं तथा नाशवान हैं। विस्तृत विवरण के लिए कृप्या पढ़ें निम्न लिखित सृष्टि रचना :-

{कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने सुक्ष्म वेद अर्थात् कबिर्बाणी में अपने द्वारा रची सृष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया है जो निम्नलिखित है}

सर्व प्रथम केवल एक स्थान 'अनामी (अनामय) लोक' था। जिसे अकह लोक भी कहा जाता है, पूर्ण परमात्मा उस अनामी लोक में अकेला रहता था। उस परमात्मा का वास्तविक नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है। सभी आत्माऐं उस पूर्ण धनी के शरीर में समाई हुई थी। इसी कविर्देव का उपमात्मक (पदवी का) नाम अनामी पुरुष है (पुरुष का अर्थ प्रभु होता है। प्रभु ने मनुष्य को अपने ही स्वरूप में बनाया है, इसलिए मानव का नाम भी पुरुष ही पड़ा है।) अनामी पुरूष के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश संख सूर्यों की रोशनी से भी अधिक है।

विशेष :- जैसे किसी देश के आदरणीय प्रधान मंत्री जी का शरीर का नाम तो अन्य होता है तथा पद का उपमात्मक (पदवी का) नाम प्रधानमंत्री होता है। कई बार प्रधानमंत्री जी अपने पास कई विभाग भी रख लेते हैं। तब जिस भी विभाग के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करते हैं तो उस समय उसी पद को लिखते हैं। जैसे गृह मंत्रालय के दस्तावेजों पर हस्ताक्षर करेगें तो अपने को गृह मंत्री लिखेगें। वहाँ उसी व्यक्ति के हस्ताक्षर की शक्ति कम होती है। इसी प्रकार कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की रोशनी में अंतर भिन्न-२ लोकों में होता जाता है।

परमेश्वर कबीर साहेब के असंख्य ब्रह्मण्डों का लघु चित्र

अनामी लोक : इस लोक में कबीर साहेब अनामी पुरूष रूप में रहते हैं। यहाँ अकेले हैं।

अगम लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अगम पुरूष रूप में रहते हैं।

अलख लोक : इस लोक में भी कबीर साहेब अलख पुरूष रूप में रहते हैं।

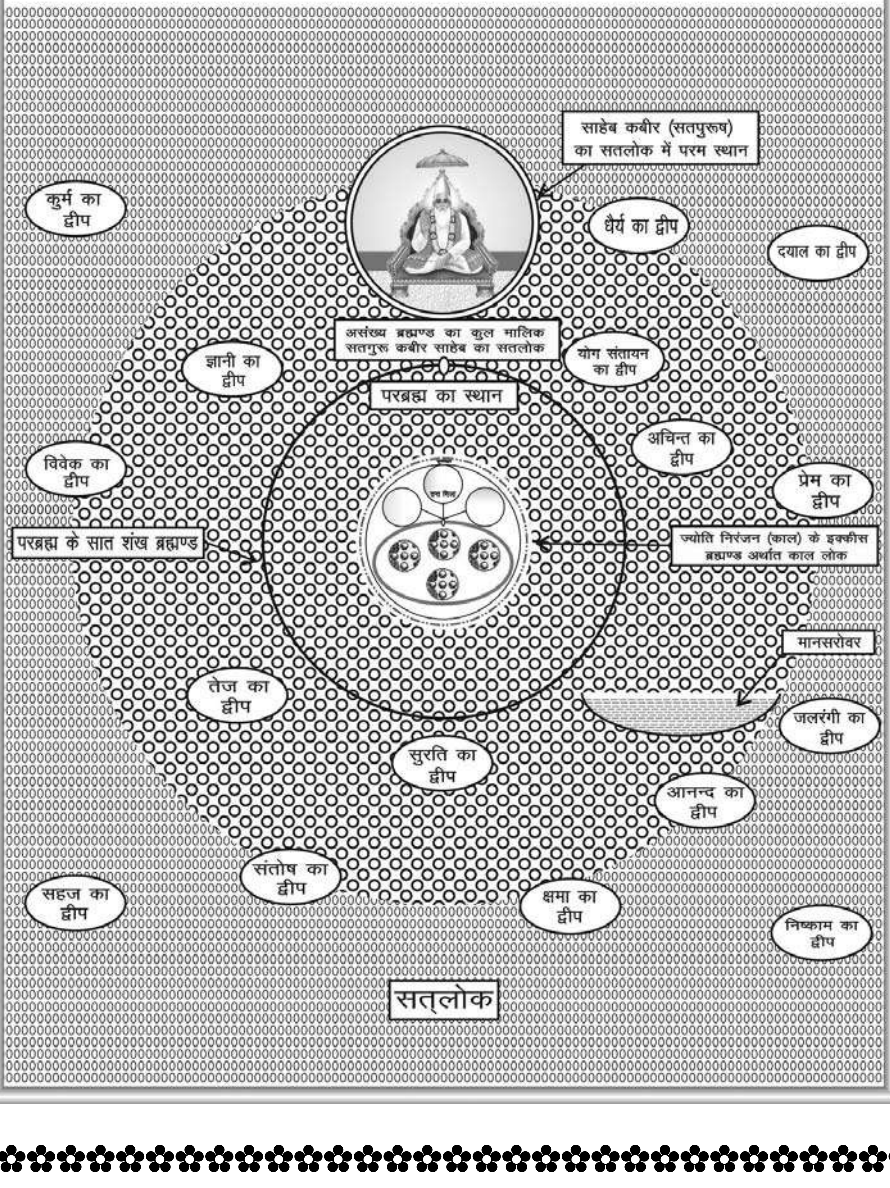

ठीक इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने नीचे के तीन और लोकों (अगमलोक, अलख लोक, सतलोक) की रचना शब्द(वचन) से की। यही पूर्णब्रह्म परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही अगम लोक में प्रकट हुआ तथा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अगम लोक का भी स्वामी है तथा वहाँ इनका उपमात्मक (पदवी का) नाम अगम पुरुष अर्थात् अगम प्रभु है। इसी अगम प्रभु का मानव सदृश शरीर बहुत तेजोमय है जिसके एक रोम (शरीर के बाल) की रोशनी खरब सूर्य की रोशनी से भी अधिक है।

यह पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबिर देव=कबीर परमेश्वर) अलख लोक में प्रकट हुआ तथा स्वयं ही अलख लोक का भी स्वामी है तथा उपमात्मक (पदवी का) नाम अलख पुरुष भी इसी परमेश्वर का है तथा इस पूर्ण प्रभु का मानव सदृश शरीर तेजोमय (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित है। एक रोम (शरीर के बाल) की रोशनी अरब सूर्यों के प्रकाश से भी ज्यादा है।

यही पूर्ण प्रभु सतलोक में प्रकट हुआ तथा सतलोक का भी अधिपति यही है। इसलिए इसी का उपमात्मक (पदवी का) नाम सतपुरुष (अविनाशी प्रभु)है। इसी का नाम अकालमूर्ति - शब्द स्वरूपी राम - पूर्ण ब्रह्म - परम अक्षर ब्रह्म आदि हैं। इसी सतपुरुष कविर्देव (कबीर प्रभु) का मानव सदृश शरीर तेजोमय है। जिसके एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ सूर्यों तथा इतने ही चन्द्रमाओं के प्रकाश से भी अधिक है।

इस कविर्देव (कबीर प्रभु) ने सतपुरुष रूप में प्रकट होकर सतलोक में विराजमान होकर प्रथम सतलोक में अन्य रचना की।

एक शब्द (वचन) से सोलह द्वीपों की रचना की। फिर सोलह शब्दों से सोलह पुत्रों की उत्पत्ति की। एक मानसरोवर की रचना की जिसमें अमृत भरा। सोलह पुत्रों के नाम हैं :-(1) ''कूर्म'', (2)''ज्ञानी'', (3) ''विवेक'', (4) ''तेज'', (5) ''सहज'', (6) ''सन्तोष'', (7)''सुरति'', (8) ''आनन्द'', (9) ''क्षमा'', (10) ''निष्काम'', (11) 'जलरंगी' (12)''अचिन्त'', (13) ''प्रेम'', (14) ''दयाल'', (15) ''धैर्य'' (16) ''योग संतायन'' अर्थात् ''योगजीत''।

सतपुरुष कविर्देव ने अपने पुत्र अचिन्त को सत्यलोक की अन्य रचना का भार सौंपा तथा शक्ति प्रदान की। अचिन्त ने अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की शब्द से उत्पत्ति की तथा कहा कि मेरी मदद करना। अक्षर पुरुष स्नान करने मानसरोवर पर गया, वहाँ आनन्द आया तथा सो गया। लम्बे समय तक बाहर नहीं आया। तब अचिन्त की प्रार्थना पर अक्षर पुरुष को नींद से जगाने के लिए कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ने उसी मानसरोवर से कुछ अमृत जल लेकर एक अण्डा बनाया तथा उस अण्डे में एक आत्मा प्रवेश की तथा अण्डे को मानसरोवर के अमृत जल में छोड़ा। अण्डे की गड़गड़ाहट से अक्षर पुरुष की निंद्रा भंग हुई। उसने अण्डे को क्रोध से देखा जिस कारण से अण्डे के दो भाग हो गए। उसमें से ज्योति निंरजन (क्षर पुरुष) निकला जो आगे चलकर 'काल' कहलाया। इसका वास्तविक नाम ''कैल'' है। तब सतपुरुष (कविर्देव) ने आकाशवाणी की कि आप दोनों बाहर आओ तथा अचिंत के द्वीप में रहो। आज्ञा पाकर अक्षर पुरुष तथा क्षर पुरुष (कैल) दोनों अचिंत के द्वीप में रहने लगे (बच्चों की नालायकी उन्हीं को दिखाई कि कहीं फिर प्रभुता की तड़फ न बन जाए, क्योंकि समर्थ बिन कार्य सफल नहीं होता) फिर पूर्ण धनी कविर्देव ने सर्व रचना स्वयं की। अपनी शब्द शक्ति से एक राजेश्वरी (राष्ट्री) शक्ति उत्पन्न की, जिससे सर्व ब्रह्माण्डों को स्थापित किया। इसी को पराशक्ति परानन्दनी भी कहते हैं। पूर्ण ब्रह्म ने सर्व आत्माओं को अपने ही अन्दर से अपनी वचन

शक्ति से अपने मानव शरीर सदृश उत्पन्न किया। प्रत्येक हंस आत्मा का परमात्मा जैसा ही शरीर रचा जिसका तेज 16 (सोलह) सूर्यों जैसा मानव सदृश ही है। परन्तु परमेश्वर के शरीर के एक रोम (शरीर के बाल) का प्रकाश करोड़ों सूर्यों से भी ज्यादा है। बहुत समय उपरान्त क्षर पुरुष (ज्योति निरंजन) ने सोचा कि हम तीनों (अचिन्त - अक्षर पुरुष - क्षर पुरुष) एक द्वीप में रह रहे हैं तथा अन्य एक-एक द्वीप में रह रहे हैं। मैं भी साधना करके अलग द्वीप प्राप्त करूँगा। उसने ऐसा विचार करके एक पैर पर खड़ा होकर सत्तर (70) युग तक तप किया।

"आत्माऐं काल के जाल में कैसे फँसी?"

विशेष :- जब ब्रह्म (ज्योति निरंजन) तप कर रहा था हम सभी आत्माऐं, जो आज ज्योति निरंजन के इक्कीस ब्रह्माण्डों में रहते हैं इसकी साधना पर आसक्त हो गए तथा हृदय से इसे चाहने लगे। अपने सुखदाई प्रभु सत्य पुरुष से विमुख हो गए। जिस कारण से पतिव्रता पद से गिर गए। पूर्ण प्रभु के बार-बार सावधान करने पर भी हमारी आसक्ति क्षर पुरुष से नहीं हटी। {यही प्रभाव आज भी काल सृष्टि में विद्यमान है। जैसे नौजवान बच्चे फिल्म स्टारों (अभिनेताओं तथा अभिनेत्रियों) की बनावटी अदाओं तथा अपने रोजगार उद्देश्य से कर रहे भूमिका पर अति आसक्त हो जाते हैं, रोकने से नहीं रूकते। यदि कोई अभिनेता या अभिनेत्री निकटवर्ती शहर में आ जाए तो देखें उन नादान बच्चों की भीड़ केवल दर्शन करने के लिए बहु संख्या में एकत्रित हो जाती हैं। 'लेना एक न देने दो' रोजी रोटी अभिनेता कमा रहे हैं, नौजवान बच्चे लुट रहे हैं। माता-पिता कितना ही समझाऐं किन्तु बच्चे नहीं मानते। कहीं न कहीं, कभी न कभी, लुक-छिप कर जाते ही रहते हैं।}

पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) ने क्षर पुरुष से पूछा कि बोलो क्या चाहते हो? उसने कहा कि पिता जी यह स्थान मेरे लिए कम है, मुझे अलग से द्वीप प्रदान करने की कृपा करें। हक्का कबीर (सत् कबीर) ने उसे 21 (इक्कीस) ब्रह्माण्ड प्रदान कर दिए। कुछ समय उपरान्त ज्योति निरंजन ने सोचा इस में कुछ रचना करनी चाहिए। खाली ब्रह्माण्ड(प्लाट) किस काम के। यह विचार कर 70 युग तप करके पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर प्रभु) से रचना सामग्री की याचना की। सतपुरुष ने उसे तीन गुण तथा पाँच तत्व प्रदान कर दिए, जिससे ब्रह्म (ज्योति निरंजन) ने अपने ब्रह्माण्डों में कुछ रचना की। फिर सोचा कि इसमें जीव भी होने चाहिए, अकेले का दिल नहीं लगता। यह विचार करके 64 (चौसठ) युग तक फिर तप किया। पूर्ण परमात्मा कविर् देव के पूछने पर बताया कि मुझे कुछ आत्मा दे दो, मेरा अकेले का दिल नहीं लग रहा। तब सतपुरुष कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि ब्रह्म तेरे तप के प्रतिफल में मैं तुझे और ब्रह्माण्ड दे सकता हूँ, परन्तु मेरी आत्माओं को किसी भी जप-तप साधना के फल रूप में नहीं दे सकता। हाँ, यदि कोई स्वेच्छा से तेरे साथ जाना चाहे तो वह जा सकता है। युवा कविर् (समर्थ कबीर) के वचन सुन कर ज्योति निरंजन हमारे पास आया। हम सभी हंस आत्मा पहले से ही उस पर आसक्त थे। हम उसे चारों तरफ से घेर कर खड़े हो गए। ज्योति निंरजन ने कहा कि मैंने पिता जी से अलग 21 ब्रह्माण्ड प्राप्त किए हैं। वहाँ नाना प्रकार के रमणीय स्थल बनाए हैं। क्या आप मेरे साथ चलोगे? हम सभी हंसों ने जो आज 21 ब्रह्माण्डों में परेशान हैं, कहा कि हम तैयार हैं यदि पिता जी आज्ञा दें तब क्षर पुरुष पूर्ण ब्रह्म महान् कविर् (समर्थ कबीर प्रभु) के पास गया तथा सर्व वार्ता कही। तब कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) ने कहा कि मेरे सामने स्वीकृति देने वाले को आज्ञा दूंगा। क्षर पुरुष तथा परम अक्षर पुरुष

(कविरमितौजा=कविर अमित औजा यानि जिसकी शक्ति का कोई वार नहीं, वह कबीर) दोनों हम सभी हंसात्माओं के पास आए। सत् कविर्देव ने कहा कि जो हंस आत्मा ब्रह्म के साथ जाना चाहता है हाथ ऊपर करके स्वीकृति दे। अपने पिता के सामने किसी की हिम्मत नहीं हुई। किसी ने स्वीकृति नहीं दी। बहुत समय तक सन्नाटा छाया रहा। तत्पश्चात् एक हंस आत्मा ने साहस किया तथा कहा कि पिता जी मैं जाना चाहता हूँ। फिर तो उसकी देखा-देखी (जो आज काल (ब्रह्म) के इक्कीस ब्रह्माण्डों में फंसी हैं) हम सभी आत्माओं ने स्वीकृति दे दी। परमेश्वर कबीर जी ने ज्योति निरंजन से कहा कि आप अपने स्थान पर जाओ। जिन्होंने तेरे साथ जाने की स्वीकृति दी है मैं उन सर्व हंस आत्माओं को आपके पास भेज दूंगा। ज्योति निरंजन अपने 21 ब्रह्माण्डों में चला गया। उस समय तक यह इक्कीस ब्रह्माण्ड सतलोक में ही थे।

तत्पश्चात् पूर्ण ब्रह्म ने सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को लड़की का रूप दिया परन्तु स्त्री इन्द्री नहीं रची तथा सर्व आत्माओं को (जिन्होंने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) के साथ जाने की सहमति दी थी) उस लड़की के शरीर में प्रवेश कर दिया तथा उसका नाम आष्ट्रा (आदि माया/ प्रकृति देवी/ दुर्गा) पड़ा तथा सत्य पुरूष ने कहा कि पुत्री मैंने तेरे को शब्द शक्ति प्रदान कर दी है जितने जीव ब्रह्म कहे आप उत्पन्न कर देना। पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर साहेब) अपने पुत्र सहज दास के द्वारा प्रकृति को क्षर पुरुष के पास भिजवा दिया। सहज दास जी ने ज्योति निरंजन को बताया कि पिता जी ने इस बहन के शरीर में उन सर्व आत्माओं को प्रवेश कर दिया है जिन्होंने आपके साथ जाने की सहमति व्यक्त की थी तथा इसको पिता जी ने वचन शक्ति प्रदान की है, आप जितने जीव चाहोगे प्रकृति अपने शब्द से उत्पन्न कर देगी। यह कह कर सहजदास वापिस अपने द्वीप में आ गया।

युवा होने के कारण लड़की का रंग-रूप निखरा हुआ था। ब्रह्म के अन्दर विषय-वासना उत्पन्न हो गई तथा प्रकृति देवी के साथ अभद्र गति विधि प्रारम्भ की। तब दुर्गा ने कहा कि ज्योति निरंजन मेरे पास पिता जी की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है। आप जितने प्राणी कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूँगी। आप मैथुन परम्परा शुरु मत करो। आप भी उसी पिता के शब्द से अण्डे से उत्पन्न हुए हो तथा मैं भी उसी परमपिता के वचन से ही बाद में उत्पन्न हुई हूँ। आप मेरे बड़े भाई हो, बहन-भाई का यह योग महापाप का कारण बनेगा। परन्तु ज्योति निरंजन ने प्रकृति देवी की एक भी प्रार्थना नहीं सुनी तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (भग) प्रकृति को लगा दी तथा बलात्कार करने की ठानी। उसी समय दुर्गा ने अपनी इज्जत रक्षा के लिए कोई और चारा न देख सुक्ष्म रूप बनाया तथा ज्योति निरंजन के खुले मुख के द्वारा पेट में प्रवेश करके पूर्णब्रह्म कविर् देव से अपनी रक्षा के लिए याचना की। उसी समय कविर्देव (कविर् देव) अपने पुत्र योग संतायन अर्थात् जोगजीत का रूप बनाकर वहाँ प्रकट हुए तथा कन्या को ब्रह्म के उदर से बाहर निकाला तथा कहा कि ज्योति निरंजन आज से तेरा नाम 'काल' होगा। तेरे जन्म-मृत्यु होते रहेंगे। इसीलिए तेरा नाम क्षर पुरुष होगा तथा एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को प्रतिदिन खाया करेगा व सवा लाख उत्पन्न किया करेगा। आप दोनों को इक्कीस ब्रह्माण्ड सहित निष्कासित किया जाता है। इतना कहते ही इक्कीस ब्रह्माण्ड विमान की तरह चल पड़े। सहज दास के द्वीप के पास से होते हुए सतलोक से सोलह संख कोस (एक कोस लगभग 3 कि. मी. का होता है) की दूरी पर आकर रूक गए।

एक ब्रह्मण्ड का लघु चित्र

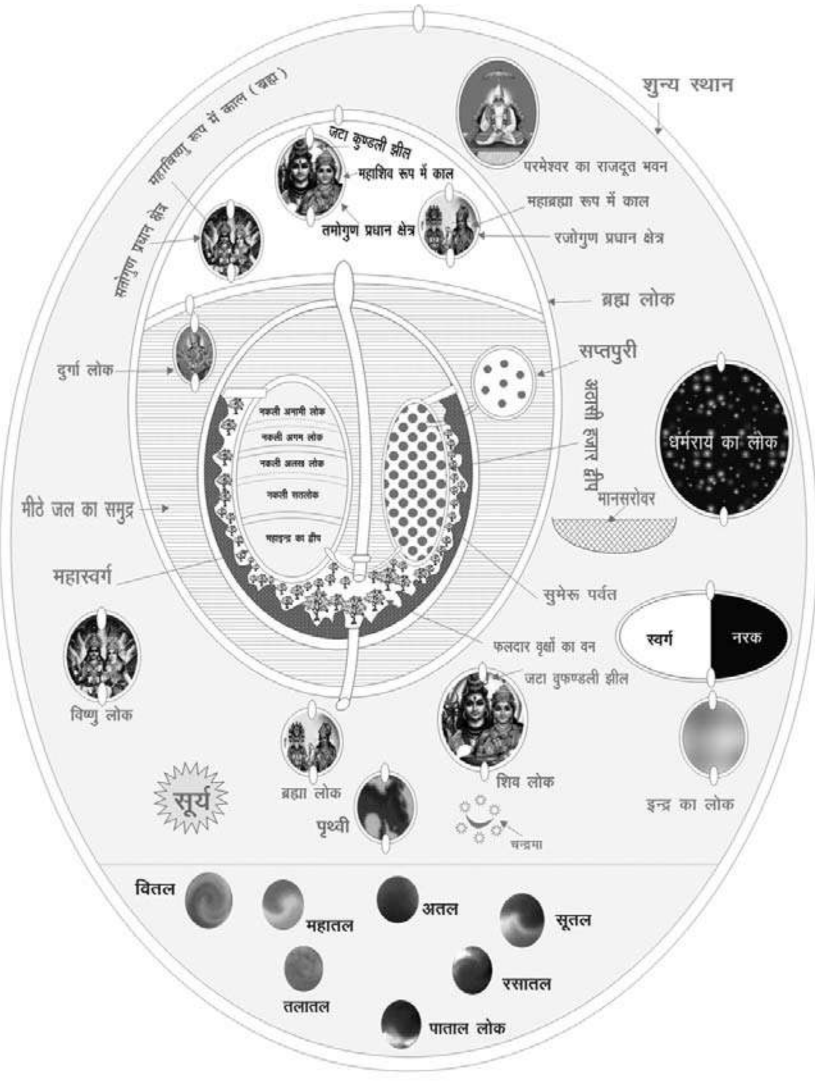

विशेष विवरण - अब तक तीन शक्तियों का विवरण आया है।

1. पूर्णब्रह्म जिसे अन्य उपमात्मक नामों से भी जाना जाता है, जैसे सतपुरुष, अकालपुरुष, शब्द स्वरूपी राम, परम अक्षर ब्रह्म/पुरुष आदि। यह पूर्णब्रह्म असंख्य ब्रह्माण्डों का स्वामी है तथा वास्तव में अविनाशी है।

2. परब्रह्म जिसे अक्षर पुरुष भी कहा जाता है। यह वास्तव में अविनाशी नहीं है। यह सात शंख ब्रह्माण्डों का स्वामी है।

3. ब्रह्म जिसे ज्योति निरंजन, काल, कैल, क्षर पुरुष तथा धर्मराय आदि नामों से जाना जाता है, जो केवल इक्कीस ब्रह्माण्ड का स्वामी है। अब आगे इसी ब्रह्म (काल) की सष्टि के एक ब्रह्माण्ड का परिचय दिया जाएगा, जिसमें तीन और नाम आपके पढ़ने में आयेंगे - ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव।

<u>ब्रह्म तथा ब्रह्मा में भेद</u> - एक ब्रह्माण्ड में बने सर्वोपरि स्थान पर ब्रह्म (क्षर पुरुष) स्वयं तीन गुप्त स्थानों की रचना करके ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी प्रकति (दुर्गा) के सहयोग से तीन पुत्रों की उत्पत्ति करता है। उनके नाम भी ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव ही रखता है। जो ब्रह्म का पुत्र ब्रह्मा है वह एक ब्रह्माण्ड में केवल तीन लोकों (पथ्वी लोक, स्वर्ग लोक तथा पाताल लोक) में एक रजोगुण विभाग का मंत्री (स्वामी) है। इसे त्रिलोकीय ब्रह्मा कहा है तथा ब्रह्म जो ब्रह्मलोक में ब्रह्मा रूप में रहता है उसे महाब्रह्मा व ब्रह्मलोकिय ब्रह्मा कहा है। इसी ब्रह्म (काल) को सदाशिव, महाशिव, महाविष्णु भी कहा है।

श्री विष्णु पुराण में प्रमाण :- चतुर्थ अंश अध्याय 1 पष्ठ 230-231 पर श्री ब्रह्मा जी ने कहा :- जिस अजन्मा, सर्वमय विधाता परमेश्वर का आदि, मध्य, अन्त, स्वरूप, स्वभाव और सार हम नहीं जान पाते (श्लोक 83)

जो मेरा रूप धारण कर संसार की रचना करता है, स्थिति के समय जो पुरूष रूप है तथा जो रूद्र रूप से विश्व का ग्रास कर जाता है, अनन्त रूप से सम्पूर्ण जगत् को धारण करता है।(श्लोक 86)

"श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी व श्री शिव जी की उत्पत्ति"

काल (ब्रह्म) ने प्रकति (दुर्गा) से कहा कि अब मेरा कौन क्या बिगाडेगा? मन मानी करूंगा प्रकति ने फिर प्रार्थना की कि आप कुछ शर्म करो। प्रथम तो आप मेरे बड़े भाई हो, क्योंकि उसी पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) की वचन शक्ति से आप की (ब्रह्म की) अण्डे से उत्पत्ति हुई तथा बाद में मेरी उत्पत्ति उसी परमेश्वर के वचन से हुई है। दूसरे मैं आपके पेट से बाहर निकली हूँ, मैं आपकी बेटी हुई तथा आप मेरे पिता हुए। इन पवित्र नातों में बिगाड़ करना महापाप होगा। मेरे पास पिता की प्रदान की हुई शब्द शक्ति है, जितने प्राणी आप कहोगे मैं वचन से उत्पन्न कर दूंगी। ज्योति निरंजन ने दुर्गा की एक भी विनय नहीं सुनी तथा कहा कि मुझे जो सजा मिलनी थी मिल गई, मुझे सतलोक से निष्कासित कर दिया। अब मनमानी करूंगा। यह कह कर काल पुरूष (क्षर पुरूष) ने प्रकति के साथ जबरदस्ती शादी की तथा तीन पुत्रों (रजगुण युक्त - ब्रह्मा जी, सतगुण युक्त - विष्णु जी तथा तमगुण युक्त - शिव शंकर जी) की उत्पत्ति की। जवान होने तक तीनों पुत्रों को दुर्गा के द्वारा अचेत करवा देता है, फिर युवा होने पर श्री ब्रह्मा जी को कमल के फूल पर, श्री विष्णु जी को शेष नाग की शैय्या पर तथा श्री शिव जी को कैलाश पर्वत पर सचेत करके इक्टठे कर देता है। तत्पश्चात् प्रकति (दुर्गा) ने इन तीनों का विवाह कर दिया जाता है। काल ब्रह्म के आदेश से

प्रकति देवी ने तीनों एक ब्रह्माण्ड में तीन लोकों (स्वर्ग लोक, पथ्वी लोक तथा पाताल लोक) में एक-एक विभाग के मंत्री (प्रभु) नियुक्त कर देता है। जैसे श्री ब्रह्मा जी को रजोगुण विभाग का तथा विष्णु जी को सत्तोगुण विभाग का तथा श्री शिव शंकर जी को तमोगुण विभाग का प्रभु बनाया तथा काल ब्रह्म स्वयं गुप्त (महाब्रह्मा - महाविष्णु - महाशिव) रूप से मुख्य मंत्री पद को संभालता है। एक ब्रह्माण्ड में एक ब्रह्मलोक की रचना की है। उसी में तीन गुप्त स्थान बनाए हैं। एक रजोगुण प्रधान स्थान है जहाँ पर यह ब्रह्म (काल) स्वयं महाब्रह्मा (मुख्यमंत्री) रूप में रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महासावित्री रूप में रखता है। इन दोनों के संयोग से जो पुत्र इस स्थान पर उत्पन्न होता है वह स्वतः ही रजोगुणी बन जाता है। दूसरा स्थान सतोगुण प्रधान स्थान बनाया है। वहाँ पर यह क्षर पुरुष स्वयं महाविष्णु रूप बना कर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महालक्ष्मी रूप में रख कर जो पुत्र उत्पन्न करता है उसका नाम विष्णु रखता है, वह बालक सतोगुण युक्त होता है तथा तीसरा इसी काल ने वहीं पर एक तमोगुण प्रधान क्षेत्र बनाया है। उसमें यह स्वयं सदाशिव रूप बनाकर रहता है तथा अपनी पत्नी दुर्गा को महापार्वती रूप में रखता है। इन दोनों के पति-पत्नी व्यवहार से जो पुत्र उत्पन्न होता है उसका नाम शिव रख देते हैं तथा तमोगुण युक्त कर देते हैं। (प्रमाण के लिए देखें पवित्र श्री शिव महापुराण, विद्यवेश्वर संहिता पष्ठ 24-26 जिस में ब्रह्मा, विष्णु, रूद्र तथा महेश्वर से अन्य सदाशिव है तथा रूद्र संहिता अध्याय 6 तथा 7, 9 पष्ठ नं. 100 से, 105 तथा 110 पर अनुवाद कर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित तथा पवित्र श्रीमद् देवी महापुराण तीसरा स्कन्ध पष्ठ नं. 114 से 123 तक, गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, जिसके अनुवाद कर्ता हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी) फिर इन्हीं को धोखे में रख कर काल ब्रह्म अपने खाने के लिए जीवों की उत्पत्ति श्री ब्रह्मा जी द्वारा तथा स्थिति (एक-दूसरे को मोह-ममता में रख कर काल जाल में रखना) श्री विष्णु जी से तथा संहार (क्योंकि काल पुरुष को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर से मैल निकाल कर खाना होता है उसके लिए इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में एक तप्तशिला है जो स्वतः गर्म रहती है, उस पर गर्म करके मैल पिंघला कर खाता है, जीव मरते नहीं परन्तु कष्ट असहनीय होता है, फिर प्राणियों को कर्म आधार पर अन्य शरीर प्रदान करता है) श्री शिव जी द्वारा करवाता है। जैसे किसी मकान में तीन कमरे बने हों। एक कमरे में अश्लील चित्र लगे हों। उस कमरे में जाते ही मन में वैसे ही मलिन विचार उत्पन्न हो जाते हैं। दूसरे कमरे में साधु-सन्तों, भक्तों के चित्र लगे हों तो मन में अच्छे विचार, प्रभु का चिन्तन ही बना रहता है। तीसरे कमरे में देश भक्तों व शहीदों के चित्र लगे हों तो मन में वैसे ही जोशीले विचार उत्पन्न हो जाते हैं। ठीक इसी प्रकार ब्रह्म (काल) ने अपनी सूझ-बूझ से उपरोक्त तीनों गुण प्रधान स्थानों की रचना की हुई है।

''तीनों गुण क्या हैं? प्रमाण सहित''

''तीनों गुण रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी हैं। ब्रह्म (काल) तथा प्रकति (दुर्गा) से उत्पन्न हुए हैं तथा तीनों नाशवान हैं''

प्रमाण :- गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित श्री शिव महापुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार पष्ठ सं. 24 से 26 विद्यवेश्वर संहिता तथा पष्ठ 110 अध्याय 9 रूद्र संहिता ''इस प्रकार ब्रह्मा-विष्णु तथा शिव तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (ब्रह्म-काल) गुणातीत कहा गया है।

दूसरा प्रमाण :- गीताप्रेस गोरखपुर से प्रकाशित श्रीमद् देवीभागवत पुराण जिसके सम्पादक हैं श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार चिमन लाल गोस्वामी, तीसरा स्कन्ध, अध्याय 5 पष्ठ 123 :- भगवान विष्णु ने दुर्गा की स्तुति की : कहा कि मैं (विष्णु), ब्रह्मा तथा शंकर तुम्हारी कपा से विद्यमान हैं। हमारा तो आविर्भाव (जन्म) तथा तिरोभाव (मत्यु) होती है। हम नित्य (अविनाशी) नहीं हैं। तुम ही नित्य हो, जगत् जननी हो, प्रकति और सनातनी देवी हो। भगवान शंकर ने कहा : यदि भगवान ब्रह्मा तथा भगवान विष्णु तुम्हीं से उत्पन्न हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाला मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ ? अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम ही हों। इस संसार की सष्टि-स्थिति-संहार में तुम्हारे गुण सदा सर्वदा हैं। इन्हीं तीनों गुणों से उत्पन्न हम, ब्रह्मा-विष्णु तथा शंकर नियमानुसार कार्य में तत्पर रहते हैं।

❖उपरोक्त यह विवरण केवल हिन्दी में अनुवादित श्री देवीमहापुराण से है, जिसमें कुछ तथ्यों को छुपाया गया है। इसलिए यही प्रमाण देखें श्री मद्देवीभागवत महापुराण सभाषटिकम् समहात्यम्, खेमराज श्री कष्ण दास प्रकाशन मुम्बई, इसमें संस्कत सहित हिन्दी अनुवाद किया है। तीसरा स्कन्ध अध्याय 4 पष्ठ 10, श्लोक 42:-

ब्रह्मा – अहम् ईश्वरः फिल ते प्रभावात्सर्वे वयं जनि युता न यदा तू नित्याः
के अन्ये सुराः शतमख प्रमुखाः च नित्या नित्या त्वमेव जननी प्रकतिः पुराणा। (42)

हिन्दी अनुवाद :- हे मात! ब्रह्मा, मैं तथा शिव तुम्हारे ही प्रभाव से जन्मवान हैं, नित्य नही हैं अर्थात् हम अविनाशी नहीं हैं, फिर अन्य इन्द्रादि दूसरे देवता किस प्रकार नित्य हो सकते हैं। तुम ही अविनाशी हो, प्रकति तथा सनातनी देवी हो।

पष्ठ 11-12, अध्याय 5, श्लोक 8 :- यदि दयार्द्रमना न सदांबिके कथमहं विहितः च तमोगुणः कमलजश्च रजोगुणसंभवः सुविहितः किमु सत्वगुणों हरिः।(8)

अनुवाद :- भगवान शंकर बोले :-हे मात! यदि हमारे ऊपर आप दयायुक्त हो तो मुझे तमोगुण क्यों बनाया, कमल से उत्पन्न ब्रह्मा को रजोगुण किसलिए बनाया तथा विष्णु को सतगुण क्यों बनाया? अर्थात् जीवों के जन्म-मत्यु रूपी दुष्कर्म में क्यों लगाया?

श्लोक 12 :- रमयसे स्वपतिं पुरुषं सदा तव गतिं न हि विह विद्म शिवे (12)

हिन्दी - अपने पति पुरुष अर्थात् काल भगवान के साथ सदा भोग-विलास करती रहती हो। आपकी गति कोई नहीं जानता।

निष्कर्ष :- उपरोक्त प्रमाणों से प्रमाणित हुआ की रजगुण - ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव है ये तीनों नाशवान है। दुर्गा का पति ब्रह्म (काल) है यह उसके साथ भोग विलास करता है।

"ब्रह्म (काल) की अव्यक्त रहने की प्रतिज्ञा"

सूक्ष्मवेद से शेष सष्टि रचना-------

तीनों पुत्रों की उत्पत्ति के पश्चात् ब्रह्म ने अपनी पत्नी दुर्गा (प्रकति) से कहा मैं प्रतिज्ञा करता हुँ कि भविष्य में मैं किसी को अपने वास्तविक रूप में दर्शन नहीं दूंगा। जिस कारण से मैं अव्यक्त माना जाऊँगा। दुर्गा से कहा कि आप मेरा भेद किसी को मत देना। मैं गुप्त रहूँगा। दुर्गा ने पूछा कि क्या आप अपने पुत्रों को भी दर्शन नहीं दोगे? ब्रह्म ने कहा मैं अपने पुत्रों को तथा अन्य को किसी भी साधना से दर्शन नहीं दूंगा, यह मेरा अटल नियम रहेगा। दुर्गा ने कहा यह तो आपका उत्तम नियम नहीं है जो आप

अपनी संतान से भी छुपे रहोगे। तब काल ने कहा दुर्गा मेरी विवशता है। मुझे एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करने का शाप लगा है। यदि मेरे पुत्रों (ब्रह्मा, विष्णु, महेश) को पता लग गया तो ये उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्य नहीं करेंगे। इसलिए यह मेरा अनुत्तम नियम सदा रहेगा। जब ये तीनों कुछ बड़े हो जाऐं तो इन्हें अचेत कर देना। मेरे विषय में नहीं बताना, नहीं तो मैं तुझे भी दण्ड दूंगा, दुर्गा इस डर के मारे वास्तविकता नहीं बताती।

{प्रमाण :-इसीलिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24 में कहा है कि यह बुद्धिहीन जन समुदाय मेरे अनुत्तम नियम से अपरिचित हैं कि मैं कभी भी किसी के सामने प्रकट नहीं होता अपनी योग माया से छुपा रहता हूँ। इसलिए मुझ अव्यक्त को मनुष्य रूप में आया हुआ अर्थात् कृष्ण मानते हैं।

(अबुद्धयः) बुद्धि हीन (मम्) मेरे (अनुत्तमम्) अनुत्तम अर्थात् घटिया (अव्ययम्) अविनाशी (परम् भावम्) विशेष भाव को (अजानन्तः) न जानते हुए (माम् अव्यक्तम्) मुझ अव्यक्त को (व्यक्तिम्) मनुष्य रूप में (आपन्नम) आया (मन्यन्ते) मानते हैं अर्थात् मैं कृष्ण नहीं हूँ। (गीता अध्याय 7 श्लोक 24)

गीता अध्याय 11 श्लोक 47 तथा 48 में कहा है कि यह मेरा वास्तविक काल रूप है। इसके दर्शन अर्थात् ब्रह्म प्राप्ति न वेदों में वर्णित विधि से, न जप से, न तप से तथा न किसी क्रिया से हो सकती है।}

जब तीनों बच्चे युवा हो गए तब माता भवानी (प्रकृति, अष्टंगी) ने कहा कि तुम सागर मन्थन करो। प्रथम बार सागर मन्थन किया तो (ज्योति निरंजन ने अपने श्वांसों द्वारा चार वेद उत्पन्न किए। उनको गुप्त वाणी द्वारा आज्ञा दी कि सागर में निवास करो) चारों वेद निकले वह ब्रह्मा ने लिए। वस्तु लेकर तीनों बच्चे माता के पास आए तब माता ने कहा कि चारों वेदों को ब्रह्मा रखे व पढ़े।

नोट :- वास्तव में पूर्णब्रह्म ने, ब्रह्म अर्थात् काल को पाँच वेद प्रदान किए थे। लेकिन ब्रह्म ने केवल चार वेदों को प्रकट किया। पाँचवां वेद छुपा दिया। जो पूर्ण परमात्मा ने स्वयं प्रकट होकर कविर्गिर्भीः अर्थात् कविर्वाणी (कबीर वाणी) द्वारा लोकोक्तियों व दोहों के माध्यम से प्रकट किया है।

दूसरी बार सागर मन्थन किया तो तीन कन्याऐं मिली। माता ने तीनों को बांट दिया। प्रकृति (दुर्गा) ने अपने ही अन्य तीन रूप (सावित्री,लक्ष्मी तथा पार्वती) धारण किए तथा समुन्द्र में छुपा दी। सागर मन्थन के समय बाहर आ गई। वही प्रकृति तीन रूप हुई तथा भगवान ब्रह्मा को सावित्री, भगवान विष्णु को लक्ष्मी, भगवान शंकर को पार्वती पत्नी रूप में दी। तीनों ने भोग विलास किया, सुर तथा असुर दोनों पैदा हुए।

{जब तीसरी बार सागर मन्थन किया तो चौदह रत्न ब्रह्मा को तथा अमृत विष्णु को व देवताओं को, मद्य(शराब) असुरों को तथा विष परमार्थ शिव ने अपने कंठ में ठहराया। यह तो बहुत बाद की बात है।} जब ब्रह्मा वेद पढ़ने लगा तो पता चला कि कोई सर्व ब्रह्माण्डों की रचना करने वाला कुल का मालिक पुरूष (प्रभु) और है। तब ब्रह्मा जी ने विष्णु जी व शंकर जी को बताया कि वेदों में वर्णन है कि सृजनहार कोई और प्रभु है परन्तु वेद कहते हैं कि भेद हम भी नहीं जानते, उसके लिए संकेत है कि किसी तत्वदर्शी संत से पूछो। तब ब्रह्मा माता के पास आया और सब वृतांत कह सुनाया। माता कहा करती थी कि मेरे अतिरिक्त और कोई नहीं है। मैं ही कर्ता हूँ। मैं ही सर्वशक्तिमान हूँ परन्तु ब्रह्मा ने कहा कि वेद ईश्वर कृत हैं यह झूठ नहीं हो सकते। दुर्गा ने कहा कि तेरा पिता तुझे दर्शन नहीं देगा, उसने प्रतिज्ञा की हुई है। तब ब्रह्मा ने कहा माता जी अब आप की बात पर अविश्वास हो गया है। मैं उस पुरूष (प्रभु) का पता लगाकर ही रहूँगा। दुर्गा ने कहा कि यदि वह तुझे दर्शन नहीं देगा तो तुम क्या करोगे? ब्रह्मा ने कहा कि मैं आपको शक्ल नहीं दिखाऊँगा। दूसरी तरफ ज्योति निरंजन ने कसम खाई है कि मैं

अव्यक्त रहूँगा किसी को दर्शन नहीं दूंगा अर्थात् 21 ब्रह्माण्ड में कभी भी अपने वास्तविक काल रूप में आकार में नहीं आऊँगा।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 24

अव्यक्तम्, व्यक्तिम्, आपन्नम्, मन्यन्ते, माम्, अबुद्धयः।
परम्, भावम्, अजानन्तः, मम, अव्ययम्, अनुत्तमम्।।24।।

अनुवाद : (अबुद्धयः) बुद्धिहीन लोग (मम्) मेरे (अनुतमम्) अश्रेष्ठ (अव्ययम्) अटल (परम्) परम (भावम्) भावको (अजानन्तः) न जानते हुए (अव्यक्तम्) अदृश्यमान (माम्) मुझ कालको (व्यक्तिम्) नर रूप आकार में कृष्ण (आपन्नम्) प्राप्त हुआ (मन्यन्ते) मानते हैं।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 25

न, अहम्, प्रकाशः, सर्वस्य, योगमायासमावृतः।
मूढः, अयम्, न, अभिजानाति, लोकः, माम्, अजम्, अव्ययम्।।25।।

अनुवाद : (अहम्) मैं (योगमाया समावृतः) योगमायासे छिपा हुआ (सर्वस्य) सबके (प्रकाशः) प्रत्यक्ष (न) नहीं होता अर्थात् अदृश्य अर्थात् अव्यक्त रहता हूँ इसलिये (अजम्) जन्म न लेने वाले (अव्ययम्) अविनाशी अटल भावको (अयम्) यह (मूढः) अज्ञानी (लोकः) जनसमुदाय संसार (माम्) मुझे (न) नहीं (अभिजानाति) जानता अर्थात् मुझको कृष्ण समझता है। क्योंकि ब्रह्म अपनी शब्द शक्ति से अपने नाना रूप बना लेता है, यह दुर्गा का पति है इसलिए इस मंत्र में कह रहा है कि मैं श्री कृष्ण आदि की तरह दुर्गा से जन्म नहीं लेता।

"ब्रह्मा का अपने पिता (काल/ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए प्रयत्न"

तब दुर्गा ने ब्रह्मा जी से कहा कि अलख निरंजन तुम्हारा पिता है परन्तु वह तुम्हें दर्शन नहीं देगा। ब्रह्मा ने कहा कि मैं दर्शन करके ही लौटूंगा। माता ने पूछा कि यदि तुझे दर्शन नहीं हुए तो क्या करेगा ? ब्रह्मा ने कहा मैं प्रतिज्ञा करता हूँ। यदि पिता के दर्शन नहीं हुए तो मैं आपके समक्ष नहीं आऊंगा। यह कह कर ब्रह्मा जी व्याकुल होकर उत्तर दिशा की तरफ चल दिया जहाँ अन्धेरा ही अन्धेरा है। वहाँ ब्रह्मा ने चार युग तक ध्यान लगाया परन्तु कुछ भी प्राप्ति नहीं हुई। काल ने आकाशवाणी की कि जीव उत्पत्ति क्यों नहीं की? भवानी ने कहा कि आप का ज्येष्ठ पुत्र ब्रह्मा जिद्द करके आप की तलाश में गया है। ब्रह्मा के बिना जीव उत्पति का सब कार्य असम्भव है। ब्रह्म (काल) ने कहा उसे वापिस बुला लो। मैं उसे दर्शन नहीं दूँगा। तब दुर्गा (प्रकृति) ने अपनी शब्द शक्ति से गायत्री नाम की लड़की उत्पन्न की तथा उसे ब्रह्मा को लौटा लाने को कहा। गायत्री ब्रह्मा जी के पास गई परंतु ब्रह्मा जी समाधि लगाए हुए थे उन्हें कोई आभास ही नहीं था कि कोई आया है। तब आदि कुमारी (प्रकृति) ने गायत्री को ध्यान द्वारा बताया कि इस के चरण स्पर्श कर। तब गायत्री ने ऐसा ही किया। ब्रह्मा जी का ध्यान भंग हुआ तो क्रोध वश बोले कि कौन पापिन है जिसने मेरा ध्यान भंग किया है। मैं तुझे शाप दूंगा। गायत्री कहने लगी कि मेरा दोष नहीं है पहले मेरी बात सुनो तब शाप देना। मेरे को माता ने तुम्हें लौटा लाने को कहा है क्योंकि आपके बिना जीव उत्पत्ति नहीं हो सकती। ब्रह्मा ने कहा कि मैं कैसे जाऊँ? पिता जी के दर्शन हुए नहीं, ऐसे जाऊँ तो मेरा उपहास होगा। यदि आप माता जी के समक्ष यह कह दें कि ब्रह्मा को पिता (ज्योति निरंजन) के दर्शन हुए हैं, मैंने अपनी आँखो से देखा है तो मैं आपके साथ चलूं। तब गायत्री ने कहा कि आप मेरे साथ संभोग (सैक्स) करोगे तो मैं आपकी झूठी साक्षी (गवाही) भरूंगी। तब ब्रह्मा ने सोचा कि

पिता के दर्शन हुए नहीं, वैसे जाऊँ तो माता के सामने शर्म लगेगी और चारा नहीं दिखाई दिया, फिर गायत्री से रति क्रिया (संभोग) की।

तब गायत्री ने कहा कि क्यों न एक गवाह और तैयार किया जाए। ब्रह्मा ने कहा बहुत ही अच्छा है। तब गायत्री ने शब्द शक्ति से एक लड़की (पुहपवति नाम की) पैदा की तथा उससे दोनों ने कहा कि आप गवाही देना कि ब्रह्मा ने पिता के दर्शन किए हैं। तब पुहपवति ने कहा कि मैं क्यों झूठी गवाही दूँ ? हाँ, यदि ब्रह्मा मेरे से रति क्रिया (संभोग) करे तो गवाही दे सकती हूँ। गायत्री ने ब्रह्मा को समझाया (उकसाया) कि और कोई चारा नहीं है तब ब्रह्मा ने पुहपवति से संभोग किया तो तीनों मिलकर आदि माया (प्रकति) के पास आए। दोनों देवियों ने उपरोक्त शर्त इसलिए रखी थी कि यदि ब्रह्मा माता के सामने हमारी झूठी गवाही को बता देगा तो माता हमें शाप दे देगी। इसलिए उसे भी दोषी बना लिया।

(यहाँ महाराज गरीबदास जी कहते हैं कि – ''दास गरीब यह चूक धुरों धुर'')

"माता (दुर्गा) द्वारा ब्रह्मा को शाप देना"

तब माता ने ब्रह्मा से पूछा क्या तुझे तेरे पिता के दर्शन हुए? ब्रह्मा ने कहा हाँ मुझे पिता के दर्शन हुए हैं। दुर्गा ने कहा साक्षी बता। तब ब्रह्मा ने कहा इन दोनों के समक्ष साक्षात्कार हुआ है। देवी ने उन दोनों लड़कियों से पूछा क्या तुम्हारे सामने ब्रह्म का साक्षात्कार हुआ है तब दोनों ने कहा कि हाँ, हमने अपनी आँखों से देखा है। फिर भवानी (प्रकति) को संशय हुआ कि मुझे तो ब्रह्म ने कहा था कि मैं किसी को दर्शन नहीं दूंगा, परन्तु ये कहते हैं कि दर्शन हुए हैं। तब अष्टंगी ने ध्यान लगाया और काल/ज्योति निरंजन से पूछा कि यह क्या कहानी है? ज्योति निरंजन जी ने कहा कि ये तीनों झूठ बोल रहे हैं। तब माता ने कहा तुम झूठ बोल रहे हो। आकाशवाणी हुई है कि इन्हें कोई दर्शन नहीं हुए। यह बात सुनकर ब्रह्मा ने कहा कि माता जी मैं सौगंध खाकर पिता की तलाश करने गया था। परन्तु पिता (ब्रह्म) के दर्शन हुए नहीं। आप के पास आने में शर्म लग रही थी। इसलिए हमने झूठ बोल दिया। तब माता (दुर्गा) ने कहा कि अब मैं तुम्हें शाप देती हूँ।

<u>ब्रह्मा को शॉप</u> : -- तेरी पूजा जग में नहीं होगी। आगे तेरे वंशज होंगे वे बहुत पाखण्ड करेंगे। झूठी बात बना कर जग को ठगेंगे। ऊपर से तो कर्म काण्ड करते दिखाई देंगे अन्दर से विकार करेंगे। कथा पुराणों को पढ़कर सुनाया करेंगे, स्वयं को ज्ञान नहीं होगा कि सद्ग्रन्थों में वास्तविकता क्या है, फिर भी मान वश तथा धन प्राप्ति के लिए गुरु बन कर अनुयाइयों को लोकवेद (शास्त्र विरुद्ध दंत कथा) सुनाया करेंगे। देवी-देवों की पूजा करके तथा करवाके, दूसरों की निन्दा करके कष्ट पर कष्ट उठायेंगे। जो उनके अनुयाई होंगे उनको परमार्थ नहीं बताएंगे। दक्षिणा के लिए जगत को गुमराह करते रहेंगे। अपने आपको सबसे अच्छा मानेंगे, दूसरों को नीचा समझेंगे। जब माता के मुख से यह सुना तो ब्रह्मा मुर्छित होकर जमीन पर गिर गया। बहुत समय उपरान्त होश में आया।

<u>गायत्री को शॉप</u> : -- तेरे कई सांड पति होंगे। तू मतलोक में गाय बनेगी।

<u>पुहपवति को शॉप</u> : -- तेरी जगह गंदगी में होगी। तेरे फूलों को कोई पूजा में नहीं लाएगा। इस झूठी गवाही के कारण तुझे यह नरक भोगना होगा। तेरा नाम केवड़ा केतकी होगा। (हरियाणा में कुसोंधी कहते हैं। यह गंदगी (कुरड़ियों) वाली जगह पर होती है।)

इस प्रकार तीनों को शाप देकर माता भवानी बहुत पछताई। {इस प्रकार पहले तो जीव बिना सोचे मन (काल निरंजन) के प्रभाव से गलत कार्य कर देता है परन्तु जब आत्मा (सतपुरुष अंश) के प्रभाव से

उसे ज्ञान होता है तो पीछे पछताना पड़ता है। जिस प्रकार माता-पिता अपने बच्चों को छोटी सी गलती के कारण ताड़ते हैं (क्रोधवश होकर) परन्तु बाद में बहुत पछताते हैं। यही प्रक्रिया मन (काल-निंरजन) के प्रभाव से सर्व जीवों में क्रियावान हो रही है।} हाँ, यहाँ एक बात विशेष है कि निरंजन (काल-ब्रह्म) ने भी अपना कानून बना रखा है कि यदि कोई जीव किसी दुर्बल जीव को सताएगा तो उसे उसका बदला देना पड़ेगा। जब आदि भवानी (प्रकति, अष्टंगी) ने ब्रह्मा, गायत्री व पुहपवति को शाप दिया तो अलख निंरजन (ब्रह्म-काल) ने कहा कि हे भवानी (प्रकति/अष्टंगी) यह आपने अच्छा नहीं किया। अब मैं (निरंजन) आपको शाप देता हूँ कि द्वापर युग में तेरे भी पाँच पति होंगे। (द्रोपदी ही आदिमाया का अवतार हुई है।) जब यह आकाश वाणी सुनी तो आदि माया ने कहा कि हे ज्योति निंरजन (काल) मैं तेरे वश पड़ी हूँ जो चाहे सो कर ले।

{सष्टि रचना में दुर्गा जी के अन्य नामों का बार-बार लिखने का उद्देश्य है कि पुराणों, गीता तथा वेदों में प्रमाण देखते समय भ्रम उत्पन्न नहीं होगा। जैसे गीता अध्याय 14 श्लोक 3-4 में काल ब्रह्म ने कहा है कि प्रकति तो गर्भ धारण करने वाली सब जीवों की माता है। मैं उसके गर्भ में बीज स्थापित करने वाला पिता हूँ। श्लोक 4 में कहा है कि प्रकति से उत्पन्न तीनों गुण जीवात्मा को कर्मों के बँधन में बाँधते हैं।-(लेख समाप्त)। इस प्रकरण में प्रकति तो दुर्गा है तथा तीनों गुण तीनों देवता यानि रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव के सांकेतिक नाम हैं।}

"विष्णु का अपने पिता (काल/ब्रह्म) की प्राप्ति के लिए प्रस्थान व माता का आशीर्वाद पाना"

इसके बाद विष्णु से प्रकति ने कहा कि पुत्र तू भी अपने पिता का पता लगा ले। तब विष्णु अपने पिता जी काल (ब्रह्म) का पता करते-करते पाताल लोक में चले गए, जहाँ शेषनाग था। उसने विष्णु को अपनी सीमा में प्रविष्ट होते देख कर क्रोधित हो कर जहर भरा फुंकारा मारा। उसके विष के प्रभाव से विष्णु जी का रंग सांवला हो गया, जैसे स्प्रे पेंट हो जाता है। तब विष्णु ने चाहा कि इस नाग को मजा चखाना चाहिए। तब ज्योति निरंजन (काल) ने देखा कि अब विष्णु को शांत करना चाहिए। तब आकाशवाणी हुई कि विष्णु अब तू अपनी माता जी के पास जा और सत्य-सत्य सारा विवरण बता देना तथा जो कष्ट आपको शेषनाग से हुआ है, इसका प्रतिशोध द्वापर युग में लेना। द्वापर युग में आप (विष्णु) तो कष्ण अवतार धारण करोगे और कालीदह में कालिन्द्री नामक नाग, शेष नाग का अवतार होगा।

ऊँच होई के नीच सतावै, ताकर ओएल (बदला) मोही सों पावै।
जो जीव देई पीर पुनी काँहु, हम पुनि ओएल दिवावें ताहूँ।।

तब विष्णु जी माता जी के पास आए तथा सत्य-सत्य कह दिया कि मुझे पिता के दर्शन नहीं हुए। इस बात से माता (प्रकति) बहुत प्रसन्न हुई और कहा कि पुत्र तू सत्यवादी है। अब मैं अपनी शक्ति से तेरे पिता से मिलाती हूँ तथा तेरे मन का संशय खत्म करती हूँ।

कबीर, देख पुत्र तोहि पिता भीटाऊँ, तौरे मन का धोखा मिटाऊँ।
मन स्वरूप कर्ता कह जानों, मन ते दूजा और न मानो।
स्वर्ग पाताल दौर मन केरा, मन अस्थीर मन अहै अनेरा।
निंरकार मन ही को कहिए, मन की आस निश दिन रहिए।

देख हूँ पलटि सुन्य मह ज्योति, जहाँ पर झिलमिल झालर होती।।

इस प्रकार माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने विष्णु से कहा कि मन ही जग का कर्ता है, यही ज्योति निरंजन है। ध्यान में जो एक हजार ज्योतियाँ नजर आती हैं वही उसका रूप है। जो शंख, घण्टा आदि का बाजा सुना, यह महास्वर्ग में निरंजन का ही बज रहा है। तब माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने कहा कि हे पुत्र तुम सब देवों के सरताज हो और तेरी हर कामना व कार्य मैं पूर्ण करूंगी। तेरी पूजा सर्व जग में होगी। आपने मुझे सच-सच बताया है। काल के इक्कीस ब्रह्माण्ड़ों के प्राणियों की विशेष आदत है कि अपनी व्यर्थ महिमा बनाता है। जैसे दुर्गा जी श्री विष्णु जी को कह रही है कि तेरी पूजा जग में होगी। मैंने तुझे तेरे पिता के दर्शन करा दिए। दुर्गा ने केवल प्रकाश दिखा कर श्री विष्णु जी को बहका दिया। श्री विष्णु जी भी प्रभु की यही स्थिति अपने अनुयाइयों को समझाने लगे कि परमात्मा का केवल प्रकाश दिखाई देता है। परमात्मा निराकार है। इसके बाद आदि भवानी रूद्र(महेश जी) के पास गई तथा कहा कि महेश तू भी कर ले अपने पिता की खोज तेरे दोनों भाइयों को तो तुम्हारे पिता के दर्शन नहीं हुए उनको जो देना था वह प्रदान कर दिया है अब आप माँगो जो माँगना है। तब महेश ने कहा कि हे जननी ! मेरे दोनों बड़े भाईयों को पिता के दर्शन नहीं हुए फिर प्रयत्न करना व्यर्थ है। कृपा मुझे ऐसा वर दो कि मैं अमर (मृत्युंजय) हो जाऊँ। तब माता ने कहा कि यह मैं नहीं कर सकती। हाँ युक्ति बता सकती हूँ, जिससे तेरी आयु सबसे लम्बी बनी रहेगी। विधि योग समाधि है (इसलिए महादेव जी ज्यादातर समाधि में ही रहते हैं)। इस प्रकार माता (अष्टंगी, प्रकृति) ने तीनों पुत्रों को विभाग बांट दिए : --

भगवान ब्रह्मा जी को काल लोक में लख चौरासी के चोले (शरीर) रचने (बनाने) का अर्थात् रजोगुण प्रभावित करके संतान उत्पत्ति के लिए विवश करके जीव उत्पत्ति कराने का विभाग प्रदान किया। भगवान विष्णु जी को इन जीवों के पालन पोषण (कर्मानुसार) करने, तथा मोह-ममता उत्पन्न करके स्थिति बनाए रखने का विभाग दिया।

भगवान शिव शंकर (महादेव) को संहार करने का विभाग प्रदान किया क्योंकि इनके पिता निरंजन को एक लाख मानव शरीर धारी जीव प्रतिदिन खाने पड़ते हैं।

यहाँ पर मन में एक प्रश्न उत्पन्न होगा कि ब्रह्मा, विष्णु तथा शंकर जी से उत्पत्ति, स्थिति और संहार कैसे होता है। ये तीनों अपने-२ लोक में रहते हैं। जैसे आजकल संचार प्रणाली को चलाने के लिए उपग्रहों को ऊपर आसमान में छोड़ा जाता है और वे नीचे पृथ्वी पर संचार प्रणाली को चलाते हैं। ठीक इसी प्रकार ये तीनों देव जहां भी रहते हैं इनके शरीर से निकलने वाले सूक्ष्म गुण की तरंगें तीनों लोकों में अपने आप हर प्राणी पर प्रभाव बनाए रहती है। उपरोक्त विवरण एक ब्रह्माण्ड में ब्रह्म (काल) की रचना का है। ऐसे-ऐसे क्षर पुरुष (काल) के इक्कीस ब्रह्माण्ड हैं।

परन्तु क्षर पुरूष (काल) स्वयं व्यक्त अर्थात् वास्तविक शरीर रूप में सबके सामने नहीं आता। उसी को प्राप्त करने के लिए तीनों देवों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी, शिव जी) को वेदों में वर्णित विधि अनुसार भरसक साधना करने पर भी ब्रह्म (काल) के दर्शन नहीं हुए। बाद में ऋषियों ने वेदों को पढ़ा। उसमें लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि' (पवित्र यजुर्वेद अ. 1 मंत्र 15) परमेश्वर सशरीर है तथा पवित्र यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 1 में लिखा है कि 'अग्नेः तनूर् असि विष्णवे त्वा सोमस्य तनूर् असि'। इस मंत्र में दो बार वेद गवाही दे रहा है कि सर्वव्यापक, सर्वपालन कर्ता सतपुरुष सशरीर है। पवित्र यजुर्वेद अध्याय 40 मंत्र 8 में कहा है कि (कविर् मनिषी) जिस परमेश्वर की सर्व प्राणियों को चाह है, वह कविर् अर्थात् कबीर है। उसका शरीर बिना नाड़ी (अस्नाविरम्) का है, (शुक्रम्) वीर्य से बनी

पाँच तत्व से बनी भौतिक (अकायम्) काया रहित है। वह सर्व का मालिक सर्वोपरि सत्यलोक में विराजमान है, उस परमेश्वर का तेजपुंज का (स्वर्ज्योति) स्वयं प्रकाशित शरीर है जो शब्द रूप अर्थात् अविनाशी है। वही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) है जो सर्व ब्रह्माण्डों की रचना करने वाला (व्यदधाता) सर्व ब्रह्माण्डों का रचनहार (स्वयम्भूः) स्वयं प्रकट होने वाला (यथा तथ्य अर्थान्) वास्तव में (शाश्वत्) अविनाशी है (गीता अध्याय 15 श्लोक 17 में भी प्रमाण है।) भावार्थ है कि पूर्ण ब्रह्म का शरीर का नाम कबीर (कविर देव) है। उस परमेश्वर का शरीर नूर तत्व से बना है। परमात्मा का शरीर अति सूक्ष्म है जो उस साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार जीव का भी सुक्ष्म शरीर है जिसके ऊपर पाँच तत्व का खोल (कवर) अर्थात् पाँच तत्व की काया चढ़ी होती है जो माता-पिता के संयोग से (शुक्रम) वीर्य से बनी है। शरीर त्यागने के पश्चात् भी जीव का सुक्ष्म शरीर साथ रहता है। वह शरीर उसी साधक को दिखाई देता है जिसकी दिव्य दृष्टि खुल चुकी है। इस प्रकार परमात्मा व जीव की स्थिति को समझें। वेदों में ओ३म् नाम के स्मरण का प्रमाण है जो केवल ब्रह्म साधना है। इस उद्देश्य से ओ३म् नाम के जाप को पूर्ण ब्रह्म का मान कर ऋषियों ने भी हजारों वर्ष हठयोग (समाधि लगा कर) करके प्रभु प्राप्ति की चेष्टा की, परन्तु प्रभु दर्शन नहीं हुए, सिद्धियाँ प्राप्त हो गई। उन्हीं सिद्धी रुपी खिलौनों से खेल कर ऋषि भी जन्म-मृत्यु के चक्र में ही रह गए तथा अपने अनुभव के शास्त्रों में परमात्मा को निराकार लिख दिया। ब्रह्म (काल) ने कसम खाई है कि मैं अपने वास्तविक रूप में किसी को दर्शन नहीं दूँगा। मुझे अव्यक्त जाना करेंगे (अव्यक्त का भावार्थ है कि कोई आकार में है परन्तु व्यक्तिगत रूप से स्थूल रूप में दर्शन नहीं देता। जैसे आकाश में बादल छा जाने पर दिन के समय सूर्य अदृश हो जाता है। वह दृश्यमान नहीं है, परन्तु वास्तव में बादलों के पार ज्यों का त्यों है, इस अवस्था को अव्यक्त कहते हैं।)। (प्रमाण के लिए गीता अध्याय 7 श्लोक 24-25, अध्याय 11 श्लोक 48 तथा 32)

पवित्र गीता जी बोलने वाला ब्रह्म (काल) श्री कृष्ण जी के शरीर में प्रेतवत प्रवेश करके कह रहा है कि अर्जुन मैं बढ़ा हुआ काल हूँ और सर्व को खाने के लिए आया हूँ। (गीता अध्याय 11 का श्लोक नं. 32) यह मेरा वास्तविक रूप है, इसको तेरे अतिरिक्त न तो कोई पहले देख सका तथा न कोई आगे देख सकता है अर्थात् वेदों में वर्णित यज्ञ-जप-तप तथा ओ३म् नाम आदि की विधि से मेरे इस वास्तविक स्वरूप के दर्शन नहीं हो सकते। (गीता अध्याय 11 श्लोक नं 48) मैं कृष्ण नहीं हूँ, ये मूर्ख लोग कृष्ण रूप में मुझ अव्यक्त को व्यक्त (मनुष्य रूप) मान रहे हैं। क्योंकि ये मेरे घटिया नियम से अपरिचित हैं कि मैं कभी वास्तविक इस काल रूप में सबके सामने नहीं आता। अपनी योग माया से छुपा रहता हूँ (गीता अध्याय 7 श्लोक नं. 24-25) विचार करें :- अपने छुपे रहने वाले विधान को स्वयं अश्रेष्ठ (अनुत्तम) क्यों कह रहे हैं?

यदि पिता अपनी सन्तान को भी दर्शन नहीं देता तो उसमें कोई त्रुटि है जिस कारण से छुपा है तथा सुविधाएं भी प्रदान कर रहा है। काल (ब्रह्म) को शापवश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का आहार करना पड़ता है तथा 25 प्रतिशत प्रतिदिन जो ज्यादा उत्पन्न होते हैं उन्हें ठिकाने लगाने के लिए तथा कर्म भोग का दण्ड देने के लिए चौरासी लाख योनियों की रचना की हुई है। यदि सबके सामने बैठ कर किसी की पुत्री, किसी की पत्नी, किसी के पुत्र, माता-पिता को खाएगा तो सर्व को ब्रह्म से घृणा हो जाए तथा जब भी कभी पूर्ण परमात्मा कविरग्नि (कबीर परमेश्वर) स्वयं आए या अपना कोई संदेशवाहक (दूत) भेंजे तो सर्व प्राणी सत्यभक्ति करके काल के जाल से निकल जाऐं।

इसलिए धोखा देकर रखता है तथा पवित्र गीता अध्याय 7 श्लोक 18,24,25 में अपनी साधना से होने वाली मुक्ति (गति) को भी (अनुत्तमाम्) अति अश्रेष्ठ कहा है तथा अपने विधान (नियम)को भी (अनुत्तम) अश्रेष्ठ कहा है।

प्रत्येक ब्रह्माण्ड में बने ब्रह्मलोक में एक महास्वर्ग बनाया है। महास्वर्ग में एक स्थान पर नकली सतलोक - नकली अलख लोक - नकली अगम लोक तथा नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखा देने के लिए प्रकृति (दुर्गा/आदि माया) द्वारा करवा रखी है। कबीर साहेब का एक शब्द है 'कर नैनों दीदार महल में प्यारा है' में वाणी है कि 'काया भेद किया निरवारा, यह सब रचना पिण्ड मंझारा है। माया अविगत जाल पसारा, सो कारीगर भारा है। आदि माया किन्ही चतुराई, झूठी बाजी पिण्ड दिखाई, अविगत रचना रचि अण्ड माहि वाका प्रतिबिम्ब डारा है।'

एक ब्रह्माण्ड में अन्य लोकों की भी रचना है, जैसे श्री ब्रह्मा जी का लोक, श्री विष्णु जी का लोक, श्री शिव जी का लोक। जहाँ पर बैठकर तीनों प्रभु नीचे के तीन लोकों (स्वर्गलोक अर्थात् इन्द्र का लोक - पृथ्वी लोक तथा पाताल लोक) पर एक - एक विभाग के मालिक बन कर प्रभुता करते हैं तथा अपने पिता काल के खाने के लिए प्राणियों की उत्पत्ति, स्थिति तथा संहार का कार्यभार संभालते हैं। तीनों प्रभुओं की भी जन्म व मृत्यु होती है। तब काल इन्हें भी खाता है। इसी ब्रह्माण्ड {इसे अण्ड भी कहते हैं क्योंकि ब्रह्माण्ड की बनावट अण्डाकार है, इसे पिण्ड भी कहते हैं क्योंकि शरीर (पिण्ड) में एक ब्रह्माण्ड की रचना कमलों में टी.वी. की तरह देखी जाती है} में एक मानसरोवर तथा धर्मराय (न्यायधीश) का भी लोक है तथा एक गुप्त स्थान पर पूर्ण परमात्मा अन्य रूप धारण करके रहता है जैसे प्रत्येक देश का राजदूत भवन होता है। वहाँ पर कोई नहीं जा सकता। वहाँ पर वे आत्माऐं रहती हैं जिनकी सत्यलोक की भक्ति अधूरी रहती है। जब भक्ति युग आता है तो उस समय परमेश्वर कबीर जी अपना प्रतिनिधी पूर्ण संत सतगुरु भेजते हैं। इन पुण्यात्माओं को पृथ्वी पर उस समय मानव शरीर प्राप्त होता है तथा ये शीघ्र ही सत भक्ति पर लग जाते हैं तथा सतगुरु से दीक्षा प्राप्त करके पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर जाते हैं। उस स्थान पर रहने वाले हंस आत्माओं की निजी भक्ति कमाई खर्च नहीं होती। परमात्मा के भण्डार से सर्व सुविधाऐं उपलब्ध होती हैं। ब्रह्म (काल) के उपासकों की भक्ति कमाई स्वर्ग-महा स्वर्ग में समाप्त हो जाती है क्योंकि इस काल लोक (ब्रह्म लोक) तथा परब्रह्म लोक में प्राणियों को अपना किया कर्मफल ही मिलता है।

क्षर पुरुष (ब्रह्म) ने अपने 20 ब्रह्माण्डों को चार महाब्रह्माण्डों में विभाजित किया है। एक महाब्रह्माण्ड में पाँच ब्रह्माण्डों का समूह बनाया है तथा चारों ओर से अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है तथा चारों महा ब्रह्माण्डों को भी फिर अण्डाकार गोलाई (परिधि) में रोका है। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड की रचना एक महाब्रह्माण्ड जितना स्थान लेकर की है। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में प्रवेश होते ही तीन रास्ते बनाए हैं। इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में भी बांई तरफ नकली सतलोक, नकली अलख लोक, नकली अगम लोक, नकली अनामी लोक की रचना प्राणियों को धोखे में रखने के लिए आदि माया (दुर्गा) से करवाई है तथा दांई तरफ बारह सर्व श्रेष्ठ ब्रह्म साधकों (भक्तों) को रखता है। फिर प्रत्येक युग में उन्हें अपने संदेश वाहक (सन्त सतगुरू) बनाकर पृथ्वी पर भेजता है, जो शास्त्र विधि रहित साधना व ज्ञान बताते हैं तथा स्वयं भी भक्तिहीन हो जाते हैं तथा अनुयाइयों को भी काल जाल में फंसा जाते हैं। फिर वे गुरु जी तथा अनुयाई दोनों ही नरक में जाते हैं। फिर सामने एक ताला (कुलुफ) लगा रखा है। वह रास्ता काल (ब्रह्म) के निज लोक में जाता है। जहाँ पर यह ब्रह्म (काल)

ब्रह्म लोक का लघु चित्र

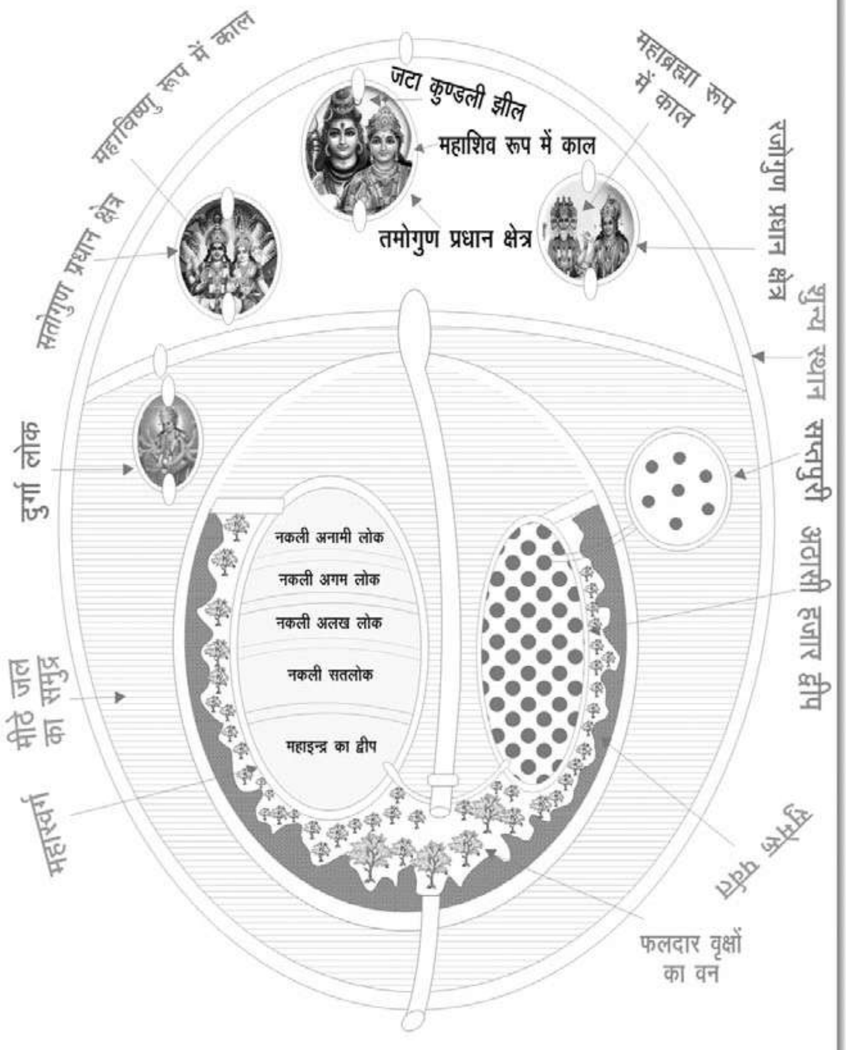

ज्योति निरंजन (काल) ब्रह्म के लोक (21 ब्रह्मण्ड) का लघु चित्र

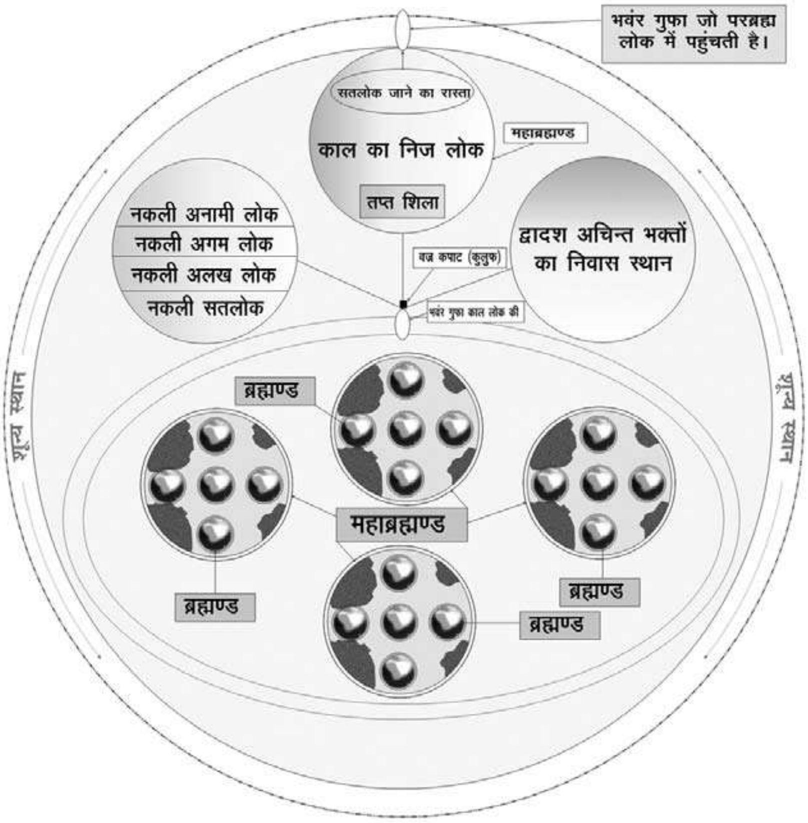

अपने वास्तविक मानव सदृश काल रूप में रहता है। इसी स्थान पर एक पत्थर की टुकड़ी तवे के आकार की (चपाती पकाने की लोहे की गोल प्लेट सी होती है) स्वतः गर्म रहती है। जिस पर एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों के सूक्ष्म शरीर को भूनकर उनमें से गंदगी निकाल कर खाता है। उस समय सर्व प्राणी बहुत पीड़ा अनुभव करते हैं तथा हाहाकार मच जाती है। फिर कुछ समय उपरान्त वे बेहोश हो जाते हैं। जीव मरता नहीं। फिर धर्मराय के लोक में जाकर कर्माधार से अन्य जन्म प्राप्त करते हैं तथा जन्म-मृत्यु का चक्कर बना रहता है। उपरोक्त सामने लगा ताला ब्रह्म (काल) केवल अपने आहार वाले प्राणियों के लिए कुछ क्षण के लिए खोलता है। पूर्ण परमात्मा के सत्यनाम व सारनाम से यह ताला स्वयं खुल जाता है। ऐसे काल का जाल पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर साहेब) ने स्वयं ही अपने निजी भक्त धर्मदास जी को समझाया।

"परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों की स्थापना"

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने आगे बताया है कि परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने अपने कार्य में गफलत की क्योंकि यह मानसरोवर में सो गया तथा जब परमेश्वर (मैंनें अर्थात् कबीर साहेब ने) उस सरोवर में अण्डा छोड़ा तो अक्षर पुरुष (परब्रह्म) ने उसे क्रोध से देखा। इन दोनों अपराधों के कारण सात संख ब्रह्माण्डों सहित सतलोक से बाहर कर दिया। अन्य कारण अक्षर पुरुष (परब्रह्म) अपने साथी ब्रह्म (क्षर पुरुष) की विदाई में व्याकुल होकर परमपिता कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की याद भूलकर उसी को याद करने लगा तथा सोचा कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तो बहुत आनन्द मना रहा होगा, वह स्वतंत्र राज्य करेगा, मैं पीछे रह गया तथा अन्य कुछ आत्माऐं जो परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्माण्डों में जन्म-मृत्यु का कर्मदण्ड भोग रही हैं, उन हंस आत्माओं की विदाई की याद में खो गई जो ब्रह्म (काल) के साथ इक्कीस ब्रह्माण्डों में फंसी हैं तथा पूर्ण परमात्मा, सुखदाई कविर्देव की याद भुला दी। परमेश्वर कविर् देव के बार-बार समझाने पर भी आस्था कम नहीं हुई। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने सोचा कि मैं भी अलग स्थान प्राप्त करूं तो अच्छा रहे। यह सोच कर राज्य प्राप्ति की इच्छा से सारनाम का जाप प्रारम्भ कर दिया। इसी प्रकार अन्य आत्माओं ने (जो परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों में फंसी हैं) सोचा कि वे जो ब्रह्म के साथ आत्माऐं गई हैं वे तो वहाँ मौज-मस्ती मनाऐंगे, हम पीछे रह गये। परब्रह्म के मन में यह धारणा बनी कि क्षर पुरुष अलग होकर बहुत सुखी होगा। यह विचार कर अन्तरात्मा से भिन्न स्थान प्राप्ति की ठान ली। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) ने हठ योग नहीं किया, परन्तु केवल अलग राज्य प्राप्ति के लिए सहज ध्यान योग विशेष कसक के साथ करता रहा। अलग स्थान प्राप्त करने के लिए पागलों की तरह विचरने लगा, खाना-पीना भी त्याग दिया। अन्य कुछ आत्माऐं जो पहले काल ब्रह्म के साथ गई आत्माओं के प्रेम में व्याकुल थी, वे अक्षर पुरूष के वैराग्य पर आसक्त होकर उसे चाहने लगी। पूर्ण प्रभु के पूछने पर परब्रह्म ने अलग स्थान माँगा तथा कुछ हंसात्माओं के लिए भी याचना की। तब कविर्देव ने कहा कि जो आत्मा आपके साथ स्वेच्छा से जाना चाहें उन्हें भेज देता हूँ। पूर्ण प्रभु ने पूछा कि कौन हंस आत्मा परब्रह्म के साथ जाना चाहता है, सहमति व्यक्त करे। बहुत समय उपरान्त एक हंस ने स्वीकृति दी, फिर देखा-देखी उन सर्व आत्माओं ने भी सहमति व्यक्त कर दी। सर्व प्रथम स्वीकृति देने वाले हंस को स्त्री रूप बनाया, उसका नाम ईश्वरी माया (प्रकृति सुरति) रखा तथा अन्य आत्माओं को उस ईश्वरी माया में प्रवेश करके अचिन्त द्वारा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) के पास भेजा। (पतिव्रता पद से गिरने की सजा पाई।)

कई युगों तक दोनों सात संख ब्रह्माण्डों में रहे, परन्तु परब्रह्म ने दुर्व्यवहार नहीं किया। ईश्वरी माया की स्वेच्छा से अंगीकार किया तथा अपनी शब्द शक्ति द्वारा नाखुनों से स्त्री इन्द्री (योनि) बनाई। ईश्वरी देवी की सहमति से संतान उत्पन्न की। इस लिए परब्रह्म के लोक (सात संख ब्रह्माण्डों) में प्राणियों को तप्तशिला का कष्ट नहीं है तथा वहाँ पशु-पक्षी भी ब्रह्म लोक के देवों से अच्छे चरित्र युक्त हैं। आयु भी बहुत लम्बी है, परन्तु जन्म - मत्यु कर्माधार पर कर्मदण्ड तथा परिश्रम करके ही उदर पूर्ति होती है। स्वर्ग तथा नरक भी ऐसे ही बने हैं। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) को सात संख ब्रह्माण्ड उसके इच्छा रूपी भक्ति ध्यान अर्थात् सहज समाधि विधि से की उस की कमाई के प्रतिफल में प्रदान किये तथा सत्यलोक से भिन्न स्थान पर गोलाकार परिधि में बन्द करके सात संख ब्रह्माण्डों सहित अक्षर ब्रह्म व ईश्वरी माया को निष्कासित कर दिया।

पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) असंख्य ब्रह्माण्डों जो सत्यलोक आदि में हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्डों तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों का भी प्रभु (मालिक) है अर्थात् परमेश्वर कविर्देव कुल का मालिक है।

श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी आदि के चार-चार भुजाएं तथा 16 कलाएं हैं तथा प्रकति देवी (दुर्गा) की आठ भुजाएं हैं तथा 64 कलाएं हैं। ब्रह्म (क्षर पुरुष) की एक हजार भुजाएं हैं तथा एक हजार कलाएं है तथा इक्कीस ब्रह्माण्ड़ों का प्रभु है। परब्रह्म (अक्षर पुरुष) की दस हजार भुजाएं हैं तथा दस हजार कला हैं तथा सात संख ब्रह्माण्डों का प्रभु है। पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष अर्थात् सतपुरुष) की असंख्य भुजाएं तथा असंख्य कलाएं हैं तथा ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्ड व परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्डों सहित असंख्य ब्रह्माण्डों का प्रभु है। प्रत्येक प्रभु अपनी सर्व भुजाओं को समेट कर केवल दो भुजाएं भी रख सकते हैं तथा जब चाहें सर्व भुजाओं को भी प्रकट कर सकते हैं। पूर्ण परमात्मा परब्रह्म के प्रत्येक ब्रह्माण्ड में भी अलग स्थान बनाकर अन्य रूप में गुप्त रहता है। यूं समझो जैसे एक घूमने वाला कैमरा बाहर लगा देते हैं तथा अन्दर टी.वी. (टेलीविजन) रख देते हैं। टी. वी. पर बाहर का सर्व दश्य नजर आता है तथा दूसरा टी.वी. बाहर रख कर अन्दर का कैमरा स्थाई करके रख दिया जाए, उसमें केवल अन्दर बैठे प्रबन्धक का चित्र दिखाई देता है। जिससे सर्व कर्मचारी सावधान रहते हैं।

इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा अपने सतलोक में बैठ कर सर्व को नियंत्रित किए हुए हैं तथा प्रत्येक ब्रह्माण्ड में भी सतगुरु कविर्देव विद्यमान रहते हैं जैसे सूर्य दूर होते हुए भी अपना प्रभाव अन्य लोकों में बनाए हुए है।

"पवित्र अथर्ववेद में सष्टि रचना का प्रमाण"

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 1 :-

ब्रह्म जज्ञानं प्रथमं पुरस्ताद् वि सीमतः सुरुचो वेन आवः।
सः बुध्न्या उपमा अस्य विष्ठाः सतश्च योनिमसतश्च वि वः।। 1।।

ब्रह्म—ज—ज्ञानम्—प्रथमम्—पुरस्तात्—विसिमतः—सुरुचः—वेनः—आवः—सः—
बुध्न्याः —उपमा—अस्य—विष्ठाः—सतः—च—योनिम्—असतः—च—वि वः

अनुवाद :— (प्रथमम्) प्राचीन अर्थात् सनातन (ब्रह्म) परमात्मा ने (ज) प्रकट होकर (ज्ञानम्) अपनी सूझ—बूझ से (पुरस्तात्) शिखर में अर्थात् सतलोक आदि को (सुरुचः) स्वइच्छा से बड़े चाव से

स्वप्रकाशित (विसिमतः) सीमा रहित अर्थात् विशाल सीमा वाले भिन्न लोकों को रचा। उस (वेनः) जुलाहे ने ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर (आवः) सुरक्षित किया (च) तथा (सः) वह पूर्ण ब्रह्म ही सर्व रचना करता है (अस्य) इसलिए उसी (बुध्न्याः) मूल मालिक ने (योनिम्) मूलस्थान सत्यलोक की रचना की है (अस्य) इस के (उपमा) सदृश अर्थात् मिलते जुलते (सतः) अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म के लोक कुछ स्थाई (च) तथा (असतः) क्षर पुरुष के अस्थाई लोक आदि (वि वः) आवास स्थान भिन्न (विष्ठाः) स्थापित किए।

भावार्थ :- पवित्र वेदों को बोलने वाला ब्रह्म (काल) कह रहा है कि सनातन परमेश्वर ने स्वयं अनामय (अनामी) लोक से सत्यलोक में प्रकट होकर अपनी सूझ-बूझ से कपड़े की तरह रचना करके ऊपर के सतलोक आदि को सीमा रहित स्वप्रकाशित अजर - अमर अर्थात् अविनाशी ठहराए तथा नीचे के परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्माण्ड व इनमें छोटी-से छोटी रचना भी उसी परमात्मा ने अस्थाई की है।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 2 :-

इयं पित्र्या राष्ट्र्येत्वग्रे प्रथमाय जनुषे भुवनेष्ठाः।
तस्मा एतं सुरुचं ह्वारमह्यं घर्मं श्रीणन्तु प्रथमाय धास्यवे।।2।।

इयम्—पित्र्या—राष्ट्रि—एतु—अग्रे—प्रथमाय—जनुषे—भुवनेष्ठाः—तस्मा—एतम्—सुरुचम् — हवारमह्यम्—धर्मम्—श्रीणान्तु—प्रथमाय—धास्यवे

अनुवाद :— (इयम्) इसी (पित्र्या) जगतपिता परमेश्वर ने (एतु) इस (अग्रे) सर्वोत्तम् (प्रथमाय) सर्व से पहली माया परानन्दनी (राष्ट्रि) राजेश्वरी शक्ति अर्थात् पराशक्ति जिसे आकर्षण शक्ति भी कहते हैं, को (जनुषे) उत्पन्न करके (भुवनेष्ठाः) लोक स्थापना की (तस्मा) उसी परमेश्वर ने (सुरुचम्) बड़े चाव के साथ स्वेच्छा से (एतम्) इस (प्रथमाय) प्रथम उत्पत्ति की शक्ति अर्थात्। पराशक्ति के द्वारा (ह्वारमह्यम्) एक दूसरे के वियोग को रोकने अर्थात् आकर्षण शक्ति के (श्रीणान्तु) गुरूत्व आकर्षण को परमात्मा ने आदेश दिया सदा रहो उस कभी समाप्त न होने वाले (धर्मम्) स्वभाव से (धास्यवे) धारण करके ताने अर्थात् कपड़े की तरह बुनकर रोके हुए है।

भावार्थ :- जगतपिता परमेश्वर ने अपनी शब्द शक्ति से राष्ट्री अर्थात् सबसे पहली माया राजेश्वरी उत्पन्न की तथा उसी पराशक्ति के द्वारा एक-दूसरे को आकर्षण शक्ति से रोकने वाले कभी न समाप्त होने वाले गुण से उपरोक्त सर्व ब्रह्माण्डों को स्थापित किया है।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 3 :-

प्र यो जज्ञे विद्वानस्य बन्धुर्विश्वा देवानां जनिमा विवक्ति।
ब्रह्म ब्रह्मण उज्जभार मध्यान्नीचैरुच्चैः स्वधा अभि प्र तस्थौ।।3।।

प्र—यः—जज्ञे—विद्वानस्य—बन्धुः—विश्वा—देवानाम्—जनिमा—विवक्ति—ब्रह्मः—ब्रह्मणः—उज्जभार—मध्यात्—निचैः—उच्चैः—स्वधा—अभिः—प्रतस्थौ

अनुवाद :— (प्र) सर्व प्रथम (देवानाम्) देवताओं व ब्रह्माण्डों की (जज्ञे) उत्पति के ज्ञान को (विद्वानस्य) जिज्ञासु भक्त का (यः) जो (बन्धुः) वास्तविक साथी अर्थात् पूर्ण परमात्मा ही अपने निज सेवक को (जनिमा) अपने द्वारा सृजन किए हुए को (विवक्ति) स्वयं ही ठीक—ठीक विस्तार पूर्वक बताता है कि (ब्रह्मणः) पूर्ण परमात्मा ने (मध्यात्) अपने मध्य से अर्थात् शब्द शक्ति से (ब्रह्मः) ब्रह्म—क्षर पुरूष अर्थात् काल को (उज्जभार) उत्पन्न करके (विश्वा) सारे संसार को अर्थात् सर्व लोकों को (उच्चैः) ऊपर

सत्यलोक आदि (निचैः) नीचे परब्रह्म व ब्रह्म के सर्व ब्रह्माण्ड (स्वधा) अपनी धारण करने वाली (अभिः) आकर्षण शक्ति से (प्र तस्थौ) दोनों को अच्छी प्रकार स्थित किया।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा अपने द्वारा रची संष्टि का ज्ञान तथा सर्व आत्माओं की उत्पत्ति का ज्ञान अपने निजी दास को स्वयं ही सही बताता है कि पूर्ण परमात्मा ने अपने मध्य अर्थात् अपने शरीर से अपनी शब्द शक्ति के द्वारा ब्रह्म (क्षर पुरुष/काल) की उत्पत्ति की तथा सर्व ब्रह्माण्डों को ऊपर सतलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक आदि तथा नीचे परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म के 21 ब्रह्माण्डों को अपनी धारण करने वाली आकर्षण शक्ति से ठहराया हुआ है।

जैसे पूर्ण परमात्मा कबीर परमेश्वर (कविर्देव) ने अपने निजी सेवक अर्थात् सखा श्री धर्मदास जी, आदरणीय गरीबदास जी आदि को अपने द्वारा रची संष्टि का ज्ञान स्वयं ही बताया। उपरोक्त वेद मंत्र भी यही समर्थन कर रहा है।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र नं. 4

सः हि दिवः सः पंथिव्या ऋतस्था मही क्षेमं रोदसी अस्कभायत्।

महान् मही अस्कभायद् वि जातो द्यां सद्म पार्थिवं च रजः।।4।।

:-हि-दिवः-स-पंथिव्या-ऋतस्था-मही-क्षेमम्-रोदसी-अकस्भायत्-

महान् -मही-अस्कभायद्-विजातः-धाम्-सदम्-पार्थिवम्-च-रजः

अनुवाद - (सः)उसी सर्वशक्तिमान परमात्मा ने (हि) निःसंदेह (दिवः) ऊपर के चारों दिव्य लोक जैसे सत्य लोक, अलख लोक, अगम लोक तथा अनामी अर्थात् अकह लोक अर्थात् दिव्य गुणों युक्त लोकों को (ऋतस्था) सत्य स्थिर अर्थात् अजर-अमर रूप से स्थिर किए (स) उन्हीं के समान (पंथिव्या) नीचे के पंथ्वी वाले सर्व लोकों जैसे परब्रह्म के सात संख तथा ब्रह्म/काल के इक्कीस ब्रह्माण्ड (मही) पंथ्वी तत्व से (क्षेमम्) सुरक्षा के साथ (अस्कभायत्) ठहराया (रोदसी) आकाश तत्व तथा पंथ्वी तत्व दोनों से ऊपर नीचे के ब्रह्माण्डों को{जैसे आकाश एक सुक्ष्म तत्व है, आकाश का गुण शब्द है, पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के लोक शब्द रूप रचे जो तेजपुंज के बनाए हैं तथा नीचे के परब्रह्म (अक्षर पुरूष) के सप्त संख ब्रह्माण्ड तथा ब्रह्म/क्षर पुरूष के इक्कीस ब्रह्माण्डों को पंथ्वी तत्व से अस्थाई रचा} (महान्) पूर्ण परमात्मा ने (पार्थिवम्) पंथ्वी वाले (वि) भिन्न-भिन्न (धाम्) लोक (च) और (सदम्) आवास स्थान (मही) पंथ्वी तत्व से (रजः) प्रत्येक ब्रह्माण्ड में छोटे-छोटे लोकों की (जातः) रचना करके (अस्कभायत्) स्थिर किया।

भावार्थ :- ऊपर के चारों लोक सत्यलोक, अलख लोक, अगम लोक, अनामी लोक, यह तो अजर-अमर स्थाई अर्थात् अविनाशी रचे हैं तथा नीचे के ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोकों को अस्थाई रचना करके तथा अन्य छोटे-छोटे लोक भी उसी परमेश्वर ने रच कर स्थिर किए।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 5

सः बुध्न्यादाष्ट्र जनुषोऽभ्यग्रं बंहस्पतिर्देवता तस्य सम्राट्।

अहर्यच्छुक्रं ज्योतिषो जनिष्टाथ द्युमन्तो वि वसन्तु विप्राः।।5।।

सः-बुध्न्यात्-आष्ट्र-जनुषेः-अभि-अग्रम्-बंहस्पतिः-देवता-तस्य- सम्राट-अहः-यत्-शुक्रम्-ज्योतिषः-जनिष्ट-अथ-द्युमन्तः-वि-वसन्तु-विप्राः

अनुवाद :- (सः) उसी (बुध्न्यात्) मूल मालिक से (अभि-अग्रम्) सर्व प्रथम स्थान पर (आष्ट्र) अष्टँगी माया-दुर्गा अर्थात् प्रकंति देवी (जनुषेः) उत्पन्न हुई क्योंकि नीचे के परब्रह्म व ब्रह्म के लोकों

का प्रथम स्थान सतलोक है यह तीसरा धाम भी कहलाता है (तस्य) इस दुर्गा का भी मालिक यही (सम्राट) राजाधिराज (बंहस्पतिः) सबसे बड़ा पति व जगतगुरु (देवता) परमेश्वर है। (यत्) जिस से (अहः) सबका वियोग हुआ (अथ) इसके बाद (ज्योतिषः) ज्योति रूप निरंजन अर्थात् काल के (शुक्रम्) वीर्य अर्थात् बीज शक्ति से (जनिष्ट) दुर्गा के उदर से उत्पन्न होकर (विप्राः) भक्त आत्माएं (वि) अलग से (द्युमन्तः) मनुष्य लोक तथा स्वर्ग लोक में ज्योति निरंजन के आदेश से दुर्गा ने कहा (वसन्तु) निवास करो, अर्थात् वे निवास करने लगी।

भावार्थ :- पूर्ण परमात्मा ने ऊपर के चारों लोकों में से जो नीचे से सबसे प्रथम अर्थात् सत्यलोक में आष्ट्रा अर्थात् अष्टंगी (प्रकंति देवी/दुर्गा) की उत्पत्ति की। यही राजाधिराज, जगतगुरु, पूर्ण परमेश्वर (सतपुरुष) है जिससे सबका वियोग हुआ है। फिर सर्व प्राणी ज्योति निरंजन (काल) के (वीर्य) बीज से दुर्गा (आष्ट्रा) के गर्भ द्वारा उत्पन्न होकर स्वर्ग लोक व पंथ्वी लोक पर निवास करने लगे।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 6

नूनं तदस्य काव्यो हिनोति महो देवस्य पूर्व्यस्य धाम।
एष जज्ञे बहुभिः साकमित्था पूर्वे अर्धे विषिते ससन् नु।।6।।

नूनम्—तत्—अस्य—काव्यः—महः—देवस्य—पूर्व्यस्य—धाम—हिनोति—पूर्वे— विषिते—एष—जज्ञे—बहुभिः—साकम्—इत्था—अर्धे—ससन्—नु।

अनुवाद – (नूनम्) निसंदेह (तत्) वह पूर्ण परमेश्वर अर्थात् तत् ब्रह्म ही (अस्य) इस (काव्यः) भक्त आत्मा जो पूर्ण परमेश्वर की भक्ति विधिवत करता है को वापिस (महः) सर्वशक्तिमान (देवस्य) परमेश्वर के (पूर्व्यस्य) पहले के (धाम) लोक में अर्थात् सत्यलोक में (हिनोति) भेजता है।

(पूर्वे) पहले वाले (विषिते) विशेष चाहे हुए (एष) इस परमेश्वर को व (जज्ञे) संष्टि उत्पति के ज्ञान को जान कर (बहुभिः) बहुत आनन्द (साकम्) के साथ (अर्धे) आधा (ससन्) सोता हुआ (इत्था) विधिवत् इस प्रकार (नु) सच्ची आत्मा से स्तुति करता है।

भावार्थ :- वही पूर्ण परमेश्वर सत्य साधना करने वाले साधक को उसी पहले वाले स्थान (सत्यलोक) में ले जाता है, जहाँ से बिछुड़ कर आए थे। वहाँ उस वास्तविक सुखदाई प्रभु को प्राप्त करके खुशी से आत्म विभोर होकर मस्ती से स्तुति करता है कि हे परमात्मा असंख्य जन्मों के भूले-भटकों को वास्तविक ठिकाना मिल गया। इसी का प्रमाण पवित्र ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16 में भी है।

आदरणीय गरीबदास जी को इसी प्रकार पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) स्वयं सत्यभक्ति प्रदान करके सत्यलोक लेकर गए थे, तब अपनी अमंतवाणी में आदरणीय गरीबदास जी महाराज ने आँखों देखकर कहाः-

गरीब, अजब नगर में ले गए, हमकुँ सतगुरु आन।
झिलके बिम्ब अगाध गति, सुते चादर तान।।

अथर्ववेद काण्ड नं. 4 अनुवाक नं. 1 मंत्र 7

योऽथर्वाणं पित्तरं देवबन्धुं बंहस्पतिं नमसाव च गच्छात्।
त्वं विश्वेषां जनिता यथासः कविर्देवो न दभायत् स्वधावान्।।7।।

यः—अथर्वाणम्—पित्तरम्—देवबन्धुम्—बंहस्पतिम्—नमसा—अव—च— गच्छात्—त्वम्—

विश्वेषाम्–जनिता–यथा–सः–कविर्देवः–न–दभायत्–स्वधावान्

अनुवाद :– (यः) जो (अथर्वाणम्) अचल अर्थात् अविनाशी (पित्तरम्) जगत पिता (देव बन्धुम्) भक्तों का वास्तविक साथी अर्थात् आत्मा का आधार (बंहस्पतिम्) जगतगुरु (च) तथा (नमसा) विनम्र पुजारी अर्थात् विधिवत् साधक को (अव) सुरक्षा के साथ (गच्छात्) सतलोक गए हुओं को अर्थात् जिनका पूर्ण मोक्ष हो गया, वे सत्यलोक में जा चुके हैं। उनको सतलोक ले जाने वाला (विश्वेषाम्) सर्व ब्रह्माण्डों की (जनिता) रचना करने वाला जगदम्बा अर्थात् माता वाले गुणों से भी युक्त (न दभायत्) काल की तरह धोखा न देने वाले (स्वधावान्) स्वभाव अर्थात् गुणों वाला (यथा) ज्यों का त्यों अर्थात् वैसा ही (सः) वह (त्वम्) आप (कविर्देवः/ कविर्देवः) कविर्देव है अर्थात् भाषा भिन्न इसे कबीर परमेश्वर भी कहते हैं।

भावार्थ :- इस मंत्र में यह भी स्पष्ट कर दिया कि उस परमेश्वर का नाम कविर्देव अर्थात् कबीर परमेश्वर है, जिसने सर्व रचना की है।

जो परमेश्वर अचल अर्थात् वास्तव में अविनाशी (गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में भी प्रमाण है) जगत् गुरु, आत्माधार, जो पूर्ण मुक्त होकर सत्यलोक गए हैं उनको सतलोक ले जाने वाला, सर्व ब्रह्माण्डों का रचनहार, काल (ब्रह्म) की तरह धोखा न देने वाला ज्यों का त्यों वह स्वयं कविर्देव अर्थात् कबीर प्रभु है। यही परमेश्वर सर्व ब्रह्माण्डों व प्राणियों को अपनी शब्द शक्ति से उत्पन्न करने के कारण (जनिता) माता भी कहलाता है तथा (पित्तरम्) पिता तथा (बन्धु) भाई भी वास्तव में यही है तथा (देव) परमेश्वर भी यही है। इसलिए इसी कविर्देव (कबीर परमेश्वर) की स्तुति किया करते हैं। त्वमेव माता च पिता त्वमेव त्वमेव बन्धु च सखा त्वमेव, त्वमेव विद्या च द्रविणंम त्वमेव, त्वमेव सर्व मम् देव देव। इसी परमेश्वर की महिमा का पवित्र ऋग्वेद मण्डल नं. 1 सूक्त नं. 24 में विस्तृत विवरण है।

ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 1

सहस्त्रशीर्षा पुरूषः सहस्राक्षः सहस्रपात्।
स भूमिं विश्वतों वृत्वात्यतिष्ठद्दशाङ्गुलम्।। 1।।

सहस्त्रशिर्षा–पुरूषः–सहस्राक्षः–सहस्रपात्
स–भूमिम्–विश्वतः–वृत्वा–अत्यातिष्ठत् –दशंगुलम्।

अनुवाद :– (पुरूषः) विराट रूप काल भगवान अर्थात् क्षर पुरूष (सहस्रशिर्षा) हजार सिरों वाला (सहस्राक्षः) हजार आँखों वाला (सहस्रपात्) हजार पैरों वाला है (स) वह काल (भूमिम्) पृथ्वी वाले इक्कीस ब्रह्माण्डों को (विश्वतः) सब ओर से (दशंगुलम्) दसों अंगुलियों से अर्थात् पूर्ण रूप से काबू किए हुए (वृत्वा) गोलाकार घेरे में घेर कर (अत्यातिष्ठत्) इस से बढ़कर अर्थात् अपने काल लोक में सबसे न्यारा भी इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में ठहरा है अर्थात् रहता है।

भावार्थ :- इस मंत्र में विराट (काल/ब्रह्म) का वर्णन है। (गीता अध्याय 10-11 में भी इसी काल/ब्रह्म का ऐसा ही वर्णन है अध्याय 11 मंत्र नं. 46 में अर्जुन ने कहा है कि हे सहस्राबाहु अर्थात् हजार भुजा वाले आप अपने चतुर्भुज रूप में दर्शन दीजिए)

जिसके हजारों हाथ, पैर, हजारों आँखे, कान आदि हैं वह विराट रूप काल प्रभु अपने आधीन सर्व प्राणियों को पूर्ण काबू करके अर्थात् 20 ब्रह्माण्डों को गोलाकार परिधि में रोककर स्वयं इनसे ऊपर (अलग) इक्कीसवें ब्रह्माण्ड में बैठा है।

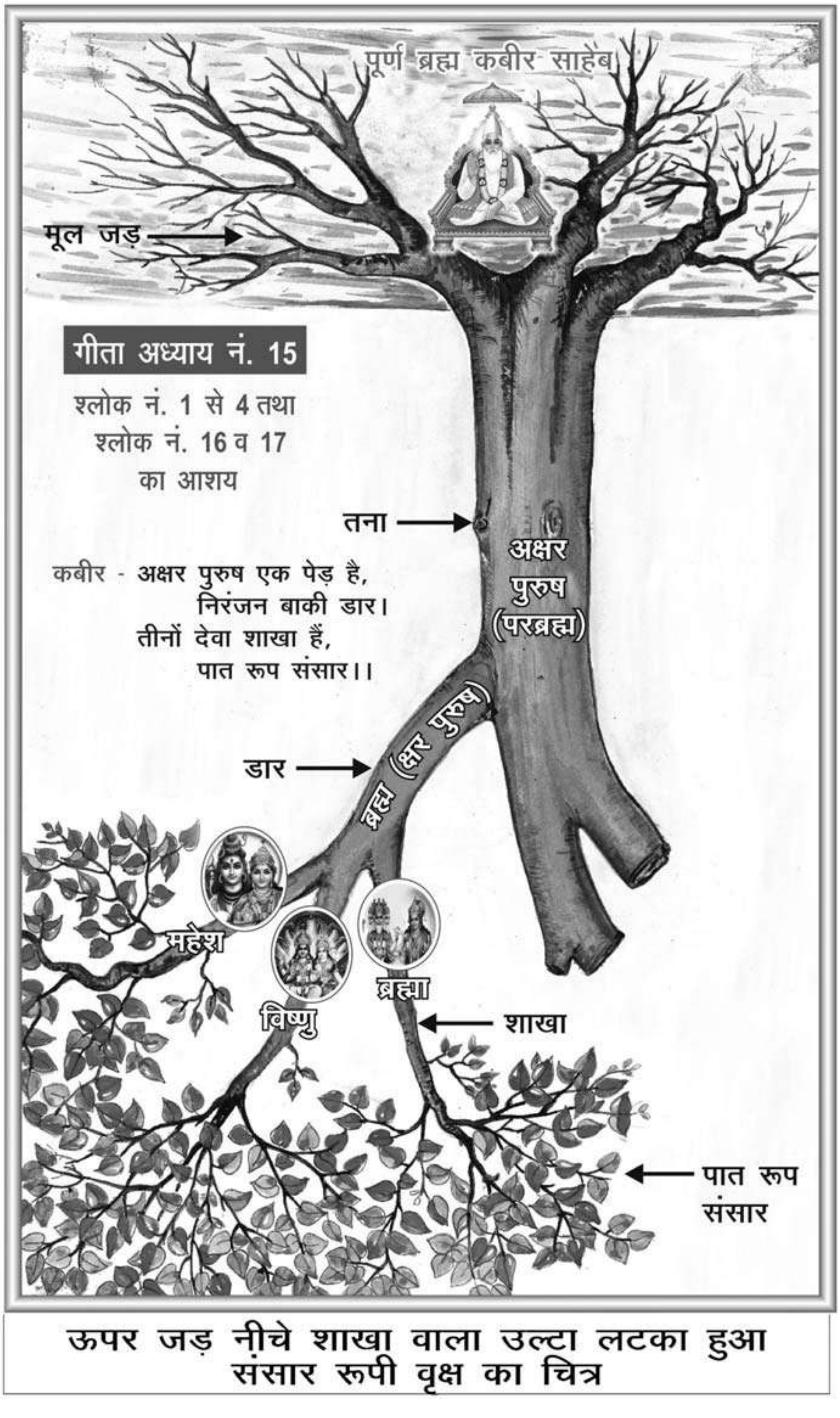

ऊपर जड़ नीचे शाखा वाला उल्टा लटका हुआ संसार रूपी वृक्ष का चित्र

"पवित्र ऋग्वेद में संष्टि रचना का प्रमाण"

ऋग्वेद मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 2

पुरूष एवेदं सर्वं यद्भूतं यच्च भाव्यम्।
उतामंतत्वस्येशानो यदन्नेनातिरोहति।। 2।।

पुरूष–एव–इदम्–सर्वम्–यत्–भूतम्–यत्–च–भाव्यम्
उत–अमंतत्वस्य– इशानः–यत्–अन्नेन–अतिरोहति

अनुवाद :– (एव) इसी प्रकार कुछ सही तौर पर (पुरूष) भगवान है वह अक्षर पुरूष अर्थात् परब्रह्म है (च) और (इदम्) यह (यत्) जो (भूतम्) उत्पन्न हुआ है (यत्) जो (भाव्यम्) भविष्य में होगा (सर्वम्) सब (यत्) प्रयत्न से अर्थात् मेहनत द्वारा (अन्नेन) अन्न से (अतिरोहति) विकसित होता है। यह अक्षर पुरूष भी (उत) सन्देह युक्त (अमंतत्वस्य) मोक्ष का (इशानः) स्वामी है अर्थात् भगवान तो अक्षर पुरूष भी कुछ सही है परन्तु पूर्ण मोक्ष दायक नहीं है।

भावार्थ :- इस मंत्र में परब्रह्म (अक्षर पुरुष) का विवरण है जो कुछ भगवान वाले लक्षणों से युक्त है, परन्तु इसकी भक्ति से भी पूर्ण मोक्ष नहीं है, इसलिए इसे संदेहयुक्त मुक्ति दाता कहा है। इसे कुछ प्रभु के गुणों युक्त इसलिए कहा है कि यह काल की तरह तप्तशिला पर भून कर नहीं खाता। परन्तु इस परब्रह्म के लोक में भी प्राणियों को परिश्रम करके कर्माधार पर ही फल प्राप्त होता है तथा अन्न से ही सर्व प्राणियों के शरीर विकसित होते हैं, जन्म तथा मंत्यु का समय भले ही काल (क्षर पुरुष) से अधिक है, परन्तु फिर भी उत्पत्ति प्रलय तथा चौरासी लाख योनियों में यातना बनी रहती है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 3

एतावानस्य महिमातो ज्यायाँश्च पुरूषः।
पादोऽस्य विश्वा भूतानि त्रिपादस्यामंतं दिवि।। 3।।

तावान्–अस्य–महिमा–अतः–ज्यायान्–च–पुरूषः
पादः–अस्य–विश्वा– भूतानि–त्रि–पाद्–अस्य–अमंतम्–दिवि

अनुवाद :– (अस्य) इस अक्षर पुरूष अर्थात्। परब्रह्म की तो (एतावान्) इतनी ही (महिमा) प्रभुता है। (च) तथा (पुरूषः) वह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म परमेश्वर तो (अतः) इससे भी (ज्यायान्) बड़ा है (विश्वा) समस्त (भूतानि) क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष तथा इनके लोकों में तथा सत्यलोक तथा इन लोकों में जितने भी प्राणी हैं (अस्य) इस पूर्ण परमात्मा परम अक्षर पुरूष का (पादः) एक पैर है अर्थात् एक अंश मात्र है। (अस्य) इस परमेश्वर के (त्रि) तीन (दिवि) दिव्य लोक जैसे सत्यलोक–अलख लोक–अगम लोक (अमंतम्) अविनाशी (पाद्) दूसरा पैर है अर्थात् जो भी सर्व ब्रह्माण्डों में उत्पन्न है वह सत्यपुरूष पूर्ण परमात्मा का ही अंश या अंग है।

भावार्थ :- इस ऊपर के मंत्र 2 में वर्णित अक्षर पुरुष (परब्रह्म) की तो इतनी ही महिमा है तथा वह पूर्ण पुरुष कविर्देव तो इससे भी बड़ा है अर्थात् सर्वशक्तिमान है तथा सर्व ब्रह्माण्ड उसी के अंश मात्र पर ठहरे हैं। इस मंत्र में तीन लोकों का वर्णन इसलिए है क्योंकि चौथा अनामी (अनामय) लोक अन्य रचना से पहले का है। यही तीन प्रभुओं (क्षर पुरुष-अक्षर पुरुष तथा इन दोनों से अन्य परम अक्षर पुरुष) का विवरण श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक संख्या 16-17 में है। {इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास साहेब जी कहते हैं कि :-

गरीब, जाके अर्ध रूम पर सकल पसारा, ऐसा पूर्ण ब्रह्म हमारा।।
गरीब, अनन्त कोटि ब्रह्माण्ड का, एक रति नहीं भार। सतगुरु पुरुष कबीर हैं, कुल के सृजनहार।।

इसी का प्रमाण आदरणीय दादू साहेब जी कह रहे हैं कि :-

जिन मोकुं निज नाम दिया, सोई सतगुरु हमार। दादू दूसरा कोए नहीं, कबीर सृजनहार।।

इसी का प्रमाण आदरणीय नानक साहेब जी देते हैं कि :-

यक अर्ज गुफतम पेश तो दर कून करतार। हक्का कबीर करीम तू, बेएब परवरदिगार।।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब, पृष्ठ नं. 721, महला 1, राग तिलंग)

कून करतार का अर्थ होता है सर्व का रचनहार, अर्थात् शब्द शक्ति से रचना करने वाला शब्द स्वरूपी प्रभु, हक्का कबीर का अर्थ है सत् कबीर, करीम का अर्थ दयालु, परवरदिगार का अर्थ परमात्मा है।}

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 4

त्रिपादूर्ध्व उदैत्पुरूषः पादोऽस्येहाभवत्पुनः।
ततो विष्व ङ्व्यक्रामत्साशनानशने अभि।।4।।

त्रि–पाद–ऊर्ध्वः–उदैत्–पुरूषः–पादः–अस्य–इह–अभवत्–पूनः
ततः– विश्वङ्– व्यक्रामत्–सः–अशनानशने–अभि

अनुवाद :– (पुरूषः) यह परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् अविनाशी परमात्मा (ऊर्ध्वः) ऊपर (त्रि) तीन लोक जैसे सत्यलोक–अलख लोक–अगम लोक रूप (पाद) पैर अर्थात् ऊपर के हिस्से में (उदैत्) प्रकट होता है अर्थात् विराजमान है (अस्य) इसी परमेश्वर पूर्ण ब्रह्म का (पादः) एक पैर अर्थात् एक हिस्सा जगत रूप (पुनर्) फिर (इह) यहाँ (अभवत्) प्रकट होता है (ततः) इसलिए (सः) वह अविनाशी पूर्ण परमात्मा (अशनानशने) खाने वाले काल अर्थात् क्षर पुरूष व न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरूष के भी (अभि)ऊपर (विश्वङ्)सर्वत्र (व्यक्रामत्)व्याप्त है अर्थात् उसकी प्रभुता सर्व ब्रह्माण्डों व सर्व प्रभुओं पर है वह कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है।

भावार्थ :- यही सर्व सृष्टि रचन हार प्रभु अपनी रचना के ऊपर के हिस्से में तीनों स्थानों (सतलोक, अलखलोक, अगमलोक) में तीन रूप में स्वयं प्रकट होता है अर्थात् स्वयं ही विराजमान है। यहाँ अनामी लोक का वर्णन इसलिए नहीं किया क्योंकि अनामी लोक में कोई रचना नहीं है तथा अकह (अनामय) लोक शेष रचना से पूर्व का है फिर कहा है कि उसी परमात्मा के सत्यलोक से बिछुड़ कर नीचे के ब्रह्म व परब्रह्म के लोक उत्पन्न होते हैं और वह पूर्ण परमात्मा खाने वाले ब्रह्म अर्थात् काल से (क्योंकि ब्रह्म/काल विराट शाप वश एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों को खाता है) तथा न खाने वाले परब्रह्म अर्थात् अक्षर पुरुष से (परब्रह्म प्राणियों को खाता नहीं, परन्तु जन्म-मृत्यु, कर्मदण्ड ज्यों का त्यों बना रहता है) भी ऊपर सर्वत्र व्याप्त है अर्थात् इस पूर्ण परमात्मा की प्रभुता सर्व के ऊपर है, कबीर परमेश्वर ही कुल का मालिक है। जिसने अपनी शक्ति को सर्व के ऊपर फैलाया है जैसे सूर्य अपने प्रकाश को सर्व के ऊपर फैला कर प्रभावित करता है, ऐसे पूर्ण परमात्मा ने अपनी शक्ति रूपी रेंज (क्षमता) को सर्व ब्रह्माण्डों को नियन्त्रित रखने के लिए छोड़ा हुआ है जैसे मोबाईल फोन का टावर एक देशिय होते हुए अपनी शक्ति अर्थात् मोबाइल फोन की रेंज (क्षमता) चहुं ओर फैलाए रहता है। इसी प्रकार पूर्ण प्रभु ने अपनी निराकार शक्ति सर्व व्यापक की है जिससे पूर्ण परमात्मा सर्व ब्रह्माण्डों को एक स्थान पर बैठ कर नियन्त्रित रखता है।

इसी का प्रमाण आदरणीय गरीबदास जी महाराज दे रहे हैं (अमतवाणी राग कल्याण)

तीन चरण चिन्तामणी साहेब, शेष बदन पर छाए।
माता, पिता, कुल न बन्धु, ना किन्हें जननी जाये।।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 5

तस्माद्विराळजायत विराजो अधि पूरूषः।
स जातो अत्यरिच्यत पश्चाद्भूमिमथो पुरः।। 5।।

तस्मात्—विराट्—अजायत—विराजः—अधि—पुरूषः
स—जातः—अत्यरिच्यत— पश्चात् —भूमिम्—अथः—पुरः।

अनुवाद :— (तस्मात्) उसके पश्चात् उस परमेश्वर सत्यपुरूष की शब्द शक्ति से (विराट्) विराट अर्थात् ब्रह्म, जिसे क्षर पुरूष व काल भी कहते हैं (अजायत) उत्पन्न हुआ है (पश्चात्) इसके बाद (विराजः) विराट पुरुष अर्थात् काल भगवान से (अधि) बड़े (पुरूषः) परमेश्वर ने (भूमिम्) पथ्वी वाले लोक, काल ब्रह्म तथा परब्रह्म के लोक को (अत्यरिच्यत) अच्छी तरह रचा (अथः) फिर (पुरः) अन्य छोटे—छोटे लोक (स) उस पूर्ण परमेश्वर ने ही (जातः) उत्पन्न किया अर्थात् स्थापित किया।

भावार्थ :- उपरोक्त मंत्र 4 में वर्णित तीनों लोकों (अगमलोक, अलख लोक तथा सतलोक) की रचना के पश्चात पूर्ण परमात्मा ने ज्योति निरंजन (ब्रह्म) की उत्पत्ति की अर्थात् उसी सर्व शक्तिमान परमात्मा पूर्ण ब्रह्म कविर्देव (कबीर प्रभु) से ही विराट अर्थात् ब्रह्म (काल) की उत्पत्ति हुई। यही प्रमाण गीता अध्याय 3 मन्त्र 15 में है कि अक्षर पुरुष अर्थात् अविनाशी प्रभु से ब्रह्म उत्पन्न हुआ यही प्रमाण अर्थववेद काण्ड 4 अनुवाक 1 सुक्त 3 में है कि पूर्ण ब्रह्म से ब्रह्म की उत्पत्ति हुई उसी पूर्ण ब्रह्म ने (भूमिम्) भूमि आदि छोटे-बड़े सर्व लोकों की रचना की। वह पूर्णब्रह्म इस विराट भगवान अर्थात् ब्रह्म से भी बड़ा है अर्थात् इसका भी मालिक है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 15

सप्तास्यासन्परिधयस्त्रिः सप्त समिधः कताः।
देवा यद्यज्ञं तन्वाना अबध्नन्पुरूषं पशुम्।। 15।।

सप्त—अस्य—आसन्—परिधयः—त्रिसप्त—समिधः—कताः
देवा—यत्—यज्ञम्— तन्वानाः— अबध्नन्—पुरूषम्—पशुम्।

अनुवाद :— (सप्त) सात संख ब्रह्माण्ड तो परब्रह्म के तथा (त्रिसप्त) इक्कीस ब्रह्माण्ड काल ब्रह्म के (समिधः) कर्मदण्ड दुःख रूपी आग से दुःखी (कताः) करने वाले (परिधयः) गोलाकार घेरा रूप सीमा में (आसन्) विद्यमान हैं (यत्) जो (पुरूषम्) पूर्ण परमात्मा की (यज्ञम्) विधिवत् धार्मिक कर्म अर्थात् पूजा करता है (पशुम्) बलि के पशु रूपी काल के जाल में कर्म बन्धन में बंधे (देवा) भक्तात्माओं को (तन्वानाः) काल के द्वारा रचे अर्थात् फैलाये पाप कर्म बंधन जाल से (अबध्नन्) बन्धन रहित करता है अर्थात् बन्दी छुड़ाने वाला बन्दी छोड़ है।

भावार्थ :- सात संख ब्रह्माण्ड परब्रह्म के तथा इक्कीस ब्रह्माण्ड ब्रह्म के हैं जिन में गोलाकार सीमा में बंद पाप कर्मों की आग में जल रहे प्राणियों को वास्तविक पूजा विधि बता कर सही उपासना करवाता है जिस कारण से बलि दिए जाने वाले पशु की तरह जन्म-मत्यु के काल (ब्रह्म) के खाने के लिए तप्त शिला के कष्ट से पीड़ित भक्तात्माओं को काल के कर्म बन्धन के फैलाए जाल को तोड़कर बन्धन रहित करता है अर्थात् बंधन छुड़वाने वाला बन्दी छोड़ है। इसी का प्रमाण पवित्र

यजुर्वेद अध्याय 5 मंत्र 32 में है कि कविरंघारिसि (कविर्) कबिर परमेश्वर (अंघ) पाप का (अरि) शत्रु (असि) है अर्थात् पाप विनाशक कबीर है। बम्भारिसि (बम्भारि) बन्धन का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ कबीर परमेश्वर (असि) है।

मण्डल 10 सुक्त 90 मंत्र 16

यज्ञेन यज्ञमयजन्त देवास्तानि धर्माणि प्रथमान्यासन्।
ते ह नाकं महिमानः सचन्त यत्र पूर्वे साध्याः सन्ति देवाः।।16।।

यज्ञेन्–अयज्ञम–अ–यजन्त–देवाः–तानि–धर्माणि–प्रथमानि– आसन्–ते– ह–नाकम्– महिमानः– सचन्त– यत्र–पूर्वे–साध्याः–सन्ति देवाः।

अनुवाद :– जो (देवाः) निर्विकार देव स्वरूप भक्तात्माएं (अयज्ञम्) अधूरी गलत धार्मिक पूजा के स्थान पर (यज्ञेन) सत्य भक्ति धार्मिक कर्म के आधार पर (अयजन्त) पूजा करते हैं (तानि) वे (धर्माणि) धार्मिक शक्ति सम्पन्न (प्रथमानि) मुख्य अर्थात् उत्तम (आसन्) हैं (ते ह) वे ही वास्तव में (महिमानः) महान भक्ति शक्ति युक्त होकर (साध्याः) सफल भक्त जन (नाकम्) पूर्ण सुखदायक परमेश्वर को (सचन्त) भक्ति निमित कारण अर्थात् सत्भक्ति की कमाई से प्राप्त होते हैं, वे वहाँ चले जाते हैं। (यत्र) जहाँ पर (पूर्वे) पहले वाली संष्टि के (देवाः) पापरहित देव स्वरूप भक्त आत्माएं (सन्ति) रहती हैं।

भावार्थ :- जो निर्विकार (जिन्होने मांस,शराब, तम्बाकू सेवन करना त्याग दिया है तथा अन्य बुराईयों से रहित है वे) देव स्वरूप भक्त आत्माएं शास्त्र विधि रहित पूजा को त्याग कर शास्त्रानुकूल साधना करते हैं वे भक्ति की कमाई से धनी होकर काल के ऋण से मुक्त होकर अपनी सत्य भक्ति की कमाई के कारण उस सर्व सुखदाई परमात्मा को प्राप्त करते हैं अर्थात् सत्यलोक में चले जाते हैं जहाँ पर सर्व प्रथम रची संष्टि के देव स्वरूप अर्थात् पाप रहित हंस आत्माएं रहती हैं।

जैसे कुछ आत्माएं तो काल (ब्रह्म) के जाल में फंस कर यहाँ आ गई, कुछ परब्रह्म के साथ सात संख ब्रह्माण्डों में आ गई, फिर भी असंख्य आत्माएं जिनका विश्वास पूर्ण परमात्मा में अटल रहा, जो पतिव्रता पद से नहीं गिरी वे वहीं रह गई, इसलिए यहाँ वही वर्णन पवित्र वेदों ने भी सत्य बताया है। यही प्रमाण गीता अध्याय 8 के श्लोक संख्या 8 से 10 में वर्णन है कि जो साधक पूर्ण परमात्मा की सतसाधना शास्त्रविधि अनुसार करता है वह भक्ति की कमाई के बल से उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त होता है अर्थात् उसके पास चला जाता है। इससे सिद्ध हुआ कि तीन प्रभु हैं ब्रह्म - परब्रह्म - पूर्णब्रह्म। इन्हीं को 1. ब्रह्म - ईश - क्षर पुरुष 2. परब्रह्म - अक्षर पुरुष/अक्षर ब्रह्म ईश्वर तथा 3. पूर्ण ब्रह्म - परम अक्षर ब्रह्म - परमेश्वर - सतपुरुष आदि पर्यायवाची शब्दों से जाना जाता है।

यही प्रमाण ऋग्वेद मण्डल 9 सूक्त 96 मंत्र 17 से 20 में स्पष्ट है कि पूर्ण परमात्मा कविर्देव (कबीर परमेश्वर) शिशु रूप धारण करके प्रकट होता है तथा अपना निर्मल ज्ञान अर्थात् तत्वज्ञान (कविर्गीर्भिः) कबीर वाणी के द्वारा अपने अनुयाइयों को बोल-बोल कर वर्णन करता है। वह कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ब्रह्म (क्षर पुरुष) के धाम तथा परब्रह्म (अक्षर पुरुष) के धाम से भिन्न जो पूर्ण ब्रह्म (परम अक्षर पुरुष) का तीसरा ऋतधाम (सतलोक) है, उसमें आकार में विराजमान है तथा सतलोक से चौथा अनामी लोक है, उसमें भी यही कविर्देव (कबीर परमेश्वर) अनामी पुरुष रूप में मनुष्य सदंश आकार में विराजमान है।

''पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण में सष्टि रचना का प्रमाण''

''ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव के माता–पिता''

(दुर्गा और ब्रह्म के योग से ब्रह्मा, विष्णु और शिव का जन्म)

पवित्र श्रीमद्देवी महापुराण तीसरा स्कन्द अध्याय 1-3(गीताप्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्ता श्री हनुमानप्रसाद पोद्दार तथा चिमन लाल गोस्वामी जी, पष्ठ नं. 114 से)

पष्ठ नं. 114 से 118 तक विवरण है कि कितने ही आचार्य भवानी को सम्पूर्ण मनोरथ पूर्ण करने वाली बताते हैं। वह प्रकति कहलाती है तथा ब्रह्म के साथ अभेद सम्बन्ध है। {जैसे पत्नी को अर्धागनी भी कहते हैं अर्थात् दुर्गा ब्रह्म (काल) की पत्नी है।} एक ब्रह्माण्ड की सष्टि रचना के विषय में राजा श्री परीक्षित के पूछने पर श्री व्यास जी ने बताया कि मैंने श्री नारद जी से पूछा था कि हे देवर्षे ! इस ब्रह्माण्ड की रचना कैसे हुई? मेरे इस प्रश्न के उत्तर में श्री नारद जी ने कहा कि मैंने अपने पिता श्री ब्रह्मा जी से पूछा था कि हे पिता श्री इस ब्रह्माण्ड की रचना आपने की या श्री विष्णु जी इसके रचयिता हैं या शिव जी ने रचा है? सच-सच बताने की कपा करें। तब मेरे पूज्य पिता श्री ब्रह्मा जी ने बताया कि बेटा नारद, मैंने अपने आपको कमल के फूल पर बैठा पाया था, मुझे ज्ञान नहीं, इस अगाध जल में मैं कहाँ से उत्पन्न हो गया। एक हजार वर्ष तक पथ्वी का अन्वेषण करता रहा, कहीं जल का ओर-छोर नहीं पाया। फिर आकाशवाणी हुई कि तप करो। एक हजार वर्ष तक तप किया। फिर सष्टि करने की आकाशवाणी हुई। इतने में मधु और कैटभ नाम के दो राक्षस आए, उनके भय से मैं कमल का डण्ठल पकड़ कर नीचे उतरा। वहाँ भगवान विष्णु जी शेष शैय्या पर अचेत पड़े थे। उनमें से एक स्त्री (प्रेतवत प्रविष्ट दुर्गा) निकली। वह आकाश में आभूषण पहने दिखाई देने लगी। तब भगवान विष्णु होश में आए। अब मैं तथा विष्णु जी दो थे। इतने में भगवान शंकर भी आ गए। देवी ने हमें विमान में बैठाया तथा ब्रह्म लोक में ले गई। वहाँ एक ब्रह्मा, एक विष्णु तथा एक शिव और देखा फिर एक देवी देखी,उसे देख कर विष्णु जी ने विवेक पूर्वक निम्न वर्णन किया (ब्रह्म काल ने भगवान विष्णु को चेतना प्रदान कर दी, उसको अपने बाल्यकाल की याद आई तब बचपन की कहानी सुनाई)।

पष्ठ नं. 119-120 पर भगवान विष्णु जी ने श्री ब्रह्मा जी तथा श्री शिव जी से कहा कि यह हम तीनों की माता है, यही जगत् जननी प्रकति देवी है। मैंने इस देवी को तब देखा था जब मैं छोटा सा बालक था, यह मुझे पालने में झुला रही थी।

तीसरा स्कन्ध पष्ठ नं. 123 पर श्री विष्णु जी ने श्री दुर्गा जी की स्तुति करते हुए कहा - तुम शुद्ध स्वरूपा हो, यह सारा संसार तुम्हीं से उद्भासित हो रहा है, मैं (विष्णु), ब्रह्मा और शंकर हम सभी तुम्हारी कपा से ही विद्यमान हैं। हमारा आविर्भाव (जन्म) और तिरोभाव (मत्यु) हुआ करता है अर्थात् हम तीनों देव नाशवान हैं, केवल तुम ही नित्य (अविनाशी) हो, जगत जननी हो, प्रकति देवी हो।

भगवान शंकर बोले - देवी यदि महाभाग विष्णु तुम्हीं से प्रकट (उत्पन्न) हुए हैं तो उनके बाद उत्पन्न होने वाले ब्रह्मा भी तुम्हारे ही बालक हुए। फिर मैं तमोगुणी लीला करने वाला शंकर क्या तुम्हारी संतान नहीं हुआ अर्थात् मुझे भी उत्पन्न करने वाली तुम्हीं हो।

विचार करें :- उपरोक्त विवरण से सिद्ध हुआ कि श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी नाशवान हैं। मत्युंजय (अजर-अमर) व सर्वेश्वर नहीं हैं तथा दुर्गा (प्रकति) के पुत्र हैं तथा ब्रह्म (काल-सदाशिव) इनका पिता है।

तीसरा स्कन्ध पष्ठ नं. 125 पर ब्रह्मा जी के पूछने पर कि हे माता! वेदों में जो ब्रह्म कहा है वह आप ही हैं या कोई अन्य प्रभु है ? इसके उत्तर में यहाँ तो दुर्गा कह रही है कि मैं तथा ब्रह्म एक ही हैं। फिर इसी स्कन्ध अ. 6 के पष्ठ नं. 129 पर कहा है कि अब मेरा कार्य सिद्ध करने के लिए विमान पर बैठ कर तुम लोग शीघ्र पधारो (जाओ)। कोई कठिन कार्य उपस्थित होने पर जब तुम मुझे याद करोगे, तब मैं सामने आ जाऊँगी। देवताओं मेरा (दुर्गा का) तथा ब्रह्म का ध्यान तुम्हें सदा करते रहना चाहिए। हम दोनों का स्मरण करते रहोगे तो तुम्हारे कार्य सिद्ध होने में तनिक भी संदेह नहीं है।

उपरोक्त व्याख्या से स्वसिद्ध है कि दुर्गा (प्रकति) तथा ब्रह्म (काल) ही तीनों देवताओं के माता-पिता हैं तथा ब्रह्मा, विष्णु व शिव जी नाशवान हैं व पूर्ण शक्ति युक्त नहीं हैं।

तीनों देवताओं (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी) की शादी दुर्गा (प्रकति देवी) ने की। पष्ठ नं. 128-129 पर, तीसरे स्कन्ध में।

गीता अध्याय नं. 7 का श्लोक नं. 12

ये, च, एव, सात्विकाः, भावाः, राजसाः, तामसाः, च, ये,
मतः, एव, इति, तान्, विद्धि, न, तु, अहम्, तेषु, ते, मयि।।

अनुवाद : (च) और (एव) भी (ये) जो (सात्विकाः) सत्वगुण विष्णु जी से स्थिति (भावाः) भाव हैं और (ये) जो (राजसाः) रजोगुण ब्रह्मा जी से उत्पत्ति (च) तथा (तामसाः) तमोगुण शिव से संहार हैं (तान्) उन सबको तू (मतः,एव) मेरे द्वारा सुनियोजित नियमानुसार ही होने वाले हैं (इति) ऐसा (विद्धि) जान (तु) परन्तु वास्तवमें (तेषु) उनमें (अहम्) मैं और (ते) वे (मयि) मुझमें (न) नहीं हैं।

''पवित्र शिव महापुराण में सष्टि रचना का प्रमाण''

(काल ब्रह्म व दुर्गा से विष्णु, ब्रह्मा व शिव की उत्पत्ति)

इसी का प्रमाण पवित्र श्री शिव पुराण गीता प्रैस गोरखपुर से प्रकाशित, अनुवादकर्ता श्री हनुमान प्रसाद पोद्दार, इसके अध्याय 6 रूद्र संहिता, पष्ठ नं. 100 पर कहा है कि जो मूर्ति रहित परब्रह्म है, उसी की मूर्ति भगवान सदाशिव है। इनके शरीर से एक शक्ति निकली, वह शक्ति अम्बिका, प्रकति (दुर्गा), त्रिदेव जननी (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी को उत्पन्न करने वाली माता) कहलाई। जिसकी आठ भुजाऐं हैं। वे जो सदाशिव हैं, उन्हें शिव, शंभू और महेश्वर भी कहते हैं। (पष्ठ नं. 101 पर) वे अपने सारे अंगों में भस्म रमाये रहते हैं। उन काल रूपी ब्रह्म ने एक शिवलोक नामक क्षेत्र का निर्माण किया। फिर दोनों ने पति-पत्नी का व्यवहार किया जिससे एक पुत्र उत्पन्न हुआ। उसका नाम विष्णु रखा (शिव पुराण पष्ठ नं. 102)।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 7 पष्ठ नं. 103 पर ब्रह्मा जी ने कहा कि मेरी उत्पत्ति भी भगवान सदाशिव (ब्रह्म-काल) तथा प्रकति (दुर्गा) के संयोग से अर्थात् पति-पत्नी के व्यवहार से ही हुई। फिर मुझे बेहोश कर दिया।

फिर रूद्र संहिता अध्याय नं. 9 पष्ठ नं. 110 पर कहा है कि इस प्रकार ब्रह्मा, विष्णु तथा रूद्र इन तीनों देवताओं में गुण हैं, परन्तु शिव (काल-ब्रह्म) गुणातीत माने गए हैं।

यहाँ पर चार सिद्ध हुए अर्थात् सदाशिव (काल-ब्रह्म) व प्रकति (दुर्गा) से ही ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव उत्पन्न हुए हैं। तीनों भगवानों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की माता जी श्री दुर्गा जी तथा पिता जी श्री ज्योति निरंजन (ब्रह्म) है। यही तीनों प्रभु रजगुण-ब्रह्मा जी, सतगुण-विष्णु जी, तमगुण-शिव जी हैं।

''पवित्र श्रीमद्भगवत गीता जी में संष्टि रचना का प्रमाण''

इसी का प्रमाण पवित्र गीता जी अध्याय 14 श्लोक 3 से 5 तक है। ब्रह्म (काल) कह रहा है कि प्रकंति (दुर्गा) तो मेरी पत्नी है, मैं ब्रह्म (काल) इसका पति हूँ। हम दोनों के संयोग से सर्व प्राणियों सहित तीनों गुणों (रजगुण - ब्रह्मा जी, सतगुण - विष्णु जी, तमगुण - शिवजी) की उत्पत्ति हुई है। मैं (ब्रह्म) सर्व प्राणियों का पिता हूँ तथा प्रकंति (दुर्गा) इनकी माता है। मैं इसके उदर में बीज स्थापना करता हूँ जिससे सर्व प्राणियों की उत्पत्ति होती है। प्रकंति (दुर्गा) से उत्पन्न तीनों गुण (रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु तथा तमगुण शिव) जीव को कर्म आधार से शरीर में बांधते हैं। यही प्रमाण अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16, 17 में भी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 1

ऊर्ध्वमूलम्, अधःशाखम्, अश्वत्थम्, प्राहुः, अव्ययम्,
छन्दांसि, यस्य, पर्णानि, यः, तम्, वेद, सः, वेदवित्।।

अनुवाद : (ऊर्ध्वमूलम्) ऊपर को पूर्ण परमात्मा आदि पुरुष परमेश्वर रूपी जड़ वाला (अधःशाखम्) नीचे को तीनों गुण अर्थात् रजगुण ब्रह्मा, सतगुण विष्णु व तमगुण शिव रूपी शाखा वाला (अव्ययम्) अविनाशी (अश्वत्थम्) विस्तारित पीपल का वंक्ष है, (यस्य) जिसके (छन्दांसि) जैसे वेद में छन्द है ऐसे संसार रूपी वंक्ष के भी विभाग छोटे–छोटे हिस्से टहनियाँ व (पर्णानि) पत्ते (प्राहुः) कहे हैं (तम्) उस संसाररूप वंक्षको (यः) जो (वेद) इसे विस्तार से जानता है (सः) वह (वेदवित्) पूर्ण ज्ञानी अर्थात् तत्वदर्शी है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 2

अधः, च, ऊर्ध्वम्, प्रसंताः, तस्य, शाखाः, गुणप्रवंद्धाः,
विषयप्रवालाः, अधः, च, मूलानि, अनुसन्ततानि, कर्मानुबन्धीनि, मनुष्यलोके।।

अनुवाद : (तस्य) उस वंक्षकी (अधः) नीचे (च) और (ऊर्ध्वम्) ऊपर (गुणप्रवंद्धाः) तीनों गुणों ब्रह्मा–रजगुण, विष्णु–सतगुण, शिव–तमगुण रूपी (प्रसंता) फैली हुई (विषयप्रवालाः) विकार– काम क्रोध, मोह, लोभ अहंकार रूपी कोपल (शाखाः) डाली ब्रह्मा, विष्णु, शिव (कर्मानुबन्धीनि) जीवको कर्मों में बाँधने की (मूलानि) जड़ें अर्थात् मुख्य कारण हैं (च) तथा (मनुष्यलोके) मनुष्यलोक – अर्थात् पंथ्वी लोक में (अधः) नीचे – नरक, चौरासी लाख जूनियों में (ऊर्ध्वम्) ऊपर स्वर्ग लोक आदि में (अनुसन्ततानि) व्यवस्थित किए हुए हैं।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 3

न, रूपम्, अस्य, इह, तथा, उपलभ्यते, न, अन्तः, न, च, आदिः, न, च,
सम्प्रतिष्ठा, अश्वत्थम्, एनम्, सुविरूढमूलम्, असंगशस्त्रेण, दंढेन, छित्वा।।

अनुवाद : (अस्य) इस रचना का (न) नहीं (आदिः) शुरूवात (च) तथा (न) नहीं (अन्तः) अन्त है (न) नहीं (तथा) वैसा (रूपम्) स्वरूप (उपलभ्यते) पाया जाता है (च) तथा (इह) यहाँ विचार काल में अर्थात् मेरे द्वारा दिया जा रहा गीता ज्ञान में पूर्ण जानकारी मुझे भी (न) नहीं है (सम्प्रतिष्ठा) क्योंकि सर्वब्रह्माण्डों की रचना की अच्छी तरह स्थिति का मुझे भी ज्ञान नहीं है (एनम्) इस (सुविरूढमूलम्) अच्छी तरह स्थाई स्थिति वाला (अश्वत्थम्) मजबूत स्वरूपवाले संसार रूपी वंक्ष के ज्ञान को (असंङ्गशस्त्रेण) पूर्ण ज्ञान रूपी (दंढेन्) दंढ़ सूक्ष्म वेद अर्थात् तत्वज्ञान के द्वारा जानकर (छित्वा) काटकर अर्थात् निरंजन की भक्ति

को क्षणिक अर्थात् क्षण भंगुर जानकर ब्रह्मा, विष्णु, शिव, ब्रह्म तथा परब्रह्म से भी आगे पूर्णब्रह्म की तलाश करनी चाहिए।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 4

ततः, पदम्, तत्, परिमार्गितव्यम्, यस्मिन्, गताः, न, निवर्तन्ति, भूयः,
तम्, एव्, च, आद्यम्, पुरुषम्, प्रपद्ये, यतः, प्रवृत्तिः, प्रसृता, पुराणी।।

अनुवाद : जब तत्वदर्शी संत मिल जाए (ततः) इसके पश्चात् (तत्) उस परमात्मा के (पदम्) पद स्थान अर्थात् सतलोक को (परिमार्गितव्यम्) भली भाँति खोजना चाहिए (यस्मिन्) जिसमें (गताः) गए हुए साधक (भूयः) फिर (न, निवर्तन्ति) लौटकर संसार में नहीं आते (च) और (यतः) जिस परमात्मा–परम अक्षर ब्रह्म से (पुराणी) आदि (प्रवृत्तिः) रचना–सृष्टि (प्रसृता) उत्पन्न हुई है (तम्) अज्ञात (आद्यम्) आदि यम अर्थात् मैं काल निरंजन (पुरुषम्) पूर्ण परमात्मा की (एव) ही (प्रपद्ये) मैं शरण में हूँ तथा उसी की पूजा करता हूँ।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 16

द्वौ, इमौ, पुरुषौ, लोके, क्षरः, च, अक्षरः, एव, च,
क्षरः, सर्वाणि, भूतानि, कूटस्थः, अक्षरः, उच्यते।।

अनुवाद : (लोके) इस संसारमें (द्वौ) दो प्रकारके (क्षरः) नाशवान् (च) और (अक्षरः) अविनाशी (पुरुषौ) भगवान हैं (एव) इसी प्रकार (इमौ) इन दोनों प्रभुओं के लोकों में (सर्वाणि) सम्पूर्ण (भूतानि) प्राणियों के शरीर तो (क्षरः) नाशवान् (च) और (कूटस्थः) जीवात्मा (अक्षरः) अविनाशी (उच्यते) कहा जाता है।

गीता अध्याय नं. 15 का श्लोक नं. 17

उत्तमः, पुरुषः, तु, अन्यः, परमात्मा, इति, उदाहृतः,
यः, लोकत्रयम् आविश्य, बिभर्ति, अव्ययः, ईश्वरः।।

अनुवाद : (उत्तमः) उत्तम (पुरुषः) प्रभु (तु) तो (अन्यः) उपरोक्त दोनों प्रभुओं ''क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष'' से भी अन्य ही है (इति) यह वास्तव में (परमात्मा) परमात्मा (उदाहृतः) कहा गया है (यः) जो (लोकत्रयम्) तीनों लोकों में (आविश्य) प्रवेश करके (बिभर्ति) सबका धारण पोषण करता है एवं (अव्ययः) अविनाशी (ईश्वरः) ईश्वर (प्रभुओं में श्रेष्ठ अर्थात् समर्थ प्रभु) है।

भावार्थ - गीता ज्ञान दाता प्रभु ने केवल इतना ही बताया है कि यह संसार उल्टे लटके वृक्ष तुल्य जानो। ऊपर जड़ें (मूल) तो पूर्ण परमात्मा है। नीचे टहनीयां आदि अन्य हिस्से जानों। इस संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का भिन्न-भिन्न विवरण जो संत जानता है वह तत्वदर्शी संत है जिसके विषय में गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है। गीता अध्याय 15 श्लोक नं. 2-3 में केवल इतना ही बताया है कि तीन गुण रूपी शाखा हैं। यहां विचारकाल में अर्थात् गीता में आपको मैं (गीता ज्ञान दाता) पूर्ण जानकारी नहीं दे सकता क्योंकि मुझे इस संसार की रचना के आदि व अंत का ज्ञान नहीं है। उस के लिए गीता अध्याय 4 श्लोक नं. 34 में कहा है कि किसी तत्व दर्शी संत से उस पूर्ण परमात्मा का ज्ञान जानों इस गीता अध्याय 15 श्लोक 1 में उस तत्वदर्शी संत की पहचान बताई है कि वह संसार रूपी वृक्ष के प्रत्येक भाग का ज्ञान कराएगा। उसी से पूछो। गीता अध्याय 15 के श्लोक 4 में कहा है कि उस तत्वदर्शी संत के मिल जाने के पश्चात् उस परमपद परमेश्वर की खोज करनी चाहिए अर्थात् उस तत्वदर्शी संत के बताए अनुसार साधना करनी चाहिए जिससे पूर्ण मोक्ष (अनादि मोक्ष) प्राप्त होता है। गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट किया है कि तीन प्रभु हैं एक क्षर पुरुष (ब्रह्म) दूसरा अक्षर पुरुष

(परब्रह्म) तीसरा परम अक्षर पुरूष (पूर्ण ब्रह्म)। क्षर पुरूष तथा अक्षर पुरूष वास्तव में अविनाशी नहीं हैं। वह अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य ही है। वही तीनों लोकों में प्रवेश करके सर्व का धारण पोषण करता है।

उपरोक्त श्रीमद्भगवत गीता अध्याय 15 श्लोक 1 से 4 तथा 16-17 में यह प्रमाणित हुआ कि उल्टे लटके हुए संसार रूपी वृक्ष की मूल अर्थात् जड़ तो परम अक्षर ब्रह्म अर्थात् पूर्ण ब्रह्म है जिससे पूर्ण वृक्ष का पालन होता है तथा वृक्ष का जो हिस्सा पृथ्वी के तुरन्त बाहर जमीन के साथ दिखाई देता है वह तना होता है उसे अक्षर पुरुष अर्थात् परब्रह्म जानों। उस तने से ऊपर चल कर अन्य मोटी डार निकलती है उनमें से एक डार को ब्रह्म अर्थात् क्षर पुरुष जानों तथा उसी डार से अन्य तीन शाखाएं निकलती हैं उन्हें ब्रह्मा, विष्णु तथा शिव जानों तथा शाखाओं से आगे पत्ते रूप में सांसारिक प्राणी जानों। उपरोक्त गीता अध्याय 15 श्लोक 16-17 में स्पष्ट है कि क्षर पुरुष (ब्रह्म) तथा अक्षर पुरुष (परब्रह्म) तथा इन दोनों के लोकों में जितने प्राणी हैं उनके स्थूल शरीर तो नाशवान हैं तथा जीवात्मा अविनाशी है अर्थात् उपरोक्त दोनों प्रभु व इनके अन्तर्गत सर्व प्राणी नाशवान हैं। भले ही अक्षर पुरुष (परब्रह्म) को अविनाशी कहा है परन्तु वास्तव में अविनाशी परमात्मा तो इन दोनों से अन्य है। वह तीनों लोकों में प्रवेश करके सबका पालन-पोषण करता है। उपरोक्त विवरण में तीन प्रभुओं का भिन्न-भिन्न विवरण दिया है।

"पवित्र बाईबल तथा पवित्र कुरान शरीफ में सृष्टि रचना का प्रमाण"

इसी का प्रमाण पवित्र बाईबल में तथा पवित्र कुरान शरीफ में भी है।

कुरान शरीफ में पवित्र बाईबल का भी ज्ञान है, इसलिए इन दोनों पवित्र सद्ग्रन्थों ने मिल-जुल कर प्रमाणित किया है कि कौन तथा कैसा है सृष्टि रचनहार तथा उसका वास्तविक नाम क्या है।

पवित्र बाईबल (उत्पत्ति ग्रन्थ पृष्ठ नं. 2 पर, अ. 1:20 - 2:5 पर)

छटवां दिन :— प्राणी और मनुष्य :

अन्य प्राणियों की रचना करके 26. फिर परमेश्वर ने कहा, हम मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार अपनी समानता में बनाएं, जो सर्व प्राणियों को काबू रखेगा। 27. तब परमेश्वर ने मनुष्य को अपने स्वरूप के अनुसार उत्पन्न किया, अपने ही स्वरूप के अनुसार परमेश्वर ने उसको उत्पन्न किया, नर और नारी करके मनुष्यों की सृष्टि की।

29. प्रभु ने मनुष्यों के खाने के लिए जितने बीज वाले छोटे पेड़ तथा जितने पेड़ों में बीज वाले फल होते हैं वे भोजन के लिए प्रदान किए हैं, (माँस खाना नहीं कहा है।)

सातवां दिन :— विश्राम का दिन :

परमेश्वर ने छः दिन में सर्व सृष्टि की उत्पत्ति की तथा सातवें दिन विश्राम किया।

पवित्र बाईबल ने सिद्ध कर दिया कि परमात्मा मानव सदृश शरीर में है, जिसने छः दिन में सर्व सृष्टि की रचना की तथा फिर विश्राम किया।

पवित्र कुरान शरीफ (सुरत फुर्कानि 25, आयत नं. 52, 58, 59)

आयत 52 :— फला तुतिअल् — काफिरन् व जहिद्हुम बिही जिहादन् कबीरा (कबीरन्)।।52।

इसका भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी का खुदा (प्रभु) कह रहा है कि हे पैगम्बर ! आप काफिरों (जो एक प्रभु की भक्ति त्याग कर अन्य देवी—देवताओं तथा मूर्ति आदि की पूजा करते हैं) का कहा मत मानना, क्योंकि वे लोग कबीर को पूर्ण परमात्मा नहीं मानते। आप मेरे द्वारा दिए इस कुरान के ज्ञान के आधार पर

अटल रहना कि कबीर ही पूर्ण प्रभु है तथा कबीर अल्लाह के लिए संघर्ष करना (लड़ना नहीं) अर्थात् अडिग रहना।

आयत 58 :– व तवक्कल् अलल् – हरूिल्लजी ला यमूतु व सब्बिह् बिहम्दिही व कफा बिही बिजुनूबि अिबादिही खबीरा (कबीरा)।।58।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद जी जिसे अपना प्रभु मानते हैं वह अल्लाह (प्रभु) किसी और पूर्ण प्रभु की तरफ संकेत कर रहा है कि ऐ पैगम्बर उस कबीर परमात्मा पर विश्वास रख जो तुझे जिंदा महात्मा के रूप में आकर मिला था। वह कभी मरने वाला नहीं है अर्थात् वास्तव में अविनाशी है। तारीफ के साथ उसकी पाकी (पवित्र महिमा) का गुणगान किए जा, वह कबीर अल्लाह (कविर्देव) पूजा के योग्य है तथा अपने उपासकों के सर्व पापों को विनाश करने वाला है।

आयत 59 :– अल्ल्जी खलकस्समावाति वल्अर्ज व मा बैनहुमा फी सित्तति अय्यामिन् सुम्मस्तवा अलल्अर्शि अर्रह्मानु फस्अल् बिही खबीरन्(कबीरन्)।।59।।

भावार्थ है कि हजरत मुहम्मद को कुरान शरीफ बोलने वाला प्रभु (अल्लाह) कह रहा है कि वह कबीर प्रभु वही है जिसने जमीन तथा आसमान के बीच में जो भी विद्यमान है सर्व सृष्टि की रचना छः दिन में की तथा सातवें दिन ऊपर अपने सत्यलोक में सिंहासन पर विराजमान हो (बैठ) गया। उसके विषय में जानकारी किसी (बाखबर) तत्वदर्शी संत से पूछो

उस पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति कैसे होगी तथा वास्तविक ज्ञान तो किसी तत्वदर्शी संत (बाखबर) से पूछो, मैं नहीं जानता।

उपरोक्त दोनों पवित्र धर्मो (ईसाई तथा मुसलमान) के पवित्र शास्त्रों ने भी मिल-जुल कर प्रमाणित कर दिया कि सर्व सृष्टि रचनहार, सर्व पाप विनाशक, सर्व शक्तिमान, अविनाशी परमात्मा मानव सदृश शरीर में आकार में है तथा सत्यलोक में रहता है। उसका नाम कबीर है, उसी को अल्लाहु अकबिरू भी कहते हैं।

आदरणीय धर्मदास जी ने पूज्य कबीर प्रभु से पूछा कि हे सर्वशक्तिमान ! आज तक यह तत्वज्ञान किसी ने नहीं बताया, वेदों के मर्मज्ञ ज्ञानियों ने भी नहीं बताया। इससे सिद्ध है कि चारों पवित्र वेद तथा चारों पवित्र कतेब (कुरान शरीफ आदि) झूठे हैं। पूर्ण परमात्मा ने कहा :-

कबीर, बेद कतेब झूठे नहीं भाई, झूठे हैं जो समझे नाहिं।

भावार्थ है कि चारों पवित्र वेद (ऋग्वेद - अथर्ववेद - यजुर्वेद - सामवेद) तथा पवित्र चारों कतेब (कुरान शरीफ - जबूर - तौरात - इंजिल) गलत नहीं हैं। परन्तु जो इनको नहीं समझ पाए वे नादान हैं।

"पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर् देव) जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना"

विशेष :- निम्न अमृतवाणी सन् 1403 से {जब पूज्य कविर्देव (कबीर परमेश्वर) लीलामय शरीर में पाँच वर्ष के हुए} सन् 1518 {जब कविर्देव (कबीर परमेश्वर) मगहर स्थान से सशरीर सतलोक गए} के बीच में लगभग 600 वर्ष पूर्व परम पूज्य कबीर परमेश्वर (कविर्देव) जी द्वारा अपने निजी सेवक (दास भक्त) आदरणीय धर्मदास साहेब जी को सुनाई थी तथा धनी धर्मदास साहेब जी ने लिपिबद्ध की थी। परन्तु उस समय के पवित्र हिन्दुओं तथा पवित्र मुसलमानों के नादान गुरुओं (नीम-हकीमों) ने कहा कि यह धाणक (जुलाहा) कबीर झूठा है। किसी भी सद् ग्रन्थ में श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी के माता-पिता का नाम नहीं है। ये तीनों प्रभु अविनाशी हैं इनका

जन्म मत्यु नहीं होता। न ही पवित्र वेदों व पवित्र कुरान शरीफ आदि में कबीर परमेश्वर का प्रमाण है तथा परमात्मा को निराकार लिखा है। हम प्रतिदिन पढ़ते हैं। भोली आत्माओं ने उन विचक्षणों (चतुर गुरुओं) पर विश्वास कर लिया कि सचमुच यह कबीर धाणक तो अशिक्षित है तथा गुरु जी शिक्षित हैं, सत्य कह रहे होंगे। आज वही सच्चाई प्रकाश में आ रही है तथा अपने सर्व पवित्र धर्मों के पवित्र सद्ग्रन्थ साक्षी हैं। इससे सिद्ध है कि पूर्ण परमेश्वर, सर्व संष्टि रचनहार, कुल करतार तथा सर्वज्ञ कविर्देव (कबीर परमेश्वर) ही है जो काशी (बनारस) में कमल के फूल पर प्रकट हुए तथा 120 वर्ष तक वास्तविक तेजोमय शरीर के ऊपर मानव सदंश शरीर हल्के तेज का बना कर रहे तथा अपने द्वारा रची संष्टि का ठीक-ठीक (वास्तविक तत्व) ज्ञान देकर सशरीर सतलोक चले गए। कंपा प्रेमी पाठक पढ़ें निम्न अमंतवाणी परमेश्वर कबीर साहेब जी द्वारा उच्चारित :-

धर्मदास यह जग बौराना। कोई न जाने पद निरवाना।।
यही कारन मैं कथा पसारा। जग से कहियो राम नियारा।।
यही ज्ञान जग जीव सुनाओ। सब जीवों का भ्रम नशाओ।।
अब मैं तुम से कहों चिताई। त्रयदेवन की उत्पति भाई।।
कुछ संक्षेप कहों गुहराई। सब संशय तुम्हरे मिट जाई।।
भरम गये जग वेद पुराना। आदि राम का भेद न जाना।।
राम राम सब जगत बखाने। आदि राम कोई बिरला जाने।।
ज्ञानी सुने सो हिरदै लगाई। मूर्ख सुने सो गम्य ना पाई।।
माँ अष्टंगी पिता निरंजन। वे जम दारुण वंशन अंजन।।
पहिले कीन्ह निरंजन राई। पीछे से माया उपजाई।।
माया रूप देख अति शोभा। देव निरंजन तन मन लोभा।।
कामदेव धर्मराय सत्ताये। देवी को तुरत ही धर खाये।।
पेट से देवी करी पुकारा। साहब मेरा करो उबारा।।
टेर सुनी तब हम तहाँ आये। अष्टंगी को बंद छुड़ाये।।
सतलोक में कीन्हा दुराचारि, काल निरंजन दिन्हा निकारि।।
माया समेत दिया भगाई, सोलह संख कोस दूरी पर आई।।
अष्टंगी और काल अब दोई, मंद कर्म से गए बिगोई।।
धर्मराय को हिकमत कीन्हा। नख रेखा से भग कर लीन्हा।।
धर्मराय किन्हाँ भोग विलासा। माया को रही तब आसा।।
तीन पुत्र अष्टंगी जाये। ब्रह्मा विष्णु शिव नाम धराये।।
तीन देव विस्तार चलाये। इनमें यह जग धोखा खाये।।
पुरुष गम्य कैसे को पावै। काल निरंजन जग भरमावै।।
तीन लोक अपने सुत दीन्हा। सुन्न निरंजन बासा लीन्हा।।
अलख निरंजन सुन्न ठिकाना। ब्रह्मा विष्णु शिव भेद न जाना।।
तीन देव सो उनको धावें। निरंजन का वे पार ना पावें।।
अलख निरंजन बड़ा बटपारा। तीन लोक जिव कीन्ह अहारा।।
ब्रह्मा विष्णु शिव नहीं बचाये। सकल खाय पुन धूर उड़ाये।।

तिनके सुत हैं तीनों देवा। आंधर जीव करत हैं सेवा।।
अकाल पुरुष काहू नहीं चीन्हां। काल पाय सबही गह लीन्हां।।
ब्रह्म काल सकल जग जाने। आदि ब्रह्म को ना पहिचाने।।
तीनों देव और औतारा। ताको भजे सकल संसारा।।
तीनों गुण का यह विस्तारा। धर्मदास मैं कहों पुकारा।।
गुण तीनों की भक्ति में, भूल परो संसार।
कहै कबीर निज नाम बिन, कैसे उतरैं पार।।

उपरोक्त अमृतवाणी में परमेश्वर कबीर साहेब जी अपने निजी सेवक श्री धर्मदास साहेब जी को कह रहे हैं कि धर्मदास यह सर्व संसार तत्वज्ञान के अभाव से विचलित है। किसी को पूर्ण मोक्ष मार्ग तथा पूर्ण सृष्टि रचना का ज्ञान नहीं है। इसलिए मैं आपको मेरे द्वारा रची सृष्टि की कथा सुनाता हूँ। बुद्धिमान व्यक्ति तो तुरंत समझ जायेंगे। परन्तु जो सर्व प्रमाणों को देखकर भी नहीं मानेंगे तो वे नादान प्राणी काल प्रभाव से प्रभावित हैं, वे भक्ति योग्य नहीं। अब मैं बताता हूँ तीनों भगवानों (ब्रह्मा जी, विष्णु जी तथा शिव जी) की उत्पत्ति कैसे हुई? इनकी माता जी तो अष्टंगी (दुर्गा) है तथा पिता ज्योति निरंजन (ब्रह्म, काल) है। पहले ब्रह्म की उत्पत्ति अण्डे से हुई। फिर दुर्गा की उत्पत्ति हुई। दुर्गा के रूप पर आसक्त होकर काल (ब्रह्म) ने गलती (छेड़-छाड़) की, तब दुर्गा (प्रकृति) ने इसके पेट में शरण ली। मैं वहाँ गया जहाँ ज्योति निरंजन काल था। तब भवानी को ब्रह्म के उदर से निकाल कर इक्कीस ब्रह्माण्ड समेत 16 संख कोस की दूरी पर भेज दिया। ज्योति निरंजन (धर्मराय) ने प्रकृति देवी (दुर्गा) के साथ भोग-विलास किया। इन दोनों के संयोग से तीनों गुणों (श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी) की उत्पत्ति हुई। इन्हीं तीनों गुणों (रजगुण ब्रह्मा जी, सतगुण विष्णु जी, तमगुण शिव जी) की ही साधना करके सर्व प्राणी काल जाल में फंसे हैं। जब तक वास्तविक मंत्र नहीं मिलेगा, पूर्ण मोक्ष कैसे होगा?

विशेष :- प्रिय पाठक विचार करें कि श्री ब्रह्मा जी श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की स्थिति अविनाशी बताई गई थी। सर्व हिन्दु समाज अभी तक तीनों परमात्माओं को अजर, अमर व जन्म-मृत्यु रहित मानते रहे जबकि ये तीनों नाश्वान हैं। इन के पिता काल रूपी ब्रह्म तथा माता दुर्गा (प्रकृति/अष्टांगी) हैं जैसा आप ने पूर्व प्रमाणों में पढ़ा यह ज्ञान अपने शास्त्रों में भी विद्यमान है परन्तु हिन्दु समाज के कलयुगी गुरूओं, ऋषियों, सन्तों को ज्ञान नहीं। जो अध्यापक पाठ्यक्रम (सलेबस) से ही अपरिचित है वह अध्यापक ठीक नहीं (विद्वान नहीं) है, विद्यार्थियों के भविष्य का शत्रु है। इसी प्रकार जिन गुरूओं को अभी तक यह नहीं पता कि श्री ब्रह्मा, श्री विष्णु तथा श्री शिव जी के माता-पिता कौन हैं? तो वे गुरू, ऋषि,सन्त ज्ञान हीन हैं। जिस कारण से सर्व भक्त समाज को शास्त्र विरूद्ध ज्ञान (लोक वेद अर्थात् दन्त कथा) सुना कर अज्ञान से परिपूर्ण कर दिया। शास्त्रविधि विरूद्ध भक्तिसाधना करा के परमात्मा के वास्तविक लाभ (पूर्ण मोक्ष) से वंचित रखा सबका मानव जन्म नष्ट करा दिया क्योंकि श्री मद्भगवत गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में यही प्रमाण है कि जो शास्त्रविधि त्यागकर मनमाना आचरण पूजा करता है। उसे कोई लाभ नहीं होता पूर्ण परमात्मा कबीर जी ने पाँच वर्ष की लीलामय आयु में सन् 1403 से ही सर्व शास्त्रों युक्त ज्ञान अपनी अमृतवाणी (कविरवाणी) में बताना प्रारम्भ किया था। परन्तु उन अज्ञानी गुरूओं ने यह ज्ञान भक्त समाज तक नहीं जाने दिया। जो वर्तमान में सर्व सद्ग्रन्थों से स्पष्ट हो रहा है इससे सिद्ध है कि कविर्देव (कबीर

प्रभु) तत्वदर्शी सन्त रूप में स्वयं पूर्ण परमात्मा ही आए थे।

“आदरणीय गरीबदास साहेब जी की अमृतवाणी में सृष्टि रचना का प्रमाण”

आदि रमैणी (सद् ग्रन्थ पृष्ठ नं. 690 से 692 तक)

आदि रमैंणी अदली सारा। जा दिन होते धुंधुंकारा।।1।।
सतपुरुष कीन्हा प्रकाशा। हम होते तखत कबीर खवासा ।।2।।
मन मोहिनी सिरजी माया। सतपुरुष एक ख्याल बनाया।।3।।
धर्मराय सिरजे दरबानी। चौसठ जुगतप सेवा ठांनी।।4।।
पुरुष पृथिवी जाकूं दीन्ही। राज करो देवा आधीनी।।5।।
ब्रह्माण्ड इकीस राज तुम्ह दीन्हा। मन की इच्छा सब जुग लीन्हा।।6।।
माया मूल रूप एक छाजा। मोहि लिये जिनहूँ धर्मराजा।।7।।
धर्म का मन चंचल चित धार्‌या। मन माया का रूप बिचारा।।8।।
चंचल चेरी चपल चिरागा। या के परसे सरबस जागा।।9।।
धर्मराय कीया मन का भागी। विषय वासना संग से जागी।।10।।
आदि पुरुष अदली अनरागी। धर्मराय दिया दिल सें त्यागी।।11।।
पुरुष लोक सें दीया ढहाही। अगम दीप चलि आये भाई।।12।।
सहज दास जिस दीप रहंता। कारण कौंन कौंन कुल पंथा।।13।।
धर्मराय बोले दरबानी। सुनो सहज दास ब्रह्मज्ञानी।।14।।
चौसठ जुग हम सेवा कीन्ही। पुरुष पृथिवी हम कूं दीन्ही।।15।।
चंचल रूप भया मन बौरा। मनमोहिनी ठगिया भौंरा।।16।।
सतपुरुष के ना मन भाये। पुरुष लोक से हम चलि आये।।17।।
अगर दीप सुनत बड़भागी। सहज दास मेटो मन पागी।।18।।
बोले सहजदास दिल दानी। हम तो चाकर सत सहदानी।।19।।
सतपुरुष सें अरज गुजारूं। जब तुम्हारा बिवाण उतारूं।।20।।
सहज दास को कीया पीयाना। सत्यलोक लीया प्रवाना।।21।।
सतपुरुष साहिब सरबंगी। अविगत अदली अचल अभंगी।।22।।
धर्मराय तुम्हरा दरबानी। अगर दीप चलि गये प्रानी।।23।।
कौंन हुकम करी अरज अवाजा। कहां पठावौ उस धर्मराजा।।24।।
भई अवाज अदली एक साचा। विषय लोक जा तीन्यूं बाचा।।25।।
सहज विमाँन चले अधिकाई। छिन में अगर दीप चलि आई।।26।।
हमतो अरज करी अनरागी। तुम्ह विषय लोक जावो बड़भागी।।27।।
धर्मराय के चले विमाना। मानसरोवर आये प्राना।।28।
मानसरोवर रहन न पाये। दरे कबीरा थांना लाये।।29।।
बंकनाल की विषमी बाटी। तहां कबीरा रोकी घाटी।।30।।
इन पाँचों मिलि जगत बंधाना। लख चौरासी जीव संताना।।31।।

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया। धर्मराय का राज पठाया।।32।।
यौह खोखा पुर झूठी बाजी। भिसति बैकुण्ठ दगासी साजी।।33।।
कतिम जीव भुलांनें भाई। निज घर की तो खबरि न पाई।।34।।
सवा लाख उपजें नित हंसा। एक लाख विनशें नित अंसा।।35।।
उपति खपति प्रलय फेरी। हर्ष शोक जौंरा जम जेरी।।36।।
पाँचों तत्त्व हैं प्रलय माँही। सत्त्वगुण रजगुण तमगुण झांई।।37।।
आठों अंग मिली है माया। पिण्ड ब्रह्माण्ड सकल भरमाया।।38।।
या में सुरति शब्द की डोरी। पिण्ड ब्रह्माण्ड लगी है खोरी।।39।।
श्वासा पारस मन गह राखो। खोल्हि कपाट अमीरस चाखो।।40।।
सुनाऊं हंस शब्द सुन दासा। अगम दीप है अग है बासा।।41।।
भवसागर जम दण्ड जमाना। धर्मराय का है तलबांना।।42।।
पाँचों ऊपर पद की नगरी। बाट बिहंगम बंकी डगरी।।43।।
हमरा धर्मराय सों दावा। भवसागर में जीव भरमावा।।44।।
हम तो कहैं अगम की बानी। जहाँ अविगत अदली आप बिनानी।।45।।
बंदी छोड़ हमारा नामं। अजर अमर है अस्थीर ठामं।।46।।
जुगन जुगन हम कहते आये। जम जौंरा सें हंस छुटाये।।47।।
जो कोई मानें शब्द हमारा। भवसागर नहीं भरमें धारा।।48।।
या में सुरति शब्द का लेखा। तन अंदर मन कहो कीन्ही देखा।।49।।
दास गरीब अगम की बानी। खोजा हंसा शब्द सहदानी।।50।।

उपरोक्त अमतवाणी का भावार्थ है कि आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि यहाँ पहले केवल अंधकार था तथा पूर्ण परमात्मा कबीर साहेब जी सत्यलोक में तख्त (सिंहासन) पर विराजमान थे। हम वहाँ चाकर थे। परमात्मा ने ज्योति निरंजन को उत्पन्न किया। फिर उसके तप के प्रतिफल में इक्कीस ब्रह्माण्ड प्रदान किए। फिर माया (प्रकति) की उत्पत्ति की। युवा दुर्गा के रूप पर मोहित होकर ज्योति निरंजन (ब्रह्म) ने दुर्गा (प्रकति) से बलात्कार करने की चेष्टा की। ब्रह्म को उसकी सजा मिली। उसे सत्यलोक से निकाल दिया तथा शाप लगा कि एक लाख मानव शरीर धारी प्राणियों का प्रतिदिन आहार करेगा, सवा लाख उत्पन्न करेगा। यहाँ सर्व प्राणी जन्म-मत्यु का कष्ट उठा रहे हैं। यदि कोई पूर्ण परमात्मा का वास्तविक शब्द (सच्चानाम जाप मंत्र) हमारे से प्राप्त करेगा, उसको काल की बंद से छुड़वा देंगे। हमारा बन्दी छोड़ नाम है। आदरणीय गरीबदास जी अपने गुरु व प्रभु कबीर परमात्मा के आधार पर कह रहे हैं कि सच्चे मंत्र अर्थात् सत्यनाम व सारशब्द की प्राप्ति कर लो, पूर्ण मोक्ष हो जायेगा। नहीं तो नकली नाम दाता संतों व महन्तों की मीठी-मीठी बातों में फंस कर शास्त्र विधि रहित साधना करके काल जाल में रह जाओगे। फिर कष्ट पर कष्ट उठाओगे।

।।गरीबदास जी महाराज की वाणी।।

(सत ग्रन्थ साहिब पष्ठ नं. 690 से सहाभार)

माया आदि निरंजन भाई, अपने जाऐ आपै खाई।
ब्रह्मा विष्णु महेश्वर चेला, ऊँ सोहं का है खेला।।

सिखर सुन्न में धर्म अन्यायी, जिन शक्ति डायन महल पठाई।।
लाख ग्रासै नित उठ दूती, माया आदि तख्त की कुती।।
सवा लाख घड़िये नित भांडे, हंसा उतपति परलय डांडे।
ये तीनों चेला बटपारी, सिरजे पुरुषा सिरजी नारी।।
खोखापुर में जीव भुलाये, स्वपना बहिस्त वैकुंठ बनाये।
यो हरहट का कुआ लोई, या गल बंध्या है सब कोई।।
कीड़ी कुजंर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा।
अरब अलील इन्द्र हैं भाई, हरहट डोरी बंधे सब आई।।
शेष महेश गणेश्वर ताहिं, हरहट डोरी बंधे सब आहिं।
शुक्रादिक ब्रह्मादिक देवा, हरहट डोरी बंधे सब खेवा।।
कोटिक कर्ता फिरता देख्या, हरहट डोरी कहूँ सुन लेखा।
चतुर्भुजी भगवान कहावैं, हरहट डोरी बंधे सब आवैं।।
यो है खोखापुर का कुआ, या में पड़ा सो निश्चय मुवा।

ज्योति निरंजन (कालबली) के वश होकर के ये तीनों देवता (रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिव) अपनी महिमा दिखाकर जीवों को स्वर्ग नरक तथा भवसागर में (लख चौरासी योनियों में) भटकाते रहते हैं। ज्योति निरंजन अपनी माया से नागिनी की तरह जीवों को पैदा करते हैं और फिर मार देते हैं। जिस प्रकार उसको नागिनी खा जाती है। फन मारते समय कई अण्डे फूट जाते हैं क्योंकि नागिनी के काफी अण्डे होते हैं। जो अण्डे फूटते हैं उनमें से बच्चे निकलते हैं यदि कोई बच्चा नागिनी अपनी दुम से अण्डों के चारों ओर कुण्डली बनाती है फिर उन अण्डों पर अपना फन मारती है। जिससे अण्डा फूट जाता है। उसमें से बच्चा निकल जाता है। कुण्डली (सर्पनी की दुम का घेरा) से बाहर निकल जाता है तो वह बच्चा बच जाता है नहीं तो कुण्डली में वह (नागिनी) छोड़ती नहीं। जितने बच्चे उस कुण्डली के अन्दर होते हैं उन सबको खा जाती है।

माया काली नागिनी, अपने जाये खात। कुण्डली में छोड़ै नहीं, सौ बातों की बात।।

इसी प्रकार यह कालबली का जाल है। निरंजन तक की भक्ति पूरे संत से नाम लेकर करेगें तो भी इस निरंजन की कुण्डली (इक्कीस ब्रह्माण्डों) से बाहर नहीं निकल सकते। स्वयं ब्रह्मा, विष्णु, महेश, आदि माया शेराँवाली भी निरंजन की कुण्डली में है। ये बेचारे अवतार धार कर आते हैं और जन्म-मत्यु का चक्कर काटते रहते हैं। इसलिए विचार करें सोहं जाप जो कि ध्रुव व प्रहलाद व शुकदेव ऋषि ने जपा, वह भी पार नहीं हुए। क्योंकि श्री विष्णु पुराण के प्रथम अंश के अध्याय 12 के श्लोक 93 में पष्ठ 51 पर लिखा है कि ध्रुव केवल एक कल्प अर्थात् एक हजार चतुर्युग तक ही मुक्त है। इसलिए काल लोक में ही रहे तथा 'ऊँ नमः भगवते वासुदेवाय' मन्त्र जाप करने वाले भक्त भी कष्ण तक की भक्ति कर रहे हैं, वे भी चौरासी लाख योनियों के चक्कर काटने से नहीं बच सकते। यह परम पूज्य कबीर साहिब जी व आदरणीय गरीबदास साहेब जी महाराज की वाणी प्रत्यक्ष प्रमाण देती हैं।

अनन्त कोटि अवतार हैं, माया के गोविन्द। कर्ता हो हो अवतरे, बहुर पड़े जग फंध।।

सतपुरुष कबीर साहिब जी की भक्ति से ही जीव मुक्त हो सकता है। जब तक जीव सतलोक में वापिस नहीं चला जाएगा तब तक काल लोक में इसी तरह कर्म करेगा और की हुई नाम व दान धर्म की कमाई स्वर्ग रूपी होटलों में समाप्त करके वापिस कर्म आधार से चौरासी लाख प्रकार के प्राणियों के

शरीर में कष्ट उठाने वाले काल लोक में चक्कर काटता रहेगा। माया (दुर्गा) से उत्पन्न हो कर करोड़ों गोबिन्द(ब्रह्मा-विष्णु-शिव) मर चुके हैं। भगवान का अवतार बन कर आये थे। फिर कर्म बन्धन में बन्ध कर कर्मों को भोग कर चौरासी लाख योनियों में चले गए। जैसे भगवान विष्णु जी को देवर्षि नारद का शाप लगा। वे श्री रामचन्द्र रूप में अयोध्या में आए। फिर श्री राम जी रूप में बाली का वध किया था। उस कर्म का दण्ड भोगने के लिए श्री कष्ण जी का जन्म हुआ। फिर बाली वाली आत्मा शिकारी बना तथा अपना प्रतिशोध लिया। श्री कष्ण जी के पैर में विषाक्त तीर मार कर वध किया। महाराज गरीबदास जी अपनी वाणी में कहते हैं :

ब्रह्मा विष्णु महेश्वर माया, और धर्मराय कहिये।
इन पाँचों मिल परपंच बनाया, वाणी हमरी लहिये।।
इन पाँचों मिल जीव अटकाये, जुगन–जुगन हम आन छुटाये।
बन्दी छोड़ हमारा नामं, अजर अमर है अस्थिर ठामं।।
पीर पैगम्बर कुतुब औलिया, सुर नर मुनिजन ज्ञानी।
येता को तो राह न पाया, जम के बंधे प्राणी।।
धर्मराय की धूमा–धामी, जम पर जंग चलाऊँ।
जोरा को तो जान न दूगां, बांध अदल घर ल्याऊँ।।
काल अकाल दोहूँ को मोसूं, महाकाल सिर मूंडू।
मैं तो तख्त हजूरी हुकमी, चोर खोज कूं ढूंढू।।
मूला माया मग में बैठी, हंसा चुन–चुन खाई।
ज्योति स्वरूपी भया निरंजन, मैं ही कर्ता भाई।।
संहस अठासी दीप मुनीश्वर, बंधे मुला डोरी।
ऐत्यां में जम का तलबाना, चलिए पुरुष कीशोरी।।
मूला का तो माथा दागूं, सतकी मोहर करूंगा।
पुरुष दीप कूं हंस चलाऊँ, दरा न रोकन दूंगा।।
हम तो बन्दी छोड़ कहावां, धर्मराय है चकवै।
सतलोक की सकल सुनावां, वाणी हमरी अखवै।।
नौ लख पटट्न ऊपर खेलूं, साहदरे कूं रोकूं।
द्वादस कोटि कटक सब काटूं, हंस पठाऊँ मोखूं।।
चौदह भुवन गमन है मेरा, जल थल में सरबंगी।
खालिक खलक खलक में खालिक, अविगत अचल अभंगी।।
अगर अलील चक्र है मेरा, जित से हम चल आए।
पाँचों पर प्रवाना मेरा, बंधि छुटावन धाये।।
जहाँ ओंकार निरंजन नाहीं, ब्रह्मा विष्णु वेद नहीं जाहीं।
जहाँ करता नहीं काल भगवाना, काया माया पिण्ड न प्राणा।।
पाँच तत्व तीनों गुण नाहीं, जोरा काल दीप नहीं जाहीं।
अमर करूं सतलोक पठाँऊ, तातैं बन्दी छोड़ कहाऊँ।।

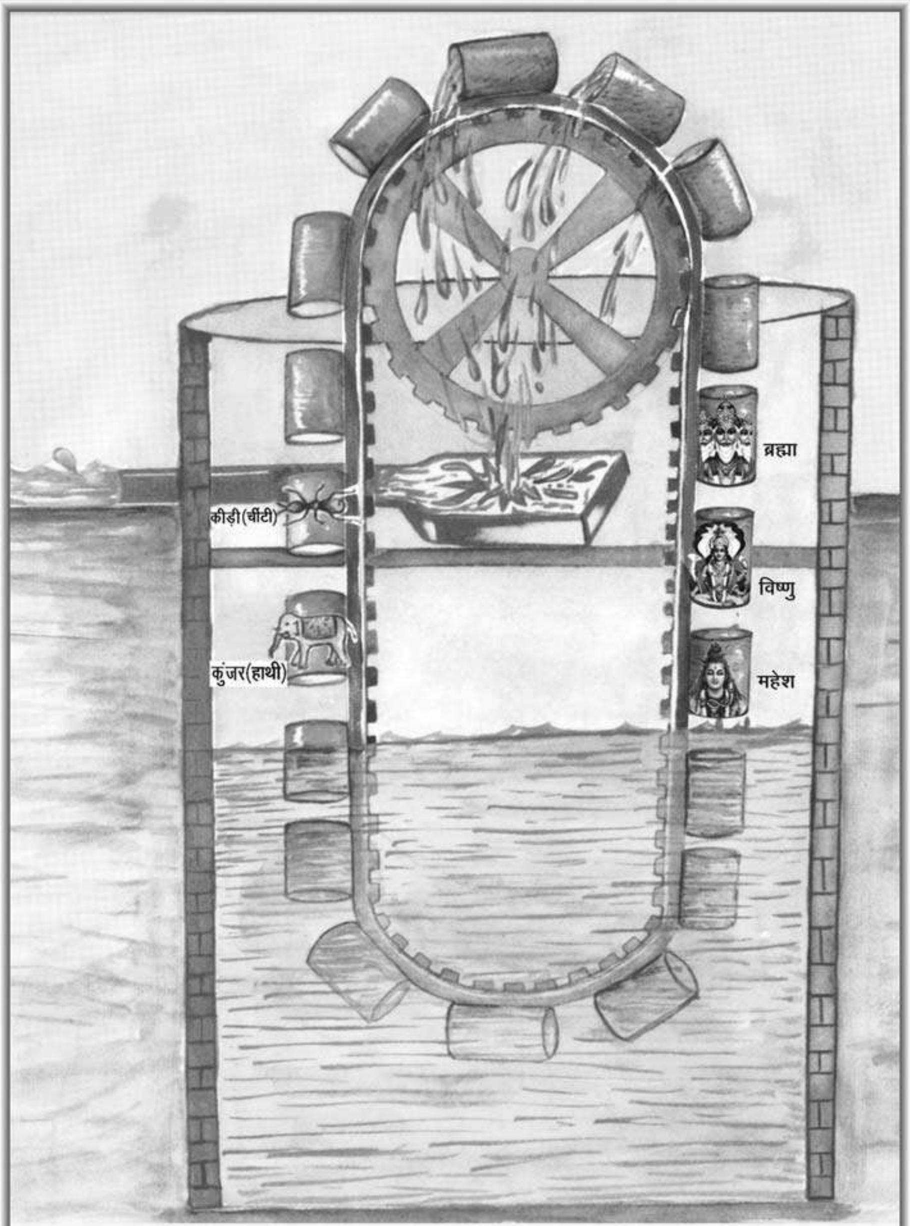

योह हरहट का कुआँ लोई, या गल बंध्या है सब कोई।
कीड़ी कुंजर और अवतारा, हरहट डोरी बंधे कई बारा।।

काल लोक में जन्म-मरण रूपी हरहट (चक्र)

कबीर परमेश्वर (कविर्देव) की महिमा बताते हुए आदरणीय गरीबदास साहेब जी कह रहे हैं कि हमारे प्रभु कविर् (कविर्देव) बन्दी छोड़ हैं। बन्दी छोड़ का भावार्थ है काल की कारागार से छुटवाने वाला, काल ब्रह्म के इक्कीस ब्रह्माण्डों में सर्व प्राणी पापों के कारण काल के बंदी हैं। पूर्ण परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब पाप का विनाश कर देते हैं। पापों का विनाश न ब्रह्म, न परब्रह्म, न ही ब्रह्मा, विष्णु, शिव जी कर सकते हैं। केवल जैसा कर्म है, उसका वैसा ही फल दे देते हैं। इसीलिए यजुर्वेद अध्याय 5 के मन्त्र 32 में लिखा है 'कविरंघारिरसि' कविर्देव (कबीर परमेश्वर) पापों का शत्रु है, 'बम्भारिरसि' बन्धनों का शत्रु अर्थात् बन्दी छोड़ है।

इन पाँचों (ब्रह्मा-विष्णु-शिव-माया और धर्मराय) से ऊपर सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) है। जो सतलोक का मालिक है। शेष सर्व परब्रह्म-ब्रह्म तथा ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी व आदि माया नाशवान परमात्मा हैं। महाप्रलय में ये सब तथा इनके लोक समाप्त हो जाएंगे। आम जीव से कई हजार गुणा ज्यादा लम्बी इनकी उम्र है। परन्तु जो समय निर्धारित है वह एक दिन पूरा अवश्य होगा। आदरणीय गरीबदास जी महाराज कहते हैं :-

शिव ब्रह्मा का राज, इन्द्र गिनती कहां। चार मुक्ति वैकुंण्ठ समझ, येता लह्या।।
संख जुगन की जुनी, उम्र बड़ धाारिया। जा जननी कुर्बान, सु कागज पारिया।।
येती उम्र बुलंद मरैगा अंत रे। सतगुरु लगे न कान, न भैंटे संत रे।।

चाहे संख युग की लम्बी उम्र भी क्यों न हो वह एक दिन समाप्त जरूर होगी। यदि सतपुरुष परमात्मा (कविर्देव) कबीर साहेब के नुमाँयदे पूर्ण संत(गुरु) जो तीन नाम का मंत्र (जिसमें एक ओ३म + तत् + सत् सांकेतिक हैं) देता है तथा उसे पूर्ण संत द्वारा नाम दान करने का आदेश है, उससे उपदेश लेकर नाम की कमाई करेंगे तो हम सतलोक के अधिकारी हंस हो सकते हैं। सत्य साधना बिना बहुत लम्बी उम्र कोई काम नहीं आएगी क्योंकि निरंजन लोक में दुःख ही दुःख है।

कबीर, जीवना तो थोड़ा ही भला, जै सत सुमरन होय। लाख वर्ष का जीवना, लेखै धरै ना कोय।।

कबीर साहिब अपनी (पूर्णब्रह्म की) जानकारी स्वयं बताते हैं कि इन परमात्माओं से ऊपर असंख्य भुजा का परमात्मा सतपुरुष है जो सत्यलोक (सच्च खण्ड, सतधाम) में रहता है तथा उसके अन्तर्गत सर्वलोक [ब्रह्म (काल) के 21 ब्रह्माण्ड व ब्रह्मा, विष्णु, शिव शक्ति के लोक तथा परब्रह्म के सात संख ब्रह्माण्ड व अन्य सर्व ब्रह्माण्ड] आते हैं और वहाँ पर सत्यनाम-सारनाम के जाप द्वारा जाया जाएगा जो पूरे गुरु से प्राप्त होता है। सच्चखण्ड (सतलोक) में जो आत्मा चली जाती है उसका पुनर्जन्म नहीं होता। सतपुरुष (पूर्णब्रह्म) कबीर साहेब (कविर्देव) ही अन्य लोकों में स्वयं ही भिन्न-भिन्न नामों से विराजमान हैं। जैसे अलख लोक में अलख पुरुष, अगम लोक में अगम पुरुष तथा अकह लोक में अनामी पुरुष रूप में विराजमान हैं। ये तो उपमात्मक नाम हैं, परन्तु वास्तविक नाम उस पूर्ण पुरुष का कविर्देव (भाषा भिन्न होकर कबीर साहेब) है।

"आदरणीय नानक साहेब जी की वाणी में संष्टि रचना का संकेत"

श्री नानक साहेब जी की अमंतवाणी, महला 1, राग बिलावलु, अंश 1 (गु.ग्र. पं. 839)

आपे सचु कीआ कर जोड़ि। अंडज फोड़ि जोडि विछोड़।।
धरती आकाश कीए बैसण कउ थाउ। राति दिनंतु कीए भउ–भाउ।।
जिन कीए करि वेखणहारा।(3)

त्रितीआ ब्रह्मा–बिसनु–महेसा। देवी देव उपाए वेसा।।(4)

पउण पाणी अगनी बिसराउ। ताही निरंजन साचो नाउ।।

तिसु महि मनुआ रहिआ लिव लाई। प्रणवति नानकु कालु न खाई।।(10)

उपरोक्त अमतवाणी का भावार्थ है कि सच्चे परमात्मा (सतपुरुष) ने स्वयं ही अपने हाथों से सर्व संष्टि की रचना की है। उसी ने अण्डा बनाया फिर फोड़ा तथा उसमें से ज्योति निरंजन निकला। उसी पूर्ण परमात्मा ने सर्व प्राणियों के रहने के लिए धरती, आकाश, पवन, पानी आदि पाँच तत्व रचे। अपने द्वारा रची संष्टि का स्वयं ही साक्षी है। दूसरा कोई सही जानकारी नहीं दे सकता। फिर अण्डे के फूटने से निकले निरंजन के बाद तीनों श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी तथा श्री शिव जी की उत्पत्ति हुई तथा अन्य देवी-देवता उत्पन्न हुए तथा अनगिनत जीवों की उत्पत्ति हुई। उसके बाद अन्य देवों के जीवन चरित्र तथा अन्य ऋषियों के अनुभव के छः शास्त्र तथा अठारह पुराण बन गए। पूर्ण परमात्मा के सच्चे नाम (सत्यनाम) की साधना अनन्य मन से करने से तथा गुरु मर्यादा में रहने वाले (प्रणवति) को श्री नानक जी कह रहे हैं कि काल नहीं खाता।

राग मारु(अंश) अमतवाणी महला 1(गु.ग्र.पं. 1037)

सुनहु ब्रह्मा, बिसनु, महेसु उपाए। सुने वरते जुग सबाए।।

इसु पद बिचारे सो जनु पुरा। तिस मिलिए भरमु चुकाइदा।।(3)

साम वेदु, रुगु जुजरु अथरबणु। ब्रहमें मुख माइआ है त्रैगुण।।

ता की कीमत कहि न सकै। को तिउ बोले जिउ बुलाईदा।।(9)

उपरोक्त अमतवाणी का सारांश है कि जो संत पूर्ण संष्टि रचना सुना देगा तथा बताएगा कि अण्डे के दो भाग होकर कौन निकला, जिसने फिर ब्रह्मलोक की सुन्न में अर्थात् गुप्त स्थान पर ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी की उत्पत्ति की तथा वह परमात्मा कौन है जिसने ब्रह्म (काल) के मुख से चारों वेदों (पवित्र ऋग्वेद, यजुर्वेद, सामवेद, अथर्ववेद) को उच्चारण करवाया, वह पूर्ण परमात्मा जैसा चाहे वैसे ही प्रत्येक प्राणी को बुलवाता है। इस सर्व ज्ञान को पूर्ण बताने वाला सन्त मिल जाए तो उसके पास जाइए तथा जो सभी शंकाओं का पूर्ण निवारण करता है, वही पूर्ण सन्त अर्थात् तत्वदर्शी है।

श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पंष्ठ 929 अमत वाणी श्री नानक साहेब जी की राग रामकली महला 1 दखणी ओअंकार

ओअंकारि ब्रह्मा उतपति। ओअंकारू कीआ जिनि चित। ओअंकारि सैल जुग भए। ओअंकारि बेद निरमए। ओअंकारि सबदि उधरे। ओअंकारि गुरुमुखि तरे। ओनम अखर सुणहू बीचारु। ओनम अखरु त्रिभवण सारु।

उपरोक्त अमतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि ओंकार अर्थात् ज्योति निरंजन (काल) से ब्रह्मा जी की उत्पत्ति हुई। कई युगों मस्ती मार कर ओंकार (ब्रह्म) ने वेदों की उत्पत्ति की जो ब्रह्मा जी को प्राप्त हुए। तीन लोक की भक्ति का केवल एक ओउम् मंत्र ही वास्तव में जाप करने का है। इस ओउम् शब्द को पूरे संत से उपदेश लेकर अर्थात् गुरू धारण करके जाप करने से उद्धार होता है।

विशेष :– श्री नानक साहेब जी ने तीनों मंत्रों (ओउम् + तत् + सत्) का स्थान-स्थान पर रहस्यात्मक विवरण दिया है। उसको केवल पूर्ण संत (तत्वदर्शी संत) ही समझ सकता है तथा तीनों मंत्रों के जाप को उपदेशी को समझाया जाता है।

(पं. 1038) उत्तम सतिगुरु पुरुष निराले, सबदि रते हरि रस मतवाले।
रिधि, बुधि, सिधि, गिआन गुरु ते पाइए, पूरे भाग मिलाईदा।।(15)
सतिगुरु ते पाए बीचारा, सुन समाधि सचे घरबारा।
नानक निरमल नादु सबद धुनि, सचु रामैं नामि समाइदा (17)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि वास्तविक ज्ञान देने वाले सतगुरु तो निराले ही हैं, वे केवल नाम जाप को जपते हैं, अन्य हठयोग साधना नहीं बताते। यदि आप को धन दौलत, पद, बुद्धि या भक्ति शक्ति भी चाहिए तो वह भक्ति मार्ग का ज्ञान पूर्ण संत ही पूरा प्रदान करेगा, ऐसा पूर्ण संत बड़े भाग्य से ही मिलता है। वही पूर्ण संत विवरण बताएगा कि ऊपर सुन्न (आकाश) में अपना वास्तविक घर (सत्यलोक) परमेश्वर ने रच रखा है।

उसमें एक वास्तविक सार नाम की धुन (आवाज) हो रही है। उस आनन्द में अविनाशी परमेश्वर के सार शब्द से समाया जाता है अर्थात् उस वास्तविक सुखदाई स्थान में वास हो सकता है, अन्य नामों तथा अधूरे गुरुओं से नहीं हो सकता।

आंशिक अमृतवाणी महला पहला (श्री गु. ग्र. पं. 359-360)

सिव नगरी महि आसणि बैसउ कलप त्यागी वादं।(1)
सिंडी सबद सदा धुनि सोहै अहिनिसि पूरै नादं।(2)
हरि कीरति रह रासि हमारी गुरु मुख पंथ अतीतं (3)
सगली जोति हमारी संमिआ नाना वरण अनेकं।
कह नानक सुणि भरथरी जोगी पारब्रह्म लिव एकं।(4)

उपरोक्त अमृतवाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि हे भरथरी योगी जी आप की साधना भगवान शिव तक है, उससे आप को शिव नगरी (लोक) में स्थान मिला है और शरीर में जो सिंगी शब्द आदि हो रहा है वह इन्हीं कमलों का है तथा टेलीविजन की तरह प्रत्येक देव के लोक से शरीर में सुनाई दे रहा है।

हम तो एक परमात्मा पारब्रह्म अर्थात् सर्व से पार जो पूर्ण परमात्मा है अन्य किसी और एक परमात्मा में लौ (अनन्य मन से लग्न) लगाते हैं।

हम ऊपरी दिखावा (भस्म लगाना, हाथ में दंडा रखना) नहीं करते। मैं तो सर्व प्राणियों को एक पूर्ण परमात्मा (सतपुरुष) की सन्तान समझता हूँ। सर्व उसी शक्ति से चलायमान हैं। हमारी मुद्रा तो सच्चा नाम जाप गुरु से प्राप्त करके करना है तथा क्षमा करना हमारा बाणा (वेशभूषा) है। मैं तो पूर्ण परमात्मा का उपासक हूँ तथा पूर्ण सतगुरु का भक्ति मार्ग इससे भिन्न है।

अमृतवाणी राग आसा महला 1 (श्री गु. ग्र. पं. 420)

।।आसा महला 1।। जिनी नामु विसारिआ दूजै भरमि भुलाई। मूलु छोड़ि डाली लगे किआ पावहि छाई।।1।। साहिबु मेरा एकु है अवरु नहीं भाई। किरपा ते सुखु पाइआ साचे परथाई।।3।। गुर की सेवा सो करे जिसु आपि कराए। नानक सिरु दे छूटीऐ दरगह पति पाए।।8।।18।।

उपरोक्त वाणी का भावार्थ है कि श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि जो पूर्ण परमात्मा का वास्तविक नाम भूल कर अन्य भगवानों के नामों के जाप में भ्रम रहे हैं वे तो ऐसा कर रहे हैं कि मूल (पूर्ण परमात्मा) को छोड़ कर डालियों (तीनों गुण रूप रजगुण-ब्रह्मा, सतगुण-विष्णु, तमगुण-शिवजी) की सिंचाई (पूजा) कर रहे हैं। उस साधना से कोई सुख नहीं हो सकता अर्थात् पौधा सूख जाएगा

तो छाया में नहीं बैठ पाओगे। भावार्थ है कि शास्त्र विधि रहित साधना करने से व्यर्थ प्रयत्न है। कोई लाभ नहीं। इसी का प्रमाण पवित्र गीता अध्याय 16 श्लोक 23-24 में भी है। उस पूर्ण परमात्मा को प्राप्त करने के लिए मनमुखी (मनमानी) साधना त्याग कर पूर्ण गुरुदेव को समर्पण करने से तथा सच्चे नाम के जाप से ही मोक्ष संभव है, नहीं तो मृत्यु के उपरांत नरक जाएगा।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 843-844)

।।बिलावलु महला 1।। मैं मन चाहु घणा साचि विगासी राम। मोही प्रेम पिरे प्रभु अबिनासी राम।। अविगतो हरि नाथु नाथह तिसै भावै सो थीऐ। किरपालु सदा दइआलु दाता जीआ अंदरि तूं जीऐ। मैं आधारु तेरा तू खसमु मेरा मै ताणु तकीआ तेरओ। साचि सूचा सदा नानक गुरसबदि झगरु निबेरओ।।4।।2।।

उपरोक्त अमृतवाणी में श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि अविनाशी पूर्ण परमात्मा नाथों का भी नाथ है अर्थात् देवों का भी देव है (सर्व प्रभुओं श्री ब्रह्मा जी, श्री विष्णु जी, श्री शिव जी तथा ब्रह्म व परब्रह्म पर भी नाथ है अर्थात् स्वामी है) मैं तो सच्चे नाम को हृदय में समा चुका हूँ। हे परमात्मा ! सर्व प्राणी का जीवन आधार भी आप ही हो। मैं आपके आश्रित हूँ आप मेरे मालिक हो। आपने ही गुरु रूप में आकर सत्यभक्ति का निर्णायक ज्ञान देकर सर्व झगड़ा निपटा दिया अर्थात् सर्व शंका का समाधान कर दिया।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 721, राग तिलंग महला 1)

यक अर्ज गुफतम् पेश तो दर कून करतार। हक्का कबीर करीम तू बेअब परवरदिगार।
नानक बुगोयद जन तुरा तेरे चाकरां पाखाक।

उपरोक्त अमृतवाणी में स्पष्ट कर दिया कि हे (हक्का कबीर) आप सत्कबीर (कून करतार) शब्द शक्ति से रचना करने वाले शब्द स्वरूपी प्रभु अर्थात् सर्व सृष्टि के रचन हार हो, आप ही बेएब निर्विकार (परवरदिगार) सर्व के पालन कर्ता दयालु प्रभु हो, मैं आपके दासों का भी दास हूँ।

(श्री गुरु ग्रन्थ साहेब पृष्ठ नं. 24, राग सीरी महला 1)

तेरा एक नाम तारे संसार, मैं ऐहा आस ऐहो आधार।
नानक नीच कहै बिचार, धाणक रूप रहा करतार।।

उपरोक्त अमृतवाणी में प्रमाण किया है कि जो काशी में धाणक (जुलाहा) है यही (करतार) कुल का सृजनहार है। अति आधीन होकर श्री नानक साहेब जी कह रहे हैं कि मैं सत कह रहा हूँ कि यह धाणक अर्थात् कबीर जुलाहा ही पूर्ण ब्रह्म (सतपुरुष) है।

विशेष :- उपरोक्त प्रमाणों के सांकेतिक ज्ञान से प्रमाणित हुआ सृष्टि रचना कैसे हुई? पूर्ण परमात्मा की प्राप्ति करनी चाहिए जो पूर्ण संत से नाम लेकर ही संभव है।

''अन्य संतों द्वारा सृष्टि रचना की दन्त कथा''

अन्य संतों द्वारा जो सृष्टि रचना का ज्ञान बताया है वह कैसा है? कृप्या निम्न पढ़े :- सृष्टि रचना के विषय में राधास्वामी पंथ के सन्तों के व धन-धन सतगुरू पंथ के सन्त के विचार :-

पवित्र पुस्तक जीवन चरित्र परम संत बाबा जयमल सिंह जी महाराज'' पृष्ठ नं. 102-103 से ''सृष्टि की रचना'' (सावन कृपाल पब्लिकेशन, दिल्ली)

''पहले सतपुरुष निराकार था, फिर इजहार (आकार) में आया तो ऊपर के तीन निर्मल मण्डल

(सतलोक, अलखलोक, अगमलोक) बन गया तथा प्रकाश तथा मण्डलों का नाद (धुनि) बन गया।''

पवित्र पुस्तक सारवचन (नसर) प्रकाशक :- राधास्वामी सत्संग सभा, दयालबाग आगरा, ''सष्टि की रचना'' पष्ठ 8 :-

''प्रथम धूंधूकार था। उसमें पुरुष सुन्न समाध में थे। जब कुछ रचना नहीं हुई थी। फिर जब मौज हुई तब शब्द प्रकट हुआ और उससे सब रचना हुई, पहले सतलोक और फिर सतपुरुष की कला से तीन लोक और सब विस्तार हुआ।''

यह ज्ञान तो ऐसा है जैसे एक समय कोई बच्चा नौकरी लगने के लिए साक्षात्कार (इन्टरव्यू) के लिए गया। अधिकारी ने पूछा कि आप ने महाभारत पढ़ा है। लड़के ने उत्तर दिया कि उंगलियों पर रट रखा है। अधिकारी ने प्रश्न किया कि पाँचों पाण्डवों के नाम बताओ। लड़के ने उत्तर दिया कि एक भीम था, एक उसका बड़ा भाई था, एक उससे छोटा था, एक और था तथा एक का नाम मैं भूल गया। उपरोक्त सष्टि रचना का ज्ञान तो ऐसा है।

सतपुरुष व सतलोक की महिमा बताने वाले व पाँच नाम (औंकार - ज्योति निरंजन - ररंकार - सोहं - सत्यनाम) देने वाले व तीन नाम (अकाल मूर्ति - सतपुरुष - शब्द स्वरूपी राम) देने वाले संतों द्वारा रची पुस्तकों से कुछ निष्कर्ष :-

संतमत प्रकाश भाग 3 पष्ठ 76 पर लिखा है कि ''सच्चखण्ड या सतनाम चौथा लोक है'', यहाँ पर 'सतनाम' को स्थान कहा है। फिर इस पवित्र पुस्तक के पष्ठ नं. 79 पर लिखा है कि ''एक राम दशरथ का बेटा, दूसरा राम 'मन', तीसरा राम 'ब्रह्म', चौथा राम 'सतनाम', यह असली राम है।'' फिर पवित्र पुस्तक संतमत प्रकाश पहला भाग पष्ठ नं. 17 पर लिखा है कि ''वह सतलोक है, उसी को सतनाम कहा जाता है।'' पवित्र पुस्तक 'सार वचन नसर यानि वार्तिक' पष्ठ नं. 3 पर लिखा है कि ''अब समझना चाहिए कि राधा स्वामी पद सबसे उच्चा मुकाम है कि जिसको संतों ने सतलोक और सच्चखण्ड और सार शब्द और सत शब्द और सतनाम और सतपुरुष करके ब्यान किया है।'' पवित्र पुस्तक सार वचन (नसर) आगरा से प्रकाशित पष्ठ नं. 4 पर भी उपरोक्त ज्यों का त्यों वर्णन है। पवित्र पुस्तक 'सच्चखण्ड की सड़क' पष्ठ नं. 226 ''संतों का देश सच्चखण्ड या सतलोक है, उसी को सतनाम- सतशब्द-सारशब्द कहा जाता है।''

विशेष :- उपरोक्त व्याख्या ऐसी लगी जैसे किसी ने जीवन में न तो शहर देखा, न कार देखी और न पैट्रोल देखा है, न ड्राईवर का ज्ञान हो कि ड्राईवर किसे कहते हैं और वह व्यक्ति अन्य साथियों से कहे कि मैं शहर में जाता हूँ, कार में बैठ कर आनंद मनाता हूँ। फिर साथियों ने पूछा कि कार कैसी है, पैट्रोल कैसा है और ड्राईवर कैसा है, शहर कैसा है? उस गुरु जी ने उत्तर दिया कि शहर कहो चाहे कार एक ही बात है, शहर भी कार ही है, पैट्रोल भी कार को ही कहते हैं, ड्राईवर भी कार को ही कहते हैं, सड़क भी कार को ही कहते हैं।

आओ विचार करें - सतपुरुष तो पूर्ण परमात्मा है, सतनाम वह दो मंत्र का नाम है जिसमें एक ओ३म् + तत् सांकेतिक है तथा इसके बाद सारनाम साधक को पूर्ण गुरु द्वारा दिया जाता है। यह सतनाम तथा सारनाम दोनों स्मरण करने के नाम हैं। सतलोक वह स्थान है जहाँ सतपुरुष रहता है। पुण्यात्माएं स्वयं निर्णय करें सत्य तथा असत्य का।

''परमात्मा कबीर जी की भक्ति से हुए भक्तों को लाभ''

''परमात्मा ने की जीवन रक्षा''

।। बन्दी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज जी की जय ।।

मुझ दास का नाम रोहित दास पुत्र श्री रामबाबू दास ग्राम उदयपुरा जिला-रायसेन (मध्यप्रदेश) है। सतगुरु देव जी से नाम-उपदेश लेने से पहले मेरे घर की आर्थिक स्थिति बहुत खराब थी। मेरी पत्नी बीमार रहती थी। इतनी परेशानियाँ होने के बावजूद भी हम देवी-देवताओं की भक्ति करते रहते थे। हम जयगुरुदेव पंथ से जुड़े हुए थे। लेकिन कोई फायदा नहीं हुआ। मेरी माता जी ने जयगुरुदेव पंथ में परमात्मा को पाने के लिए बहुत ही कठिन साधना की। 72 दिन तक भोजन नहीं किया। उनके हाथ-पैर पूर्ण रूप से काम करना बंद कर गए। उनकी हालत इतनी खराब हो गई थी कि वह अपने हाथों से खाना भी नहीं खा पाती थी।

एक बार हम जयगुरूदेव मथुरा गए हुए थे। वहाँ पर संत रामपाल जी के भक्तों ने पुस्तकें वितरित की। कार्यक्रम के दौरान वहाँ पर उस पुस्तक के बारे में बताया कि कोई भी सदस्य इस पुस्तक को खोलकर न पढ़े। इसको पढ़ने से आपकी बुद्धि भ्रष्ट हो जाएगी। ऐसा उन लोगों ने बोला और जो संत रामपाल जी के शिष्य जो वहाँ पुस्तक वितरित कर रहे थे, बाबा जयगुरूदेव के भक्तों ने उनको पकड़कर पीटा। सारी पुस्तकों को इकठ्ठा करके जला दिया। उसी समय दास के मन में आया कि आखिर इस पुस्तक में ऐसा क्या है? लेकिन मुझे वो पुस्तक प्राप्त नहीं हो पाई थी। कुछ समय बाद गाँव के एक भक्त ने ज्ञान गंगा पुस्तक लाकर दी। टी.वी. पर सत्संग भी दिखाया। ज्ञान समझकर दास उनके साथ सतलोक आश्रम बरवाला में आया और नाम-दीक्षा ली। दीक्षा लेने के बाद लाभ ही लाभ बढ़ते गए।

एक बार मेरी पत्नी (भक्तमति राधा) के सीने में तेज दर्द हुआ। मैंने कहा उपदेश लेने का, लेकिन उनको परमात्मा पर विश्वास नहीं था, परंतु दर्द बढ़ने पर उन्होंने सतलोक आश्रम बरवाला जाने का विचार किया। ठंड के दिन थे। ट्रेन में बहुत तेज ठण्ड लग रही थी। मेरी पत्नी ने मन ही मन कहा कि यदि परमात्मा हैं तो मुझे ठंड से बचाये। कुछ देर के बाद एक सफेद कंबल मेरी पत्नी के ऊपर आकर गिरा। मैंने पूछा कि यह कंबल किसका है? जितने भी लोग केबिन में बैठे थे, सभी ने मना कर दिया। मैंने कहा कि यह कंबल परमात्मा ने दिया है।

तब मेरी पत्नी को बरवाला आश्रम पहुँचने से पहले ही परमात्मा पर पूर्ण विश्वास हो गया और सतलोक आश्रम बरवाला पहुँचते ही उन्होंने नाम-उपदेश ले लिया। नाम-उपदेश के पश्चात् ही उनके सीने का दर्द भी ठीक हो गया।

सबसे बड़ा लाभ परमात्मा ने मेरे छोटे बेटे अरूण दास को नया जीवन दान देकर किया। उसे एक रात 10-11 बजे के आसपास अचानक सीने में दर्द और सांस लेने में दिक्कत होने लगी। वह पूरा पसीने से भीग गया और बैड से नीचे गिर गया। बेटे की हालत देखकर तो मैंने उसे मत ही मान लिया था। मेरी बेटी ने कहा कि सतगुरु देव जी से अरदास लगा लो। मैंने कहा कि रात 11:00 बजे अरदास नहीं लगती और मेरे पास आश्रम में अरदास लगाने का नम्बर भी नहीं है। मेरी बेटी ने मोबाइल से संभाग कॉर्डिनेटर से अरदास का मोबाइल नंबर लेकर सतगुरु देव जी से अरदास लगाई। अरदास लगाने के

बाद बेटा सांस लेने लगा। हम उसे तुरंत हॉस्पिटल लेकर गये। उन्होंने कहा कि आपके पास 1 घंटा है। यह कहकर दूसरे हॉस्पिटल में रैफर कर दिया। लेकिन वहाँ पर भी एक बोतल लगाकर तीसरे हॉस्पिटल में रैफर कर दिया। वहाँ पर 15 दिन तक मेरे बेटे को ऑक्सीजन लगी रही। उसके बाद सारी रिपोर्ट नॉर्मल आ रही थी। डॉक्टर भी हैरान थे। उनको समझ नहीं आ रहा था कि बीमारी क्या है? रिपोर्ट सारी नॉर्मल आ रही हैं। यह बहुत बड़ा चमत्कार मालिक ने किया, लड़का पूर्ण रूप से स्वस्थ हो गया।

सतगुरु जो चाहे सो करहीं, चौदह कोटि दूत जम डरहीं।
ऊत भूत जम त्रास निवारैं, चित्र–गुप्त के कागज फारैं।।

एक बार मेरा बड़ा बेटा तरूण दास कॉलेज से घर आ रहा था। उसकी बस का एक्सीडेन्ट हो गया जिसमें तीन बच्चों की मत्यु हो गयी। लेकिन मेरे बेटे को मामूली खरोंचें ही आई और मेरे बेटे को परमात्मा ने नया जीवन दान दिया।

सतगुरु रामपाल जी महाराज जी से नाम-उपदेश लेने के बाद अब मेरी माता जी के भी हाथ काम करने लगे हैं। अब वे अपने हाथों से खाना खा पाती हैं। आज परमात्मा से नाम-उपदेश लेने के पश्चात् हमारी आर्थिक स्थिति बिल्कुल ठीक है तथा हम सपरिवार पूर्ण रूप से ठीक हैं तथा परमात्मा की भक्ति कर रहे हैं। आप सभी से हाथ जोड़कर प्रार्थना है कि पूर्ण परमात्मा धरती पर सतगुरु रामपाल जी महाराज के रूप में आए हुए हैं। उन्हें पहचानें तथा नाम-उपदेश लेकर अपना कल्याण कराएँ तथा जन्म-मरण से छुटकारा पाएँ।

।। सत साहिब ।।

भक्त रोहित दास
ग्राम-उदयपुरा, जिला रायसेन (मध्यप्रदेश)
सम्पर्क सूत्र :-

''गुर्दे ठीक करना व शैतान को इंसान बनाना''

मैं भक्त जगदीश पुत्र श्री प्रभुराम, गाँव-पंजाब खोड़, दिल्ली-81। डी. टी. सी.(दिल्ली ट्रांस्पोर्ट कॉर्पोरेशन) में मकैनिक हूँ। मुझे शराब ने राक्षस वत्ति का इन्सान बना दिया था। शराब पीना, मुर्गे खाना, सिगरेट पीना, हुक्का पीना।

मैं नौकरी से शाम को लगभग 7 या 8 बजे आता था। कई बार घर आने में शराब ज्यादा पीने पर 9 या 10 भी बज जाते थे। शराब में पागल हुए एक बार इधर एक बार उधर लड़खड़ाते हुए पैरों से घर में घुसता था। आते ही पत्नी व बच्चों को पीटना शुरु कर देना, हर रोज घर में कहर होता था। जिन बच्चों को प्यार के साथ अपनी छाती से लगाना चाहिए था वे मासूम बच्चे मुझको देखकर चारपाई के नीचे घुस जाते थे। बच्चे अपने पिता जी के घर आने की राह देखते हैं कि पापा जी आएगें, हमारे लिए खाने की चीजें लाएगें। परन्तु मैं खाने की चीजों की बजाय शराब में पागल हुए लाल आँखों से उनको मारने लग जाता था।

दूसरी तरफ मेरी धर्मपत्नी सुमित्रा देवी भी अपने दुःखी जीवन के साथ खतरनाक बीमारी से जूझती हुई स्वांस पूरे कर रही थी। उसके दोनों गुर्दे खराब हो चुके थे। डॉक्टरों ने कह दिया था कि दवाई खाते रहो। लेकिन छः महीने से ज्यादा यह जीवित नहीं रह सकती। ऑल इंडिया मैडीकल

और डॉ. राम मनोहर लोहिया हॉस्पिटल दिल्ली से भी यह रिपोर्ट मिली कि गुर्दे खराब हो चुके हैं और यह छः महीने से ज्यादा जीवित नहीं रह सकती और साथ में दवाई भी अंत समय तक खाते रहना होगा। उन मासूम बच्चों का क्या हाल होगा जिनका पिता शराब पीता हो, माँ मत्युशैय्या पर हो। कोई वजन का कार्य नहीं कर सकती। तो उन बच्चों को जब यह पता चला कि तुम्हारी मम्मी (माता जी) भी छः महीने से ज्यादा जीवित नहीं रहेगी तो उन बच्चों की आँखों से आंसु बहते रहते थे। एक तो पिता जी शराबी और दूसरी तरफ हमारी माता जी जानलेवा बीमारी से पीड़ित, हमारा क्या होगा? तीन लड़के तथा एक लड़की अपनी माता जी के पास गिरकर रोने लगे तथा कहा कि हे भगवान हम सब को भी हमारी माता जी के साथ ही अपने पास बुला लेना। यहाँ किसके सहारे जीयेंगे ?

परमात्मा ने उन बच्चों की भी पुकार सुनी और हमारे भी शुभ कर्म उदय हुए कि हमारे पड़ोस में ही भक्तमति निहाली देवी ने अपने गुरुदेव संत रामपाल जी महाराज की आज्ञानुसार 30-31-1 जनवरी 1997 को सतगुरु गरीबदास जी महाराज की अमतमयी वाणी तीन दिन का अखण्ड पाठ अपने घर करवाया। जिसमें संत रामपाल जी महाराज ने 31 दिसम्बर 1996 को रात्री में 9 से 11 बजे तक सत्संग किया। मेरी धर्मपत्नी सुमित्रा देवी भी पड़ोस में सत्संग सुनने के लिए चली गई। थोड़ी देर बाद मैं (जगदीश) भी अपनी नौकरी से घर आ गया। घर आने पर बच्चों से पता चला कि हमारी माता जी पड़ोस में माई निहाली देवी के घर सत्संग सुनने के लिए गई है। यह सुनकर मैं बहुत क्रोधित हुआ और मैंने कहा कि कहाँ पाखण्डियों के पास चली गई ? मैं अभी उसको पीटते हुए घर लाता हूँ। यह विचार कर मैं भक्तमति निहाली देवी के घर चला गया। मैंने शराब पी रखी थी। जब मैं निहाली माई के घर पहुँचा तो संत रामपाल जी महाराज सत्संग कर रहे थे। बहुत संख्या में भक्तजन सत्संग सुन रहे थे। उन सभी को देखकर मैं कुछ नहीं बोला और चुपचाप सबसे पीछे बैठ गया। मैंने सत्संग सुना। सत्संग में महाराज जी ने बताया कि :-

शराब पीवैं कड़वा पानी, सत्तर जन्म श्वान के जानी।
गरीब, सो नारी जारी करैं, सुरापान सो बार। एक चिलम हुक्का भरैं, डूबैं काली धार।।
कबीर, मानुष जन्म पाय कर, नहीं भजैं हरि नाम। जैसे कुआ जल बिना, खुदवाया किस काम।।

महाराज जी ने सत्संग में बताया कि जिन बच्चों को पिता जी ने सीने से लगाना चाहिए, उस शराबी व्यक्ति को देख कर बच्चे चारपाई के नीचे छुप जाते हैं। शराबी व्यक्ति आप भी दुःखी, धनहानि, समाज में इज्जत समाप्त तथा परिवार तथा पड़ौस व रिश्तेदारों तक को परेशान करके बद दुआऐं प्राप्त करता है। जैसे शराबी की पत्नी व बच्चे तो कहर का शिकार होते ही हैं। परन्तु पत्नी के माता-पिता, भाई-बहन आदि भी दिन-रात चिन्तित रहते हैं। सर्व पाप का भार उस नादान शराबी के शीश पर आता है। मनुष्य जन्म प्रभु ने भक्ति करके आत्म कल्याण करने को दिया है, इसको शराब आदि में नष्ट नहीं करना चाहिए। जैसे बच्चा स्कूल में शिक्षा ग्रहण नहीं करता, आवारा गर्दी में घूमता रहता है। वह शिक्षा से वंचित रह जाता है। फिर सारी आयु मजदूरी करके जीवन निर्वाह करता है। फिर उसे याद आता है कि यदि में आवारागर्दी न करता तो आज अन्य सहपाठियों की तरह बड़ा अधिकारी होता। परन्तु अब क्या बने, यह तो उस समय सोचना था।

कबीर साहेब कहते हैं कि :-

अच्छे दिन पीछे गये, गुरु से किया न हेत।

अब पछतावा क्या करे, जब चिड़ियां चुग गई खेत।।

इसी प्रकार यदि मनुष्य जन्म में जो प्राणी प्रभु भक्ति नहीं करता वह पशु-पक्षियों की योनियों को प्राप्त होता है। जो व्यक्ति शराब पीता है, वह शराब के नशे में खाने की भरी थाली को लात मारता है। भक्ति न करने से भिन्न-भिन्न प्राणियों की योनियों में कष्ट उठाता है। कभी वह कुत्ते की योनी धारण करता है। कुत्ता सारी रात सर्दी में भी गली में रहता है। ऊपर से वर्षा तथा सर्दियों की रात्री में महाकष्ठ उठाता है। सुबह भूख सताती है। किसी घर की रसोई में घुसने की चेष्टा करता है। घर वाले डण्डा या पत्थर मारते हैं। कुत्ता बहुत देर तक चिल्लाता रहता है। फिर अन्य घर में घुसता है, वहाँ न जाने रोटी मिलेगी या सोटी (डण्डा)। यदि वहाँ भी डण्डा नसीब में हुआ तो वह शराबी जो अब कुत्ता बना है, गाँव के बाहर जाता है। भूख से व्याकुल हुआ मनुष्यों का मल खाता है। यदि वह नादान प्राणी जब मनुष्य शरीर में था, सत्संग में आता, अच्छे विचार सुनता, बुराई त्यागकर अपना कल्याण करवाता तथा बच्चों को अच्छी शिक्षा तथा प्रभु की दीक्षा प्रदान करवाता, सदा सुखी हो जाता। शराब का नशा कुछ समय रहता है। परमात्मा के नाम भजन से हुए सुख का आनन्द सदा साथ रहता है।

उपरोक्त सत्संग आदरणीय संत रामपाल जी महाराज का सुन कर मेरी शराब छू मंत्र हो गई। आँखों से आंसु बह चले। घर चला गया, नींद नहीं आई। 1 जनवरी 1997 को दोपहर 1.30 बजे अपनी पत्नी को साथ लेकर संत रामपाल जी महाराज के पास गया, उनसे आत्म कल्याण के लिए उपदेश प्राप्त किया। उसके बाद आज (2005) तक शराब, तम्बाकु तथा मांस छुआ भी नहीं। मेरी पत्नी ने भी सतगुरु रामपाल जी से उपदेश लिया। उस दिन के बाद वह बिल्कुल स्वस्थ है। डॉक्टरों के ईलाज तथा बीमारी की एक्स-रे आदि की रिपोर्ट आज भी हमारे घर रखी है। जन-जन को दिखाते हैं।

मेरी सर्व से प्रार्थना है कि आप भी प्रभु के चरणों में आओ। संत रूप में आए परमेश्वर के संदेश वाहक संत रामपाल को पहचानों। मुफ्त नाम उपदेश प्राप्त करके कप्या अपना कल्याण करवाऐं।

।। सत साहेब ।।

भक्त जगदीश
गाँव-पंजाबखोड़ (दिल्ली)
सम्पर्क सूत्र :- 9268475242

''अनहोनी की परमात्मा ने''

(शादी के 16 साल बाद संतान प्राप्ति)

सतगुरु के दरबार में कमी काहे की नाहीं। हंसा मौज न पावता तेरी चूक चाकरी माहीं।।

मैं भक्त रामजी दास ग्राम-कटरा पोस्ट-सलेहा, जिला-पन्ना (मध्यप्रदेश) का निवासी हूँ। मैं बचपन से परमात्मा की खोज में लगा हुआ था और हिन्दू धर्म के मंदिरों व धामों आदि पर जाता रहता था। साथ ही एक कबीरपंथी संत से नाम-उपदेश भी लिया हुआ था। मेरी शादी को कई साल बीत गए थे। लेकिन हमें कोई संतान प्राप्ति नहीं हुई। जहाँ मैडिकल फेल हो जाता है, वहाँ परमात्मा का विधान शुरू होता है।

कई जगह (देवी-देवताओं के पास मंदिर-मस्जिद, झाड़-फूंक करवाया) गए, वैष्णो देवी जम्मू भी गया, बड़े-बड़े डॉक्टरों को दिखाया। सबसे पहले सिविल अस्पताल मैहर में डॉ. श्रीमति एस. बी. अवधिया एम.डी. (D.G.O.), प्रसूति एवम् स्त्री रोग चिकित्सक को दिखाया और अल्ट्रासाउंड सोनोग्राफी के द्वारा उन्होंने देखा कि उनकी बच्चेदानी में गाँठें हैं, वे निकालनी पड़ेंगी। इसके लिए सतना में जाना पड़ेगा। 18 फरवरी 2009 में शकुंतलम् नर्सिंग होम सतना में बच्चेदानी का ऑपरेशन हुआ। इसके बाद भी हमें संतान प्राप्ति नहीं हुई। लेकिन दवाएँ चलती रही। इसके बाद सन् 2012 में शारदा हॉस्पिटल एंड रिसर्च सेंटर सतना में डॉ. महेन्द्र सिंह (M.B.B.S., D.G.O.) के यहाँ 1 वर्ष तक इलाज चला। फिर अंत में डॉक्टरों ने हमें बोल दिया कि आप टेस्ट-ट्यूब बेबी करवा सकते हैं। परंतु उसकी भी कोई गारंटी नहीं है। उसमें लाख दो लाख रूपये खर्च आता है।

हम गरीब आदमी इतनी बड़ी रकम कहाँ से लाते? हमने मना कर दिया। हमने दुनिया के लोगों की रोज की बातों से तंग आकर फैसला किया कि चलो! रोज की खिच-खिच से अच्छा हम नोएडा (उत्तर प्रदेश) चलते हैं। वहीं काम करेंगे और वहीं इलाज करवाएँगे। फिर हमने सुन रखा था कि वैष्णों देवी जाने से संतान प्राप्ति होती है तो जुलाई 2012 में कटरा (जम्मू) जाकर वैष्णों देवी की यात्रा की। इससे भी कोई राहत नहीं मिली। हम मकर सक्रांति को जनवरी 2013 को घर आये। हम साधना चैनल पर सत्संग कार्यक्रम देखते थे। मेरे पिता जी बोले कि कबीर साहेब जी का सत्संग आता है, आप भी देखो। हमने सत्संग देखा और पुस्तक ''ज्ञान गंगा'' मंगवाई जो हमारे घर निःशुल्क प्राप्त हुई। पिताजी बोले कि आप बरवाला आश्रम चले जाओ, परमात्मा शायद दया करें।

हम दोनों ने 21 अप्रैल 2013 को सतलोक आश्रम बरवाला में सतगुरु रामपाल जी महाराज जी से नाम-दीक्षा लेकर अरदास लगाई कि कई साल हो गए, हमें संतान प्राप्ति नहीं हो रही है। परमात्मा बोले कि बेटा! भक्ति करो, परमात्मा दया करेंगे। इस प्रकार चलते-चलते नवम्बर 2014 में बरवाला कांड की लीला हो गई। हम घर आ गए। हमें पता लग गया था कि ये मानव जीवन किसलिए मिला है और हम भक्ति करने लगे थे। कुछ दिनों बाद फिर घर-परिवार वाले और रिश्तेदार वही पुराना रोना रोने लगे कि एक संतान तो होनी ही चाहिए। गाँव के लोग तो कभी-कभी यहाँ तक बोलने लगे कि इनका तो मुँह भी नहीं देखना चाहिए। एक दिन भक्तमति बोली कि चलो दवा करवाते हैं। परमात्मा दवा के लिए तो मना नहीं करते। हमने गुरु जी से अरदास लगाई कि दवा करवा लें। गुरु जी बोले कि करवा लो, परमात्मा दया करेंगे। फिर हमने डॉ. आभा पाठक (M.B.B.S., M.S., Gynecologist & Obstetrician) पाठक नर्सिंग होम सतना में मार्च 2019 में इलाज शुरू किया। उन्होंने भी लॉस्ट में बोल दिया कि हम ऐसे केस नहीं लेते। आपका तो भगवान ही मालिक है। अब मेडिकल और सांइस दोनों फेल हो चुके थे।

डॉक्टर मैडम के ऐसे बोलने पर हमने फैसला कर लिया कि अब हम कहीं दवा नहीं करवाएँगे। जो करेंगे, वो सब बंदी छोड़ सतगुरु रामपाल जी महाराज ही करेंगे। फिर सितम्बर 2020 में परमात्मा ने अपने कोटे से एक भक्त आत्मा हमें संतान रूप में दी जो हमारी किस्मत में नहीं थी। वह परमात्मा ने दी। यहाँ तक कि जब हमारी भक्तमति घर से बाहर निकलती थी तो लोग बोलते थे कि यह बांझ है, इसका मुँह नहीं देखना चाहिए। परमात्मा ने उन्हें भी दिखा दिया।

उसके बाद तो परमात्मा पल-पल हमारे साथ चमत्कार करते हैं। एक समय की बात है, हम और भक्तमति मोटरसाइकिल पर कहीं जा रहे थे। अचानक हमारा एक्सीडेंट हो गया। भक्तमति का सिर फट गया। मुँह से झाग निकलने लगा, मानो मृत्यु हो गई हो। अस्पताल में डॉक्टर को दिखाया तो

उन्होंने कहा कि ये बेहोश हैं और सिर की चोट है। अगर इनको होश नहीं आया तो ये कोमा में भी जा सकती हैं। सुबह 10:00 बजे हमारा एक्सीडेंट हुआ था और शाम को 3:00 बजे के आसपास भक्तमति जी को होश आ गया और हम घर आ गये।

एक जगह दास मजदूरी करता है। एक जगह काम के लिए गया था। जिनके यहाँ काम करना था, उनका मकान जर्जर था। जैसे ही दास ने प्रवेश किया, उस मकान में ऊपर से एक लकड़ी का गार्डर मेरे ऊपर गिर गया और लोगों ने कहा कि यह तो मर गया होगा। लेकिन जब दास ने ऊपर देखा तो सिर से 6 अंगुल ऊपर वह गार्डर का टुकड़ा हवा में लटकता रहा। जब दास ने उसको देखा तो दास के आँसू निकलने लगे। परमात्मा की केवल एक वाणी याद आई कि :-

संत शरण में आने से आई टले बला।
जे मस्तक में सूली हो, वो काँटे में टल जा।।

।। सत साहेब।।

आपका दास
रामजी कोरी, ग्राम : कटरा,
जिलाः पन्ना (मध्यप्रदेश)

''शास्त्रविरूद्ध साधना से छुटकारा''

मैं भक्त हेमचंद दास सोलन (हिमाचल प्रदेश) का रहने वाला हूँ। पहले मैं अपने गाँव में महाकाली मंदिर में पुजारी रहा। 25 वर्ष से वहाँ पुजारी का काम करता था। भजन-कीर्तन और जो भी पूजाऐं मंदिर में होती, सभी किया करता था। पितर पूजा, श्राद्ध निकालना, शिव जी को जल चढ़ाना आदि क्रियाऐं करता था। लेकिन फिर भी हम दुःखी रहते थे। मेरी पत्नी को पैरालाईसिस थी। घर की आर्थिक स्थिति भी ठीक नहीं थी।

सन् 2005-2006 में संत रामपाल जी महाराज के कुछ लेख अखबारों में आते थे। मैं उन्हें समझ नहीं पाया, परंतु मैं इस तरह के धार्मिक कागजों को संभालकर रख लेता था। कुछ समय पश्चात् जैसे ही रद्दी से वो कागज मिले, मैं उसे पढ़ने बैठ गया और पढ़ते-पढ़ते मेरे दिल में ठेस-सी लगी कि ये ज्ञान कहाँ छिपा हुआ था? फिर मैंने उसमें आश्रम के फोन नं. देखे और पुस्तक मंगवाई। उसमें जब मैंने ज्ञान पढ़ा तो मैं हैरान रह गया, पैरों तले की जमीन खिसक गई क्योंकि मंदिर में पुजारी होने के बावजूद मैंने ऐसा नया ज्ञान कभी भी नहीं सुना था।

मैं पहले मानता रहा कि ब्रह्मा, विष्णु और शिव जी से ऊपर कोई है ही नहीं। परमात्मा निराकार है। संत रामपाल जी महाराज की पुस्तकों से ज्ञान हुआ कि परमात्मा साकार है, कबीर जी पूर्ण परमात्मा हैं। परमात्मा ने अंदर एक ऐसी प्रेरणा जगाई कि संत रामपाल जी के पास ही वह अमर मंत्र है जिससे हमारा कल्याण होना है। इसी से हमारा जन्म-मरण का भयंकर रोग कटेगा। उनके ज्ञान से प्रभावित होकर मैंने संत रामपाल जी महाराज से दीक्षा ली। मैंने सभी तरह की शास्त्रविरूद्ध पूजाऐं बंद कर दी। पितर पूजा, श्राद्ध निकालना आदि सब त्याग दिया।

गुरू जी का उपदेश लेने के बाद मुझे सबसे बड़ा तो आध्यात्मिक लाभ हुआ। जन्म-मरण से मुक्ति की सच्ची राह मिली। मेरी भक्तमति को पैरालाइसिस की परेशानी थी। हर जगह बड़े-बड़े डॉक्टरों व नीम-हकीमों के चक्कर लगा चुके थे, परंतु परमात्मा के आशीर्वाद मात्र से मेरी भक्तमति

ठीक हो गई। परमात्मा की दया से हमारी आर्थिक स्थिति भी ठीक हो गई।

फिर मैंने ये ज्ञान प्रचार करना शुरू कर दिया। मुझे लगा कि ये ज्ञान तो जन-जन तक पहुँचना चाहिए। लेकिन मेरी बातों पर किसी ने गौर नहीं किया। लोगों ने विरोध किया, कहा कि तुम ये कौन-सा अलग ज्ञान ले आए। ऐसी बातें ना किया करो। परंतु मुझे इस ज्ञान से परमात्मा की दया से कोई डगमग नहीं कर पाया। ऐसा सत्यज्ञान व सत्य भक्ति मार्ग पंथ्वी पर और कहीं नहीं है।

मेरी सर्व से प्रार्थना है कि आप भी प्रभु के चरणों में आओ। संत रूप में आए परमेश्वर के संदेश वाहक संत रामपाल को पहचानों। मुफ्त नाम उपदेश प्राप्त करके कंप्या अपना कल्याण करवाएँ।

भक्त हेमचंद दास
मोबाईल नं. 9816781489

''भक्तमति सविता की आत्मकथा''

।। बन्दी छोड़ सतगुरू रामपाल जी महाराज जी की जय ।।

मेरा नाम भक्तमति सविता है। मेरा जन्म पटियाला (पंजाब) के एक धार्मिक परिवार में हुआ। सतगुरु रामपाल जी महाराज जी से नाम उपदेश लेने से पहले मैं अनेक धार्मिक पूजाऐं करती थी। मैं समाज में चल रही सभी पूजाओं को करती थी जैसे कि सोमवार के व्रत करना, सत्य नारायण के व्रत करना, नवरात्रों के व्रत करना, कंजक पूजा आदि। मैंने संतोषी माता के 45 व्रत भी किए जबकि संतोषी माता के 16 व्रत होते हैं। व्रत करने के कारण मैं इतनी कमजोर हो गई थी कि स्कूल में ही बेहोश हो जाती थी। हमारी टीचर हरलीन मैडम मुझे घर छोड़ने के लिए आती थी और कहती थी कि इस लड़की को खाना खिलाकर ही स्कूल आने दिया करो। रोज-रोज के व्रत करने से ये एक दिन मर जाएगी। लेकिन शेरांवाली माता में मेरी विशेष श्रद्धा थी। मैंने व्रत करने नहीं छोड़े। परंतु इन साधनाओं से मुझे कभी कोई फायदा भी नहीं हुआ। मेरी माता जी भी बहुत ही धार्मिक विचारों की महिला थी। वे ब्रह्मा-विष्णु-शिव जी सहित सभी देवी-देवताओं की पूजा किया करती थी। पटियाला (पंजाब) में हमारी कुल देवी काली माता का बहुत प्राचीन व प्रसिद्ध मन्दिर है।

मेरे माता-पिता को संतान रूप में मेरे बड़े भाई के बाद हम दो जुड़वां बहनें प्राप्त हुई। मेरी माता जी अक्सर कहा करती थी कि काली माता जी अपने बच्चों की हर विपदाओं से जीवन रक्षा करती है तथा शेरांवाली माता की भक्ति करने से जान का कोई खतरा नहीं रहता। लेकिन हुआ उसके बिल्कुल विपरीत, छः साल की उम्र में ही मेरी जुड़वां बहन की बीमारी के कारण अकाल मंत्यु हो गई।

मेरी माता जी ने शेरांवाली माता की भक्ति करते हुए अपनी पुत्री की अकाल मंत्यु के लिए माता को प्रश्नवाचक नजरों से देखा तो लेकिन वे असहाय थी कि जवाब किससे माँगे? पुजारी से या पत्थर की मूर्ति से? अतः असहाय होकर कुछ समय बाद सब्र कर लिया कि माता के दिए हुए एक बेटा और एक बेटी तो हैं। लेकिन होनी को कुछ और ही मंजूर था। मेरी माता जी घर की छत पर कोई घरेलू कार्य कर रही थी। जब वे सीढ़ियों से नीचे आने लगी तो उनका पैर फिसल गया और गिर जाने से उनका सिर फट गया। वे पाँच दिन तक हस्पताल में जिंदगी और मौत से जूझती

रही और हम देवी माता के मन्दिर में पल-पल देवी माता से और सारे देवताओं से उनके जीवन की भीख माँगते रहे। लेकिन जो हुआ, वह हमारी अंध आस्था व आशा के बिल्कुल विपरीत हुआ। पाँच दिन के बाद मेरी माता का पार्थिव शरीर ही हस्पताल से वापिस आया। सारे घर में हाहाकार मच गया। एक बार तो मैंने माता जी को बहुत उलाहने दिये कि मेरी मम्मी आपकी इतनी साधना करती थी। उनकी भक्ति में ऐसी क्या कमी रह गयी थी कि आपने इनको इतनी दर्दनाक मौत देकर हमसे छीन लिया।

एक बेटी के लिए माता का निधन वज्रपात से कम नहीं था। लेकिन मेरी अंधश्रद्धा उसके बाद भी देवी-देवताओं में ही लगी रही, बल्कि अधिक भक्ति करनी शुरू कर दी क्योंकि मेरे पास दूसरा कोई रास्ता नहीं था।

कुछ समय पश्चात् मेरा बड़ा भाई बहुत बीमार हो गया। मैंने उनके लिए भी व्रत किये। जब वे ठीक नहीं हुए तो मैंने एक बहुत ही कठोर व्रत (प्रण) निश्चय किया कि मैं अपने घर से काली देवी माता के मन्दिर तक दण्डवत् प्रणाम करते हुए जाऊँगी जोकि चार किलोमीटर था। मैंने सुबह चार बजे ही घर से दण्डवत् करते हुए जाना शुरू किया। लेकिन कुछ दूर जाते ही मेरा सारा शरीर छिल गया और खून आने लगा। लेकिन अपने व्रत और प्रण की पक्की होने के कारण मैंने भी अपनी जान की परवाह न करते हुए अपना प्रण पूरा करने में ही माता की प्रसन्नता मानी क्योंकि मेरे सिर पर तो शास्त्रविरूद्ध भक्ति का भूत चढ़ा हुआ था। मेरा सारा शरीर छिल गया और घावों से खून आने लगा। कोहनियों और घुटनों ने तो लगभग काम करना ही छोड़ ही दिया था। मैंने मर-मरकर अपना प्रण पूरा किया। उसके बाद मैं कई दिन हॉस्पिटल में रही। चिकित्सा करने वाले डाक्टरों ने मुझे बहुत डाँटा। लेकिन इतनी कठिन तपस्या के फलस्वरूप माता ने मेरे भाई को ठीक नहीं किया। उसका कई महीनों हस्पताल में इलाज चला।

लेकिन पूर्ण रूप से सतगुरु रामपाल जी महाराज जी की शरण में आकर नाम उपदेश लेने से ही ठीक हुआ। मेरे पिता जी ने साधना टी.वी. पर सतगुरु देव जी का कार्यक्रम देखा तथा सतलोक आश्रम बरवाला में जाकर नाम लिया। उसके बाद कई महीनों तक बार-बार मुझे समझाया। उन्होंने ''ज्ञान गंगा'' पुस्तक मुझे लाकर दी और तब मैंने ज्ञान को समझा तथा पूर्ण संत सतगुरु रामपाल जी महाराज की शरण में आकर नाम लिया और इस कठिन और दुःखदायी साधना से अपना पीछा छुड़वाया जो कि शास्त्रों में मना की हुई है। अब हमारा पूरा परिवार सतगुरू रामपाल जी महाराज की दया से सुखी है। किसी को कोई कष्ट नहीं है।

अब मुझे पूर्ण परमात्मा की शास्त्रानुकूल सत्यभक्ति प्राप्त हो गई है। अतः मैं सर्व भक्त समाज से यही प्रार्थना करूंगी कि सतगुरु रामपाल जी महाराज जी की शरण में आकर सत्यभक्ति प्राप्त करके अपना कल्याण करवाऐं।

यह संसार समझदा नाहीं, कहंदा शाम दोपहरे नूं।
गरीबदास यह वक्त जात है, रोवोगे इस पहरे (समय) नूं।।

।। सत साहेब ।।

सतगुरु चरणों की दासी
भक्तमति सविता

''लुटे-पिटों को सहारा''

मैं भक्त बलवान सैनी पुत्र श्री कष्ण सैनी न्यू माडल टॉउन, हिसार का रहने वाला हूँ। हम पाँच भाई-बहन हैं। हमारे पूरे परिवार ने 18 वर्ष से सिरसा डेरे से उपदेश ले रखा था। हमारे घर में भूत-प्रेत की बहुत ज्यादा समस्या थी। मेरी बहन को हमें रस्सी से बाँधकर रखना पड़ता था। प्रेत बाधा के कारण वह छत से भी कूद जाती थी। मेरे पिता जी के फेफड़े भी खराब हो चुके थे। जिससे वो बिस्तर पर ही रहने लगे। मेरी माता के घुटनों में बहुत दर्द रहता था।

मेरे पिता जी हलवाई का काम करते थे। भूत-प्रेत और पिता जी की बीमारी के कारण हमारा काम बिल्कुल ठप्प हो चुका था। पहले हमारे हाँसी में तीन मकान व एक दुकान थी। घर में नौकर काम करते थे। लेकिन कर्मों की मार से हमें सब बेचना पड़ा। घर में खाने के लाले पड़ गए थे।

हम देवी-देवताओं को भी मानते थे। हम 2003 से हर महीने मेंदहीपुर जाते थे। हमारा पूरा परिवार होली-दिवाली भी मेंहदीपुर में ही मनाता था। हम डॉक्टरों के पास जाकर भी थक चुके थे। हम माता चौकी, सेवड़ों आदि जंत्र-मंत्र करने वालों के पास भी जाते थे। हम नरड़ पीर (राजस्थान) की मंढ़ी पर एक साल रहकर आए थे। हम पाँच साल तक हर महीने सजाड़ा धाम, जोधपुर जहाँ शंकर भगवान की पूजा होती थी, वहाँ पर फेरी लगाने जाते रहे, परंतु कोई लाभ हमें नहीं मिला। मेरी माँ और मैं व्रत भी रखते थे। मैं बाला जी धाम, सालासर नंगे पाँव भी दो-तीन बार गया। माता गुड़गावां वाली हमारी कुल की देवी थी। मैंने वहाँ पर हाथ पर ज्योति रखकर पंद्रह मिनट आरती भी की थी। हाथ बिल्कुल गल चुका था। परंतु हमें कोई राहत किसी भी साधना से नहीं मिली। अंत में हम हार मान चुके थे। हम दुःखी होकर घर पर ही रहने लगे। हमने सभी पूजाऐं त्याग दी।

फिर मुझे 24 फरवरी 2012 को सतगुरू रामपाल जी महाराज की पुस्तक ''ज्ञान गंगा'' मिली। मैंने उस पुस्तक को पढ़ा और सपरिवार नाम ले लिया। मुझे नियम बताए गए कि आपको किसी देवी-देवता के धामों पर पूजा के लिए नहीं जाना है। मैं घर पर आ गया। मुझे रात को नींद नहीं आई, मैं बेचैन हो गया क्योंकि मैं खाटू श्याम, राधे कष्ण को बहुत अधिक मानता था। मैं उनको छोड़ नहीं सकता था। अगले दिन ही मैं खाटू श्याम चला गया। वहाँ पर मैं 5-6 दिन रहा। वहाँ पर मैं पैसे देकर VIP लाईन में लगकर दर्शन करने गया। जब मैं दर्शन करने लगा तो आवाज आई कि बलवान! तू अपना भगवान तो बरवाला में छोड़ आया है, यहाँ पर कुछ नहीं है। फिर मैं रोते हुए घर आ गया। फिर मैंने दोबारा संत रामपाल जी महाराज के आश्रम में जाकर नाम शुद्ध करवाया।

मेरे पिता जी के फेफड़े खराब हो चुके थे। उनको होली हस्पताल, हिसार में दाखिल करवाया। उनकी स्थिति ज्याड़ा बिगड़ गई और डॉक्टरों ने जवाब दे दिया। कहा कि इसको घर ले जाओ। ये कुछ घण्टे का मेहमान है। फिर मैंने आश्रम में फोन किया। गुरू जी से प्रार्थना करवाई। गुरू जी ने कहा कि हम पूर्ण परमात्मा की भक्ति करते हैं। इस बच्चे का बाल भी बांका नहीं होगा। आप भगवान पर विश्वास रखो। मैंने दोबारा डॉक्टर से प्रार्थना की कि आप इसे दो-तीन दिन के लिए आई. सी. यू. में दाखिल कर लो। डॉक्टर ने कहा कि इससे कोई फायदा नहीं होगा। लेकिन मेरे ज्यादा कहने पर डॉक्टर ने मेरे साईन करवा लिए और फीस लेकर दाखिल आई.सी.यू. में कर लिया। मेरी बहन घर पर थी। उसको सपना आया कि सतगुरू रामपाल जी मेरे पिता जी के बैड के पास खड़े हैं। अगले दिन मेरे पिताजी को होश आ गया और हालत सुधरने लगी। डॉक्टर भी

हैरान रह गए कि ये तो भगवान ने ही किया है, हमें ऐसी कोई उम्मीद नहीं थी।

उस दिन के बाद से हम सारा परिवार सुख से रह रहे हैं। मेरे बहन की बीमारी बिल्कुल ठीक हो गई और उसकी शादी कर दी। मेरी माँ के घुटनों का दर्द भी बिल्कुल ठीक हो गया। फिर हम हिसार रहने लगे और कुल्फी की रेहड़ी लगाने लगे। परमात्मा की दया से हमारा अच्छा काम चल पड़ा। हमने हिसार में दोबारा अपना मकान बना लिया।

शादी के दो वर्ष बाद मेरी बहन पूजा को ऑपरेशन से बच्चा होना था। उसको हमने अग्रोहा मैडिकल में भर्ती करवाया। बच्चे की डिलिवरी के समय डॉक्टरों से गलती से बच्चेदानी की कोई नस कट गई। मेरी बहन की ब्लीडिंग बंद नहीं हो रही थी। मेरी बहन को मंगलम लैब से लेकर 45 बोतलें खून की चढ़ी। लेकिन वहाँ पर कोई आराम नहीं मिला। फिर हम अपनी बहन को जिंदल हस्पताल में लेकर आए। वहाँ भी बारह दिन तक कोई आराम नहीं हुआ और डॉक्टरों ने कहा कि हम कुछ नहीं कह सकते कि यह बचेगी या नहीं। फिर मैंने गुरु जी से प्रार्थना लगवाई। गुरु जी बोले कि बेटा! मैंने बेटी को जीवनदान दे दिया है। वह ठीक हो जाएगी। फिर तीसरे दिन मेरी बहन को होश आ गया और उसकी हालत सुधरने लगी। पूरे हस्पताल में चर्चा हुई कि ये काम तो भगवान ही कर सकता है। मेरी बहन आज बिल्कुल स्वस्थ है। उसको परमात्मा ने एक पुत्री दी है जो बिल्कुल ठीक है। परमात्मा की दया से आज हमारे घर में किसी वस्तु का अभाव नहीं है।

कबीर, पीछे लाग्या जाऊं था, मैं लोक वेद के साथ।
रास्ते में सतगुरू मिले, दीपक दीन्हा हाथ।।

।। सत साहेब ।।

भक्त बलवान दास
मॉडल टाउन, हिसार (हरियाणा)
मोबाईल नं. - 9996593021

❖❖❖

☞ *आपने उपरोक्त कुछ भक्तात्माओं की आत्मकथाएँ पढ़ी। ऐसे-ऐसे भक्त हजारों-लाखों हैं जो अपनी आत्मकथा पुस्तकों में लिखवाना चाहते हैं। लेकिन यहाँ पर स्थान के अभाव के कारण हम कुछेक भक्तों की आत्मकथा लिख पाए। यदि सभी भक्तों की आत्मकथा हम लिखने बैठ जाएँ तो शायद सैकड़ों पुस्तकें छप जाएँगी। इसलिए समझदार व्यक्ति को संकेत ही पर्याप्त होता है।*

❖❖❖

➢ सतलोक आश्रम की अन्य पुस्तकें (आध्यात्मिक ज्ञान गंगा, ज्ञान गंगा, गहरी नजर गीता में, गीता तेरा ज्ञान अमृत, सृष्टि रचना सम्पूर्ण, मानवता का ह्रास तथा विकास आदि) हमारी वेबसाईट (www.jagatgururampalji.org) से डाउनलोड कर सकते हैं।

❑❑❑